सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

६५

(१५ मार्च से ३१ जुलाई, १९३७)

च० राजगोपालाचारी के साथ, मद्रासमें

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

६५

(१५ मार्च से ३१ जुलाई, १९३७)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

जनवरी, १९७७ (पौष १८९८)

रु. 10.00

निदेशक, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली ११०००१ द्वारा प्रकाशित
और शान्तिलाल हरजीवन शाह, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद ३८००१४ द्वारा मुद्रित

भूमिका

प्रस्तुत खण्डमें १५ मार्चसे ३१ जुलाई, १९३७ तककी सामग्रीका समावेश है। इस अवधिमें गांधीजीकी काफी शक्ति कांग्रेस द्वारा मन्त्रि-पद स्वीकार किये जानेका प्रश्न निपटानेमें लग गई। भारत सरकार अधिनियम (१९३५)के अन्तर्गत हुए आम चुनावके पश्चात् यह प्रश्न सामने आया था। कांग्रेस उक्त अधिनियमको 'विफल' करनेके लिए तो प्रतिज्ञाबद्ध थी, लेकिन दुविधा यह थी कि कांग्रेस यह कार्य बाहर रहकर ज्यादा अच्छे ढंगसे पूरा कर सकती है अथवा, अधिनियमके प्रथम भागके अनुसार प्रान्तोंमें मन्त्रि-पद ग्रहण करके। साढ़े तीन करोड़ लोगोंको वयस्क मताधिकार मिल जानेसे कांग्रेसको जन-सम्पर्क स्थापित करनेका अच्छा अवसर मिला था और उसने इस मौकेका पूरा-पूरा फायदा उठाया। कांग्रेस-अध्यक्षकी हैसियतसे पार्टीका चुनाव-अभियान सँभालनेका मुख्य भार जवाहरलाल नेहरूके कन्धोंपर आ पड़ा। उन्होंने रेल, हवाई-जहाज, मोटर गाड़ी, बैलगाड़ी तथा नाव आदिके द्वारा ५०,००० मीलकी यात्रा की और लगभग एक करोड़ लोगोंको सम्बोधित किया। परिणाम-स्वरूप ग्यारह प्रान्तोंमें से छ. प्रान्तोंमें कांग्रेसको पूर्ण बहुमत मिला। कांग्रेसके सामने अब प्रश्न यह था कि इन प्रान्तोंमें मन्त्रि-पद स्वीकार किया जाये अथवा नहीं। श्री नेहरूने मन्त्रि-पद स्वीकार करनेका निरन्तर कड़ा विरोध किया। वे चाहते थे कि वर्तमान 'दास संविधान' पूर्ण-रूपसे वापस लिया जाये तथा हमारी अपनी संविधान-सभाके लिए रास्ता साफ किया जाये। दूसरी ओर कांग्रेस-नेतृत्वका एक प्रभावशाली वर्ग ब्रिटेनमें रहनेवाले भारतके अनेक मित्रोंके समान ही मन्त्रि-पद स्वीकार करनेके लिए कांग्रेसपर जोर डाल रहा था। गांधीजी कांग्रेस पार्टीमें मतभेद पैदा होनेकी स्थिति टालना चाहते थे और यह आशा करते हुए कि "कांग्रेसके अहिंसा सिद्धान्तके अनुकूल" ऐसी स्थिति बन जाये, "जिसमें कि सारी शक्ति जनताके हाथ आ जायेगी", गांधीजी मन्त्रि-पद स्वीकार करनेके प्रश्नका समर्थन करनेके लिए राजी हो गये। वे चाहते थे कि इन पदोंपर रहकर इस प्रकार कार्य किया जाये "जिससे कि कांग्रेस संस्थाको बल मिले जो प्रभावपूर्ण तरीकेसे जनमतका प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्थाके रूपमें सामने आई है" (पृ० ४१)।

यह उल्लेखनीय है कि प्रस्तुत खण्डका आरम्भ अगाथा हैरिसनको एक तारमें भेजे गये इस आश्वासनसे होता है: "कुछ भी हो हमारे सम्बन्धोंके बीच दरार

पड़ना असम्भव है" (पृ० १)। दिल्लीमें कार्य-समिति तथा अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकोंमें "कुछ छोटे-मोटे झगड़े" (पृ० ९) हुए जिनसे गांधीजीको दुःख पहुँचा। लेकिन अन्तमें आपसी मतभेदोंको दूर करनेके लिए और ब्रिटिश सरकारके असली इरादोंकी परख करनेके लिए यह निश्चय किया गया कि जिन छः प्रान्तोंमें कांग्रेसका बहुमत है वहाँ कांग्रेस विधायक दल मन्त्रिमण्डल बना सकते है बशर्ते कि विधान-सभामें कांग्रेस दलका "नेता इस बातसे सन्तुष्ट" हो "तथा इस बातकी आम घोषणा" कर दे कि "... गवर्नर हस्तक्षेप करनेके अपने विशेष अधिकारोंका उपयोग नही करेंगे या मन्त्रियोकी सलाहको बरतरफ नही कर देंगे" (पृ० ५)। २२ मार्चको गाधीजीने अमृत कौरको सूचित किया "सब-कुछ सही ढंगसे सम्पन्न हो गया है ... जवाहरलाल नेहरूने जब सम्मेलनमें अपने भाषणके लिए समितिसे क्षमा-याचना कर ली तब वह अत्यन्त ऊँचे उठ गये। इन उद्विग्नतापूर्ण दिनोंमें किये गये किसी भी कामकी अपेक्षा उनकी इस क्षमा-याचनाने उन्हे समितिके कही ज्यादा निकट ला दिया है" (पृ० १७)। २७ तारीखको मद्राससे अगाथा हैरिसनको भेजे अपने तारमें गांधीजीने लिखा: "जिदके कारण आश्वासन देनेसे इनकार किया जा रहा है। इससे बातचीतमें गतिरोध निश्चित ही है। कांग्रेसके बड़े-छोटे लोगोंके बीच फूट असम्भव है" (पृ० ३०)।

तथापि ब्रिटिश सरकारने आश्वासन देनेकी माँगको ठुकरा दिया और अपने किये हुए वायदेसे एक बार फिर पीछे हट गई (पृ० ३०), तथा उसने जल्दबाजी करके कांग्रेस द्वारा बहुमत प्राप्त छः प्रान्तोमें "खिलौने-जैसे मन्त्रिमण्डल" (पृ० ६०) स्थापित कर दिये, जो कि विधान-सभाके समर्थनके बिना भी छः महीने तक आन्तरिक प्रशासन चला सकते थे।

"आश्वासन" देनेकी माँगको लेकर जो विवाद खड़ा हो गया था उससे कई प्रकारके राजनीतिक और संवैधानिक प्रश्न सामने आये — जैसे सरकार और पार्टीके बीच आपसी शिष्टाचार, गतिरोधकी समाप्ति, अल्पसंख्यकोंके हितोंकी रक्षा, पदच्युत और पदत्याग करनेमें अन्तर आदि। इस विवादकी वजहसे भारत और ब्रिटेन, दोनो ही देशोंमें जनमतका विकास होनेमें काफी मदद मिली। इन वाद-विवादोंमें गाधीजीने समय-समयपर हस्तक्षेप किया तथा कांग्रेस और सरकारके बीच "मध्यस्थ" का काम करते हुए एक ऐसा वातावरण बनानेमें अपने बुद्धि-चातुर्य तथा धैर्यका पूरा परिचय दिया जिसमें भारतीय जनमतने झूठी प्रतिष्ठाका आश्रय नही लिया और "नैतिक-दबावसे ब्रिटिश सरकारका मत-परिवर्तन" (पृ० ९२) सम्भव हो सका। गाधीजीकी कोई बँधी-बँधाई योजनाएँ नही थी। जैसी परिस्थिति सामने आती थी उनकी प्रतिक्रिया उसीके अनुरूप होती थी (पृ० ९५)। फिर भी उन्होने जवाहरलाल नेहरूको

लिखा कि "जब तक मेरी समझ साफ न हो जाये या तुम्हारे डर दूर न हो जायें, तबतक तुम्हें मुझे बर्दाश्त करना होगा" (पृ० ६१)। राजगोपालाचारीसे उन्होंने दृढ़ताके साथ कहा कि "मैं पद-ग्रहण करूँ, इससे पहले उन लोगोंकी ओरसे एक संकेत चाहता हूँ, और मैं उस संकेतको अत्यावश्यक मानता हूँ" (पृ० ३१२)। अप्रैलके अन्तमें इलाहाबादमें कार्य-समितिकी बैठकोंके दौरान "विवाद कोई नहीं हुआ" परन्तु विचार-विमर्शोंका "काफी दबाव" रहा (पृ० १७३)। धीरे-धीरे एक नई स्थिति पैदा होती गई। दोनों पक्षोंने अपने पहलेके वक्तव्योंकी फिरसे व्याख्या की तथा उसकी उग्रता कम की। वाइसरायने २१ जून को समझौतेके स्वरमें भाषण दिया और जुलाईके प्रथम सप्ताहमें वर्धामें कार्य-समितिकी बैठकमें एक प्रस्ताव पारित किया गया, जिसके अनुसार किसी औपचारिक आश्वासनका आग्रह किये बिना प्रान्तीय कांग्रेस विधायक दलोंको मन्त्रि-पद स्वीकार करनेकी अनुमति दे दी गई।

गांधीजीने इस महत्त्वपूर्ण निर्णयकी सूचना अमृत कौरको एक संक्षिप्त तार (पृ० ४०४) में भेजी और उन्हें कुछ-एक दिन बाद नेहरूजीकी प्रशंसा करते हुए लिखा: "जवाहरलालका रवैया बराबर बहुत अच्छा रहा। जब भी कठिनाइयाँ उपस्थित हुईं, उनके मनकी स्वभाव-सिद्ध निर्मलता प्रकट हुई और हमारी कठिनाइयाँ हल हो गईं। वे वास्तवमें वीर योद्धा हैं—एकदम निर्भय और निष्कलुष। मैं उन्हें जितना ज्यादा जान रहा हूँ उनके प्रति मेरा प्रेम उतना ही बढ़ता जाता है" (पृ० ४१०)। इन तीन महीनोंकी चर्चा करते हुए गांधीजीने घनश्यामदास बिड़लाको अपने पत्रमें लिखा कि मेरी हालत "प्रसूताकी"-सी थी। "प्रसूताको भीतर सब-कुछ होता है, बिचारी उसका वर्णन नहीं दे सकती", और अन्तमें लिखा: " . . . जवाहरलालने जो-कुछ कार्य-समितिमें कहा और किया वह सबका-सब अद्भुत था। यो भी उसका स्थान मेरी नजरमें ऊँचा था ही, अब तो बहुत बढ़ गया है। हमारा मतभेद कायम है। यह तो खूबी है" (पृ० ४५१)।

८ जुलाईको प्रान्तोंके अन्तरिम मन्त्रिमण्डलोंने त्यागपत्र दे दिया और उसके तुरन्त बाद मध्यप्रान्त, मद्रास, बिहार, बम्बई, संयुक्त प्रान्त और उड़ीसामें और कुछ समय पश्चात् ही उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त तथा असममें कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंने पद-ग्रहण कर लिया।

गांधीजीके सामान्य राजनीतिमें सक्रिय रूपसे दिलचस्पी लेनेसे गांधी सेवा संघके कई कार्यकर्ताओंको हैरानी होती थी और उन्हें असहयोग आन्दोलन समाप्त होता नजर आता था। हुदलीमें संघके सक्रिय कार्यकर्ताओंकी सभामें संघ तथा कांग्रेसके कार्योंकी भिन्नता तथा दोनोंके पारस्परिक सम्बन्धोंको स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा

कि "कांग्रेस करोड़ोकी प्रतिनिधि है" और "संघके सदस्य या तो अपने प्रतिनिधि हैं या सत्य और अहिंसाके" (पृ० ९६)। गांधीजीकी यह आकांक्षा थी कि उनकी मददके बिना "संघ वृक्षकी तरह हमेशा बढ़ता रहे" (पृ० ९८)। वे चाहते थे कि संघके कार्यकर्ता उनकी नहीं बल्कि उनके आदर्शोंके पुजारी बनें और संघके नाममें से उनका नाम हटा दें, तथा उनकी हड्डियोंके साथ उनके सारे लेख भी जला दिये जायें (पृ० ९७-८)। विधान-सभाओंमें शामिल होनेके प्रश्नपर गांधीजीका विरोध समर्थनके रूपमें परिवर्तित हो जानेपर उनके रुखमें जो स्पष्ट अन्तर दिखाई पड़ा, उसके विषयमें उन्होंने कहा, "इसमें कोई तत्वकी हानि नहीं हुई है।" "मैं सत्यका पुजारी हूँ, जनताका सेवक भी हूँ। मुझपर आबोहवाका असर होता है।" असहयोग करते समय भी दरअसल "मैं सहयोगी (कोऑपरेटर) ही था"। सहयोग तो हमेशा से मेरा धर्म रहा है और उसके लिए मैं मर जाऊँगा बशर्ते कि "वह इज्जतसे मिले"। आज विधान-सभाओंमें हम "सहयोग देने नहीं, लेने जा रहे हैं" (पृ० १०९-१०)। १९२० और १९३७ की परिस्थितियोंमें जमीन-आसमानका अन्तर हो चुका था। अतः गांधीजीने कहा कि "सुसंगतताकी जड़-पूजा करनेकी मूर्खता मैंने कभी नही की" (पृ० ४५५)।

यह मानते हुए कि पद-ग्रहण "काफी प्रलोभन देनेवाला है" और प्राय. इससे "मनुष्यमें जो पशुता है, वह जाग्रत हो जाती है" (पृ० १२७), गांधीजीने कहा कि वे फिर भी संसदीय प्रजातन्त्रका समर्थन करेंगे तथा सत्य और अहिंसाके आचरणका आग्रह रखेंगे (पृ० १२८)। इस बातपर जोर देते हुए कि सत्य-अहिंसाका संगठन हो सकता है और हमारा "सामुदायिक धर्म" बन सकता है, गांधीजीने इस बातका दावा किया कि "यदि मुझमें कोई विशेषता है तो यही है मैं सत्य और अहिंसाको संगठित कर रहा हूँ। . . . याद रहे कि सत्य और अहिंसा मठवासी संन्यासियोंके लिए नही है। अदालतें, विधान-सभाएँ और इतर व्यवहारोंमें भी ये सनातन सिद्धान्त लागू होते हैं" (पृ० १३४)।

जवाहरलाल नेहरूके साथ अपने मतभेदोंका जिक्र करते हुए गांधीजीने कहा: "उनका मनुष्य-जातिपर कुछ अविश्वास है। वे कहते हैं कि हम वहाँ कुछ नहीं कर सकते" अर्थात् विधानको अहिंसासे मिटा सकते हैं। इसीलिए वे "वर्ग-संघर्ष पर भरोसा करते हैं। . . . मैं कहता हूँ सम्पत्ति जड़ है, लेकिन धनिक तो जड़ नहीं हैं। उनका हृदय-परिवर्तन हो सकता है। वे कहते हैं ऐसा कभी हुआ ही नही" (पृ० १२९)। राजेन्द्रबाबू, वल्लभभाई, राजाजी तथा अन्य नेतागण मन्त्रि-पद स्वीकार करके उसे स्वराज्य हासिल करनेका साधन बनानेके पक्षमें थे, जबकि जवाहरलाल इस बातके विरुद्ध थे। फिर भी इन सब नेताओंने मिल-जुलकर कार्य

किया, क्योकि ऐसा करना आवश्यक हो गया था। "भिन्न राय रखनेवाले देशभक्तोंके साथ काम करना है। इसलिए समझौते और मेल-जोलसे काम करना ही होगा" (पृ० १२९)।

संघके जिम्मे तो सिर्फ एक ही कार्यक्रम था और वह था — रचनात्मक कार्यक्रम — और स्वराज्य-प्राप्ति इस कार्यक्रम पर ही निर्भर थी। गाधीजीने कहा कि यदि रचनात्मक कार्यक्रमको विधान-सभाओंके जरिये मदद मिल सकती है तो बाहरसे कार्य करते हुए इन संस्थाओका उपयोग क्यो न किया जाये? विधान-सभाओमें तीन करोड़ मतदाताओके प्रतिनिधि है और रचनात्मक कार्यकर्ताओको उनके "निकट सम्पर्कमें आ जाना चाहिए" और "उनसे जितना काम ले सकते है" लेना चाहिए (पृ० १३१)। "इस सम्पर्कको प्रभावशाली बनानेके लिए यदि गाधी सेवा संघके कुछ सदस्योको विधान-सभामें जाना पड़े, तो उन्हे वहाँ भेजना सघका कर्त्तव्य है, जो इन परिवर्तनोसे स्पष्ट होता है" (पृ० १९५)।

कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलो द्वारा पद-ग्रहण कर लेनेके तुरन्त बाद ही गाधीजीने 'हरिजन' के स्तम्भोके जरिये नये शासकोंको "राजनीतिक शिक्षा" देनी शुरू कर दी और उनके कर्त्तव्य तथा उत्तरदायित्वोंके विषयपर कई लेख लिखे। जवाहरलाल नेहरूको भेजे गये एक निजी पत्रमें गाधीजीने 'हरिजन' में लेख लिखना जारी रखनेके लिए नेहरूसे अनुमति माँगते हुए बतौर माफीके लिखा कि "सारी परिस्थितिको जिस तरह तुम सँभाल रहे हो उसमें मैं कोई हस्तक्षेप नही करना चाहता", लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि "लिखना मेरा कर्त्तव्य है" (पृ० ४२६)। 'हरिजन' के लेखोंमें गाधीजीने मन्त्रियोको "कड़ाईके साथ सादगीका पालन" करने तथा "शासनमें उसी सादगीका प्रवेश" (पृ० ४३९) करानेकी सलाह दी। उन्होने कहा कि अगर वे "ईमानदार, नि.स्वार्थ, उद्योगशील और सजग है तथा अपने करोडो भूखो मरनेवाले भाइयोका सचमुच भला करना चाहते है" (पृ० ४६७) तो कांग्रेसके पूर्ण स्वतन्त्रताके ध्येयकी तरफ तेजीसे कदम बढानेके लिए यह बड़ा अच्छा मौका है। गाधीजीने सिर्फ शराबबन्दीको "प्रौढ-शिक्षणका" प्रसार करनेका साधन ही नहीं बताया, बल्कि धनिको पर अधिक कर लगानेकी हिमायत भी की। "बच्चे या मनुष्यकी तमाम शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियोका सर्वतोमुखी विकास" को ही शिक्षाकी परिभाषा बताते हुए गांधीजीने कहा कि मेरा मत है कि इसके द्वारा "ऊँचीसे-ऊँची मानसिक और आत्मिक उन्नति" प्राप्त की जा सकती है। . . . हम विभिन्न दस्तकारियोकी केवल "यान्त्रिक क्रियाएँ" ही सिखाकर न रह जायें, बल्कि . . . प्रत्येक क्रियाका कारण और पूर्ण विधि भी सिखा दिया करे (पृ० ४८७)।

"काम करते-करते भाषा स्पष्ट होती जाती है। विचार, उच्चार और आचारका मेल ही सत्यका लक्षण है। . . . लेकिन विचार आगे बढ़ते जाते हैं और भाषा पीछे रह जाती है।" गांधीजी अपनी बातको जो समझा न पाये, उसका कारण उनकी अस्पष्ट भाषा थी। भाषाकी यह अस्पष्टता उनके अस्पष्ट विचारोंका परिणाम था, इसकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा: "विचार करनेके बाद जब मैं ध्यानावस्थित रहता हूँ, तो भाषा प्रतिदिन अधिक स्पष्ट होती जाती है" (पृ० १३३)। महत्त्व-पूर्ण और नाजुक मसलोंपर चर्चा करते हुए उन्होंने जवाहरलाल नेहरूको जो एक लम्बा पत्र लिखा, उसका अन्तिम अनुच्छेद इस प्रकार था: "खादीको तुम्हारा दिया हुआ नाम 'लिवरी ऑफ फ्रीडम' ('स्वतन्त्रताकी पोशाक') जबतक हिन्दुस्तानमें अंग्रेजी भाषा बोली जायेगी, तब तक जिन्दा रहेगा। . . . मेरे लिए वह केवल काव्य नहीं है। मेरे लिए तो वह एक ऐसे महान सत्यका प्रतिपादन करता है, जिसका पूरा अर्थ समझना अभी शेष है" (पृ० ४८२)।

इस प्रकार यह बात अच्छी तरहसे जानते हुए कि भाषाका प्रयोग काव्य और गणित, दोनोंके ही रूपमें हो सकता है, गांधीजीने वैष्णव धर्मपर एक विशेषाधिकारी की भाँति विचार व्यक्त किया, जो कि उनका सदा प्रिय-दर्शन रहा और जिसे उन्होंने किसी भी व्यक्तिकी भावनाओंको ठेस पहुँचाये बिना बुराइयोंको दूर करनेका साधन बनाया था। सामने आई मुश्किल समस्याओंपर विवाद खड़ा करनेके बजाय शान्तिपूर्ण समाधानके अपने प्रयासमें उन्होंने सत्य और हिन्दू-धर्मकी ओर देखा, क्योंकि उनके लिए सत्य-धर्म और हिन्दू-धर्म "पर्यायवाची शब्द" (पृ० १४३) थे। आध्यात्मिक साधनाके रूपमें मूक-निरपेक्ष सेवाकी प्रभावकारी शक्तिसे दक्षिण आफ्रिकामें उनका परिचय हुआ। शायद उनका यही तात्पर्य था जब कि उन्होंने कहा, "मुझे तो उस लडाईमें ईश्वरका साक्षात्कार कई बार हुआ है। इतना हुआ है कि मैं गधा होऊँ तो भी नहीं भूलूँ" (पृ० १३६)। ईसाको एक महान शिक्षक सिद्ध करनेके लिए गांधीजीको भविष्यवाणियों या चमत्कारोंकी जरूरत नहीं थी। उन्होंने कहा, "तीन वर्षके उनके शिक्षणसे बड़ा कोई चमत्कार हो नहीं सकता" (पृ० ९०) और अपने इस शिक्षणके दौरान ईसाने "एक नये धर्मका नहीं, बल्कि एक नये जीवनका उपदेश दिया था" (पृ० ३१६)। "आध्यात्मिक जीवन" (पृ० ३१८) जीकर कोई भी व्यक्ति, यह सोचनेकी भूल किये बगैर ही अपनी खुशबू सहज फैला सकता है कि वह दूसरोंकी आध्यात्मिक आवश्यकताओंकी पूर्ति कर सकता है। अपनी सुगंध फैलानेके लिए "यदि गुलाबको किसी प्रतिनिधिकी जरूरत नहीं है तो ईसाके उपदेशको तो उसकी और भी जरूरत नहीं होनी चाहिए" (पृ० ८९)।

ऐसी निरपेक्ष सेवा और आत्मस्फूर्त प्रभावका मूल साधन प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमें प्रकाशित होनेवाली अन्तर्ज्योति है। "आशाका सूर्य बाहर नहीं है। हमारे भीतर है। वहाँ उसे खोजो तो वह अवश्य मिलेगा" (पृ० २८१)। हमें तो अपने हृदयमें ऐसा वन उत्पन्न करना चाहिए, जहाँ हम पेड़-पत्तों, पशु-पक्षियोंसे मित्रता कर सकें, निर्भयता प्राप्त कर सकें और पड़ोसियोंको मदद देनेके लिए ज्ञान प्राप्त कर सकें (पृ० ३२१)।

दूसरोंके गुण-दोषकी विवेचना करनेकी प्रवृत्तिकी निन्दा करते हुए उन्होंने मीराबहनको लिखा: "हमें शाकाहारिताका जड़पूजक और उसे लेकर असहिष्णु नहीं होना चाहिए। शाकाहारितापर हमें इतने गुण नहीं लादने चाहिए कि वह उन्हें वहन ही न कर सके" (पृ० ४३५)। वह चाहते थे कि संस्था और व्यक्ति दोनों समान रूपसे "अपने ही अन्दर देखें" (पृ० ३४०) और अपनी खामियोंको ढूँढ़ें तथा दूसरोंमें केवल गुण ही देखें (पृ० १९८ और २२०)। इसीलिए उन्होंने ईसाई-धर्मको आँकना अस्वीकार कर दिया; लेकिन यह बात भी उन्हें ग्राह्य नहीं थी कि ईसाई-चर्च दूसरोंके "धर्म-परिवर्तन" करनेके अपने कर्त्तव्यको अपना अधिकार मानें (पृ० ५२-४)। "यदि धर्म-परिवर्तनकी दृष्टिसे किसी व्यक्तिके आगे कोई अन्य धर्म प्रस्तुत किया जाता है तो वह केवल बुद्धि या पेट या दोनोंके माध्यमसे की गई अपील ही होगी।" लोगोंने ऐसा धर्म-परिवर्तन केवल सुविधाके विचारसे किया है। उसे किसी भी अर्थमें आध्यात्मिक कार्य नहीं कहा जा सकता (पृ० ३१९)। 'सरमन ऑन द माउंट' (गिरि-प्रवचन) में दी गई सीख "ईश्वर कृपाकी नैतिकता" ही उनके लिए ईसाके उपदेशका मर्म था। उन्होंने अनुभव किया कि इस नैतिकताका पालन ईश्वरके आगे आत्म-समर्पण द्वारा ही सम्भव है और यदि इसका व्यवहारमें पालन किया जाये तो इसके द्वारा आत्मोत्कर्ष और सामाजिक उत्थान सम्भव है। उन्होंने भी यह महसूस किया था कि अमेरिका और यूरोपके उत्साही ईसाइयोंके लिए अपने ही लोगोंकी आध्यात्मिक आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए बहुत सारा काम पड़ा है। हिन्दू देवताओंमें हरिजन सहित सभी हिन्दुओंके हृदयको उद्वेलित करने और इस प्रकार उनकी आध्यात्मिक आवश्यकताकी पूर्ति करनेकी पर्याप्त शक्ति है, गांधीजीके इस विश्वासकी पुष्टि उनकी त्रावणकोरकी यात्राके दौरान हुई। इसीलिए उन्होंने हरदयाल नागकी इस उक्तिका पुरजोर समर्थन किया: "यदि मन्दिरोंसे अस्पृश्यता खत्म नहीं हुई तो मन्दिरोंको खत्म करना होगा; और यदि मन्दिर खत्म होते हैं तो उनके साथ जिस हिन्दू-धर्मसे हम परिचित हैं वह खत्म हो जायेगा" (पृ० १९२)।

सिर्फ अधिकाधिक मुनाफा कमानेके खयालसे दुधारू पशुओंपर ग्वालों द्वारा की जानेवाली अमानुषिकताको समाप्त करनेके लिए गांधीजीने सुझाव दिया कि "जिस तरह डाक-टिकटपर राज्यका एकाधिकार होता है" उसी तरह दुग्ध-उद्योगपर नगरपालिकाका एकाधिकार होना चाहिए (पृ० ३४३)।

नरीमन-प्रकरणको निपटाते समय गांधीजीने यह स्पष्ट कर दिया था कि एक सार्वजनिक कार्यकर्ताका किसी चीजपर दावा नहीं हो सकता है (पृ० ४४५), लेकिन साथ-ही-साथ उन्होंने यह भी कहा कि वल्लभभाई पर लगाये गये आरोप यदि सही निकलें तो उनके साथ मैं जो घनिष्ठ "सार्वजनिक सम्बन्ध" रखे हुए हूँ, वह तोड़ दूँगा (पृ० ४४६)।

उन दिनों आम तौरपर ऐसा माना जाता था कि कांग्रेस और मुस्लिम लीगके बीच किसी प्रकारके समझौतेका जवाहरलाल नेहरू विरोध करते थे। परन्तु एक पत्र (पृ० ४६१)से जान पड़ता है कि वास्तवमें समझौतेका विरोध नेहरूजी नहीं, बल्कि पुरुषोत्तमदास टण्डन कर रहे थे।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित सस्थाओं, व्यक्तियो, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं:

संस्थाएँ: साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय; नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रंथालय, अहमदाबाद; गाधी स्मारक निधि और संग्रहालय; राष्ट्रीय अभिलेखागार, नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली; काशी विद्यापीठ, वाराणसी और महाराष्ट्र सरकार।

व्यक्ति: श्री आनन्द तो० हिंगोरानी, इलाहाबाद; श्री ए० के० सेन, कलकत्ता; श्री एम० आर० मसानी, नई दिल्ली; श्री एल० आर० डाबा; श्रीमती एस० अम्बुजम्माल, मद्रास; श्री क० मा० मुन्शी, बम्बई; श्री कपिलराय एच० पारेख; श्री कान्तिलाल गाधी, बम्बई; श्री काशीनाथ एन० केलकर, पूना; श्री घनश्यामदास बिडला, कलकत्ता; श्रीमती तहमीना खम्भाता, बम्बई; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्री नारायण जेठालाल सम्पत, अहमदाबाद; श्री नारायण देसाई, बारडोली; श्री परीक्षितलाल एल० मजमूदार, अहमदाबाद; श्री पुरुषोत्तम कानजी जेराजाणी, बम्बई; श्री प्यारेलाल, नई दिल्ली; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड़; श्री बाबूराव डी० म्हात्रे, बम्बई; श्री भगवानजी अ० मेहता, राजकोट; श्रीमती मनुबहन सु० मशरूवाला, बम्बई; श्रीमती मीराबहन, गाडेन, आस्ट्रिया; श्री मुन्नालाल जी० शाह, सेवाग्राम; श्रीमती अमृत कौर; शिमला; डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, पटना; श्रीमती रामेश्वरी नेहरू; श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई; श्रीमती वादा दिनोव्सका; श्री वालजी गो० देसाई, पूना; श्रीमती विजयाबहन एम० पंचोली, सनोसरा; श्री शान्तिकुमार एन० मोरारजी, बम्बई; श्रीमती शारदाबहन गो० चोखावाला, सूरत; श्री सतीश डी० केलकर, नई दिल्ली; श्री सी० ए० तुलपुले और श्री हरिभाऊ उपाध्याय, नई दिल्ली।

पुस्तकें: 'इंडिया सिन्स द एडवेंट ऑफ द ब्रिटिश', '(द) इन्डियन ऐनुअल रजिस्टर; १९३७, खण्ड १', 'इन द शैडो ऑफ द महात्मा', 'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स'; 'कांग्रेस बुलेटिन, नं० ५ (जुलाई, १९३७)', 'गांधी, १९१५-१९४८: ए डिटेल्ड क्रॉनॉलॉजी', 'गांधी और राजस्थान', 'गांधी सेवा संघ के तृतीय वार्षिक अधिवेशन (हुदली, कर्नाटक) का विवरण', 'जीवनद्वारा शिक्षण', 'ट्वेन्टी ईयर्स

ऑफ द विश्वभारती चीना भवन, १९३७-१९५७', 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापुना पत्रो–६: गं० स्व० गंगाबहेनने', 'बापुना पत्रो–२: सरदार वल्लभभाईने', 'बापुनी प्रसादी', 'बापूनी आश्रमी केलवणी', 'बापूकी छायामें', 'बापू की छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष', 'बापूज लेटर्स टु मीरा', 'महात्मा: लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी, खण्ड ४', लीडर्स करेस्पार्डेंस विद जिन्ना', 'लेटर्स टु राजकुमारी अमृत कौर', 'सरदार वल्लभभाई पटेल खण्ड–२', 'सिलेक्टेड वर्क्स ऑफ जवाहरलाल नेहरू, खण्ड ७' तथा 'हिस्ट्री ऑफ द इन्डियन नेशनल काग्रेस, खण्ड २'।

पत्र-पत्रिकाएँ: 'टाइम्स ऑफ इंडिया', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु', 'हरिजन-सेवक', 'हिंतवाद', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन काउंसिल ऑफ वर्ल्ड अफ़ेयर्स लाइब्रेरी, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय, सूचना और एवं प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और संदर्भ विभाग तथा प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र है। प्रलेखोकी फोटो-नकल तैयार करनेमें मदद देनेके लिए हम सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके भी आभारी है।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलें सुधार दी गई हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमें प्राप्त हो सके है, उनका हमने मूलसे मिलान और संशोधन करनेके बाद उपयोग किया है। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणमें संशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दिये गये अंश सम्पादकीय हैं। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है। लेकिन यदि ऐसा कोई अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें जो गांधीजीके नहीं हैं कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है; जहाँ वह उपलब्ध नहीं है, वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ है, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका; 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' मोबाइल माक्रोफिल्म यूनिट द्वारा तैयार कराई गई रीलों का, 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीके फोटोस्टेटो का और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (क्लेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. तार: अगाथा हैरिसनको

दिल्ली
१५ मार्च, १९३७

अगाथा हैरिसन
२ क्रैनबोर्न कोर्ट
एल्बर्ट ब्रिज रोड
लन्दन

कुछ भी हो हमारे[1] सम्बन्धोंके बीच दरार पड़ना असम्भव है।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५०३) से।

२. तार: दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

१५ मार्च, १९३७

काका कालेलकर
हरिजन छात्रावास
वर्धा

मद्रास जाओ। हरिहर शर्मा[2]की मदद करो।

बापू
जमनालाल

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८९८) से।

१. कांग्रेसजनोंके; देखिए "तार: अगाथा हैरिसनको", २७-३-१९३७ भी।
२. जिन्हें अण्णा भी कहते थे।

३. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

किंग्जवे, दिल्ली
१५ मार्च, १९३७

प्रिय कु०,

कृपया इस बातका ध्यान रखना कि २५ अप्रैलसे पहले हमें राधाकृष्ण बजाजको एक पक्का मन गायका घी देना है। घी अच्छा तैयार किया हुआ होना चाहिए। घी तैयार करना स्वयं एक कला है। [हाँ, तुम जरूर,][1] इस बातकी चेष्टा करना कि घी अच्छा हो।

मौसम . . .[2] मैं कहीं यह बताना न भूल जाऊँ कि फिशरने मुझसे कहा था कि वह बड़ी आसानीसे मक्खन बनानेका काम देख सकते हैं।

मैं रविवारको . . .[3] वापस आनेकी आशा रखता हूँ।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०११४) से।

४. पत्र : मीराबहनको

हरिजन निवास
किंग्जवे, दिल्ली
१५ मार्च, १९३७

चि० मीरा,

अभी तो यहाँ मौसम बहुत बढ़िया है। मार्चमें और अप्रैलके कुछ समयमें यहाँ सदा ऐसा ही रहता है।

आशा है, तुम विजया[4] का हृदय जीत लोगी। मैं इससे अच्छी लड़की तुम्हें कभी नही दे सकूंगा। और तुम कण्डू और दूसरे लड़कों[5] को ज्यादा लाड़-दुलार मत देना।

१. साधन-सूत्रमें यहाँ अक्षर मिट गये हैं।

२ और ३. यहाँ कुछ शब्द पढ़े नहीं जाते।

४. विजया एन० पटेल; देखिए अगला शीर्षक भी।

५. बापूज लेटर्स टु मीरामें मीराबहनने बताया है कि वे गाँवके "हरिजन लड़के" थे।

दुर्भाग्यसे जैसा मेरा और तुम्हारा सुकुमार शरीर है, वैसा यदि उनका भी हो गया तो उनका जीवन बरबाद हो जायेगा। पानीवाली घटना मुझे खटकी है।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

यह पत्र उक्त तारीखको लिखा गया था, लेकिन पहले नहीं भेजा जा सका। तुम्हारा पत्र मिला है। शायद इतवारसे पहले नहीं रवाना हो सकूंगा।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३७७) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८४३ से भी

५. पत्र : विजया एन० पटेलको

१५ मार्च, १९३८

चि० विजया,

तुझे मीराबहनका हृदय जीतना है। मीराबहन के संगको सती-संग, सत्संग, साध्वी-संग समझना। व्यक्तिके दोष नहीं देखने चाहिए, उसके गुण देखने चाहिए। यह रहा तुलसीदासका दोहा :

जड़ चेतन गुन दोषमय, विस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि वारि विकार।।

अर्थ समझमें न आये, तो बालकाण्डमें देख लेना, अथवा नानावटीसे पूछना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०६३) से। सी० डब्ल्यू० ४५५५ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

६. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

दिल्ली
१५ मार्च, १९३७

चि० अमृतलाल,

हमें राधाकृष्णको पक्का एक मन गुड़ २५ अप्रैलके पहले भेजना है। गुड़ ठीक ढंगसे बन्द करके भेजना चाहिए, और अच्छी किस्मका ऐसा होना चाहिए जो नरम न पड़े। नरम पड़नेवाला गुड़ हमें खुद काममें ले आना चाहिए। जैसे-जैसे तैयार होता जाये, उन्हे पहुँचाना।

अपनी तन्दुरुस्ती ठीक रखकर ही जो करना हो सो करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७२८) से।

७. अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्तावका अंश[1]

दिल्ली
१६ मार्च, १९३७

अ० भा० कां० कमेटी २७ और २८ फरवरी, १९३७को वर्धामें पारित कार्य-समितिके उन प्रस्तावोका अनुमोदन और समर्थन करती है जो विधान-सभाओंके कांग्रेसी सदस्योंकी संसदीयतर गतिविधियो, जन-सम्पर्क और विधान-सभाओमें कांग्रेसकी नीतिसे सम्बन्धित है। अ० भा० कां० क० उन सभी कांग्रेसजनोंसे, जो विधान-सभाओमें और बाहर हैं, अनुरोध करती है कि वे उनमें बताये गये अनुदेशोंके अनुसार काम करें। पदोंकी स्वीकृतिसे सम्बन्धित जो प्रश्न निलम्बित कर दिया गया था, उसपर पिछले अनुच्छेदमें संक्षेपतः सूचित नीतिका पालन करते हुए अ० भा० कां० क० यह अधिकार तथा इस बातकी अनुमति देती है कि उन प्रान्तोमें जहाँ कांग्रेसका बहुमत है, मन्त्री-पद स्वीकार कर लिये जायें। शर्त यह होगी कि मन्त्री-पद तबतक स्वीकार नही किये

१. गांधीजीने कहा था कि कांग्रेस प्रस्तावकी पद-स्वीकृति वाली धारा उन्हींके द्वारा लिखी गई थी। देखिए "भेंट : समाचारपत्रोंको", १९-३-१९३७; "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", ३०-३-१९३७ भी। अ० भा० कां० क० की दिल्लीमें हुई बैठकमें पारित प्रस्तावके मूल पाठ तथा पृष्ठभूमिके लिए, देखिए परिशिष्ट १।

जायेंगे जबतक कि विधान-सभामें कांग्रेस-दलका नेता इस बातसे सन्तुष्ट न हो तथा इस बातकी आम घोषणा न कर दे कि जबतक वह और उसका मन्त्रिमण्डल संविधानके भीतर काम करते रहेंगे, तबतक गवर्नर हस्तक्षेप करनेके अपने विशेष अधिकारोंका उपयोग नहीं करेंगे या मन्त्रियोंकी सलाहको बरतरफ नहीं कर देंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-३-१९३७

८. पत्र : अमृत कौरको

दिल्ली
१७ मार्च, १९३७

प्रिय पगली,

इस पत्रमें केवल समाचार ही दूंगा। मैंने कल और सोमवारको दो बार तुम्हें पत्र लिखनेकी कोशिश की परन्तु लिख नहीं सका। अब मैं प्रार्थनाके तुरन्त बाद लिखने बैठ गया हूँ। तुमने सही लिखा। नापनेका फीता टिनके बक्समें मिला। तुम्हारी नजरसे कुछ भी ओझल नहीं रहता। महादेव सुभाषचन्द्र बोस[1] से मिलने कलकत्ता गये हैं। वह कल गये थे। मैंने उन्हें इसलिए भेज दिया कि जमनालाल बजाज मुझे रविवारसे पहले नहीं जाने देंगे। यहाँ केवल प्यारेलाल, महादेव और मैं हूँ।

तुम बिशप मूरको पत्र लिखनेका कष्ट बिलकुल मत करो।

हाँ, मिशनवालोंका पत्र सामान्य विश्वासके अनुरूप ही है। परन्तु दोर्णाक्कल[2] का कोई मुकाबला नहीं।

आशा है, तुम्हारे स्वास्थ्यमें बराबर सुधार हो रहा होगा।

हिन्दी पुस्तकोंका पार्सल तुम्हें कल भेजा था। गाँवका बना कागज आर० को दे दिया गया है। मैं नहीं समझता कि अब और कुछ करना बाकी रह गया है। भापके वैज्ञानिक यन्त्र अभी तुम्हें मिलने हैं।

यदि तुम अपने भोजनमें मलाई और मक्खनकी मात्रा बढ़ा सको तो ज्यादा अच्छा होगा; परन्तु इन्हें जबरदस्ती मत खाना। भोजनको पचा सकना जरूरी है।

मैं ठीक हूँ; दूध ज्यादा ले रहा हूँ।

सस्नेह,

जालिम

१. जो १७ मार्चको जेलसे रिहा हुए थे।
२. दोर्णाक्कलके बिशप; देखिए "बातचीत : एक मिशनरीके साथ", १४-४-१९३७ के पूर्व; खण्ड ६४, पृ० ३१७-१९ भी।

[पुनश्च :]

पियरेको[1] प्यार। आशा है, उन्हें मेरा यह सन्देश मिल गया होगा कि यात्राके लिए मार्ग-व्यय उन्हें नहीं देना पड़ेगा।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७६७) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९२३ से भी।

९. पत्र : लीलावती आसरको

१७ मार्च, १९३७

चि० लीलावती,

बा को तो लिखा है, लेकिन बनाकर तो तू देगी। कनु[2] को रोज रोटी बनाकर देना है, ताकि वह उसे अपने साथ ले जाये और शामको खाये। और भी कुछ बनाकर देनेकी जरूरत हो, तो बना देना। अपने मिनट-मिनटका हिसाब रखना। जहाँ तक बने सवेरे चार बजे ही उठनेकी आदत डालना और दोपहरको एक घंटा अवश्य सोना। अध्ययन बराबर करती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५८४) से। सी० डब्ल्यू० ६५५६ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१. पियरे सेरेसोल, स्विटजरलैंडके एक शान्तिवादी, अन्तर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी सेनाके अध्यक्ष, जो बिहारमें राहत पहुँचानेके काममें मदद करनेके लिए भारत आये थे।

२. नारणदास गांधीके पुत्र, जो "कनैयो" भी कहलाते थे।

१०. पत्र : मनु गांधीको

[१७ मार्च, १९३७][1]

चि० मनुडी[2],

तुझे लिखनेका समय मेरे पास नही है। मन लगाकर पढ़ना और अपनी लिखावट सुधारना। कानम[3] से कहना कि सुनता हूँ वहाँ फुटवाल नही मिला। मैं यहाँसे लेता आऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५८४) से। सी० डब्ल्यू० ६५५६ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

११. पत्र : वालजी गो० देसाईको

१७ मार्च, १९३७

चि० वालजी,

मोटा[4] की नाक और कौओका ऑपरेशन करा देना। इसमें कोई हर्ज नही है। मुझे परिणाम सूचित करना।

मैं वर्धा २२ को पहुँचूंगा, और २६ को मद्रास।

तुम्हारी 'भारती' पढ गया हूँ। वह रोचक तो लगती है, किन्तु उद्देश्य समझमें नही आता। जो विवरण मनुष्यके अनुभवके बाहरके है, बिना आवश्यक स्पष्टीकरण किये क्या वे बालकोको दिये जाने चाहिए?

१. यह पत्र लीलावती आसरको भेजे गये पिछले पत्र पर ही लिखा हुआ था।
२. हरिलाल गांधीकी कनिष्ठ पुत्री।
३. रामदास गांधीके पुत्र, जो "कानो" भी कहलाते थे।
४. महेन्द्र वा० देसाई, वालजी देसाईके ज्येष्ठ पुत्र।

क्या वयस्क भी समझेंगे? मैं 'रामायण' पढ़ रहा हूँ। मैं कोई आपत्ति तो नही उठा सकता। मुश्किलसे वाचनालयमें अथवा ऐसे ही किसी समय जैसे-तैसे पढ़ लेता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्री वालजी देसाई
श्री मगनलाल उदानीके मकान पर
पार्वती मैन्शन, ग्राण्ट रोड
बम्बई-७

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४७८) से; सौजन्य: वालजी गो० देसाई

१२. पत्र: प्रभावतीको

दिल्ली
१७ मार्च, १९३७

चि० प्रभा,

तू कितनी अधीर है? तुझे पत्र लिखूं और वह तुझे देरसे मिले, तो क्या यह भी मेरी गलती है? हाँ, पिछले सोमवारको नही लिख पाया। तेरे दोनों पत्र मिले। वर्णन सुन्दर है। सिर्फ महादेव और प्यारेलाल ही मेरे साथ आ रहे हैं। हम लोग मजेमें हैं। महादेव कल सुभाषबाबूसे मिलने कलकत्ता गये। लौटकर यहीं आयेंगे। हम लोग यहाँसे रविवारको रवाना होंगे। यहाँका पता तो, जो तू लिखती है, काफी है। हमें मद्रास २६ को पहुँचना है। वहाँ तीन दिन रहना पड़ेगा। वहाँका पता होगा: द्वारा हिन्दी-प्रचार कार्यालय, त्यागराजनगर, मद्रास। बहुत करके बा भी हमारे संग मद्रास जायेंगी।

यदि तू अच्छी तरह खाये और चिन्ता न करे, तो अच्छी हो जायेगी। मृदुके[1] साथ बात तो करूँगा। वह यहाँ रहने आई है। किन्तु तू वहाँसे जब चाहे तब कैसे आ सकती है? क्या इसके बारेमें जयप्रकाशके साथ कोई समझौता नहीं कर सकती? वह तो यह आशा करता है न कि कुछ समय तक तू उसकी मदद करे? वही उचित होगा। वेतनके बारेमें मैं देख लूंगा।

अमतुस्सलाम यहाँ है। जवाहरलाल भी यहीं हैं। यहाँ इस समय खूब भीड़ है, और अभी बढ़ेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २४९४) से।

१. मृदुला साराभाई।

१३. पत्र : अमृत कौरको

दिल्ली
१९ मार्च, १९३७

प्रिय पगली,

तुम चाहती हो कि मैं तुम्हें समाचार भेजूँ। परन्तु मेरे पास तुम्हारे-जैसी लेखन-शक्ति नही है। घटों लिखकर भी तुम्हारे पास बहुत-कुछ लिखनेको रह जाता है। और यदि मुझे मात्र गपशप ही करनी हो तो वह तो मैं कुछ मिनट भी नही चला सकता। लो, सवेरेकी प्रार्थनाकी घंटी बज रही है। यदि तुम समझती हो कि लन्दन-वाले पत्रका प्रथम प्रासंगिक अंश प्रकाशित कर दिया जाये तो उसकी नकल करके भेज दो। सरदार दातारसिंह मुझसे परसों मिले थे और हमने उनकी डेरीके बारेमें बातचीत की। तुम वहाँ जाओ और उसे देखो। उनकी एक डेरी लाहौरमें है। गवर्नर जनरलसे मेरे मिलनेकी कोई सम्भावना नही है। मैं रविवारको, सम्भवत. कल ही, चला जाऊँगा। ऐसा लगता है कि अ० भा० कां० क०में सब काम ठीक तरहसे सम्पन्न हो गया। परन्तु कुछ छोटे-मोटे झगडे भी हुए। इससे मुझे दु:ख हुआ।[1] ऐसे समय आदमी कुछ सोचनेको बाध्य हो जाता है।

महादेव आज या आजकी रात वापस आ रहे हैं। वह सुभाषचन्द्र बोसकी रिहाईके बाद घंटा-भर उनके साथ रहे। मुझे खुशी है कि इस बार महादेव उनके स्वतन्त्र होनेपर ठीक वक्तपर उनका स्वागत करने गये। परन्तु कौन जानता है कि वे अब ज्यादा स्वतन्त्र है या तब जब कैदमें थे। मगनवाल गाँवका तुम्हारे द्वारा दिया गया विवरण अत्यन्त आशाजनक है। निस्सन्देह सब जगह कठिनाई कार्य-कर्ताओंके बारेमें ही. है। या तो उन्हे ढूँढ़ना पडता है या उन्हे उसी जगह तैयार करना पडता है। बाहर से लाना सम्भव नही है, क्योकि बाहर भेजने लायक अतिरिक्त कार्यकर्ता कहीं भी नही हैं।

अब मुझे लिखना बन्द करना पड़ रहा है, क्योकि मिलनेवाले मुझे घेरे हुए हैं।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७६८) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९२४ से भी

१. गांधीजीके विचार जाननेके लिए, देखिए "भाषण : गांधी सेवा संघकी सभा, हुदली-३ में", २०-४-१९३७।

१४. भेंट : समाचारपत्रोंको

दिल्ली

१९ मार्च, १९३७

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके प्रस्ताव पर[1] टिप्पणी करनेके लिए कहे जाने पर गांधीजीने कहा :

यह अब मेरे अधिकार-क्षेत्रकी बात नही है। अब मैं कांग्रेसकी दैनन्दिन गतिविधियोसे दूर रहता हूँ। इसलिए मैं इस सम्बन्धमें कोई भविष्यवाणी नही कर सकता कि जब यह प्रस्ताव प्रान्तीय राजनीति की वास्तविक परिस्थितियोमें कार्यान्वित किया जायेगा तब क्या होगा। फिलहाल तो मेरा सरोकार इतना ही है कि मैं सलाह देता रहूँ और मसविदा तैयार करनेमें मदद करूँ।[2]

पदोंकी स्वीकृतिको कांग्रेस वस्तुतः असम्भव बना देना चाही हैं, इस बातसे दृढ़तापूर्वक इनकार करते हुए उन्होंने कहा :

यह बिलकुल छल-छद्म रहित प्रस्ताव है। इसमें रत्ती-भर भी मानसिक दुराव नही है। परन्तु यह अविभाज्य तथा अविकल रूपमें पढ़ा जाना चाहिए। यदि गवर्नर चाहते हैं कि कांग्रेसी पद ग्रहण कर ले तो मुझे प्रस्तावमें ऐसी कोई बात नजर नही आती जिससे कि उन्हें कांग्रेसी नेताओंको उन प्रान्तोमें, जिनका वे प्रतिनिधित्व करते हैं, पूरी तरह सन्तुष्ट करनेमें कुछ भी अटपटापन लगे। प्रान्तोके गवर्नरोको यह भी उसी सीमित दायरेके अन्दर करना है जहाँकि उन्हें अपनी निर्णय-बुद्धिसे कार्य करनेकी स्वतन्त्रता है। प्रस्तावमें और कुछ नही कहा गया है। जब गवर्नर किसी भी नेताको अधिनियमकी शर्तोके अनुसार मन्त्रिमण्डल बनानेके लिए बुलायेंगे तो वह स्वभावतः कांग्रेस-प्रस्तावका उदाहरणके रूपमें उपयोग करेगा और प्रस्तावकी परिधिमें आनेवाले मामलोपर आश्वासन माँगेगा।

यह पूछे जानेपर कि क्या वे इस बातका कुछ संकेत दे सकते है कि कांग्रेस-मन्त्रालयोंके कामकाजकी योजनाका ब्योरा क्या होगा, महात्मा गांधीने कहा कि यह काम वही लोग सबसे ज्यादा अच्छी तरह कर सकते हैं जिनके द्वारा स्वयं कार्य-भार सँभाले जानेकी आशा है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २०-३-१९३७

१. देखिए परिशिष्ट १।

२. देखिए "अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्तावका अंश", पृ० ४-५।

१५. जबरदस्तीका वैधव्य

जूलियस सीजरके जमानेमें सिसली-निवासी डियोडोरसने ससारका एक बृहद् इतिहास लिखा था। इस ग्रन्थमें से प्यारेलालने सती और विधवा-प्रथासे सम्बन्धित एक ज्ञानवर्धक अंश खोज निकाला है। वह अंश इस प्रकार है:

> भारतवासियोंमें प्राचीन-कालसे ऐसा रिवाज चला आ रहा था कि जब युवक और युवतियोंका विवाह करनेका मन होता, तब वे अपने माँ-बापके कहे अनुसार नहीं, किन्तु खुद ही एक-दूसरेकी सहमतिसे विवाह कर लेते थे। पर जब कच्ची उम्रमें विवाह होते, तो अकसर साथीके चुनावमें भूल हो जाती और जब दोनों पक्ष विवाह-सूत्रमें बँध जाने पर पश्चात्ताप करते, तब बहुत-सी स्त्रियाँ चरित्रसे भ्रष्ट हो जातीं और दूसरे पुरुषोंके साथ प्रेम करने लगती थीं। अन्तमें जब वे अपने पहले चुने हुए पतिको छोड़ना चाहतीं पर लोक-लाजके कारण खुल्लम-खुल्ला न छोड़ पातीं, तब उसे जहर देकर मार डालती थीं। उनके देशमें ऐसी प्राणघातक दवाइयाँ बहुत-सी और अनेक किस्मकी बनती हैं। इन दवाइयोंको खाने या पीनेकी चीजोंमें पीसकर मिला देनेसे मनुष्यकी मृत्यु हो जाती है। परन्तु जब यह कुप्रथा बहुत ज्यादा प्रचलित हो गई और सैकड़ों हत्याएँ होने लगीं और अपराधियोंको सजा मिलने पर भी दूसरी स्त्रियाँ इस कुकर्मसे बाज न आईं, तब यह कानून बनाया गया कि पतिकी मृत्युके समय स्त्री यदि गर्भवती न हो या इससे पहले उसके बच्चे न हुए हों तो उसे पतिके शवके साथ जिन्दा जला दिया जाये और अगर वह इस कानूनके अनुसार न चलना चाहे, तो वह जीवन-पर्यन्त विधवा रहे, और उसे अपवित्र माना जाये तथा यज्ञादि धार्मिक कृत्योंसे उसे बहिष्कृत कर दिया जाये।

यह अवतरण यदि इन दो अमानुषिक प्रथाओंके उद्‌भवके सम्बन्धमें सही-सही सूचना देता है तो कानूनके जोरसे हमारे यहाँ जो सती-प्रथा जबरन बन्द करा दी गई है, इसके लिए हमें ईश्वरका कृतज्ञ होना चाहिए। जिन बालिकाओंको इसका भान भी न हो कि विवाह क्या चीज है, उनसे बलात्कारपूर्वक वैधव्य पालन करानेके रिवाजको हिन्दू-समाजसे कोई भी बाहरकी शक्ति जबरन खत्म नहीं करा सकती। यह सुधार पहले तो हिन्दुओंमें प्रबुद्ध लोकमतके द्वारा हो सकता है, और दूसरे तब जब माता-पिता अपनी विधवा पुत्रियोंका विवाह करना अपना कर्तव्य मानें। जहाँ लड़कियोंकी सहमति न हो, वहाँ माँ-बाप उन्हें समझायें कि पुनर्विवाह करनेमें कुछ भी दोष नहीं है। यह कच्ची उम्रकी लड़कियोंके बारेमें ही है। जहाँ 'विधवा' कहीं

जानेवाली स्त्रियाँ प्रौढ़ उम्रकी हो गई हों और विवाह न करना चाहती हों, वहाँ उनसे यह कहा जाये कि उन्हें अविवाहित कुमारियोंकी तरह ही विवाह करनेकी स्वतन्त्रता है; इसके सिवाय और कुछ करनेकी जरूरत नहीं। जो कैदी जंजीरोंको भूलसे जेवर मानकर सीनेसे चिपटाये रहते हैं— जिस तरह कि लड़कियाँ, और यहाँतक कि बड़ी उम्रकी स्त्रियाँ भी अपनी सोने-चाँदीकी जंजीरों और अँगूठियोंको चिपटाये रहती हैं— उनकी जंजीरोंको तो तोड़ना मुश्किल है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-३-१९३७

१६. एक भ्रम

यह पत्र[1] मुझे गत नवम्बर मासमें मिला था। लेकिन कार्यवश अबतक मैं इसपर कुछ लिख नहीं सका था। लेखक महोदय लाहौरके एक विद्वान हैं। आश्चर्यका विषय यह है कि वे एक भारी भ्रममें पड़े हुए हैं। त्रावणकोरके हालके चमत्कारने शायद उनके भ्रमको दूर कर दिया हो, तो भी ऐसा भ्रम बहुत-से लोगोंको रहता है। इसलिए अच्छा यह होगा कि उनके पत्रका उत्तर दिया जाये।

त्रावणकोरमें जिन हरिजनोंने मन्दिर-प्रवेशके बारेमें प्रबल आन्दोलन उठाया, वे सब पैसे-टकेसे सुखी थे। उनके नेता त्रावणकोरके भूतपूर्व जज श्री गोविन्दन थे, और आज भी हैं। पैसा उन्हें शान्ति नहीं दे रहा था। मन्दिर-प्रवेशने उन्हें शान्ति प्रदान की है, यह हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं। महाराजा और महारानी पर वे मुग्ध हो गये हैं। महाराजा अगर उन्हें अपना आधा राज्य भी सौंप देते, तब भी वह काम नहीं हो सकता था, जो मन्दिर खोल देनेसे हो गया है। इस चमत्कारका अर्थ यह है कि मनुष्य बहुत-सी चीजोंको धनसे भी बहुत कीमती समझता है। स्वाभिमानके लिए मनुष्य अपना सर्वस्व चढ़ा देता है। धर्मके लिए लोगोंने अनेक संकट सहे हैं, और मृत्यु तकका आलिंगन किया है।

विधर्मियोंसे हिन्दू-जाति छुआछूतका व्यवहार रखती है, इसमें भी घृणा तो अवश्य है ही। लेकिन विधर्मियोंको बलवान होनेके कारण इतना बुरा नहीं लगता जितना कि हरिजनोंको लगता है, जो सहधर्मी होते हुए भी अछूत माने जाते हैं।

यह कहना भी ठीक नहीं है कि चार वर्णोंके बीचमें भी खानपानका प्रतिबन्ध है। इसमें और अछूतपनमें वैसा ही अन्तर है, जैसाकि हाथी और चींटीमें। उनके पास कितना ही धन हो, यदि दस्तूरके बाहर जाकर वे कुछ करते हैं तो पीटे जाते हैं। अवश्य मेरा विश्वास है कि हरिजनोंके कष्टोंके लिए सवर्ण हिन्दू ही

१. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने कहा था कि सवर्ण हिन्दू हरिजनोंसे इसलिए दुर्व्यवहार करते हैं कि वे गरीब हैं। और जबतक उनकी आर्थिक दशा नहीं सुधारी जाती, अस्पृश्यताके निरोधमें किया जानेवाला काम कभी सफल नहीं हो सकता।

जिम्मेवार हैं। उन्होंने अधर्मको धर्म बना रखा है। उनके प्रश्नको सिर्फ आर्थिक बना देना मौजूदा स्थितिसे इनकार करना ही कहा जा सकता है।

लेखक महोदयके लिखनेसे कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि यद्यपि वे हिन्दू हैं, तो भी अपने समाजसे वे बाहर-से रहते हैं। ब्राह्मण कोई ऐसे नहीं पाये जाते, जिनसे कोई राजपूत या अन्य वर्णके हिन्दू घृणा करें। बल्कि इसके विपरीत, हम हमेशा यह देखते हैं कि ब्राह्मण या और कोई भी अगर जान-बूझकर गरीबी पसन्द करते हैं तो धनिक भी उन्हें पूजते हैं।

अन्तमें, लेखकका पत्र विनय और ध्यानपूर्वक पढ़ते हुए भी अस्पृश्यताके बारेमें मैंने जो-कुछ कहा है और किया है, उसके सम्बन्धमें मुझे कोई पश्चात्ताप नहीं है।

हरिजन-सेवक, २०-३-१९३७

१७. भेंट : पण्डित इन्द्रको

२० मार्च, १९३७

यद्यपि मैं जवाहरलालका कैदी हूँ और उनके आदेशसे बँधा हुआ हूँ, फिर भी मैं फिलहाल अपना सारा ध्यान गाँवके और वह भी सेगाँवके काममें लगाये हूँ।

महात्मा गांधीने कांग्रेस-सम्मेलन[1] की स्वागत-समितिके प्रधान पण्डित इन्द्र और दूसरे लोगोंको, जो उनके पास यह प्रार्थना लेकर गये थे कि वह आजके सम्मेलनके सत्रमें शामिल हों, ऐसा कहा। महात्माजीने यह भी कहा :

मैंने एक विशेष मार्ग चुना है। इसके सिवाय और कुछ मुझे सूझता ही नहीं है। इस वक्त मेरा मन उसी ओर लगा हुआ है। जब मैं आपके सामने कुछ पेश कर सकूँगा, तब मैं आपके बिना कहे ही आ जाऊँगा। मेरे गाँवमें बैठनेका कुछ अर्थ है। मुझे अपने प्रयत्नोंमें सफलताकी आशा बढ़ती दिखाई पड़ती है।

जब गांधीजीसे ग्रामीणोंकी सभामें बोलनेके लिए कहा गया, तब उन्होंने उत्तर दिया :

अभी मेरी नजर सेगाँव पर है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-३-१९३७

१. विधान-सभाओंके नये चुने हुए कांग्रेसी सदस्य और दूसरे अ० भा० कां० क० के सदस्योंका सम्मेलन १९ और २० मार्चको दिल्लीमें हुआ था। इसमें विधायकोंको राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और भारतीयोंके प्रति निष्ठा की शपथ दिलाई गई। इसके बाद प्रचलित परम्पराके अनुसार ब्रिटिश राजके प्रति निष्ठा की शपथ दिलाई गई।

१८. विद्यालयमें खादी-कार्य

मुख्यतः स्व० रेवाशंकर जगजीवन झवेरीके उद्योगसे और श्री जमनादास गांधीकी सहायतासे राजकोटमें सोलह वर्ष पहले इस राष्ट्रीय विद्यालयकी स्थापना हुई थी। इसका सोलहवाँ वार्षिकोत्सव श्री नरहरि परीखकी अध्यक्षतामें गत महीने मनाया गया। इस विद्यालयके तीन विभाग है — विनय, कुमार और बाल मन्दिर। इनमें कुल १९० विद्यार्थी — ११० बालक और ८० बालिकाएँ — शिक्षा पाते है। श्री नारणदास गांधीके वक्तव्यमें से नीचे लिखा ध्यान आकर्षित करनेवाला अनुच्छेद[1] उद्धृत करता हूँ।

बालको और बालिकाओमे इस प्रकार खादीके प्रति रुचि उत्पन्न की जा सकती है, यह हर्षका विषय है। कपास भी विद्यालय द्वारा बोया जाता है, दुग्धालय चल रहा है और युक्ताहार-सम्बन्धी चीजें भी वही तैयार की जाती हैं, यह महत्वकी बात है। यदि इस तरह शिक्षा दी जाये कि सर्वांगीण विकास करते हुए बालक तथा बालिकाएँ उत्पन्न की जानेवाली वस्तुओंका शास्त्र समझें, तो उनकी बुद्धिका सच्चा विकास होगा। यह मानना कि जिन वस्तुओका जीवनमें उपयोग न हो, उन वस्तुओको बालकोंके दिमागमें ठूँसनेसे उनकी बुद्धि विकसित होती है, भ्रम है। बुद्धिका उसमें विलास भले ही हो, किन्तु विकास नही होगा, क्योंकि कोरी बुद्धि विवेक नही कर सकती। किन्तु जहाँ बालक या बालिकाको कुछ क्रिया करनी पड़ती है और वह क्रिया उसे यन्त्रवत् नही सिखाई जाती, बल्कि प्रत्येक क्रियाके कारण समझाये जाते हैं, वहाँ उसकी बुद्धिका सम्यक् रूपसे विकास होता है, बालकको अपने-आपका भान होता है, वह स्वाभिमान सीखता है, और स्वावलम्बी बनता है।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २१-३-१९३७

१. अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। अन्य बातोंके साथ उक्त वक्तव्यमें यह दर्शाया गया था कि विद्यालयके छात्र खादीमें बड़ी रुचि लेते हैं। सिलाई, बुनाई, खेती और दुग्धालयका काम सिखानेके लिए विद्यालयमें कक्षाएँ चलाई जाती हैं, और यहाँ एक वस्तु-भंडार भी है।

१९. प्रश्नोंके उत्तर[1]

[दिल्ली,
२२ मार्च, १९३७ या उसके पूर्व][2]

प्रश्न: यह तो ठीक है कि आप हमें दर्जीका और ऊँचे दर्जेके जूते बनानेका काम सिखाते हैं। परन्तु हमारे गाँवोंको इसकी जरूरत नहीं है। हमें कोई ऐसा काम सीखना चाहिए जिसकी हमारे गाँवोंको जरूरत हो।

उत्तर. आपकी बात आंशिक रूपमें सही और आंशिक रूपमें गलत है। ग्रामीणोको चाहे इन वस्तुओंकी जरूरत न हो, परन्तु शहरके लोगोको इनकी जरूरत है। वे इन चीजोके लिए दूसरे लोगोकी अपेक्षा आपपर क्यो न निर्भर रहें? यदि इस तरह शहरो और गाँवोके बीच जीवन्त सम्पर्क स्थापित किया जा सके तो यह बहुत अच्छा होगा। आप यहाँ जो-कुछ सीखते हैं, वह आपको ग्रामीणोको सिखलाना है।

प्रश्न: चमड़ा कमाने और सफाई करनेके जो काम हमारे पूर्वज करते थे और जिनके कारण हम शताब्दियों तक अछूत बने रहे, यदि वे ही काम हमें करने हैं तो आप छुआछूत कैसे समाप्त करेंगे?

उत्तर: आपसे अपने पूर्वजोका धन्धा छोड़ देनेके लिए कहकर नही, अपितु इसे स्वयं करके ऐसा करेंगे। क्या आप नही जानते कि मैं झाड़ू लगानेमें बड़ा कुशल हूँ? परन्तु कोई भी व्यक्ति मुझे अछूत नही मानता। तो फिर वे आपको अछूत क्यों मानेंगे? और यदि वे आपको तभी स्पृश्य मानने लगेंगे जबकि आप उन कामोंको छोड़ देंगे जो समाजके लिए उपयोगी है, तो उसका क्या लाभ है? इस तरह छुआछूत समाप्त नही होगी, क्योकि तब वे उन लोगोको अछूत मानने लगेंगे जो आपके बाद यह मैला काम करने लगेंगे। छुआछूत इस तरह नही हटाई जा सकती। यह तभी हटाई जा सकती है जबकि तथाकथित अछूत भी ये मैले काम करते रहें, और पुराणपंथी लोगोपर यह प्रभाव डाले कि वे काम चाहे कितने भी मैले क्यों न हों, वे दूसरे कामोकी तरह ही सम्मान-योग्य और बहुत-से दूसरे कामोंकी अपेक्षा ज्यादा उपयोगी हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-३-१९३७

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) में से उद्धृत। ये प्रश्न दिल्लीकी हरिजन बस्ती स्थित हरिजन औद्योगिक प्रशिक्षण स्कूलके छात्रों द्वारा पूछे गये थे।

२. गांधीजी दिल्लीसे वर्धाके लिए २२ मार्चको रवाना हो गये थे।

२०. बातचीत : जमायत-उल-उलेमा-ए-हिन्दके नेताओंके साथ

दिल्ली

[२२ मार्च, १९३७ या उसके पूर्व][1]

पहली बातका[2] उत्तर देते हुए गांधीजीने कहा कि वे इस प्रश्न की ओर ध्यान देंगे। दूसरे प्रश्नका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा :

मुझे हिन्दू-मुस्लिम एकतासे बढ़कर और कोई कार्य प्रिय नही है। और जबसे मैंने इसे अपनाया है, मैंने इसके लिए कई बार अपनी जान जोखिममें डाली हैं। वे सभी मुसलमान नेता जो मेरे ज्यादा निकट सम्पर्कमें आये हैं, यह जानते हैं कि यह उद्देश्य सदा मेरी नजरके सामने रहता है और हर मिनट मेरे मनमें इसकी लौ सुलगती रहती है।

बहरहाल महात्माजीने जमायतके नेताओंसे कहा कि वह सच्ची हिन्दू-मुस्लिम एकताके नये उपायों पर विचार कर रहे हैं। महात्माजीका विचार था कि वर्तमान स्थितिसे, जबकि ज्यादातर प्रान्तोंके चुनावोंमें कांग्रेसको बहुमत मिल गया है, इस कार्यमें सहायता मिलेगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-३-१९३७

२१. पत्र : अमृत कौरको

दिल्ली

२२ मार्च, १९३७

प्रिय बागी,

सुबहके ४.३० बजे हैं। तुम्हारे प्रेम-पत्र मेरे पास है। तुम्हारे पैरकी उँगलीमें जो दर्द है, वह बात मुझे पसन्द नही। सब्जियाँ पकानेमें तुम्हें दाल और घी की जरूरत क्यों है? मेरा विश्वास है कि ये दोनों ही चीजें अनावश्यक है। और मिट्टीकी पट्टी उपलब्ध करनेमें कठिनाई कहाँ है? क्या तुम सोडा पर्याप्त मात्रामें लेती हो? एक व्यक्तिने, जो स्नानोंके बारेमें मुझसे ज्यादा जानते हैं, मुझे बताया है कि टब-

१. गांधीजी २२ तारीखको दिल्लीसे वर्धाके लिए रवाना हो गये थे।

२ और ३. जमायतके नेताओंने गांधीजीका ध्यान कांग्रेस नेताओंके उन वक्तव्योंकी ओर आकृष्ट किया था जिनके कारण मुसलमानोंके सामने कांग्रेसमें शरीक होने और भारतकी आजादीके लिए लड़नेके रास्तेमें कठिनाई उत्पन्न होती थी। उन्होंने गांधीजीको यह सुझाव भी दिया था कि भारतकी सब जातियोंके बीच अधिक सद्भाव और सहनशीलता लानेके लिए एक अलग संस्था स्थापित की जाये।

स्नान कटि-स्नानसे कहीं ज्यादा गुणकारी है। इसलिए जबतक तुम्हें ऐसा न लगे कि उनसे हानि हो रही है, उन्हें बिलकुल मत छोड़ो। मुझे आशा है कि पुस्तकें तुम्हारे पास पहुँच गई हैं। पार्सल रक्षाको दे दिया गया था कि वह तुम्हारे पास भेज दिया जाये।

न मैंने कागज देखा और न मुझे अदायगी हुई है। मैं देखूँगा कि तुम्हारे हाथसे तैयार किये गये कागजके पार्सलके बारेमें क्या किया जा सकता है।

निस्सन्देह तुम्हें अ० भा० चरखा संघका सदस्य बन जाना चाहिए और चरखेमें अबतक तुम्हारी जितनी रुचि रही है, उससे कहीं ज्यादा रुचि तुम्हें उसमें रखनी चाहिए। हालाँकि सब-कुछ सही ढंगसे सम्पन्न हो गया है, फिर भी इसकी मुझे बहुत कीमत चुकानी पड़ी है। परन्तु उससे ज्यादा नहीं जितनी कि अवसरको देखते उचित थी। जवाहरलाल नेहरूने जब सम्मेलन[1] में अपने भाषणके लिए समितिसे[2] क्षमायाचना कर ली तब वह अत्यन्त ऊँचे उठ गये। इन उद्विग्नतापूर्ण दिनोंमें किये गये किसी भी कामकी अपेक्षा उनकी इस क्षमा-याचनाने उन्हें समितिके कहीं ज्यादा निकट ला दिया है। देखें क्या होता है। ईश्वरका धन्यवाद है कि वह हमारी क्षुद्र योजनाओंको बदलनेकी सामर्थ्य रखता है और उन्हें बदल भी देता है।

हमें कल नहीं जाने दिया गया। हम आज जायेंगे और 25 को वर्धासे मद्रासके लिए रवाना हो जायेंगे। वहाँका पता होगा: हिन्दी-प्रचार कार्यालय, त्यागराजनगर, मद्रास। आशा है कि हम ज्यादा-से-ज्यादा 31 को सेगाँव वापस आ जायेंगे।

सस्नेह,

जालिम

[पुनश्च :]

'ग्रन्थ साहब' की दूसरी प्रति मत भेजना। पियरे मुझे नियत समयपर बता दें कि वह समुद्रयात्रा कब आरम्भ करना चाहते हैं। रक्षा अभी अन्दर आई है और उसने कागजकी कीमत चुका दी है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० 3769) से; सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० 6925 से भी

1. देखिए पृ० 13, पाद-टिप्पणी 1।
2. कांग्रेस कार्य-समिति, जिसकी बैठक 15-22 मार्चतक दिल्लीमें हुई थी।

२२. पत्र : प्रभावतीको

२२ मार्च, १९३७

चि० प्रभा,

आज सोमवार है। अभी सवेरा है। दिन चढ़नेके बाद फिर शायद समय न मिले, इसलिए दो लकीरें लिखे देता हूँ। तेरी पुर्जी मिली थी।

गुड़ लेने जयप्रकाश आया नहीं है। तीन दिनसे दिखाई ही नहीं दिया।

मृदु अभी-अभी मेरे पाससे गई है। मैंने उससे वह बात नहीं की। यों जो करनी थी, सो तो कर ही ली है। तेरा वहाँ रहना तो तेरी मानसिक स्थितिपर निर्भर करेगा न? मुझे लगता है, बहुत-कुछ जयप्रकाशकी इच्छापर निर्भर करेगा। एक बार तू वहाँ व्यवस्थित हो जाये, तो रास्ता साफ हो जायेगा। तू वहाँसे कब मुक्त होगी?

आज शामको तो हम लोग रवाना हो ही रहे हैं। २६ को मद्रास पहुँचना है, ३० को वहाँसे वापस और ३१ को वर्धा।

तुझे कटि-स्नानके लिए टब प्राप्त कर लेना चाहिए। बने तो घर्षण-स्नान करना। लगता है, उसके लिए टब न हो तो भी काम चल सकता है। अनुभवसे समझमें आयेगा। क्या वहाँ हाथका पिसा आटा मिलता है? वहाँ पींजनेका कोई साधन है या नहीं? क्या तेरे आसपासका कोई व्यक्ति कातने-पींजनेके लिए तैयार नहीं हो सकता? हरिलाल मुझसे मिल गया था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९५) से।

२३. पत्र : के० बी० केवलरामानीको

२२ मार्च, १९३७

प्रिय केवलरामानी,

मैंने पहले ही यह समझ लिया था कि तुमने विद्याको आनेके लिए और आनन्दको उसे लानेके लिए डाँटा होगा। विद्याने वादा किया था कि वह आराम करेगी और मेरे दिल्ली-प्रवासके दौरान मुझसे मिलने आनेकी कोशिश नही करेगी। लेकिन मैंने देखा कि उसके लिए मेरे पास आना जरूरी था। तुम्हारे साथ-साथ मुझे भी विद्या और आनन्दका पिता होनेका सौभाग्य प्राप्त है। मै यह देख सकता था कि यदि वह मेरे पास न आ सकती तो उसे ज्यादा तकलीफ होती। तुमने उसे दिल्ली न जानेके लिए कहा था, सो ठीक ही था और उसने अपनी आत्माकी भूख मिटाई, सो भी ठीक ही किया। मुझे आशा है कि उसके दिल्ली आनेका उसकी तबीयत पर कोई बुरा प्रभाव तुम्हे नही दिखाई पडा होगा।

तुम्हारा,

श्री के० बी० केवलरामानी, एस० डी० ओ०
कनाल कालोनी
फिरोजपुर (पंजाब)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य · राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

२४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२२ मार्च, १९३७

भाई घनश्यामदास,

परमेश्वरीप्रसाद[1] कहते है फार्म- वि० का कब्जा आज ही देनेके लिये तैयार है। जो दस्तखत चाहियें वह कर देंगे। चार पांच रोज में फार्म छोड़ सकते है।

मो० क० गांधी

सी० डब्ल्यू० ८०२९ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. परमेश्वरीप्रसाद घनश्यामदास बिड़लाके फार्मके इंचार्ज थे।

२५. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगांव
२५ मार्च, १९३७

चि० कान्ति[1],

इससे पहले तुझे पत्र लिख ही नही सका। देवदासके साथ बातें हो गई हैं। मैसूर जाने की इच्छा हो तो तू जा सकता है। वहाँ जाने से यदि खर्च कुछ बढ गया, तो उतना अधिक पैसा या तो वह कमाकर या कहीसे एकत्र करके प्राप्त करेगा। मतलब यह कि पैसे अथवा देवदासकी अनुमतिके अभावमें तेरा विल्सन कॉलेजमें भर्ती होना जरूरी नही है। त्रिवेन्द्रम जाना हो, तो वहाँ जा। माल जहाज (कार्गो शिप) मिले और उसमें जाना चाहे, तो भी कोई हर्ज नही। वह यात्रा तो सचमुच अच्छी होगी। इस यात्राका खर्च देवदास उठायेगा। यदि वह न उठाये तो मुझसे ले लेना। वह उठा सकता हो तो फिर मुझसे लेना उचित नही होगा।

देवदास तुझसे मिल नही सका, यह मैं जानता हूँ। मेरे पूछनेपर उसने कहा कि उसने तेरे पास जानेका प्रयत्न किया था, किन्तु पहुँच नही पाया। और तुझे इसलिए नही बुलाया कि उसके वक्तका कुछ ठीक नही था। ऐसा कुछ हो जानेपर उसका खयाल नही करना चाहिए। और वहममें तो कभी पड़ना ही नही चाहिए। तत्काल कुछ पैसेकी जरूरत हो, तो नीमू या रामदाससे ले लेना।

हम लोग, यानी बा, मनु, कनु (छोटा), महादेव, प्यारेलाल और मैं आज मद्रास जा रहे हैं। वहाँ तीन दिन लगेंगे, और ३१ को वापस आ जायेंगे। मनुका विवाह[2] हुदलीमें करने की बात लगभग तय हो गई है।

तू राजकोट जाने वाला था; क्या इरादा बदल दिया? क्या तू अमतुस्सलामको अपने पास रखना चाहता है? वह समझती है कि तू ऐसा चाहता है, लेकिन देवदासकी और मेरी धारणा है कि तू नही चाहता। यदि ऐसा हो, तो तू उसे साफ-साफ लिख देना। वह व्यर्थ ही दुःखी होती रहती है। अन्त तक वह मेरे साथ दिल्लीमें थी।

मैं अंकगणितके शब्दोका प्रयोग करता हूँ, इसका यह मतलब नही है कि मेरी भाषा गणित-जैसी मानी जाये। किन्तु यदि भाषा गणितके समान ठीक या सही हो, अर्थात् यदि उसमें तर्ककी उत्तरोत्तर सभी सीढ़ियाँ युक्त-संगत और निश्चयात्मक

१. हरिलाल गांधीके पुत्र।

२. १८ अप्रैल को सुरेन्द्र मशरूवालाके साथ; देखिए "सलाह : नवविवाहित दम्पतिको, १८-४-१९३७।

हो, तो वह भाषा गणितके समान कही जा सकती है। मेरी भाषामें यह गुण आ जाता है, इसका कारण मेरी सत्यकी उपासना है।

जो केवल कोई बौद्धिक विषय ही सीखना चाहता हो, तो उसे वह किसी चरित्रहीन व्यक्तिसे भी सीख सकता है, और वह चरित्रहीन व्यक्ति बुद्धिमान भी हो सकता है। उदाहरणके लिए कोई व्यभिचारी कारीगर भी अपनी हुनरकी दृष्टिसे उत्तम कारीगर हो सकता है। किन्तु श्रेष्ठ बुद्धि और श्रेष्ठ कारीगरीके साथ यदि उसमें चरित्र न हुआ, तो वह जगतका कल्याण नहीं कर सकेगा, जगतकी सेवा नहीं कर सकेगा। उनकी सेवाका प्रभाव क्षणिक होगा। इसीलिए 'गीता' का वचन है: "मेरा भजन कर, तो बुद्धि आदि जो-कुछ भी आवश्यक होगा, मैं तुझे दूंगा।"[1] मेरा भजन कर, यानी मेरी सेवा कर, मेरी सृष्टिकी सेवा कर।

इतना लिख चुकनेके बाद मैं 'वाचनालय' गया, और अब लौटकर दूध पी रहा हूँ और यह लिखा रहा हूँ। वाचनालयमे तेरा पत्र ले गया था, यह देखनेके लिए कि किस बातका जवाब लिखना बाकी रह गया है। जो रह गया है, उसका जवाब सक्षेपमे दिये देता हूँ। सयमीको चौबीसो घटे सेवामें प्रवृत्त रहना चाहिए। मनमानी प्रवृत्तिमें तो राक्षस भी जुटे रहते है। ऐसा चरित्र तो रावणका हुआ, उसे सयमी नहीं कह सकते। प्रवृत्ति तीन प्रकारकी होती है: शरीरकी, मनकी और आत्माकी। शुद्ध सेवाकी प्रवृत्तिमें तीनोका मेल हो जाता है।

मैं यह तो मानता ही हूँ कि अहिंसाको गणितकी भाषामें सजाना सरल कार्य नहीं है। मैं यह प्रयत्न कर रहा हूँ। और जो बात अहिंसाके बारेमें है, वही सब चीजोंके बारेमें है। उदाहरणके लिए चरखेके बारेमें, ग्रामोद्योगके बारेमें। लेकिन यह सब यदि तू तीनो पत्र[2] पढ़ जाया करे तो अपने-आप तेरी समझमें आ जायेगा। तुझसे मैं ऐसे कामकी आशा सँजो रहा हूँ। मैंने तेरा पत्र फाड डाला है। उसका कुछ भी दिल्ली नहीं पहुँचेगा। यदि तुझे त्रिवेन्द्रम् जाना हो, और तू जहाजसे न जाये, और वहाँसे छुट्टी मिल जाये, तो तू हम लोगोसे मद्रासमें क्यों न आ मिले?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३१८) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

१. भगवद्गीता, १०, १०।

२. हरिजन, हरिजनबन्धु और हरिजन-सेवक।

२६. भाषण : दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाके दीक्षान्त समारोह, मद्रासमें[1]

२६ मार्च, १९३७

महात्माजीने हिन्दीमें बोलनेका इरादा व्यक्त किया और . . . उन्होंने कहा :

मेरा उद्देश्य यह नही है कि मैं स्वयं अपनी आवाज सुनूँ। मैं चाहूँगा कि आप सब उसे सुनें और उससे ज्यादा जरूरी यह है कि उसे समझें, क्योंकि अन्यथा न तो बोलनेमें आनन्द है, और न लाभ है। इसलिए जो लोग मेरी वात अंशत: या पूरी समझते हैं वे कृपया हाथ उठायें।

काफी संख्यामें हाथ ऊपर उठे।

और अब जो लोग मेरी बात नही समझ सकते हैं वे कृपया हाथ उठायें।

गांधीजीने चारों ओर उन लोगोंकी तरफ देखा जिनके हाथ उठे थे और उनमें श्री जी० ए० नटेसनको देखकर पुकार उठे :

शर्म, शर्म !

श्री नटेसनने स्वीकार किया कि "यह शर्मकी बात है" और कहा कि "मुझे वास्तवमें बहुत खेद है।" गांधीजीने तुरन्त अवसरका लाभ उठाकर उपस्थित लोगोंको हिन्दी सीखनेकी जरूरत समझानेकी कोशिश की :

आप समझते हैं कि अभी मैंने किस पर शर्म-शर्म कहा है। यह मेरे पुराने मित्र श्री नटेसन हैं। निश्चय ही ऐसा बरताव करनेकी छूट मैं दूसरोंके साथ नही लूंगा। मैं उन्हे १९१५ से जानता हूँ, जबकि मैं दक्षिण आफ्रिकासे यहाँ आया था और हम एक-दूसरेको समझते हैं। वह एक महान् प्रकाशक और सम्पादक हैं। उन्होंने सस्कृतकी महान् कृतियोंके अनुवाद प्रकाशित किये हैं। उनमें ऐसे कामके लिए जोश है और यौवनकी स्फूर्ति है। लेकिन उन्होंने हिंन्दीके सम्बन्धमें क्या किया है? वह कह सकते हैं 'अरे मैं बुड्ढा हूँ'। शायद वह शरीरसे हैं। लेकिन दिमागको बुड्ढा मत होने दो। उसे अपने ज्ञानका भण्डार बढ़ाने दो। जिस व्यक्तिका दिमाग बुड्ढा नही होता, वह अपना और अपने साथियोका काफी भला कर सकता है।

अब भी कुछ लोग ऐसे हैं—खुशीकी बात है कि वे बहुत कम हैं—जो, लगता है, हिन्दी-हिन्दुस्तानी पर राष्ट्रभाषाकी तरह ध्यान देना पाप समझते हैं और उसका अध्ययन करना उससे भी बड़ा पाप मानते हैं। मैं अपने अनुभवसे कह सकता हूँ कि जो लोग हिन्दीको राष्ट्रभाषाके स्थानपर मानेंगे, वे उत्साह और ईमानदारीसे इसका

१. गांधीजीने दीक्षान्त समारोहकी अध्यक्षता की थी।

अध्ययन करेंगे, चाहे वह उनकी मातृभाषा हो या न हो; अन्यथा राष्ट्रभाषाके रूपमें उसके विकासमें वे योग नहीं दे सकेंगे। हिन्दी विभिन्न प्रान्तीय भाषाओंका स्थान नहीं ले सकती और न ही हिन्दी-प्रचारका यह उद्देश्य है। बल्कि इसके विपरीत राष्ट्रभाषाके प्रसारसे प्रान्तीय भाषाओंका और प्रान्तीय भाषाओंसे राष्ट्रभाषाका विकास जल्दी होगा। एक सशक्त और लचीली राष्ट्रभाषा प्रान्तीय भाषाओंका स्वस्थ विकास चाहती है। यदि प्रान्तीय भाषाएँ कमजोर हुईं तो राष्ट्रभाषा कैसे विकसित हो सकती है?[1]

मैंने अपने-आपसे कहा कि गुजराती वह भाषा नहीं हो सकती। देशके तीसवें भागसे ज्यादा लोग उसे नहीं बोलते हैं। उसमें तुलसीकी 'रामायण' हमें कहाँ मिलेगी। फिर सोचा कि मराठी कैसी रहेगी? मुझे मराठीसे प्रेम है। मराठी बोलनेवाले कुछ मेरे अच्छे सहयोगी हैं। मैं महाराष्ट्रियोंकी योग्यता, आत्म-त्यागकी क्षमता तथा उनका ज्ञान जानता हूँ। और फिर भी मैंने यह नहीं समझा कि मराठी, जिसका लोकमान्य तिलक सुन्दर और प्रभावशाली ढंगसे प्रयोग करते थे, हमारी राष्ट्रभाषा हो सकती है। जब मैं इस तरह तर्क-वितर्क कर रहा था, तो मैं आपको बता दूँ कि मुझे हिन्दी बोलनेवालोंकी सही संख्या पता नहीं थी, फिर भी मैंने स्वतः सोचा कि केवल हिन्दी ही वह स्थान ले सकती है, अन्य कोई भाषा नहीं। क्या मैं बँगला नहीं पसन्द करता? करता हूँ, और चैतन्य, राममोहनराय, रामकृष्ण, विवेकानन्द और रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी भाषाके रूपमें उसको बड़े सम्मानकी दृष्टिसे देखता हूँ। फिर भी, मुझे लगा कि बँगलाको हम अन्तर्प्रान्तीय बातचीतकी भाषा नहीं बना सकते।[2]

बहुत पहले ही मुझे इस बात का विश्वास हो गया था और मेरा विश्वास तबसे अनुभव द्वारा पुष्ट हुआ है कि यदि कोई भारतीय भाषा कभी भारतकी राष्ट्रभाषा बन सकती है—और यदि भारतको एक राष्ट्र बनना है तो किसी-न-किसी भाषाको राष्ट्रभाषा बनना ही चाहिए — तो वह भाषा केवल हिन्दी है और मैं हमेशा इस उद्देश्य की प्राप्तिके लिए प्रयत्नशील रहा हूँ।

निःसन्देह दक्षिणमें इस सम्बन्धमें हमें बड़ी कठिनाई पार करनी है। लेकिन हम नहीं देख पाते कि दक्षिणकी कोई भाषा, तमिल हो, तेलुगु या अन्य कोई, राष्ट्रभाषा कैसे बन सकती है। मैंने ईमानदारीसे तेलुगु और तमिल सीखनेकी कोशिश की थी। सचमुच ऐसा वक्त था जब मैं तमिलमें उतनी ही अच्छी तरह बोल सकता था जितना कि मैं अब हिन्दीमें बोलता हूँ। जब मैं दक्षिण आफ्रिका में था, मुझे इस काममें मदद देनेके लिए मेरे पास पर्याप्त सामग्री थी, क्योंकि मुझे तमिल लोगोंके बीच काम करना पड़ता था। लेकिन मैं सखेद और शर्मके साथ स्वीकार करूँगा कि मैंने उसका अभ्यास जारी नहीं रखा और जो-कुछ थोड़ी-बहुत भाषा मुझे आती थी, वह भी भूल गया हूँ। मैं पूरी तरह इसके लिए जिम्मेदार नहीं हूँ। कुछ हदतक जिम्मेदारी मेरे तमिल दोस्तों की है। मैंने तमिलनाडुकी एक लड़की को[3] घरमें बहू बना लिया है लेकिन बजाय

१. देखिए "भाषण: भारतीय साहित्य परिषद्, मद्रासमें-२", २८-३-१९३७।
२. यह अनुच्छेद महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से लिया गया है।
३. देवदास गांधीकी पत्नी और च० राजगोपालाचारीकी पुत्री लक्ष्मी।

इसके 'कि वह मुझे तमिलसे सम्पर्क रखनेके लिए जोर देती, उसने हिन्दी और गुजराती सीख ली है तथा हिन्दीमें बोलती है और लिखती है। मैं क्या कर सकता हूँ? तमिलका मैं अपना ज्ञान ताजा करनेकी आशा कैसे कर सकता हूँ, जबकि तमिल लोग मुझे इस तरह नीचा दिखा देते हैं?

न मेरी हिन्दी ही खास अच्छी है। मेरे जो मित्र हिन्दीमें प्रवीण हैं, वे मेरी पीठ पीछे मेरे हिन्दी व्याकरण और उच्चारण पर हँसते हैं। मैं जानता हूँ कि ये दोनों ही दोषपूर्ण हैं, क्योंकि मैंने इनमें से किसी का भी अध्ययन नहीं किया है। यदि मैं अपने विचार इसमें समझा सकूँ तो मेरा काम चल जायेगा। यदि मैं व्याकरण-सम्मत होने की कोशिश करूँ तो मुझे डर है कि परिणाम मेरे लिए बहुत प्रशंसास्पद नहीं होंगे। इस अवसर पर मैं यह खेद व्यक्त कर दूँ कि हिन्दी-भाषी लोगोंके लिए तमिल सीखनेमें सहायता देने लायक कोई पुस्तक नहीं है। यदि वे तमिल सीखना चाहे तो उन्हे अंग्रेजीके माध्यमसे सीखना पड़ेगा। हमने इस काममें वैसा उत्साह नहीं दिखाया है जैसा कुछ पश्चिमी मिशनरियोंने दिखाया है। मैं तमिल लोगोंसे भी अपील करूँगा और अपने उत्तर भारतीय मित्रोंसे भी कि वे इस कमीको दूर करें। हमारे दक्षिण भारतीय मित्रोंने हिन्दी सीखनेमें जो उत्साह दिखाया है, उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। लेकिन मैं यह जरूर कहूँगा कि वह काफी नहीं है। यह अनोखी घटना है कि अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलनका अधिवेशन मद्रासमें किया जा रहा है, जहाँ मुख्य भाषा तमिल है। तमिलने अन्य सभी भारतीय भाषाओंकी अपेक्षा संस्कृतसे कम ही लिया है। नि:सन्देह यह बात तमिल लोगोंके हिन्दी सीखनेमें रुकावट है। फिर भी उन्होंने हिन्दी भाषा सीखनेका प्रयत्न किया है।[1]

आपने जो हासिल किया है, उसपर निश्चय ही आपको बधाई देता हूँ। लेकिन मैं तभी सन्तुष्ट होऊँगा जब मेरे मित्र जी० ए० नटेसन-जैसे प्रख्यात व्यक्ति, जो कौंसिल ऑफ स्टेटके सदस्य हैं, कम-से-कम रोज आधे घंटेका समय हिन्दी सीखनेमें लगायें। वे वृद्धावस्थाकी दुहाई न दें। यदि वे 'इंडियन रिव्यू' का सम्पादन कर सकते हैं, यदि संस्कृतका अध्ययन कर सकते हैं और एकके-बाद-एक संस्कृत-प्रकाशन निकाल सकते हैं, यदि कौंसिल ऑफ स्टेटकी बैठकोंमें जा सकते हैं तो फिर हिन्दी सीखनेके लिए वे वृद्ध क्योंकर हैं?

मेरा कहनेका मतलब है कि अभीतक मध्यमवर्गके लोगोंने ही हिन्दी सीखनेका काम शुरू किया है। हमारे विशिष्ट नेता इसे कब शुरू करेंगे? एडवोकेट-जनरल कब अपने मिसिल-मुकदमोंकी तरफसे ध्यान हटाकर आधे घंटेका समय हिन्दी सीखनेमें लगायेंगे। मैं चाहता हूँ कि दक्षिणके सबसे प्रतिष्ठित वर्गके स्त्री-पुरुष भी हिन्दी सीखें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २७-३-१९३७ और हरिजन, ३-४-१९३७

१. आगेका अंश हरिजन से लिया गया है।

२७. यदि यह सच है तो शर्मनाक है

ब्रिटिश मलाबारसे एक पत्र-लेखक लिखते हैं:[1]

मैं चाहता हूँ कि आप इस घटनापर, जिससे मुझे बहुत ज्यादा क्षोभ हुआ है, टिप्पणी करें। विधान-सभाके लिए आम चुनावके अवसरपर हमारे गाँवके कांग्रेस-कार्यकर्ताओंने एक जुलूसका आयोजन किया था। गाँवका एक हरिजन बालक जुलूसके साथ जाना चाहता था। परन्तु आयोजकोंने उससे अनुरोध किया कि वह दूर रहे। उन्होंने शान्तिसे उसे समझाया — "तुम यह तो जानते ही हो कि हमें तुमसे पूरी सहानुभूति है। परन्तु जुलूस उन उप-मार्गोंसे होकर गुजरेगा जिसमें से आम तौरपर तुम लोगोंको नहीं निकलने दिया जाता। इसके सिवा, हमें यह भय भी है कि पुराण-पंथी लोग इसी चीजको कांग्रेसके विरुद्ध मत देनेका बहाना बना लेंगे। इसलिए हम इसी बातमें अक्लमन्दी मानते हैं कि तुम हमारे साथ न चलो।" बेचारा लड़का मन मसोसकर वापस आ गया . . .।

यदि यह रिपोर्ट सही हो तो इस श्रेष्ठ हरिजन किशोरके प्रति इस दुर्व्यवहारकी तीव्र भर्त्सना की जानी चाहिए। यदि चुनावों और इस तरहके अन्य मामलोंमें विजय हरिजनोंकी स्वतन्त्रताको दबाकर खरीदी जाती है, तो उसका कोई मूल्य नहीं है। उपर्युक्त स्थानमें हरिजनों द्वारा सड़कोंके उपयोगकी मनाही गैर-कानूनी है और इसे एक दिन भी सहन नहीं किया जाना चाहिए। कार्यकर्ताओंको चाहिए कि वे इस तरहकी आपत्ति करनेवालोंको समझायें और यदि वे नहीं सुनते तो परीक्षणके तौर पर कुछ-एक हरिजनोंको उन सड़कोंसे ले जाकर, जिनमें से उनके जानेकी मनाही है, देखें कि क्या होता है। हमारा तो यह खयाल था कि कम-से-कम मलाबारमें तो ऐसी बातें, जिनका पत्र-लेखकने वर्णन किया है, नहीं होती होंगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-३-१९३७

१. केवल एक अंश ही यहाँ दिया गया है।

२८. अरण्य-रोदन

अभी हाल ही में सन्तति-नियमनकी प्रचारिका श्रीमती सैंगरके साथ आपकी मुलाकात[1] पर एक समीक्षा मैंने पढ़ी है। इसका मुझपर इतना गहरा असर हुआ है कि आपके दृष्टिकोण पर सन्तोष और पसन्दगी जाहिर करनेके लिए मैं आपको यह पत्र लिखने बैठा हूँ। आपकी हिम्मतके लिए ईश्वर सदा आपका कल्याण करे...।

मैं मानता हूँ कि जनताको उच्च आदर्शोंकी शिक्षा देनेमें सदियाँ लग जायेंगी; पर यह काम शुरू करनेके लिए सबसे अच्छा समय आज ही है। मुझे डर है कि श्रीमती सैंगर विषयको ही प्रेम समझ बैठी है, पर यह भूल है; क्योंकि प्रेम एक आध्यात्मिक वस्तु है, विषय-सेवनसे इसकी उत्पत्ति कभी नहीं हो सकती।

डॉ० एलेक्सिस कैरल भी आपके साथ इस बातमें सहमत है कि संयम किसीके लिए कभी हानिकारक सिद्ध नहीं होता, सिवाय उन लोगोंके जो विविध उपायोंसे अपनी विषय-वासनाको उद्दीप्त करते रहे हों और पहलेसे ही अपने मनका नियन्त्रण खो चुके हो। श्रीमती सैंगरका यह बयान कि अधिकांश डॉक्टर यह मानते हैं कि ब्रह्मचर्य-पालनसे हानि होती है, बिलकुल गलत है। मैं तो देखता हूँ कि यहाँ अमेरिकी सामाजिक आरोग्य-संघ (सोशल हाइजीन एसोसिएशन्)के कई बड़े-बड़े डॉक्टर और वैज्ञानिक ब्रह्मचर्य-पालनको लाभदायक मानते हैं।

आप एक बड़ा नेक काम कर रहे हैं।... आप जगतमें उन इने-गिने व्यक्तियोंमें से हैं, जिन्होंने स्त्री-पुरुष-सम्बन्धके प्रश्न पर इस तरह उच्च आध्यात्मिक दृष्टिकोणसे विचार किया है।...

इस नेक कामको जारी रखें, ताकि नवयुवक-वर्ग सच्ची बातको जान ले; क्योंकि भविष्य इसी वर्गके हाथोंमें है।

अपने विद्यार्थियोंके साथ अपने संवादमें से मैं छोटा-सा उद्धरण यहाँ दे रहा हूँ: "... सर्जन — शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक सर्जन — ही जीवन है, यही आनन्द है। अगर तुम प्रजोत्पत्तिके हेतुके बिना या सन्ततिका निरोध करके विषय-सेवन द्वारा सिर्फ इन्द्रिय-सुख प्राप्त करनेका प्रयत्न करोगे

१. देखिए खण्ड ६२, पृ० १६५-७०।

तो तुम प्रकृतिके नियमका भंग और अपनी आध्यात्मिक शक्तियोंका हनन करोगे। . . ."

मैं जानता हूँ कि यह सब पुराकालीन ऋषियोंके अरण्य-रोदन-जैसा ही है, पर मेरा पक्का विश्वास है कि वही सच्चा रास्ता है और मुझसे अधिक कुछ चाहे न भी बन पड़े, मैं कम-से-कम उँगली दिखाकर रास्ता तो बता सकता हूँ।

सन्तति-नियमनके कृत्रिम साधनोंका निषेध करनेवाले जो पत्र मुझे कभी-कभी अमेरिकामें मिलते रहते हैं, उन्हींमें से यह पत्र[1] भी एक है। पर सुदूर पश्चिमसे हर हफ्ते हिन्दुस्तानमें जो नया साहित्य आता रहता है, उसके तो पढ़नेसे दिलपर बिलकुल दूसरा ही असर पड़ता है। उससे तो यही मालूम होता है, मानो अमेरिकामें तो सिवा बेवकूफोंके कोई भी इन आधुनिक साधनोंका विरोध नहीं करते हैं, जो मनुष्यको उस अन्ध-विश्वाससे मुक्ति प्रदान करते हैं, जो शरीरको गुलाम बनाकर रखता है और उसे संसारके सर्वश्रेष्ठ ऐहिक-सुखसे वंचित करके गोया कुचल डालता है। यह साहित्य भी उतना ही क्षणिक नशा पैदा करता है, जितना कि वह कर्म, जिसकी वह *शिक्षा* देता है और जिसे उसके सामान्य परिणामके खतरेसे बचकर करनेको प्रोत्साहन देता है। पश्चिमसे आनेवाले उन पत्रोंको मैं 'हरिजन' के पाठकोंके सामने नहीं पेश करता, जिनमें व्यक्तिगत रूपसे इन साधनोंका निषेध होता है। वे तो साधककी दृष्टिसे मेरे लिए उपयोगी हैं। साधारण पाठकोंके लिए उनका मूल्य कम है। पर इस पत्रका एक विशेष महत्त्व है; यह एक ऐसे शिक्षकका है, जिसे तीस वर्षका अनुभव है। यह हिन्दुस्तानके उन शिक्षकों और सामान्य जनता—स्त्रियों और पुरुषों—के लिए खास तौरपर मार्गदर्शक है, जो उस ज्वारके प्रबल प्रवाहमें बहे जा रहे हैं। सन्तति-नियामक साधनोंके प्रयोगमें व्हिस्कीसे अनन्त-गुना अधिक प्रलोभन होता है; पर इस मारक प्रलोभनके कारण वह उस चमकीली शराबकी अपेक्षा अधिक जायज नहीं है। और चूँकि इन दोनोंका प्रचार बढ़ता ही जा रहा है, इस कारण निराश होकर इनका विरोध करना छोड़ दिया जाये, ऐसा भी नहीं हो सकता। अगर इनके विरोधियोंको अपने कार्यकी पवित्रतामें श्रद्धा है, तो उन्हें उसे बराबर जारी रखना चाहिए। ऐसे अरण्य-रोदनमें वह बल होता है जो मूढ़ जन-समुदायके सुरमें-सुर मिलानेवालेकी आवाजमें नहीं हो सकता; क्योंकि जहाँ अरण्यमें रोनेवालेकी आवाजमें चिन्तन और मननके अलावा अटूट श्रद्धा होती है, वहाँ सर्व-साधारणके इस शोरकी जड़में-विषय-भोगकी व्यक्तिगत लालसा और अनचाही सन्तति तथा दुखिया माताओंके प्रति झूठी और निरी भावुक सहानुभूतिके अलावा और कुछ नहीं होता। और इस मामलेमें व्यक्तिगत अनुभववाली दलीलकी उससे अधिक कीमत नहीं की जा सकती जितनी कि किसी शराबीके किसी कार्यकी; और सहानुभूतिवाली दलील एक धोखेकी टट्टी है, जिसके अन्दर पैर भी रखना खतरनाक है। अनचाहे बच्चोंके

१. यहाँ उस पत्रके केवल कुछ अंश दिये गये हैं

तथा मातृत्वके कष्ट तो कल्याणकारी प्रकृति द्वारा नियोजित सजाएँ और हिदायतें हैं। संयम और इन्द्रिय-नियमन के कानूनकी जो परवाह नही करेगा, वह तो एक तरहसे अपनी खुदकुशी ही कर लेगा। यह जीवन तो एक परीक्षा है। अगर हम इन्द्रियोंका नियमन नही कर सकते, तो हम असफलताको न्योता देते हैं। कायरोंकी तरह युद्धसे मुँह मोड़कर हम अपने-आपको जीवनके एकमात्र आनन्दसे वंचित करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-३-१९३७

२९. इसके मानी क्या?

"हरिजनों, उनके मित्रों तथा सहकारियोंको उज्जैनके महाकालेश्वर-मन्दिरमें जाने की मुमानियत करनेवाला नोटिस-बोर्ड ग्वालियरके महाराजा साहबने हटा दिया है"— इस आशयका एक तार मुझे ग्वालियरसे मिला है। इसके पहले कि नोटिसके हटाये जानेपर कोई अपनी राय जाहिर कर सके, इसके पूरे मानी जान लेना बहुत जरूरी है। अगर मन्दिर-प्रवेशकी रुकावट तो कायम रही और केवल यह नोटिस ही हटा दिया गया हो, तो इससे उन अपमानित हरिजनों और उनके सवर्ण साथियोंको तो कोई समाधान नही मिल सकता। नोटिस-बोर्डको हटा हुआ देखकर यदि कोई हरिजन भाई असावधानीसे मन्दिरमें प्रवेश करनेकी हिम्मत भी करे, तो मुमकिन है, उसे सजा भी भुगतनी पड़े। मगर नोटिसके हटाये जानेके मानी अगर मन्दिर-प्रवेशकी रुकावटका ही खात्मा है, तो इस सिलसिलेमें एक ऐलान निकालकर इस फैसलेको साफ-साफ जाहिर कर देना उचित होगा। और अगर एक मन्दिरसे रुकावट उठा ली जाती है, तो रियासतके प्रबन्धाधीन जो तमाम मन्दिर है — जिनकी संख्या करीब पचासकी है — उन सबपर से ही वह रुकावट क्यों न उठा ली जाये? इसलिए मैं आशा करता हूँ कि रियासतके अधिकारी इस मसलेपर रोशनी डालेंगे और उस नोटिसके हटाये जानेके क्या मानी हैं, यह जनताको समझा देंगे।

अपनी रिआयाके अत्यन्त गरीब और लाचार लोगोंको एक ऐसे सवालपर न्याय देनेमें, जो कमाल दर्जेका धार्मिक महत्व रखता हो और जिसके लिए जरा-सी भी आर्थिक हानि न उठानी पड़ती हो, राजा लोग और उनके सलाहकार भीरु नजर आते हैं। त्रावणकोरकी इतनी बड़ी अचरज-भरी मिसालसे वे देख सकते थे कि अगर वे अपने मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल देते हैं तो ऐसा करनेसे कोई नाराज तो नहीं होता। हो सकता है कि राजा लोग उन मध्य-वर्गके हिन्दुओंसे डरते हों, जिनके साथ उनके रोजमर्राके सम्बन्ध रहते हैं और वे उन अनेक गरीब हरिजन या दूसरे बेजबान दुखिया लोगोंसे कोई वास्ता न रखते हों। हाथकी उँगलियों पर गिने जानेवाले कुछ राजाओंको छोड़ दीजिए, तो बहुत-से ऐसे राजा हैं जिन्हें अस्पृश्यता-निवारणके बारेमें कोई खास धार्मिक आपत्ति भी नही है। राजा लोगोंकी पुरानी पदवियोंसे तो प्रकट होता है कि वे धर्म-रक्षक समझे जाते हैं। फिर क्या वे हरिजनोंके लिए

मन्दिर खुलवा देनेके अपने कर्तव्यको पूरा करनेमे लापरवाही ही करते रहेंगे? कुछ दिन हुए[1] मैंने महाराजा त्रावणकोरकी (पद्मनाभदास) पदवीकी ओर पाठकोका ध्यान खींचा था। अब मुझे दी० ब० हरविलास सारदासे मालूम हुआ है कि उदयपुरके महाराणा भी अपने इष्टदेव श्री एकलिंगजी के दीवान ही कहलाते हैं और जब-जब वे वहाँ जाते हैं तो पुजारीका काम खुद करते है। इसलिए मैं राजाओ और उनके सलाहकारोंसे आदरपूर्वक लेकिन जोरदार अनुरोध करूँगा कि वे हिम्मतके साथ और साफ-साफ शब्दोमें अपनी-अपनी रियासतोके मन्दिर हरिजनोके लिए खोल देनेकी घोषणा कर दें और अपने-आपको अपने धर्मके सच्चे सरक्षक (ट्रस्टी) साबित कर दें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-३-१९३७

३०. नट्टार-हरिजन समझौता

निम्नलिखित पत्र तमिलनाडु हरिजन सेवक संघके मन्त्री श्री एल० एन० गोपालस्वामीकी ओरसे आया है:

> नट्टारोंके एक बड़े वर्ग—'जो तेन्निलाई नट्टार' के नामसे प्रसिद्ध है—और यहाँके हरिजनोंके बीचमें जो समझौता हुआ है, उसके सम्बन्धमें आपको यह सुन्दर समाचार देते हुए मुझे बड़ी खुशी हो रही है।
>
> दोनो पक्षोंके मुखियोंके बीच जो समझौता हुआ है, उसका ठीक अनुवाद इस तरह है:
>
> '२४ फरवरी, १९३७ के समझौतेकी नकल
>
> हम तेन्निलाई नाडुके हरिजनों और नट्टारोंने, कराईकुडी हरिजन-सेवक संघकी मन्त्री श्रीमती कमला शिव सुब्रह्मण्यमकी उपस्थितिमें आपसी लड़ाई-झगड़ा भूलकर एक-दूसरेको माफ कर देनेका निश्चय किया है। इसके प्रमाण स्वरूप हमने नीचे लिखे इकरारनामेकी शर्तोंपर सही कर दी है:
>
> १. हरिजनोंसे बेगारमें काम न कराया जाये। वे जो काम करें, उसकी मजदूरी माँगनेका उन्हें पूरा हक है, और जो उन्हें मजदूरी न दे, उसका काम करनेसे वे साफ इनकार कर सकते हैं।
>
> २. हरिजन पुरुष कुर्ता, कमीज और उपरना जिस तरह पहनना-ओढ़ना चाहें, उस तरह पहन-ओढ़ सकते हैं और उनकी स्त्रियोंको भी अपनी मर्जीके मुताबिक चाहे जैसे जेवर पहननेका हक है, पर कन्दादेवी और एलुवनकोटाके

१. देखिए खण्ड ६४, पृ० २७१-२।

रथ-यात्रा उत्सवके अवसरपर पुरुष कुर्ता वगैरह न पहनें, क्योंकि नट्टार मुखिया खुद भी उस अवसरपर कुर्ता-कमीज वगैरह नहीं पहनते।

३. हरिजन अपनी इच्छा और सामर्थ्यके अनुसार जैसे मकान बनवाना चाहें, बनवा सकते हैं।

(हस्ताक्षर)

हरिजन :	नट्टार :
वेम्बन	पी० एन० करुपैया अम्बलन
कलियन	सी० करुपैया अम्बलन
	पी० चिदम्बर अम्बलन
एस० रामस्वामी	एस० परनछोड़ी पिल्लै

यह जरूर अच्छा समाचार है, और जिन्होंने यह समझौता कराया है, वे बधाईके पात्र हैं। आशा है कि नट्टार इस समझौतेकी शर्तोंका सख्तीके साथ पालन करेंगे। पर यह देखकर सर नीचा हो जाता है कि भारतकी जनताका एक भाग दूसरे वर्गकी कृपाके वगैर — जो अपनेको उस वर्गकी अपेक्षा ऊँचा मानता है पर असलमें जरा भी ऊँचा नहीं — अपनी मर्जीके मुताबिक कपड़े या गहने नहीं पहन सकता और अपनी मेहनत-मजदूरीके लिए पैसे नहीं माँग सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-३-१९३७

३१. तार : अगाथा हैरिसनको

मद्रास
२७ मार्च, १९३७

जिद के कारण आश्वासन[1] देनेसे इनकार किया जा रहा है। इससे बातचीत में गतिरोध निश्चित ही है। कांग्रेसके बड़े-छोटे लोगोंके बीच फूट असम्भव है।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५०४) से।

१. गवर्नरों द्वारा प्रशासनमें हस्तक्षेप न करनेके बारेमें कांग्रेस द्वारा माँगे गये आश्वासन; देखिए "अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्तावका अंश", पृ० ४-५।

३२. भाषण : भारतीय साहित्य परिषद्, मद्रासमें[1] – १

२७ मार्च, १९३७

महामहोपाध्याय[2] पं. भाषणसे तमिल सीखनेकी मेरी रुचि बढ़ गई है। तमिल सीखनेमें न तो मेरी आयु और न ही इच्छा बाधक हो सकती है। केवल समयाभावके कारण यह काम कठिन है। इस परिषद्का उद्देश्य है सभी प्रान्तीय साहित्योंमें से मूल्यवान साहित्यका संग्रह करके उसे हिन्दीके माध्यमसे प्रस्तुत करना। इस उद्देश्यके लिए मैं आपसे एक अपील करूँगा। निस्सन्देह प्रत्येक व्यक्तिको अपनी भाषा पूर्णतः आनी चाहिए और उसे दूसरी भारतीय भाषाओंके महान् साहित्यका भी हिन्दी माध्यम से ज्ञान होना चाहिए। परन्तु इस परिषद्का यह उद्देश्य है कि हम अपने लोगोंमें दूसरे प्रान्तोंकी भाषाएँ जाननेकी इच्छा जागृत करें, अर्थात् गुजरातियोंको तमिल, बंगालियोंको गुजराती, और इसी तरह औरोंको अन्य भाषाएँ आनी चाहिए। अपने अनुभवसे मैं आपको बताता हूँ कि कोई दूसरी भारतीय भाषा सीखना जरा भी मुश्किल नहीं है। परन्तु इसके लिए सर्व-सामान्य लिपिका होना बहुत जरूरी है। तमिलनाडुमें ऐसा कर पाना कठिन नहीं है। इस साधारण तथ्यपर गौर कीजिए कि हमारे लोगोंमें ९० प्रतिशतसे अधिक अनपढ हैं। हमें उन्हें नये सिरेसे साक्षर बनाना है। हम उन्हें सर्व-सामान्य लिपिके द्वारा ही अक्षरज्ञान क्यों न करायें? यूरोपमें सर्व-सामान्य लिपिका प्रयोग काफी सफल रहा है। कुछ लोग तो यहाँतक कहते हैं कि हम यूरोपकी रोमन लिपिको ही अपना लें। काफी मतभेदके बाद इसी बात पर मतैक्य हुआ है कि सर्व-सामान्य लिपि देवनागरी ही हो सकती है, और कोई नहीं। उर्दूके बारेमें भी दावा किया जाता है, परन्तु मेरा विचार है कि देवनागरी-जैसी परिपूर्णता और ध्वनि-क्षमता न तो उर्दूमें है और न रोमनमें ही है। कृपया ध्यान रहे कि मैं आपकी भाषाओंके खिलाफ कुछ नहीं कह रहा हूँ। तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड़का अपना स्थान है और बना रहेगा। परन्तु देशके इन भागोंमें ये भाषाएँ अनपढ लोगोंको देवनागरी लिपिके द्वारा क्यों न सिखाई जायें? हम जो राष्ट्रीय एकता स्थापित करना चाहते हैं, उसके लिए देवनागरीको एक सर्व-सामान्य लिपिके रूपमें अपनाना बहुत ही जरूरी है। यहाँ सवाल सिर्फ अपनी प्रान्तीयता और संकुचित मनोवृत्तिको छोड़नेका है, और फिर कोई कठिनाई नहीं रहती। यह बात नहीं कि मुझे तमिल और उर्दूकी लिपियाँ अच्छी नहीं लगतीं। मैं दोनों जानता हूँ। परन्तु मैं मातृभूमिकी सेवामें सारा जीवन लगा रहा हूँ और उसके बिना जीवन

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत।
२. सी० स्वामीनाथ अय्यर, तमिलके विद्वान।

मेरे लिए भार होगा। उसी सेवासे मुझे यह शिक्षा मिली है कि अपने लोगोंका अनावश्यक बोझ दूर करनेकी हमें चेष्टा करनी चाहिए। बहुत-सी लिपियाँ जाननेका बोझ अनावश्यक है और उससे आसानीसे बचा जा सकता है। मैं सभी प्रान्तोंके विद्वान् लोगोंसे अनुरोध करूँगा कि वे इस मुद्देपर अपने मतभेद समाप्त कर दें और इस महत्वपूर्ण मामलेपर एकमत हो जायें। केवल तभी भारतीय साहित्य परिषद्को सफलता मिल सकती है।

उसके बाद काम चलानेके तौर-तरीकों और साधनोंके बारेमें आपको सोचना है। 'हंस' अब बन्द हो गया है। उसके संस्थापक प्रेमचन्दजी तो अब नहीं रहे। दुर्भाग्यसे प्रेमचन्दजी अपने पीछे कोई ऐसा व्यक्ति नहीं छोड़ गये जो उनका स्थान ले। निस्सन्देह ऐसा कोई व्यक्ति नहीं था जो उनके रिक्त स्थानकी यथोचित पूर्ति करता, क्योंकि वे अद्वितीय लेखक थे। परन्तु 'हंस' बन्द करने का कारण यह नहीं था। वह उनके जीवन-कालमें ही बन्द हो गया था। यह दुःखकी बात है कि उसके बन्द होनेका कारण यह था कि ऐसे लोगोंकी संख्या बहुत कम थी जो पत्रिका द्वारा अपनाये गये एक कामके तरीकेमें पर्याप्त रुचि ले रहे थे, या जिनकी उसके प्रति सहानुभूति थी। उसके सब लेख विभिन्न प्रान्तीय भाषाओंसे लिये जाते थे और नागरी लिपिमें लिखे जाते थे। यदि आप सब भाषाओंके लिए एक समान लिपिके आदर्शको स्वीकार करते हैं तो आपका यह कर्तव्य होगा कि आप परिषद्के इस उद्देश्यके लिए सच्चे मनसे कार्य करें।

काका साहबने आपको बताया है कि वह अब नियतकालिक पुस्तिकाएँ निकाल रहे हैं, पर यह नहीं कहा जा सकता कि सारा काम ठीक चल पड़ा है। मैं चाहता हूँ कि आप अपनी उदासीनता दूर कर दें और सहायताके लिए हाथ आगे बढ़ाएँ। आप यह अवश्य याद रखें कि कामका सारा बोझ सम्मेलनके मुख्य कार्यकर्ताओंके कन्धोंपर पड़ता है। हमारा काम पैसेकी कमीके कारण नहीं, कार्यकर्ताओंकी कमीके कारण पिछड़ रहा है। हम चाहते हैं कि कार्यकर्ता हरएक प्रान्तसे मिलें। काका साहबने कहा है कि हमने प्रशासकीय समितिके सदस्योंकी संख्या ५० तक सीमित कर दी है। परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि इसे और ज्यादा कार्यकर्ताओंकी जरूरत नहीं है।

आज हमारे साहित्यमें बहुत कम, अर्थात् कुछ-एक पढ़े-लिखे लोग ही रुचि लेते हैं। पढ़े-लिखोंमें भी कुछ ही लोग ऐसे हैं जिनकी साहित्यमें वास्तवमें रुचि है।

हमारा देश गाँवोंका देश है। परन्तु हम देशका काम करनेके लिए गाँवोंमें नहीं गये। जो-कुछ मैंने सेगाँवमें देखा, वह प्रत्येक भारतीय गाँवमें देखा जा सकता है। आपको हैरानी होगी कि सेगाँवके लगभग छः सौ ग्रामवासियोंमें से दो भी अच्छा साहित्य नहीं पढ़ सकते। प्रतिदिन कोई सज्जन गाँवमें जाकर उन्हें दैनिक समाचारपत्रोंमें से दिनके समाचार पढ़कर सुनाता है। परन्तु वह बड़ी कठिनाईसे दो-एक ग्रामीण ही समाचार सुनानेके लिए इकट्ठे कर पाता है। इससे आप यह समझ सकते हैं कि उनके द्वार तक अच्छा साहित्य ले जाना कितना बड़ा काम होगा। परिषद्का उद्देश्य यह है कि उस

कर्मीको दूर किया जाये। मैं किसी एक लिपिका दीवाना नहीं हूँ, परन्तु यह चाहता हूँ कि आप इस प्रश्नपर सोच-समझकर और शान्तचित्तसे विचार करें। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इस परिषद्‌की जहाँतक सम्भव हो, सहायता करें।[1]

काकासाहबने आपको बताया है कि हमने अपने-आपको जिस साहित्य तक सीमित रखा है, वह किस किस्मका होना चाहिए। मैं साहित्यके लिए साहित्यका उपासक नहीं हूँ, मैं साक्षरताको कोई देवत्वका काम भी नहीं मानता। साक्षरता बौद्धिक विकासके बहुत-से साधनोंमें से एक है। परन्तु अतीतमें हमारे यहाँ महान् मनीषी हुए हैं जिन्हें अक्षर-ज्ञान नहीं था। यही कारण है कि हमने अपने-आपको उसी साहित्य तक सीमित रखा है जो अत्यन्त शुद्ध और स्वस्थ किस्मका है। जबतक हमें आपका सच्चा सहयोग नहीं मिलेगा और जबतक आप अपनी-अपनी भाषाओंमें से उपयुक्त साहित्य चयन करनेके लिए तैयार नहीं होंगे, तबतक हम यह काम कैसे कर सकते हैं?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-४-१९३७ और हिन्दू २७-३-१९३७

३३. खादी चिरजीवी हो

बम्बईसे श्री काकूभाई नीचे लिखे अनुसार लिखते हैं:[2]

यह वृद्धि प्रमाणकी दृष्टिसे सन्तोषजनक कही जा सकती है। हिन्दुस्तानके बड़े-से-बड़े खादी-भण्डारमें, और वह भी बम्बई-जैसे शहरमें अगर रोज १,००० रु० की खादी बिके, तो इसमें प्रसन्न होनेकी कोई बात नहीं है। मेरे लिए तो खादीकी बिक्री हिन्दुस्तानकी शान्तिपूर्ण प्रगतिको मापनेका बढ़िया-से-बढ़िया थर्मामीटर है। पाठकको यह भी याद रखना चाहिए कि इस १,००० रु०में बाहरसे आनेवाली माँगें भी आ जाती हैं। बम्बई शहरमें स्वदेशी तथा विदेशी मिलोंका कपड़ा बेचनेवाली कितनी दुकानें हैं? उनकी रोजाना बिक्री कितनी है? और खादीकी दुकानें कितनी हैं? इन आँकड़ोंकी तुलना करें, तो स्थिति ऐसी है कि हमें अपना सिर नीचा करना पड़ेगा। फिर भी, १,००० रु० की खादी बिकती है और इस समय बिक्री बढ़ती दिखाई देती है, इससे हम सन्तोष प्राप्त कर सकते हैं।

इस वृद्धिका कारण श्री काकूभाई नहीं बता सकते। श्री विट्ठलदास जेराजाणीके साथ बातें करते हुए मैंने देखा कि इस बिक्रीका विधान-सभा-सम्बन्धी उत्साहके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। होता तो बढ़ती हजारकी न होकर हजारोंकी होती। अतः

१. यह अनुच्छेद हिन्दू से लिया गया है।

२. इसका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने विवरण प्रस्तुत करके यह दिखाया था कि मूल्य बढ़ जानेके बावजूद खादीकी बिक्री बढ़ी है, और आशा व्यक्त की थी कि भविष्यमें और भी बढ़ेगी।

कारण कोई दूसरा ही है। मेरा अनुमान है कि लोग खादीकी खूबी पहलेसे अधिक समझने लगे हैं और कातनेवाली बहनोंको जो अधिक दर मिलती है, इससे खादी पहननेवालोंको सन्तोष हुआ है, और इसलिए खादी पहननेका उनका उत्साह बढ़ा है। यदि यह अनुमान ठीक हो, तो यह बात खादीके सेवकके लिए उत्साहवर्धक है। एक बात व्यावहारिक भी मालूम हुई है। जबसे कताईकी दर बढ़ी है और कातनेवाली बहनोंकी देखरेख शुरू हुई है, तबसे खादीकी किस्म और उसकी मजबूतीमें भी बहुत सुधार हुआ है। इसका कारण तो साफ दिखाई ही देता है और यह भी हमारे लिए उत्साहवर्धक है। 'हरिजनबन्धु' के पाठक यदि इसपर कुछ प्रकाश डाल सकते हों, तो मुझे लिखें।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २८-३-१९३७

३४. भाषण: भारतीय साहित्य परिषद्, मद्रासमें – २[1]

[२८ मार्च, १९३७][2]

हिन्दीको सामान्य भाषा बनानेके पक्षमें हमारे प्रस्ताव पास करते रहनेपर भी अगर कांग्रेसका काम इसी तरह होता रहा, तो हमारा काम खेदजनक रूपमें ढीला पड़ जायेगा। इस प्रस्तावमें कांग्रेससे प्रार्थना की गई है कि वह अन्तर्प्रान्तीय कामकाज की भाषाके रूपमें अंग्रेजीका व्यवहार छोड़ दे। उसमें कहा गया है कि अंग्रेजीको प्रान्तीय भाषाओंका या हिन्दीका स्थान नहीं देना चाहिए। अगर अंग्रेजीने यहाँके लोगोंकी भाषाओंको निकाल न दिया होता, तो प्रान्तीय भाषाएँ आज आश्चर्यजनक

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। मद्रासमें हुए हिन्दी साहित्य-सम्मेलनके अधिवेशनमें इस आशयका एक सिफारिशी प्रस्ताव, जिसे च० राजगोपालाचारीने तैयार किया था, पास किया गया था कि अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसको अपना सारा काम हिन्दी-हिन्दुस्तानीमें ही करना चाहिए। वह प्रस्ताव इस प्रकार था:

"यह सम्मेलन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी कार्य-समितिसे प्रार्थना करता है कि अबसे आगे कांग्रेस, अ० भा० कां० क० और कार्य-समितिके कामकाजमें अंग्रेजीका उपयोग न करके उसके स्थानपर हिन्दी-हिन्दुस्तानीका ही उपयोग करनेका प्रस्ताव पास किया जाये; और जो लोग हिन्दी-हिन्दुस्तानीमें अपने भाव पूरी तरह प्रकट न कर सकें, उन्हीं के लिए अंग्रेजीमें बोलनेकी छूट रखी जाये। यदि कोई सदस्य हिन्दी-हिन्दुस्तानीमें न बोल सकता हो और वह अपनी प्रान्तीय भाषामें बोलना चाहे, तो उसे वैसा करनेकी छूट होनी चाहिए, और हिन्दी-हिन्दुस्तानीमें उसके भाषणका अनुवाद करनेकी व्यवस्था की जानी चाहिए। यदि किसी सज्जनको किसी मौकेपर सभासदोंके अमुक वर्गको अपनी बात समझानेके लिए अंग्रेजीमें बोलनेकी जरूरत मालूम हो, तो उसे सभापतिकी अनुमतिसे अंग्रेजीमें बोलनेकी छूट होनी चाहिए।"

२. गांधी १९१५-१९४८: ए डीटेल्ड क्रॉनॉलॉजी के आधारपर।

रूपमें समृद्ध होतीं। अगर इन्लैंड फ्रेंच भाषाको अपने राष्ट्रीय कामकाजकी भाषा मान लेता, तो आज हमें अंग्रेजीका साहित्य इतना समृद्ध न मिलता। नार्मन-विजयके बाद वहाँ फ्रेंच भाषाका ही जोर था, लेकिन उसके बाद 'विशुद्ध अंग्रेजी' के पक्षमें लहर उठी। अंग्रेजी साहित्यको आज हम महान् रूपमें देखते हैं, वह उसीका फल है। डाक्टर हुसैन साहबने जो कहा वह बिल्कुल सही है। मुसलमानोंके सम्पर्कका हमारी संस्कृति और सभ्यतापर बहुत ज्यादा असर पड़ा है। इतना ज्यादा कि स्वर्गीय पण्डित अयोध्यानाथ-जैसे लोग भी हमारे यहाँ हुए हैं, जो फारसी और अरबीके बहुत बड़े विद्वान थे। उन्होंने अरबी और फारसीके अध्ययनमें जो समय लगाया, वह सारा समय यदि अपनी मातृभाषाको दिया होता, तो उनकी मातृभाषाकी कितनी तरक्की हो जाती? इसके बाद अंग्रेजीने वह अस्वाभाविक स्थिति प्राप्त कर ली, जिसपर वह अभीतक आसीन है। विश्वविद्यालयके अध्यापक अंग्रेजीमें धाराप्रवाह बोल सकते हैं, लेकिन अपनी मातृभाषामें अपने विचारोंको प्रकट नहीं कर सकते। सर चन्द्रशेखर रामनकी सारी खोजें अंग्रेजीमें ही हैं। जो लोग अंग्रेजी नहीं जानते, उनके लिए वे मुहरबन्द पुस्तककी तरह हैं। मगर रूसको देखिए। रूसवालोंने राज्यक्रान्तिसे भी पहले यह निश्चय कर लिया था कि वे अपनी पाठ्य पुस्तकें (विज्ञान की भी) रूसी भाषामें लिखवायेंगे। दरअसल इसीसे लेनिनके लिए राज्यक्रान्तिका रास्ता तैयार हुआ। जबतक कांग्रेस यह निश्चय नहीं कर लेती कि उसका सारा कामकाज हिन्दीमें और उसीकी प्रान्तीय संस्थाओंका प्रान्तीय भाषाओंमें ही होगा, तब तक वास्तविक रूपमें हम जन-सम्पर्क स्थापित नहीं कर सकते।

इस प्रस्तावको अमलमें लाना जितना सम्मेलनका काम है, उतना ही भारतीय साहित्य परिषद्का भी है, क्योंकि प्रान्तीय भाषाओंको प्रोत्साहन देना भारतीय साहित्य-परिषद्का उद्देश्य है, और अगर कांग्रेस इस प्रस्तावको न माने तो उस हदतक उसका उद्देश्य निष्फल रहेगा।

यह बात नहीं कि भाषाके पीछे मैं दीवाना हो गया हूँ। न इसका यह मतलब ही है कि अगर भाषाके मोलपर स्वराज्य मिलता है तो मैं उसे लेनेसे इनकार कर दूँगा। लेकिन जैसाकि मैं कहता रहा हूँ, सत्य और अहिंसाकी बलि देनेसे मिलने-वाला स्वराज्य मैं हरगिज न लूँगा। फिर भी मैं भाषापर इतना जोर इसीलिए देता हूँ कि राष्ट्रीय एकता हासिल करनेका यह एक बहुत जबरदस्त साधन है, और इसका आधार जितना दृढ़ होगा, हमारी एकताका आधार उतना ही प्रशस्त होगा।

मेरी इन बातसे आप भयभीत न हों कि हिन्दी सीखनेवाले हरएक व्यक्तिको अपनी मातृभाषाके अलावा कोई एक अन्य प्रान्तकी भाषा भी सीखनी चाहिए। भाषाएँ सीखना कोई मुश्किल काम नहीं है। मैक्समूलर १४-भाषाएँ जानता था; और मैं एक ऐसी जर्मन लड़कीको जानता हूँ, जो ५ साल पहले जब यहाँ आई थी, तब ११ भाषाएँ जानती थी और अब २-३ भारतीय भाषाएँ भी जानती है। लेकिन आपने तो अपने मनमें एक हौवा-सा बिठा लिया है, और किसी तरह यह महसूस करने लगे हैं कि आप हिन्दीमें अपने भाव प्रकट नहीं कर सकते। यह हमारी मानसिक

काहिली है जिसके कारण कांग्रेस-विधानमें १२ बरसोंसे हिन्दुस्तानीको मंजूर कर लेने पर भी हम इस दिशामें कोई प्रगति नहीं कर पाये हैं।

याकूब हुसैन साहबने मुझसे पूछा है कि मैं सामान्य भाषाके रूपमें सीधे-सादे 'हिन्दुस्तानी' शब्दपर सन्तोष न करके 'हिन्दी-हिन्दुस्तानी' शब्दपर क्यों इतना जोर देता हूँ? इसके लिए मुझे आपको सब बातोंकी तह में ले जाना होगा। १९१८ में मैं हिन्दी-साहित्य सम्मेलनका सभापति बना था, तभी मैंने हिन्दी-भाषी जगतको सुझाया था[1] कि वह हिन्दीकी अपनी व्याख्याको इतना प्रशस्त बना ले कि उसमें उर्दूका भी समावेश हो जाये। १९३५ में जब मैं दुबारा सम्मेलनका सभापति बना[2] तो मैंने हिन्दी शब्दकी यह व्याख्या कराई कि हिन्दी वह भाषा है जिसे हिन्दू-मुसलमान दोनों बोलते हैं और जो देवनागरी या उर्दू लिपिमें लिखी जाती है। ऐसा करनेमें मेरा उद्देश्य यह था कि मैं हिन्दीमें मौलाना शिबलीकी धाराप्रवाह उर्दू और बाबू श्यामसुन्दरदासकी धाराप्रवाह हिन्दीको शामिल कर दूँ। इसके बाद भारतीय साहित्य परिषद् बनी, जो कि सम्मेलन की ही शाखा है। 'हिन्दी' की जगह यह 'हिन्दी-हिन्दुस्तानी' नाम मेरी ही तजवीजसे स्वीकार किया गया था। अब्दुलहक साहबने वहाँ जोरोंसे मेरी मुखालिफत की। मैं उनका सुझाव मंजूर न कर सका। जो शब्द हिन्दी-साहित्य सम्मेलनका था और जिसकी इस प्रकारकी व्याख्या करनेके लिए मैंने सम्मेलनवालोंको मना लिया था कि उसमें उर्दूको भी शामिल कर दिया जाये, उस 'हिन्दी' शब्दको मैं छोड़ देता तो मैं खुद अपने प्रति और सम्मेलनके प्रति भी हिंसा करनेका दोषी होता। यहाँ हमें यह याद रखना चाहिए कि यह 'हिन्दी' शब्द हिन्दुओं का गढ़ा हुआ नहीं है। यह तो इस मुल्कमें मुसलमानोंके आनेके बाद उस भाषाको बतलानेके लिए बनाया गया था जिसे उत्तर हिन्दुस्तानके हिन्दू बोलते और लिखते-पढ़ते थे। अनेक नामी-गरामी मुसलमान लेखकोंने अपनी भाषाको 'हिन्दी' या 'हिन्दवी' कहा है और अब जबकि हिन्दीके अन्दर उन विभिन्न रूपोंको शामिल कर लिया गया है, जिन्हें हिन्दू और मुसलमान दोनों बोलते और लिखते हैं, तब यह महज शब्दोंका झगड़ा कैसे?

फिर एक दूसरी बात भी ध्यानमें रखनी है। जहाँतक दक्षिण भारतकी भाषाओं का सम्बन्ध है, बहुत सारे संस्कृत शब्दोंसे युक्त हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है, जो दक्षिणके लोग पसन्द कर सकते हैं; क्योंकि कुछ संस्कृत शब्दों और संस्कृत ध्वनियोंसे तो वे पहलेसे ही परिचित होते हैं। जब ये दोनों — हिन्दी और हिन्दुस्तानी या उर्दू — घुलमिल जायेंगी और जब दरअसल सारे हिन्दुस्तानकी एक भाषा बन जायेगी और प्रान्तीय शब्दोंके दाखिल होनेसे वह रोज-रोज तरक्की करती जायेगी, तब हमारा शब्द-भण्डार अंग्रेजी शब्दकोशसे भी अधिक समृद्ध बन जायेगा। मैं आशा करता हूँ कि अब आप समझ गये होंगे कि 'हिन्दी-हिन्दुस्तानी' के लिए मेरा इतना आग्रह क्यों है।

१. देखिए खण्ड १४, पृ० २७७-८१।

२. देखिए खण्ड ६०, पृ० ४८६-९२ और ४९३-९७।

आपमें से जो लोग इस बातपर चिन्तित हैं कि हिन्दी-हिन्दुस्तानी ही कांग्रेसकी भाषा बनने जा रही है, उन्हें मैं एक गुर बताता हूँ। कोई हिन्दी दैनिक या कोई अच्छी [हिन्दीकी] पुस्तक खरीद लीजिए और इसके कुछ अंश चाहे पाँच मिनटके लिए सही नियमित रूपसे जोरसे बोलकर पढ़िए। शुद्ध उच्चारणके लिए प्रसिद्ध हिन्दी लेखों और भाषणोंके सन्दर्भ छाँटिए और उन्हें अपने-आप दोहराते रहिए। यह नियम बना लीजिए कि कुछ-एक हिन्दी शब्द प्रतिदिन सीख लें। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि इस नियमित अभ्याससे आपमें इतनी योग्यता आ जायेगी कि आप छः महीने के भीतर हिन्दी-हिन्दुस्तानीमें अपने विचार अभिव्यक्त करने लग जायेंगे और आपकी स्मरण-शक्ति पर कोई ज्यादा बोझ नहीं पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-४-१९३७

३५. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको[1]

मद्रास
२८ मार्च, १९३७

प्रतिनिधि : पद-स्वीकृति पर अ० भा० कां० कमेटीके प्रस्ताव[2] में आपका हाथ होनेकी बात प्रसिद्ध है; उस नाते क्या आप, जो स्थिति आज उभरकर सामने आई है, उसके बारेमें कुछ प्रकाश डाल सकते हैं?

गांधीजी : इसे समझ लेना जरूरी है कि मैं इन दिनों राजनीतिके बारेमें कोई मत व्यक्त नहीं करता।

प्र० : क्या आप यह बात जानते हैं कि ऐसी राय जाहिर की गई है कि दोनों पक्षोंने एक-दूसरेको गलत बतानेकी कोशिश की है और यह राय जिम्मेदार नेताओंकी है?

गा० : मैं इसके बारेमें कुछ नहीं जानता। मैंने अभी आज शामके समाचारपत्र नहीं देखे हैं।

पत्र-प्रतिनिधिने विवश होकर वार्तालाप दूसरे विषयोंकी ओर मोड़ा और उसने दक्षिण भारतमें हिन्दीकी प्रगतिपर गांधीजीके विचार जानने चाहे। विशेषकर अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन द्वारा स्वीकृत उस प्रस्ताव[3] के सन्दर्भमें, जिसमें कहा गया था कि कांग्रेसकी बहसोंमें पूरी तरह हिन्दीका ही प्रयोग किया जाना चाहिए।

१. यह भेंट "गांधीजीकी सायंकालकी प्रार्थनाके फौरन पश्चात्" कराई गई थी
२. देखिए पृ० ४-५ ।
३. देखिए पृ० ३४, पा० टि० १।

गां० : तुलनात्मक दृष्टिसे कहा जाये तो हिन्दीके मामलेमें अच्छी प्रगति हुई है। कुछ साल पहले जहाँ शायद ही कोई व्यक्ति हिन्दी जानता था, वहाँ अब एक बड़ी संस्था हिन्दीमें प्रशिक्षण देनेका काम सँभालनेमें लगी है। इस संस्थाके द्वारा कई हजार लड़के-लड़कियों, पुरुषों और स्त्रियोंको हिन्दीकी शिक्षा दी जा रही है। यह प्रगतिका चिह्न है। परन्तु जहाँतक जनमतके प्रतिनिधित्व करनेवाले नेताओंका सम्बन्ध है, मैं ऐसा नहीं कह सकता कि दक्षिणके चारों प्रान्तोंकी प्रतिक्रियासे मैं सन्तुष्ट हूँ। मुझे इस बातमें सन्देह है कि उन्होंने गम्भीरतापूर्वक इस दृष्टिसे हिन्दीकी पढ़ाई शुरू कर दी है कि वे हिन्दीमें बातचीत कर सकें या यह जान सकें कि हिन्दीके समाचारपत्रोंमें क्या छप रहा है या वे उत्तरी प्रान्तोंमें जनताके सामने हिन्दीमें बोल सकें। इसलिए दक्षिणके एक प्रान्तके इतिहासमें पहली बार हिन्दी सम्मेलनका आमन्त्रित किया जाना और उसकी बैठक मद्रासमें होना प्रसन्नताका विषय है।

मुझे आशा और विश्वास है कि यह पूर्वग्रह, कि हिन्दीको प्रान्तीय भाषाओंका स्थान दिलानेका इरादा है, अबतक शान्त हो चुका है। निस्सन्देह सम्मेलनका प्रधान यह भी है कि प्रान्तीय भाषाओंको भी सुदृढ़ बनाया जाये। यदि प्रान्तीय भाषाएँ समृद्ध नहीं होतीं तो हिन्दी अन्तर्प्रान्तीय सम्पर्क-भाषाके रूपमें नहीं पनप सकेगी। राष्ट्रभाषाके रूपमें हिन्दी-प्रेम प्रान्तीय भाषाओंके प्रति प्रेमके साथ ही चलना चाहिए।

यही बड़ी भारी बात है कि यह प्रस्ताव, जिसमें कांग्रेस कार्य-समितिको अखिल भारतीय कार्यवाहियोंमें अंग्रेजीका प्रयोग बन्द कर देनेके लिए कहा गया है, एकमतसे पारित कर दिया गया। इसमें मुझे कतई सन्देह नहीं है कि सार्वजनिक मामलोंमें अंग्रेजीको जो स्थान और महत्व मिलता रहा है, वह उसे कभी नहीं मिलना चाहिए था। नजर डालनेपर हम देख सकते है कि हिन्दी या हिन्दुस्तानीका स्थान अंग्रेजी द्वारा हड़प लिये जानेसे उस सीमातक हिन्दी और प्रान्तीय भाषाओंकी प्रगति रुक गई है। हमारी ओरसे यह स्वीकार किया जाना कि भौतिक-विज्ञान साहित्यकी समृद्धि और आविष्कारोंका वर्णन प्रान्तीय भाषाओं अथवा हिन्दीमें सही तौरपर नहीं हो सकता, कोई प्रशंसाकी बात नहीं है। मुझे विश्वास है कि हमारे ऐसा कहनेका कारण हमारी सुस्ती मात्र ही है। जिनके मतको महत्व दिया जाता है, ऐसे दक्षिणके नेता यदि इस स्पष्ट तथ्यको समझ जायेंगे तो ऐसा माना जा सकता है कि सम्मेलन और भारतीय साहित्य परिषद्, इन दोनोंके यहाँ होनेवाले अधिवेशनोंने बड़ी उपयोगी सेवा की है।

प्र० : आप कहते हैं कि हिन्दीका प्रसार प्रान्तीय भाषाओंकी उन्नतिमें बाधक हो सकता है, यह भय हटता जा रहा है। यदि यह बात मान भी लें तो क्या सभी भाषाओंके लिए सामान्य भारतीय लिपि अपनानेका सुझाव चिन्तोत्पादक चीज नहीं है?

गां० : यह बहुत अच्छा सवाल किया गया है। प्रान्तीय भाषाओंके लिए सामान्य लिपि अपनाये जानेके सुझावसे किसी भी तरह यदि प्रान्तवासियोंके मनपर यह असर होता है कि यह प्रान्तीय भाषाओंको प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्षरूपमें हानि पहुँचानेका प्रयत्न है तो यह एक अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी। मैं विरोधकी कोई भी आशंका किये बिना यह कह सकता हूँ कि यह बात तो मेरी कल्पनामें भी नहीं थी

कि सामान्य लिपि अपनाये जानेसे प्रान्तीय भाषाओंकी प्रगतिमें कोई बाधा पड़ेगी। इसके विपरीत, सामान्य लिपि अपना लिये जानेसे उन लोगोंके रास्तेकी बड़ी भारी बाधा दूर हो जायेगी जो अपनी भाषाके अलावा भारतकी अन्य भाषाएँ सीखना चाहते हैं और इस तरह दूसरी भाषाओंके अध्ययनमें भी सुविधा होगी। मेरा यह विचार व्यक्तिगत और सहयोगियोंके अनुभवपर आधारित था।

हमारा राष्ट्र निरक्षर है, इस अर्थमें कि भारतके मुश्किलसे सात प्रतिशत लोग ही अपनी भाषाकी वर्णमाला लिख सकते हैं। शेष तिरानवे प्रतिशतके बारेमें आप क्या करेंगे? क्या सात या दस प्रतिशत पढ़े-लिखे लोग, इसलिए कि वे किसी विशेष लिपिको जानते हैं और प्रान्तीय ध्वनियोंको उन संकेतों द्वारा व्यक्त करते हैं, उन संकेतोंको नब्बे या तिरानवे प्रतिशत लोगोंपर थोप सकते हैं जिससे उनके लिए दूसरी प्रान्तीय भाषाएँ सीखना कठिन हो जाये? निरक्षर जन-समुदायकी ओर यदि थोड़ा-सा ध्यान दिया जाये और सारे भारतकी बाबत कुछ सोचा जाये तो सात प्रतिशत लोगोंको यह विश्वास हो जायेगा कि सामान्य लिपि अपनाये जानेकी कितनी जरूरत है। क्या यूरोपमें सामान्य लिपि अपना लिये जानेसे वहाँ विभिन्न यूरोपीय भाषाओंकी प्रगति किसी भी तरह या किसी भी रूपमें रुकी है?

इसके बाद सेगाँव ग्राममें जो ग्राम-सुधारका काम हो रहा था, उसपर बात-चीत चली। गांधीजी उठकर बैठ गये और उन्होंने कहा:

आप मुझसे इस विषयपर विस्तारसे बात कर सकते हैं। आप मुझसे खादी, चरखा, टोकरियाँ और कागज बनाना आदि विषयोंपर चर्चा कर सकते हैं।

प्र० : क्या आपकी सेगाँव-सुधार योजनामें कागज बनानेके काममें अच्छी प्रगति हुई है?

गा० : यदि मुझे अखबारोंसे कागजका अनुबन्ध मिल जाये तो मुझे आशा है कि मैं उनकी आवश्यकता पूरी कर सकता हूँ — यद्यपि फिलहाल मिलोंमें बने कागजसे मैं कोई होड़ नहीं कर सकता। यदि मैं अभीसे इस होड़में लग जाऊँ तो मुझे मलेरिया-निरोधक कामकी उपेक्षा करनी पड़ेगी।

मलेरियाके बारेमें बोलते हुए गांधीजीने कहा कि रोकथामके उपाय और आहार मलेरिया-निरोधक कार्यके अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग हैं। उन्होंने कहा कि कुनीन देनेका तबतक कोई लाभ नहीं है जबतक कि इसके साथ लोगोंको ठीक भोजन भी न दिया जा सके। गांधीजीने आगे कहा:

मलेरियाके सभी बीमारोंको निरपवाद रूपसे मुझे दूध या मट्ठा देना पड़ता है और यह सलाह देनी पड़ती है कि वे ऐसा भोजन लें जिससे बीमारीसे मुक्ति पा सकें। मुझे विश्वास है कि दवा-दारूकी अपेक्षा भोजनका महत्व ज्यादा है और अच्छा भोजन लगातार दवाई देते रहनेसे कहीं बढ़कर है।

गांधीजीने इस बारेमें एक दिलचस्प सूचना यह दी कि सिवाय दो-एक बारके उन्होंने कभी दवाई नहीं ली है।

प्र० : क्या आप विधान-सभाके कांग्रेसी सदस्योंके लिए ग्राम-सुधारकी इसी पद्धति पर किसी छमाही योजनाका सुझाव देंगे; क्योंकि यह जाहिर है कि इस अवधिमें विधान-सभाका अवकाश रहेगा?

गां० : जवाहरलाल ऐसी योजना सुझा सकते हैं।

इसके बाद गांधीजीने खादीके बारेमें कुछ प्रश्नोंके उत्तर दिये। उन्होंने कहा कि पहले मेरा खयाल था कि खादीके प्रति उत्साह कुछ क्षीण हुआ है। परन्तु खादीको मासिक-बिक्रीमें बढ़ोतरी होते जानेसे मुझे यह कहते हुए पशोपेश ही होता है कि खादीके प्रति लोगोंका प्रेम क्षीण हो गया है। उन्होंने कहा, यह बिलकुल सही है कि जबकि पहले सिरोंपर खादीकी टोपियाँ-ही-टोपियाँ दिखाई देती थीं, अब वैसा दिखाई नहीं देता, किन्तु यह कोई खादी-प्रेमकी सही कसौटी नहीं है। गांधीजीने आगे कहा:

कुछ कार्यकर्ताओंको भय था कि कतैयोंके वेतनमें वृद्धिसे खादीकी माँगपर असर पड़ेगा, किन्तु मुझे इस बातकी बड़ी खुशी है कि ऐसा नहीं हुआ है। निकट भविष्यमें कतैयोंकी मजदूरीमें हम और अधिक वृद्धि करनेका निश्चय न करें तो मुझे आश्चर्य होगा।

गांधीजीने कहा कि मुझे खादीकी प्रगतिके बारेमें कोई निराशा नहीं हो रही है, इसलिए मैं स्वयं अपनेसे या समाचारपत्रों और जनतासे अपनी यह इच्छा छिपा नहीं सकता कि खादीने अबतक जो प्रगति की है, उससे कहीं ज्यादा प्रगति होनी चाहिए थी। गांधीजीने कहा:

खादीको शहरोंमें रहनेवालों और दूसरे लोगोंसे, जिन्हें अपने तनको ढँकनेके लिए निश्चित परिमाणमें कपड़ा चाहिए, सहानुभूति और समर्थन मिलना ही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-३-१९३७

३६. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

मद्रास
३० मार्च, १९३७

बहुमतवाले प्रान्तोंमें सरकारें बनानेके लिए आमन्त्रित कांग्रेसी नेताओं द्वारा माँगे गये आश्वासन देनेसे गवर्नरों द्वारा इन्कार कर दिये जानेपर विचार करनेके बाद मैं समझता हूँ कि देशमें जो स्थिति पैदा हो गई है, उसपर मैं अपना मत व्यक्त कर दूँ। लन्दनसे आये हुए तीन तार मुझे दिखाये गये हैं जिनमें मुझसे अपना मत व्यक्त करनेके लिए कहा गया है। मद्रासमें मेरे जो मित्र हैं, उन्होंने भी इसे प्रकाशित करनेके लिए जोर डाला है। यद्यपि यहाँ मैं अपने बनाये नियमका स्वयं उल्लंघन कर रहा हूँ, तथापि मैं अब ज्यादा देर इस दबावको बर्दाश्त नहीं कर

सकता, विशेषकर इसलिए भी कि मैं कांग्रेसके प्रस्तावकी पद-स्वीकृति-सम्बन्धी धारा[1] का मूलपाठ प्रणेता और पद-स्वीकृतिके साथ शर्त जोड़नेके विचारका प्रवर्तक हूँ।

मेरी इच्छा यह नहीं थी कि कोई असम्भव शर्त रखी जाये। इसके विपरीत, मैं कोई ऐसी शर्त रखना चाहता था जिसे गवर्नर आसानीसे स्वीकार कर सकते। ऐसी शर्त रखनेका कोई इरादा नहीं था कि जिसकी स्वीकृतिसे संविधानको रत्ती-भर भी आँच पहुँचती हो। कांग्रेसियोंको इस बातकी अच्छी तरह जानकारी थी कि वे ऐसे संशोधनकी माँग नहीं कर सकते और न वे ऐसी माँग करेंगे। कांग्रेसकी नीति यह थी और अब भी यही है कि संशोधन करनेके बजाय इस संविधानको, जिसे कोई नहीं चाहता, बिलकुल समाप्त ही कर दिया जाये। कांग्रेसजन यह जानते थे और अब भी जानते हैं कि पद स्वीकार कर लेने मात्रसे — चाहे वह सशर्त ही क्यों न हो — वे इसे समाप्त नहीं कर सकते। पद स्वीकार करनेमें विश्वास रखनेवाले कांग्रेस-वर्गका उद्देश्य यह था कि जबतक कांग्रेसके अहिंसा-सिद्धान्तके अनुकूल स्थिति न बन जाये, जिसमें कि सारी शक्ति जनताके हाथ आ जायेगी, तबतक उन पदों पर रहकर काम किया जाये जिससे कि कांग्रेस-संस्थाको बल मिले जो प्रभावपूर्ण तरीकेसे जनमतका प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्थाके रूपमें सामने आई है। मैंने महसूस किया कि यह उद्देश्य तबतक पूरा नहीं हो सकता जबतक कि गवर्नरों और उनके कांग्रेस-मन्त्रियोंके बीच यह प्रतिष्ठाजनक सहमति न हो जाये कि जबतक मन्त्री संविधान के अन्तर्गत कार्य करते हैं, वे [गवर्नर] हस्तक्षेप करनेके अपने विशेष अधिकारका प्रयोग नहीं करेंगे। वैसा न करनेका अर्थ यह होगा कि पद स्वीकार करते ही लगभग तत्काल गतिरोध पैदा होनेकी नौबत आ जायेगी। मेरे विचारमें ईमानदारी तो इसीमें है कि वह सहमति आपसमें हो जाये।

यह दोनोंके हितमें है कि गवर्नरोंके पास विवेकाधिकार रहें। निस्सन्देह यदि वे ऐसा कह देते कि संविधानके अन्तर्गत कार्य करते हुए मन्त्रियोंके विरुद्ध वे अपने विवेकाधिकारोंका उपयोग नहीं करेंगे तो इसमें कोई संविधानके बाहरकी बात नहीं होती। यहाँ यह बात ध्यानमें रखने योग्य है कि ऐसा समझ लिया गया था कि ऐसे जो बहुत-से दूसरे रक्षाके उपाय हैं जिनपर गवर्नरोंका कोई अधिकार नहीं है, उन्हें नहीं छेड़ा जायेगा। एक सुदृढ़ दलसे, जिसे जनमतका निश्चित समर्थन प्राप्त हो, यह आशा नहीं रखी जा सकती कि वह अपने-आपको ऐसी नाजुक स्थितिमें डाले रखे जिसमें उसे सदा इस बातका भय रहे कि गवर्नर जब चाहे हस्तक्षेप कर सकते हैं। यह सवाल दूसरे तरीकेसे भी किया जा सकता है। क्या गवर्नरोंको मन्त्रियोंके प्रति विनम्र होना चाहिए या उद्धत? मेरा मत है कि यदि वे अपने मन्त्रियोंके ऐसे मामलोंमें, जिनपर मन्त्रियोंको वैध-नियन्त्रण प्राप्त है और जिनमें गवर्नरोंको हस्तक्षेप करनेकी कोई कानूनी अनिवार्यता नहीं है, हस्तक्षेप करें तो यह बात स्पष्टतः शिष्टता-रहित ही मानी जायेगी। आत्मसम्मान रखनेवाला मन्त्री,

१. देखिए पृ० ४-५।

जिसे इस बातका ध्यान है कि उसके पीछे पूर्ण बहुमत है, ऐसी माँग जरूर करेगा कि उसे यह आश्वासन दिया जाये कि उन मामलों में हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा। क्या मैंने सर सैमुअल होर[1] और दूसरे ब्रिटिश मन्त्रियोको साफ शब्दोमें यह कहते नही सुना है कि गवर्नर हस्तक्षेप करनेके अपने व्यापक अधिकारोका उपयोग सामान्यतः नही करेंगे। मेरा दावा है कि कांग्रेस-फार्मूलेमें और कुछ नही माँगा गया है।

ब्रिटिश सरकारकी ओरसे यह दावा किया गया है कि अधिनियमके अधीन प्रान्तोको स्वायत्तता दे दी गई है। यदि यह सही है तो प्रान्तोके बुद्धिमत्तापूर्ण प्रशासनके लिए गवर्नर नही अपितु उस दौरान पद ग्रहण किये हुए मन्त्री ही उत्तरदायी होंगे। उत्तरदायी मन्त्री, जिन्हे अपने कर्तव्यका भान है, अपने प्रतिदिनके कर्तव्यपालनमें हस्तक्षेप सहन नही कर सकते। इसलिए मुझे ऐसा लगता है कि ब्रिटिश-सरकार अपने किये हुए वायदेसे एक बार फिर पीछे हट गई है। इसमें मुझे कोई सन्देह नही कि ब्रिटिश-सरकार अपनी इच्छा लोगोंपर तबतक थोप सकती है और थोपती रहेगी जबतक कि लोग अपने अन्दर उसका प्रतिरोध करनेकी शक्ति न उत्पन्न कर ले, परन्तु इसे प्रान्तीय स्वायत्तताका क्रियाशील होना नही कहा जायेगा।

उनका दावा है कि सविधान प्रान्तोको स्वायत्तता प्रदान करता है। लेकिन साफ शब्दोमे कहें तो उन्होंने इस स्वायत्ताको उस बहुमतका निरादर करके समाप्त कर दिया है जो कांग्रेसने उन्हीकी चुनाव-प्रणालीके जरिये प्राप्त किया है। इसलिए अब यह तलवारका शासन होगा, कलम तथा निश्चित बहुमतका नहीं। संसार-भरकी सारी सद्भावनाको अपने मनमें सँजोकर भी मैं सरकारी कार्रवाईकी यही व्याख्या कर सकता हूँ, क्योंकि मुझे अपने फार्मूलेकी ईमानदारीमें शत-प्रतिशत विश्वास है। इस फार्मूलेकी स्वीकृतिसे सकट टल जाता और सत्ता सहज, नियमित तथा शान्तिपूर्ण ढंगसे नौकरशाहीके हाथो से दुनियाके सबसे बड़े और परिपूर्ण जनतन्त्रके हाथोंमें आ जाती।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०-३-१९३७

१. गृह-विभागके सचिव।

३७. पत्र : अमृत कौरको

रेलगाड़ीमें
३० मार्च, १९३७

प्रिय पगली,

यह मैं चलती रेलगाडीमें लिख रहा हूं। तुम्हें वह पत्र तो अवश्य मिल गया होगा, जिसे तुम्हें लिख देनेके लिए मैंने महादेवसे कहा था। मद्रासमें मेरे पास इतना काम था कि मुझे और किसी बातकी फुरसत ही न थी। मैंने इतना काम किया कि मेरा शरीर लगभग जवाब दे गया। और इस सबका कारण था सभाके मन्त्री पण्डित हरिहर शर्माके जबरदस्त दुराचरणका पता लगना।

अम्मु स्वामीनाथन् मद्रासमें नहीं थी।

तुमने यह ठीक ही किया कि अपने पैरके बारेमें तार भेज दिया, क्योंकि तुम्हारे पत्रसे तो मनमें बडी आशंका पैदा हो गई थी। आशा है कि अब तुम तकलीफसे बिलकुल छुटकारा पा चुकी होगी। तुम्हें उसके कारणका पता लगाना चाहिए।

हां, मैं चाहूंगा कि तुम चम्मच-भर दाल लेना भी बन्द कर दो और साथ ही घी या तेलमें पकाई या भूनी गई सब्जी या और कोई चीज लेना भी बन्द कर दो। मुझे मालूम है कि तुम तेल नहीं छूती। कच्चे लहसुन, टमाटर और कुछ हरे पत्तोंके साथ कच्चा प्याज जरूर लो। दूधकी मात्रा बढ़ा दो। यदि तुम्हारे पास अच्छी गाय हो तो दिनमें एकाध बार कच्चा दूध लेकर देखो।

दिनशा मेहताका पता लिखना तो बिल्कुल भूल ही गया। पता है . डॉ० दिनशा मेहता, प्राकृतिक चिकित्सालय, सिटी स्टेशनके पास, पूना सिटी। क्या उन्होंने तुम्हें भाप लेनेकी केतली भेजी? मैंने उनसे कहा है कि वे तुम्हारे पास जालन्धर शहरके पते पर केतली वी० पी० पी० द्वारा भेज दें।

इन इलाकोंमें गर्मी शुरू हो गई है। परन्तु अभी असह्य नहीं हुई। मीरा कहती है कि मेरी अनुपस्थितिमें वर्धामें बड़ा बुरा तूफान आया। ऐसा लगता है कि वर्धाका मौसम बदल गया है।

तुम्हारा हिन्दीका प्रयास अच्छा था। अम्बुजम[1] ने हिन्दी-सम्मेलनके साथ महिला-परिषद्‌का भी आयोजन किया था। बा को उसका प्रधान बना दिया था। चूंकि अम्बुजमका

१. एस० अम्बुजम्माल, एस० श्रीनिवास अय्यंगार की पुत्री।

व्याख्यान छोटा है, मै उसकी एक प्रति तुम्हारे पास भेज रहा हूँ। यह तुम्हारे अभ्यासके विचारसे अच्छा रहेगा। इसमें कुछ गलतियाँ हैं, तुम उन्हें पकड़ सकोगी।

-सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७०) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९२६ से भी

३८. पत्र : प्रभावतीको

रेलगाड़ीमें
३० मार्च, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। यह पत्र मैं वर्धा जाते हुए रेलगाड़ीमें लिख रहा हूँ। अमतुस्सलाम अपने घर पटियाला गई है। नवीन मद्रास आया था। पापरम्मा[1] भी आई थी। सरस्वती नही आ पाई। मद्रासमें काम बहुत करना पड़ा। मद्रासकी उस कमलाबाईको क्या तू पहचानती है, जो प्रचारका कार्य करती थी? वह यहाँ है। उसके साथ अण्णा[2] का पतन हुआ है। अत. अब फिलहाल तो उसे प्रचारका काम छोडना पड़ेगा।[3] बहुत करके वह और गोमतीबहन मेरे साथ रहेंगी। वहाँ उसकी परीक्षा करूँगा। आदमी जरा भी गफलत करता है, तो गिरता है। मृदुलाके साथ रहनेमें ज्यादा सोच-विचार करने-जैसी कोई बात नही है। बिहारमें काम करनेके लायक आत्मविश्वास जब तुझमें आ जाये, तब तू वह काम अपने कन्धोपर ले सकेगी। यदि आत्मविश्वास हो, तो मृदुलाके पास जानेकी जरूरत नही है। अत: चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नही है। जिस समय जो काम आ पड़े, उसे निश्चिन्ततापूर्वक और एकाग्रताके साथ करे, तो आत्मसन्तोष होता ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९६) से।

१. पद्मावती, जी० रामचन्द्रनकी बहन।

२. हरिहर शर्मा।

३. देखिए "हिन्दी-प्रचार और चारित्र्य-शुद्धि", ३-४-१९३७।

३९. पत्र : अमृत कौरको

३१ मार्च, १९३७

प्रिय बागी,

मैं अभी गाड़ीमें ही हूँ। मैंने कल ही पत्र लिखा था[1] परन्तु मैं तुम्हें यह बताना भूल गया कि जब मैंने कार्टून[2] देखा तो मैंने वैसा ही महसूस किया जैसा तुमने महसूस किया था। वह बिलकुल निश्छल मजाक था। केवल शक्की मनके व्यक्तिको ही कार्टूनके पीछे दुष्टतापूर्ण उद्देश्य दिखाई दे सकता था। परन्तु सन्देह तो हो ही सकता है, इसलिए उसको ध्यानमें रखना है। इस विचारसे कार्टूनकी तरफ देवदासका ध्यान दिलाकर तुमने बिलकुल ठीक ही किया।

कलका पत्र गाडीमें 'देरीका शुल्क' लगाये बिना डाकमे डाल दिया गया था। महादेवका खयाल है कि यह तुम्हे एक दिन बाद मिलेगा। यह पत्र 'देरीका शुल्क' लगाकर डाला जा रहा है। यह पत्र तुम्हे उससे पहले मिले तो बताना।

आशा है कि तुम्हारे पैरकी उँगली ठीक होगी और तुम सैर करने जाती होगी। दाल बिलकुल नही लेना और सब्जियाँ बनाते समय उनमें घी मत डालना; तली हुई चीजें बिलकुल न खाना। यथासम्भव जितना दूध ले सको, लो और कच्चा प्याज और लहसुन लो।

डॉ० दिनशा मेहता, प्राकृतिक चिकित्सालय, ६ टोडीवाला रोड, सिटी स्टेशनके पास, पूना सिटी।

यह मेहताका पता है। आगे कलके पत्रका सार दिया गया है।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७१) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९२७ से भी

१. देखिए पृ० ४३-४।

२. यह कार्टून २२-३-१९३७ के हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित हुआ था; उस समय देवदास गांधी इसके प्रबन्ध-निदेशक थे। इस कार्टूनमें, जिसे शंकर ने बनाया था, विधान-सभामें वित्त-विधेयक पर हुई बहसके दौरान दिए गये श्री प्रकाशके भाषणका संकेत था।

४०. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव
१ अप्रैल, १९३७

प्रिय पगली,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले। एक कल मिला था, एक आज। निस्सन्देह पंजाबके खादी-कार्यके तौर-तरीकेको ठीक कर डालना चाहिए। तुम्हें चाहिए कि पूरी तरह इसकी जाँच करो और अपनी जाँचके परिणामसे मुझे अवगत कराओ।

हिन्दी पुस्तकोंके पैसे चुकाना बाकी है। मुझे प्रसन्नता है कि चुनाव तुम्हे और वसुमती[1] को पसन्द है। क्या तुम बिलके लिए ब्रजकृष्ण चाँदीवाला, कटरा खुशालराय, दिल्लीको लिखोगी? मुझे ये पुस्तकें उसके द्वारा मिली थी; परन्तु मैंने खुद भी उनकी जाँच कर ली थी। मैंने तुमसे कहा था कि तुम्हें वे सारी पुस्तकें रखनेकी जरूरत नही है। फिर भी जो तुम्हें और वसुमतीको पसन्द हो, वे सब पुस्तकें तुम रख लो। पियरेका क्या समाचार है?

तुम क्यो बाहर नही निकलती और कोमल धरतीपर नंगे पाँव क्यों नहीं चलती? तुम्हें ताजी हवामें कसरत जरूर करनी चाहिए। नंगे पाँव चलनेसे उँगलीको लाभ होगा। निस्सन्देह यदि तुम मेरे साथ होती तो बिना कठिनाईके तुम्हारी उँगली ठीक हो जाती। कभी-कभी नीम हकीम भी ठीक काम कर जाता है।

मुझे नही मालूम कि मीरा ऐसा क्यों कहती है कि यहाँ मौसम खराब है। यहाँ बिना मौसमकी बारिश तो हुई है। मै ठीक हूँ। वजन ११४ पौंड है।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७२) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९२८ से भी।

१. वसुमती पण्डित, गुजराती लेखक नवलराम पण्ड्याकी पुत्रवधू।

४१. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

१ अप्रैल, १९३७

भाई मूलचन्दजी,

मुझे स्मरण तो ऐसा है कि मैंने स० प्र० [सत्यार्थ प्रकाश] मे से काफि फिकरे प्रगट किये थे। अब मैं कोई जाहिर चर्चा नहीं चाहता हूँ। जब मैंने लिखा था तब काफी अनर्थ हुआ था और आर्य समाज प्रति कुछ अन्याययुक्त बाते हुई थी। मुझे सत्यार्थप्रकाश भेजोगे तो मैं अवश्य मेरी बात के समर्थन मे फिकरे निकलवा सकुगा। मेरे अभिप्रायमें कोई परिवर्तन नही हुआ है। इसका अर्थ यह हरगीज नहीं है कि स्वा० दयानद के प्रति मेरा पूज्यभाव कुछ कम है। वह अध नही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७६३) से।

४२. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१ अप्रैल, १९३७

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा पत्र कल मद्रास मे आने पर मिला। तुमारा मानना कि मैं तुमारे दोषोंके कारण तुमको मेरे पास रहने मे रोकता हूँ बिलकुल अयोग्य है और मुझे अन्याय है। मेरे साथ रहने मे निकम्मा कालक्षेप है ऐसा ही समझकर मैंने तुमको रोका है। लेकिन यदि दूसरी तरह शांति ही न मिले तो अवश्य आओ और जहातक रहना पुरस्त मानो रहो। शरीर अच्छा नही रहेगा तब तो क्या होगा? वह भी भले बाद मे देखा जाय। यह तो हुई बात मेरे साथ रहने की।

अब तुमारी आपत्ति की। मुझे लगता है तुमारे शादी करना शादी करने मे कोई भयानक दोष तो नहीं है। विधूर सब करते हैं। मनमें व्यभिचार चलता रहे उससे बहतर शादि अवश्य है।

धनके बारेमें अभिप्राय देना कठिन है। मैं तो इतना ही कहूंगा कि धनोपार्जन करना भी तो सेवा हो सकती है। धनोपार्जनमें भी नीतिकी मर्यादा होनी आवश्यक है और उनसे मैंने जो कानून बताया है वह लगाया जाय और यथासंभव धनका उपयोग समाज हितके लिये किया जाय।

तुमारी व्यथा शक्तिके बाहर जाकर काम करनेकी कोशीशसे बढ़ती है। नीतिका कोई अनुचित अर्थ न किया जाय। विशेष मिलनेपर। तुमारा खत वापिस करता हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४५५) से।

४३. पत्र : अमतुस्सलामको

१ अप्रैल, १९३७

प्यारी बेटी अमतुल सलाम,

मैं जानता हूँ कि मेरे उर्दू खत पढ़नेमें तुमको कम तकलीफ होती है, इसलिए यह खत उर्दूमें लिख रहा हूँ। तुम्हारा खत मिला है। भाभी[1] से कहो 'आप लोगोंको तो मैं अमतुस्सलामकी मार्फत ही जानता हूँ। लेकिन उसने इस तरह पहचान करा दी है कि तुम सब मेरे रिश्तेदार-से लगते हो। कैसा अच्छा हुआ कि अमतुल ठीक वक्तपर तुम्हारे पास पहुँच गई। अब तो अच्छा होगा। खुदा तुमको जल्दी आराम करे।'

जो खुराक देती हो सो अच्छी तो है। हरी भाजी देनी चाहिए। कटिस्नान देना। कान्तिका खत मिला था। वह मैसूर जायेगा। अब तो राजकोट रहेगा। अप्रैलके आखिरमें मैसूर जायेगा। शायद दो-तीन दिनके लिए त्रिवेन्द्रम जाये। देवदासने इजाजत दे दी है। मनुकी शादी सेगांवमें होगी। वहाँ तो कान्तिको आना ही होगा। मैं यहाँसे १४ तारीखको चल दूंगा। २५ को वापस आ जाऊँगा। तुम्हारे जब मेरे पास आना है तब आ जाओ। तुम्हारी तबीयत अच्छी रहती है, यह पढ़कर मुझे बहुत खुशी हासिल होती है। बिलकुल अच्छी हो जाओ तो तुम्हारे पाससे पेट-भरके काम ले सकूंगा। मैं मद्रासमें कल वापस आया। वहाँ इस वक्त बहुत काम था।

भाभीको पेटपर रातको मिट्टीका पाटा (पट्टी) देना। उससे बहुत फायदा होना चाहिए। पापरम्मा मद्रास आई थी। सरस्वती नहीं आ सकी। है खुश। दुबारा नहीं पढूंगा।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७७) से।

१. अमतुस्सलामके भाईकी पत्नी इन्दौरमें बीमार थीं।

४४. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

सेगांव
२ अप्रैल, १९३७

बापा,

मुझे लिखा, यह तुमने बहुत अच्छा किया। तुम्हारे पत्रसे मुझे आश्चर्य हुआ है। घनश्यामदासने मना किया था, फिर भी मैंने मलकानीसे बात की और सुझाया कि वह हरिजन निवास छोड़नेके लिए तैयार रहे। फिर यह सब मैंने घनश्यामदासको बताया। हाँ, यह मैंने जरूर जताया था कि मलकानीका काम मुझे बिलकुल ही बेकार नहीं लगा है; लेकिन फिर भी उसे निकालना कोई मुश्किल नहीं होगा। तब उन्होंने कहा था कि मुझे स्वयं सन्देह है, लेकिन इसपर वे आगे देखकर विचार करेंगे। अब मैं तुम्हारा पत्र उन्हें भेज रहा हूँ। मेरा इस मामलेमें कोई भी आग्रह नहीं है। तुम भी उनके साथ चर्चा करना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११७५) से।

४५. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२ अप्रैल, १९३७

भाई घनश्यामदास,

यह क्या है? मेरे तरफसे मलकानीको रखनेका तनिक भी आग्रह नहीं है। यदि उसके निकलनेसे हरिजन निवासका ज्यादा श्रेय होवे तो उसको वहांसे शीघ्र हटानेका हम सबका धर्म हो जाता है। इसलिए जो श्रेयस्कर हो वही किया जाय।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०३० से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

४६. हिन्दी-प्रचार और चारित्र्य-शुद्धि

गत २६ तारीखको दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचार सभाकी अन्तिम परीक्षामें उत्तीर्ण होनेवाले युवक-युवतियोको प्रमाण-पत्र देनेके लिए दीक्षान्त समारोह हुआ था। मुझे स्नातकोको प्रमाणपत्र देनेके लिए आमन्त्रित किया गया था।[1] उन्हे तेहरी प्रतिज्ञा लेनी थी — हिन्दी-हिन्दुस्तानीका प्रचार, मातृभूमिकी सेवा और हिन्दी-प्रचार सभाकी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिए चारित्र्य-शुद्धि। प्रतिज्ञाके अन्तिम दो भागोकी ओर मैंने स्नातकोका ध्यान विशेष रूपसे आकर्षित किया। लेकिन सेवा और चारित्र्य-शुद्धि सम्बन्धी व्रत लेनेकी बात प्रतिज्ञामें रखते समय प्रतिज्ञाके प्रणेताओका एक विशेष हेतु था। जाहिर है कि उनकी ऐसी राय थी कि सभा द्वारा परीक्षामें पास होकर निकले युवक और युवतियाँ यदि सेवाभावसे हिन्दीका प्रचार करे और उनका चरित्र निश्चित रूपसे परम शुद्ध हो, तो ये दो चीजें स्नातकोकी प्रतिष्ठाको बढ़ायेंगी और वे खुद ही हिन्दी-हिन्दुस्तानीको लोकप्रिय बनानेके लिए प्रचारका सबसे सुन्दर साधन बन जायेंगे। इसलिए मैंने उन्हे उस प्रतिज्ञाका स्मरण कराया जो उन्होने उसी समय की थी। अपने कथनका समर्थन करनेके लिए मैंने स्नातकोको एक हिन्दी शिक्षकके पतनकी जो खबर मेरे पास आई थी, वह सुनाई और कहा कि इस पतनने हिन्दी-प्रचारके कामको कितनी हानि पहुँचाई है। इस खबरकी बात कहते समय मैंने सोचा भी न था कि मुझे अभी आगे क्या-क्या सुनना बदा है।

दूसरे दिन सबेरे मेरे हाथमें एक ऐसा पत्र रखा गया, जिसमें पण्डित हरिहर शर्मा[2] के चरित्रके पतनके बारेमें ब्योरेवार बातें लिखी हुई थी। पण्डित हरिहर शर्मा उपर्युक्त प्रतिज्ञाके मूल प्रणेता, और हिन्दी-प्रचार सभाके मन्त्री है। वे सत्याग्रह आश्रमके आरम्भकालसे ही उसके सदस्य भी है। उन्होने तथा उनकी पत्नीने हिन्दी-प्रचार कार्यके लिए पर्याप्त योग्यता प्राप्त की है। वर्षोंसे दक्षिण भारतमें हिन्दी प्रचार-आन्दोलनके वे प्राण है। आश्रममें उनके प्रति सभीके मनमें बड़ा आदर था। जिनके बारेमें कभी शंका ही नही उठ सकती, जिनके विरुद्ध कोई उँगली नही उठा सकता, ऐसे आश्रमवासियोमें उनकी गिनती होती थी। अतः मैं उस पत्रमें लिखी बातोंपर विश्वास नही कर सका। दूसरे दिन सबेरे मैंने उनसे बात की। थोड़ी देर तो उन्होने अपने ऊपर किये गये दोषारोपणका विरोध किया, पर फिर उसे छिपाना उन्हें असह्य लगा और उन्होने सारी बात कबूल कर ली। आश्रमके आचार-धर्मके अनुसार उन्होने मुझे अपने पाप-कृत्यको सबके सामने प्रकट करनेकी इजाजत दे दी। मैंने

१. देखिए "भाषण: दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाके दीक्षान्त समारोह, मद्रासमें", पृ० २२-४।
२. देखिए "पत्र: प्रभावतीको", पृ० ४४।

तुरन्त ही सभाकी कार्यकारिणीको यह खबर सुना दी। कार्यकारिणी ऐसी चौंका देनेवाली खबर सुननेके लिए तैयार नहीं थी। पण्डित शर्माने अपने पतनकी वजहसे त्यागपत्र भी दे दिया। कार्यकारिणीको उनका त्यागपत्र मंजूर करना ही होगा और सारी कार्य-व्यवस्था उसे अब नये सिरेसे करनी होगी। काका साहब हिन्दी-प्रचार सभाकी कार्यकारिणीको सलाह-मशविरा देनेके लिए मद्रासमें रह गये हैं।

लेकिन मेरे लिए इस विषयका अन्त यहीं नहीं हो जाता। कोई ऐसा मान सकता है कि इस तरह की घटनाओंको प्रकाशमें लानेकी जरूरत नहीं है। जो ऐसा मानते हैं, स्पष्ट है कि उन्हें पूरी बातोंका पता नहीं। जिन संस्थाओंके साथ मेरा निकटका सम्बन्ध रहता है, उनका वास्ता जन-समुदाय —— पुरुषों तथा स्त्रियों —— से पड़ता है। ये संस्थाएँ सैकड़ों स्वयंसेवकों द्वारा काम चलाती हैं। उनके पास सिवा एक नैतिक बलके दूसरी किसी भी प्रकारकी सत्ता नहीं होती। स्वयंसेवकोंपर जनता विश्वास रखती है, क्योंकि वह यह मान लेती है कि उनका चरित्र तो शुद्ध होगा ही। जिस क्षण वे अपनी चारित्र्य-शुद्धिकी साख खो देंगे, उसी क्षण उनकी प्रतिष्ठा और उनका प्रभाव कम हो जायेगा। पाप-पंकमें फँसी हुई संस्था या व्यक्तियोंको उनका पाप प्रकट हो जानेसे कभी हानि नहीं हुई।

पण्डित शर्माके पतनसे सारे भारतवर्षके कार्यकर्ताओंको यह सबक लेना चाहिए कि वे अपने बारेमें निरन्तर जागरूक रहें और जब शत्रु आक्रमण करे, तब ऊँघते हुए या गाफिल न मिलें। यह चीज दक्षिण भारतके हिन्दी-शिक्षकों पर अपेक्षाकृत अधिक लागू होती है। दक्षिण भारतमें परदेका रिवाज नहीं है। वहाँ हिन्दीमें लड़कोंकी अपेक्षा लड़कियाँ ज्यादा दिलचस्पी लेती दिखाई देती हैं। शिक्षकोंको अपने व्यवसायके कारण ही अपने शिष्यों और शिष्याओं पर जो नैतिक अधिकार प्राप्त है, उससे उनका सन्देह दूर हो जाता है और वे एक तरहका विश्वास, जो साधारणतया नहीं रखा जाता, शिक्षकोंके प्रति रखने लगते हैं।

इस आशयका एक सुझाव पहले ही आ चुका है कि हिन्दी-प्रचार सभाको अगर सौ फीसदी अपनेको सुरक्षित बनाना है, तो उसे लड़कियोंको खानगी शिक्षा देनेकी प्रथा बिलकुल ही बन्द कर देनी चाहिए। मैं इस विचारसे सहमत नहीं हूँ। हम चाहे जितनी सावधानी रखें, तो भी पतनकी घटनाएँ तो घटती ही हैं। इसलिए जरूरतसे ज्यादा सावधानी भी नहीं रखनी चाहिए। पर लड़कियोंकी खानगी शिक्षा बन्द कर देना तो नैतिकताके सम्बन्धमें दिवाला कबूल कर लेने-जैसी बात है। हमारे लिए घबरा जाने या हताश हो जानेका कोई कारण नहीं। जहाँ तक मैं जानता हूँ, साधारणतया हिन्दी-शिक्षकोंने चरित्र-शुद्धिके सम्बन्धमें निष्कलंक रहकर अपना कार्य सम्पन्न किया है। पतन सिद्ध हो जानेपर एक भी उदाहरण मैंने जनतासे छिपाकर नहीं रखा। हम प्रलोभनोंको आमन्त्रण न दें, इसी तरह प्रलोभनोंसे बिलकुल ही बचनेके लिए लोहेके पिंजरेमें बन्द होकर न बैठ जायें। प्रलोभन जब बिना बुलाये हमारे सामने आ जायें, तब उनका सामना करनेके लिए हमें तैयार रहना चाहिए।

शर्माने प्रलोभनको निमन्त्रण दिया, इसीसे उनका पतन हुआ। उन्होंने अपनी शक्तिके ऊपर हदसे ज्यादा भरोसा रखा।

जिन लोगोंको हिन्दी-प्रचारके काममें रुचि हो, उन्हें यह जाननेका कुतूहल नहीं होना चाहिए कि पण्डित शर्माका इसके बाद अब क्या होगा या उन्होंने जो गलती की है, उसकी क्या तफसील है। शर्मा जब तक आत्मशुद्धि नहीं कर लेते, तब तक वे मेरे ही साथ रहेंगे। सस्थासे उनके अदृश्य हो जानेका अर्थ यह नहीं कि उनकी सेवाके कार्यकालका अन्त हो गया है। इस पतनने यदि उन्हें उनके जीवनमें शिक्षा लेने-योग्य पाठ सिखा दिया होगा, तो न तो वे खुद कुछ गँवायेंगे और न हिन्दी प्रचार-कार्यके हाथसे उनके जैसा योग्य कार्यकर्ता निकल जायेगा। भूल करना मनुष्यका स्वभाव है, की हुई भूलको मान लेना और इस तरहका आचरण रखना कि जिससे वह भूल फिर न होने पाये, यह मर्दानगी है। इस कार्यके लिए आवश्यक पुरुषत्वका गुण शर्मामें आये, ऐसी हम आशा रखें, और यह प्रार्थना करें कि इस पतनसे वे अधिक अच्छे सेवक बनें। ससारके कुछ साधु-सन्त कुख्यात पातकी रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-४-१९३७

४७. एक दुर्भाग्यपूर्ण दस्तावेज

उच्च शिक्षा प्राप्त चौदह भारतीय ईसाइयोंने, जिनका समाजमें महत्वपूर्ण स्थान है, एक संयुक्त घोषणा-पत्र जारी किया है। उसमें उन्होंने हरिजनोंके बीच किये जानेवाले मिशनरी-कार्यके बारेमें अपने विचार प्रकट किये हैं। वह दस्तावेज भारतीय समाचारपत्रोंमें प्रकाशित किया गया है। उसे 'हरिजन' में प्रकाशित करनेकी मेरी इच्छा नहीं थी, क्योंकि उसे कई बार पढ चुकनेपर भी मुझे उसके पक्षमें कुछ कहने लायक बात नहीं मिली और साथ ही मुझे यह भी लगा कि उसकी आलोचनात्मक समीक्षा करनेसे भी कोई लाभ नहीं होगा। परन्तु अब मैं समझता हूँ कि मुझसे यही आशा की जा रही है कि मैं उसकी आलोचना करूँ, और वह चाहे कितनी ही खरी और तीखी क्यों न हो, उसका स्वागत ही किया जायेगा।

इस अंकमें वह पूरा घोषणा-पत्र प्रकाशित है। इसका शीर्षक[1] भी लेखकोंका ही दिया हुआ है। उनकी दशा उस यात्री-जैसी है जो दो नौकाओंपर सवार होनेके प्रयासमें मँझधारमें डूब जाता है। उन्होंने ऐसी चीजोंमें सामंजस्य स्थापित करनेकी कोशिश की है जिनमें सामंजस्य स्थापित हो ही नहीं सकता। जहाँ ईसाइयोंके एक

१. "दलित और पिछड़े वर्गोंके प्रति हमारा कर्तव्य"। हस्ताक्षर करनेवालोंके नाम थे: के० के० चैण्डी, एस० ज्ञानप्रकाशम्, एस० गुरुबाथम, एस० जैसुदासन, एम० पी० जॉन, जी० वी० जॉब, जी० जोसेफ, के० आई० मथाई, ए० ए० पाल, एस० ई० रंगानाथम् ए० एन० सुदर्शनम्, ओ० एफ० ई० जकारिया, डी० एम० देवसहायम्, जी० वी० मार्टिन।

वर्गमें प्रगट आक्रामकता लक्षित होती है, वहाँ उनके एक दूसरे वर्गमें, जिसका प्रतिनिधित्व वक्तव्यके लेखक करते हैं, दीनके प्रति दाताके जैसी झूठी विनम्रताका भाव प्रगट होता है। यह वर्ग कार्य-सिद्धिके लिए आक्रामक रवैया अपनानेके पक्षमें नहीं है। वक्तव्यका उद्देश्य अनपढ़ और अज्ञानी लोगोंको धर्म-परिवर्तन करनेके तरीकोंकी बिलकुल साफ शब्दोंमें भर्त्सना करनेके बजाय लाखों हरिजनोंमें बाइबिलके सिद्धान्तोंका प्रचार करने का अधिकार जतानेका है। वक्तव्यका मूल-भाव अनुच्छेद ७ और ८ में है। अनुच्छेद ७ इस प्रकार है:

> **पुरुष और महिलाएँ व्यक्तिगत रूपमें और पारिवारिक रूपमें या ग्राम-समूहोंमें ईसाई-धर्मकी बिरादरीमें शामिल होते रहेंगे। यह ईश्वरेच्छाका सच्चा आन्दोलन है। इस धाराको संसारकी कोई शक्ति रोक नहीं सकती। भारतमें ईसाई-चर्चका यह कर्तव्य होगा कि वह, जो सत्य ईसा मसीहमें है, उसका अन्वेषण करनेवाले लोगोंका स्वागत करे और उन्हें शिक्षा तथा आध्यात्मिक पोषण दे। चर्च ऐसे लोगोंको अपने अन्दर दाखिल करनेके अधिकार पर डटा रहेगा चाहे वे किसी भी धर्मके माननेवाले क्यों न हों। वह इस धर्महीनता और भौतिकतावादके युगमें आगे बढ़कर सबके अन्तरमें आध्यात्मिक भूख जगानेके अधिकारको कभी नहीं छोड़ेगा।**

ये कुछ-एक वाक्य इस बातके स्पष्ट उदाहरण हैं कि कामना किस तरह विचारोंकी जननी बन जाती है। यह अवचेतन दशामें होनेवाली प्रक्रिया है; परन्तु इस कारण उसकी आलोचना नहीं हो सकती, यह बात नहीं है। पुरुष और महिलाएँ ईसाई-चर्चकी बिरादरीमें शामिल नहीं होना चाहते। गरीब हरिजनोंकी स्थिति भी इनसे कुछ बेहतर नहीं है। मैं तो चाहता हूँ कि उनमें सच्ची आध्यात्मिक भूख होती। आज लोग मन्दिरोंमें जाकर सन्तुष्ट हो जाते हैं। भले ही वे यह न जानते हों कि मन्दिर क्यों और किस तरह जाना चाहिए। जब दूसरे धर्मका कोई मिशनरी उनके पास जाता है तो वह उनके पास अपना सामान बेचनेवाले व्यापारीकी हैसियतसे जाता है। उसके पास ऐसा कोई विशेष आध्यात्मिक गुण नहीं होता जिसके कारण वह उन लोगोंसे श्रेष्ठ माना जाये। फिर भी उसके पास ऐसा भौतिक साज-सामान जरूर होता है जो वह अपने धर्म-संघमें शामिल होनेवाले लोगोंको देनेका वायदा करता है। आप इस बातपर भी गौर करें कि भारतमें ईसाई-चर्च अपने कर्तव्यको अधिकार मानता है। कर्तव्य जब अधिकार बन जाये तो कर्तव्य नहीं रह जाता। कर्तव्य निभानेके लिए अपेक्षित गुण कष्ट झेलना और आत्म-निरीक्षण करना है। अधिकारका प्रयोग करनेके लिए जो गुण अपेक्षित है, वह है व्यक्तिके प्रतिरोध करनेवालेपर अपनी इच्छा थोपनेकी शक्ति। यह शक्ति वह या तो स्वयं अपने ही उपायोंसे प्राप्त कर लेता है या फिर अपने अधिकारका प्रयोग करनेके लिए वह कानूनकी सहायता लेता है। अपना कर्ज चुकाना मेरा कर्तव्य है पर मुझे यह अधिकार नहीं कि मैं अपने उधार लिए हुए पैसे उधार देनेवालेकी जेबमें

उसकी इच्छा न होने पर भी जबरदस्ती डाल दूँ। आध्यात्मिक सन्देश पहुँचानेके अपने कर्तव्य सन्देशवाहक प्रार्थना और उपवास द्वारा एक उपयुक्त माध्यम बनकर ही निभा सकता है। यदि इसे अधिकार मान लिया जाये तो इसका यह मतलब हो जायेगा कि हम अनिच्छुक लोगोंपर अपनी मर्जी जबरदस्ती लादते हैं।

इस घोषणा-पत्रका उद्देश्य निस्सन्देह हिन्दुओंकी क्षुब्ध भावनाओंको शान्त करना और उनके भयको दूर करना रहा होगा। परन्तु मेरी रायमें इससे यह उद्देश्य पूरा नहीं होता। इसके विपरीत इसका मनपर बुरा असर ही पड़ता है। मैं लेखकोंको यह सुझाऊँगा कि वे मेरी टिप्पणियोंको ध्यानमें रखते हुए अपनी स्थितिका पुनर्निरीक्षण करें। वे अधिकार और कर्तव्यके बीचके मौलिक अन्तरको समझें। आध्यात्मिक क्षेत्रमें अधिकार नामकी कोई चीज नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-४-१९३७

४८. गोसेवामें बाधाएँ

एक पिंजरापोलके मन्त्री लिखते हैं:[1]

मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि मृत पशुके चमड़ेका सदुपयोग करनेसे न धर्मकी हानि होती है, न सनातनी हिन्दुओंको इससे दुःख होना चाहिए। हाँ, मृत पशुके चमड़ेका पूरा-पूरा उपयोग न करनेसे अवश्य धर्म-हानि होती है, क्योंकि इससे गोवध बढ़ता है। गायकी कीमत दिन-प्रतिदिन कम होती जाती है, इसलिए गाय ज्यादा बिकती है, और सीधे बूचड़खानोंमें चली जाती है। अगर हम गोसेवाको हिन्दू-धर्मका अनिवार्य अंग समझ लें, तो न हम चर्मकारके धन्धेको नीच मान सकते हैं, न चर्मकारको अछूत। गाय मरती है केवल हमारे अज्ञानसे। धर्मका नाम लेनेसे धर्मकी रक्षा नहीं हो सकती; यह तो शास्त्रका रहस्य जान लेने और उसका पालन करनेसे ही हो सकती है। मैंने कई बार लिखा है कि भारतवर्षकी गोशालाएँ यदि अपने धर्मको जान लें और उसका भली-भाँति पालन करें, तो गोवध समाप्त किया जा सकता है, और सबको गायका दूध सुलभ हो सकता है। मेरे इस वाक्यमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है। गोधन प्रायः सब हिन्दुओंके हाथमें है। यदि वे गाय न बेचनेके धर्मका पालन करें — गोवधका कारण गाय बेचना ही है — तो गोकुशी हो ही नहीं सकती। हरएक गोशाला आदर्श दुग्धालय अर्थात् स्वावलम्बी बन जाये, और उसमें दुग्धालय और

१. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने लिखा था कि अबतक तो पिंजरापोलमें मरे हुए पशु चर्मकारोंको मुफ्त दे दिये जाते थे। परन्तु इस साल पशुओंका चमड़ा उतरवाकर बेचा गया। इससे रूढ़िवादी हिन्दुओंमें भारी असन्तोष फैल गया है।

गोवंशवृद्धिके शास्त्री कार्य करें। स्वावलम्बी गोशालाको तो नित्य बढ़ना ही है। साथ ही, मृत पशुओंके चमड़ेका भी वह संस्था सदुपयोग करेगी। इसका अर्थ यह होता है कि गोधनकी पुष्टिके साथ-साथ हमारे ज्ञानकी भी पुष्टि होगी, और इससे हमें देशकी बेकारी दूर करनेमें बड़ी सहायता मिलेगी। एक भी गोशाला इस कार्यको करे, तो उसका अनुकरण दूसरी गोशालाएँ भी करेंगी।

हरिजन-सेवक, ३-४-१९३७

४९. पत्र : अमृत कौरको

[सेगाँव]
३ अप्रैल, १९३७

प्रिय पगली,

आशा है कि तुम अपने पैरके अँगूठेका उपचार मेरे नुस्खेके अनुसार कर रही होगी। मिट्टीकी पट्टी भी उस स्थानपर बाँधनी चाहिए।

निश्चय ही अगर वैसा करनेसे तुम अपनी ही नजरोंमें गिरती हो तो तुम उस बड़ी पुस्तक[1] पर हस्ताक्षर मत करना। अ० भा० ग्रामोद्योग संघकी बैठकमें जाजूजीका[2] त्यागपत्र स्वीकार कर लिया गया और किसी दूसरे व्यक्तिकी नियुक्ति नहीं की गई। कुमारप्पाका बैठकमें रंग जमा नहीं। खैर कोई बात नहीं। घटनाओंके स्वाभाविक क्रममें जो होना होगा सो होगा।

यहाँ मौसम मानसून-जैसा है।

सस्नेह,

जालिम

[पुनश्चः]

तुमने किशोरलालके पत्रका उत्तर नहीं दिया।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७३) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९२९ से भी

१. यहाँ संकेत अनुमानतः पंजाब खादी-कार्यसे सम्बन्धित रिपोर्टकी ओर है।
२. श्रीकृष्णदास जाजू।

५०. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगाँव
३ अप्रैल, १९३७

प्रिय कु०,

रिपोर्टको मैंने सरसरी तौरपर देख लिया है। मैंने उस अनुच्छेदको हटा दिया है जो रोटियाँ बनानेके सम्बन्धमें था। वह तो मामूली बात है। फिर भी वह पढ़ने-योग्य है, हालाँकि एक आदर्श रिपोर्टकी जो कल्पना मेरे मनमें थी, उस-जैसी वह अब भी नहीं है। लेकिन ऐसा तो अगली [रिपोर्ट]में ही हो सकता है।

शाहकी टिप्पणी भी मैं वापस कर रहा हूँ। जैसे ही तुम निर्णय लो, मुझे अपनी टिप्पणी लिख भेजोगे। यदि तुम्हारा संयुक्त निष्कर्ष[1] ऐसा ही है तो मैं घोषित कर दूँगा कि कोई भी व्यक्ति इनाम पाने लायक नहीं है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०११५) से।

५१. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

३ अप्रैल, १९३७

प्रिय कु०,

मैं भगवानदास और शंकरदास दोनोंसे मिला। मैं अभी तक मामलेकी थाह नहीं पा सका हूँ। शंकरदास किसी स्कूलके नहीं हैं। उन्हें तो चौधरी लाये हैं। भगवानदास अभी नहीं जायेंगे। उन्होंने मुझे आश्वासन दिया है कि मेरी अनुमतिके बिना वे नहीं जायेंगे।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०११६) से।

१. देखिए खण्ड ६१, पृ० ३९५-६। परीक्षक-मण्डलके सदस्य, के० टी० शाह, वैकुण्ठ एल० मेहता और जे० सी० कुमारप्पा इस निष्कर्षपर पहुँचे थे कि प्राप्त निबन्धोंमें से एक भी निबन्ध निर्धारित शर्तोंकी पूर्ति नहीं कर सका है। देखिए "वस्तु-विनिमय पद्धतिपर निबन्ध", १-५-१९३७ भी।

५२. पत्र : कोतवालको

सेगाँव
४ अप्रैल, १९३७

भाई कोतवाल,

तुम्हारा पत्र मिला था। तुम्हारी आँख अब बिलकुल ठीक हो गई होगी।

भारतीय [साहित्य] परिषद्[1] में सफल होने जैसा कुछ था ही नहीं; अतः जो जैसा चाहे वैसा अपने मनको समझा सकता है।

आँख बिलकुल अच्छी होनेके बाद तुम क्या करोगे, मैं देखूंगा। बाकी, मेरी आज्ञा तो दूर रही, मेरी इच्छा अथवा माँगके अनुसार भी कुछ कर सकनेकी तुम्हें यदि याद हो, तो मुझे लिखकर बताना। मुझे तो याद नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३६००) से।

५३. पत्र : प्रभाशंकर ह० पारेखको

४ अप्रैल, १९३७

भाई प्रभाशंकर,

मैं खुद कुछ कर सकने की स्थितिमें नहीं था, इसलिए आपका पत्र मैंने भाई नानालाल[1] को भेज दिया था। और इसीलिए मुझे कुछ लिखनेको भी नहीं रह गया था। आपकी स्थिति सरौतेके बीच सुपारी-जैसी बिलकुल नहीं है। और हो भी, तो सुपारी जैसे सरौतेके बीच अधिक सेवा करती है, वैसी ही बात आपकी भी होनी चाहिए।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

श्री प्रभाशंकर हरचन्दभाई
डेराशेरी,
राजकोट (काठियावाड़)

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७६८) से।

१. भारतीय साहित्य परिषद्की सभा मद्रासमें २७ और २८ मार्च, १९३७ को हुई थी; देखिए पृ० ३१-२ और ३४-७।

१. नानालाल कालिदास जसाणी।

५४. पत्र : कन्हैयालाल मा० मुंशीको

४ अप्रैल, १९३७

भाई मुंशी,

गुजरात साहित्य परिषद् द्वारा जो समिति उसके संविधानके पुनरीक्षणके लिए गठित की गई थी, उसका क्या हुआ? मामलेको अन्तिम रूपसे निवटा देना चाहिए। गवर्नरोंका कहना है कि कांग्रेसके नेताओंकी शर्तें सुधार-अधिनियमसे संगति नहीं रखती हैं। उनकी आपत्तिमें कानूनी औचित्य कितना है, इस दृष्टिसे क्या आपने गौर किया है? यदि आपको लगता है कि गवर्नर जो-कुछ कहते हैं, वह ठीक है तो वैसा आपको मुझे अच्छी तरह समझाना होगा। यदि आपको ऐसा लगता है कि अधिनियमका उल्लंघन किये विना गवर्नर कांग्रेसकी शर्तोंको मान सकते थे, तो कुछ अच्छे वकीलोंके हस्ताक्षर लेकर यह राय आपको प्रकाशित करवानी चाहिए थी। कृपया इस मामलेपर तत्काल कदम उठाइए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७६१३) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

५५. पत्र : जेठालाल जी० सम्पतको

४ अप्रैल, १९३७

चि० जेठालाल,

तुम्हारा अच्छी तरह लिखा हुआ पत्र मिला। तुम भली-भाँति घी के व्यापारमें लग गये हो। देखना, यह व्यापार तुम्हें निगल न जाये। तुमने काम मक्खनसे शुरू किया, यह तो ठीक किया। आखिरकार तुम्हें दूधसे शुरू करना पड़ेगा, और ऐसा करना पड़े तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। इस समय मैं जिस विषयपर विचार कर रहा हूँ, उसपर थोड़ा-बहुत अमल मैंने शुरू भी कर दिया है। ज्यादा तो, जब कर चुकूँगा, तब समझमें आयेगा। तुम यदि हुदली आनेवाले हो, तो वहाँ इस सम्बन्धमें पूछना। यह मैं माने लेता हूँ कि तुम आओगे।

मुकदमेके खर्चके लिए अगर कहीं औरसे पैसा न निकाल सको तो मुझसे मँगा लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९८६१)से; सौजन्य : नारायण जेठालाल सम्पत

५६. पत्र : राजेन्द्र प्रसादको

४ [अप्रैल][1], १९३७

भाई राजेन्द्र बाबू,

पत्र मिला है। हिन्दी-हिन्दुस्तानके बारेमें जो कुछ हुआ है वह अच्छा ही हो गया। जो निवेदन प्रकट हुआ है उसके मुताबिक कार्यका आरंभ अवश्य किया जाए। कांफरेन्सकी सूचना तो अच्छी है लेकिन आजका वायु-मंडल देखते हुए मुझे उसकी सफलताके बारेमें कुछ शक है सही। लेकिन उसका तो क्या किया जाए? प्रयत्नसे कभी न कभी सफलता मिलेगी। इसलिए जैसे मौका मिलता रहे ऐसे उद्यम अवश्य करते रहो।

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें कोई चिन्ताका कारण नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९८८१ से; सौजन्य : राजेन्द्रप्रसाद

५७. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
५ अप्रैल, १९३७

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। महादेव अपनी विमाता के पास अपनी बहनके विवाहके सिलसिलेमें गया है। वह कल लौटेगा।

महादेवकी सुभापचन्द्र बोसके साथ लम्बी गपशप हुई। उनकी तन्दुरुस्ती खास अच्छी नहीं दिख रही थी। उनके रिहा होनेके बाद क्या तुमने उन्हें पत्र नहीं लिखा है?

तुम्हारी हिन्दीकी लिखावट बहुत सुन्दर है। गतिकी चिन्ता मत करो; वह अभ्याससे आ जायेगी। तुमने जिस तरह लिखना शुरू किया है, उसे जारी रखना चाहिए।

१. लगता है कि गांधीजीने यह पत्र भारतीय साहित्य परिषद्में भाषण देनेके बाद लिखा था; देखिए पृ० ३१-३ और ३४-७।

वातोंको याद रखनेके मामलेमें मैं मूर्ख हूँ। अब तुम्हें मेरे भुलक्कड़पनका बोझ बर्दाश्त करना पड़ेगा। "एक-दूसरेके बोझ उठाओ।"

जिनको मुझे अपने साथ जरूर ही रखना चाहिए, उन सबके लिए यहाँ जगह काफी छोटी साबित हो रही है। वसुमती यहीं पर है, बाल[1] भी आ रहा है और जल्दी अमतुल भी आयेगी।

हाँ, मद्रासमें कनु मेरे साथ था और बेलगाँव जाते वक्त भी वह मेरे साथ रहेगा। मनुका बेलगाँवमें विवाह होगा। वहाँका मेरा पता होगा: हुदली, जिला बेलगाँव, जहाँ मैं १५ को या हदसे-हद १६ को पहुँच जाऊँगा। मैं यहाँसे १३ को या ज्यादासे-ज्यादा १४ को रवाना होऊँगा।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७४) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९३० से भी

५८. पत्र: अगाथा हैरिसनको

५ अप्रैल, १९३७

प्रिय अगाथा,

ऐसा लगता है कि मैं तुम्हे युगों बाद लिख रहा हूँ। यह पत्र भी बहुत जल्दीमें लिखा जा रहा है। लेकिन तुम्हें जो खबरे मिलनी चाहिए, वे मैं तुम्हें देता रहा हूँ। मैंने समुद्री तार[2] का भी उपयोग किया है।

इसके साथ ही मैं यहाँ दो सहपत्र भेज रहा हूँ, कदाचित् वे उपयोगी सिद्ध हों।

गवर्नर लोगोंने आश्वासन नहीं दिया, इसका भी मुझे खेद नहीं। किन्तु इसे भी अशोभन तरीकेसे किया गया है। और फिर ये खिलौने-जैसे मन्त्रिमण्डल![3] यह भी कैसा झूठ है! लगभग बिना किसी अपवादके ऐंग्लो-इंडियन प्रेसने प्रस्ताव[4] का स्वागत किया था। अब ऐसा क्या हो गया जो उन्होंने अपना रुख ही बदल दिया? उनके तर्कों की अप्रामाणिकता बिलकुल स्पष्ट है। इसने ऐसे प्रत्येक भारतीयके हृदयमें

१. बाल कालेलकर, दत्तात्रेय बा० कालेलकर के पुत्र।

२. देखिए पृ० १ और पृ० ३०।

३. चूँकि गवर्नरोंने "आश्वासन" देनेसे इन्कार कर दिया था, अतः छः प्रान्तोंमें बहुमतवाले दलने भी मन्त्रि-पद ग्रहण करनेसे इन्कार कर दिया और परिणाम-स्वरूप गवर्नरोंने गैर-कांग्रेसी सदस्योंकी सहायतासे एक अन्तरिम मन्त्रिमण्डलकी स्थापना कर दी थी।

४. १६ मार्चका; देखिए पृ० ४।

रोष उत्पन्न किया है जिनकी राय कुछ महत्व रखती है। भूलाभाईका मत एक वकीलका मत है। यह स्वायत्तता बेजान पैदा हुई है। किन्तु संसारके उपदेशक हमें सिखाते हैं कि जब मानवीय प्रयत्न विफल हो जाये तब प्रभुसे प्रार्थना करना ही उचित है। मैं उनमें विश्वास रखता हूँ और यही कारण है कि मैं निराश नहीं हुआ हूँ बल्कि परमात्मासे प्रार्थना कर रहा हूँ। जवाहरलाल इस समय बीमार है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४९६)से।

५९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

दुबारा नहीं पढ़ा

५ अप्रैल, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हें बीमार क्यों पड़ना चाहिए? और फिर बीमार हो जानेपर तुम आराम क्यों नहीं करते? मैंने सोचा था कि इन्दुके आनेके बाद तुम चुपके-से कहीं चले जाओगे। जब वह आ जाये तो उसे मेरा प्यार देना। इस पत्रके साथ उसे भी दो शब्द लिख रहा हूँ।

अब तुम्हारी शिकायतकी बात लेता हूँ। जाने कैसे, लेकिन मैं जो भी कहता या शायद करता भी हूँ, वह तुम्हें खटकता है। चुप रहना असम्भव था। मेरा खयाल था कि सन्दर्भमें शिष्टता और अशिष्टता शब्दोंका प्रयोग ठीक हुआ है। वक्तव्य[1] के बारेमें कांग्रेसकी तरफसे शिकायतका पहला स्वर तुम्हारा निकला है। अगर सभीकी शिकायत थी तो मैं क्या कर सकता था? मुझे खुशी है कि तुमने लिख दिया। जबतक मेरी समझ साफ न हो जाये या तुम्हारे डर दूर न हो जायें, तबतक तुम्हें मुझे बर्दाश्त करना होगा। मुझे अपने वक्तव्यसे कोई हानि होनेका अन्देशा नहीं है। क्या तुम्हारे दिमागमें कोई ऐसी चीज है जिसे मैं समझ नहीं पा रहा हूँ?

कमलादेवीने वर्धासे मद्रास तक हमारे साथ सफर किया। वह दिल्लीसे आ रही थीं। वह मेरे डब्बेमें दो बार आई और उनसे लम्बी बातचीत हुई। अन्तमें वह जानना चाहती थीं कि सरोजिनीदेवीको क्यों नहीं शामिल किया गया,[2] लक्ष्मीपतिको राजाजी अलग क्यों रख रहे हैं, अनसूयाबाईको क्यों बाहर रखा गया, आदि-आदि? तब मैंने उन्हें बताया कि अलग रखनेके मामलेमें मैंने क्या भूमिका निभाई और उस दिन

१. देखिए पृ० ४०-२।

२. कांग्रेस कार्य-समितिमें।

मौनवारको मैंने तुम्हारे लिए जो नोट लिखा था, उसका जितना भाग मुझे याद था, लगभग सारा उन्हें कह सुनाया। अवश्य ही मैंने उन्हें बताया कि शुरूमें सरोजिनीको न लेने और बादमें ले लेनेमें मेरा कोई हाथ नही था। मैंने उनसे यह भी कहा कि जहाँ तक मुझे मालूम है, लक्ष्मीपतिको न लेनेसे राजाजीका कोई वास्ता नही था। मैंने सोचा, तुम्हे यह सब मालूम होना चाहिए।

आशा है, इस पत्रके पहुँचने तक तुम फिर पूरी तरह तन्दुरुस्त हो जाओगे। माताजीके बारेमें तुमने कुछ नही लिखा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीसे गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० २२३-४ से भी।

६०. पत्र: इन्दिरा नेहरूको

५ अप्रैल, १९३७

चि० इंदु,

अब तो बहुत मोटी हो गई होगी। मुझे लिखो। मिलेगी तो अवश्य। ईश्वर तुम्हें दीर्घायुषी करो, सेविका तो है ही।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे: गाधी-इन्दिरा गाधी करेस्पांडेंस, सौजन्य. नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

६१. पत्र: प्रभावतीको

५ अप्रैल, १९३७

चि० प्रभा,

कैसा निराशा-भरा पत्र है तेरा? तुझे क्या दुःख है? काहेकी चिन्ता है? अपना सोचा हुआ सब-का-सब कैसे पूरा हो सकता है? जो सेवा हाथमें आये, उसे प्रफुल्लित मनसे करते रहना, यह कर्तव्य है। फिर क्या दुःख और क्या सुख? निश्चय ही प्राप्त किया जा सके, ऐसा इस जगतमें क्या है? जीवन ही चार दिनका है, और बिलकुल अनिश्चित; फिर यहाँ अपने क्रियाकलापका क्या भरोसा? स्थिर केवल हमारा धर्म है, और वह आत्माके साथ जुड़ा हुआ है, इसलिए अमर है। और समूचा धर्म, सत्य और अहिंसामें समाया हुआ है। उसका पालन करते हुए जो करेंगे,

वह उचित ही होगा। उसका पालन करनेमें हमें रोज कुछ नया ही करनेको मिलता रहे तो क्या, और रोज भटकते ही रहना पड़े, तो भी क्या? हाथमें रोज झाड़ू हो, तो भी क्या और कलम हो, तो भी क्या? जो आये, उससे सन्तोष करना चाहिए। जो-कुछ काम करें, उसका गौरव बढ़ाना चाहिए। पिताजी की इच्छा हो, तब तक वहाँ रह। सिताब दियारा जाना जरूरी हो, तो वहाँ जा, और जयप्रकाश जाने दें, तो अहमदाबाद जा। वहाँ मन लगे ही नहीं तो तुझे जबरदस्ती कौन रोकेगा?

'हरिजन' के बारेमें पूना लिखा है। वसुमती कल आई। अभी रहेगी। अमतुल राजपुरामें है। खान साहब आ गये हैं। बाल परसों आयेगा। मनुका विवाह बेलगाँवमें होगा। बेलगाँव १५ या १६ को पहुँचना है। [पता:] हुदली, जिला बेलगाँव।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९०) से।

६२. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

५ अप्रैल, १९३७

बापा,

यह रहा घनश्यामदासका तार। यह सब क्या है? जो भी हो, स्पष्टीकरण पूरा-पूरा कर लेना। शायद घनश्यामदासने कर भी लिया हो।

भड़ौंचकी जिम्मेदारी मुझपर डाल रहे हो?[1] मैं तो ऐसा नहीं हूँ कि मुझे कोई शर्म आये। मैं क्या करूँगा, यह मैं नहीं जानता। मेरा बीचमें पड़ना कहाँ तक उचित कहा जायेगा, यह बात भी विचारणीय होगी।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११७६) से।

१. भड़ौंचकी नगरपालिकाके भंगियोंकी हड़ताल होनेपर अमृतलाल वि० ठक्कर पंच बनाये गए थे; देखिए "पत्र: वल्लभभाई पटेलको", १९-६-१९३७ और २२-७-१९३७।

६३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

५ अप्रैल, १९३७

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारी बात नही समजता हूँ सो तो नही है। मैंने तो सहल उपाय बताये।[1] यदि विवाह और धनोपार्जनमें ज्यादा कष्ट प्रतीत होता है और इसमें आत्मवंचना नही होती है तो मानसिक युद्ध सहन करना। उसकी स्थिरशांति सत्संगसे ही हो सकती है। एकान्तवास तुमारे लिये नहीं है। सत्सग दो प्रकारसे होता है। एक सत्य-पुरुषोका सहवास दूसरा सदग्रंथोंका वाचन-मनन, तदनुकुल आचार।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४५४) से।

६४. पत्र : राजेन्द्र प्रसादको

५ अप्रैल, १९३७

भाई राजेंद्र बाबू,

हरिजन भाइयोंने बडा पराक्रम और त्याग किया है।[2] उन्हें धन्यवाद। यह हकीकत प्रगट नही की जा सकती है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि जो हुआ है सो अच्छा ही हुआ है। हमारे लोगों पर कैसा असर हुआ है?

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९८७९ से; सौजन्य : राजेन्द्रप्रसाद

१. देखिए पृ० ४७-८।

२. महादेव देसाई के अनुसार (हरिजन, १७-५-१९३७), जगजीवनराम और रघुनन्दन राम ने स्वतन्त्र मुस्लिम दलके नेता मुहम्मद यूनुस द्वारा गठित बिहारके मन्त्रिमण्डलमें पद ग्रहण करनेसे इन्कार कर दिया था।

६५. पत्र : बहलोल खाँको[1]

[६ अप्रैल, १९३७ के पूर्व]

ऐसी आशंका न करें कि मैं कभी उर्दूका विरोध कर सकता हूँ। हाँ, यह मेरी समझमें नहीं आता कि उसकी उन्नतिके लिए मैं कैसे और किस अन्य तरीकेसे सहायता दे सकता हूँ या कार्य कर सकता हूँ। लेकिन मैं समझता हूँ कि मैं उसका विरोध नहीं कर रहा हूँ, यह बात अपने-आपमें पर्याप्त है। मैं नहीं समझता कि मैं इससे ज्यादा कुछ और कर सकता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-४-१९३७

६६. पत्र : कन्हैयालाल मा० मुंशीको

सेगाँव, वर्धा

६ अप्रैल, १९३७

भाईश्री मुंशी,

भारतीय साहित्य परिषद्के कार्यक्रमपर अभिमान करने-जैसी कोई बात नहीं है। और होती भी कैसे? तुम इस परिषद्के जन्मदाता[2] हो, सो तुम खुद ही वहाँ उपस्थित नहीं थे; और मैं पृष्ठभूमिमें था तथा काका उस समय बहुत-सी अन्य बातोंमें व्यस्त थे। ऐसी स्थितिमें कोई बड़ी योजना पेश करना मुझे तो पापरूप लगा। मैं तो खुद अपनी ही जिम्मेदारीपर परिषद्का काम सम्पन्न करनेके लिए तैयार हो सकता हूँ; या फिर हम तीनों ईमानदारीके साथ जो कर सकते हैं, उतना करें और उसमें सन्तोष मानें।

तुम मद्रास नहीं आ सके, इसके लिए तुम्हें मैंने अपने मनमें भी दोषी नहीं ठहराया है।

१. बहलोल खाँने अपील की थी कि गांधीजी उर्दू भाषाकी "भारतकी एकमात्र राष्ट्रभाषा बन सकनेकी उचित माँग" का विरोध न करें। साधन-सूत्रके अनुसार यह पत्र इसी अपीलके जवाबमें अरबी लिपिमें लिखा गया था।

२. अखिल भारतीय साहित्य परिषद्की पहली बैठक, जो २४ और २५ अप्रैल, १९३६ को नागपुरमें हुई थी, वह क० मा० मुंशी और द० बा० कालेलकरके प्रयत्नोंका परिणाम थी।

गुजराती साहित्य परिषद्के बारेमें लोगोंसे अवश्य सुझाव माँगो। जिनकी खातिर समिति बनाई गई है, उनकी ओरसे कोई सुझाव आया है या नहीं? यदि हम समिति की बैठककी तारीखकी घोषणा कर दें तो अच्छा होगा।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६१४) से; सौजन्य: क० मा० मुंशी

६७. पत्र: कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव
७ अप्रैल, १९३७

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। मैं जवाब तो राजकोटके पतेपर ही लिख रहा हूँ। पापरम्मा बेलगाँव आ सके, ऐसी स्थिति नहीं थी। रामचन्द्रन् काफी बीमार है। उसे प्लूरिसी हो गई थी। अब तो अच्छा है, लेकिन आराम ले रहा है। उसकी स्नायु भी कमजोर हो गई है। सरस्वतीको रामचन्द्रन्ने नहीं आने दिया, क्योंकि उसकी पढ़ाईमें ढिलाई आ जायेगी, यह डर उसे अभीतक बना हुआ है।

तेरा अँगूठा अभी भी खराब है, यह आश्चर्यकी बात है। क्या उसपर तूने मिट्टीका प्रयोग किया था? यदि लिखते समय अँगूठेपर पट्टी बाँध दी जाये, तो लिखनेमें बहुत मदद मिलती है। मैंने खुद थके हुए अँगूठेसे लिखनेके लिए पट्टी आजमाकर देखी थी, और मेरा काम चल गया था।

मनुने तुझे मुक्त कर दिया है, इसलिए केवल विवाहके लिए तुझे बेलगाँव नहीं आना पड़ेगा। लेकिन बा वहाँ आ रही है, यह तो तू जानता ही होगा। तो इस-लिए, और तेरे थोड़े समय वहाँ रहनेसे तेरी मौसियोंको जो सन्तोष होगा, उसके लिए तू बेलगाँव आ सकता है। और वहाँसे मैसूर जा सकता है। यदि ऐसा हो सके, तो विवाहके समय तेरी हजिरी हो जायेगी, और बेलगाँवका मेला पूरा होनेके बाद तू सहज ही मैसूर जा सकेगा।

देवदासका पत्र ठीक है। मैंने 'तीव्र' शब्दका प्रयोग किया हो, इसकी मुझे याद नहीं है। प्रयोग किया ही नहीं है, ऐसा मैं नहीं कह सकता। और यदि प्रयोग किया ही हो, तो क्या हर्ज है? तीव्र इच्छा न हो और साधारण इच्छा ही हो, फिर भी वह पूरी हो जाये, तो उसमें कोई बुराई नहीं है। मैसूर जाना तो तेरी इच्छापर निर्भर होना चाहिए। इसलिए यदि देवदास राजी हो जाये तो काफी है। तेरी इच्छा न हो, तो तू क्यों जायेगा? मैं अपनी रायपर कायम हूँ। आबोहवा और शान्तिकी दृष्टिसे मुझे खुद बम्बईकी अपेक्षा मैसूर अधिक प्रिय है। वहाँकी पढ़ाई विल्सन कॉलेज-

१. देखिए "पत्र: कन्हैयालाल मा० मुंशीको", ४-४-१९३७ भी।

जैसी होगी या नही, यह मै नही जानता। किन्तु मेरे विचारसे तो यह विद्यार्थीपर निर्भर करता है। मैंने विल्सन कॉलेजके बहुत-से ठूँठ भी देखे है और मैसूरके अनेक तीव्र बुद्धि विद्यार्थी भी देखे है, जो मैसूरके बाहर नही गये। लेकिन सच तो यह है कि मैसूर जाकर तू खुद सब देख-परख ले, और फिर तुझे जो ठीक लगे, सो कर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३१९) से; सौजन्य कान्तिलाल गाधी

६८. पत्र : प्रभावतीको

७ अप्रैल, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र अभी-अभी मिला। मै तुझे किस प्रकार आश्वासन दूं? तू क्यो घबरा गई है? तू किसे चिन्तामुक्त रहते देखती है? सबको अपनी-अपनी व्याधियाँ लगी है। क्या जयप्रकाश खुद भी निश्चिन्त होकर बैठता है? जवाहरलाल बैठता है? राजेन्द्रबाबू बैठते है? इन सब लोगोसे अधिक चिन्ताएँ तुझे क्या है? पिताके पास रहे, या ससुरालमें रहे, या मेरे पास रहे, सभी जगह सेवा ही करनी है न? यदि तू इतना फर्क माने कि दूसरे स्वेच्छासे चिन्ताओको निमन्त्रण देते है, तो यह भी ठीक नही है। उन्हें भी दूसरोके वश होकर व्यवहार करना पडता है। हम सब जितने स्वतन्त्र है, उतने ही परावलम्बी भी है। तू तो बहुत भाग्यवान है। अब चिन्ता मत करना। मृदुलाके पास जाने या न जानेके बारेमें, जैसा जयप्रकाश कहे, वैसा करना। यदि वह कहे, तो जाना। वह मना करे, तो मत जाना।

पटनाके बारेमें मै समझता हूँ। सीवान जल्दी पहुँच जाना। किन्तु पटनामें रहना कर्तव्य हो जाये, तो उसका पालन करना और शान्त रहना। अण्णाके पतनसे भी हमें इतना ही सीखना चाहिए कि हम सावधान रहें। अमतुलका पता है : जज वहीद साहब, राजपुरा, पटियाला स्टेट।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९७) से।

६९. पत्र : भुजंगीलाल छायाको

७ अप्रैल, १९३७

चि० भुजंगीलाल,

तुम्हारा पत्र तथा चन्दुलालभाईके नाम लिखे तुम्हारे पत्रकी नकल, दोनो मिले। तुम बहुत महत्त्वाकांक्षी हो। किन्तु यदि उसे फलीभूत करना है तो तुम्हें अपनी लिखावट सुधारनी चाहिए। जो छोटे-छोटे मामलोमें प्रयत्नशील और सावधान रहता है, वह बड़े मामलोमें भी वैसा ही रह पायेगा। किन्तु ऐसी धारणा बना लेना बिलकुल गलत है कि छोटे-छोटे मामलोमें लापरवाह रहकर भी मनुष्य बड़े मामलोमें सावधान रह सकता है।

तुम अहिंसाके उपासक हो और विवेक अहिंसाका अविभाज्य अंग है, क्योंकि अविवेक दुखदायक है और विवेक दुखदायक नही होता। यदि कोई लड़का अपनी माँ को अपने पिताकी पत्नी कहकर सम्बोन्धित करता है तो वह सच ही कहता है, किन्तु उसकी भाषामें अविवेक होनेके कारण उसका कथन हिंसापूर्ण है और वह समूचे समाजमें निन्दाका पात्र है।

यदि तुम वास्तवमें मेरी कार्यपद्धतिको स्वीकार करते हो तो तुम्हें खादीशास्त्र भली प्रकार सीख लेना चाहिए। गोसेवा-धर्म क्या है, इसको समझकर इसका पालन करो, और जो अस्पृश्य कहलाते हैं, उनकी नित्य सेवा करो। यदि तुम इन सब कार्योंको, और जिन दूसरे कार्योंमें मैं रत हूँ, उनको भी करते चलो, तो तुम्हारे सम्मुख अपना मार्ग स्पष्ट प्रकट हो जायेगा।

गुजरातीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

७०. पत्र: अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
९ अप्रैल, १९३७

प्रिय पगली,

वहाँ अखिल भारतीय चरखा सघकी शाखाकी सारी व्यवस्था ठीक करनेके लिए तुम वहादुरीसे प्रयत्न कर रही हो। सव-कुछ सही करनेके लिए यहाँसे किसीको नही भेजा जा सकता। तुम्हें भाटियाको भी अपने सामने रखना चाहिए और फिर गोपीचन्दको सलाह देनी चाहिए। इसके अलावा दूसरा उपाय मुझे नही दिखाई देता। इस वखेड़ेको सुलझानेके प्रयासमें तुम्हें अपने शरीर या मनपर वोझ नही डालना चाहिए।

समयके साथ तुम्हारी हिन्दी जोर-शोरमे प्रगति कर रही है। मैं देखता हूँ कि शीघ्र ही तुम सही तथा सुन्दर हिन्दी लिखने लगोगी। तुम्हारे लिखे हुए कुछ वाक्य वास्तवमें निर्दोप है तथा लिखावट भी उतनी ही अच्छी है।

अव मुझे यह वताओ, क्या तुम मूल 'जपजी'[1] पढ और समझ लेती हो? यदि ऐसा है तो मैं चाहूँगा कि तुम रोज उसके एक श्लोकका शब्दश· अनुवाद किया करो। मैं उन दोनो अनुवादो का उपयोग कर रहा हूँ, जिन्हें तुम मेरे लिए छोड गई थी। मेरी रुचिके अनुकूल उनमें से कोई भी नही है। यदि तुम 'जपजी' अच्छी तरहसे समझती हो तो इस काममें तुम्हे रोज पाँच मिनटसे अधिक नही लगने चाहिए। यदि नही समझती तो इस काममें अपने-आपको परेशान करनेकी जरूरत नही है।

चर्म-प्रशिक्षण सस्थानके सम्बन्धमें जो-कुछ तुमने वताया है, दिलचस्प है। यदि उनके पास विवरण-पुस्तिका हो, तो मुझे एक भेज देना।

ऐसा तय है कि हम वेलगाँव जाने के लिए १४ को रवाना होगे। स्टेशन है सुलंघाल। खानसाहव हमारे साथ ही जायेंगे। वहाँ १८ को मनुका विवाह होगा।

अँगूठेके लिए मेरे वताये हुए उपचारका क्या तुमने प्रयोग किया?

मै आशा करता हूँ कि तुम्हें पत्र मिलनेसे पहले इसकी स्याही उड़ नही जायेगी, क्योकि मैंने उसमें वहुत ज्यादा पानी मिला दिया है।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६००) से; सौजन्य. अमृत कौर। जी० एन० ६४०९ से भी

१. सिखों की प्रार्थना-पुस्तक।

७१. पत्र : अगाथा हैरिसनको

९ अप्रैल, १९३७

प्रिय अगाथा,

निश्चय ही तुम्हें बातचीतमें साफगोई बरतनी चाहिए। केवल इसी तरीकेसे तुम सेवा करोगी। बेशक, यहाँसे तुम्हें पूर्ण जानकारी मिलेगी।

निस्सन्देह स्थिति खतरनाक है। लॉर्ड जेटलैण्डके भाषण[1] पर अत्यधिक रोष व्यक्त किया जायेगा। परन्तु तुम मुझपर भरोसा रख सकती हो कि मैं इस बातकी पूरी कोशिश करूँगा कि नाजुक स्थिति पैदा न हो। लेकिन भाषण संकट पैदा करता है। श्री हीथ[2] ने एक समुद्री तार भेजा है, जिसमें वाइसरायके साथ भेंट करने की सलाह दी है। लॉर्ड जेटलैण्डका भाषण तो सरकारपर रोक लगाता प्रतीत होता है। और फिर जो भी हो, भेंट तो जवाहरलालके साथ ही होगी। मैंने अपने वक्तव्यमें एकमात्र सम्भव उपाय बता दिया है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४९७) से।

१. लॉर्ड-सभा में लॉर्ड लोथियन द्वारा उठाये गये प्रश्नके जवाबमें भारत-मन्त्री, लॉर्ड जेटलैण्डने जो गोलमेज सम्मेलन के सदस्य थे और १९३५ के अधिनियम की रचना करने में जिनका हाथ रहा था, इस प्रकार कहा था : "अधिनियम की धारा ५२ के अन्तर्गत गवर्नरोंको कुछ अधिकार दिये गये हैं (उनमें से एक है अल्पसंख्यकोंके वैध हितों की रक्षा करना)। . . . संविधान की संरचना के अन्तर्गत, जो आश्वासन उनसे माँगा गया है, वह नहीं दे सकते और श्री गांधीका यह समझना भूल है कि गवर्नर अपेक्षित आश्वासन दे सकते हैं।" (ए डिकेड ऑफ इंडो-ब्रिटिश रिलेशन्स, १९३७-४७, पृ० ३३) "३० मार्चका श्री गांधीका वक्तव्य [देखिए पृ० ४०-२] आश्चर्यमें डाल देनेवाला था, . . . उन्होंने या तो अधिनियम और निर्देश-पत्र अथवा चयन-समितिके प्रतिवेदनको पढ़ा नहीं, या फिर यदि उन्होंने पढ़ा है तो यह वक्तव्य देते समय वे भूल गये कि इन आलेखोंमें विशेष उत्तरदायित्व-सम्बन्धी अधिकार गवर्नरोंमें निहित हैं। यह एक दुर्भाग्य है कि उन्होंने इस प्रकारका वक्तव्य दिया है, क्योंकि किसी भी प्रकारका वक्तव्य जो श्री गांधी द्वारा दिया गया हो, उसे भारतके बहुसंख्यक लोग आम तौरपर सही समझते हैं।" (महात्मा, खण्ड ४, पृ० १८३-८४)

२. कार्ल हीथ, इंडियन कन्सिलिएशन ग्रुप, लन्दनके अध्यक्ष।

७२. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

९ अप्रैल, १९३७

प्रिय गुरुदेव,[1]

मुझे अभी-अभी इस माहकी ५ तारीखका आपका पत्र मिला। यदि मुझे ठीक उसी तारीखको, जिस दिन आपके यहाँ उद्घाटन-समारोह[1] होनेवाला है, बेलगाँव न जाना होता तो न केवल मैं समारोहमें शरीक होनेके लिए आता, वरन् आपको तथा शान्तिनिकेतनको देखनेके लिए भी आता, जिसे मैंने इधर वर्षोंसे नहीं देखा है। अब जब जवाहरलाल नेहरू समारोहको सम्पन्न कर रहे होंगे तो मैं मनसे आपके ही साथ रहूँगा। ईश्वर करे कि चीना-भवन भारत और चीनके बीच सजीव सम्बन्धका प्रतीक बने।

उस क्षणिक गलतफहमीके बारेमें आपने मुझे जो पत्र लिखा था वह अमूल्य-निधिकी तरह मेरी जाकेटमें रखा है।[2] उससे मेरी आँखोंमें आनन्दके आँसू उमड आये। वह आपकी योग्यताके अनुरूप ही था।

सस्नेह और सादर,

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६४७) से; ट्वेन्टी ईयर्स ऑफ द विश्वभारती चीना-भवन, १९३७-१९५७, पृ० १६ से भी

१. १४ अप्रैल को विश्वभारतीके शोध-विभाग 'चीना-भवन' में।
२. देखिए खण्ड ६४, पृ० ४५३।

७३. पत्र : तान युन शानको

[९ अप्रैल, १९३७][1]

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए अनेकानेक धन्यवाद। समारोहमें उपस्थित होनेमें सर्वथा असमर्थ होनेके लिए दु:ख व्यक्त करते हुए मैंने गुरुदेवको पत्र लिखा है। हाँ, सच-मुच हम चाहते हैं कि दोनों देशोंके बीच सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित हो। आपका प्रयत्न श्लाघनीय है। ईश्वर करे वह सफल हो।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

ट्वेन्टी ईयर्स ऑफ द विश्वभारती चीना-भवन; १९३७-१९५७, पृ० १६

७४. पत्र : कन्हैयालाल मा० मुंशीको

९ अप्रैल, १९३७

भाई मुंशी,

तुमने तो बड़ी फुर्तीसे काम कर डाला। मैंने भी कल ही उसका अच्छे-से-अच्छा उपयोग कर लिया, और भविष्यमें भी करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री कन्हैयालाल मा० मुंशी
२६, रिज रोड
बम्बई

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६१५) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुरको लिखे पत्रके उल्लेखसे; देखिए पिछला शीर्षक।

७५. पत्र : कन्हैयालाल मा० मुंशीको

सेगांव, वर्धा
९ अप्रैल, १९३७

भाई मुंशी,

आपको उलाहना देनेकी मेरी मंशा नहीं थी। लेकिन भारतीय साहित्य परिषद्के बारेमें, जब हम मिलेंगे, तब बात करेंगे। मैं १६ से २२ तक बेलगांवके पास हुदलीमें रहूँगा। २४को वापस वर्धा आऊँगा। उसके बाद हम मिल सकेंगे। कमेटीकी बैठक रखनी हो, तो वह भी रखिए। उ० जोशीका[1] पत्र वापस भेज रहा हूँ। हमें तो कमेटीकी बैठक बिना किन्हीं शर्तोंके करनी है। जो सदस्य हैं, उनसे, उन्हें अनुकूल पड़नेवाला समय पूछ लेना। मुझे यहाँसे १४को रवाना होना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६१६) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

७६. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

९ अप्रैल, १९३७

भाई बापा,

कैफियतका तुम्हारा पत्र अधूरा है। गलतफहमी किस तरह हो सकती थी? मैंने घनश्यामदासकी बावत तुम्हारा पत्र तुम्हारी इच्छानुसार[2] उन्हें भेजा था। तुम लिखते हो कि जितना तुमने सोचा था, उतना दुःख उन्हें नहीं हुआ। और वे लिखते हैं कि उन्हें कोई दुःख ही नहीं हुआ। इतना ही नहीं, बल्कि इस मामलेमें तुम दोनोंका एक ही मत था। इस प्रकार घनश्यामदासके पत्रसे यह ध्वनि निकलती है कि बातका बतंगड़ नहीं बनाना चाहिए था। साथ ही तुम लिखते हो कि इस सम्बन्धमें कुछ कष्ट हुआ हो, तो क्षमा कीजिए। मान लो कि 'गीता'का पुजारी होनेके नाते

१. उमाशंकर जोशी, गुजरातीके कवि और साहित्यकार।
२. देखिए पृ० ४९।

मुझे दु:ख होता ही नहीं, तो भी क्या बातका बतंगड़ बनानेवालेको क्षमा माँगनेकी जरूरत नहीं रहती? यह तुम्हारे विनोदार्थ, और साथ ही ज्ञानार्थ भी है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११७७) से।

७७. पत्र : सरस्वतीको

९ अप्रैल, १९३७

चि० सरस्वती,

तुम्हारा खत मिला। बहुत आलसी हो गई है। तुम्हारी प्रतिज्ञा तो थी ना कि नियमबद्ध लिखती रहेगी। ऐसा तो नहीं करती है। तुम्हारा खतको सुधरवाकर वापस करता हूं। सब गलतियाँ अच्छी तरह समझ लो और दुरस्त करो। पापारम्मा आ गई उसको मिलने पर तो खुश हुआ लेकिन तुम नहीं आ सकी उसका दु:ख भी हुआ लेकिन न आनेका कारण समझकर दु:खका निवारण भी किया।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१५६) से। सी० डब्ल्यू० ३४२९ से भी, सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

७८. सच हो तो आश्चर्यजनक

खानसाहब अब्दुल गफ्फार खाँ और मैं सवेरे और शाम जब घूमने जाते हैं तब हमारी बातचीत अकसर ऐसे विषयोंपर हुआ करती है जिनमें हम दोनोंकी ही रुचि है। खानसाहब सरहदी इलाकोंमें, यहाँतक कि काबुल और उसके भी आगे, काफी घूमे हैं और सरहदी कबीलोंके बारेमें उनकी बड़ी अच्छी जानकारी है। इसलिए वे अकसर वहाँके सीधे-सादे लोगोंकी आदतों और रीति-रिवाजोंके बारेमें मुझे बतलाया करते हैं। वे मुझे बताते हैं कि इन लोगोंकी, जो तथाकथित सभ्यताकी हवासे अबतक अछूते हैं, मुख्य खुराक मक्का और जौ की रोटी और मसूरकी दाल है। समय-समय पर वे छाछ भी ले लिया करते हैं। ये गोश्त खाते हैं, परन्तु बहुत कम। मैंने कहा कि तब उनका हट्टा-कट्टापन और परिश्रम करनेकी उनकी मशहूर क्षमताका एकमात्र कारण उनका खुली हवामें रहना और वहाँ की अच्छी शक्तिवर्धक जलवायु ही हो सकती है। खानसाहबने तत्काल कहा :

> नहीं, सिर्फ यही बात नहीं है। उनमें जो ताकत और दिलेरी है, उसका रहस्य तो हमें उनके संयमी जीवनमें मिलता है। शादी वे — मर्द और

औरतें — दोनों ही पूरी जवानीकी उम्रमें जाकर ही करते हैं। बेवफाई, व्यभिचार या अविवाहित स्त्री-पुरुषोंके प्रेमको तो वे जानते ही नहीं। व्यभिचारकी सजा वहाँ मौत है। जिस पक्षके साथ अन्याय हुआ है, उसे अन्याय करनेवाले की जान लेनेका हक है।

यदि चरित्र-शुद्धता वहाँ इतनी व्यापक है, जैसीकि खानसाहब बतलाते हैं, तो इससे हम हिन्दुस्तानियोंको एक ऐसा सबक मिलता है जिसे हमें हृदयगम कर लेना चाहिए। मैंने खानसाहबके सामने यह विचार रखा कि उन लोगोंके कद्दावर और दिलेर होनेका एक बहुत बडा कारण यदि उनका सयमी जीवन है तो उनके मन और शरीरके बीच पूरा सहयोग भी जरूर होगा। क्योकि अगर मन विपय-तृप्तिके पीछे पडा रहे और शरीर इन्द्रिय-निग्रह करे, तो इससे प्राण-शक्तिका इतना भयकर नाश होगा कि शरीरमें कुछ भी सत्त्व बच नही रहेगा। खानसाहब मान गये कि मेरा यह अनुमान ठीक है। उन्होंने कहा कि जहाँतक मै इसकी जाँच कर सका हूँ, मुझे लगता है कि वे लोग सयमके इतने ज्यादा आदी हो गये हैं कि नौजवान मर्दों और औरतोंका शादीसे पहले विपय-तृप्ति करनेका कभी मन ही नही होता। खान-साहबने मुझसे यह भी कहा कि इन इलाकोकी औरतें कभी परदा नही करती, वहाँ झूठी लज्जा नही है, वहाँकी औरतें निडर है, वे चाहे जहाँ आजादीसे घूमती हैं और अपनी देखभाल खुद कर सकती है, अपनी इज्जत-आबरू वे खुद बचा सकती है, किसी मर्दसे वे अपनी रक्षा नहीं करवाना चाहती, उन्हे इसकी जरूरत भी नही रहती।

लेकिन खानसाहब यह मानते है कि उनका यह संयम विवेक या ज्ञानमय श्रद्धापर आधारित नही है, इसलिए जब ये पहाड़ोंके रहनेवाले मर्द और औरतें सभ्य या सुकुमार जीवनके सम्पर्कमें आते है, तो उनका यह सयम टूट जाता है; क्योकि उस जीवनमें समाजके रीति-रिवाजोको तोडनेकी कोई सजा नही मिलती, और बेवफाई अथवा परस्त्रीगमनके विपयमें लोकमत उदासीन होता है। इस बात से मन ऐसे विचारकी ओर चला जाता है जिसकी मुझे फिलहाल चर्चा नही करनी चाहिए। अभी तो मै यह इसी हेतुसे लिख रहा हूँ कि खानसाहबकी ही तरह जो लोग इन कबीलोंके आदमियोंके बारेमें जानकारी रखते हो और उनके कथनका समर्थन करते हो, उनसे इसपर और भी रोशनी डलवाई जाये और मैदानोमें रहनेवाले युवको और युवतियोको यह बतलाया जाये कि सयमका पालन यदि इन पहाडी कबीलोंके लिए सचमुच स्वाभाविक चीज है — जैसाकि खानसाहबका खयाल है — तो हम लोगोके लिए भी उसे उतना ही स्वाभाविक होना चाहिए। शर्त इतनी ही है कि सुविचारोको हम अपने विचारजगतमें बसा ले और बरबस घुस आनेवाले कुविचारो या विपय-विकारोंको जगह न दें। बेशक, अगर सद्विचार काफी बडी सख्यामें हमारे मनमें बस जायें, तो कुविचार वहाँ ठहर ही नही सकते। अवश्य ही इसके लिए साहसकी जरूरत है। परन्तु दुर्बल हृदयवाले मनुष्य आत्म-सयम कभी नही कर सकते। आत्म-सयम तो जागरूकता और प्रार्थना तथा उपवास-रूपी निरन्तर प्रयत्नका सुन्दर फल है। अर्थहीन स्तोत्रपाठ प्रार्थना नही है, और न शरीरको भूखो मारना उपवास

है। प्रार्थना तो उसी हृदयसे निकलनी चाहिए, जो अपनी श्रद्धाके द्वारा ईश्वरको जानता है; और उपवासका अर्थ है बुरे या हानिकारक विचार, कर्म और आहारसे परहेज रखना। मन विविध प्रकारके व्यंजनोंकी ओर दौड़े और शरीरको भूखों मारा जाये, ऐसे उपवाससे कोई लाभ नहीं होता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-४-१९३७

७९. स्वदेशी प्रदर्शनियोंमें खादी

हिन्दुस्तानके दूसरे तमाम हिस्सोंमें, जहाँ स्वदेशी प्रदर्शनियोंमें मिल का बना कपड़ा रखा जाता है, वहाँ खादी न रखनेका नियम चरखा-संघने बना रखा है। और यह नियम जिस हेतुसे बनाया गया था, वह हेतु फलीभूत हुआ है। किन्तु संयुक्त प्रान्त इस नियमको ढीला कर देनेका आग्रह कर रहा है। अभीतक तो मैं इस लालचमें नहीं फँसा। संयुक्त प्रान्तके खादी-कार्यकर्ताओंने इस विषयमें मुझसे खास प्रश्न यह पूछा है कि वे खुद क्या करें। करीब-करीब वे सभी कांग्रेसी हैं; उनकी लगन दूसरोंसे जरा भी कम नहीं है, पर उन्होंने अपनेको कांग्रेसके रचनात्मक और सबसे कठिन कार्यक्रममें लगा रखा है। उनकी कठिनाई समझकर मैंने इस प्रश्नके बारेमें श्री जवाहरलाल नेहरूकी राय पूछी थी। उनका यह जवाब[1] आया है:

> आपका ५ मार्चका खत मिला। आपने प्रदर्शनियोंमें खादी रखनेके बारेमें पूछा है। मेरे यूरोपसे वापस आनेके बाद गत वर्ष कई बार हमने इस सम्बन्धमें चर्चा की है। . . .
>
> आपने जो सवाल पूछा है, उसका जवाब देना आसान नहीं। आम खादी-कार्यकर्ताओंकी ऐसी राय मालूम पड़ती है कि प्रदर्शनियोंमें अगर मिलके कपड़ेको जगह दी जाये तो उसमें खादी नहीं रखनी चाहिए। कांग्रेसके दूसरे कार्यकर्ताओंकी राय साधारणतया इससे विपरीत है। वे यह कारण बताते हैं कि ऐसी प्रदर्शनियोंमें सामान्यतया खादीकी अच्छी बिक्री होती है। जाहिर है कि उस खादी-कार्यकर्ताकी ही राय — जो खादी-कार्यमें निष्णात माना जाता है और जो खादीको आगे बढ़ानेके लिए आतुर है — लगभग अन्तिम राय होनी चाहिए। इसलिए जबतक मैं अपनी बात उनके गले नहीं उतार सकता, तबतक उनके आगे अपना निर्णय रखते हुए मुझे हिचकिचाहट मालूम होती है। मेरी कल्पना यह है कि थोड़ा आगेकी बात सोचें तो आज कुछ घाटा उठा लेना भी अच्छा है, जिससे लोगोंके मनमें इस विषयमें कोई ऐसा भ्रम पैदा न हो कि खादी क्या

१. यहाँ कुछ अंश ही दिये गये हैं।

है और क्या नहीं। यह तो ऐसी प्रदर्शनियोंमें प्रमाणित खादी बेचनेके निषेधकी वर्तमान नीति चालू रखनेसे ही हो सकता है।

साथ ही, मैं यह भी देखता हूँ कि ऐसी प्रदर्शनियोंमें अप्रमाणित खादी बिकती है, और काफी लोग उसे खरीदते हैं। आप जानते हैं कि बहुत-से लोग ऐसे होते हैं जिन्हें खास प्रमाणित खादी ही खरीदनेका आग्रह नहीं होता; पर खादी उन्हें सहजमें मिल जाये, तो वे उसे खरीदनेको तैयार हो जाते हैं। मुख्य बात यह है: हम आम लोगोंके लिए खादी मुहैया करें या जो केवल शुद्ध खादी ही पहनना चाहते हैं, उन्हें ही खादी देकर सन्तोष करनेकी बात पकड़कर चलें? इस प्रश्नका केवल व्यापारिक पक्ष ही नहीं, मनोवैज्ञानिक पक्ष भी है। एक ओर खादीने अपने लिए मजबूत नींव डाल ली है, और देशमें एक ऐसा वर्ग है, जो चाहे जिस कीमतपर या जितनी कठिनाईसे मिले, शुद्ध खादीका ही इस्तेमाल करेगा। साथ-साथ दूसरे वर्गमें जो कभी-कभी किसी प्रसंगपर खादी खरीद लेता है, खादीका प्रचार जितना हो सकता है, उतना होता नहीं। खादी-कार्यकर्ताओंका ध्येय तो यह होना चाहिए कि वे इस वर्गको खादी पहननेकी आदत डलवायें। यह आदत अधिकांश तो मन या हृदयको अच्छा लगनेसे, और कुछ अंशमें केवल बहुत दिनोंके अभ्याससे पड़ती है। साधारणतया देखें तो खादीके प्रासंगिक खरीदार जितने ज्यादा मिल सकें उतना अच्छा, जिससे उन्हें खादी खरीदने और पहननेकी कुछ आदत तो पड़े और इस तरह आगे चलकर उन्हें सच्ची टेव भी पड़ जाये। आज जो नीति चल रही है, वह कुछ हदतक इन कभी-कभीके खरीदारोंको अलग रखती है और इसलिए, जिस क्षेत्रसे नियमित खादी खरीदनेवाले आ सकते हैं, उस क्षेत्रको छोटा कर देती है।...

इसलिए अगर आप मेरी अन्तिम राय चाहते हैं, तो उसे मैं बिलकुल निश्चित रूपमें नहीं दे सकता। और चूंकि मैं बिलकुल निश्चित राय नहीं दे सकता, इसलिए दूसरे जो लोग खादीके लिए काम कर रहे हैं, उनकी रायकी मुझे इज्जत करनी चाहिए। फिर भी मुझे ऐसा जरूर लगता है कि इन प्रदर्शनियोंमें कुछ शर्तोंपर खादी रखी और बेची जाये, तो अच्छा हो। जहाँतक बने, ऐसी रोकथाम रहे — (१) खादीके नामसे दूसरा कपड़ा न आने पाये और खादी और मिलके कपड़ेमें जो फर्क है, उसे स्पष्ट रखा जाये; (२) प्रदर्शनियोंमें से जो कपड़ा अंशतः विदेशी है, उसे बाहर निकाल दिया जाये।

श्री जवाहरलाल नेहरू इसपर अपनी अन्तिम राय नहीं दे सकते, इसलिए ऐसी रायके अभावमें वे दूसरे खादी-कार्यकर्ताओंकी रायको इज्जत देना चाहते हैं, पर उन्हें "ऐसा जरूर लगता है कि इन प्रदर्शनियोंमें खादी रखी और बेची जाये

तो अच्छा हो।" फिर भी मेरा अपना अनुभव तो यह कहता है कि तड़क-भड़कदार मिलके कपड़ेके साथ-साथ खादी रखकर जनताको बहकाना खतरेसे खाली नही है। यह करीब-करीब यन्त्रमानव (रोबॉट)के साथ जिन्दा आदमीको रखने-जैसी बात है। मनुष्य अगर यन्त्रमानवके साथ अपनी तुलना होने दे तो सम्भव है, वह इस प्रतिस्पर्धामें हार जाये। यही दशा मिलके कपड़ेकी तुलनामें खादीकी होगी। इन दोनोके धरातल अलग-अलग हैं। दोनोके ध्येय एक-दूसरेके विपरीत हैं। खादी जहाँ सबको काम देती है, मिलका कपड़ा वहाँ कुछ ही आदमियोको काम देता है, और बहुतोको सच्चे- श्रमसे वंचित कर देता है। खादी आम जनताकी सेवा करती है, मिलके कपड़ेका उद्देश्य धनिक-वर्गकी सेवा करने का होता है। खादी मजदूरोकी सेवा करती है, मिलका कपड़ा उनका शोषण करता है। मेरे अनुभवका आधार सारे हिन्दुस्तानके खादी-कार्यकर्ताओका अनुभव है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि श्री जवाहरलाल नेहरूकी तरह संयुक्त-प्रान्तके कांग्रेसी, अगर उनकी अपनी राय अखिल भारतीय चरखा सघकी रायसे उलटी हो, तो भी उसका आग्रह न रखकर सघके अनुभव और नीतिका आदर करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-४-१९३७

८०. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

वर्धा
१० अप्रल, १९३७

लॉर्ड लोथियनने मुझसे जो अपील[1] की है, उसे मैंने यथोचित आदरसहित पढ़ा है। दूसरे मित्रोंके सामने उनके साथ मैंने जो बातचीत की, उसका मुझे स्पष्ट स्मरण है। उस वक्त जिस प्रान्तीय स्वायत्तताका चित्र सामने था, वह असल चीज थी और वर्तमान संविधान जो-कुछ देना चाहता है, उससे उसका कोई मेल न था। लॉर्ड जेटलैण्डके विस्तृत वक्तव्य[2] से मेरी राय पक्की हो गई है और इससे ब्रिटिश राजनीतिज्ञोके इरादोके बारेमें जो सन्देह सब जगह फैला हुआ था, वह भी पक्का हो गया है। जबतक वे साम्राज्यवादी मनसूबे बाँधते है, वह भारत, जिसका कि कांग्रेस प्रतिनिधित्व करती है, उनके प्रति कभी सौहार्द नही रख सकता। मै ब्रिटेनके साथ मित्रतामें विश्वास रखता हूँ परन्तु साम्राज्यवादी शोषणमें नही।

मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मुझे भारत-सरकारके अधिनियमकी कोई जानकारी नही है और चुनाव-समितिकी रिपोर्टकी जानकारी तो और भी नही है। मैंने पदोकी

१. लॉर्ड लोथियन द्वारा टाइम्सको लिखे पत्र की तरफ संकेत है। देखिए परिशिष्ट २।
२. देखिए पृ० ७०, पा० टि० १।

सशर्त स्वीकृतिका अपना प्रस्ताव स्वीकार करनेके लिए इस आधारपर सलाह दी थी कि कांग्रेसियोंमें जो वकील थे, उन्होंने यह आश्वासन दिया था कि गवर्नर अधिनियमका उल्लंघन किये बिना अपेक्षित आश्वासन दे सकते हैं।[1] इसलिए अपने समर्थनके लिए मुझे सर सैमुअल होरकी पिछली घोषणाओंकी भी जरूरत नहीं है। इसलिए यदि वे ऐसा कहते हैं कि उन्होंने वह वक्तव्य नहीं दिया जो मैंने सुना है तो मैं बिना किसी तर्कके ही उनके इन्कारको मान लेता हूँ। यह निराशाजनक तथ्य भारतके सामने है कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंने अपनी घोषित इच्छाओंके विपरीत भारतपर एक अधिनियम थोप दिया और फिर इसकी व्याख्या निष्पक्ष न्यायाधिकरणसे न करवाकर अपनी ही व्याख्या उसपर थोपते हैं एवं इस कार्रवाईको स्वायत्तता कहते हैं। मुसलमान, पारसी और हिन्दू वकीलोंने, जिन्हें सरकार अबतक प्रश्रय देकर उनका मान करती रही, घोषणा की कि गवर्नर उल्लंघन किये बिना अपेक्षित आश्वासन दे सकते हैं। ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंकी व्याख्याको मैं अवैधानिक, मनमानी एवं स्वार्थपरक मानता हूँ।

इसके साथ ही मैं यह मानता हूँ कि दूसरे वकील इसकी व्याख्या ब्रिटिश सरकारके पक्षमें करते हैं। इसलिए मैं उन्हें मध्यस्थता करनेके लिए तीन न्यायाधीशो का एक न्यायाधिकरण नियुक्त करनेके लिए आमन्त्रित करता हूँ। इनमें से एक की नियुक्ति कांग्रेस करेगी, दूसरेकी ब्रिटिश सरकार। दोनोंको यह अधिकार दिया जाये कि वे तीसरा न्यायाधीश नियुक्त करके यह निश्चय करें कि क्या गवर्नर, जैसाकि मैं कहता हूँ, अपेक्षित आश्वासन दे सकते हैं या नहीं। क्योंकि वर्तमान मन्त्रि-मण्डलोंकी वैधता भी सन्देहास्पद है, इसलिए मैं उक्त प्रश्न भी उसी न्यायाधिकरणके सामने रखूंगा। इस कार्रवाईको अपनानेके लिए पिछले उदाहरण भी हैं। यदि वे मेरा प्रस्ताव मान ले तो मैं कांग्रेससे भी ऐसा ही करनेके लिए कहूँगा।

मेरे पिछले वक्तव्यका प्रत्येक शब्द सोद्देश्य है।[2] मैं इस बातका अधिकार चाहता हूँ कि हमारी बात प्रधान मानी जाये। भारतके साथ कूटनीतिक खेल खेलनेका कोई प्रश्न ही नहीं उठता। यह जीवन और मरणका प्रश्न है। पद तभी स्वीकार किये जायेंगे जब लक्ष्य-प्राप्तिकी दिशामें प्रगति होनेकी बात मान ली जाये, अन्यथा नहीं। इस-लिए यह देखकर मुझे दुःख हुआ है कि लॉर्ड जेटलैण्ड 'फूट डालो और शासन करो' वाली पुरानी लकीरपर चल रहे हैं। कांग्रेस अल्पमतके हितोंकी अवहेलना करके दो दिन भी जीवित नहीं रह सकती। भारतको गुटबन्दियोंमें डालकर वह जनताका शासन नहीं ला सकती। यदि कभी कांग्रेस-मन्त्रिमण्डल सत्तामें आते हैं तो जिस क्षण वे अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंको आघात पहुँचाते हैं या दूसरी तरह कोई अन्याय करने पर उतारू हो जाते हैं, उसी क्षण वे गवर्नरके संरक्षणोंके बिना अपनी कब्र खोद डालेंगे। ऐसा कहनेमें मुझे खेद है, परन्तु सचाईके लिए मैं यह अवश्य कहूँगा कि

१. देखिए अगला शीर्षक भी।
२. देखिए पृ० ४०-२।

लॉर्ड जेटलैण्डका भाषण ऐसे व्यक्तिका भाषण है जिसे अपने अधिकारकी अपेक्षा अपनी तलवारपर ज्यादा भरोसा है। लॉर्ड जेटलैण्ड लोगोंको फिरसे गुमराह कर रहे हैं जबकि वे यह कहते हैं कि कांग्रेस चाहती है कि उसे एक विशेषाधिकार-सम्पन्न संस्था माना जाये। कांग्रेस ऐसा नहीं चाहती। अत्यन्त बहुमतका प्रतिनिधित्व करनेवाली कांग्रेस-जैसी कोई भी संस्था यह चाहेगी कि जो सम्मानोचित आश्वासन उसने माँगा है, वह उसे दिया जाये।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-४-१९३७

८१. तार : अगाथा हैरिसनको

वर्धागंज

१० अप्रैल, १९३७,

अगाथा हैरिसन

केअर कैलॉफ

लंदन

अहिंसाकी कड़ी शर्तोंकी महत्वपूर्ण चर्चाओंके बाद मैंने अपना वक्तव्य[1] दिया है। एक भी शब्द वहाँसे हटानेकी कोई आवश्यकता नहीं समझता। भूतपूर्व महाधिवक्ता बहादुरजीके मतपर कानूनी तौरपर विचार किया गया। तारापुर उच्चन्यायालयके भूतपूर्व न्यायाधीशने मेरी व्याख्याको पूर्णतः स्वीकार किया और सर्वथा गैर-कानूनी वर्तमान मन्त्रिमण्डलोकी निन्दा की। भविष्यमें सीधा-सादा आश्वासन मिले बिना कोई समझौता सम्भव नहीं।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४९८) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

८२. बुद्धि-विकास अथवा बुद्धि-विलास ?[1]

त्रावणकोर तथा मद्रासके भ्रमणमें मैं जिन विद्यार्थियो तथा विद्वानोके सम्पर्कमें आया वे अधिकतर, मुझे लगा, बुद्धि-विकासके नही, बुद्धि-विलासके नमूने थे। आधुनिक शिक्षा हमे बुद्धिका विलास सिखाती है और बुद्धिको पथभ्रष्ट करके उसके विकासको रोकती है। सेगांवमें रहते हुए मुझे जो अनुभव हो रहे है, वे भी इस बातका समर्थन करते दिखाई देते हैं। मेरा अवलोकन अभी जारी ही है, अत. इस लेखके विचार इस अवलोकनके अनुभवोपर आधारित नही हैं। ये विचार तो मेरे, जबसे मैंने दक्षिण आफ्रिकामें फीनिक्स-सस्थाकी स्थापना की, तबसे, यानी १९०४ है।

बुद्धिका सच्चा विकास हाथ, पाँव, कान आदि अवयवोके सदुपयोगसे ही हो सकता है, मतलब यह कि ज्ञानपूर्वक शरीर-श्रम करते हुए बुद्धिका विकास उत्तमसे-उत्तम प्रकारसे और शीघ्रातिशीघ्र होगा। यदि इसके साथ पारमार्थिक वृत्तिका संयोग न किया जाये, तो भी शरीर और बुद्धिका विकास एकागी होता है। पारमार्थिक वृत्ति हृदयका यानी आत्माका क्षेत्र है। अत. ऐसा कहा जा सकता है कि बुद्धिके शुद्ध विकासके लिए आत्मा और शरीरका विकास साथ-साथ और समान गतिसे होना चाहिए। इसलिए यदि कोई कहे कि ये विकास एकके-बाद-एक किये जा सकते हैं, तो वह ऊपर कहे मतके अनुसार ठीक नही होगा।

शरीर, हृदय और बुद्धिके बीच मेल न होनेका जो विनाशकारी परिणाम हुआ है, वह प्रत्यक्ष है, फिर भी विकृत सगदोषके कारण हम उसे देख नही पाते। गाँवोके लोग पशुओके बीच रहकर [उन्हीकी तरह] यन्त्रवत् शरीरका उपयोग करते रहते हैं, वे बुद्धिका उपयोग नही करते, करना ही नही पड़ता। उनका हृदय लगभग अशिक्षित रह जाता है। अत न तो वे तीनमें होते है, न तेरह में, न घरके, न घाटके। इसी प्रकार उनका जीवन चलता है। दूसरी ओर वर्तमान कॉलेजतक की शिक्षा देखें, तो वहाँ बुद्धिके विलासको ही विकास कहा जाता है। माना जाता है कि बुद्धिके विकासके साथ शरीरका कोई सम्बन्ध नही है। लेकिन शरीरको कसरत तो चाहिए ही, इसलिए शिक्षामें निरुपयोगी और अनुत्पादक व्यायामका समावेश करके निरर्थक रस्म-अदाई की जाती है। चारो ओरसे इस बातके सबूत मिलते ही रहते हैं कि शालाओसे निकले जवान मजदूरोकी बराबरी भी नही कर सकते। जरा-सी मेहनत करनी पड जाये तो उनका सिर दुखने लगता है, और धूपमें भटकना पडे तो चक्कर आ जाता है। यहाँतक कि यह स्थिति स्वाभाविक मानी जाती है। हृदयकी

१. इसका अंग्रेजी अनुवाद हरिजन, ८-५-१९३७ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

वृत्तियाँ अनजुते खेतमें घासके समान अपने-आप उगती और मुरझाती रहती हैं। और यह स्थिति दयनीय मानी जानेके बजाय प्रशंसाके योग्य मानी जाती है।

इसके विपरीत, यदि बचपनसे बालकोंके हृदयकी वृत्तियोंको उपयुक्त दिशामें मोड़ दिया जाये, उन्हें खेती, चरखा आदिके उपयोगी काममें लगाया जाये, और जिस उद्योगसे उनके शरीरमें कसाव आये, उस उद्योगकी उपयोगिता तथा उसमें काममें लाये जानेवाले औजारों आदिकी बनावट आदिकी जानकारी दी जाये, तो बुद्धिका विकास स्वाभाविक रूपसे हो और उसकी सतत परीक्षा भी होती रहे। इसीके साथ-साथ गणितशास्त्र आदिके जिस ज्ञानकी आवश्यकता हो, वह भी उन्हें दिया जाये, तथा मनोरंजनके विचारसे साहित्यादिका ज्ञान कराया जाये, तो तीनों अंगोंका सानुपात विकास सधे और इनमें से कोई भी अंग अविकसित न रहे। मनुष्य केवल शरीर नहीं है, केवल बुद्धि नहीं है, केवल हृदय अथवा आत्मा नहीं है। तीनोंके समान विकाससे मनुष्यका मनुष्यत्व सधता है। इसीमें सच्चा अर्थशास्त्र निहित है। इस प्रकार यदि इन तीनोंका विकास एक साथ हो, तो हमारी उलझी हुई समस्याएँ सहज ही सुलझ जायें। यह विचार सार्थक तब होगा अथवा इसपर अमल तभी सम्भव है जब स्वतन्त्रता प्राप्त हो जायेगी—ऐसा मानना भ्रामक सिद्ध हो सकता है। यदि करोड़ों व्यक्तियोंको इस प्रकारकी विकास-पद्धतिके अनुसार शिक्षा दी जाये तो हम स्वतन्त्रताका दिन पास ला सकते हैं।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ११-४-१९३७

८३. सन्देश: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ अमेरिकाको

वर्धा
१२ अप्रैल, १९३७

आपने मुझसे कहा है कि मैं आपके १,३०० अमेरिकी समाचारपत्रोंके पाठकोंके लिए, जिनकी आप सेवा करते हैं, विशेष सन्देश दूँ। मैं चाहूँगा कि अमेरिकी सबसे पहले मेरी सीमाएँ और हमारी आन्तरिक राजनीतिको समझ लें। वे जान लें कि मैं कांग्रेसका साधारण सदस्य भी नहीं हूँ। मेरा जो भी प्रभाव है, वह नैतिक है। कांग्रेसी मुझे केवल इतना मानते हैं कि मैं शुद्ध अहिंसात्मक कार्यवाहीका और इसकी तकनीकका प्रवर्तक हूँ। इसलिए ऐसी सम्भावना है कि जबतक कांग्रेसियोंका सत्य और अहिंसामें विश्वास रहेगा और इन्हें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें अहिंसात्मक कार्यवाही करनी होगी, ये मेरी सलाहसे अपनी दिशा तय करते रहेंगे। परन्तु अधिकारपूर्वक कुछ करनेवाले तो कांग्रेसके अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू और कार्य-समिति, अर्थात् कांग्रेसका मन्त्रिमंडल ही है। मैं मात्र विनम्र सलाहकारके रूपमें ही काम कर रहा हूँ।

यह मामला मेरे लिए राजनीतिक नहीं, केवल नैतिक है। यह सत्य और असत्य, अहिंसा और हिंसा, और न्याय तथा शक्तिके बीचका संघर्ष है। मेरी राय है कि लॉर्ड जेटलैण्डको यदि अपने पीछे तलवारकी शक्तिका एहसास न होता तो वे उक्त भाषण[1] न देते।

ऐसा लगता है कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञोको इस बातपर पश्चात्ताप हो रहा है कि भारतमें सीमित निर्वाचक-मण्डल भी क्यो बनाये गये। यदि वे पश्चात्ताप न कर रहे होते तो उन्हें बहुमतके आगे, जिसका प्रतिनिधित्व चुने हुए नेता करते है, झुकना चाहिए था। अपने ही द्वारा बनाये हुए निर्वाचक-मण्डलोपर नामजद मन्त्रालय थोपना निश्चित रूपसे हिंसा ही है।

यह सकट उन्ही लोगोने पैदा किया है। अपनी ससदके अधिनियमोकी स्वयं [ऐसी] व्याख्या करना उनकी धृष्टता है। उनकी न्याय-सहिताने ही हमें सिखाया है कि कोई भी व्यक्ति कानूनको अपने हाथमें नही ले सकता, चाहे वह राजा ही क्यो न हो। स्पष्ट है कि ब्रिटिश मन्त्रियोंपर यह बात लागू नही होती। 'पुलावके स्वादका पता खानेपर ही चलता है।'

मैंने एक सम्मानजनक रास्ता ढूंढ निकाला है।[2] दोनो मिलकर एक न्यायाधिकरण बनायें और वह इसकी व्याख्या करे। यदि न्यायाधिकरण अपनी व्याख्या उनके पक्षमें दे तो वे अपनी असमर्थता भी प्रकट कर सकते है। तबतक तो आश्वासन दिये जानेकी कांग्रेसकी माँग युक्तिसंगत मानी जानी चाहिए।

मैं फिरसे यह दोहरा दूं कि हालमें प्रकट किया गया इरादा तलवारकी शक्ति पर आधारित है, सद्भावना पर नही। इसमें बहुमत पर आधारित जनतन्त्रकी इच्छाके आगे जनतान्त्रिक ढगसे झुकनेकी बात तो बिलकुल नही है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-४-१९३७

८४. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
१२ अप्रैल, १९३७

प्रिय पगली,

मनुको तुम्हारी ओरसे मैं कोई चीज दे सका तो देखूंगा। यदि न दे सकूं तो तुम पजाबकी खादीकी कोई चीज भेज देना। पर महँगी चीज कोई न हो।

तुम जो लिफाफ छोड़ गई थी, वे अभीतक खत्म नही हुए हैं। तुम्हारे वापस आनेतक वे चलेंगे। पर तुमने जो गड्डी भेजी है उसका मैं स्वागत करता हूँ।

१. देखिए पृ० ७०, पाद-टिप्पणी १।

२. देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", पृ० ७८-८०।

खानसाहब, उनका बेटा वली, बा, मनु, नन्हा कनु, बड़ा कनु, महादेव, दुर्गा,[1] निर्मला[2], नववधू बबलो[3] और बलवन्तसिंह मेरे साथ जायेंगे। बाल भी जायेगा। बाल काकासाहबका बेटा है।

मौसम सभी जगह असाधारण-सा है; यहाँ भीषण आँधी आई। आमकी करीब-करीब सब फसल बरबाद हो गई और आशंका है कि मौसमी बरसात अभी चलेगी।

तेरे हिन्दीके अक्षर रोज सुधरते जा रहे हैं। यदि तूने अभ्यास जारी रखा तो यहाँ आनेतक तेरी गति अच्छी हो जायेगी।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७५) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९३१ से भी

८५. पत्र: चन्दन पारेखको

१२ अप्रैल, १९३७

चि० चन्दन,

चि० शंकर[4] को लिखा तेरा पत्र उसने मुझे भेजा है। मैं देखता हूँ कि . . .[5] का प्रकरण तुझे अभीतक त्रस्त किये है। मैंने जो एक प्रतिशत बचा लिया है, वह उपेक्षाके योग्य नहीं है। तूने जो जमा करके रखा है, वह सब दिल खोलकर मुझे लिख। तू चाहे, तो बहुत-कुछ कर सकती है। मैं चाहता हूँ कि तू पूरी तरह सच्ची सिद्ध हो, अथवा फिर तू अपने हृदयको पूर्णतः शुद्ध बना ले। तेरा यह कहना ठीक है कि जो अपने दोष स्वीकार करता है, वह ऊँचा उठता है। तेरा कल्याण हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४२) से; सौजन्य: सतीश द० कालेलकर

१, २ और ३. महादेव देसाई के क्रमशः पत्नी, बहन और पुत्र।
४. सतीश द० कालेलकर, जिनके साथ चन्दन पारेखका विवाह निश्चित हुआ था।
५. नाम छोड़ दिया गया है।

८६. पत्र : अमतुस्सलामको

१३ अप्रैल, १९३७

चि० अमतुल सलाम,

तेरे दोनों खत आज अभी-अभी मिले। कनुको ५ तारीखका खत परसों मिला। कल वह नही आया था। उसे ९ का पत्र कल मिला।

तुझे बेलगांव आना हो तो आ सकती है। मैं वहाँ बहुत करके २१ तक रहूँगा। यहाँ २४ तक तो लौट ही आऊँगा।

कान्ति राजकोटसे आयेगा। वह शायद वापस राजकोट जायेगा। बादमें मैसूर जायेगा और वहाँसे त्रिवेन्द्रम। इसलिए सरस्वतीको बेलगांव आनेकी जरूरत नही है।

तू बिलकुल बेवकूफ है। कान्तिको मैंने नही लिखा। उसने खुद लिखा है। तू बेकार ऐसा मानती है कि मुझे अविश्वास है।

तेरे भविष्यका विचार, जब मिलेंगे, तब करेंगे। जमीनके बारेमें भी तभी देख लेंगे। विवाह -१८ को है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७९) से।

८७. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
१३ अप्रैल, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तेरे बारेमें कोई बात जयप्रकाशके साथ नही हुई। उसे समय नहीं था, और मुझे भी नहीं था। मैंने तेरी तबीयतकी खबर-भर पूछ ली, उतनेसे ही सब निबट गया। मृदुला तेरे बारेमें पूछती रहती है। अब तो तू अहमदाबाद क्यों जायेगी? या जायेगी? बहुत करके तो अब तुझे पिताजीके साथ श्रीनगरमें ही रहना पड़ेगा न? तू मुझसे आज्ञा माँगती है। मैं क्या आज्ञा दूं? वहाँ तुझे जो कर्तव्य मालूम पड़े, उसका पालन कर। यहाँ जब भी सहज ही आया जा सके, तब आ। अब तुझपर सिताब दियारा का भार कितना रहेगा?

अमतुल सलाम अब आयेगी। अपनी तबीयत अच्छी रखना। मीराबहन आ गई हैं। यह बहुत अच्छा हुआ। कान्ति बंगलौरमें है। पता. मार्फत : वाई० एम० सी० ए०, बंगलौर सिटी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९८) से।

८८. पत्र : हरिभाऊ उपाध्यायको

१३ अप्रैल, १९३७

चि० हरिभाऊ,

तुम्हारा पत्र मिला। कटिस्नानकी पद्धतिमें तुमने भारी परिवर्तन किया है। कूने तथा जुस्टकी पुस्तकें पढ़कर ठीक-ठीक परिवर्तन तो रोगी खुद ही कर सकता है। नैसर्गिक उपचार दवाके समान नहीं है। अमुक दवा नहीं लगती, यह तो रोगी कह सकता है, लेकिन कौन-सी दवा ठीक बैठेगी, यह तो प्रयोग करनेवाला वैद्य ही बता सकता है। इसके विपरीत, नैसर्गिक उपचार रोगी स्वयं जानता है और अनेक मर्यादाओंका पालन करनेके बाद, उपचारका ढंग तथा उसकी मात्राके उपयोगका निर्णय वह स्वयं ही निश्चयपूर्वक कर सकता है। कारण यह है कि अपने शरीरमें होनेवाले परिवर्तनोंको वह स्वयं जितना जानता है, उतना उपचार बतानेवाला कभी नहीं जान सकता। जो परिवर्तन करने लायक मालूम हों, वे अवश्य करना। किन्तु जैसे इस बार बताया है, वैसे ही मुझे भविष्यमें भी अवश्य बताते रहना। मेरी इच्छा सचमुच यह तो है ही कि यदि इस महीनेमें कोई खास परिवर्तन ठीक-ठीक देखनेमें न आये, तो तुम एक दिन दिल्लीमें बिताओ। सरस्वती गाडोदियाको इसी उपचारके कारण नौकरी मिली है। उसके गुरु एक भलेमानस मौलवी हैं। इन दोनोंकी सलाहका लाभ दिल्लीमें मिलेगा, यही एक आकर्षण है। भण्डारीकी पुस्तक ठीक पाँच मिनट देख गया। मैं प्रभावित नहीं हुआ। मुझे तो पारिभाषिक शब्द चाहिए, परिभाषा नहीं। मोटरकी परिभाषा तो हम कर सकते हैं, लेकिन मोटर 'हवागाड़ी' होती है, यह तो चम्पारनमें ही जाना। इसलिए मैं तत्काल अपनी राय नहीं दे सकता। तुम अथवा अन्य कोई मुझे उसके विशेष गुण बताये, तभी मैं कोई राय दे सकता हूँ। भाई भण्डारीका तार आया था, मैं उन्हें जवाब नहीं दे सका, क्योंकि मेरे पास शब्दकोश नहीं था। इतना तुम उन्हें बता दो, तो मुझे उन्हें लिखना नहीं पड़ेगा।

शल्यक्रियाके बारेमें जो तुमने लिखा है, वह बिलकुल ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ६०८५) से; सौजन्य : हरिभाऊ उपाध्याय

८९. बातचीत: एक मिशनरीके साथ[1]

[१४ अप्रैल, १९३७ के पूर्व][2]

मिशनरी: भारतीय ईसाइयों द्वारा दिये गये जन-आन्दोलन-सम्बन्धी वक्तव्यों पर आपकी टिप्पणियाँ मैं बराबर देखता रहा हूँ। वक्तव्य देनेवालोंके मनमें कानूनी अधिकार-जैसी कोई चीज रही हो, इसमें मुझे शक है। मेरा खयाल है कि वे कानूनी अधिकारका नहीं बल्कि नैतिक अधिकारका दावा कर रहे हैं।

गांधीजी: यदि उन्होंने 'नैतिक अधिकार' शब्दका प्रयोग किया होता, तो भी मेरी आलोचना उनपर लागू होती ही। पर यह स्पष्ट है कि उनका आशय कानूनी अधिकारसे ही है, क्योंकि एक बात तो यह है कि नैतिक अधिकार-जैसी कोई चीज है ही नहीं, दूसरे, घोषणापत्रके दूसरे अनुच्छेदमें ही, जिसमें उन्होंने मूल अधिकारोंवाले कराची-प्रस्ताव[3]का उल्लेख किया है, वे यह स्पष्ट कर देते हैं कि अधिकारसे उनका आशय कानूनी अधिकारसे है। नैतिक अधिकार-जैसी कोई चीज यदि हो भी तो उसका दावा या उसकी रक्षाकी जरूरत नहीं है।

घोषणापत्रका मुख्य प्रयोजन तो उस आन्दोलनको रोकना था जो कई क्षेत्रोंमें चल रहा है। मैं यह मानता हूँ कि यदि उसका आशय विरोध-प्रदर्शन था तो उसका मसविदा ठीक तरह नहीं बनाया गया था।

इसीलिए मैंने उसे "एक दुर्भाग्यपूर्ण दस्तावेज" कहा है। नैतिक अधिकार-जैसी कोई चीज क्या होती है? उसका कोई उदाहरण दीजिए।

क्या मुझे बोलनेका नैतिक अधिकार नहीं है?

वह नैतिक अधिकार नहीं, कानूनी अधिकार है। अधिकार सदा कानूनी ही होता है। इसलिए कानूनी आधारसे विच्छिन्न 'नैतिक अधिकार' वस्तुतः एक गलत प्रयोग है। इसीलिए आप अधिकारको या तो जबरदस्ती मनवाते हैं या उसके लिए लड़ते हैं। जबकि कोई भी अपने कर्तव्यका दावा नहीं करता, वह विनम्रतासे उसका पालन करता है। मैं एक उदाहरण देता हूँ। आप यहाँ हैं। आप मुझे बाइबिलका

१. महादेव देसाई के "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। उसमें उन्होंने बताया था: "एक भारतीय ईसाई मिशनरीसे गांधीजी की उस दिन लम्बी बातचीत हुई, जिसमें उसने कई प्रभावशाली भारतीय ईसाइयों द्वारा जारी किये गये एक संयुक्त घोषणापत्र पर गांधीजी की हालकी आलोचनाको लेकर जो सवाल उठे थे, वे पूछे थे"। देखिए "एक दुर्भाग्यपूर्ण दस्तावेज", पृ० ५२-४।

२. गांधीजी वर्धासे हुदलीके लिए १४ अप्रैल, १९३७ को रवाना हुए थे।

३. देखिए खण्ड ४५, पृ० ३९२-९३।

उपदेश देना चाहते हैं। मैं आपके इस अधिकारको अस्वीकार करता हूँ और आपसे चले जानेको कहता हूँ। यदि आप मेरे लिए प्रभुसे प्रार्थना करना अपना एक कर्तव्य मानते हैं, तो आप चुपचाप यहाँसे चले जायेंगे और मेरे लिए प्रार्थना करेंगे। किन्तु यदि आप मुझे उपदेश देना अपना अधिकार मानते है तो आप पुलिसको बुलायेंगे और उससे यह कहेंगे कि वह मुझे आपके काममें रुकावट डालनेसे रोके। उससे झगड़ा होगा। पर आपके कर्तव्यपर आपत्ति करनेकी कोई हिम्मत नही कर सकता। आप उसे यहाँ या कही भी पूरा कर सकते है, और यदि मेरे हृदय-परिवर्तनके लिए की गई प्रभुसे आपकी प्रार्थनाएँ सच्ची है, तो प्रभु मेरा हृदय-परिवर्तन कर देंगे। ईसाई-धर्म, जैसा मैंने समझा है, आपसे यह अपेक्षा करता है कि आप मेरे हृदय-परिवर्तनके लिए प्रभुसे प्रार्थना करें। कर्तव्य एक ऋण है। जबकि अधिकार ऋण-दाताकी चीज है, और यदि कोई धर्मनिष्ठ ईसाई ऋणदाता होनेका दावा करे तो वह हास्यास्पद होगा।

ईसाई-प्रचार पर आपकी आपत्तिका आधार यह है कि हरिजन अनपढ़ और नादान हैं। लेकिन गैर-हरिजनोंमें होनेवाले प्रचारके बारेमें आपको क्या कहना है?

वही आपत्ति मुझे वहाँ भी है, क्योंकि भारतीय जनताका विशाल भाग ईसाइयत के पक्ष-विपक्षको उतना ही समझ सकेगा जितना कि कोई गाय समझ सकती है। मेरी इस उपमापर आपत्ति की गई है, पर फिर भी मैं इसे दोहराता हूँ। जब मैं यह कहता हूँ कि मैं लघुगणकीय गणना (लॉगरिथ्म)को उतना ही समझ पाता हूँ जितना कि कोई गाय समझ पाती है, तो मेरा आशय अपनी बुद्धिका अपमान करना नही होता। धर्मविज्ञानके मामलोंमें जितनी समझ हरिजनोंकी है उतनी ही गैर-हरिजन जन-साधारणकी है। मैं आपको सेगाँव ले जा सकता हूँ और यह दिखा सकता हूँ कि जहाँतक इस तरहकी चीजोंको समझनेका सवाल है, हरिजनों और गैर-हरिजनोंमें कोई अन्तर नही है। ईसाई-धर्मके सिद्धान्तोंका उपदेश आप मेरी पत्नीको देकर देखिए। वह उन्हें उतना ही समझ सकेगी जितना कि मेरी गाय समझ सकती है। मैं समझ सकता हूँ, क्योंकि मुझे उसकी तालीम मिली है।

लेकिन हम धर्मविज्ञानका उपदेश तो देते नहीं हैं। हम तो सिर्फ ईसाके जीवनकी चर्चा करते हैं और उन्हें यह बताते हैं कि उनके जीवन और उपदेशोंसे हमें कितना सुख मिला है। हम कहते हैं कि वे हमारे पथ-प्रदर्शक रहे है और अन्य लोग भी उन्हें अपना पथ-प्रदर्शक मानें।

जी हाँ, आप यही कहते हैं। परन्तु जब आप यह कहते हैं कि मुझे रामकृष्ण परमहंसको न मानकर ईसाको मानना चाहिए तो गोया आप अपने लिए संकट मोल लेते हैं। इसीलिए मैं कहता हूँ कि आप अपने जीवनको ही बोलने दीजिए — गुलाबकी तरह, जिसे किसी भाषणकी जरूरत नहीं होती, जो महज अपनी खुशबू फैलाता है। अंधे, जो गुलाबको देखतक नही सकते, उसकी सुगन्ध तो अनुभव करते हैं। गुलाबके उपदेशका यही रहस्य है। परन्तु जो उपदेश ईसाने दिया है, वह गुलाबके उपदेशसे

अधिक सूक्ष्म और सुगंधित है। यदि गुलाबको किसी प्रतिनिधिकी जरूरत नहीं है तो ईसाके उपदेशको तो उसकी और भी जरूरत नहीं होनी चाहिए।

परन्तु आपकी आपत्ति तो ईसाई-प्रचारके व्यावसायिक पहलूपर है। हर सच्चा ईसाई यह स्वीकार करेगा कि किसी तरहका भी प्रलोभन नहीं दिया जाना चाहिए।

लेकिन ईसाई-धर्मका जिस तरह आज प्रचार किया जाता है, वह इसके सिवा और है ही क्या? जबतक आप अपनी शिक्षा और चिकित्सा-संस्थाओंसे धर्म-परिवर्तनके पहलूको हटा नहीं देते, तबतक उनका मूल्य ही क्या है। मिशन-स्कूलों और कॉलेजोंमें पढनेवाले छात्रोंको बाइबिल की कक्षाओंमें भाग लेनेको बाध्य क्यों किया जाता है या उनसे इसकी अपेक्षा भी क्यों की जाती है? यदि उनके लिए ईसाके सन्देशको समझना जरूरी है, तो बुद्ध, जरतुश्त और मुहम्मदके सन्देशको समझना जरूरी क्यों नहीं है? [धर्मकी] शिक्षाके लिए शिक्षाका प्रलोभन क्यों देना चाहिए?

वह पुराना ढंग था, आधुनिक नहीं है।

मैं आपको इसके, जितने आप चाहें उतने आधुनिक उदाहरण दे सकता हूँ। क्या दोर्नकलके बिशप आधुनिक नहीं हैं? भारतके दलित वर्गोंके नाम उनकी खुली चिट्ठीमें आखिर और क्या है? वह प्रलोभनोंसे भरी पडी है।

वे जिस प्रकारके ईसाई-धर्मका प्रतिनिधित्व करते हैं, मैं उसे स्वीकार नहीं करता। लेकिन जहाँ बाइबिल की कक्षाओंमें भाग लेनेकी मजबूरी न हो और केवल शिक्षा ही दी जाती हो, वहाँ मिशन द्वारा संचालित शिक्षा-संस्थाओंपर क्या आपत्ति हो सकती है?

आप जब छात्रोंसे बाइबिल-कक्षाओंमें भाग लेनेकी अपेक्षा रखते हैं तो उसमें एक प्रच्छन्न प्रचार रहता है।

जहाँतक अस्पतालोंका सवाल है, मेरा खयाल है कि थोड़ी-बहुत धार्मिक शिक्षाकी शक्तिके बिना मानव-सेवाकी प्रवृत्ति प्रभावकारी नहीं हो सकती।

इस तरह आप अपने दान का व्यवसायीकरण कर देते हैं, क्योंकि आपके मनमें कहीं यह भावना रहती है कि आपकी सेवाके कारण उस दानको लेनेवाला किसी-न-किसी दिन ईसाई-धर्म स्वीकार कर लेगा। सेवा स्वयं ही अपना पुरस्कार क्यों नहीं होनी चाहिए?

इन बातोंको छोड़िए। मेरा खयाल है कि मैं ऐसे महान् व्यक्तियोंके दृष्टान्त दे सकता हूँ जो अपने जीवनके उदाहरणसे लोगोंको अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

इस तरहके उदाहरण मैं भी दे सकता हूँ। एण्ड्रयूज ऐसे ही व्यक्ति हैं। पर वे तो अपवाद हैं।

लेकिन आपको ईसाई-धर्मको उसके सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधियोंसे ही आँकना चाहिए, निकृष्ट से नहीं।

मैं ईसाई-धर्मको नही आँक रहा हूँ। मैं तो ईसाइयतका आज जिस ढगसे प्रचार किया जा रहा है, उसकी बात कर रहा हूँ, और उसे आप अपवादसे नही आँक सकते, जैसेकि ब्रिटिश शासन-व्यवस्थाको आप उच्च कोटिके कुछ अंग्रेजोसे नही आँक सकते। जी नही, हमें आपके उन ज्यादातर लोगोके बारेमें सोचना है जो बाइबिलका प्रचार करते हैं। क्या वे अपने जीवनकी सुगंध फैलाते हैं? मेरे लिए तो यही अकेला मापदण्ड है। उनसे मैं यही चाहता हूँ कि वे ईसाईका-सा जीवन बितायें, उसकी व्याख्या न करे। काफी श्रमसाध्य और प्रार्थनापूर्ण शोधके बाद ही मैं इस दृष्टिकोणपर पहुँचा हूँ, और मुझे यह बताते हुए खुशी होती है कि ऐसे ईसाइयो की संख्या रोज बढ रही है जो मेरे इस दृष्टिकोणसे सहमत हैं।

तब तो आपसे ईसाके व्यक्तित्वके बारेमें आपका दृष्टिकोण जानकर मैं आभारी होऊँगा।

मैं उसे प्राय: स्पष्ट करता आया हूँ। मैं ईसाको मानवताका एक महान् शिक्षक मानता हूँ, पर मैं उन्हे ईश्वरका एकमात्र पुत्र नही मानता। यह विशेषण अपने भौतिक अर्थमें सर्वथा अस्वीकार्य है। लाक्षणिक रूपसे हम सभी ईश्वरके पुत्र है, परन्तु, एक विशेष अर्थमें, हममें से हरएकके लिए ईश्वरके पुत्र अलग-अलग हो सकते है। इस प्रकार मेरे लिए चैतन्य ईश्वरके एकमात्र पुत्र हो सकते है।

परन्तु क्या आपका मानव-स्वभावकी पूर्णतामें विश्वास नहीं है, और क्या आप इस बातपर विश्वास नहीं करते कि ईसाने वह पूर्णता प्राप्त कर ली थी?

मेरा मानव-स्वभावकी 'पूर्णता' में विश्वास है। ईसा पूर्णताके उतने निकट पहुँचे थे जितना पहुँचा जा सकता है। यह कहना कि वे पूर्ण थे, मनुष्यसे ईश्वरकी श्रेष्ठता को अस्वीकार करना है। और फिर इस विषयमें मेरा एक अपना सिद्धान्त है। शरीरके बन्धनोंसे हमें सीमित रहना होता है, इसलिए हम केवल शरीरके विनाशके बाद ही पूर्णता प्राप्त कर सकते हैं। अत: सर्वथा पूर्ण तो केवल ईश्वर ही है। वह भी जब पृथ्वीपर उतरता है तो अपने-आप अपनेको सीमित कर लेता है। ईसाकी सलीबपर इसीलिए मृत्यु हुई क्योकि वे शरीरसे सीमित थे। ईसाको एक महान् शिक्षक सिद्ध करनेके लिए मुझे भविष्यवाणियो या चमत्कारोकी जरूरत नही है। तीन वर्षके उनके शिक्षणसे बड़ा कोई चमत्कार हो नही सकता। रोटीके मुट्ठी-भर टुकड़ोसे लोगोके समूहको भोजन करानेकी कथामें कोई चमत्कार नही है। इस तरहका भ्रम कोई भी जादूगर पैदा कर सकता है। लेकिन यदि किसी दिन किसी जादूगरको मानव-जाति का त्राता घोषित किया गया, तो वह एक दुर्भाग्यपूर्ण दिन होगा। जहाँतक ईसा द्वारा मुर्दोंको जिन्दा करनेकी बातका सवाल है, मुझे इसमें सन्देह है कि जिन लोगोंको उन्होने जिन्दा किया वे सचमुच मर चुके थे। अपने एक रिश्तेदारकी बच्चीको, जिसे मृत मान लिया गया था, मैंने भी जिन्दा कर दिया था। पर वैसा इसलिए हो सका कि बच्ची मरी नही थी, और यदि मैं वहाँ मौजूद न होता तो वह जला दी जाती। मैंने उसे एनीमा दिया और वह फिर से होशमें आ गई। उसमें कोई चमत्कार नही था। मैं इस बातसे इनकार नही करता कि ईसामें कितनी ही आत्मिक शक्तियाँ थी और उनका

हृदय निस्सन्देह मानव-प्रेमसे पूर्ण था। परन्तु जिन लोगोको उन्होंने जिन्दा किया, वे मरे नही थे, वल्कि मरे हुए मान लिये गये थे। प्रकृतिके नियमोमें परिवर्तन नही होता, वे अपरिवर्तनीय है, और प्रकृतिके नियमोका जो अतिलंघन कर सके या उनमें वाधा डाल सकें, ऐसा कोई चमत्कार सम्भव नही है। हम प्राणियोंकी सीमाएँ है, इसलिए हम सभी तरहकी कल्पनाएँ कर लेते है और अपनी सीमाएँ ईश्वरपर भी आरोपित कर देते है। हम ईश्वरकी नकल कर सकते है, पर वह हमारी नकल नही कर सकता। ईश्वरके लिए हम कालको विभाजित नही कर सकते, उसके लिए काल अनन्त है। हमारे लिए भूत, वर्तमान और भविष्य है। किन्तु अनन्त कालमे सौ वर्षका मानव-जीवन एक विन्दुसे अधिक और क्या है?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-४-१९३७

९०. तार: 'टाइम्स' को

वर्धा
[१४ अप्रैल, १९३७][1]

मेरे वक्तव्य[2] पर 'टाइम्स' की जो टिप्पणी है वह मैंने ध्यानसे पढी है। वह 'कांग्रेसले विना शर्त मन्त्रि-पद ग्रहण करने को कहकर [सरकारकी] सदाशयताको कसौटीपर कसनेका निमन्त्रण देती है। यह एक वड़ा प्रश्न है। मेरी कांग्रेसको सदा यही सलाह रही है कि रक्षोपायोके वारेमें, जो गवर्नरोके विशेषाधिकारके अन्तर्गत आते है, पहले कोई सहमति हुए विना मन्त्रि-पद स्वीकार करना एक भारी और घातक गलती होगी। प्रथम कोटिकी कानूनी राय प्रतिकूल होते हुए भी, मैं लॉर्ड जेटलैण्डकी व्याख्याको अग्राह्य मानता हूँ। यदि वे अपनी व्याख्याको जाँचके लिए किसी न्यायाधिकरणके आगे रखने से इनकार करते है तो इससे यह धारणा और मजबूत होगी कि ब्रिटिश सरकार बहुमतवाले दलके साथ, जिसका प्रगतिशील कार्यक्रम उसे पसन्द नही है, न्यायोचित व्यवहार करना नही चाहती। कांग्रेसियो और गवर्नरोके बीच रोज अशोभनीय दृश्य उपस्थित होनेके बजाय मेरी समझमें सम्मानजनक गतिरोध अच्छा है, क्योंकि ब्रिटिश सरकारके आशयके अनुरूप इस अधिनियमका कांग्रेस द्वारा कार्यान्वित किया जाना असम्भव लगता है। इसलिए यह ब्रिटिश सरकारका कर्तव्य है कि वह अपने संविधानके अन्तर्गत उपलब्ध सभी साधनोसे

१. महात्मा, भाग ४, पृ० १८४ से।
२. देखिए पृ० ७८-८०।

कांग्रेसको यह दिखाये कि वह मन्त्रि-पद ग्रहण करके भी अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ सकती है। मैं चाहता हूँ कि हर सम्बन्धित व्यक्ति मेरी इस बातपर यकीन करे कि मेरे लिए झूठी प्रतिष्ठाका कोई सवाल नहीं है। मेरा काम तो कांग्रेस और सरकारके बीच केवल एक मध्यस्थका है, और, बहुत-से कांग्रेसियोंसे भिन्न, मेरा यह विश्वास है कि सरकार जैसे भौतिक दबावसे मजबूर हो सकती है, वैसे ही नैतिक दबावसे उसका मत-परिवर्तन भी हो सकता है। ऊपरका मजमून तैयार हो जानेके बाद, 'टाइम्स' में छपे लॉर्ड लोथियनके हालके पत्र[1] का तारसे मिला सार मेरे सामने आया। उनका तर्क एक ऐसी कल्पित स्थितिपर आधारित है जो भारतके लिए बिलकुल अनजानी है। उसमें बहुमतके दृष्टिकोणके लिए तनिक भी आदर-भाव दिखाई नहीं देता। इसलिए मुझे खेदके साथ यह कहना पड़ता है कि उनके पत्रके कारण मेरी उपर्युक्त रायमें कोई परिवर्तन आवश्यक नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-४-१९३७

९१. तार: 'टाइम्स' को

[१५ अप्रैल, १९३७ या उसके पूर्व][2]

विवादोंको निर्वाचकोंके आगे रखनेका लॉर्ड लोथियनका सुझाव यदि व्यावहारिक सिद्ध किया जा सके और इतना महँगा न हो कि अमलमें ही न आ सके, तो वह तर्कसंगत है। पंच-फैसलेकी जो नजीर मेरे दिमागमें

१. लॉर्ड लोथियनने उसमें कहा था: "...यदि...गवर्नर वे आश्वासन, जो कांग्रेस कमेटी माँगती है, संविधानके अनुसार दे भी सके, तो क्या हर प्रान्तका अल्पसंख्यक समुदाय उनके ऐसा वचन देनेका तीव्र विरोध नहीं करेगा और क्या इस तरहका वचन संवैधानिक जनतन्त्रके इस मूल सिद्धान्तके प्रतिकूल नहीं होगा कि बहुमतवाले दल या गवर्नर, किसीको भी ऐसे स्वैच्छिक अधिकारका उपयोग नहीं करना चाहिए जिसकी कहीं अपील न हो सकती हो।

"...गवर्नरको अपने विवेकका उपयोग यह निर्णय लेते समय करना है कि जब सद्‌भावपूर्ण प्रयास विफल हो जायें तो उसके विशेष दायित्वकी पूर्ति ज्यादा अच्छी तरह अपने मन्त्रिमण्डलकी सलाह माननेसे होगी या उसे रद् करनेसे। उसका निर्णय अधिकतर, जैसाकि पिछले पूरे इतिहाससे पता चलता है, इसपर निर्भर करता है कि विधान-सभाका बहुमत संगठित और दृढ़संकल्प है या नहीं और विधान-सभा भंग कर देनेकी स्थितिमें वह निर्वाचकोंका समर्थन प्राप्त कर सकेगा या नहीं...।" (हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-४-१९३७)

२. यह तार दिनांक "लन्दन, १५ अप्रैल" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

थी; वह थी १८८५ के ट्रासवाल कानून-३ के बारेमें ब्रिटिश भारतीयोकी शिकायतोके ट्रासवाल और ब्रिटिश सरकार द्वारा ऑरेंज फ्री स्टेटके तत्कालीन मुख्य न्यायाधीशके आगे रखे जाने और उन्हे एकमात्र पंच बनाने की। कलकत्ताके 'स्टेट्समैन'का यह सुझाव[1] कि गवर्नर काग्रेसको काग्रेस चुनाव घोषणा-पत्र[2]में निरूपित कार्यक्रमके अनुसार काम करनेके लिए आमन्त्रित करे, मुझे बहुत हदतक सन्तुष्ट कर सकेगा, बशर्ते कि घोषणा-पत्रको केवल निदर्शनात्मक माना जाये। परन्तु यह बात समझ लेनी चाहिए कि मेरे सभी वक्तव्य विशुद्ध व्यक्तिगत वक्तव्य है और मित्रो तथा सहयोगियोसे परामर्श किये बिना दिये गये हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-४-१९३७

९२. पत्र : लीलावती आसरको

१५ अप्रैल, १९३७

चि० लीलावती,

तू स्थिरचित्त हो जाये, तो बहुत-कुछ कर सकती है। विचारपूर्वक सब काम करनेसे ही चित्तमें स्थिरता आती है।

इस समय और किसीको लिखनेका वक्त नहीं है। मिनट-मिनटका हिसाब रखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

महादेवने बताया है कि द्वारकादास फिरसे बीमार हो गये हैं। तुझसे यह कहनेका अभिप्राय यही है कि यदि तेरा मन उनमें लगा हो, तो तू भी जा सकती है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३५८)से। सी० डब्ल्यू० ६६३३ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

१. १० अप्रैलके अपने अंकमें स्टेट्समैन ने यह लिखा था: "कांग्रेसने निर्वाचकोंके आगे यह निश्चित वक्तव्य रखा है कि वर्तमान अधिनियममें जो रक्षोपाय और विशेषाधिकार हैं, उनसे कांग्रेसके बहुमतके लिए गरीबी और बेकारीसे निपटनेके अपने सामाजिक कार्यक्रमको अमलमें लाना बिलकुल असम्भव हो जाता है।. . . यदि अधिनियम सचमुच इस तरहका है कि गवर्नरोंको कांग्रेस नेताओंसे यह कहनेमें कि इसमें ऐसा कुछ नहीं है जो उन्हें चुनाव -घोषणा-पत्रमें निरूपित कार्यक्रमके अनुसार काम करनेसे रोके, जरा-सी भी कठिनाई महसूस होती है, तो हमें यह मानना होगा कि हमने भी अधिनियमको गलत समझा था।"

२. अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा २२ अगस्त, १९३६ को बम्बईमें स्वीकृत घोषणा-पत्रमें लक्ष्य पूर्ण स्वतन्त्रता और संविधान-सभा रखा गया था। घोषणा-पत्रके संक्षिप्त पाठके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

९३. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको[1]

कल्याण
१५ अप्रैल, १९३७

एसोसिएटेड प्रेस के प्रतिनिधिने जब लन्दन 'टाइम्स' में छपे लॉर्ड लोथियनके पत्र[2] के बारेमें पूछा तो महात्मा गांधीने कहा कि लन्दन 'टाइम्स' को अपने तार[3] में (जिसे 'रायटर' तारसे भारत भेज चुका था) मैं जो-कुछ कह चुका हूँ उससे अधिक मुझे कुछ नहीं कहना है। परन्तु उन्होंने यह भी कहा कि यदि मुझे कुछ और कहना होगा तो मैं पूनामें कहूँगा।

उनका ध्यान जब दक्षिण आफ्रिकासे मिले इस तारकी ओर खींचा गया कि एशिया-विरोधी विधेयक दक्षिण आफ्रिकी पार्लियामेंटसे वापस ले लिया गया है, तो महात्मा गांधीने कहा कि कोई राय जाहिर करनेसे पहले मैं उस तारका अध्ययन करना चाहता हूँ।

प्रतिनिधिने श्री राजगोपालाचारीके उस वक्तव्यका उल्लेख किया जिसमें उन्होंने कहा था कि महात्मा गांधी "इस लड़ाईके बीचोंबीच हैं"। महात्मा गांधीसे यह पूछे जानेसे पहले ही कि क्या इसका मतलब यह है कि वे कांग्रेसमें वापस आ रहे हैं, गांधीजी प्रतिनिधिका भाव भाँप गये और बोले:

इसका मतलब जो है सो है; न अधिक न उससे कम। मैं इस लड़ाईके बीचोंबीच हूँ। यदि आपका आशय यह जानना है तो सुनिए. मैं अभी कांग्रेसमें फिरसे शामिल नहीं हो रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-४-१९३७

१. गांधीजी कस्तूरबा, महादेव देसाई आदिके साथ हुदली जाते हुए कल्याणसे गुजरे थे। गांधी १९१५-१९४८—ए डिटेल्ड क्रॉनॉलॉजी के अनुसार गांधीजी "कल्याण पर उतर कर पर्णकुटीर चले गये थे"।

२ और ३. देखिए पृ० ९२-३।

९४. पत्र : अमृत कौरको

पूना शहर
१५ अप्रैल, १९३७

प्रिय बागी,

कल वर्धासे चलते समय तुम्हारा आखिरी पत्र मिला। मुझे खुशी है कि तुम गाँवोंमें जा सकी। आसपासके गाँव स्वेच्छासे ग्राम-सुधारका काम शुरू कर रहे हैं, यह सचमुच एक शुभ समाचार है। कोई भी शुभ कार्य फूलकी सुगंधकी तरह फैले बिना नहीं रहता।

अगर किसी और आदमीको साथ लो तो सावधानीसे लेना। अपने सिर उतना ही काम लेना, जितना तुमसे अपने शरीरको अस्वस्थ किये बिना हो सके।

सस्नेह,

डाकू

[पुनश्च :]

आज रात हम बेलगाँव जा रहे हैं।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६०१) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६४०१ से भी

९५. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको

पूना
१५ अप्रैल, १९३७

मेरी कोई बँधी-बँधाई योजनाएँ नहीं हैं। जैसी परिस्थिति सामने आती है, मेरी प्रतिक्रिया उसीके अनुरूप होती है।

अपने भावी कार्यक्रमके बारेमें गांधीजी ने कहा कि मैंने पहले वक्तव्योंमें जो कहा है उससे अधिक मुझे कुछ नहीं कहना है, क्योंकि तबसे कोई नई बात नहीं हुई।

बादमें महात्मा गांधीको मद्रासके नेताओंका वक्तव्य दिखाया गया। उन्होंने उस पर सरसरी नजर डालनेके बाद कहा कि उसपर अपनी राय देनेसे पहले ध्यानसे

उसका अध्ययन जरूरी है। उन्होंने आगे कहा कि उसे ध्यानसे पढ़नेके बाद कल यथासम्भव शीघ्र ही मैं अपनी राय दे सकूँगा। [अभी] मैं केवल इतना ही कहूँगा कि वक्तव्यके सुझावपर, जिसे सभी सम्प्रदायोंका समर्थन प्राप्त है, बहुत विचार-विमर्श होना चाहिए।

स्टेशनपर महात्मा गांधीके दर्शनके लिए भारी भीड़ जमा हो गई और उन्होंने अवसरका लाभ उठाकर हरिजन-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा किया।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-४-१९३७

९६. भाषण : गांधी सेवा संघकी सभा, हुदलीमें – १[1]

१६ अप्रैल, १९३७

भाइयो और बहनो,

अगर आपतक मेरी आवाज न पहुँच सके तो आप बता दें। मैं कुछ ऊँची आवाजमें बोलूँ। अध्यक्षके बहस शुरू करनेसे पहले मैंने कुछ कहना कबूल कर लिया है। छ: दिन सम्मेलनमें मैं जितना भाग ले सकूँगा, लूँगा।

सबसे पहले मैं एक बातका उल्लेख कर देना चाहता हूँ। सुबह जब मैं आया तो किसीने कहा, "फैजपुरकी कांग्रेस जवाहरलालजी की थी, तो अब हुदलीकी कांग्रेस गांधीकी होगी"। यह बात अध्यक्षने या किसी और ने मुझे सुनाई। मैं जानता हूँ कि वह विनोद था। पर मुझे दु:ख हुआ कि विनोदमें भी ऐसी बात क्यों कही जाये? मुझमें और जवाहरलालमें या यों कहिए, कांग्रेस और गांधी सेवा संघ के बीच विनोदमें भी स्पर्धाकी कल्पना करना गुनाह है। गांधी सेवा संघ कांग्रेसका विरोधी नहीं है। वह तो उसकी सेवा के लिए है। संघ कांग्रेसका विरोधी कैसे हो सकता है, जबकि वह पैदा ही इसलिए हुआ है कि कांग्रेसके रचनात्मक कामको आगे बढ़ाये। पर मैं और भी आगे बढ़ता हूँ। कांग्रेस करोड़ोंकी प्रतिनिधि है। संघ हमारा प्रतिनिधि है। संघके सदस्य या तो अपने प्रतिनिधि हैं या सत्य और अहिंसाके। आप यह कह सकते हैं कि सत्य और अहिंसाकी प्रतिनिधि सारी दुनिया होनी चाहिए। लेकिन वह अलग चीज है। गांधी सेवा संघके सदस्य तो उस हालतमें अपने ही प्रतिनिधि कहलायेंगे। लेकिन हम भी तो करोड़ोंके प्रतिनिधि बनना चाहते हैं? और करोड़ोंके दर्दकी आवाज बननेकी प्रतिज्ञा तो कांग्रेसने की है। तब हममें और कांग्रेसमें कोई विरोध कैसे हो सकता है? मैं तो यहाँतक कहूँगा कि संघकी किसीसे भी स्पर्धा नहीं हो सकती। किसीकी जबानसे यह विनोदमें भी न निकले कि कांग्रेस और संघके बीच स्पर्धा हो सकती है, क्योंकि यह असत्य है। और विनोद में भी असत्य कहना मना है।

१. इस भाषण की रिपोर्ट हरिजन-सेवक, १-५-१९३७ के अंक में प्रकाशित हुई थी।

जो कोई ऐसी बात सुने, उसे वहीं रोक दे। मैं चाहता हूँ कि आपको सावधान कर दूँ। हम किसीके साथ युद्ध तो करना ही नहीं चाहते हैं, हम तो इस किस्मकी बात भी नहीं कर सकते।

अब दूसरी बात जो मैं कहना चाहता हूँ, वह यह है कि क्या हम गांधी सेवा संघके नाममें भी परिवर्तन करें तो अच्छा नहीं होगा? आप लोगोंने संघके साथ मेरा नाम जोड दिया है, इसका मतलब यह नहीं है कि मेरा कार्यक्षेत्र इतना ही है। मैं तो सारे हिन्दुस्तानको अपना कार्यक्षेत्र बनाना चाहता हूँ। मैंने कोई रास्ता बतला दिया है और आपने उसे मान लिया है। लेकिन मनुष्यकी पूजा करना हमारा काम नहीं है। पूजा आदर्श और सिद्धान्तकी ही हो सकती है। १९२० में जो चीजें मैंने देशके सामने रखी, उनको पूरा करना आपने मंजूर किया है। उनमें से जितनी आपने आत्मसात् कर ली, हजम कर ली, वे ही आपकी हैं। उन चीजोंमें मेरी श्रद्धा आज पहलेसे कहीं अधिक प्रदीप्त है। पर अगर मैं कहूँ कि मेरी श्रद्धा घट गई है तो क्या आप उन्हें छोड देंगे? चाहे मैं उन्हें भले ही छोड दूँ, आप नहीं छोड़ सकते। आप मेरे पुजारी न बनें। सत्य है, अहिंसा है, आप इनके पुजारी बन सकते हैं। आपने जिस चीजको अपना लिया, वह स्वतन्त्र रूपसे आपकी हो गई। और जो स्वतन्त्र रूपसे आपकी हो, वही आपकी है। खुराककी तरह आपने जितनेको हजम किया वही काम आयेगा। किसी आदमीके खयालातको हमने ग्रहण तो किया, पर हजम नहीं किया, बुद्धिसे उनको ग्रहण कर लिया, पर उनको हृदयस्थ नहीं किया, उनपर अमल नहीं किया तो वह एक प्रकारकी बदहजमी ही है। बुद्धिका विलास है। विचारोंकी बदहजमी खुराककी बदहजमीसे कहीं बुरी है। खुराककी बदहजमीके लिए दवा है, पर विचारोंकी बदहजमी आत्माको बिगाड देती है। मैं आपकी मदद करूँ यह ठीक है। क्योंकि मैं उन्हीं सिद्धान्तोंका पुजारी हूँ, जिनके पुजारी आप हैं। मैंने सन् २० में जो कहा था उसके विपरीत अगर आज कोई बात कहूँ, तो आपको मुझसे झगडनेका हक है। मैंने विचारोंको दुरुस्त किया है या बिगाडा है, यह आपको स्वतन्त्र रूपसे सोचना है। मैं आपको बताऊँ कि मैं हर रोज विकासकी ओर जा रहा हूँ, और मेरे विचारोंका प्रयोग रोज विस्तृत होता जा रहा है। आपको देखना पडेगा कि यह विकास ठीक तरहसे हो रहा है या नहीं। आप स्वतन्त्र रूपसे विचार न करें तो आप यह सब नहीं कर सकते। आप मेरे नामसे चिपटे रहेंगे तो दुनिया आपपर हँसेगी। लेकिन एक दूसरा खतरा भी है। वह बड़ा भयंकर है। वह यह है कि आपका संघ कहीं एक सम्प्रदाय न बन जाये। मेरे जिन्दा रहते हुए भी जब ऐसा हो सकता है तो मेरे मरनेके बाद क्या होगा? जब कोई कठिनाई सामने आयेगी, आप कहेंगे "देखो उसने 'यंग इंडिया' और 'हरिजन' में क्या कहा है।" आपस की अपनी बहसमें आप कसम खा-खाकर मेरे लेखोंका प्रमाण देंगे। अच्छा तो यह हो कि मेरी हड्डियोंके साथ ही मेरे सारे लेख जला दिये जायें। मैं यह कुछ विनयसे (नम्रतावश) नहीं कह रहा हूँ। क्योंकि मैं तो यह भी कह चुका हूँ न, कि हमारे वेद भी नष्ट हो जायें और केवल 'ईशोपनिषद' का वह पहला मन्त्र ही रह जाये, तो

भी दुनियाको कोई नुकसान होनेवाला नही है? लेकिन अगर हम उस मन्त्रको भी न समझें और उसके अनुसार काम न करे तो वह भी किस कामका? मैंने जो-कुछ कहा और लिखा है, वह सिर्फ इसी हदतक उपयोगी है कि सत्य और अहिंसाके महान् सिद्धान्तोको पचानेमें उसने आपकी मदद की है। इसलिए मै आज आपसे जो कह रहा हूँ, उसपर गम्भीरतासे विचार करे।

सत्य और अहिंसामें मेरी श्रद्धा बढती ही जाती है। और मैं अपने जीवनमें जैसे-जैसे उनपर अमल करता हूँ, मैं भी बढ़ता जाता हूँ। उसीके साथ मेरे विचारोमें नयापन आता है। इसका मतलब यह नही है कि मैं अव्यवस्थित हूँ। मेरा दिमाग स्थिर नही है। मेरी बुद्धि डगमगा रही है। मैं तो कहता हूँ कि मैं वृद्ध हो गया हूँ, तो भी मेरी बुद्धि क्षीण नही हुई है। यह नही है कि मै बिना विचारे कुछ कह देता हूँ। मेरी बुद्धिका विकास होता ही जा रहा है। सत्य और अहिंसाके विषयमें नित्य नई-नई चीजें उसके सामने आती है। उनमें मै नया प्रकाश देखता हूँ। रोज नया अर्थ दिखाई देता है। इसीलिए चरखा सघ, हरिजन सेवक संघ और ग्रामोद्योग सघ आदि संस्थाओके सामने मैं बराबर नये-नये विचार रखता आ रहा हूँ। इसका मतलब यह है कि वे संस्थाएँ और उनके सचालक जिन्दा है। और वृक्षकी तरह वे नित्य बदलती रहेगी, नई-नई बनती रहेगी। उनका गुण भी तो यह है कि वे बढ़ें, गतिमान हो, नही तो वे गिर जायेंगी। मुझे यह तो लगता ही नही कि मैं गिर रहा हूँ। मै चाहता हूँ कि आप भी मेरे साथ विकासकी ओर बढ़ें।

मै यह नही जानना चाहता कि मेरे मरने पर क्या होगा। मेरी इतनी ही इच्छा है कि आपका सघ वृक्षकी तरह हमेशा बढ़ता रहे। अगर आप आदर्शके पुजारी है — न कि मेरे — तो आप अपने सघके नाममें से मेरा नाम हटा दें। मेरे नामके मोहमें न पडें। अपनी हरएक प्रवृत्तिको सत्य और अहिंसाके मानदण्ड से नापें। अगर इनको आपने अपना मानदण्ड बनाया तो मेरे मरनेके बाद भी आप निर्भयतासे सारे प्रश्नो पर विचार कर सकेगे। यहाँ आप जितने आये है, पूरी-पूरी जागृति रखें। आपके सामने ऐसे प्रश्न आनेवाले है, जिनके विषयमें आपको नये सिरेसे विचार करना होगा। मुझे आशा है कि सत्यके प्रकाशमें आप सही ढग से विचार कर सकेगे।

गांधी सेवा संघके तृतीय वार्षिक अधिवेशन (हुदली-कर्नाटक) का विवरण, पृ० ८-१०

१७. कत्तिनोंकी मजदूरी

अ० भा० च० सघकी कार्यसमितिने २३ और २४ मार्चको वर्धामें हुई बैठकमें निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पास किये है.[1]

जब यह योजना आरम्भ की गई थी, तब कई कार्यकर्ताओको इसकी सफलतामें सन्देह था। उन्होने सोचा था कि इसके कारण खादीके दामोमें जो वृद्धि होगी उससे उसकी बिक्रीपर बुरा असर पडेगा। लेकिन अनुभवने उनकी आशकाओको दूर कर दिया है और समिति इस बातके लिए उत्सुक है कि अगर हो सके तो जल्दी ही वह इस दिशामें और कदम भी उठाये। इसलिए आगे बढनेमें जल्दबाजी करनेकी जरूरत नही, लेकिन कार्यकर्ताओको इस बारेमें सुस्ती भी नही करनी चाहिए। उन्हें जानना चाहिए कि हमारा लक्ष्य तो यह है कि आठ घटे काम करनेकी आठ आने मजदूरी मिले। अभी तो हम सिर्फ बरायनाम तीन आनेपर पहुँचे है, जो वृद्धि और कार्यक्षमताके बीच समान रूपसे बँट गये है। कार्यक्षमताकी कमाईका बिक्रीकी कीमत पर कोई सीधा असर नही पडता। यदि कुछ होता है तो यह कि कत्तिनोकी कार्य-कुशलतासे खादीकी किस्ममें सुधार होता है। मजदूरीमें सीधी वृद्धि होनेसे चीजकी कीमत तो निस्सन्देह बढती है, लेकिन उसकी किस्ममें जो सुधार होता है उससे वह बोझ-जैसी नही लगती। सच तो यह है कि मजदूरीकी वृद्धिका इस तरह विवेकपूर्वक नियन्त्रण किया गया है कि ज्यादा गरीब खरीदारोपर उसका असर या तो बिलकुल नही पड़ता या बहुत कम पडता है। मुझे इसमें कोई शक नही कि अगर कार्यकर्ता खुद ही अधिक कार्यक्षम, अधिक जागरूक और अधिक विश्वसनीय हो जायें, तो वे वह दिन जल्दी ले आयेंगे जब कत्तिनोको आसानीसे आठ घटेके कामकी आठ आने मजदूरी मिलने लगेगी और उसके कारण बिक्रीके दामोमें कोई वृद्धि भी नही होगी। क्योंकि अधिक वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त करनेसे तकली, पीजन और चरखेमें ऐसा सुधार जरूर होगा जिससे उनकी उत्पादन-शक्ति बढेगी। कत्तिनोके कामपर अधिक ध्यान रखनेसे वे अधिक दक्ष बनेंगी और प्रबन्ध-कार्यको ज्यादा समझनेसे तथा कार्य अधिक ईमानदारीसे होनेसे व्यवस्था-खर्चमें भी कमी होगी। दूसरे शब्दोमें कहें तो अभी जो हम आठ आने प्रतिदिनके अपने लक्ष्यपर पहुँचनेमें असमर्थ है, उसका मूल कारण खादी-विज्ञानके विषयमें हमारा अज्ञान है। इस प्रस्तावका यही उद्देश्य है कि इस

१. प्रस्ताव यहाँ नहीं दिये गये हैं।

प्रयत्नको प्रोत्साहन मिले। परमेश्वर उन्हींकी सहायता करता है, जो सदा जागरूक रहते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-४-१९३७

९८. सच है तो बुरा है

नेशनल क्रिश्चियन कौंसिलके श्री पी० ओ० फिलिपके पास त्रावणकोरसे यह शिकायत आई है

> आपका पत्र मिला, अनेक धन्यवाद। यह जानकर मुझे सान्त्वना मिली कि त्रावणकोरमें ईसाइयों और अपना धर्म-परिवर्तन कर ईसाई-धर्ममें आये हुए दलित वर्गके लोगोंके प्रति सवर्ण हिन्दुओंकी जो द्वेष-भावना है, उसे दूर करनेमें महात्मा अपना प्रभाव काममें लायेंगे। अभी पिछले ही हफ्ते की बात है, मेरा एक पादरी जैकब उत्तर त्रावणकोरमें स्थित एक गिरजेसे आठ 'परिया' अछूतोंको धर्मदीक्षा देकर वापस आ रहा था, उसे सरकारी आबकारी महकमेके एक हिन्दू चपरासीने रोक लिया और उसकी खूब पिटाई की। थप्पड़ोंसे उसकी एक आँखमें भी चोट लगी। चपरासीका कहना था कि मन्दिर-प्रवेशकी घोषणाके बाद लोगोंको ईसाई-धर्मका उपदेश देने और उन्हें धर्मान्तरणके लिए तैयार करनेका अब तुम्हारा कोई काम नहीं। इसके बारेमें मैंने 'मद्रास मेल' और 'मनोरमा' को लिखा है, पर इन अखबारोंमें मेरी टिप्पणी प्रकाशित नहीं हुई। क्या आप कृपा करके इस बेहूदा हरकतको प्रकाशमें लायेंगे? और ऐसी घटनाएँ इक्का-दुक्का नहीं हो रही हैं, बल्कि बराबर होती ही रहती हैं और उन प्रभावशाली सवर्ण-हिन्दुओंको इनका पता भी है जिनकी मंशा, अगर सम्भव हो, ईसाई-धर्मकी प्रगतिको रोक देने की है। मेरी इस टिप्पणीकी नकल आप गांधीजी के पास भेज सकते हैं। मन्दिर-प्रवेशकी घोषणाके बादसे यहाँ विद्वेष साम्प्रदायिक बढ़ता जा रहा है!

कुछ हफ्ते पहले इसी तरहकी एक और शिकायत मेरे पास इसी सूत्रसे आई थी। तहकीकातके लिए वह कागजात मैंने त्रावणकोर हरिजन सेवक संघको भेज दिये हैं। इस बीच मुझे यह खत मिला। इस पोस्टकार्डमें, संक्षेपमें, अत्यन्त गम्भीर आरोप लगाये गये हैं। लेखकका दावा है कि

(१) ये घटनाएँ इक्का-दुक्का नहीं हो रही हैं;
(२) ये बराबर होती रहती हैं, और प्रभावशाली हिन्दुओंको इनका पता भी है,
(३) सवर्ण-हिन्दुओंकी मंशा, अगर मुमकिन हो तो ईसाई-धर्मकी प्रगतिको रोकनेकी है;

(४) मन्दिर-प्रवेशकी घोषणाके बाद साम्प्रदायिक विद्वेष बढता जा रहा है।

ऐसे वक्तव्य बिना सोचे-समझे, यो ही नही दिये जाने चाहिए। लेखकको तो मै यह सलाह दूँगा कि वे हरिजन सेवक संघके सामने सबूत रखें, और मै उन्हे वचन देता हूँ कि सघ इस सारी शिकायतकी अच्छी तरहसे जाँच करेगा। संघके अध्यक्ष उच्च न्यायालयके सेवा-निवृत्त न्यायाधीश हैं और उसके मन्त्री भी एक बहुत ही कर्तव्य-निष्ठ और सस्कारी व्यक्ति है। सवर्ण हिन्दू पूर्ण अहिंसासे अगर जरा भी विचलित हुए हो तो उन्हे दोषी ठहरानेमें मुझे खुद कोई सकोच नही होगा। यह समझना मेरे लिए मुश्किल है कि मन्दिर-प्रवेश-घोषणाकी वजहसे साम्प्रदायिक घृणा क्यो बढनी चाहिए। निश्चय ही अपनी हालकी त्रावणकोर-यात्रामें ऐसी कोई चीज मेरे देखनेमें नही आई, और जहाँतक मारपीटके आरोपोंकी बात है, मैं श्री फिलिपके पत्र-लेखकको यह सलाह दूँगा कि वे स्थानीय अदालतमें अपनी शिकायतें ले जायें। मैं यह बता दूँ कि सवर्ण हिन्दुओकी तरफसे मेरे पास इससे बिलकुल ही उल्टी शिकायतें आई है— उनका आरोप यह है कि ईसाई मुहल्लोमें या उनके नजदीक जो हरिजन रहते है, उन्हे ईसाई लोग मारते-पीटते हैं। उनके वक्तव्योको प्रकाशित करनेसे मैंने इनकार कर दिया है और उन्हे लिख दिया है कि वे स्थानीय अदालतोंमें शिकायत कर सकते हैं। ऊपरके पोस्टकार्डमें अगर अत्यन्त गम्भीर आरोप न होते, तो उसके जवाबमें भी मैं यही लिखता। ऐसे गम्भीर आरोपोपर तो सरेआम और सार्वजनिक रूपसे की हुई तहकीकात द्वारा ही विचार हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-४-१९३७

९९. अ० भा० ग्रामोद्योग संघ प्रशिक्षण-विद्यालय

इस विद्यालयको प्रबन्ध-कार्यका ठीक-ठीक अनुभव न होनेके कारण कई उतार-चढावोमें से गुजरना पडा है। अ० भा० ग्रा० सघ ज्यो-ज्यो इस अनजाने मार्गपर आगे बढ रहा है, त्यो-त्यो उसे अपने लिए रास्ता खुद बनाना पड रहा है। एक सालके अनुभव और प्रयोगोसे प्रबन्धकोकी महत्वाकाक्षा अब सीमित हो गई है। शिक्षक खुद प्रयोगो द्वारा सीखते जा रहे हैं। और जब दूसरा वर्ष आरम्भ होगा, तब अपने कामके लिए उनकी तैयारी पहलेसे कही ज्यादा अच्छी होगी। नीचे विद्यालयके शिक्षाक्रमका विवरण-पत्र दिया जा रहा है जो उतना महत्वाकाक्षा-पूर्ण तो नही है, किन्तु अधिक वास्तविकतापूर्ण हो गया है।[1]

> ग्रामसेवकों के लिए अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ द्वारा संचालित प्रशिक्षण-विद्यालयका शिक्षा-सत्र १ जुलाई, १९३७ से आरम्भ होगा . . .।

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

१. शिक्षा हिन्दीके माध्यम द्वारा दी जायेगी।

२. पाठ्यक्रम १२ महीनेका होगा, जिसमें २ महीने व्यावहारिक अध्ययनके लिए ग्रामसेवा-केन्द्रमें बिताने होंगे। पहले १० महीनोंमें नीचे लिखे उद्योगोंकी शिक्षा दी जायेगी और साथ-साथ ग्रामसेवा-कार्यका कुछ सैद्धान्तिक ज्ञान भी दिया जायेगा:

(१) धान कूटना और दलना

(२) कागज बनाना

(३) घानीमें तेल पेरना

(४) ताड़के रसका गुड़ बनाना

(५) मधुमक्खियाँ पालना

विद्यार्थीको ऊपरके उद्योगोंमें से कोई भी एक उद्योग चुन लेना होगा और उसमें रोज छह घंटे देने होंगे।

३. सालके अन्तमें विद्यार्थियोंकी परीक्षा ली जायेगी, और अगर जरूरी समझा गया तो पाठ्यक्रम लम्बा कर दिया जायेगा।

४. आवेदन-पत्र भेजनेवालोंकी उम्र १८ सालसे कम न हो, और उनका शरीर तन्दुरुस्त होना चाहिए। प्रवेशार्थियोंके यहाँ आनेपर जिनके लिए विद्यालय-कमेटी जरूरी समझेगी, उन्हें प्रारम्भिक परीक्षा देनी होगी, और उस परीक्षामें उनसे वर्नाक्यूलर मिडिलके लिए निर्धारित पाठ्यक्रमके बराबर योग्यता की अपेक्षा की जायेगी। अगर पर्याप्त योग्यता उनमें न हुई, तो उन्हें दाखिल करनेसे इनकार किया जा सकता है। उन्हें कामकाज चलाने लायक हिन्दीका ज्ञान होना चाहिए। खादीको वे आदतन पहनते हों और हाथ-पैरकी मेहनतका काम — जैसे सफाईका काम, रसोईका काम, सूत-कताई — और विद्यालयके अनुशासनके नीचे और भी जो काम जरूरी समझा जाये, वह सब काम करनेके लिए उन्हें तैयार रहना चाहिए। . . .

प्रवेशार्थियोंको शिक्षाके इस विवरण-पत्रको ध्यानसे पढ़ लेना चाहिए। जो हाथ-पैरसे मेहनत नहीं करना चाहते और अपने खुदके पसन्द किये हुए किसी उद्योगकी व्यावहारिक शिक्षाके लिए आवश्यक परिश्रम भी नहीं करना चाहते, उन्हें निराश होना पड़ेगा। जो उपर्युक्त उद्योगोंमें निष्णात होनेकी आवश्यकताका महत्व समझते हों, उन्हें अपनी प्रतिभाका विकास करनेके लिए यहाँ पर्याप्त अवसर मिलेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १७-४-१९३७

१००. विद्यार्थियोंके लिए

यद्यपि यह पत्र[1] मुझे फरवरीके अन्तमें मिला था, पर इसका जवाब मैं अब लिखा सका हूँ। इसमें ऐसे महत्वके प्रश्न उठाये गए हैं कि हरएककी चर्चाके लिए 'हरिजन' के दो-दो स्तम्भ चाहिए। परन्तु मैं संक्षेपमें ही जवाब दूँगा।

इस विद्यार्थीने जो कठिनाइयाँ बताई हैं, वे देखनेमें गम्भीर मालूम होती हैं, पर वे उसकी खुदकी पैदा की हुई हैं। इन कठिनाइयोंके उल्लेख मात्रसे ही जान लेना चाहिए कि इस विद्यार्थीकी स्थिति और अपने देशकी शिक्षा-पद्धति कितनी सदोष है। यह पद्धति शिक्षाको केवल व्यापारकी वस्तु बनाकर पैसा पैदा करनेका साधन बना देती है। मेरी दृष्टिसे शिक्षाका उद्देश्य बहुत ऊँचा और पवित्र है। यह विद्यार्थी अगर अपनेको करोड़ो आदमियोंमें से एक माने, तो वह देखेगा कि वह अपनी डिग्रीसे जो आशा रखता है, वह करोडों युवक और युवतियोसे पूरी नही हो सकती। अपने पत्रमें उसने जिन सम्बन्धियोका जिक्र किया है उनकी परवरिशके लिए वह क्यो जवाब-दार बने? यदि उनमें से बड़ी उम्रके आदमी अच्छे मजबूत शरीरके हो, तो वे अपनी आजीविकाके लिए मेहनत-मजदूरी क्यो न करे? एक उद्योगी मधुमक्खीके पीछे — भले ही वह नर हो — बहुत-सी आलसी मधुमक्खियोंका रखना गलत तरीका है।

इस विद्यार्थीकी उलझनका इलाज उसने जो बहुत-सी चीजें सीखी हैं, उनको भूल जानेमें है। उसे शिक्षा-सम्बन्धी अपने विचार बदल देने चाहिए। अपनी बहनोंको वह ऐसी शिक्षा क्यो दे, जिसपर इतना ज्यादा पैसा खर्च करना पड़े? वे अपनी बुद्धिका विकास कोई उद्योग-धन्धा वैज्ञानिक-रीतिसे सीखकर कर सकती हैं। जिस क्षण वे ऐसा करेंगी, उसी क्षण शरीरके विकासके साथ-साथ उनके मनका भी विकास होने लगेगा। और अगर वे अपनेको समाजका शोषण करनेवाली नही, किन्तु सेविकाएँ समझना सीखेंगी, तो उनके हृदयका, अर्थात् आत्माका भी विकास होगा। और वे अपने भाईके साथ-साथ आजीविकाके लिए काम करनेमें समान हिस्सा लेंगी।

पत्र लिखनेवाले विद्यार्थीने अपनी बहनोंके ब्याहका उल्लेख किया है, उसकी भी यहाँ चर्चा कर लूँ। शादी 'देरसे होनेके बजाय' 'जल्दी' होगी, ऐसा लिखनेका क्या अर्थ है, यह मैं नही जानता। २० सालकी उम्र न हो जाये, तबतक उनकी शादी करनेकी कतई जरूरत नही है। इतने वर्षोंकी बात पहले से सोचना बेकार है। और अगर वह अपने जीवनका सारा क्रम बदल लेगा तो वह अपनी बहनोंको अपना-अपना वर खुद ढूंढ लेने देगा; और विवाह-संस्कारमें यदि कुछ खर्च हो

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने लिखा था कि गांधीजी ने अपने जवाबमें "एक विद्यार्थी" के साथ न्याय नहीं किया है; देखिए खण्ड ६४, पृ० २४५-६। उसने अपनी कुछ वैयक्तिक समस्याओंका "विस्तृत, व्यावहारिक और पूरा-पूरा हल" बतानेका अनुरोध भी किया था।

तो वह पाँच रुपयेसे अधिक नही होना चाहिए। मै ऐसे कितने ही विवाहोमें उपस्थित रहा हूँ, और उनमें उन लड़कियोके पति या उनके बड़े-बूढे खासी अच्छी स्थितिके ग्रेजुएट थे।

कातना कहाँ और कैसे सीखा जा सकता है, उसे इसका भी पता नही। उसकी यह लाचारी देखकर मनमें करुणा पैदा होती है। लखनऊमें वह प्रयत्नपूर्वक तलाश करे तो कातना सिखानेवाले उसे वहाँ कई युवक मिल सकते है। पर उसे केवल कातना सीखकर बैठे रहनेकी जरूरत नही, हालाँकि सूत कातना भी पूरे समयका धन्धा होता जा रहा है, और वह ग्रामीण वृत्तिवाले स्त्री-पुरुषोको पर्याप्त आजीविका देनेवाला उद्योग बनता जा रहा है। मुझे आशा है कि मैंने जो कहा है उसके बाद बाकी का सब-कुछ यह विद्यार्थी खुद समझ लेगा।

अब सन्तति-नियमनके कृत्रिम साधनोके सम्बन्धमें। यहाँ भी उसकी कठिनाई काल्पनिक ही है। यह विद्यार्थी अपनी स्त्रीकी बुद्धिको जिस तरह कम आँक रहा है, वह ठीक नही। मुझे तो जरा भी शका नही कि अगर वह साधारण स्त्रियोंकी तरह है तो वह सहज ढगसे पतिके सयमके अनुकूल हो जायेगी। विद्यार्थी खुद ईमानदारीसे अपने मनसे पूछकर देखे कि उसके मनमें पर्याप्त सयम है या नही? मेरे पास जितने प्रमाण है वे तो सब यही बताते है कि सयमशक्तिका अभाव स्त्रीकी अपेक्षा पुरुषमें ही अधिक होता है। पर इस विद्यार्थीको अभी संयम रखनेकी असमर्थताको कम करके बतानेकी जरूरत नही। उसे बड़े कुटुम्बकी सम्भावनाका पौरुषके साथ सामना करना चाहिए और उस परिवारके पालन-पोषण करनेका अच्छे-से-अच्छा जरिया ढूँढ़ लेना चाहिए। उसे जानना चाहिए कि करोड़ों आदमियोको इन कृत्रिम साधनोका पता ही नही, इन साधनोको काममें लानेवालोकी संख्या तो ज्यादा-से-ज्यादा कुछ हजार ही होगी। उन करोडोको इस बातका भय नही होता कि बच्चोंका पालन वे किस तरह करेंगे, हालाँकि हो सकता है कि सभी बच्चे माँ-बापके मनचाहे न हो। मैं चाहता हूँ कि मनुष्य अपने कर्मके परिणामका सामना करनेसे इनकार न करे। ऐसा करना कायरता है। जो लोग कृत्रिम साधनोंको काममें लाते हैं, वे संयमका गुण नही सीख सकते। उन्हें इसकी जरूरत नही पड़ेगी। कृत्रिम साधनोके साथ भोगा हुआ भोग बच्चोका आना तो रोकेगा, पर पुरुष और स्त्रीकी जीवन-शक्ति नष्ट कर देगा — पुरुषकी सम्भवतः और भी ज्यादा। आसुरी वृत्तिके खिलाफ युद्ध करनेसे इनकार करना नामर्दी है। पत्र-लेखक अगर अनचाहे बच्चोंको रोकना चाहता है तो उसके सामने एकमात्र अचूक और सम्मानित मार्ग यह है कि उसे सयम पालन करनेका निश्चय कर लेना चाहिए। सौ बार भी उसके प्रयत्न निष्फल जायें तो भी क्या? सच्चा आनन्द तो युद्ध करनेमें है, उसका परिणाम तो ईश्वरके ही अधीन है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-४-१९३७

१०१. 'हमारी अपूर्ण दृष्टि'

पाठकोको याद होगा कि कुछ सप्ताह पूर्व इन स्तम्भोमें मेरे नाम राजकुमारी अमृत कौर का एक पत्र[1] छपा था। उसपर उन्हे, कुछ दिन हुए, एक अग्रेज सहेलीका पत्र मिला। उन्होंने वह पढनेके लिए मेरे पास भेज दिया। उसमें इतनी अच्छी बातें थी कि मुझे उनसे प्रासगिक अशोको छापनेकी अनुमति माँगनी पडी। अनुमति तो उन्होंने तुरन्त दे ही दी, मेरे लिए उनकी नकल भी कर दी। वे अश मै यहाँ दे रहा हूँ

> 'हरिजन' में श्री गांधीको लिखा आपका सुन्दर पत्र पढ़ने के बादसे ही मैं आपको पत्र लिखना चाह रही थी। मैं आपको बताना चाहती हूँ कि मिशनरियोंके कामके बारेमें आपने जो-कुछ कहा है, उसमें मैं आपसे सहमत हूँ, और आपको धन्यवाद देती हूँ कि आपने उसे अपने ढंगसे महात्माजी-जैसे व्यक्तिसे कहा। बहुत साल पहले जब मैं भारतमें थी और मुझे परिस्थितिवश सी० एम० एस० वातावरणमें रहना पड़ा था, तब मैं बिलकुल ही नादान थी, तो भी मैं ऐसा महसूस करती थी कि भारतके लोगोंके प्रति मिशनरियोंका जो रुख है वह बिलकुल गलत है। मुझे लगता था कि उस समूची व्यवस्थासे मेरा मेल ही नहीं बैठता; साथ ही मैं अपने विचारोंको व्यवस्थित रूपमें रखने या दूसरोंसे बातें करके उन्हें अपनी बात समझा सकनेमें भी असमर्थ थी। मुझे यहाँतक लगता था कि हम ब्रिटिश लोगोंको भारतपर शासन करनेका कोई अधिकार नहीं है और मुझे याद है कि उन दिनों शुरू-शुरूमें मैंने यह भाव व्यक्त भी किया था और इसपर मेरे साथ कड़ा व्यवहार किया गया था। परन्तु उन दिनोंसे ही, जैसे-जैसे मेरा वैचारिक विकास होता गया, मैं यह महसूस करती रही हूँ कि बुनियादी तौरपर भारतमें ब्रिटिश लोगोंकी पूरी स्थिति ही गलत है, और कुल मिलाकर मिशनरियोंमें भी वही बड़प्पनकी बू है जो शासकोंमें है। मैं जानती हूँ कि मिशनरी लोग मुझे अपने बीचका कलंक ही गिनते हैं। इसलिए यकीनन उस आलोचनाको भली-भाँति समझ सकती हूँ जिसका उनके बीच आपको शिकार बनना पड़ा होगा। परन्तु आपने जो-कुछ कहा है उसका किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा कहा जाना जरूरी था जो ईसाई होते हुए भी अपने धर्मके बारेमें दूसरोंसे भिन्न दृष्टिकोण रखता है। और जब इन

१. देखिए खण्ड ६४, पृ० ३६२-४।

बातोंको कोई आप-जैसा व्यक्ति, जो प्रसिद्ध है और जिसकी देशमें प्रतिष्ठा है, कहता है तो उससे बहुत फर्क पड़ता है।

इंग्लैंडके अपने गिरजाघरोंमें हम उस अन्तरप्रेरित सूरदास कवि जॉर्ज मैथेसनका यह महान् भजन गाते हैं; मुझे आशा है इसकी शब्दावलीसे आप परिचित ही होंगी:

हमें अपने में समेट ले;
हम केवल तुझे ही तो पूजते हैं
विविध नामोंसे हम
एक ही हाथ फैलाते हैं;
विविध रूपोंमें,
एक ही आत्माको देखते हैं;
अनेक नौकाओंसे
एक ही आत्म-तटपर पहुँचना चाहते हैं;
हमें अपनेमें समेट ले।
तेरी इन्द्रधनुषी ज्योतिका
एक ही रंग हरएक देखता है;
हरएककी दृष्टि एक ही आभा पर जमी है
और उसीको वह स्वर्ग कहता है;
हमारी अपूर्ण दृष्टिकी पूर्णता
तू ही है;
सातों रंगोंको पाये बिना
हम पूर्ण नहीं हैं;
हमें अपनेमें समेट ले।

हर हालतमें, यह 'हरियाली भूमिसे हिमाच्छादित पर्वतोंसे'[1] वाले भजनसे एक कदम आगे है। परन्तु मैं कभी-कभी सोचती हूँ, यहाँ जो लोग इस गीतको गाते हैं, क्या वे इसके गूढ़ार्थोंको समझते हैं?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-४-१९३७

१. 'फ्रॉम ग्रीन हेड्स आईसी माउन्टेन्स'।

१०२. पत्र : अमृत कौरको

हुदली, डाकखाना सुलधल
१७ अप्रैल, १९३७

प्रिय बागी,

तुम्हारा पत्र मिला।

प्रातःकालकी प्रार्थनाका समय होने जा रहा है। रात काफी ठंडी थी। मैं सुन्दर नरम भूमिपर ही सोया। गोसीबहन और पेरीन यहीं हैं। खानसाहब तो हैं ही।

पश्चिमी ढगकी आदत हो जानेके बाद यदि हम फिरसे गाँवकी चीजोंको उपयोग में लाना चाहते हैं, तो हमें धीरज और सूझ-बूझसे काम लेना होगा। कलमको बार-बार डुबोना पडता है, यह तो अच्छी बात है। इससे थकान कम होती है। फाउन्टेन पैनसे समयकी बचत होना कोई खालिस वरदान नहीं है। देहाती कलम और स्याहीमें सुधारकी गुंजाइश तो है ही। पर सुधार तभी होंगे जब हम-जैसे लोग इन चीजोंका इस्तेमाल करें।

जिस नियमपर तुमने आपत्ति की थी, तुम्हारी आपत्तिके जवाबमें उसे बदल दिया गया है।

ट्रान्सवाल और ब्रिटिश सरकारोंमें विवाद था। वह मामला उन सरकारोंने पचको सौंप दिया था।

सस्नेह,

तुम्हारा
डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६०२) से, सौजन्य · अमृत कौर। जी० एन० ६४११ से भी

१०३. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

१७ अप्रैल, १९३७

भाई परीक्षितलाल,

मैंने तुम्हें पत्र लिखा ही नहीं। हिन्दू-मिशनको लिखा था। हमें जाँच करनी चाहिए और यदि पता चले कि ईसाई हरिजनोंको प्रलोभन देकर वहका रहे हैं तो इसे उजागर कर देनेपर हमारे लिए कुछ और करना जरूरी नहीं रहता। हरिजनोंको कोई कष्ट हो, तो उसे दूर करना तो हमारा कर्तव्य है ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५८)से। सी० डब्ल्यू० १४३ से भी; सौजन्य : परीक्षितलाल एल० मजमूदार

१०४. पत्र : हसनअली शामजीको

१७ अप्रैल, १९३७

आपका पत्र मिला। आप जिस तरहके सवाल उठाते हैं,[1] सो तो कुछ हदतक सभी धर्मोंके बारेमें उठाये जा सकते हैं। मैं तो पैगम्बरके पूरे जीवनका निरीक्षण करता हूँ, और फिर मुझपर जो छाप पड़ती है, सो कहता हूँ। यदि मैं अपूर्णता और दोष देखने बैठूँ, तो वे मुझे बहुत दिखाई दे सकते हैं। लेकिन ऐसा करनेसे मनुष्य निराशावादी हो जाता है, जबकि निराश होनेका तो कोई कारण होता नहीं है।

अन्तर्नाद सुननेसे सम्बन्धित बात इसलिए रह गई थी कि जवाब देते वक्त आपका पत्र मेरे सामने नहीं था। जिसे अन्तर्नाद सुनना हो, उसे पाँच यमों[2] का पालन करना चाहिए। यमोंके पालनके लिए जो नियम रचे गये हैं, उनका पालन करना चाहिए और यह सब करनेके लिए जितना समय दिया जा सके, उतना नाम-जपको देना चाहिए जिससे नाम-जप इतना स्वाभाविक हो जाये, जितना श्वास लेना होता है; और यह जप इतने सुन्दर ढंगसे चले, जितने सुन्दर ढंगसे हमारा हृदय चलता है। हृदयमें चल रही गतिको हम सुनते नहीं हैं, लेकिन वह चलती ही रहती है; इसी प्रकार जप चलना चाहिए। इस विषयपर मैं अपने लेखोंमें बहुत बार लिख चुका हूँ।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई

१. ये सज्जन गांधीजी को इस्लामकी खामियोंके बारेमें बार-बार लिखते आ रहे थे।

२. पतंजलिके **योगशास्त्र** के अनुसार यम पाँच हैं : अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह।

१०५. भाषण : गांधी सेवा संघकी सभा, हुदलीमें—२

१७ अप्रैल, १९३७

भाइयो और बहनो,

पहले तो मैं कुछ ऐसी बातें कह देना चाहता हूँ जिनका इस विषयसे कोई सम्बन्ध नही है। डॉ० बत्रा यहाँ आये हुए हैं। मैंने उनसे कहा था कि वे यहाँ सफाई रखनेमें कुछ मदद दें। उन्होने कुछ बातें मुझसे कही हैं। वे आपको सुना देना चाहता हूँ।

एक तो यह कि यहाँ मिट्टी नहीं है, बालू है। सफाईके लिए किसी-न-किसी अंशमें क्षारकी जरूरत होती है। बालूमें क्षार नही होता। वह मिट्टीमें पाया जाता है, इसलिए मिट्टी हमारा साबुन है। मिट्टीसे हाथ जितना साफ होता है, उतना बालूसे नही। इसलिए इसका हमें खयाल रखना चाहिए। या तो टट्टियोके पास हाथ साफ करनेकी मिट्टीके ढेर लगा दिये जायें या सदस्य साबुन इस्तेमाल करें।

दूसरी बात यह है कि कुछ लोग अपने जूठे बर्तन पानीके बड़े बर्तनोमें डुबो देते हैं। यह आरोग्य और मजहब दोनों दृष्टियोसे बुरा है।

तीसरी बात, परोसनेवाले पतली चीज परोसते समय चम्मचके बजाय कभी-कभी हाथसे काम लेते देखे गये हैं। हमें पतली चीजें हमेशा चम्मच या कलछीसे ही परोसनी चाहिए। सत्यके पुजारियोको छोटी-छोटी बातोकी ओर भी ध्यान देना चाहिए। अगर वे ऐसा नही करते तो यह आलस्य है, और आलस्य भी एक प्रकारकी हिंसा ही है।

अब प्रस्तुत विषयको लेता हूँ। यह बहस हो गई, यह तो मैं खुद चाहता था, क्योंकि मेरा दिमाग कुछ गोलमालमें पड गया था और अब भी बिलकुल साफ तो नही है। गगाधरराव[1] और आचार्य भागवतने जो-कुछ कहा, उसे मैं पूरी तरह नही मानता। यहाँतक तो ठीक है कि हर बातमें हरएक आदमी अपनी बुद्धि नही चला सकता। जहाँ हमारी बुद्धि नही चले वहाँ अपने बड़ोंसे पूछ सकते हैं — पूछना आवश्यक है। लेकिन यहाँ ऐसी बात नही है। विधान-सभाओंमें जायें या न जायें, इसपर आप लोगोकी राय मैं खुद जानना चाहता था। यह कोई ऐसी बात नही है कि जो तीनों कालोके लिए एक हो। मैं मानता हूँ कि विधान-सभाओके प्रति मेरा जो विरोध था, वह अब कम हो गया है। लेकिन इसमें कोई तत्वकी हानि नही हुई है। जहाँ तत्व की हानि नही होती, वहाँ मैं यह भी तो देखता हूँ कि जनता क्या चाहती है। मैं सत्यका पुजारी हूँ, और जनताका सेवक भी हूँ। मुझपर आबोहवाका असर होता

१. गंगाधरराव देशपाण्डे, जो 'कर्नाटक केसरी' के नामसे भी प्रख्यात थे।

है। जैसी आबोहवा होती है, उसके मुताबिक उस समय अपने खयालात देता हूँ। मैंने जो-कुछ पटनामें कहा, उस समयके लिए दुरुस्त था। फैजपुरमें जो कहा उस समयकी आबोहवाके लिए वही ठीक था। आबोहवाका सामना करनेका सामान मेरे पास रहता है। बारिश आई तो छाता लगा लिया, ठंड आई तो गरम कपड़ा पहन लिया और गरमियोंमें मलमल पहन ली — जैसी हवा होती है, उसके अनुसार लिबास पहनकर हम अपने बदनको बचाते हैं। लोग भी कहते हैं, यही ठीक है। मेरे खयालातमें कोई तब्दीली नहीं हुई है। जैसी आबोहवा देखता हूँ उनके अनुसार उन्हें प्रकट करता हूँ।

अब काकासाहबने जो सवाल किया उसको लेता हूँ। वे पूछते हैं कि १९२० से १९२२ तक असहयोगकी बातें करनेवाला जो मैं था, वही अब भी हूँ या बदल गया हूँ? मेरा जवाब यह है कि मैं तो वही हूँ। अगर मैं तब असहयोगी था तो अब भी हूँ। लेकिन उस समय भी दरअसल मैं सहयोगी [कोऑपरेटर] ही था। एक अंग्रेज मजिस्ट्रेटने मुझसे कहा था कि तुम असहयोगी बनते हो, लेकिन दिलसे सहयोग चाहते हो। मैंने कहा, बात तो ठीक है। असहयोग कोई ऐसी चीज थोड़े ही है जो मैंने तीनों कालोंके लिए ले ली हो। जब मैं देखता हूँ कि हिन्दुस्तान सहयोगसे आगे बढ़ सकता है, तो उसे इख्तियार करूँगा। २१ दिनके फाके[1] के बादकी बात है। मैंने एक वक्तव्यमें कहा था कि सहयोग तो मेरा धर्म है, और मैं उसीके लिए मर रहा हूँ — बशर्ते कि वह इज्जतसे मिले।

आज विधान-सभामें हम सहयोग देने नहीं, लेने जा रहे हैं। आज तो आबोहवा बदल गई है। जैसी वह बदलेगी हमें दवा ढूँढ़नी होगी। एक बात जो कल प्रेमाबहन ने कही,[2] उसका भी जिक्र करना चाहिए। यदि उसने मजाकमें या व्यंग्यमें कही हो तो कोई हर्ज नहीं है। लेकिन मैं नहीं समझ सकता कि यह कैसा मजाक है। मौका तो मजाकका नहीं था। मैं तो यही समझा कि वह उनके तजरबेकी बात थी। अगर ऐसा था तो वह दुरुस्त नहीं है। मेरा तजरबा तो बिलकुल उलटा है। मैं जो बना हुआ हूँ वह इस तरह नहीं बना हूँ। जब मैं बिलकुल छोटा था, तभी सत्य मेरे जीवनमें आया। १८ वर्षकी उम्रमें अहिंसा भी आ गई। मुझमें कोई बुद्धि नहीं थी। आज भी मुझे बुद्धिका अभिमान नहीं है। मास्टर लोग स्कूलमें मुझे कोई चालाक लड़का नहीं समझते थे। वे जानते थे कि लड़का अच्छा है, होशियार नहीं। फर्स्ट क्लास और सेकण्ड क्लास तो मैं जानता ही नहीं हूँ। मुश्किलसे पास हो जाता था। मैं तो एक मूर्ख लड़का था। बोलना तक नहीं जानता था। दक्षिण आफ्रिका भी गया तो एक क्लर्क बनकर गया। फीरोजशाह मेहताके समान कहाँ एक-एक दिनके

१. सन् १९३३ में ८ मई से २९ मई तक; देखिए खण्ड ५५।

२. प्रेमाबहन कंटक विधान-परिषदोंके चुनावमें खड़े होनेवाले गांधी सेवा संघके सदस्योंके प्रश्न पर बोली थीं। गांधीजी द्वारा उन्हें यह समझानेपर कि उनके विचारोंमें कभी मौलिकता नहीं आई है, प्रेमाबहनने एक वर्षतक कोई सार्वजनिक भाषण न करनेका निश्चय किया। देखिए "पत्र: प्रेमाबहन कंटकको"; १३-५-१९३७ भी।

हजार-डेढ हजार रुपये लेकर नही गया। एक बरसके १५० पौंड मिलनेवाले थे। कायदा-कानूनमें तो मै शून्य था। मै कोई विद्वान् नही हूँ। सत्यका पुजारी हूँ। दक्षिण आफ्रिकामें गया तो मुसलमानोके बीचमें पहुँचा। मुहम्मद साहबका तो मैंने नाम ही सुना था। मुसलमानोके विषयमें मै जानता ही क्या था? उन लोगोको मैंने हरिश्चन्द्रका आख्यान सुनाया। इस बेहूदगीका भी उनपर काफी असर पड़ा। उसके बहुत दिन बाद मै राजनीतिमें भाग लेने लगा। लेकिन मुख्य सामान पहलेका था। जब मैंने देखा कि सत्य और अहिंसाके लिए मुझे राजनीतिमें पड़ना जरूरी है, तब मैं पड़ा। लेकिन मेरा अनुभव यह है कि मेरी राजनीतिके कारण लोगोपर मेरा असर नही है। यह सौ फीसदी सत्य है। सासवडमें विपरीत तजरबा हो तो मैं नही जानता। मेरा तो बराबर यही अनुभव रहा है। चम्पारनमें भी गया तो व्रजकिशोर बाबू[1] के कहनेसे गया। लेकिन उन्हें तो सिर्फ देखा ही था। लोग भी उन्हे वकील बाबूके नामसे पहचानते थे। उन्होने काग्रेसका नाम भी नही सुना था। मैंने उन सबसे कह दिया कि काग्रेसका नाम भी न ले। राजेन्द्रबाबूके तो ख्वाबमें भी यह बात नही थी कि वह उन्हें काग्रेसमें ले आयें। यह तो बादमें मेरे दिमागमें आई। आज भी हिन्दुस्तानमें हजारो लोग ऐसे हैं, जिन्हें स्वराज्यकी कोई दरकार नही। सेगाँवको ही लीजिए, जहाँपर मैं पड़ा हुआ हूँ वह तो महाराष्ट्रमें है और महाराष्ट्रकी जनताकी वृत्ति काफी राजनीतिक है। पर वहाँके लोग भी स्वराज्य नही चाहते। मैं उनसे काग्रेसकी बात नही करता, क्योंकि वह उनकी समझमें नही आती। छुआछूतकी बात वे समझते है, और उसका विरोध भी करते हैं। औरतोसे मैं चरखेकी बात कर सकता हूँ। बच्चोकी बातें करता हूँ। अगर विधान-सभाकी बात उनसे करने जाऊँ तो वे पूछेंगी कि क्या वहाँ जाकर हमारे लिए दो बोरे अनाज ले आओगे? आज सारे हिन्दुस्तानकी हालत क्या है? जनता सिर्फ रोटीकी बात समझती है। उसे राजनीतिकी दरकार नही है। मैंने सारे हिन्दुस्तानमें आन्दोलन किया, लेकिन काग्रेसकी बात करके नही। आजतक मैंने कही भी इस तरहसे काम नही किया। आज चम्पारनमें हजारोकी तादादमें लोग काग्रेसकी बात करते हैं, यह उस छः महीनेके कामका परिणाम है, जिसमें काग्रेसका नाम भी नही लिया जाता था। वे काग्रेसको इसलिए मानते है कि वे उन बाबू लोगोको अपना खैरख्वाह समझते हैं।

आप लोगोमें भी कुछ ऐसे हो सकते है, जो यह मानते है कि राजनीतिकी बदौलत ही सत्य और अहिंसाका असर होगा। उनसे मैं साफ शब्दोमें कह देना चाहता हूँ कि सत्य और अहिंसा कोई परतन्त्र चीजें नही हैं। सत्य और अहिंसा स्वतन्त्र हस्तियाँ हैं। जिसे खानसाहब अल्लाह कहते हैं, मैं राम कहता हूँ और ईसाई क्राइस्ट या गॉड कहते हैं उसके पुजारी आप बनना चाहते हों तो बनें और अगर न बनना चाहें तो उसका कुछ नुकसान नही है। अगर ईश्वर स्वतन्त्र चीज है तो उसे न राजनीतिकी जरूरत है और न आपकी तथा मेरी। अबतक करोड़ो उसे खोजनेवाले

१. प्रभावतीके पिता।

हो गये हैं, लेकिन उसकी बहुत थोड़ी झाँकी देख पाये हैं। मैं भी तो उसकी पूजा आज पचास सालसे करता आ रहा हूँ। मैं उसमें रोज नई ताकत देखता हूँ, नई बातें पाता हूँ। अगर आज भी आपसे मुझे बहस करनी पड़ती है तो उसका मतलब यही है कि मैं उन चीजोंको जितना अपनाना चाहता था, उतना अपना नहीं सका। आचरणका बल क्या है? रामनाम तो एक ही है। लेकिन एक आदमी रामनाम लेता है तो असर पड़ता है, दूसरेका नहीं। इसका क्या कारण है? एकने उसे अपनाया, दूसरा सितार, या दिलरुबाकी तरह केवल ध्वनि निकालता रहता है। तोतेके कण्ठसे भी रामनाम निकलता है, पर वह उसके हृदयतक थोड़े ही पहुँचता है। वह तो उसके महत्वको समझता ही नहीं। मैं कोई छोटी चीजोंका उपासक नहीं हूँ। आजकल जो आदमी यह कहता आया है कि मेरा कोई गुरु नहीं है, जिसने किसी देहधारीको गुरु नहीं बनाया, क्या वह ऐसी चीजका पुजारी होगा जो राजनीतिपर निर्भर है? सत्य और अहिंसा महँगी चीजें हैं। वे निरपेक्ष हैं, वे अनोखी चीजें हैं और उनकी उपासनाके औजार भी अनोखे हैं। प्रेमाबहन इस बातको भूल जायें।

जमनालालजीने कहा कि आज हम विधान-सभामें जायें तो सत्य और अहिंसा नहीं चला सकते। उन्होंने बड़ी भारी बात कह दी। मैं तो इसे बिलकुल नहीं मानता। अगर सत्य और अहिंसा नहीं चल सकती तो लोकतन्त्र (डेमोक्रेसी) भी नहीं चल सकता, क्योंकि उस हालतमें वह भी सत्य और अहिंसाके खिलाफ होगा। अगर हम डेमोक्रेसीको मानते हैं, तो करोड़ोंका सच्चा हित हमें करना होगा। हितका विचार करनेके लिए सब एक जगह तो बैठ नहीं सकते हैं। चन्द प्रतिनिधि बनाने ही होंगे। वे अगर जनताके सच्चे खिदमतगार हैं, सच्चे डेमोक्रेट हैं तो शुद्ध हृदयसे वे जनताकी आवाजको समझनेकी कोशिश करेंगे और उसे ही प्रकट करेंगे। बीसके सालमें जब कांग्रेसका ध्येय बदलनेका प्रश्न उपस्थित हुआ, और विपिनचन्द्र पालने स्वराज्य शब्दके बजाय "डेमोक्रेटिक स्वराज्य" रखनेको कहा, तो मैंने मुखालफत की थी। क्योंकि जब मैं स्वराज्य शब्दको छान-बीनकर देखता हूँ तो मैं पाता हूँ कि बगैर डेमोक्रेसीके स्वराज्य हो ही नहीं सकता। पाल बाबूका अर्थ तो स्वराज्य शब्दमें ही आ गया था। स्वराज्यमें भी विधान-सभा तो कुछ-न-कुछ इसी तरहकी रहेगी। मुमकिन है कि उसका बाहरी रूप बदल जाये। महल और कुर्सियोंके बजाय आज हम जैसे बैठे हैं वैसे बैठें। करीब-करीब तिहाई मतदाता हो गये हैं। आगे चलकर शायद बारह करोड़ हो जायेंगे। आज तीन करोड़ हो गये हैं, यह छोटी बात नहीं है। इनके पास हमारे हजारों आदमी चले गये। ऐसे तो अभीतक नहीं गये थे। इतनी जगह हमने कांग्रेसका पैगाम पहुँचाया। यह छोटी बात नहीं है। गांधी सेवा संघके सदस्योंका इस पैगामको ले जाना ठीक है या नहीं, इस बातको मैं सोचने लगा। जिन्होंने पूछा उनसे यही कहा कि जानेमें हर्ज नहीं है। जबतक कांग्रेसमें सत्य और अहिंसाको स्थान है, और जबतक वह सन् १९२० के कार्यक्रमको उड़ा नहीं देती है तबतक हम भी तो कांग्रेसकी ही संस्था हैं। हम कांग्रेसकी बनाई हुई संस्था नहीं हैं, लेकिन स्वनिर्मित, अपनी इच्छासे सेवा करनेवाली (वालंटरी) संस्था हैं। चरखा संघ, ग्रामोद्योग संघ,

वे कांग्रेसकी बनाई हुई संस्थाएँ है। लेकिन गांधी सेवा संघ उसकी बनाई हुई नही है। १९२३ में, जब मैं छः सालकी सजा काट रहा था और मेरे छूट जानेकी कोई बात नही थी, तब १९२० के प्रोग्रामको बचानेके लिए यह बना। अगर कल कांग्रेस रचनात्मक कार्यक्रमको छोड दे तो भी संघको मिटना नही है। वह उसे चलायेगा। गांधी सेवा संघका शाश्वत (हमेशाका) काम है रचनात्मक काम। उसके मिटनेपर संघ ही मिट जायेगा। १९२३ में मोतीलालजी आदि नेताओने कौंसिलोका कार्यक्रम हाथमें लिया। हमको उनसे झगड़ा नही करना था, और कांग्रेसकी इस असली चीज को कायम भी रखना था। क्योंकि मैं तो मानता हूँ कि यदि कांग्रेस १९२० के प्रोग्रामको छोड़ दे, तो वह मिट जायेगी। इस दशामें हम और कर ही क्या सकते थे? आज भी मैं कह सकता हूँ कि इसको छोडकर और दूसरी चीज नही है। लेकिन रचनात्मक कार्यक्रम सत्य और अहिंसाकी तरह तीनो कालोके लिए नही है। चरखेकी ही बात लीजिए। हम उत्तरी ध्रुव, हिमालयकी चोटीपर या तिब्बतमें चले जायें तो वहाँ कपासकी बात नही चलेगी। फिर भी मैं कहता हूँ कि रचनात्मक कार्यक्रम करोड़ोंकी भलाईकी चीज है। विधानसभा चन्द लोगोके लिए है, पर रचनात्मक कार्यक्रम सबके लिए है। इसीलिए तीन कोटिसे बाहर जो तीस करोड़ है, उनमें मेरा रहना सही है। विधानसभा सबके लिए नही है। उसमें थोड़े ही लोग जायेंगे और जा सकते है। जिन लोगोने मुझसे लिखकर पूछा, उनसे मैंने कहा कि तुम इस झंझटमें न पड़ो। लेकिन उन्होंने उलटा ही किया। कहने लगे क्या करें, मजबूर हैं। जिन लोगोको हम रख लेना चाहते थे, उन्हें भी सरदार जबरदस्ती ले गये। पंजाबमें डॉ० गोपीचन्दका उदाहरण आपके सामने है। औरोके साथ भी ऐसा ही किया गया। यह सब बेवफाई सरदारने की। मुझे भी मानना पड़ा कि उन्होंने किया सो ठीक ही किया। अगर वे ऐसा न करते तो कमसे-कम गुजरातमें तो हार ही जाते। अगर मैं राजाजीसे कहता कि तुम न जाओ, तो वे न जाते। लेकिन अगर आज कोई मुझसे पूछे तो मैं कहूँगा उन्होंने सही किया है। इसका इतिहास बडा रोचक है। राजाजीने मेरी राय पूछी, लेकिन जानेसे पहले नही, उसके बाद। उन्होंने अपना फर्ज समझा और चले गये। मैंने कहा कि यह मैं पसन्द नही करता। लेकिन उन्होंने ठीक ही किया। मद्रासमें जो इतना काम हुआ, उसका इतिहास है। वहाँ काम करनेवाले चरखा संघके लोग हैं। ज्यादासे-ज्यादा काम उन्हींके जरिये हुआ। आज राजगोपालाचारी तो निकल गये। कल यदि मैं सरदार, राजेन्द्रबाबू या जमनालालजीसे कहूँ तो वे भी हट जायेंगे। पर ऐसा करनेसे हमारा संघ एक छोटा-सा गिरोह बन जायेगा।

हम तो चाहते हैं कि सभी लोग संघके सदस्य बनें। लेकिन आज मेरे सामने यह सवाल है कि हमारे सामने जो आदमी है अगर उन्हें हम रोक ले और सबको कौंसिलोमें जानेसे मना करे, तो क्या हम अपना काम बिगाड लेगे? अगर ऐसा हो तो कांग्रेस आदमी ढूंढने कहाँ जाये? आखिर गांधी सेवा संघके जितने सदस्य है, उन्होंने किया भी तो यही है। मुझे लगता है कि उन्होंने धर्मका काम किया है।

अगर वे ऐसा नही करते तो कांग्रेसको जितनी जीत मिली है, नही मिलती। कांग्रेसके मुकाबलेमें संघ कोई चीज नही है। कांग्रेस करोड़ोंकी बनी है। हम उसे छोड़ नही सकते। उसने इस कार्यक्रमको स्थायी रूपसे अपना लिया है। यह आपद्धर्म नही है। यह बात खुल्लमखुल्ला हमारे सामने है। हम उसे छोड़ नही सकते। जो लोग आज विधानसभाओंमें जाते हैं, वे सरकारी विधानसभाओंमें नही जाते, अपनी विधानसभाओं में जाते हैं। मैंने जो कह दिया है, वह सत्य है। हम जनताके प्रतिनिधि बन गये हैं। पहले सरकारके नुमाइन्दे या मुट्ठी-भर लोगोंके प्रतिनिधि विधानसभाओंमें जाते थे। जनताके प्रतिनिधियोंने अपनी शर्तें सरकारके सामने पेश की हैं। विधानसभाओंमें सत्य और अहिंसाको यदि चलाना है, तो आप नही तो कौन चलायेगा? हमें तो कांग्रेसकी शक्तिको बढ़ाना है। तब आप पूछेंगे कि तू क्यों कांग्रेससे निकल गया? मैं कांग्रेससे निकल गया हूँ तो उसकी अधिक खिदमत करनेके लिए। जब तक कांग्रेसको मेरी खिदमतकी जरूरत है, मैं खुद ही खिदमत करता रहूँगा। मैं कोई मायूसी नही महसूस करता। मैं सेगाँवमें निराश होकर नही जाकर बैठा हूँ। जो-कुछ मेरी थोड़ी-बहुत शक्ति हैं, वह कांग्रेसके लिए है। और कांग्रेस मेरी है। तो मैं आपके सामने यह जो विचार पेश कर रहा हूँ, उनपर आपके विचारोंका भी असर पड़ा है। मेरे कहने का सारांश यह है कि हमें इस कार्यक्रमको भी जगह देनी होगी। लेकिन मर्यादा यह है कि हम अपने ही काममें लगे रहेंगे। जब हमारे सरदारका हुक्म होगा — सरदार यानी वल्लभभाई नही, किशोरलाल — तो कौंसिलोंमें भी जाना है।

अब धर्माधिकारीने जो पूछा कि हम सत्याग्रहीके नाते विरोधी संस्थाओंमें भी विरोध करनेके लिए प्रवेश कर सकते हैं या नही, सो ठीक है। हम विरोधी संस्थाओं में दाखिल क्यों न हो? लेकिन सत्याग्रहकी मर्यादाओंको ध्यानमें रखें। दगाबाजी या हिंसा करनेके लिए हम नही जायेंगे। खुल्लमखुल्ला विरोध करनेके लिए जाना तो हमारा कर्तव्य भी हो सकता है। लेकिन यहाँ तो यह सवाल ही नही है। विधान-सभा हमारी विरोधी सस्था थोड़े ही है। विधानसभा तो मुझे प्रिय है। वह तो मेरी है। गवर्नर हाकिम होकर बैठ गया, लेकिन संस्था तो मेरी है। उड़ीसाका गवर्नर इस बातको मानता है। मैं विधानसभाकी मार्फत इस (मौजूदा) राज्यपद्धति (सिस्टम) को गिराना चाहता हूँ। वहाँ हम लोग अपनी ताकतको बढ़ानेके लिए जा रहे हैं। अब हम विधानसभाओंको निश्चेष्ट बनाने नही जा रहे हैं। हम तो दुश्मनके यहाँ भी जाते हैं तो उसका हृदय-परिवर्तन करानेके लिए जाते हैं। मान लीजिए शराबियोंकी एक मजलिस है, और वह हमें बुलाती है कि आओ और शराबखोरीके खिलाफ जो-कुछ कहना है, कहो। तो बस, हम चले जायेंगे। कोई कहेगा कि वे हमें फूंक देंगे। तो ठीक है, हम मर जायेंगे। किस दृष्टिसे जाते हैं, यह महत्वकी बात है। सत्यको बढ़ानेके लिए जाते हैं, या कम करनेके लिए? हम विधानसभामें सत्यको चलानेके लिए ही जायें। विधानसभा तो हमारी ही है न? बहुमत तो मेरा ही है न? अब हमें मुकाबला करनेका मौका दिया है, तो क्या हम बाहर बैठे रहें? शत्रुके अखाड़ेमें सरेआम जा सकते हैं, तो क्यों न जायें? उससे भीख माँगने नहीं, उसकी शक्तिको

कम करनेके लिए। तो क्या पाँच-सात लाख रुपये नाहक ही खर्च किये हैं। आज पाँच-सात लाख रुपये हमने खर्च किये तो खैर। लेकिन जब कांग्रेसकी प्रतिष्ठा बढ़ जायेगी तो एक कौड़ीका भी खर्च नही करना पड़ेगा। हम रचनात्मक कार्यक्रमका दम भरते हैं। मैं 'हरिजन' में चीख-चीखकर पूछता हूँ कि कितने 'चरखा-विशारद' हैं, कितने 'अस्पृश्यता-निवारण विशारद' है? जवाब "शून्य" है। ऐसा न होता तो खर्च करनेका सवाल ही नही उठता। हमें अपनी सारी शक्तियोको सगठित करके सेवा करनी चाहिए। सत्य और अहिंसाका पूर्णतया पालन करते हुए कदम बढाना चाहिए। निर्भयता और अनुशासन, ये दो हथियार अपने पास रखने चाहिए। उनका उपयोग पार्लियामेंटमें करना होगा। कार्लाइलने कहा था कि हाउस ऑफ कॉमन्सके सदस्योको अक्लकी ज्यादा जरूरत नही होती। जहाँ डेमोक्रेसी है, वहाँ ऐसा ही होगा। मुख्य चीज अनुशासन है। अपने नेताकी आज्ञाका पालन करे और वहाँ मौन रहकर तकली कातते रहे, ऐसे लोगोकी आवश्यकता है। उन्हे कायदा या विधान-शास्त्र जाननेकी जरूरत नही है। जो हमारा घर है, उसमें क्यो न जायें? लेकिन हाँ, सब नहीं जा सकते। तो भी वोट सबको देना है। मैं अप्पाकी बात नही मानता। प्राइमरी वोटर तो सबको होना ही है। फिर मुझसे पूछेंगे कि तब तुम क्यो नही वोटर बने? मेरा कारण दूसरा है। यह बात नही कि सबको वोटका अधिकार नही मिला, इसलिए मैंने भी वोटर नही बनना चाहा। मेरी स्थिति दूसरी है और वह मुझ तक ही सीमित है। सघके सदस्य सत्यके पुजारी हैं। जिसे गाधी सेवा सघका हुक्म होगा वह चला जायेगा। यह सवाल एक व्यक्तिका नही है। इस दृष्टिसे यह प्रलोभन या स्वार्थकी बात नही है। जो प्रलोभन या स्वार्थके वश होकर जायेगा, वह गाधी सेवा सघ और सत्यका भी द्रोही है। जिसे चरखेका चौबीसो घटे ध्यान करना है, वह विधानसभामें बैठकर भी कर सकता है। वहाँ उसे दिमाग थोड़े ही चलाना है। नेताका हुक्म होते ही हाथ उठा देना है। यह आपद्धर्म नही है। यह तो हमारा धर्म ही हो गया है। हम तो दरिद्रनारायणके सेवक है। सेवक बनकर ही जायेंगे और कांग्रेस बुलायेगी तो जायेंगे। अगर हमारी शर्त पर हमने मन्त्रित्व (मिनिस्ट्री) लिया तो सम्पूर्ण स्वराज्यका रास्ता पा लिया। ऐसे लोग चले जायें तो ग्यारहमें से एक सूबेमें भी नही हारेंगे। अगर कांग्रेस न बुलाये तो यही पड़े है। यह श्रेष्ठ-कनिष्ठ (सुपीरियर-इन्फीरियर)का सवाल नही है। हमारे लिए रचनात्मक कार्यक्रम और यह कार्यक्रम दोनो समान हैं।[1]

जहाँ तक निष्ठाकी शपथ लेनेका सवाल है, ऐसे व्यक्तिको विधानसभामें नही जाना चाहिए जिसे शपथ लेनेमे नैतिक आपत्ति हो। जहाँ तक मैं सविधानको समझता हूँ यह कोई धार्मिक शपथ नही है और इसका हमारी तुरत और मूर्त स्वराज्यकी माँगसे जरा भी विरोध नही है।

गांधी सेवा संघके तृतीय वार्षिक अधिवेशन, (हुबली, कर्नाटक)का विवरण, पृ० २४-३०

१. अगला अनुच्छेद हरिजन, १-५-१९३७ से लिया गया है।

१०६. रासका त्याग

खेड़ा जिलेकी ओरसे श्रीमती भक्तिवहन[1], श्री आशाभाई; धाराला, वारैया आदिके पुरोहित श्री रविशंकर[2] तथा श्री रावजीभाई[3] सरदारकी प्रेरणासे मेरे पास आये थे। संयोगसे सरदार भी मौजूद थे। प्रतिनिधियोंको मालूम हुआ था कि मेरा झुकाव वारडोली ताल्लुकेमें कांग्रेसका अधिवेशन करनेकी ओर था। जाँच-समितिका वक्तव्य मैं पढ़ गया था। मैं मानता हूँ कि वड़ी लम्वी किन्तु मधुर चर्चाके वाद मैं प्रतिनिधियोंको वारडोली ताल्लुकेमें कांग्रेसका अधिवेशन करनेकी वात समझानेमें सफल हो सका था। मेरे पास सवल कारण तो एक ही था। खेड़ा जिला वलवान है। रासने जो वलिदान किया है उससे कोई अनजान नहीं है। रास जो काम अपने सिर लेता है वही उसको फवता है, यह भी मैं मानता हूँ। किन्तु जव दूसरे जिले या ताल्लुके मैदानमें आयें, तव वलवान प्रतियोगीका कर्तव्य होता है कि वह निर्वलको आगे वढ़नेका अवसर दे। मैंने प्रतिनिधियोंसे इस प्रकारका त्याग करनेकी वात कही, और उन्होंने मेरी वात स्वीकार कर ली। दरबार साहवको जव इस निर्णयकी खवर मिली, तव वे नाराज हुए और मुझे प्रेम-भरा किन्तु तीखा पत्र लिखा। उस पत्रमें उन्होंने खेड़ा जिलेकी योग्यता अनेक प्रमाणोंसे सिद्ध की।

जिनका ऐसा मत है, उन्हें मैं एक ही उत्तर दूंगा : यदि आप कांग्रेसकी अर्थात् गुजरातकी शक्ति वढ़ाना चाहते हैं तो जो निर्वल हैं, क्या आप उन्हें वलवान वनने देंगे या जो वलवान हैं, उन्हें अधिकाधिक वलवान वनने देंगे? वलवान खेड़ा जिलेमें रास सवसे अधिक प्रसिद्ध हुआ। अतः रासके प्रतिनिधियोंको मेरा पहला और आखिरी जवाव उपर्युक्त ही था। वीचमें तो वहुतेरी वातें कीं; क्योंकि जहाँ आगे-पीछेकी अनेक वातें विचार करने की होती हैं, वहाँ एक ही कारण मनुष्यसे कोई काम नहीं कराता, और भी वहुतसे दृश्य और अदृश्य कारण होते हैं।

कांग्रेसका अधिवेशन चाहे गुजरातके किसी भी गाँवमें हो, वह समूचे गुजरातमें हो रहा है, ऐसा समझकर गुजरातियोंको काम करना है। कांग्रेसके अधिवेशनका वड़ेसे-वड़ा काम प्रदर्शनीको सफल वनाना है। यह उसका अविभाज्य अंग है। सुन्दर प्रदर्शनी करनेसे हमारा कार्यकौशल वढ़ता है; लाखों लोगोंको अमूल्य शिक्षा मिलती है, और सभी गाँवोंमें जान आ जाती है, क्योंकि ग्रामोद्योगोंको प्रोत्साहन देना प्रदर्शनीका मुख्य उद्देश्य होता है। अतः मैं तो यह आशा करता हूँ कि कांग्रेसका अधिवेशन

१. भक्तिवा, दरबार गोपालदास देसाई की पत्नी।

२. रविशंकर व्यास, जो लोगोंमें रविशंकर महाराजके नामसे जाने जाते हैं।

३. रावजीभाई पटेल।

बारडोली ताल्लुकेमें हो रहा है, इसे भूलकर, गुजराती लोग इस बातकी रट लगायें कि वह गुजरातमें हो रहा है, और अपनी पूरी शक्तिका उपयोग कांग्रेसके रचनात्मक कार्योंको सशक्त बनानेमें करें।

गुजरात कई बातोमें पिछडा हुआ है। एक बातमें सब प्रान्तोसे पिछडा हुआ है — अस्पृश्यताको दूर करनेमें। जो छुआछूत अब भी गुजरातमें देखनेमें आती है, वह दूसरे प्रान्तोमें दिखाई नही देती। यह छुआछूत जड़से नष्ट होनी चाहिए। गुजरात खादीका उत्पादन करनेमें सब प्रान्तोसे पीछे है। बारडोलीकी तो प्रतिज्ञा थी कि छ: महीनेमें इस ताल्लुकेमें घर-घर चरखा चलेगा और खादीके सिवा कोई दूसरा कपड़ा यहाँ व्यवहारमें ही नही लाया जायेगा; साथ ही अस्पृश्यता जड़से नष्ट हो जायेगी। क्या बारडोली तथा समस्त गुजरातके लोग आजसे ऐसी तैयारी करेंगे कि जिससे सचमुच प्रान्तमें खादीका प्रचलन हो जाये? गुजरातसे गो-सेवाके नामपर लाखो रुपया जाता है, किन्तु गो-माताका महत्व कौन जानता है? यहाँ गायके दूधका उत्पादन कितना होता है? जितना होता है, उसकी बिक्रीमें कितनी अडचन होती है। सरदारका यह प्रण है कि कांग्रेसके अधिवेशनके समय गायका दूध सबको दिया जायेगा। यदि इस प्रणका पालन करना है, तो बारडोली ताल्लुकेमें आज से ही गायोको इकट्ठा करना शुरू कर देना चाहिए, और अधिवेशनके समय गाय-बैलोका अद्वितीय प्रदर्शन होना चाहिए। फिर, सूरत जिला शराबके लिए प्रख्यात है। अगर कांग्रेसके अधिवेशनसे पहले सूरत जिलेसे शराबका बहिष्कार कर दिया जाये, तो बडा सुन्दर काम हो जाये। इन सब कामोमें स्त्रियाँ बडा भारी भाग ले सकती हैं। क्या वे लेंगी? कांग्रेस का अधिवेशन बारडोली ताल्लुकेमें हो, तो वह खेडा जिलेमें होनेके समान है, रासमें होनेके समान है — ऐसा समझकर क्या रासके पाटीदार तथा धाराला, बारैया, ठाकुर — जो भी आप उन्हें कहते हो — मैंने जो काम बताये हैं, उन्हें हाथमें लेंगे? रास का त्याग तो उज्ज्वल है ही; उसका यश तो उज्ज्वल है ही; किन्तु रासमें कांग्रेस का अधिवेशन न होनेके बावजूद यदि रास अपना पूरा-पूरा सहयोग दे, तो वह अपनी कीर्तिमें वृद्धि करेगा और उतने अंशमें अपने बलकी भी वृद्धि करेगा।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १८-४-१९३७

१०७. सलाह: नवविवाहित दम्पतियोंको[1]

हुबली
[१८ अप्रैल, १९३७][2]

तुम्हे जानना चाहिए कि मैं इन संस्कारोंमें उसी हद तक विश्वास रखता हूँ जिस हद तक वे हमारे अन्दर कर्तव्यकी भावना जगाते है। मैं जबसे स्वतन्त्र विचार करने लगा हूँ, तभीसे मेरी मनोवृत्ति ऐसी रही है। तुमने जो मन्त्र दोहराये और जो प्रतिज्ञाएँ ली वे सब संस्कृतमें थीं, लेकिन तुम्हारी खातिर उन सबका तर्जुमा किया गया। मूल संस्कृत तो था ही, क्योंकि हम जानते है कि संस्कृत भाषामें वह शक्ति है जिसके असरको हम सब पसन्द करते हैं।

इस सस्कारमें पति एक इच्छा यह व्यक्त करता है कि वधू एक नेक और तन्दुरुस्त बेटेकी माँ हो। इस इच्छासे मुझे चोट नही पहुँची। इसका यह मतलब नहीं कि बच्चे पैदा करना लाजिमी है, बल्कि यह है कि अगर सन्तान चाहिए तो विवाह शुद्ध धार्मिक भावनासे होना जरूरी है। जिसे सन्तानकी जरूरत न हो उसे विवाह करनेकी कतई जरूरत नहीं। कामवासनाकी पूर्तिके लिए किया गया विवाह विवाह नही है। वह व्यभिचार है। इसलिए आजके संस्कारका अर्थ यह है कि संभोगकी इजाजत उसी सूरतमें है जबकि दोनों तरफ सन्तानकी स्पष्ट इच्छा हो। यह सारी कल्पना ही पवित्र है। इसलिए यह कर्म प्रार्थनापूर्वक होना चाहिए। विवाहसे पहले ऐसा प्रणय नही होता जिसका उद्देश्य कामोत्तेजना और इन्द्रियसुख देना होता हो। अगर एकसे ज्यादा सन्तान नहीं चाहिए तो संभोग जीवनमें एक ही बार हो सकता है। जो सदाचारी और शरीरसे स्वस्थ नहीं है, संभोग करना उनका काम नहीं है, और यदि वे करते हैं तो वह व्यभिचार है। अगर तुमने पहलेसे यह समझ रखा हो कि विवाह पाशविक भूख मिटानेके लिए है, तो तुम्हें उस विचारको भूल जाना चाहिए। यह अन्धविश्वास है। यह सारा संस्कार अग्निदेवकी साक्षीमें होता है। अग्निदेव तुम्हारे भीतर ही सारी कामवासनाको भस्म कर दे।

एक और अन्धविश्वास आजकल फैला हुआ है। मैं चाहता हूँ कि उसे तुम अपने दिलोंसे निकाल दो। कहा जा रहा है कि संयम और परहेज बुरे हैं और विषय-वासनाकी अबाध तृप्ति और स्वच्छन्द प्रेम प्राकृतिक है। इससे ज्यादा बरबाद करने-

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। नवविवाहित दम्पति मनु और सुरेन्द्र मशरूवाला तथा निर्मला और ईश्वरदास थे। दोनों विवाह एक ही दिन सम्पन्न हुए। "किसी प्रकारका ऊपरी दिखावा और रीति नहीं की गई। मित्रों या रिश्तेदारोंको निमन्त्रण भी नहीं दिये गये . . .।" गांधीजी ने अपना उपदेश सम्बद्ध पक्षोंको खानगी तौरपर दिया।

२. गांधी — १९१५-१९४८ के आधारपर।

वाला अन्धविश्वास आज तक और कोई नही हुआ। तुममें आदर्श तक पहुँचनेकी शक्ति न हो, तुम्हारा मन कमजोर हो, तो इसीलिए तुमे आदर्शको क्यो गिराओ, अधर्मको धर्म क्यों बना लो? जब दुर्बलताके क्षण आयें तब मै जो-कुछ कह रहा हूँ, उसे तुम याद करना। इस गम्भीर अवसरकी यादसे तुममें स्थिरता और सयम आ सकता है। विवाहका सारा हेतु ही सयम और काम-विकारका परिष्कार है। अगर और कोई हेतु है तो विवाह कोई धार्मिक कृत्य नही है, बल्कि सन्तान पैदा करनेके सिवा और ही किसी उद्देश्यसे की गई वस्तु है।

विवाहका नाता जोडकर तुम मित्र और बराबरवाले बन रहे हो। अगर पति स्वामी कहलाता है तो पत्नी स्वामिनी' है। दोनो एक-दूसरेके मालिक, एक-दूसरेके साथी और जीवनके कार्य और कर्तव्य पूरे करनेमें एक-दूसरेके साथ सहयोग करनेवाले हैं। तुम लडकोसे म यह कहूँगा कि अगर भगवानने तुम्हे ज्यादा अच्छी बुद्धि और भावनाएँ दी है तो तुम उसे लडकियोको भी देना। उनके सच्चे गुरु और पथ-प्रदर्शक बनना, उनकी मदद करना और उनका निर्देशन करना, लेकिन उनके रास्तेमें रुकावट कभी न डालना और गलत रास्ते उन्हें हरगिज न ले जाना। तुममें और उनमें मन, वचन और कर्मसे पूरा मेल रहे, एक-दूसरेसे कुछ भी छिपाया न जाये और दोनो एक आत्मा बनकर रहो।

दम्भ न करना। जो तुमसे न हो सके, उसे करनेकी व्यर्थ कोशिश करके अपना स्वास्थ्य न बिगाड लेना। सयमसे स्वास्थ्य कभी बरबाद नही होता। तन्दुरुस्ती सयमसे खराब नही होती, वह होती है बाहरी निग्रहसे। जो सच्चा सयमी है, उसकी शक्ति और शान्ति दिनोदिन बढती है। सयमका पहला कदम विचारो पर काबू रखना है। अपनी मर्यादा समझकर उतना ही करो जितना हो सके। मैंने तुम्हारे सामने एक आदर्श रखा है—एक सही दिशा प्रस्तुत की है। जहाँ तक हो सके, उसे पानेकी कोशिश करो। लेकिन अगर असफल हो तो दुःख या शर्मका कोई कारण नही है।

मैंने सिर्फ यह समझाया है कि विवाह समर्पण है, नया जन्म है, ठीक वैसे ही जैसे यज्ञोपवीत। मैंने तुम्हें जो-कुछ कहा है, उससे चौंकने या कमजोर बननेकी जरूरत नही। हमेशा लक्ष्य यही रखो कि मन, वचन और कर्मका मेल साधना है। सदा विचार शुद्ध रखनेका ध्यान रखो, फिर सब ठीक हो जायेगा। विचारमें जितनी सामर्थ्य है उतनी किसी और वस्तुमें नही। शब्दसे कर्म होता है और विचारसे शब्द। दुनिया एक महान् विचारका ही फल है और जहाँ विचार शुद्ध और महान् होता है, वहाँ फल भी सदा महान् और शुद्ध होता है। मै चाहता हूँ कि तुम यहाँसे एक उच्च आदर्शका कवच पहनकर निकलो, फिर यकीन रखो कि कोई प्रलोभन तुम्हारा अहित नही कर सकता, कोई अशुद्धता तुम्हे छू नही सकती।

जो विविध सस्कार तुम्हे समझाये गये है उन्हे याद रखना। मधुपर्क-जैसे सादे दीखनेवाले संस्कारको ही लो। इसका अभिप्राय यह है कि अगर तुम सारी दुनियाको खिलाकर खाओगे तो सारी दुनिया तुम्हें मधु यानी शहद या अमृत-भरी दिखाई देगी। त्याग करके भोगना इसीको कहते है।

प्रश्न : लेकिन यदि सन्तानकी इच्छा न हो तो क्या विवाह ही न किया जाये? वरोंमें से एकने पूछा।

उत्तर : बिलकुल नही। मैं शुद्ध प्रेमके लिए शादी करनेमें विश्वास नही रखता। बहुत ही विरले पुरुष ऐसे देखे गये हैं जिन्होने स्त्रियोंके सरक्षणके लिए विवाह किया है, शरीरके संगमके लिए हरगिज नही। लेकिन यह सच है कि ऐसे लोग इने-गिने ही है। मैंने शुद्ध 'वैवाहिक जीवनपर जो-कुछ लिखा है, वह तुम सब पढ लेना। मैंने 'महाभारत' में जो-कुछ पढा, उसका असर मुझपर दिनोदिन बढ़ रहा है। उसमें व्यासजी के सम्बन्धमें कहा गया है कि उन्होने नियोग किया था। उन्हें सुन्दर नही, बल्कि कुरूप बयान किया गया है। उनकी सूरत भयानक बताई गई है। उन्होने कोई हाव-भाव नही बताये, बल्कि सभोगसे पहले उन्होने अपने शरीरपर भी घी चुपड़ लिया था। उन्होने यह कर्म भोगके लिए नही, सन्तानके लिए किया था। बच्चेकी इच्छा होना बिलकुल स्वाभाविक है और यह इच्छा पूरी हो जानेके बाद सभोग नही होना चाहिए।[1]

विकारका पोषण करना प्राकृतिक नियमका उल्लंघन है। सन्ततिकी इच्छा स्वाभाविक है। माता होनेकी इच्छा सभी स्त्रियोंमें देखनेको मिलती है। किन्तु माता होनेकी इच्छा सम्भोगेच्छा नही है। जिसे माता होना है, वह एक बार पतिका संग करनेके बाद संगकी इच्छा ही नही करेगी। वह तो अपनी सन्तानका ही विचार करेगी; उसकी सन्तान हृष्ट-पुष्ट जन्मे, नीरोग जन्मे, उत्तम संस्कारयुक्त जन्मे, इसके लिए ही प्रार्थना करेगी। यह स्वाभाविक नियम तो पशुओंमें भी पाला जाता है। ससारमें व्यभिचार बढ़ता जा रहा है। इसका कारण यह है कि इस प्रकारका विवाह कोई जानता नही।

यह शुद्ध धर्म कठिन नही है। जैसे भूखे-पेट सूखी रोटीमें भी रस आता है, वैसे ही धर्मपालनमें, सयममें भी रस आता है। जो वीर्य संचय कर सकता है, उसकी सभी इन्द्रियोका विकास सहज ही होता है। मनु तो कहते हैं कि प्रथम पुत्र ही धर्मज पुत्र होता है, बाकी सब कामज होते हैं। हमारे शास्त्र अनुभवके आधारपर लिखे गये है, केवल लिखनेके लिए नही लिखे गये। विचारकी शुद्धि करते जायें, और उसका पालन करते जायें, तो कठिन जान पडनेवाले नियमोका पालन भी सहज हो जाता है। ईश्वर यानी महानियम — प्रकृतिका अटल नियम। याद रखो कि तुमसे तीन बार कहलवाया गया कि "मैं नियमका किसी प्रकार उल्लंघन नही करूँगा।" इस नियमको भंग करेगें, तो दण्ड मिलेगा ही। किन्तु यदि नियमका पालन करेगें, तो स्त्री-पुरुषोकी ऐसी जाति उत्पन्न होगी, जो अपने प्रभावसे बड़े-बड़े कठिन काम साध सकेगी। अगर धर्मका पालन करनेवाले हमारे यहाँ थोड़ेसे भी हो तो हमारी जाति बहादुर और सच्चे स्त्री-पुरुषोकी जाति बन जाये।

याद रखो, जबसे मैंने बा को कामवासनाकी नजरसे देखना छोडा तभीसे मुझे विवाहित जीवनका सच्चा सुख मिलने लगा। मैंने भरी जवानी और तन्दुरुस्तीमें ब्रह्मचर्यकी प्रतिज्ञा ली थी। तब मैं माने हुए अर्थमें विवाहित जीवनका आनन्द लूट सकता था। मैंने क्षण-भरमें देख लिया कि मैं — और हम सभी — एक पवित्र कामके

१. इसके आगेके दो अनुच्छेद **हरिजनबन्धु** से लिये गये है।

लिए पैदा हुए हैं। जब मेरा ब्याह हुआ था तब मैं यह नहीं जानता था। लेकिन समझ आनेपर मुझे लगा कि मैंने जिस कामके लिए जन्म लिया है, विवाहसे उसमें मदद मिलनी चाहिए। तब मुझे सच्चे धर्मका पता चला। ब्रह्मचर्यकी प्रतिज्ञा लेनेके बाद ही हमारे जीवनमें सच्चा सुख आया।[1]

यह संयम-धर्म तभी सध सकता है, जब हम भोगका पोषण करनेवाली सभी वस्तुओंका त्याग करें, एक शय्याका त्याग करें, हाव-भावका त्याग करें। मैं जागा, तब यह सब समझा। विवाह भोगके लिए नहीं है, तो किसके लिए है? मेरी समझमें आया कि विवाह जनसेवाके लिए है, और मैंने बा को भी समझाया। निरक्षर होते हुए भी वह मेरे सभी कामोंमें साथ देती रही और मेरे लिए ही नहीं, किन्तु स्वयं स्वतन्त्र रूपसे भी प्रशंसाकी पात्र बनी। वह देखनेमें दुबली-पतली भले लगे, लेकिन उनहत्तर वर्षकी उम्रमें भी वह दिन-रात कड़ी मेहनत कर सकती है। यदि कहीं हमने वासनाके आगे घुटने टेक दिये होते तो हमारा क्या हाल होता।

फिर भी मैं बड़ी देरमें चेता, इस अर्थमें कि मैं कुछ बरस तक विवाहित जीवन बिता चुका था। तुम्हारा भाग्य अच्छा है जो समय रहते चेता दिये गये। जब मेरा विवाह हुआ था, तब परिस्थितियाँ बहुत खराब थीं। तुम्हारे लिए तो बड़ी अनुकूलता है। हाँ, एक बात थी जिससे मेरी नैया पार लग गई। मेरे पास सचाई का कवच था। उसने मेरी रक्षा की और मुझे बचा लिया। सचाई मेरे जीवनका आधार रही है। ब्रह्मचर्य और अहिंसा तो बादमें सचाईसे निकले। इसलिए तुम जो-कुछ करो अपने प्रति और दुनियाके प्रति सच्चे रहो। अपने विचारोंको छिपाओ मत। अगर उन्हें प्रकट करना शर्मकी बात है, तो उन्हें सोचना और भी ज्यादा शर्मकी बात है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-४-१९३७, और हरिजनबन्धु, २५-४-१९३७

१०८. भाषण : हुदलीमें, यज्ञोपवीत-संस्कारके अवसरपर

[१८ अप्रैल, १९३७][2]

तुम[3] आजसे द्विज हुए, यह तो जानते हो न? द्विजका अर्थ क्या है? द्विज यानी वे जिन्होंने दूसरी बार जन्म लिया हो। आज तुम नया जन्म ले रहे हो; मतलब यह कि आज तक तुम्हें जो ज्ञान नहीं था, वह आज हो रहा है। शास्त्रीजी ने तुमसे कहा कि तुम वेदाध्ययनके पात्र बन रहे हो। वेदाध्ययन तो है ही, किन्तु वेदाध्ययनका व्यापक अर्थ होता है धर्म-जीवन। अभीतक तुम्हारा जीवन धर्माधर्मके ज्ञानसे रहित था, अब वह सज्ञान हो रहा है। ऋषि विश्वामित्रने अकालके समय

१. इसके आगेका अनुच्छेद हरिजनबन्धु से लिया गया है।

२. गांधी — १९१५-१९४८ के आधारपर।

३. महादेव देसाईके पुत्र और उनके भाई।

भूखके मारे मास चुराया। चुरानेको तो चुरा लिया, किन्तु उसे खानेसे पहले तो अनेक विधियाँ जो करनी पड़ती हैं—स्नान, सन्ध्या आदि, उनके बिना भोजन हो नहीं सकता। अत स्नान-सन्ध्या करने लगे। किन्तु स्नान-सन्ध्याके नियमका पालन करते-करते उन्हे भान हुआ कि अरे, मेरा कितना पतन हुआ है! एक पेटके लिए मैंने चोरी की। और चोरी भी की तो मांस की। कद-मूल फल खाकर सन्तोष करनेवाला मै वानप्रस्थी, और मैंने पेटके लिए मासपर लालचकी नजर डाली। ऐसा विचार करते हुए उन्हें धर्मका भान हुआ। मासका टुकड़ा लेकर वे, जिस कसाईके यहाँसे मास चुराया था, उसके पास गये और उससे क्षमा माँगी। कसाई तो ऋषिकी क्षमा-याचनासे लज्जित हो गया, और कहने लगा, "ऋषिराज, यह दुकान तो आपकी है, आपको अपनी जितनी भूख तृप्त करनी हो, कीजिए।" ऋषिके ऊपर उसका बड़ा प्रभाव पड़ा। उन्होने उस कसाईसे कहा, "आजसे तू मेरा गुरु हुआ।" इसके बाद उन दोनोमें विस्तारसे चर्चा होती है, जो 'महाभारत' में है, किन्तु उससे तुम्हारा कोई सम्बन्ध नही है। यह बात तो मैंने तुमसे इसलिए कही कि धर्म-जीवन क्या चीज है, इसका तुम्हे अनुमान हो। बारह वर्ष तक शुद्ध आचार-विचारपूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करके तुमने विद्याभ्यास करनेका व्रत तो लिया ही है, किन्तु आजसे तुम धर्मकी दृष्टिसे विचार करनेवाले हो रहे हो। आजसे पहले जो भूले तुम करते थे, अब उन्हे भूल जाना चाहिए; क्योकि आज तुम्हारा नया जन्म प्रारम्भ होता है। अब तुम कोई भी कार्य करते हुए यह विचार करोगे कि यह सही है या गलत। इस दृष्टिसे यज्ञोपवीतका उपयोग है। बाकी, द्विज अर्थात् ब्राह्मण माननेकी कोई जरूरत नही है। ब्राह्मण तो वह होता है, जो ब्रह्मको अर्थात् ईश्वरको जानता है। यज्ञोपवीत धारण करनेके बाद यदि हम नया जन्म न ले, धर्म-जीवनका प्रारम्भ न करें, तो यज्ञोपवीत होना-न होना, दोनो बराबर है। मै तो किसीसे यज्ञोपवीत लेनेको नही कहता, क्योकि यह सब तो अब केवल बाह्य आचार-भर रह गया है, किन्तु यदि किसीको इसमें से अपनेमें धर्मका ज्ञान जाग्रत करना हो, तो वह भले यज्ञोपवीत धारण करे।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २५-४-१९३७

१०९. पत्र : मीराबहनको

कुमरी आश्रम, जिला बेलगाँव
१९ अप्रैल, १९३७

चि० मीरा,

आशा है, पूना और हुदलीसे लिखे मेरे पत्र तुम्हें मिल गये होंगे। १७ की रातसे यहाँ लगातार वर्षा हो रही है। कैम्प वर्षाका विचार रखकर तो बनाया नहीं गया था। इसलिए हमें दूसरी जगह, जो ऊपरसे ढकी है, आना पड़ा। पर यहाँ जमघट हो गया है। और वर्षाके रुकनेके अभी तक कोई आसार नहीं हैं।

मुन्नालालको फिरसे बुखार हो गया है, यह बड़े दुःखकी बात है। आशा है, तुम्हें समाचारपत्र और डाक नियमसे मिल रहीं होंगी।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

विवाह[1] अच्छी तरह सम्पन्न हो गया।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३७८) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८४४ से भी

११०. पत्र : विजया एन० पटेलको

१९ अप्रैल, १९३७

चि० विजया,

तेरी साड़ियोंकी गठरी सही-सलामत पहुँचा दी है। तू मीराबहनकी खूब मदद कर रही होगी। सभी क्रियाओंके कारण समझेगी, तो तेरी बुद्धिका विकास आश्चर्यजनक गतिसे होगा, यह निश्चित मानना। वसुमतीबहनसे कहना कि मैं आज उसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ। वह कटि-स्नान बराबर लेती होगी। दूध मलाई अलग करके ही लेती

१. मनु गांधी का सुरेन्द्र मशरूवालाके साथ; देखिए पृ० ११८-२१।

होगी।-यहाँ तो १७ की शामसे बरसात हो रही है। सभी कुछ बिगड़ गया है। इस समय केवल संघके बारेमें विचार-विमर्शका काम ही हो पाता है।

बापूके आशीर्वाद

गुर्जरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०६४) से। सी० डब्ल्यू० ४५५६ से भी; सौजन्य: विजयाबहन एम० पंचोली

१११. पत्र: मुन्नालाल जी० शाहको

१९ अप्रैल, १९३७

चि० मुन्नालाल,

तुम फिर बीमार पड़ गये हो? यह कैसे हुआ? तुम अपना शरीर [खराब[1] कर] लो, यह ठीक नहीं होगा। . . .[2] तुम्हें लम्बे समय तकके लिए . . .[3] छोड़ देना चाहिए। मतलब यह कि तुम्हें गेहूँ नहीं खाना चाहिए। फल . . .[4] दूध, दहीपर रहो . . .[5] खजूर खा सकते हो। अपनी शक्तिसे अधिक काम नहीं करना चाहिए। रातके नौ बजे सो जाना चाहिए। पानी उबाला हुआ पीना चाहिए। तुम्हें बीमार न होनेकी कला साधनी चाहिए।

बा[पू[6]]के आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५८८) से। सी० डब्ल्यू० ७००८ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

११२. पत्र: लीलावती आसरको

१९ अप्रैल, १९३७

चि० लीला,

लगता है, द्वारकादाससे खाने-पीनेमें ही चूक हुई है। उसका राजकोट जाना मैं ज्यादा पसन्द करूँगा, लेकिन वर्धा आना भी ठीक होगा। कुछ भी करें, बम्बई छोडना तो ठीक ही रहेगा। सम्भव है कि जो सुभीते उसे राजकोटमें मिलेंगे, वे वर्धामें न मिलें। तेरी रोटी बिलकुल कच्ची थी। कोई नहीं खा सका। सबकी-सब फेंक देनी पड़ी। ऐसा करते-करते ही सब सीख जायेगी, लेकिन हर भूलसे कोई-न-कोई

१, २, ३, ४, ५ और ६. इन स्थानोंपर मूल क्षतिग्रस्त है।

सबक तो लेना ही चाहिए। आम उतावलीमें थोड़े ही पकते हैं। रसोईका तो उतावली से बिलकुल मेल नहीं बैठता।

हम लोग २४ को पहुँचेंगे।

यहाँ तो लगातार बरसात हो रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५८५) से। सी० डब्ल्यू० ६५५७ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

११३. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

हुदली
२० अप्रैल, १९३७

प्रिय सी० आर०,

मेरा निजी विचार तो यह है कि राजाके पत्रपर ध्यान न देना ही ठीक है। पर यदि तुम, लोकहितकी दृष्टिसे, उसपर ध्यान देना आवश्यक समझते हो तो ठीक है। प्रातःकालकी प्रार्थनाकी घंटी बज गई है, इसलिए इससे अधिक लिखनेका समय नहीं रहा।

सस्नेह,

बापू

श्री च० राजगोपालाचारी
४९, फज़लुल्लाह रोड
त्यागराजनगर
मद्रास

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६१) से।

११४. भाषण : गांधी सेवा संघकी सभा, हुदलीमें – ३

२० अप्रैल, १९३७

आजके लिए तो आप समझ ले कि मै ही सभापति हूँ। ज्यादातर मुझे ही कहना पड़ेगा, खासकर किशोरलाल[1] के पदत्यागके विचारके बारेमें। वे अध्यक्ष-पद छोड़ने का आग्रह कर रहे है, मुझे यह बात नही जँचती। मुझे इसका गुमान ही नहीं था कि वे अध्यक्ष-पदका त्याग करना चाहते है। उसमें कुछ धर्मके विरुद्ध है। उनका त्यागपत्रका आग्रह अधर्मका काम है। वे सवेरे मेरे पास आये। यही कारण था कि थोड़े मिनटकी देरी हुई। बातचीतमें मैंने उनसे कुछ सवाल पूछे। उनके उत्तरसे ही यह मालूम हुआ कि इसमें अधर्म हो रहा है। जान-बूझकर धर्मके विरुद्ध किशोर-लाल कोई काम करें, यह तो असम्भव है। वे तो धर्मभीरु हैं। लेकिन धर्मभीरु आदमी भी अनजानमें धर्मके विरुद्ध आचरण करते हैं। मेरा यह जाती अनुभव है और औरोंके अनुभवसे भी कहता हूँ। इच्छा तो धर्मका पालन करनेकी ही होती है। तब भी लोग अधर्मका काम कर लेते है। अगर किशोरलाल त्यागपत्र देनेके आग्रहपर ही कायम रहे तो अधर्मका काम होनेवाला है। मेरे पास ऐसे दृष्टान्त कई है। उन्हे यहाँ देकर समय खराब नही करना चाहता। मैं किशोरलालपर दबाव भी नही डालना चाहता था। बातचीतमें उनसे काफी पूछा। उनके उत्तरसे भी समझ सकता था कि उनका त्यागपत्र देना संघके लिए या उनके लिए हितकर नही होगा। उनका धर्म तो वे ही जान सकते है। मै तो नही जान सकता। मेरा तो काम है कि जिसे वे धर्म कहते हैं उसमें उनकी मदद करूँ। उस हालतमें मै करता भी। लेकिन वे साफ नही कह सके कि उनका यही धर्म है।

गोमती उनके साथ थी। उसकी बुद्धिके लिए मेरे मनमें आदर है। उससे पूछा। वह पूरा बोलने तो न पाई। लेकिन उसने यह कहा कि दो दिनसे वे खिन्न रहते हैं। मेरी दृष्टिसे इतना कारण काफी नही हो सकता। इस आधारपर मैं यह नही कह सकता था कि तुम जो चाहो वही करो। तब मैंने नाथजी[2] को बुला लिया। उनसे किशोरलालका घनिष्ट सम्बन्ध है। उनके प्रति किशोरलालकी काफी श्रद्धा है। मैं जानता हूँ कि शंका होनेपर किशोरलाल नाथजीका आश्रय ले लेंगे। मै भी उन्हे अच्छी तरह जानता हूँ। उनसे पूछा। मैंने देखा कि उनकी वृत्ति भी मेरी ही ओर जा रही थी। उन्होंने कहा कि मैं किशोरलालसे बात करूँगा। मै नही चाहता था कि उनका प्रभाव डालूँ। अगर गोमती और वे दोनो यही स्पष्ट कहते कि छोड़ देना ही धर्म है, तो मै आपसे कहता कि उन्हें छोड़ने दो। लेकिन नाथजीने कहा, "मै स्वय इस समय कुछ नही कह सकता। इसमें

१. किशोरलाल मशरूवाला।
२. केदारनाथ कुलकर्णी।

आप किशोरलालभाईको आदेश दे दें।" ऐसे तो मै बच्चोको भी आज्ञा नही देता। लेकिन कभी-कभी बूढोको भी दे देता हूँ। मैंने स्वीकार कर लिया। मैंने कहा कि इस समय इस स्थानका त्याग हो ही नही सकता। इस आज्ञाको वे दु.खके साथ नही मानेंगे, क्योकि उनमें धर्म-जागृति है। उन्होने स्वीकार कर लिया है।

यह बात आपको जानना आवश्यक है इसलिए कह दी। उनके दिलमें जो शका है, उसे दूर करना आपका और मेरा काम है। हम सत्य और अहिंसाके पुजारी है। उनके पालनका दावा तो कौन कर सकता है? ऐसा दावा करना मिथ्याभिमान होगा। हम दावा तो नही कर सकते, प्रयत्नके अधिकारी है। किशोरलालको यह डर है कि अब हम सत्य और अहिंसाको छोड़ रहे हैं। पार्लियामेंटरी प्रोग्राममें बडा जोश आ जाता है। हम मान लेते हैं कि हमें इससे स्वराज्य जल्दी मिल जायेगा। इस वजहसे साधनका विवेक नही रहता। मनुष्यमें जो पशुता है, वह जाग्रत हो जाती है। मै मान लेता हूँ कि इस प्रोग्राममें इसके लिए काफी अवकाश है। और यह तो मानी हुई बात है कि मनुष्यमें पशुता काफी है। परमात्माने पशुओ और हमारे बीच बाहरी भेद रखा है—जैसे हमारे हाथ होते है, उनके नही। लेकिन इसकी अपेक्षा भीतरी भेद कही अधिक महत्वका है। भीतरी भेदका चिह्न सारासार विवेक है। हमारी पशुता तो हर हालतमें प्रकट होगी ही। कौंसिल-प्रोग्राममें उसके प्रकट होनेके अधिक अवसर हो सकते है। लेकिन हम लोगोको मनुष्य-जन्म मिला है। उसकी सार्थकता है पशुताको कम करनेमें। पशुओ और हमारे बीच जो भेद है, उसे अपने आचरणसे सिद्ध करनेकी बात है। इसीमें मनुष्यता है। इसमें कोई देवत्व नही है। मै जानता हूँ यह कौंसिलोका काम ऐसा है कि हम अग्रेजोंको गाली दे सकते हैं। कड़े शब्दोमें भाषण दे सकते हैं। उसमें काफी अभिमान भी आ जाता है। इन सब बातोसे हमें बचना है। इसलिए हमें ऐसा आदमी चाहिए जो इन बातोका विवेक रखता हो। इसीलिए हमने किशोर-लालको सभापति बनाया। गांधी सेवा सघका काम पैसेके बलपर नही चल सकता। वैसा होता तो हम जमनालालजीको सभापति बनाते और वे बनते। लेकिन उन्होने कहा कि लायक आदमी देखो। और आप दूर हो गये। जमनालालजी अगर एक करोड रुपया इकट्ठा करें तो सघको लाभ नही होगा, हानि होगी। किशोरलालभाईके पास एक पैसा भी नही है। वह लायक सभापति समझे गये।

किशोरलालकी शका इस प्रकार है—"पार्लियामेंटरी प्रोग्राम काफी प्रलोभन देनेवाला है।" लेकिन मेरा पक्ष यह है कि क्या हम केवल इसलिए उससे डरकर दूर रहें? क्या हम उन प्रलोभनोका सामना ही न करे? इसपर किशोरलाल कहते हैं कि "हम अब तक इन प्रलोभनोसे अस्पृश्य रहे है। आज भी हम उसे शककी नजरसे देखते है। दूसरे कई महत्वपूर्ण काम अभी करनेको बाकी हैं। ऐसी हालतमें हम यह आफत खामखाह क्यो मोल ले?" मै कहता हूँ, आप मेरे कहनेसे जा रहे हैं। इसकी जिम्मेदारी मेरे सिरपर है। आज तक हम नही गये तो क्या कोई यह कह सकता है कि हमारे दिल भी अस्पृश्य रहे है? जिस चीजका हमने त्याग

किया था, उसका स्वीकार सत्य और अहिंसाकी दृष्टिसे धर्म हो सकता है। हमारा धर्म एकपक्षीय (एकांगी) नहीं है। उनके दिलमें ऐसी शंकाएँ रही हैं। फिर उनका कहना है कि आजकल कांग्रेसके प्रस्तावोंकी भाषा सत्यको स्पष्ट नहीं करती। यह आक्षेप भी एकांगी है। प्रस्तावक तो अपने भाव कहता है। कांग्रेसके प्रस्ताव भी वही कहते हैं जो कांग्रेसकी दृष्टिसे सत्य है। पर हमें उसमें असत्यकी बू आती है। प्रस्ताव कहता है कि हम संविधानको तोड़ने जा रहे हैं। जिसको हम मिटाना चाहते हैं उसका क्या हम खयाल कर सकते हैं? १९२० के पहले हमारी यह वृत्ति थी कि जो चीज हमें लेनी ही नहीं है, उसकी ओर हम क्यों देखें?

किशोरलालके दिलमें यह खटका है कि आज तक हमने पानीके प्रवाहको रोक रखा था; अब उसके बन्धको तोड़ रहे हैं तो वह नीचे अवश्य ही जायेगा। आज तक तो हमने कौंसिल, स्कूल, कोर्ट आदिके बहिष्कारकी बातें कीं और उनको मिटाना चाहा। लेकिन आज दूसरी ही भाषाका प्रयोग हो रहा है। यह बात किशोरलालके समान औरोंके दिलमें भी खटकती है। यह सारा आक्षेप कांग्रेस घोषणा-पत्रको लक्ष्य करके किया जा रहा है। हम मैनिफेस्टोकी भाषापर विचार कैसे कर सकते हैं? मैनिफेस्टो अकेले जवाहरलालका थोड़े ही है। उसमें तो वल्लभभाई, राजेन्द्रबाबू और मेरा भी हाथ है। मैं भूला नहीं हूँ। मैंने उसे दो-तीन बार पढ़ा। उस मैनिफेस्टोसे कांग्रेसका पद-ग्रहण सम्बन्धी प्रस्ताव असंगत नहीं है। उस प्रस्तावका अमली हिस्सा मेरा बनाया हुआ है। जवाहरलालका कहना था कि प्रस्तावके तीन चौथाई हिस्सेसे और मैनिफेस्टोसे भी वह मेल नहीं खाता। वे मैनिफेस्टोका अर्थ एक करते हैं और मैं दूसरा अर्थ करता हूँ। मुझे उसमें कोई आपत्ति नहीं है। उन शब्दोंमें दो अर्थ हैं, इसमें शक नहीं। लेकिन सत्याग्रही दो अर्थवाली भाषा भी बोल सकता है। सत्यका रूप मैं जैसा जानता हूँ, उसमें यह आवश्यक नहीं है कि सत्याग्रहीके मुँहसे जो शब्द निकलें, उनका एक ही अर्थ हो। वह जो प्रकट करता है उसके दो अर्थ ही नहीं, बहुत अर्थ भी हो सकते हैं। शर्त इतनी ही है कि वे अर्थ छिपे हुए न हों, किसीको धोखा देनेके लिए न हों और आवश्यक हों। सत्यको छिपानेके लिए उस भाषाका प्रयोग न हो। जब हम दो अर्थोंवाली भाषा जाहिरा तौरपर बोलते हैं तो वह सत्यका त्याग नहीं है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि हमारे दिलमें एक ही अर्थ होता है, लेकिन लोग हमारे शब्दोंके कई अर्थ कर लेते हैं। इसमें भी सत्यका त्याग नहीं है। बड़ा उदाहरण वेदोंका है। 'गीता' में भी दो अर्थ हैं—आध्यात्मिक और भौतिक। और भी कई अर्थ हैं। हम यह नहीं कह सकते कि तुलसीदासकी भाषामें एक ही अर्थ है। इतने अर्थ निकाले जाते हैं कि बेचारे तुलसीदास भी नहीं जानते होंगे। इससे न तो वे ग्रन्थकार झूठे साबित होते हैं और न उनके व्याख्याकार या टीकाकार ही। सत्यके सेवककी भाषा से हमेशा एक ही अर्थ नहीं निकलता।

यह कोई डरकी बात नहीं है अगर उसी प्रस्ताव से मैं एक अर्थ निकालता हूँ, जवाहरलाल दूसरा निकालते हैं। मैंने उनसे कहा कि यह कोई जरूरी बात नहीं है कि तुम्हारा ही अर्थ सही हो। पदग्रहणके प्रश्नपर उनसे मेरी बहस हुई। वह प्रस्ताव

तो स्वतन्त्र था। लेकिन जवाहरलालका कहना था कि वह मैनिफेस्टोकी[1] विचारधारा (बैकग्राउंड)से मेल नहीं खाता। मैंने कहा अगर तुम चाहो तो उस विचारधारामें मैं उसे बैठा दूंगा। क्योंकि मैं जब कहता हूँ कि मैं विधानको मिटा दूंगा, तो मेरा मतलब यह है कि अहिंसासे मिटा दूंगा। मेरी यह शर्त ध्यानमें रखो। मैं तो उस चीजमें रहकर स्वतन्त्रता पैदा कर सकता हूँ। अगर हमारे अन्दर निर्भयता है, स्वतन्त्रता है, तो हम विधानको अहिंसासे भी मिटा सकते हैं। जवाहरलाल यह नहीं मानते कि इस तरह यह हो सकता है। वह चाहते तो हैं कि हो जाये तो अच्छा है। लेकिन यह नहीं मानते कि ऐसा होगा ही। उनका मनुष्य-जातिपर कुछ अविश्वास है। वे कहते हैं कि हम वहाँ कुछ नहीं कर सकते। इसीलिए वर्ग-संघर्ष-पर भरोसा करते हैं। इनमें और मुझमें यह मूलभूत भेद है।

मैं कहता हूँ सम्पत्ति जड़ है, लेकिन धनिक तो जड़ नहीं है। उनका हृदय-परिवर्तन हो सकता है। वे कहते हैं ऐसा कभी हुआ ही नहीं। अपनी बातकी पुष्टिमें वे इतिहासका प्रमाण उद्धृत करते हैं। मैं सुन लेता हूँ। लेकिन मैं यह कहता हूँ कि जो आज तक नहीं हुआ उसे अहिंसा नहीं करेगी तो कौन-सी शक्ति करेगी? अगर ऐसा न हुआ तो अहिंसा कोई चीज ही नहीं रह जाती। मैं तो मरते दम तक यह नहीं मान सकता — बशर्ते कि मरते दम तक अगर मेरा यही विश्वास रहे। आज तो मेरा यही विश्वास है कि अहिंसाकी ही विजय होगी। हम सब हार जायेंगे तो भी अहिंसा जीतेगी ही। मैं तो मरते दम तक यही कहूँगा। मैं तो चाहता हूँ कि सरकारका दिल भी बदल जाये। हम इसीलिए कौंसिलोंमें गये हैं। मैं पद स्वीकार करूँगा तो स्वराज्यके लिए। और अगर पद नहीं ले सके तो हमारा कुछ नहीं बिगड़ता। मैं कुछ खोने नहीं बैठा हूँ। मेरी तो हर हालतमें विजय-ही-विजय है। विधानको नष्ट करनेकी गरजसे जो पद-ग्रहण करना असंगत समझता है, वह स्वभावतः पद-स्वीकार नहीं करेगा। लेकिन अगर हम सत्य और अहिंसा, निर्भयता और निःस्वार्थताका व्रत लेकर अपनी शर्तोंपर मन्त्रिपद स्वीकार करें तो स्वराज्यकी लड़ाई जीत सकते हैं और इस मौजूदा विधानको हटाकर उसकी जगह अपना खुदका बनाया हुआ विधान कायम कर सकते हैं। जवाहरलालका खयाल ऐसा नहीं है। मेरे और उनके जुदा-जुदा विश्वास हैं। यह छिपानेकी बात नहीं है।

जाहिर है कि राजेन्द्रबाबू, वल्लभभाई, राजाजी वगैरहकी बुद्धि एक तरफ काम करती है और जवाहरकी दूसरी तरफ। तो भी हम सब साथ-साथ काम कर रहे हैं। यह आश्चर्यकी बात अवश्य है। लेकिन ऐसा करना अत्यन्त आवश्यक है। आखिर हमको दुनियामें रहना है। भिन्न राय रखनेवाले देशभक्तोंके साथ काम करना है। इसलिए समझौते और मेल-जोलसे काम करना ही होगा। इसके लिए हमें खुद ही पहल कर प्रयत्न करना होगा। इसमें शक नहीं कि जवाहरलाल बड़े तेज आदमी हैं। सख्त बातें कह देते हैं। कभी-कभी गालियाँ भी दे देते हैं। लेकिन वे अपने साथियोंकी कीमत जानते हैं। अनुशासन और संयमको समझते हैं। जवाहरलाल अपने सहयोगियोंके साथ इस विश्वासको लेकर काम करते हैं कि किसी-न-किसी

१. देखिए परिशिष्ट ३।

दिन वे उन्हे अपने मतका बना लेंगे, और उसके साथ ही वे यह आशा रखते है कि अपने सम्पर्कसे एक-न-एक दिन उनके विचारोंको वे पलट देंगे। इस तरह कांग्रेसमें हमेशा दो-तीन विचारधाराओंमें संघर्ष होता आया है। जब मैं वर्किंग कमेटीमें था, तब भी दो-तीन विचारधाराओंमें संघर्ष रहा करता था। मैंने विट्ठलभाईको जान-बूझकर सेक्रेटरी बना दिया। तब भी प्रस्तावोंके मसविदे तो मैं ही बनाता था। उसमें दो अर्थ होते थे। मुझे कोई आपत्ति नहीं थी, क्योंकि मुझे उनको साथ लेकर तो चलना ही था।

कांग्रेसकी प्रतिज्ञा सत्य और अहिंसा तो है। तो भी किसीने सिद्धान्त रूपमें उसे स्वीकार नही किया है। सिद्धान्त-रूपमें जिन्होंने स्वीकार किया है उनका यह संघ है। किशोरलाल कहते हैं कि माना कि अब तक हमने सत्य और अहिंसाको निबाह लिया, लेकिन आगे इस नई नीतिके स्वीकार करनेसे यदि यह पता चले कि संघके सदस्य व्यवहारमें उनका त्याग कर रहे है तो? मै कहता हूं, "तब तुम्हारे संघको छोड़नेसे काम नही चलेगा। तब तो संघको तुम्हें तोड़ देना होगा, उसे अच्छी तरह दफना देना होगा। तुम्हें कहना होगा कि इसे मै नही चला सकता और न कोई दूसरा ही चला सकता है।"

वे पूछते है, "ऐसा करनेवाला मैं कौन होता हूं?" मैं उनसे कहता हूं यह तुम्हारा हक है। तुम उसके प्रमुख हो। ऐसा करना तुम्हारा कर्तव्य भी हो सकता है। संघके सदस्य अगर असत्य और हिंसाका बरताव करें तो आप तो यही कहेंगे कि उसे मिटा देना चाहिए। दूसरे बादमें जिदसे उसे भले ही चलायें, लेकिन उस हालतमें वह सत्य और अहिंसाका संघ नही रहेगा। यह मैं बिना समझे नहीं कह रहा हूं। सब सोच-समझकर कह रहा हूं। मैंने किशोरलालको आज्ञा दे दी है कि वे रहें। अब वे रह जाते है और उसमें उन्हें कोई दुःख भी नही है। अब यह कथा समाप्त होती है।

अब पालियामेंटके बारेमें जो नीति निर्धारित की है उसे समझा दूं। इस प्रस्ताव का अर्थ यह नही है कि आप सबको वहाँ जानेकी छूट मिल गई है। हमारा कार्यक्रम तो एक ही है — रचनात्मक कार्यक्रम। स्वराज्य इसीपर निर्भर है। आपको तो यही काम करना है। विधानसभाओंकी मार्फत स्वतन्त्रता मिलेगी, ऐसा तो मेरे या और किसीके स्वप्नमें भी नही है। लेकिन वहाँसे भी अगर हम रचनात्मक कार्यक्रममें मदद पहुँचा सकें तो क्यों न पहुँचायें? उनकी मार्फत इस चीजको बढ़ायेंगे, और बाहर भी तैयारी करेंगे। तब तो स्वतन्त्रता मिल जायेगी।

जवाहरलाल मानते हैं कि वहाँ जाकर झगड़ा हम कर सकते हैं। झगड़ा तो कर सकते है और करेंगे भी। लेकिन सत्य और अहिंसाको हम जरा भी कुर्बान नहीं करेंगे। हमें सविनय अवज्ञाके लिए तैयारी करनी है। जवाहर भी यही कहते हैं कि सविनय अवज्ञाकी तैयारी करनी है। लेकिन वे अहिंसाको एकमात्र साधन नही मानते। उनके लिए अहिंसा सर्वोपरि धर्म नहीं है। अगर हिन्दुस्तानको आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करानेके लिए उन्हें मजबूर होकर अंग्रेजोंके गले भी काटने पड़ें, तो वे वैसा भी करने को तैयार हैं। लेकिन छिपकर नहीं, जाहिरा तौरपर।

मेरी नीति यह नहीं है। मैंने तो अहिंसाको सर्वोपरि माना है। हिंसासे मिलनेवाली आजादी मेरे लिए आजादी ही नहीं होगी। इसलिए मैं तो ऐसा कभी नहीं करूँगा। आप भी मेरी ही चीजको मानते हैं। जवाहरलालके लिए हिंसा त्याज्य भले ही न हो, लेकिन अहिंसासे अगर आजादी मिल सकती हो तो उससे उन्हें खुशी ही होगी। इसलिए वे मेरे प्रयोगमें सहयोग भी दे रहे हैं। हम कोई नई नीति अख्तियार नहीं कर रहे हैं। पुरानी नीतिको मजबूत करनेके लिए वहाँ जा रहे हैं। दीवारें तोड़नेके लिए जा रहे हैं। तीन करोड़के नामपर दूसरे लोग जायें और वहाँ जाकर कहें कि हम चरखा नहीं चाहते तो क्या हाल होगा? मैं कहता हूँ कि वहाँ तो आप चरखेकी बातको बढ़ानेके लिए जाते हैं। आप वहाँ लोगोंके प्रतिनिधि बनकर जाते हैं। आप कहेंगे कि चरखा तो पहले भी चलता रहा है। हाँ, जरूर चलता रहा, लेकिन जड़वत् चलता रहा है। हम सबने चरखेको ज्ञानपूर्वक चलाया होता तो अब तक स्वराज्य हासिल हो गया होता और विधान-सभाओंमें भी न जाना पड़ता। आज भी हम ज्ञानपूर्वक चरखा चलायें। जो मैंने १९२०में कहा था, वह आज भी मेरे दिलमें मौजूद है कि यदि हम चरखेको बुद्धियोगपूर्वक चलायें तो स्वराज्य आपके हाथमें है। आप कहेंगे कि मैं दो अर्थवाली बात कहता हूँ। मैं बहुअर्थी बात कहता हूँ। यहाँ चरखेका अर्थ भी व्यापक करना होगा। मैं तो आज भी कहता हूँ कि अगर सारा देश ज्ञानपूर्वक चरखा ले ले तो पार्लियामेंटका नाम भी नहीं लेना पड़ेगा। मगर आज तो वह बात नहीं है।

आजसे हमें तीन करोड़ मतदाताओंके प्रतिनिधियोंके निकट सम्पर्कमें आ जाना चाहिए। उनसे जितना काम ले सकते हैं क्यों न लें? इसके मानी यह नहीं है कि हम सभीको विधानसभाओंमें जाना चाहिए या जो जाना चाहे, उन सबको इजाजत दे देनी चाहिए। हम एक-एकके बारेमें अच्छी तरह जाँच करेंगे। इसके अलावा उनपर असर डालनेके लिए बाहरका अनुसन्धान भी चाहिए। इसीलिए पार्लियामेंटरी कमेटी भी चाहिए। उसमें राजेन्द्रबाबू भी होने चाहिए और वल्लभभाई भी। इसका अर्थ यह हुआ कि हम संघका दरवाजा विधानसभाके सभी मेम्बरोंके लिए नहीं खोल रहे हैं। और न विधानसभाका दरवाजा सब सदस्योंके लिए खोल रहे हैं। सिर्फ उन्हींके लिए खोलते हैं जिन्होंने रचनात्मक कार्यकी प्रतिज्ञा ली है और जिनके बगैर कांग्रेसके एक सीट खो देनेका अंदेशा हो। इसका निर्णय किशोरलालपर छोड़ दें। दूसरा कोई इसका निर्णय नहीं कर सकता।

अगर कल सत्यमूर्ति मुझसे पूछें कि मैं गांधी सेवा संघमें आऊँ? तो मैं कहूँगा, नहीं। सत्यमूर्तिका मेरा सम्बन्ध अच्छा है। और मेरा लिहाज करते हुए कभी-कभी अपनी लड़कीको चरखा भी चलाने देते हैं। लेकिन वह चरखेमें विश्वास नहीं करते, वे हमारे सदस्य नहीं बन सकते। हमारी सहायता भले ही करते रहें। यह तो दृष्टान्त हुआ। इस तरह तो हमने द्वार नहीं खोला है। हमने तो अपने लोगोंके लिए द्वार खोला है। मान लीजिए हम जेठालालको नहीं भेजना चाहते। तो क्या हम अनन्तपुरकी सीट खो दें? यदि डॉ० खरे कहें कि उन्हींको भेजना पड़ेगा तो मैं

कहूँगा कि वह तो भद्दा आदमी है, सिवा चरखेके और कुछ नहीं जानता, अच्छी तरह बोलना भी नहीं जानता। फिर भी अगर डॉ० खरे कहें कि उसीको भेजो, तो मैं जेठालालसे कहूँगा, भाई जरूर चले जाओ और वहीं अपना चरखा चलाते हुए बैठो। एक चरखेवालेकी तो वहाँ जरूरत पड़ी न? इसकी मुझे खुशी है। अगर हरएक चरखेवालेकी यही हालत हो जाये, तो चरखेका प्रभाव बढ़ेगा।

यह कोशिश करो कि चरखेवाला ही जाये। लेकिन लोगोंको फुसलाकर नहीं, खुशामद से नहीं। ऐसे लोग गये हैं। सरदार मुझसे कहते हैं कि डॉ० गोपीचन्द न जाते तो हम वह जगह खो देते। इस तरह काफी लोग गये हैं। अगर हर जगह नहीं गये हैं, तो शर्मकी बात है। अगर हम हर जगह चरखे और ग्रामीण प्रतिनिधिको भेज सकें तो भेजना चाहिए। जब आपको आजकी अपेक्षा अपने काममें हजारों गुना अधिक अनुराग हो जायेगा, तब आप दरअसल लायक बनेंगे। तब आप अपनी गरजसे नहीं, बल्कि जनताके आग्रहसे जायेंगे। अगर सोशलिस्ट आपका प्रतिस्पर्धी है तो वह भी आपसे कहेगा कि भाई मैं नहीं जा सकता तुम जाओ। तभी जानेमें मजा है। अगर सोशलिस्ट जा सकता है और तुम्हारे जानेकी जरूरत नहीं देखता तो उसे जाने दो।

मैं आपसमें झगड़ा नहीं करना चाहता। मैं तो वह शख्स हूँ कि जिसने झगड़ा टालनेके लिए कांग्रेस छोड़ दी। जब मैं कांग्रेसमें था, मैंने कहा कि मैं केलकरको चाहता हूँ। मेरे साथ बैठकर वे कमसे-कम नुकसान कर सकेंगे; इतनी मुझमें कार्यदक्षता है। मैं चाहता हूँ कि और किसीका जाना करीब-करीब असम्भव हो जाये। और केवल ऐसे ही आदमी भेजे जायें, जो चरखेमें विश्वास रखते हों। अगर कल वल्लभभाई चरखा छोड दें तो उस हालतमें वे गुजरातके सरदार नहीं रहेंगे। और उस हालतमें भी वे चुनावमें खड़े होकर अपने बलपर जीत जायें तो चरखा संघके लिए यह शर्मकी बात होगी, बारडोलीके लिए शर्मकी बात होगी, गुजरातके लिए शर्मकी बात होगी और हमारे लिए भी शर्मकी बात होगी। तब वहाँ किसे भेजेंगे? यह आक्षेप सुननेमें आता है कि चरखेवालोंमें बुद्धि नहीं है। एक हद तक यह सच है। अगर हम जड़वत् चरखा चलायें तो वह साधना नहीं है।

'महाभारत' में एकलव्यकी कथा आई है। उसपर जरा ध्यान दीजिए, वह निरा काव्य नहीं है। उसमें सत्य है। मृत्तिकामें चैतन्य नहीं होता। मूर्तिमें सामर्थ्य नहीं होती। लेकिन एकलव्यके लिए द्रोणाचार्यकी मूर्ति मिट्टी नहीं थी। उसमें तो वह साक्षात् गुरु द्रोणाचार्यको देखता था। उसकी अखण्ड श्रद्धा क्योंकर फलीभूत न होती? अगर हम चरखेमें ऐसी श्रद्धा रख सकें तो हमारे लिए वह प्राणवान प्रतिमा बन जाये। तब हम उसमें अपनी समस्त संकल्प-शक्ति और हृदय लगा दें। चरखा तो हमारे लिए अहिंसाका एक प्रतीक है। असली चीज मूर्ति नहीं, हमारी दृष्टि है। एक दृष्टिसे संसार सही है, दूसरी दृष्टिसे ईश्वर ही एकमात्र सत्य है। अपनी-अपनी दृष्टिसे दोनों बातें सत्य हैं। यदि हम अपने प्रतीकमें ईश्वरका साक्षात्कार कर सकें तो हमारे लिए वह भी सच हो जाता है। अहिंसा बेवकूफोंके लिए नहीं है। हमें बुद्धियोगसे काम लेना होगा। अहिंसा ऐसी चीज है जिसके अन्दर ज्ञानको भी स्थान है और कार्यशक्तिको भी, यानी बुद्धिको भी स्थान है, और हमारी सारी इन्द्रियोंको

भी। आज तो इन सबका उपयोग अहिंसाको मिटानेके लिए हो रहा है। हम तो यह चाहते हैं कि ये सब उसकी दासियाँ बनकर रहें। हम अपनी इन्द्रियोको अहिंसाकी दासी बनायेंगे, तब वे तेजस्विनी होगी। अगर इस क्षेत्रमें अहिंसा काम नही देगी तो और कहाँ देगी? मै डरकर किसी क्षेत्रको नही छोड़ूंगा। अगर मै किसी क्षेत्रको इसलिए छोड़ देता हूँ कि वहाँ अहिंसा काम नही आयेगी तो फिर अहिंसा-जैसी कोई चीज ही नही है। मै किस क्षेत्रको छोड़ूं? मेरा शरीर तो काम करता ही रहेगा। इन्द्रियाँ प्रवृत्त अवश्य होगी। मै आत्महत्या तो करना नही चाहता। अपने कानोको नहीं फोड़ूंगा। नाकको बन्द नही करूँगा। तब क्या करूँ? मेरे लिए एक ही रास्ता है कि मै सारी इन्द्रियोंको अहिंसाकी दासी बनाऊँ।

दूसरा उपाय किशोरलालने आजमाया। बहुत पुरानी बात है। साधनाके लिए एकान्तमें जाकर बैठे थे। रेलकी सीटीसे उनकी शान्तिका भंग होता था। एक दिन जब मै रोजकी तरह गया तो मुझसे कहने लगे कि मुझे इस सीटीसे कष्ट होता है; कानोमें रुई या रबर रखनेका विचार कर रहा हूँ। मैने कहा वह उपाय भी आजमा लो। पर यह केवल एक बाह्य बात थी। ईश्वरमें ध्यान नही लगता था, इसलिए आवाज सुनाई देती थी। किशोरलालके ध्यानमें भी यह बात अपने-आप आ गई। इसलिए जब दूसरे दिन मैंने उनसे रुई या रबर रखनेके लिए कहा तो उन्होने जवाब दिया कि अब उसकी कोई जरूरत नहीं है। हमारे कान है, लेकिन व्यभिचारके लिए नहीं। इसी तरह दूसरी इन्द्रियोकी भी बात है। सारी इन्द्रियाँ शरीरको सुरक्षित रखनेके लिए है। हम खाते हैं तो शरीरके पोषणके लिए। स्वादके लिए खायें तो अहिंसाका पालन हम नहीं कर सकते।

कोई हमें कौंसिलोमें जबर्दस्ती भेजे तब भी हम वहाँ अपनी ही वृत्ति लेकर जायेंगे। किशोरलालको यह डर है कि वहाँ जानेपर हम अपनी सारी बातोको भूल जायेंगे। डर तो मुझे भी है, लेकिन मै क्यों हटूं? अगर चरखेमें और कांग्रेसके दूसरे रचनात्मक कार्यक्रममें आपकी सजीव श्रद्धा न हो तब तो किशोरलालका भय सच्चा साबित होगा। लेकिन मेरा आप लोगोमें विश्वास है। ऐसा न होता तो मैं यहाँ न आता। मैं आपपर अविश्वास क्यो करूँ? आपको सब कुछ स्पष्ट बतला दिया। इसमें नीतिका त्याग नही है। रातको दूसरी भाषा प्रयोग की गई थी, लेकिन यह भाषाका तो ऐसे ही चलता है। काम करते-करते भाषा स्पष्ट होती जाती है। विचार, उच्चार और आचारका मेल ही सत्यका लक्षण है, इसमें शक नही। लेकिन विचार आगे बढते जाते हैं और भाषा पीछे रह जाती है। मुझे यह खटका कि मै किशोरलालको क्यो नही समझा सका? मेरी भाषा अस्पष्ट थी। मैंने बहस सुन ली और मेरे विचार स्पष्ट हो गये। फिर भी भाषा स्पष्ट नही हुई। विचार करनेके बाद जब मैं ध्यानावस्थित रहता हूँ, तो भाषा प्रतिदिन अधिक स्पष्ट होती जाती है। अभी मुझे वैसा अवकाश नही मिला है।

विधानसभाके कार्यक्रमको स्वीकार करके हम अहिंसासे दूर नही जा रहे हैं। यह कदम यदि मै उठवा रहा हूँ तो अहिंसाकी दिशामें दो कदम आपको आगे बढ़ा

रहा हूँ। अगर आप मेरी इस बातको समझ ले और उसके अनुसार चले तो इस साल आप इतनी प्रगति कर लेगें जितनी कि आज तक नहीं की थी। अब समय आ गया है जबकि हिन्दुस्तानको या तो इस ओर जाना है या उस ओर। मुझको ऐसा लगता है कि इस मौकेपर आप अपने-आपको एक कमरेमें बन्द करके नही बैठे रह सकते। राष्ट्रके नाते हम सत्य और अहिंसाकी ओर बढ़ रहे है या नही, यह हमें अब भी सिद्ध करना बाकी है। तीन करोड़ मतदाताओंको भूलकर आप एक तरफ बैठ जायें तो कायरपन होगा। अगर हमारी जबानपर सत्य और अहिंसा है और दिलमें दूसरी बात है, तो भी जो-कुछ मैंने किया वह अच्छा ही साबित होगा। आप अगर मिथ्याचारी नही हैं, तो विधानसभाओंमें भी सत्य और अहिंसाका सम्पूर्ण श्रद्धा-बल लेकर जायेंगे और अपने ध्येयकी ओर प्रगति कर सकेंगे। और मिथ्याचारी साबित हुए तो भी मुझे कोई क्षोभ नही होगा। मिथ्याचार प्रकट होनेसे भी हमारा हित ही होगा। जब आत्मा निकल जाती है तब अपने प्रिय पिताकी देहको भी हम सहर्ष जला देते हैं और उसकी राखको गंगामें डाल देते हैं। अगर संघकी आत्मा — सत्य और अहिंसा —, निकल जाये तो किशोरलालको चाहिए कि उसका अग्नि-संस्कार कर दें। अगर वह आत्मा कायम रहेगी तो संघमें तेज आयेगा। और अगर वह आत्मा आज भी नही है और हम केवल मिथ्याचारी हैं, तो भी संघका कायम रहना बेकार है।

मुझे शास्त्री लोग लिखते है कि सत्य और अहिंसा ये सूक्ष्म चीजें हैं। निराकार वस्तुओंका संघ कैसे बन सकता है? मै जोर देकर कहता हूँ कि सत्य-अहिंसाका संगठन हो सकता है। अगर अहिंसा संगठित नही हो सकती तो वह धर्म नही है। और यदि मुझमें कोई विशेषता है तो यही है कि मै सत्य और अहिंसाको संगठित कर रहा हूँ। नही तो वे मेरे लिए सनातन सिद्धान्त नही रहेंगे। मेरे लिए सत्य और अहिंसा मिथ्या वस्तुएँ नही हैं। अगर वह सामुदायिक धर्म नहीं बन सकता है, तो मिथ्या है। जो बात मै करना चाहता हूँ और जो करके मरना चाहता हूँ वह यह है कि मै अहिंसाको संगठित करूँ। अगर वह सब क्षेत्रोके लिए उपयुक्त नहीं है, तो वह झूठ है। मैं कहता हूँ कि जीवनकी जितनी विभूतियाँ हैं सबमें अहिंसाका उपयोग है। मैं तो जैनोंकी भाषा मानता हूँ। वे कहते हैं कि नियम निरपवाद हो। भूमितिकी भी यही भाषा है। समकोणमें ९० अंश होने चाहिए। अगर अहिंसा जीवनके किसी एक भी क्षेत्रमें चल नहीं सकती तो वह झूठ है। यह एक चीज आप याद रखें। यदि आप सब विरुद्ध दिशामें चले गये और आपने चरखे और अहिंसाको छोड़ दिया तो मै कहूँगा आपके अन्दर सत्य और अहिंसा कभी थी ही नही। विश्वास रखिए कि अनजाने ही सही आप सब हिंसावादी थे। मै आपकी निन्दा नही करता। आप तो सोच-समझकर सत्यका नाम लेकर संघमें आते हैं। लेकिन याद रहे कि सत्य और अहिंसा मठवासी संन्यासियोके लिए ही नही है। अदालतें, विधानसभाएँ और इतर व्यवहारोंमें भी ये सनातन सिद्धान्त लागू होते हैं। आपकी श्रद्धाकी बहुत सख्त परीक्षा होनेवाली है। आप उससे डरकर जान न बचायें।

आज एक कठिन प्रश्नपत्र आपके हाथमें रखा जा रहा है। आप उत्तीर्ण होंगे या अनुत्तीर्ण, यह न तो मैं जानता हूँ और न आप। तब भी मैं क्यों डरूँ? मैं आपको नपुंसक और गँवार नहीं बनाना चाहता। सत्य और अहिंसा गँवारोंके लिए नहीं है। कान्ति, बाल, तनसुख[1] वगैरह की बुद्धिका विकास चरखा चलाकर क्यों नहीं होता? वे कॉलेजमें क्यों चले जाते हैं? अगर हम चरखा चलानेवाले कान्ति, बाल और तनसुख जितनी बुद्धि बताते हैं, उतनी न बता सकें, तो मैं कहूँगा आप भी कॉलेजमें चले जायें। लेकिन वास्तवमें कान्ति आदिमें बुद्धिका विकास नहीं, विलास है। सत्य और अहिंसाके शोध या अनुसरणसे बुद्धिका विकास होता है। अगर ऐसा नहीं होता तो या तो सत्य और अहिंसा झूठे हैं, या हम झूठे हैं। सत्य और अहिंसा-का मिथ्या होना असम्भव है। इसलिए हम ही झूठे साबित होते हैं।

सारा रचनात्मक कार्यक्रम इनकी शोधके लिए है। मैं तो चरखा चलाता रहता हूँ। लेकिन मैं ६९ सालका हो गया हूँ। इसलिए यह बात नहीं है कि मेरी बुद्धिका विकास नहीं हो रहा है। मैं जो कह रहा हूँ, होशमें, बुद्धिपूर्वक कह रहा हूँ। वहाँ जाकर बाल, कान्ति और तनसुखकी बुद्धिका विकास नहीं होता। लेकिन आप कहेंगे कि जो उद्योग करते हैं, उनकी बुद्धिका भी तो विकास नहीं होता। इसका कारण यह है कि वे जडवत् करते हैं। मरते दम तक मेरी बुद्धिका विकास होता रहेगा। मेरी बुद्धिका आश्रय भी चरखा है। लेकिन वह व्यभिचारिणी नहीं होती। विलासी बात पढ़ने, देखने या सुननेका मुझे अवकाश ही नहीं मिलता। चरखेके द्वारा मैं दरिद्रनारायणका अनुसन्धान करता हूँ और ईश्वरका साक्षात्कार करता हूँ। मेरी बुद्धिका विकास उसके द्वारा होता है और आजन्म होता रहेगा। जब तक आदमी मर नहीं जाता तब तक उसकी पूरी परीक्षा नहीं होती। यदि मृत्युके क्षण तक उसकी बुद्धि तेजस्वी न रही, तो मैं मानूँगा कि उसको सफलता हासिल नहीं हुई।

यह कोई जरूरी बात नहीं है कि जो चरखा चलायें उनकी बुद्धि तेजस्वी न बने। हमें बुद्धियोगपूर्वक चरखा चलाना चाहिए। अगर बढ़ईका काम करो तो बढ़ई-गिरीका शास्त्र बनाओ। आज चरखा-शास्त्रके लिए मैं कैसे कठिन प्रश्न निकाल रहा हूँ। क्योंकि मेरी सारी बुद्धि उसमें लग जाती है। चरखेमें जब मैं डूब जाता हूँ तब आनन्दमें मग्न हो जाता हूँ। रचनात्मक कामकी सीमा कहाँ तक चली जायेगी, वह मैं अभी समझा नहीं सका हूँ। मृत्तिकावाली बात इसीका उदाहरण है। रचना-त्मक कार्यका सर्वांगीण विकास होगा। चरखा तो एक मन्त्र है। चरखा चलानेवालों को जब हताश देखता हूँ तो दंग रह जाता हूँ। क्यों उनकी आत्माका विकास नहीं पाता हूँ?

ये सब सनातन सत्यकी बात कह रहा हूँ, क्योंकि उसका साक्षात्कार कर रहा हूँ। मैं सेगाँवमें जाकर बैठा हूँ सो निराश होकर या हारकर नहीं बैठा हूँ। जब मुझे प्रेरणा होगी, तो यह भी कहूँगा कि मैं सेगाँवसे हिलूँगा भी नहीं। मैं वहाँ कोई यन्त्रवत् काम नहीं कर रहा हूँ। सत्य और अहिंसासे शरीर, बुद्धि और आत्माकी सब शक्तियों

१. तनसुख भट्ट।

का विकास होता है। अगर हमारी सब शक्तियोंका विकास सत्य और अहिंसा द्वारा नहीं होता तो हम ही झूठे हैं। मैंने १९२० से जो साधना की है वह चरखा, हिन्दू-मुसलमान एकता और अस्पृश्यता-निवारणके द्वारा ही की है। मैंने यही कहा कि ये सत्य और अहिंसाके प्रतीक हैं। उनकी शोधके ये सीधे साधन हैं।

पार्लियामेंटमें जाना भी इन्हींके लिए साधन है, नहीं तो पार्लियामेंट हमारे लिए निषिद्ध है। विधानसभाओंमें जानेके लिए अगर हमारे अन्दर कोई दिलचस्पी हो सकती है तो वह सिर्फ इसीलिए, और किसी कारणसे नहीं। सत्य और अहिंसा साध्य भी हैं और साधन भी। और यदि अच्छे और सच्चे आदमी विधानसभाओंमें जायें तो वे भी सत्य और अहिंसाकी ठोस शोधके साधन बन सकते हैं। अगर ऐसा न होगा तो दोष हमारा होगा, न कि उनका। हमारी बुद्धिका विकास नहीं हुआ यही उसका मतलब होगा। बस इसको अब यहाँ छोड़ देता हूँ।

अब बालूभाईका प्रश्न लेता हूँ। इनके प्रश्नका सार यह है कि देहातोंमें हम सेवाके लिए जायें या राजनैतिक जागृतिके लिए, मुख्य क्या है? मुझे तो यह कुछ अजीब-सा लगता है कि १७ वर्ष तक इस कार्यक्रमको अमलमें लानेके बाद भी यह प्रश्न पूछना बाकी रह जाता है। मेरे लिए तो ऐसी कोई राजनैतिक शिक्षा नहीं है, जो रचनात्मक कार्यक्रमसे भिन्न हो। हमारा उद्देश्य तो चरखा आदि चीजोंका प्रचार ही है। इसका मतलब यह नहीं है कि हम उन्हें राजनैतिक शिक्षा नहीं देना चाहते। परन्तु राजनैतिक शिक्षण-जैसी कोई स्वतन्त्र वस्तु नहीं है। हमको उनसे निरपेक्ष सम्पर्क कायम करना है। उनकी शक्तिका विकास करना है। मैं तो चरखा, अस्पृश्यता-निवारण आदि लेकर जाता हूँ, और उन्हे उनकी तालीम देता हूँ। वही राजनैतिक तालीम है। उससे अलग कोई चीज नहीं है। इससे जुदा अगर मैं कुछ करूँ और लोगोंके पास महज वोट माँगनेके लिए जाऊँ तो वही करूँगा जिसके लिए हम मिशनरियोंको दोष देते आये हैं। उनके पास जाकर मैं अपने मतलबकी बात नहीं करूँगा चाहे वह देशकी राजनीतिसे ही क्यों न सम्बन्ध रखती हो? रचनात्मक कार्यक्रम तो खुद-बखुद एक राजनैतिक शिक्षा है। मैंने दक्षिण आफ्रिकामें यही किया। मेरे सामने वहाँ भी संख्याका सवाल नहीं था। वहाँ कुली कहे जानेवाले लोगोंके पास जाकर राजनैतिक कामकी बात नहीं करता था। मैंने उनका संगठन राजनैतिक मतलब गाँठनेके लिए नहीं किया। तीन पौंडकी लड़ाईकी बात भी बादमें आई।

उनका संगठन सत्याग्रहके काम आया। मुझे तो उस लड़ाईमें ईश्वरका साक्षात्कार कई बार हुआ है। इतना हुआ है कि मैं गधा होऊँ तो भी नहीं भूलूँ। मुझे ऐसा विश्वास नहीं था कि मेरे संगठनका इतना बड़ा परिणाम निकलेगा। राजनैतिक तालीम मैंने दक्षिण आफ्रिकामें इस प्रकार दी। सारे दक्षिण आफ्रिकाकी बात नहीं थी, वह तो केवल ट्रान्सवालकी थी। मेरा मतलब यह है कि जिन लोगोंमें मैंने काम किया उनको राजनैतिक तालीम कैसे दी? इसी प्रकारकी मूक-निरपेक्ष सेवासे। जिन लोगोंमें मैंने काम किया वे अपने-आप आ गये और कांग्रेसकी जय मनाने लगे। दक्षिण

आफ्रिकामें साउथ इंडियन कांग्रेसकी जो प्रतिष्ठा है, उसे आप राजनैतिक तालीम नहीं कहेंगे तो किसे कहेंगे? यह आजकल हर्टज़ाग भी कह रहा है।

दक्षिण आफ्रिकासे यहाँ आया तब भी मेरी तो वही नीति कायम रही। खेड़ा जिलामें काम किया तो कांग्रेसका नाम तक नहीं लिया। केवल लगानकी बात कही। मजदूरोंमें काम किया तब भी कांग्रेसका नाम नहीं लिया। चम्पारनमें गया तो वहाँ भी मैंने कांग्रेसके नामपर कुछ नहीं किया। मैं और मेरे साथी कांग्रेसी थे इतना काफी था। लेकिन आज चम्पारनमें जायेंगे तो आप क्या देखेंगे? वहाँ जितना कांग्रेसका जोर है और कहीं है? राजेन्द्रबाबू बिहारमें चम्पारनके भरोसे राज कर रहे हैं। आज भी मैं वहाँ कांग्रेसकी बात नहीं करूँगा। ज्ञान तो वहाँ दिया जाये जहाँ जिज्ञासा हो। आज तो उनके पास रोटी भी नहीं है। उन्हें चम्पारनके बाहरकी बात सिखाकर क्या करूँ? उन्हें क्या भूगोल सिखाऊँ या इतिहास सिखाऊँ या राजनीति सिखाऊँ? उन्हें देशकी लम्बी-चौड़ी बातें कहकर क्या करूँ? सब बातोंका विचार करके मैंने पाया है कि हम राजनैतिक तालीमके नामसे राजनैतिक तालीम नहीं दे सकते। मैंने सब चीजोंकी मिसाल देकर आपको बतला दिया कि राजनैतिक तालीम किसे कहते हैं। राजनैतिक तालीम कोई पृथक् वस्तु नहीं है।

१९२० में मैंने बहिष्कारको राजनैतिक प्रोग्रामका अविभाज्य हिस्सा बनाया। मैंने कहा कि "पार्लियामेंटको भूल जाओ, अदालतोंको भूल जाओ। यहाँ तक कि शिक्षणालयोंको भी भूल जाओ।" लोग कहने लगे इतना घोर काम करनेवाला यह बड़ा भद्दा आदमी है। मैंने १९२० में चरखेको राजनीतिका केन्द्र बनाया। उसे युद्धका साधन बनाया। बारडोलीमें भी सविनय-भंगका यह अविभाज्य हिस्सा बनाया गया था। इसलिए यह शर्त थी कि छः महीनेके अन्दर सारीकी-सारी बारडोली खद्दरपोश हो जाये। उस वक्त कांग्रेसकी भाषा ही यह थी। विट्ठलभाईने[1] मुझे फुसलाया पर अपनी शर्मकी बात क्या कहूँ! सरदारकी शर्मकी बात क्या कहूँ! आज भी बारडोलीने चरखेकी शर्त पूरी नहीं की, मद्य-निषेध नहीं हुआ, अस्पृश्यता-निवारण नहीं हुआ। आज मैं बारडोलीके भरोसे दूसरा युद्ध नहीं छेड़ूँगा। लेकिन मेरा तो राजनैतिक शिक्षाका यही साधन है। कांग्रेस भी और कुछ करे तो सफल नहीं होगी। मैं कहता हूँ कि मैं यही करता रहूँगा। मैं अभिमानसे नहीं कह रहा हूँ। यह दिखाता हूँ कि मेरी श्रद्धा कितनी अडिग है। अगर कांग्रेसकी इन चीजोंमें श्रद्धा नहीं है तो वह उन्हें क्यों नहीं छोड़ देती? मैं आग्रहपूर्वक कहता हूँ कि अगर ये चीजें खराब हैं, या फिजूल हैं तो गांधीकी खातिर उन्हें मंजूर न करें।

बालूभाई एम० ए०, एलएल० बी० हो गये हैं। तो भी उन्हें यह राजनैतिक जागृतिशास्त्र थोड़े ही याद है? यह हाल सिर्फ उन्हींका नहीं है। हम पढ़े-लिखे आदमी राजनैतिक तालीम देनेमें तो अयोग्य ही साबित हुए। हमारी कई बातें ऐसी ही हैं। अंग्रेजी तालीमके कारण हम नालायक बन गये हैं। पूर्वजोंके संस्कार तो

१. विट्ठलभाई झ० पटेल।

छिन्न-भिन्न हो गये हैं। लेकिन अन्तमें मैं आपसे कहता हूँ कि राजनैतिक तालीम तो इन्हीं चीजोंके द्वारा होगी। वह कोई अलग चीज नहीं है। चरखा ही राजनैतिक तालीम है, ऐसी अगर हमारी श्रद्धा हो तो हम थकेंगे नहीं और न हारेंगे। सोशलिस्ट आयें तो उन्हें आने दो। वे मेरे दोस्त हैं। न वे मुझसे लड़ते हैं और न मैं उनसे लड़ना चाहता हूँ। वे राजनैतिक तालीम दूसरे तरीकेसे देना चाहते हैं। उनके और मेरे साधनमें भेद है। साध्यमें नहीं। उनके सामने भी मैं यही प्रोग्राम रखता हूँ। मैं भी कहता हूँ कि "सबै भूमि गोपालकी" लेकिन केवल इसी कार्यक्रमके जरिये सोशलिस्ट यह दावा करनेकी हिम्मत कर सकेंगे कि सारी जमीन उनकी अपनी ही है। आज जिनका उसपर हक है उनसे उसे जबरन छीन लेनेके लिए मैं नहीं कह सकता। मैं भी चाहता हूँ कि हम सब जमनालालजी के पैसेके स्वामी बन जायें; लेकिन मैं अकेला नहीं, तीस करोड। भूमि तो सब भगवान्‌की है यानी जनताकी है। पर क्या इसका यह अर्थ हुआ कि जमनालालजीकी सारी जमीनके तीस करोड़ हिस्से बना दिये जायें? ये तीस करोड़ व्यक्ति मालिक कैसे बनें और उन्हें कौन बनाये? इनमें से कौन सबके लिए या सबकी तरफसे उस सम्पत्तिका स्वामी बने? आखिर किसीको तो प्रतिनिधि बनाना ही पड़ेगा। इससे यदि वे ही हमारे प्रतिनिधि बनें और रात-दिन यह ध्यान रखें कि यह तीस करोड़की सम्पत्ति है तो क्या बुरा है? सेगाँवमें उन्होंने सारी जमीन मुझे दे दी है। लेकिन मैं ले नहीं सकता, क्योंकि मैं मूर्ख हूँ। इन चीजोंको समझता नहीं हूँ। उनका दीवानजी है, वह मुझसे कहीं अधिक जानता है। आज तो सिर्फ नफेका मालिक मैं हूँ और नुकसानके मालिक वे हैं। जमनालालजी और रामेश्वरदास बिड़ला-जैसे धनिकोंके पैसेका फायदा लेना है तो मेरी बुद्धिका उपयोग कर लो। सेगाँवकी जायदादसे मैं लाभ नहीं उठा सकता, क्योंकि मेरे पास आदमी नहीं हैं और अक्ल भी नहीं है। सेगाँवके बाहरकी मैं एक कौड़ी भी नहीं चाहता। मेरे पास सब साधन है, लेकिन ढील मेरी है। आजकल उलटा व्यवहार होता है। मैं मकान बनवाता हूँ, तो उसके पैसे भी उन्हें देने पड़ते हैं। यह सौ फीसदी सत्य है। मैं जितना हजम कर सकता हूँ, ले लेता हूँ। इससे अधिक मैं किसी धनवानसे क्या मागूँगा? आइए, आपको निमन्त्रण देता हूँ कि जिस शर्त पर मैं सेगाँवमें बैठा हूँ उसी शर्तपर आपमें से कोई जमनालालजी के दूसरे गाँवमें बैठ जाये। लेकिन आदमी मेरी पसन्दका हो और मेरे बताये कार्यक्रमको पूरा करनेके लिए तैयार हो। लेकिन यह तो दूसरा किस्सा है। मैं बात चरखेकी कह रहा था।

एक जमाना था जब सी० पी० रामस्वामी अय्यर चरखेको राजनैतिक शस्त्र मानते थे। और मुहम्मद अली कहता था वह हमारी तोप है। खाडिलकरने उसी समय 'गीता' का एक श्लोक चरखेपर गाया:[1]

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।

पर इससे भी बढ़कर श्लोकका उत्तरार्द्ध है—

स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्॥

१. भगवद्गीता, २/४०।

मुहम्मद अलीकी दोस्तीका मुझे खेद नही है। मैं कहता हूँ कि वह ईमानदार और खुदापरस्त था। उस वक्त वह जो कहता था, वह शुद्ध और सत्य समझकर कहता था। हाँ, वह यह जरूर कहता था कि खुदाकी राहमें हम तलवार ले सकते हैं और झूठ भी बोल सकते हैं। सभी धर्मोंके लोग ऐसा ही कहते हैं। ईसाइयोंमें भी ऐसी कोई कैद नही है। सनातनी तो साफ-साफ कहते हैं, मनुके एक श्लोकका प्रमाण भी सुना देते हैं कि गायको बचानेके लिए, अथवा स्त्रियोंसे और विवाह इत्यादिमें झूठ बोल सकते हैं। धर्मके नाम पर अधर्म भी प्रतिष्ठित हो जाता है। लेकिन इसमें धर्मकी महिमा ही है। सनातनियोंने मुझसे कह दिया कि तुम तो यवन हो, तुम धर्माधर्म क्या समझो? तुम्हारा सत्य तो असत्यसे भी हानिकर है। धर्मके नामपर अधर्म कहाँ तक बढ़ सकता है, उसका प्रमाण यह वृत्ति है।

यह सच है कि हम देहातमें लोगोंको राजनैतिक तालीम देनेके लिए जाते हैं। मगर जैसाकि मैं समझा रहा हूँ, राजनैतिक तालीमका साध्य है रचनात्मक कार्यक्रम। लोगोंके सामने हमको 'राजनीति' शब्दका उच्चारण भी नही करना है। यही बात धर्मपर लागू है। उनको धर्मका नाम भी नही बताना है। उनसे कहिए कि पाखाना अच्छी तरह साफ करो और बादमें स्नान करो। स्वास्थ्य-विज्ञान धर्मसे विमुख थोड़े ही है, लेकिन धर्म उनकी बुद्धि से परे है। यह उनकी निकृष्टताका प्रमाण नही है, वरन् हमारी नीचताका प्रमाण है। उनके सामने सत्य और अहिंसाका नाम लेते हुए मुझे सकोच होता है। आज तक हमने उन्हें नीचा रखा। उनसे मैं सिर्फ उनके आचरणकी बातें कर सकता हूँ। मैं उन्हें ब्रह्मचर्यके बारे में क्या बताऊँ? वे तो उसका उच्चारण भी नही कर सकते। 'भरमचार' कहते हैं और जब वे उसे समझते ही नही, तो उनके लिए वह 'भरमचार' ही है। मैं तो उनका चाल-चलन समझना चाहता हूँ, उनका विश्वास-पात्र बनना चाहता हूँ। उनमें से कोई आकर मुझसे कह देता है कि हाँ, मैं तो अपनी भाभीसे भी सम्बन्ध कर लेता हूँ क्योंकि हम लोगोंमें ऐसे ही चलता रहता है, तो क्या मैं इसका तिरस्कार करूँ? यह पाप तो हमारे सरपर है। मैं सत्य और अहिंसाका नाम लिये बिना धीरे-धीरे छोटी चीजों द्वारा उनका प्रचार करता हूँ। मैं दूसरा तरीका नहीं जानता।

अगर हम अहिंसक स्वराज्य चाहते हैं, तो वह इसी प्रकार आयेगा और हमारा कोई विरोध नही कर सकेगा — क्या इंग्लैंड और क्या अमेरिका। बालूभाई अब सवाल कर रहे हैं। इसका जवाब तो १७ साल पहले ही दे दिया था। १९२० में इसी चरखेपर सब लोग फिदा थे। मोतीलालजी, मुहम्मद अली, शौकत अली, अब्बास तैयबजी, सभी मुग्ध थे। सभी कातने भी लग गये थे। समझते थे कि पार्लियामेंट द्वारा काम नही होगा। आज तो मैं इतना उदार-चित्त हो गया हूँ कि पार्लियामेंटमें भी जानेकी इजाजत दे देता हूँ। राजनैतिक तालीम देनेका यह अनुभवसिद्ध तरीका है। इसी तरीकेसे लोग तैयार होंगे। कल सेगाँवके सब लोग स्वावलम्बी बन जायें, अपना गाँव साफ-सुथरा रखें, किसीकी एक पाई न चाहें, तो उनकी स्वतन्त्रतामें और क्या बाकी रहा? वे कहेंगे, जमनालाल सेठ कौन होता है?

जमीन हम जोतते हैं, जमीन हमारी है। वह तो तभीसे है जब जमनालालका जन्म भी नहीं हुआ था। हम डरेंगे नही। गुण्डेबाजी थोड़े ही करेंगे। जमनालालजी के दीवानजी आयें तो उन्हें मारेंगे नही। अपनी जमीन परसे हटाकर दूर कर देंगे। ये चीजें उन लोगोको सिखानी पड़ेंगी। माना कि सब जमीनके मालिक लोग हैं। लेकिन मैं यह सिद्ध कैसे करूँगा? दो ही तरीके हैं। लड़ाईसे या समझाकर। समझाकर ऐसा करना धर्म-मार्ग है। अगर आप यह नही कर सकते, तो किशोरलालका कहना सच है। तब तो सोशलिस्ट ही सच्चे साबित होंगे। और मुझे आपसे कहना होगा कि उन्हींके पीछे जाइए। वे भी तो जनताके हितके लिए खडे हैं। उनका प्रभाव जनतापर न पड़े तो मुझे लज्जा होगी। लेकिन आप सेवा-क्षेत्रमें उनसे पहले आये हैं। काफी परिश्रम भी किया है। आपका प्रभाव न पडे तो मुझे और भी अधिक लज्जा होगी।

लेकिन यह प्रभाव कैसे पड़ेगा? तोतेकी मानिन्द 'रचनात्मक कार्य', 'रचनात्मक कार्य' रटनेसे काम नही चलेगा। आपकी प्रवृत्ति चरखा संघकी अपेक्षा अधिक तेजस्वी है। चरखा संघमें ऐसे लोग भी हैं, जो उन्हें सौंपा हुआ काम कर देते हैं। आपमें वे लोग आते है जो ज्ञानपूर्वक, बुद्धिपूर्वक उसका शास्त्र बनाते हैं। चरखा संघ, उद्योग सघका कार्यक्षेत्र मर्यादित है। यही हाल गो-सेवा सघ-जैसी अन्य संस्थाओंका है। आपका क्षेत्र व्यापक है। गांधी सेवा सघ विराट पुरुष है— कांग्रेससे स्पर्धाकी बात नही कर रहा है। कांग्रेस भी विराट पुरुष है। लेकिन वह लोकनिर्मित है। वह उनके बल और उनकी कमजोरीको भी प्रकट करती है। लेकिन आपकी संस्था स्वयं-निर्मित है। वह ऐसे लोगोका समुदाय है जिन्होने सत्य और अहिंसासे उद्भूत सारे कार्यक्रमको पूरा करनेकी ठान ली है। वह एक जबर्दस्त वृक्ष है। और चरखा संघ, उद्योग सघ उसकी शाखाएँ कही जा सकती हैं। आपका संघ आपकी शक्तिका द्योतक है या होना चाहिए। सत्य और अहिंसाकी शक्ति इसके द्वारा प्रकट होगी इसलिए इसमें बलका ही प्रदर्शन होना चाहिए। जमनालालजी ने इसे भले ही बनाया हो, पर यह उनकी सस्था नही है। जमनालालजी खुद सबसे छोटे दर्जेके सदस्य बने और उन्होने कहा कि वह पदाधिकारी नही बनेंगे। यह उनकी नम्रताका ही नही, बल्कि बुद्धिमत्ताका भी प्रमाण है।

हम जिसे रचनात्मक कार्य कहते हैं, उसकी मार्फत हिन्दुस्तानकी सब तरहकी उन्नति करना चाहते हैं। एक-एक कामको अलग-अलग अपने मर्यादित रूपमें करनेवाली भिन्न-भिन्न संस्थाएँ हैं। उनके लिए आपका कार्य भूषण होना चाहिए। आज मैं ऐसा नही कह सकता। इसलिए हम सबको असंदिग्ध रूपसे यह कह देना चाहिए कि हमारी प्रधान प्रवृत्ति रचनात्मक कार्य है और उसी उद्देश्यकी पूर्तिके लिए हम पार्लियामेंट में जाना चाहते हैं।

मैंने जो कुछ कहा है, उससे यदि आपको पूरा-पूरा सन्तोष नही हुआ है, तो उसका कारण यह है कि मैं अपनी भाषाको अभी खासा कानूनी नही बना पाया हूँ। लेकिन वह परसोंसे स्पष्ट है। मेरी भाषा ही अपूर्ण है। जो स्वयं अपूर्ण हो उसकी

भाषा भी अपूर्ण होनी ही चाहिए। और सत्रह वर्षके बाद भी अगर आप नही समझे हैं तो मै समझानेवाला अपूर्ण हूँ और आप समझनेवाले भी अपूर्ण हैं। ठकारका भी एक ऐसा ही खत आ गया। पत्र अच्छा और सुननेके लायक है। ठकार तो ढीठ पुरुष है। मेरे पास समय नहीं है, लेकिन उसकी स्तुतिके लिए उसके पत्रका एक वाक्य मै आपको सुनाना चाहता हूँ।

गत वर्ष मुझ खास धूलियामें ही रहना पड़ा और शायद आइन्दा भी रहना पड़े, ऐसा दीख पड़ता है। तो भी ग्राम सेवाकी मेरी ऊर्मि (आस्था) रत्ती-भर भी कम नहीं हुई है, या मेरे अन्दर शहरी जीवनका मोह यत्किंचित भी निर्माण नहीं हुआ हैं।

जिन सेवकोके दिलसे अब तक शहरी जीवनका मोह नि.शेष न हो गया हो उनका चरखेके लिए जो दृढ आग्रह था वह शिथिल हो गया है। ऐसा होनेसे दिलमें शकाएँ आ जाती हैं। मेरे लिए तो चरखा ही सब कुछ है। मैं देहातमें पडा हूँ और चरखेका ही काम अधिकसे-अधिक करता हूँ। राजनीतिक मामलोमें मैं सलाह देता हूँ लेकिन वादमें उसे भूल जाता हूँ। रचनात्मक कार्यके लिए लिखता हूँ और काम करता हूँ। मै तो निराश नही होता। गाधी सेवा सघके लोगोने भी जागृतिसे अपना काम नहीं किया है। चरखेका काम इतना ही नहीं है कि वह औरतोको दो पैसे या दो आने देता है। चरखेके द्वारा अगर हम अपनी बुद्धिका विकास नही कर सकते तो उसे जाने दीजिए। मेरी तो यह श्रद्धा है कि चरखा स्वराज्य लायेगा। लेकिन किशोरलालको यह डर है कि आपने यह सब मेरी खातिर ग्रहण कर लिया है। मेरे बाद आप इसे छोड़ देंगे। इसलिए वह आपको प्रलोमनोसे दूर रखना चाहता है।

चरखेमें श्रद्धा रखनेवाला मैं अकेला ही क्यो न रह जाऊँ, लेकिन उसीकी सेवामें मैं मर जाऊँ तो मुझे अभिमान होगा। चरखा चलाते-चलाते या हरिजन सेवा करते-करते अगर मर जाऊँ तो मुझे तो अभिमान होगा, वह क्षम्य भी होगा। आखिर किसी-न-किसी साधन द्वारा हमें ईश्वरके साथ सान्निध्य जोड़ना है। तो चरखे द्वारा क्यों न हो? चरखेने मेरी सेवा की है या मैंने चरखेकी सेवा की है, जो चाहे कह लीजिए। अगर भक्त ईश्वरका दास है तो ईश्वर भी भक्तका दासानुदास होता है। इस अर्थमें मैं कह रहा हूँ। यदि हम ऐसा वातावरण पैदा न कर सके कि चरखे द्वारा ही बुद्धिका विकास हो, तो कान्ति और बाल कालेजमें न जायें तो क्या करे? उनमें एकलव्यकी मौलिकता थोड़े ही है? मेरी बात यदि आपकी समझमें आ जाये तो दुविधाका कोई कारण नही रहेगा। मुख्य बात एकाग्रताकी, तन्मयताकी है। किशोरलालने अपना भाषण इस तन्मयतासे तैयार किया कि मानों वह सारी दुनियाके लिए हो। इसका साक्षी मैं हूँ। उसके लिए तो सघ ही दुनिया है। आपकी सुविधाके लिए उस भाषणका सार भी तैयार किया। अनासक्तिपूर्वक काम करता है, फिर भी कितना मनोयोग है। वह तो युधिष्ठिर है, मै ऐसा नही हूँ। मुझमें भीम और अर्जुनकी शक्ति आ जाये तो भी खुश हूँ। मुझे लोग कर्मयोगी कहते है। मैं नहीं जानता कि मैं कर्मयोगी हूँ या और कोई योगी। लेकिन कामके विना मै जी नही सकता, इतना ही मैं जानता हूँ। जब कोई बात मेरे दिलमें बैठ जाती

है तो जब तक मैं उसे अमलमें न लाऊँ, मुझे चैन नही पड़ता। लोग कहेंगे कि पागल है। कहता है, "चरखा हाथमें रखकर मरना चाहता हूँ।" मरते समय माला हाथमें नही लेना चाहता। पर मैं माला भी ले लेता हूँ, लेकिन जब थक जाता हूँ और सोना चाहता हूँ तब। एकाग्रताके लिए चरखा ही मेरी माला है। मेरे प्रभुके मेरे पास सहस्रो रूप है। कभी मै उसका दर्शन चरखेमें करता हूँ, कभी हिन्दू-मुसलमान एकतामें और कभी अस्पृश्यता-निवारणमें। मुझे जब मेरी भावना जिस रूपकी ओर खीच ले जाती है, तब उसकी ओर चला जाता हूँ। जब जिस सस्थाके कमरेमें जाना चाहता हूँ, चला जाता हूँ। और वहीं अपने प्रभुके साथ सान्निध्य कर लेता हूँ। 'गीता'में भगवान्‌ने कहा है कि जो मेरी उपासना करता है उसका मै योगक्षेम चलाता हूँ। आप यदि मेरी बातको समझ गये हैं, तो आप इसी श्रद्धासे उसपर डटे रहेंगे।

गांधी सेवा संघके तृतीय वार्षिक अधिवेशन (हुदली, कर्नाटक)का विवरण, पृ० ५४-६७

११५. भाषण: गांधी सेवा संघकी सभा, हुदलीमें – ४

२० अप्रैल, १९३७

अब मामाका प्रस्ताव लेता हूँ। प्रस्ताव यह है:

क्योंकि संघका उद्देश्य राष्ट्रीय महासभाके रचनात्मक कार्यको धार्मिक दृष्टिसे देखकर सफल करनेका है, इसलिए अस्पृश्यता-निवारण-जैसे कार्यमें संघके सदस्योंका धर्म है कि वे भंगी इत्यादि हरिजन भाइयोंके प्रत्यक्ष संसर्गमें आकर उन्हें और दूसरों को बतायें कि वे हरिजनोंमें किसी प्रकारका भेद नहीं रखते हैं। जैसेकि हरिजनोंको अपने घरमें स्थान देंगे, जैसे दूसरोंका ऐसे हरिजनोंका आतिथ्य करेंगे, उनके साथ भोजन करनेका मौका ढूँढ़ेंगे, किसी हरिजनको अपने साथ रखेंगे, अपने घरमें किसी हरिजन-बालकका पालन करेंगे, हरिजन बस्तियोंमें जाकर अनेक प्रकारसे उनकी सेवा करेंगे, हरिजनोंको कोई भी काम नीच नहीं है, ऐसा स्पष्ट करनेके लिए उनके काम प्रेमसे करेंगे।

वल्लभभाई पटेल: यह प्रस्ताव सनातनियोंके डरको सच साबित कर रहा है। . . . छुआछूत मिटानेसे लेकर एक-एक कदम बढ़ाते हुए आप धीरे-धीरे बेटी-व्यवहार तक ले जाना चाहते हैं! (हँसी)

गांधीजी: सर्वसाधारणके लिए अस्पृश्यता-निवारण काफी है। पर आपके लिए सिर्फ स्पर्श काफी नहीं है। आपको तो आगे बढ़ते ही जाना चाहिए। आपकी प्रगतिका क्षेत्र असीम है। मामूली लोग आकाश तक ही देख सकते हैं। वैज्ञानिक कहते हैं कि हम आकाशगंगाके जगत्‌को देख लेते हैं। लेकिन उससे परे कुछ हो तो हमें पता नहीं। लेकिन सत्य तो आकाशको भी छेदकर उसके परे चला जाता है। हमको तो

अपना जीवन सत्यमय बनाना है। हम देखते हैं कि सत्यके नामपर असत्य लोगोंके आदरका पात्र हो रहा है। धर्मका तो उद्देश्य है बन्धुत्वको बढ़ाना, मनुष्य-मनुष्यमें जो कृत्रिम भेद हैं, उनको कम करना। लेकिन आज उसीके नामपर अछूतोंके साथ घृणित व्यवहार हो रहा है। मैं कह चुका हूँ कि असत्य स्वयं कमजोर है, परतन्त्र है। बिना सत्यके आधारके वह खड़ा ही नहीं रह सकता। लेकिन मैं आपको यह बतलाना चाहता हूँ कि सत्यके नामपर अगर असत्य भी इतना विजयी हो सकता है, तो स्वयं सत्य कितना होगा? इसका अनुमान कौन लगा सकता है?

हम लोग जो इस संघके सदस्य हैं उनके दिलमें किसी नाजायज भेदके लिए स्थान नहीं होना चाहिए। एक अजीब-सी बात है। लेकिन मेरा भेद तो उसी दिन मिट गया, जिस दिन मैंने एक मुसलमान लड़केके साथ जरा-सा गोश्त खा लिया।[1] गोश्त खाना तो खैर बुरी बात थी और है। लेकिन एक दूसरी दृष्टिसे भी उस जरा-सी बातने मुझे बचाया। जरा-सा गोश्त खा लिया उससे मुझे पता चल गया कि उसमें कोई खास मजा नहीं है। इसलिए मैं विलायतमें बच गया और अपनी माँ को मैंने धोखा नहीं दिया। करोड़ोंके साथ मैंने रोटी-बेटी व्यवहारकी बात नहीं की। रोटी-बेटी व्यवहार तो हम ब्राह्मणोंसे भी नहीं करते। मेरी माँ जब मरजादी बन जाती थीं तब मेरे हाथका भी नहीं खाती थी। हिन्दू जनता अब भी रोटी-व्यवहारमें काफी बन्धनोंका पालन करती है। मैंने भी अब तक उनके साथ मर्यादाओंका पालन किया है। इसलिए उनसे रोटी-व्यवहारके विषयमें अब तक कुछ नहीं कहा।

लेकिन आपसे रोटी-व्यवहार तक जानेके लिए मैं कहूँ तो सत्यकी हिंसा नहीं करूँगा। आपके सामने तो धर्मकी बात कह दूँ। मैं नित्य-धर्मकी बात कह रहा हूँ। यह कोई नैमित्तिक चीज नहीं है। बेटी-व्यवहारमें आपका जोर नहीं है। आप अपने बालकों पर हरगिज बलात्कार न करें। रोटी-व्यवहारकी बात अलहदा है। आपकी माता अगर कहे कि यह अधर्म है तो आप उनसे कहें कि माँ, मैं तेरे हाथका पका भी खाऊँगा और अछूतके हाथका पका भी खाऊँगा। इस कारण तू मेरा त्याग भी करे तो हर्ज नहीं। आप अपनी माता और धर्मपत्नीके साथ भी जबर्दस्ती नहीं कर सकते। ऐसी दशामें हमें दो घर बनाने चाहिए। क्योंकि यदि उनपर जबर्दस्ती नहीं करेंगे, तो अपने धर्मपर भी नहीं करेंगे। यानी अपनी आत्मापर भी बलात्कार नहीं करेंगे। हमारी माता और स्त्री हमारा परित्याग करना अपना धर्म मान सकती हैं। बिना अदावतके हम एक-दूसरेसे अलग-अलग रहें। उस दशामें उनके साथ मैं ज्यादा प्रेमभावसे बरताव करूँगा। मैं उनकी भावनाओंको न दुखानेकी कोशिश करूँगा। लेकिन उनको खुश करनेके लिए हरिजनकी भावनाओंको नहीं दुखाऊँगा। यह मुझे सत्य धर्म और हिन्दू धर्म ही सिखाता है। मेरे लिए सत्य धर्म और हिन्दू धर्म पर्यायवाची शब्द हैं। हिन्दू धर्ममें अगर असत्यका कुछ अंश है, तो उस अंशको मैं धर्म नहीं मान सकता। अगर इसके लिए सारी हिन्दू जाति मेरा त्याग कर दे और मुझे

१. देखिए खण्ड ३९, पृ० २१-२।

अकेला भी रहना पड़े तो भी मैं कहूँगा, मैं अकेला नही हूँ, तुम अकेले हो। क्योंकि मेरे साथ सत्य है, और तुम्हारे साथ नही है। सत्य तो प्रत्यक्ष परमात्मा है। . .[1]

मैं कुष्ठ रोगीका आतिथ्य भी कबूल करूँगा। लेकिन तरीका अलग होगा। मैं उससे प्रेमके साथ कहूँगा कि वह मुझे ही खाना-पकाने दे और पानी लाने दे। जहाँ तक मेरा जाती-सवाल है, मैं तो अगर कुष्ठ रोगी आग्रह करे तो उसके प्रेमके लिए उसका दिया हुआ भोजन और पानी भी स्वीकार कर लूँगा। उसके प्रेमके लिए मुझे मर जाना मजूर है। लेकिन सारा संसार तो इस रूपमें उसके आतिथ्यको स्वीकार नही कर सकता। इसलिए मैं भी उसी प्रकारसे स्वीकार करूँगा जिस प्रकार सारा समाज कर सके। मैंने परचुरे शास्त्रीके साथ भी ऐसा ही किया। लेकिन वह दूसरा किस्सा है। रोगकी बातको हमें अस्पृश्यतासे नही मिलाना चाहिए। ये दोनों प्रश्न अलग-अलग हैं। भंगीकी बात कुष्ठ रोगीसे जुदा है। उनसे सम्पर्क बढ़ानेमें उन्हें स्वच्छताका पाठ देनेका मौका हमें मिलता है। यह भी तो है न कि अगर कोई भंगी मुझे या तुम्हे न्योता देगा तो उसे खुद इस बातकी फिक्र होगी कि वह नहा धोकर साफ-सुथरे कपड़े पहनकर हमें स्वच्छ और शुद्ध अन्न खिलाये।

आप दरिद्रताको इस प्रश्नमें न मिलाइए। दारिद्र्यका प्रश्न आर्थिक है, और अस्पृश्यता-निवारणका सवाल धार्मिक या पारमार्थिक है। मैं दरिद्री किसानका दारिद्र्य निवारण नही कर सका तो मेरा धर्म नाश नहीं होता। लेकिन धनाढ्य हरिजनकी भी अस्पृश्यता अगर मैं रहने दूँगा तो धर्म-नाश होता है। इसलिए सेवारम्भ तो हरिजनोसे ही होना चाहिए। दारिद्र्यका सवाल यहाँ पर अप्रासंगिक है।

गांधीजीने इसके बाद गोसेवा-सम्बन्धी निम्न प्रस्ताव उपस्थित किया:

> **हिन्दुस्तानकी आर्थिक और नैतिक उन्नति करना संघके उद्देश्योंमें है, और गोधनकी रक्षामें प्रत्यक्ष अहिंसा है और करोड़ोंका आर्थिक लाभ है। इसलिए संघके सदस्योंका ध्यान गोसेवाकी ओर खींचा जाता है। सदस्योंका धर्म है कि वे गो सेवा-शास्त्रका यथासम्भव अभ्यास करें और गोधनकी रक्षाके लिए यथाशक्ति प्रयत्न करें। कमसे-कम सब सदस्य भैंस आदिके दूधकी अपेक्षा गो-दूध और उसीसे बननेवाले पदार्थोंका ही उपयोग करनेका यथाशक्ति प्रयत्न करें और गो-दूध आदिका प्रचार करें।**

इस प्रस्तावपर आज मैं खास जोर नही दे रहा हूँ। यदि आपके दिलमें शक हो और आप इसपर बहस करना चाहें तो इसे हम छोड़ दें क्योंकि यह एक नई चीज है। उसकी भाषा कांग्रेससे अलग है। किशोरलालने अपने अभिभाषणमें जो बातें लिखी हैं वे है तो आसान, पर ज्यादा काम देनेवाली नही हैं। मैंने इस प्रस्ताव को कांग्रेसमें पेश नही किया क्योंकि इस रूपमें यह हिन्दुओके अलावा दूसरोसे सम्बन्ध नही रखता; यह हिन्दू धर्मका एक अविभाज्य अंग है। सनातनी मेरी गोसेवाकी पद्धति

१. किसीने बीचमें टोकते हुए कहा — हरिजनोंको स्वच्छताका ध्यान रखना होगा। तभी लोग उनके साथ खान-पानका व्यवहार कर सकते हैं। यदि कोई कुष्ठरोगी हमारा बड़ा आतिथ्य करे तब भी हम उसका दिया अन्न-जल कैसे ग्रहण कर सकते हैं?

को त्याज्य समझते हैं और गोरक्षाकी संस्थाओंको अपनाते हैं। इसमें उनका घोर अज्ञान है। मैंने प्रचलित गोरक्षणको गोभक्षण कहा है। और वे शब्द अब तक वापस नहीं लिये हैं। लोग मुझपरे इस कारण बेहद नाराज हैं। लेकिन वे मेरी गर्दन भी उतार ले तो वही कहूँगा जो सच है। हमारे धर्ममें पहले गायके प्रतिपालनका आग्रह है, बादमें ब्राह्मणके प्रतिपालनका — "गो-ब्राह्मण प्रतिपालन।" गोसेवा हमारे धर्मका अविभाज्य अंग है। लेकिन आज तो हम गोरक्षक नहीं गोभक्षक हैं। गायके लिए हमको मर जाना चाहिए। आज तो हम अपने लिए उसे मरने देते हैं। हिन्दू धर्ममें आम तौरपर आत्महत्या पाप माना जाता है। लेकिन खास मौकोंपर हमारा धर्म आत्महत्याकी इजाजत ही नहीं बल्कि आज्ञा देता है। इसके अनुसार गायको बचानेके लिए मौका पड़ने पर हमें अपने आपको मार भी डालना चाहिए।

इस प्रस्तावमें इतना ही कहा गया है कि सदस्य गायका घी-दूध खानेका आग्रह रखे। व्रतकी बात नहीं है। आग्रहका मतलब यह है कि अगर जान बचानेके लिए भैंसका दूध या घी बरतना पड़े तो ले ले। लेकिन व्रतमें यह भी गुंजाइश नहीं है। आप चाहें तो 'आग्रह' के बजाय 'भरसक प्रयत्न' रख सकते हैं, जिससे भाषा और भाव दोनों नरम हो जायेंगे। कल अगर मैं धोत्रेके घर चला जाऊँ तो वहाँ मैं आग्रह रख सकता हूँ और मुझे रखना चाहिए। ऐसा ही हर जगह मैं करूँगा। 'भरसक प्रयत्न' मेरे लिए एक अर्थहीन शब्द-प्रयोग है।

वल्लभभाई पटेल: जो बीमार है या हमेशा सफर करता है, वह आग्रह भी नहीं निभा सकता।

गांधीजी: ऐसी हालतमें भैंसका घी या दूध ले लेना आग्रहमें आ जाता है। 'भरसक प्रयत्न' दूसरी बात है। उसकी कोई मर्यादा नहीं है। मैं इसे धर्मकी दृष्टिसे देखता हूँ। और मेरे लिए तो धर्मसेवा और देशसेवा एक ही है।

यह जिम्मेदारी जमनालालजी-जैसोंकी है। मेरे पास तो गायके घी की बनी-बनाई योजना है।[1] ये क्यों नहीं दो-चार लाख रुपये इस प्रयोगमें फेंक देते?

आगामी सम्मेलनके बारेमें बंगाल, संयुक्त प्रान्त और उत्कल तीनों प्रान्तोंके निमन्त्रणका उल्लेख करते हुए गांधीजीने कहा:

उड़ीसाके प्रति मुझे खास पक्षपात है। चन्दा भी वहाँ हुदलीसे अधिक मिलनेकी आशा है। लेकिन मेरी रायमें सफरखर्च देना उचित नहीं है। सदस्योंको अपने-आप खर्च करके आना चाहिए। जो नहीं दे सकते हैं, उनके कार्यालय सिफारिश कर दें तो उतना पैसा गोपबाबू इकट्ठा करके उन्हें दें। और अगर वे भी न जुटा सकें तो उन्हें निमन्त्रण नहीं देना चाहिए। लेकिन संघ हरगिज प्रवास-खर्च न दे। गोपबाबूने सब शर्तें कबूल कर ली हैं। एक और कारण है। उड़ीसामें कांग्रेसने कमसे-कम काम किया है। वहाँ कांग्रेसको बहुमत मिला, यह चमत्कार है। कांग्रेसका एक ही आदमी वहाँ हारा और वह भी मेरे कारण। वह ऐसा नादान था कि उसके हारनेसे कांग्रेसका फायदा ही हुआ है। उड़ीसावाले बेचारे ढीले कहलाते हैं। जब वे

१. किसी ने कहा कि गाय का घी बहुत महँगा है।

बुला रहे हैं तो हमें बिहार और बंगालको छोड़ देना चाहिए। गुजरातके पक्षमें कांग्रेसका फैसला देनेमें मैंने इसी न्यायका अवलम्बन किया। रास और गरीव बारडोलीके बीच विवाद था। मैंने कहा रास बलवान है। उसे त्याग करना चाहिए। इसलिए रासको दुःख देकर भी बारडोलीका पक्षपात किया।

गांधी सेवा संघके तृतीय वार्षिक अधिवेशन (हुदली, कर्नाटक)का विवरण, पृ० ६७-८१

११६. पत्र : कन्हैयालाल मा० मुंशीको

हुदली
२१ अप्रैल, १९३७

भाई मुंशी,

२५ को जरूर आओ। अगर कार्यकारिणीकी बैठक प्रयागमें हुई और मुझे वहाँ जाना पड़ा, तो तुम्हें मालूम हो जायेगा। तब तुम मत आना। मुझे अभीतक कोई खबर नहीं मिली है।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६१७) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

११७. पत्र : डॉ० जवाहरलालको

हुदलीके निकट (बेलगाँव)
२१ अप्रैल, १९३७

प्रिय डॉ० जवाहरलाल,

आपके दिनांक १४ अप्रैलके विस्तृत पत्रके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। आपका विचार सही है कि शिशुको हालमें जो इन्फ्लुएंजा हुआ था वह भी उसकी मृत्युका एक कारण बन गया। मैं समझता हूँ कि उसे वहाँ लगभग एक पखवाड़े रहना ही पड़ेगा, तभी वह सफर करने लायक हालतमें होगी। प्रसूति अस्पतालमें कोई रसोईघर भला क्यों नहीं है? कृपया अपनी पत्नीको मेरी याद दिला दीजिएगा। मैं आशा करता हूँ कि उनका स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा है।

हृदयसे आपका,

डॉ० जवाहरलाल, एम० एल० ए०
स्वरूप सदन
कानपुर

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. 'पुनश्च' में चन्द्रशंकर शुक्लने इतना और लिखा था कि एक तार मिला है जिसके अनुसार कार्यकारिणीकी बैठक २६ तारीखको इलाहाबादमें होगी और गांधीजी २२ तारीखको पूना, २३ को वर्धा और २५ की रातको इलाहाबाद पहुँचेंगे तथा वे २५ को वर्धामें नहीं होंगे।

११८. भेंट: 'हिन्दू' के संवाददाताको[1]

पूना
२२ अप्रैल, १९३७

संवाददाता: आप कहते हैं कि आप भारत सरकार अधिनियममें तनिक भी परिवर्तन करवानेकी किसी प्रकारकी कोशिश नहीं करना चाहते। इससे आपका तात्पर्य क्या यह नहीं है कि आप तत्काल उसमें कोई संशोधन नहीं चाहते, किन्तु भविष्यमें ऐसा करनेका विचार आप रखते हैं?

गांधीजी: यह एक सर्वथा गलत दृष्टिकोण है। मैं उसमें कोई संशोधन नहीं चाहता — न अभी, न आगे। कांग्रेसका आग्रह है और मेरा भी है कि अधिनियमको बिलकुल रद कर दिया जाये ताकि जल्दीसे-जल्दी उसका स्थान जनता द्वारा बनाया गया एक अधिनियम ले सके। मैं जो चाहता हूँ वह यह है कि इससे पूर्व कि कांग्रेस मन्त्रिपद स्वीकार करे, गवर्नर यह आश्वासन दें कि वे प्रान्तके रोजमर्राके प्रशासनमें दखल नहीं देंगे। मैं अभी भी ऐसा मानता हूँ कि यह आश्वासन देना उनकी शक्तिमें है। कारण, अधिनियमके अन्तर्गत, अधिनियम द्वारा बताई गई मर्यादाओंके भीतर रहते हुए प्रान्तका प्रशासन करनेकी जिम्मेवारी मन्त्रियोंकी है, गवर्नरोंकी नहीं। इसलिए मुझे लोगोंकी इस बातसे हैरानी होती है कि गवर्नर लोग संविधानके अन्तर्गत ऐसा आश्वासन नहीं दे सकते। इसीके चलते मुझे उन ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंकी नीयत पर भी शंका होती है जिनके ऊपर इस अधिनियमको कार्यरूप देनेकी जिम्मेदारी है।

प्रश्न: क्या आपका मतलब है कि चाहे गवर्नरकी रायमें गम्भीर संकटकी स्थिति उत्पन्न हो गई हो, तब भी गवर्नर किसी भी हालतमें हस्तक्षेप नहीं कर सकते?

उत्तर: यह एक अच्छा प्रश्न है। निश्चय ही इस प्रकारका मेरा कोई मतलब नहीं है। मैं ऐसी सम्भावनाकी कल्पना कर सकता हूँ जब कोई मन्त्री ऐसी भद्दी और भयंकर भूल कर बैठे जिससे उस जनताको ही हानि पहुँचती हो जिसके नाम पर वह कार्य कर रहा है। वैसी स्थितिमें गवर्नरका कर्तव्य बिलकुल स्पष्ट होगा। वह मन्त्रियोंको समझानेकी कोशिश करेगा, और यदि मन्त्री लोग उसकी बात नहीं सुनते तो वह मन्त्रिमण्डलको बरखास्त कर देगा। आश्वासन हस्तक्षेप न करनेका माँगा

१. हिन्दूके विशेष संवाददाताने इस भेंटकी रिपोर्टमें लिखा था: "पिछले दो या तीन दिनोंमें मुझे महात्मा गांधीके साथ राजनीतिक स्थिति पर काफी लम्बी चर्चा करनेका अवसर मिला। मेरा उद्देश्य इस बातकी स्पष्ट जानकारी प्राप्त करना था कि जिन छः प्रान्तोंमें कांग्रेसको पिछले आम चुनावोंमें बहुमत प्राप्त हुआ था वहाँ गवर्नरोंसे किस प्रकारके आश्वासनोंकी माँग की गई थी। पूना पहुँचने पर आज सुबह जो अन्तिम भेंट [गांधीजी से] हुई, और जिसकी रिपोर्ट नीचे दी जा रही है, उससे कांग्रेसकी स्थिति स्पष्ट होती है।"

गया है। यह आश्वासन नहीं माँगा जा रहा है कि वह मन्त्रिमण्डलको बरखास्त नहीं करेगा। लेकिन जब विधान-सभामें मन्त्रियोको स्पष्ट बहुमत प्राप्त है, उस स्थितिमें मन्त्रिमण्डलको बरखास्त करनेका मतलब होगा कि फिरसे चुनाव कराये जायें। चुनावकी स्थिति पैदा करनेका अवसर जितना किसी प्रान्तके मन्त्रिमण्डलको प्राप्त होगा, उतना ही गवर्नरको भी होगा। लेकिन ऐसी स्थिति आये दिन पैदा नही हो सकती। इसलिए मै जो चाहता हूँ, वह यह कि दोनों पक्षोके बीच एक सम्मानजनक समझौता हो जाये; ऐसा समझौता जिसका कोई भी ईमानदार पक्ष दोहरा अर्थ नही कर सकता।

प्रश्न : क्या मै यह समझूं कि जहाँ कांग्रेसका बहुमत नहीं है, उन प्रान्तोंको भी यह आश्वासन दिये जानेपर आपको आपत्ति नहीं होगी?

उत्तर : जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, एक कट्टर लोकतन्त्रवादी होनेके नाते न केवल मुझे आपत्ति नही होगी, बल्कि मै कांग्रेसके लिए ऐसी कोई चीज नहीं चाहूँगा जो किसी दूसरे दलको स्पष्ट बहुमत प्राप्त होते हुए भी नही दी जा सकती।

प्रश्न : मै मानता हूँ कि आप गवर्नरोंके विशेष उत्तरदायित्वोंके बारेमें जानते है।

उत्तर : मुझे खेद है कि मैं इसके बारेमें कुछ नहीं जानता।

प्रश्न : तो क्या मैं आपको बतलाऊँ कि अधिनियमके अन्तर्गत शान्ति और सुव्यवस्थाके लिए, अथवा अल्पसंख्यकोंके उचित अधिकारोंके लिए अथवा सिविल-सेवाके सदस्योंके अधिकारोंके लिए, या भारतीय रियासतों आदिके लिए गम्भीर खतरा पैदा होनेकी स्थितिमें गवर्नरोंको उत्तरदायी माना गया है?

उत्तर : किन्तु यदि गवर्नर उत्तरदायी है तो अपने पदकी लियाकयत रखनेवाले मन्त्रियोका शान्ति-सुव्यवस्था रखने, अल्पसंख्यकोके अधिकारोकी सच्ची रक्षा करने, रियासतों — अगर रियासतोका अर्थ रियासतोकी रियाया और वहाँके शासकोसे है तो, — के अधिकारोंकी रक्षा करनेका उत्तरदायित्व गवर्नरोसे भी ज्यादा है। रियासतोंके अन्दर रियायाके विरुद्ध शासकोंके अधिकारोकी कल्पना मैं कर ही नही सकता। इन सबमें भी दयनीय बात यह है कि तथाकथित स्वायत्तताको अधिनियमने इतना ज्यादा कमजोर बना दिया है कि गवर्नरका विवेकाधिकार अत्यन्त सीमित हो गया है। तथापि यदि मैं कांग्रेसी मन्त्री होता तो आपने जो चीजें गिनाई हैं, उनमें से एकको छोड़कर बाकी सबके लिए खुशीसे अपनेको उत्तरदायी मानता। जिस एक चीजके लिए मैं खुशीसे अपनेको उत्तरदायी नहीं मान पाऊँगा, वह है सिविल सेवाओंके अधिकारियोंके अधिकारोंकी रक्षा। इन अधिकारियोंकी सेवा-शर्तोंकी रक्षाकी गारंटी देना ही खुदमें एक ऐसी चीज है जिसके जरिये अधिनियम बनानेवालोंने स्वायत्तताको मजाक बना दिया है। किन्तु जो आश्वासन मैंने चाहे हैं उनमें मैंने उन अधिकारोंमें कटौतीकी माँग नही रखी है जिनकी गारंटी स्वयं अधिनियम देता है। अधिनियम जबतक लागू रहेगा, उस अवधिमें कांग्रेसके मन्त्रिगण अधिनियम द्वारा लगाई गई उन सीमाओं को अच्छी तरह जानते-बूझते हुए भी पद-भार ग्रहण करेंगे जिनके भीतर रहते हुए उन्हे अपने मन्त्रित्वकालके आरम्भसे ही कार्य करना होगा। फिर भी मुझे यह लगता है कि यदि कांग्रेस-प्रस्तावमें जिस प्रकारका आश्वासन देनेकी माँग की गई है, वह

मिल जानेपर मन्त्रिगण उन सीमाओंके बावजूद अपनी स्थिति इतनी सुदृढ़ बना ले सकते हैं कि संविधानकी मर्यादाओंके अन्दर रहकर काम करते हुए भी वे अधिनियम को रद करवा दें और वह दिन जल्दी करीब ले आयें जब संविधान-सभाकी बैठक हो — वह संविधान-सभा जिसके बनाये हुए अधिनियमको ब्रिटेनकी जनता स्वीकार कर लेगी। हाँ, वे तलवारके जोरसे ही शासन करना चाहते होंगे तो बात और होगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-४-१९३७

११९. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको

पूना
२२ अप्रैल, १९३७

एसोसिएटेड प्रेसने महात्मा गांधीसे जब कांग्रेस और सरकारके नाम मद्रासके नेताओंकी इस अपीलके बारेमें पूछा कि उन्हें वर्तमान गतिरोध दूर करना चाहिए, तो उन्होंने कहा :

मैंने उसे आदरके साथ और ध्यानपूर्वक पढ़ा है। जहाँतक मेरा सवाल है, मैंने अपनी समझमें अपनी स्थिति इतनी स्पष्ट कर दी है कि किसी तरहकी गलत-फहमीकी कोई गुंजाइश नहीं है। मैंने अब यह भी स्पष्ट कर दिया है कि मेरी व्याख्याके अनुसार मन्त्रि-पद स्वीकार करनेके बारेमें जो प्रस्ताव है, वह बहुत ही युक्तियुक्त है। इसलिए उनकी अपीलको मेरे उत्तरकी बजाय सरकारके उत्तरकी अधिक जरूरत है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २३-४-१९३७

१२०. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको[1]

२२ अप्रैल, १९३७

पिछले दिनों, काफी अरसेसे मैं कुमरीमें ही पड़ा रहा हूँ। यह जगह बिलकुल ही एक तरफ है, इसलिए आपने जो समाचारपत्र दिखानेकी कृपा की है, वे मैंने देखे नहीं थे। यह विश्वास करना मेरे लिए बहुत कठिन है कि मेरे सामने मौजूद [समाचारपत्रोंकी] इन कतरनोंमें जिन आदेशोंका[2] वर्णन है, वे कोचीनके महाराजाने जारी किये हैं। वे और उनके परिवारके सदस्य कूडलमणिक्कम मन्दिरमें पूजा-उपासना बन्द कर दें, यह तो मैं समझ सकता हूँ, पर उक्त आदेश मेरी समझमें नहीं आता। यह तो

१. यह हरिजन में "इरैंलीजियस" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।
२. देखिए परिशिष्ट ५।

साफ तौरपर त्रावणकोरके महाराजा और पुजारियोंके अधिकारोंमें हस्तक्षेप है, और उनके बारेमें यह कहा जा सकता है कि उन्हें धर्मका उतना ही ज्ञान है जितना स्वयं कोचीनके महाराजाको है। यदि यह बात सच है कि त्रावणकोरके मन्दिरोंमें जानेवाले सवर्ण हिन्दुओंके कोचीनके मन्दिरोंमें और कुँओं आदि पर जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है, तो यह चीज अव्यावहारिक होनेके साथ-साथ अत्यन्त अधार्मिक भी है। मेरी समझमें नहीं आता कि सर षणमुखम चेट्टी महाराजाको इस कार्यवाहीसे, जो मुझे कट्टर सनातनियों तकके दृष्टिकोणसे भी अनुचित लगती है, रोक कैसे नहीं सके। मैं तो यही आशा करता हूँ कि समाचारपत्रोंकी रिपोर्टोंने शायद परिस्थितिकी सही तस्वीर सामने नहीं रखी है और मुझे आशा है कि हर हालतमें कोचीनमें समझदारी से काम लिया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-४-१९३७

१२१. पत्र: अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
२३ अप्रैल, १९३७

प्रिय बागी,

तुम्हारे पत्र मेरे सामने हैं। आज ही सुबह लौटा हूँ। यह [पत्र] शिमलेके पते पर जायेगा।

विवरण-पत्रिका आदि मेरे पास हैं। उस पत्रका वजन ज्यादा हो गया था, इसलिए २ आने जुर्माना लगा।

यहाँ इतनी गर्मी है कि हमारा तेल निकल रहा है। मैं इस समय लम्बा पत्र लिखनेकी मनःस्थितिमें नहीं हूँ।

हाँ, मैं २५ को इलाहाबादके लिए रवाना होऊँगा और २९ को लौटूंगा।

इस बार भारतके बहुत-से हिस्सोंमें मौसम बड़ा कष्टदायी रहा।

यह क्या फिर एक्जिमा हो गया? क्या तुमने उन्हीं चकत्तोंकी बात की है?

सस्नेह,

तुम्हारा,
डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७६) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९३२ से भी

१२२. शराबखोरीका अभिशाप

एक बहन लिखती है :

> गाँवमें पहुँचने पर मैं यह सुनकर बेहद दुःखी हूँ कि शराब यहाँके लोगोंपर कैसा कहर ढा रही है। कुछ स्त्रियाँ तो बात करते-करते रोने लगीं; मगर वे बेचारी क्या कर सकती हैं? ऐसी एक भी स्त्री यहाँ नहीं है जो हमारे बीच सदाके लिए शराबका बन्द कर दिया जाना पसन्द न करे। शराबके कारण घरोंमें अत्यधिक दुःख-दारिद्र्य फैला हुआ है, लोगोंके शरीर और स्वास्थ्यका नाश हो रहा है। जैसा हमेशा होता आया है, पुरुषकी इस भोगासक्तिका बोझ स्त्रीको उठाना पड़ता है। मैं इन स्त्रियोंको क्या सलाह दे सकती हूँ? क्रोध और क्रूरताका सामना करना बड़ा कठिन होता है। काश! इस प्रदेशके नेता साम्प्रदायिक निर्णयके अन्यायपर समय, शक्ति और बुद्धि खर्च करनेके बदले इस बुराईको दूर करनेमें जुट जाते। हम सच्चे महत्वकी बातोंकी उपेक्षा करके उन छोटी-छोटी बातोंमें उलझे रहते हैं जो लोगोंका नैतिक स्तर ऊँचा उठ जाने पर स्वयं ही हल हो जायेंगी। क्या आप शराबखोरीके बारेमें लोगोंके नाम एक अपील नहीं निकाल सकते? इस अभिशापके कारण लोगोंको साक्षात नरककी ओर जाते देखना सचमुच बड़ा दुःखजनक है।

शराबखोरोसे मेरी अपील वृथा होगी। इसके अलावा कोई दूसरा नतीजा हो ही नहीं सकता। वे लोग कभी 'हरिजन' नही पढ़ते। अगर पढ़ते भी हैं तो सिर्फ मखौल उड़ानेके लिए ही। शराबखोरीकी बुराइयाँ जाननेमें उनकी कोई दिलचस्पी नही हो सकती। उस बुराईको ही तो वे छातीसे चिपटाये है। परन्तु मैं इस बहन को, और इसके द्वारा भारतकी तमाम महिलाओको याद दिलाना चाहता हूँ कि दाडी-यात्राके समय भारतकी स्त्रियोने मेरी सलाह मानी थी और उन्होने शराबके विरुद्ध आन्दोलन तथा कताईको अपना खास काम बना लिया था। पत्र-लेखिका याद करे कि उस समय हजारो स्त्रियाँ निर्भय होकर शराबकी दूकानोको घेर लेती थी और शराब पीनेवालोसे शराब छोड़ देनेकी अपील करती थी, जिसमें बहुधा उनको सफलता मिलती थी। स्वेच्छासे लिये हुए इस व्रतके पालनमें उन्होंने शराबियोंकी गालियाँ बर्दाश्त कीं और कभी-कभी तो उनके हाथो मार भी खाई। सैकड़ो स्त्रियाँ शराबकी दूकानो पर धरना देनेके अपराधमें जेल भी गईं। उनके उत्साहपूर्ण कार्यका सारे देशपर चमत्कारी असर हुआ। परन्तु दुर्भाग्यवश सविनय-अवज्ञाके बन्द होने पर, बल्कि उसके पहले ही यह काम ढीला पड गया। इस ढिलाईके कारणोकी चर्चा करना आवश्यक नही है। लेकिन यह काम अब भी कार्यकर्त्ताओकी बाट जोह रहा है।

महिलाओकी प्रतिज्ञा अवतक अपूर्ण पडी है। उन्होने प्रतिज्ञा केवल एक निश्चित अवधिके लिए तो ली नही थी। वह तवतक पूर्ण नही होगी जवतक कि सारे भारतमें मद्य-निषेधकी घोषणा नही हो जाती। स्त्रियोका काम अधिक उदात्त था। उनका काम था मनुष्यकी श्रेष्ठतम भावनाओको जगाकर शरावकी दूकानोंको खाली करा देना और इस प्रकार शरावबन्दी को सम्भव बनाना। यदि वे अपने कामको जारी रख सकती तो करीव-करीब निश्चित था कि उनकी सुशीलता और उत्कट भावनाने मिलकर शरावियोको शराबकी लतसे मुक्त करा दिया होता।

परन्तु हमने खोया कुछ नही। स्त्रियाँ अव भी आन्दोलनका सगठन कर सकती हैं। जिन लोगोकी चर्चा लेखिकाने की है, उनकी पत्नियाँ अगर सचमुच उत्सुक है तो वे जरूर अपने आदमियोको राहपर ला सकती हैं। स्त्रियाँ नही जानती कि वे अपने पतियो पर कैसा स्थायी प्रभाव डाल सकती हैं। नि सन्देह वे अनजाने तो प्रभाव डालती ही रहती हैं, पर यह काफी नही होता। उनमें चेतना आनी चाहिए और वह चेतना उन्हें बल देगी और मार्ग दिखायेगी कि अपने जीवन-साथियोके साथ कैसे व्यवहार किया जाये। तरस खानेकी बात तो यह है कि अधिकतर स्त्रियाँ अपने पतियोंके कामोमें दिलचस्पी नही लेती। वे समझती हैं कि उन्हे दिलचस्पी लेनेका अधिकार ही नही है। उनके मनमें यह बात कभी आती ही नही कि जिस तरह पतिका कर्तव्य अपनी पत्नीके चरित्रकी रक्षा करना है, उसी तरह पत्नीका कर्तव्य अपने पतिके चरित्रकी रक्षा करना है। तथापि, इससे अधिक स्पष्ट और क्या हो सकता है कि पति और पत्नी दोनो एक-दूसरेके गुण-दोषोके समान रूपसे भागी हैं? परन्तु पत्नियोको जगाकर उन्हें उनके सामर्थ्य और कर्तव्यका वोध करानेकी ताकत स्त्रीके अतिरिक्त किसमें है? मद्यपानके विरुद्ध स्त्रियोके आन्दोलनका यह काम एक अंश-मात्र है।

शराबखोरीके आँकड़ोका, उसकी आदत डालनेवाले कारणोका और आदत छुड़ाने के उपायोंका अध्ययन करनेके लिए काफी सख्यामें योग्य स्त्रियोकी आवश्यकता है। उन्हे अपने पिछले अनुभवोसे सवक लेना चाहिए और समझना चाहिए कि शराब-खोरोसे शराब छोड देनेकी केवल अपील करनेका प्रभाव स्थायी नही हो सकता। उस आदतको एक बीमारी मानना चाहिए और उसी रूपमें उसका इलाज भी करना चाहिए। दूसरे शब्दोमें, कुछ स्त्रियोको शोध-छात्रा बनना होगा और विविध प्रकार से शोध करनी होगी। जरूरी यह है कि सुधारके प्रत्येक अगका निरन्तर अध्ययन किया जाये जिससे कि वे अपने विषयकी माहिर वन जायें। सभी सुधार-आन्दोलनों की आंशिक अथवा पूर्ण असफलताका मूल कारण अज्ञान है। यहाँ सुधार-आन्दोलनोसे हमारा अभिप्राय उन सुधारोसे है जिनका औचित्य सब जानते और मानते हैं। कारण, जरूरी नही कि सुधारके नामपर बनावटी रूपसे चल रही हर योजनाको सुधार-कार्य कहा जाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-४-१९३७

१२३. इसका कारण

बंगलौरसे एक सज्जन लिखते हैं :

आप कहते हैं कि विवाहित दम्पतिको तभी सम्भोग करना चाहिए, जब दोनों की इच्छा सन्तान पैदा करनेकी हो। लेकिन कृपा करके यह तो बतलाइए कि सन्तान पैदा करनेकी इच्छा किसीको क्यों रखनी चाहिए? बहुत-से लोग माता-पिताकी जिम्मेवारीको पूरी तरह समझे बिना ही सन्तानोत्पत्तिकी इच्छा रखते हैं; और अन्य बहुत-से लोग अच्छी तरह यह जानते हुए भी कि वे माता-पिताकी जिम्मेवारियोंको पूरा करनेमें असमर्थ हैं, सन्तानकी इच्छा रखते हैं। बहुत-से ऐसे लोग भी सन्तान पैदा करना चाहते हैं जो शारीरिक और मानसिक दृष्टिसे सन्तानोत्पत्तिके अयोग्य है। क्या आप यह नहीं मानते कि ऐसे लोगोंका सन्तान उत्पन्न करना गलत है?

सन्तानकी इच्छाके पीछे मनुष्यका हेतु क्या रहा होगा, यह मैं जानना चाहता हूँ। बहुत-से लोग इसलिए सन्तानकी इच्छा करते हैं कि वे उनकी सम्पत्तिके उत्तराधिकारी बनें और उनके जीवनकी नीरसताको मिटाकर उसे आनन्दमय बनायें। कुछ लोग इस भयसे पुत्रकी इच्छा करते हैं कि पुत्र न हुआ तो मृत्युके बाद उनके लिए स्वर्गके द्वार नहीं खुल सकेंगे। क्या इन सबका सन्तानकी इच्छा करना गलत नहीं है?

किसी बातके कारणोंकी खोज करना अच्छा है, लेकिन हमेशा उनका पता लगा लेना सम्भव नहीं है। सन्तानकी इच्छा विश्वव्यापी है। लेकिन अपने वंशजोंके द्वारा स्वयंको अमर बनानेकी मनुष्यकी इच्छा अगर पर्याप्त और सन्तोषजनक कारण न हो, तो इसका कोई दूसरा सन्तोषजनक कारण मैं नहीं जानता। लेकिन सन्तान पैदा करनेकी इच्छाका जो कारण मैंने बतलाया है, वह अगर काफी सन्तोषजनक न मालूम हो, तो भी मैं जिस बातका प्रतिपादन करता हूँ, उसमें कोई दोष नहीं आता। इस इच्छाका अस्तित्व तो मनुष्यके मनमें रहता ही है। यह स्वाभाविक मालूम होती है। मैं इस दुनियामें पैदा हुआ, इसका मुझे कोई दुःख नहीं है। मुझमें जो उत्तम तत्त्व है, उसकी सन्तानके रूपमें पुनरावृत्ति होनेकी इच्छा रखना मेरे लिए अधर्मकी बात नहीं है। जो भी हो, जबतक सन्तानोत्पत्तिमें ही मुझे कोई पाप न दिखाई दे और जबतक मुझे मात्र आनन्दके लिए सम्भोग करना भी उचित न लगे, तबतक मुझे यही मानना चाहिए कि सम्भोग तभी उचित है जब वह सन्तानोत्पत्तिकी इच्छा से किया जाये। मैं समझता हूँ कि स्मृतिकार इस बारेमें इतने स्पष्ट थे कि मनु ने प्रथम सन्तानको ही 'धर्मज' और बादमें उत्पन्न होनेवाली सन्तानको 'कामज' कहा है। इस विषयमें अनासक्त भावसे मैं जितना अधिक सोचता हूँ, उतना ही

अधिक मेरा इस बातमें विश्वास बढ़ता जाता है कि इस प्रश्नके सम्बन्धमें मेरी जो भावना है और जिसपर मैं आचरण कर रहा हूँ, वही सही है। मेरे सम्मुख दिनोदिन यह अधिक स्पष्ट होता जा रहा है कि इस विषयमें हमारा अज्ञान ही सारी कठिनाईकी जड़ है जिसके साथ अनावश्यक गोपनीयता जोडी जाती है। इस विषयमें हमारे विचार स्पष्ट नही हैं। परिणामोंका सामना करनेसे हम डरते हैं। हम अधूरे उपायोंका, उन्हें सम्पूर्ण या अन्तिम मानकर, सहारा लेते है और इस प्रकार उन्हें आचरणके लिए बहुत कठिन बना देते हैं। अगर इस विषयमें हमारे विचार स्पष्ट हों, अगर अपनी स्थितिका हमें विश्वास हो, तो हमारी वाणी और हमारे आचरणमें दृढ़ता होगी।

इस प्रकार, अगर मुझे इस बातका विश्वास हो कि मैं जो भोजन करता हूँ, उसका प्रत्येक ग्रास शरीरको बनाने और चलाते रहनेके लिए ही है, तो मैं जीभके स्वादके लिए कभी खानेकी इच्छा नही रखूँगा। इतना ही नही, मैं यह भी समझूँगा कि अगर भूख मिटाने या शरीरको चलाते रहनेके दृष्टिकोणके अतिरिक्त कोई चीज सुस्वादु होनेके कारण ही मैं खाना चाहूँ, तो वह रोगकी निशानी होगी; इसलिए मुझे इस रोगको मिटानेका उपचार करना चाहिए, वह उचित या स्वास्थ्यप्रद वस्तु है, ऐसा मानकर खानेकी उस इच्छाको तृप्त करनेका विचार मुझे नही करना चाहिए। इसी तरह यदि मुझे इस बातका पक्का विश्वास हो कि सन्तानोत्पत्तिकी स्पष्ट इच्छा के बिना सम्भोग करना अनुचित है और शरीर, मन तथा आत्माके लिए विनाशक है, तो इस इच्छाका दमन करना मेरे लिए निश्चित रूपसे आसान हो जायेगा। अगर मेरे मनमें यह बात स्पष्ट न हो कि केवल विषय-वासनाकी तृप्ति उचित और हित-कारी है या नही, तो यह दमन कहीं ज्यादा कठिन होगा। यदि मुझे ऐसी इच्छाके नियमविरुद्ध और अनुचित होनेका स्पष्ट भान हो, तो मैं उसे एक तरहकी बीमारी समझूँगा और अपनी पूरी शक्ति लगाकर उसके दुष्प्रभावोंका सामना करूँगा। तब मैं अपनेको ऐसे विरोधके लिए अधिक शक्तिशाली अनुभव करूँगा। जो लोग यह दावा करते हैं कि हमें यह सम्भोग-कार्य पसन्द तो नहीं है लेकिन हम लाचार है, वे केवल गलत ही नही कहते बल्कि झूठ भी कहते हैं; और इसलिए विरोधमें वे कमजोर साबित होते हैं तथा अन्तमें हार जाते है। अगर ऐसे सब लोग आत्म-निरी-क्षण करे, तो उन्हें मालूम होगा कि उनके अपने विचार ही उन्हें छलते हैं। उनके विचारोंमें कामवासना रहती है और उनकी वाणी उनके विचारोंको गलत रूपमें प्रकट करती है। दूसरी ओर, यदि उनकी वाणी उनके विचारोंको सच्चे रूपमें प्रकट करे, तो उनके भीतर कमजोरी-जैसी कोई बात हो ही नही सकती। हार शायद हो सकती है, लेकिन कमजोरी कभी नही हो सकती।

इस पत्र-लेखकने अस्वस्थ माता-पिताओ द्वारा की जानेवाली सन्तानोत्पत्तिके बारेमें जो आपत्ति उठाई है, वह बिलकुल ठीक है। उन्हे सन्तानोत्पत्तिकी कोई इच्छा नही हो सकती या नही होनी चाहिए। अगर वे यह कहें कि हम सन्तानोत्पत्तिके लिए ही सम्भोग करते हैं, तो वे अपनेको और संसारको धोखा देते है। किसी भी विषय

पर विचार करते समय हमेशा सत्यका सहारा लेना पड़ता है। सम्भोगके सुखको छिपानेके लिए सन्तानोत्पत्तिकी इच्छाका बहाना कभी नहीं बनाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-४-१९३७

१२४. तार : हसरत मोहानीको

मगनवाड़ी, वर्धा
२४ अप्रैल, १९३७

मौलाना हसरत मोहानी
कानपुर

अभी अभी बेगम मोहानी के देहान्त के बारे में पढ़ा। मेरी सम्वेदना।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य. प्यारेलाल

१२५. पत्र : अमृत कौरको

२४ अप्रैल, १९३७

प्रिय बागी,

रिपोर्टको बदलनेके आदेशके असाधारण कदमके बारेमें तुम्हारी लड़ाईका क्या नतीजा निकला।[1] सचमुच ये चीजें मनुष्यका धीरज हर लेनेके लिए काफी हैं। पर इन घटनाओंसे अहिंसामें हमारी आस्थाकी कसौटी भी होती है। इस तरहकी कठिनाइयोंसे निपटनेका एक निर्दोष, अहिंसक और भद्र तरीका होना चाहिए, जो अनिष्टकारी, हिंसात्मक और अभद्र तरीकेसे बिलकुल विपरीत हो।

जिस कार्टूनमें बाइबिलके एक अनुवाक्यका मजाक उड़ाया गया था,[2] उसके बारेमें यदि देवदाससे कोई जवाब मिला हो तो वह लिख भेजना।

क्या मैंने तुम्हें कल यह लिखा था कि मैं ज्यादा-से-ज्यादा २९ तक इलाहाबादसे वापस आ जाऊँगा?

सस्नेह,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७७) से, सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९३३ से भी

1. देखिए "पत्र: अमृत कौरको", ३-४-१९३७।
2. देखिए "पत्र: अमृत कौरको", ३१-३-१९३७।

१२६. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

२४ अप्रैल, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

अमलनेरके उस आदमी के बारेमें तुम जो ठीक समझो, करो। यदि वह कामका हो तो उसे रख लो।

शाहकी टिप्पणीके वारेमें तुम जो कहते हो, उसे मैं समझता हूँ।[1]

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०११७)से।

१२७. पत्र : मेसर्स पायरे एण्ड कम्पनीको

२४ अप्रैल, १९३७

महोदय,

आपका पत्र मिला, जिसके लिए धन्यवाद। आपके पत्रकी प्राप्ति-स्वीकार करनेमें मुझे देर हो गई, क्योंकि मैं दुर्गम स्थानोंकी यात्रा कर रहा था। यदि आप एक लाख रुपयेकी रकम भेज दें तो मैं संस्थाओंका चुनाव करके उन्हें रकमें भेज दूंगा। यदि इसी बीच एक लाख का चेक मेरे पास पहुँच गया तो मैं उसे बैंकमें जमा कर दूंगा और समय-समयपर जिन-जिन संस्थाओको रकमें प्रदान की जायेंगी, उनकी समुचित रसीदें आपको भेजता रहूँगा। किन्तु यदि रकम आपके पास ही जमा रहती है तो जिस क्षण मुझे इसके वितरणका जिम्मेदार माना जायेगा, उसी समयसे इस रकमपर ब्याज जुड़ना शुरू हो जाना चाहिए और इस ब्याजकी दर बैंककी सामयिक दरसे कम न हो। जहाँतक आधी रकमका सवाल है उसके सम्बन्धमें कोई कठिनाई नहीं होगी। और शेष आधी रकमके विषयमें मैं जीवदया-मण्डलके साथ पत्र-व्यवहार शुरू कर रहा हूँ।

आपका,
मो० क० गांधी

मेसर्स पायरे एण्ड कम्पनी
सॉलिसिटर्स एण्ड नोटरीज पब्लिक
वम्बई

अंग्रेजीकी प्रतिसे. प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. देखिए "पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको", ३-४-१९३७।

१२८. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

२४ अप्रैल, १९३७

भाई भगवानजी,

तुम्हारे दोनो पत्र मुझे कल ही मिले। कल ही मेरे देहातसे वापस लौटने पर तुम्हारे पत्र मिले। तुमने मुझे लिखा, यह तो बहुत ठीक किया, लेकिन यदि मैं तुम्हारे पत्रोंका उपयोग नही कर पाता, तो मैं मामला सुलझाऊँगा कैसे? मेरी तो सलाह है कि तुम नानालाल और प्रभाशकर[1] दोनोको बुलाओ, और साहसपूर्वक उनका पथ-प्रदर्शन करो। एक समय था, जब प्रभाशकर तुम्हारी सलाहको वेदवाक्य मानते थे और उससे मेरा काम भी हलका हो जाता था। अब तुम्हारे पत्र वस्तुस्थितिपर नया प्रकाश डालते हैं। अब तुम रतिलालके वकीलकी हैसियतसे, मेहता-परिवारके मित्रकी हैसियतसे तथा न्यायके हिमायतीकी हैसियतसे इस कामको रास्तेपर लाना। यहाँ बैठा मैं बहुत कम कर पाऊँगा। यह बात सोचकर देखना। रतिलाल और चम्पा[2] दोनो पूर्णत. प्रभाशकरके प्रभावमें हैं। उनकी जो इच्छा होगी, वही वे दोनों करेंगे। रतिलालके लिए वे पिताके तुल्य हैं। अतः हम लोग चाहे जो सोचें, किन्तु रतिलाल और चम्पा जो उचित समझेंगे, उससे उन्हें कैसे डिगाया जा सकेगा? इन सब मामलोंपर विचार करके मेरा मार्ग-दर्शन करना। मुझे पत्र लिखनेके बाद यदि तुम कुछ भी करनेमें असमर्थ रहो, तो या तो तुम मुझे अपने पत्रका उपयोग करनेकी अनुमति दो, अथवा ऐसा पत्र लिख भेजो जिसका मैं उपयोग कर सकूँ। इस पत्रका उत्तर आने तक मेरी इच्छा कोई कदम उठानेकी नही है।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८३२) से। सी० डब्ल्यू० ३०५५ से भी; सौजन्य : भगवानजी अ० मेहता

१. प्रभाशंकर हरचन्दभाई पारेख, डॉक्टर प्राणजीवनदास मेहताके ज्येष्ठ पुत्र रतिलालके ससुर।
२. रतिलालकी पत्नी।

१२९. पत्र : नारणदास गांधीको

२४ अप्रैल, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला था। मैंने हुदलीमें जयसुखलालके बारेमें शंकरलाल[1] से बात की थी। शंकरलालका कहना है कि जयसुखलाल पर जो आरोप लगाया गया है, उन्हें सेवामुक्त कर देनेके साथ उसका कोई सम्बन्ध नही है। लेकिन शंकरलाल कहते हैं कि काठियावाड़में इतना काम नही है, जिसके लिए जयसुखलालको ७५ रुपये वेतन दिया जाये। फिर उनका काम भी ऐसा नही है कि उसकी इतनी कीमत आँकी जा सके। जयसुखलालने दूकान चलाने अथवा खादीका उत्पादन करनेकी कला हासिल नही की है, इसके अतिरिक्त अनेक लोगोंके साथ हिल-मिलकर काम करनेकी कला भी हासिल नही की है। किन्तु जयसुखलालकी ईमानदारीके सम्बन्धमें उन्हें जरा भी सन्देह नही है। यदि शंकरलालका यह वक्तव्य ठीक हो, तब तो जयसुखलालके साथ कोई अन्याय नही हुआ। यदि तुम शंकरलालके निर्णयसे सहमत नही हो, तो तुम स्वयं खादीके कामका जो विस्तार कर रहे हो, उसमें उसे लगाओ। और उससे ऐसा काम लो, जिससे वह ७५ रुपये कमा सके। ज्यादा कमा सके, तो ज्यादा कमाये। तुम ऐसा कर सकते हो और यदि जयसुखलालमें खादीके द्वारा ७५ रुपये कमानेकी सामर्थ्य हो, तो तुम उसे उभार सकते हो।

जयसुखलालका अत्यन्त संशयालु स्वभाव तो मैं स्वयं देख रहा हूँ और वह मेरे लिए दुःखदायी भी सिद्ध हो रहा है। वह अपने प्रत्येक दुर्भाग्यके पीछे छगनलाल जोशी का हाथ देखता है। मैं स्वयं तो ऐसा कभी नहीं देख पाया। छगनलालके गुण-दोषो को मैं ठीक-ठीक जानता हूँ। उसके पास भी रहा हूँ। वह द्वेषके कारण किसीके पीछे पड़े और उसका बुरा करे, यह दोष मैंने उसमें नही देखा। जयसुखलालके अभिमत बहुधा निराधार होते है, और अपने अभिमतको सिद्ध करनेके लिए सबूत देनेकी शक्ति भी उसमें नही है, यह भी मैं जानता हूँ।

मैंने तुम्हें आजतक खबर नही दी और पूछने पर मालूम हुआ कि कन्हैया ने भी नही दी। हुदलीकी यात्रामें कन्हैया काफी बीमार हो गया था। बहुत अधिक थकावट अथवा और किसी कारणसे उसे बुखार आ गया। वहाँ पहुँचते ही बुखार आ गया और चार दिनमें उतरा। लेकिन उसे कष्ट जरा भी नही भोगना पड़ा। उप-

१. शंकरलाल बैंकर।

चार भी उत्तमसे-उत्तम हुआ, यानी जितना पिया जा सके, उतना पानी पीना। वह नीबू और नमकके साथ गरम पानी पीता था। फिर शहद-पानी शुरू किया, फिर फल और फिर दूध। उसे अभी दूध और फलपर ही रखा है। सोता खूब था। यही कहा जा सकता है कि सेवा किसीसे नही करायी। एक खटिया दे देनेके सिवा उसे और कोई सुविधा नही दी गई। एकान्त बिलकुल नही दिया गया। एकान्तमें रख सकने योग्य सुभीता भी नही था।

आज सिर्फ अपनी मर्जीसे साइकिलसे पाँच मील आया है। किसी कामके लिए आनेकी कोई जरूरत नही थी। लेकिन तबीयत ठीक हो जानेके बाद उससे बैठा नही जाता। और अपनी शक्तिके अनुसार परिश्रम करनेसे मै उसे रोकता भी नही। इसलिए खास तौरपर तुम्हें लिखने लायक कुछ था ही नही। किसी भी प्रकारकी चिन्ता करनेकी कोई बात नही थी। अनुभवी डॉक्टर साथ थे, किन्तु उनकी भी दवा बिलकुल नही की। उनकी इच्छा कुछ दवा देनेकी थी, लेकिन मैंने साफ मना कर दिया।

कन्हैयाको भी उपवासपर खूब श्रद्धा है, और मुझे तो है ही। इस बारके मेरे उपचारमें विशेषता यह थी कि मैंने एनीमाका उपयोग बिलकुल नहीं किया। विशेष व्यवस्था करके दे सकता था, लेकिन दस्त उसे हो जाता था, इसलिए मुझे एनीमा देनेका आग्रह नही था। उसे कष्ट बिलकुल नही हुआ। इसका कारण उसका उपवास तो था ही, किन्तु उसका निर्विकार जीवन भी इसका कारण रहा।

मनु और निर्मलाके कन्यादानके समय वह अपनी इच्छा से ही सम्मिलित हुआ था, और उसने "वैष्णव जन" के गायनमें भाग लिया था। कान्ति भी ठीक कन्यादान के दिन ही पहुँचा। इससे मनु प्रसन्न तो हुई ही, किन्तु कनुकी उपस्थितिसे सन्तुष्ट होकर उसने कान्तिको मुक्त कर दिया था।

कुमी का काम कैसा चल रहा है? यदि वह अपनी बच्चीको राष्ट्रीय स्कूलमें पढ़नेके लिए भर्ती करे, तो उसकी फीस माफ कर देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५१७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१३०. पत्र : शारदा चि० शाहको

२४ अप्रैल, १९३७

चि० शारदा[1],

तेरा कार्ड मिला। स्थिर तो कुछ भी नही है। जबतक तुझे लगे कि जो उपचार चल रहा है, उससे नुकसान नही हो रहा है, तबतक उसे किये जाना। तुम दोनो प्याज और लहसुनका उपयोग करना। मेरा विचार यह है कि प्राकृतिक उपचार यदि समझ-बूझकर किया जाये, तो उससे फायदा अवश्य होना चाहिए। जो उपचार हो रहे है, उनके बारेमे और अपनी खुराकके बारेमें तू मुझे ब्योरेवार पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९७५) से, सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

१३१. पत्र : चाँदरानी सचरको

२४ अप्रैल, १९३७

प्रिय भगिनि,

आपका चेक रु० ५०० का मिला है। धन्यवाद। कूए तो ५०० में बन सकते है १५०० में भी। एक कूआ जिल्ला थाने में बनाना है। उसमें खर्च रु० १२०० का है। आप दे सकती है तो दूसरा पैसा भेज दें अन्यथा रु० ५०० में तो कही भी होगा ही।

मो० क० गांधी

के० बं० मां०[2]

श्रीमती चाँदरानी सचर
मार्फत श्री जे० एस० सचर
नया बाजार, दिल्ही

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०९०) से।

१. एक आश्रमवासी चिमनलाल एन० शाह की कन्या।
२. मोहनदास करमचन्द गांधीके वन्देमातरम्।

१३२. भेंट : समाचारपत्रोंको[1]

नागपुर
२५ अप्रैल, १९३७

प्रश्न : क्या आपके खयालमें ब्रिटिश सरकार इस बातके लिए सचमुच व्यग्र है कि वाइसराय और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके प्रवक्ताके बीच सम्पर्क स्थापित हो?

उत्तर : मेरे खयालसे ऐसी कोई व्यग्रता नहीं है।

क्या आप अपनी ओरसे वाइसरायसे मिलनेका अवसर खोजनेकी कोशिश करेंगे?

नहीं।

यदि पहल वाइसरायकी ओरसे होती है तो क्या आप जायेंगे?

मेरी कोई स्थिति नहीं है। जिन्हे बुलाना चाहिए वे तो हैं केवल कांग्रेसके अध्यक्ष।

यदि वाइसराय आपको आवश्यक आश्वासन दे देते हैं और प्रान्तीय गवर्नरोंके आश्वासनोंपर जोर न देनेके लिए कहते हैं, तो क्या आप सन्तुष्ट हो जायेंगे?[2]

आपके खयालसे यदि कांग्रेस मन्त्रि-पद स्वीकार नहीं करती है तो क्या अल्प-मतके मन्त्रिमण्डल अपनी सुधारवादी कार्रवाईयोंसे निर्वाचकोंको अपने पक्षमें नहीं कर लेंगे?

मुझे कोई आश्चर्य नहीं होगा।[3]

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, २८-४-१९३७

१. संवाददाताके अनुसार: "महात्मा गांधी ग्रांड ट्रंक एक्सप्रेससे रविवार, २५-४-१९३७ को नागपुरसे गुजरे। महादेव देसाई उनके साथ थे। तीसरे दर्जेके डिब्बेमें महात्माजी गठरी बने बैठे थे और उनके आस-पास फाइलें तथा पुस्तकें फैली थीं। उनका दफ्तर उनके साथ था और गाड़ीमें ही टाइपका काम हो रहा था। मनमें खयाल आया कि यह कहीं कार्य-समितिके लिए कोई नया फार्मूला तो नहीं है। गाड़ीके प्लेटफॉर्मपर आनेपर कुछ प्रश्न महात्माजीको दे दिये गये, जिनके उन्होंने उत्तर लिख दिये।"

२. संवाददाताने यहाँ लिखा था:- "पिछले प्रश्नके अपने उत्तरको ध्यानमें रखते हुए गांधीजीने इस प्रश्नका कोई उत्तर नहीं दिया।"

३. "भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको", २९-४-१९३७ में गांधीजीने कहा था कि संवाददाताने उत्तरमें "जो-कुछ मेरा आशय था उससे बिलकुल विपरीत" आशय व्यक्त किया है।

१३३. भेंट : समाचारपत्रोंको[1]

नागपुर
[२५ अप्रैल, १९३७][2]

प्रश्न : सर सैमुअल होर द्वारा बताई गई पद्धतिपर जिसका कि आपने भी उल्लेख[3] किया है, यदि गवर्नरोंकी ओरसे आश्वासन मिल जाये, तो क्या आप सन्तुष्ट हो जायेंगे ?

उत्तर : यदि 'साधारणतः' शब्दकी एक ऐसी व्याख्या कर दी जाये जिसे हर कोई समझ सके, तो मैं उस आश्वासनसे सन्तुष्ट हो जाऊँगा।

'साधारणतः' शब्दकी आप क्या व्याख्या करेंगे ?

व्याख्या उन्हीं लोगोंको करनी चाहिए जो इस शब्दको उसमें शामिल करना चाहते हैं। मैंने 'साधारणतः' शब्द कांग्रेस-प्रस्ताव[4] में शामिल नहीं किया है। कांग्रेस का अभिप्राय अत्यन्त स्पष्ट है। उसने एक निश्चित कार्यक्रमके बारेमें आश्वासन माँगा है। यदि कांग्रेस वही कार्यक्रम चलाती है और उसी कार्यक्रमके अनुसार सब-कुछ चलता है, तो गवर्नरकी ओरसे कोई हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। यदि गवर्नरोंकी रायमें भारी नुकसान भी हो जाये, जैसाकि लॉर्ड लोथियनने कहा है, तो गवर्नर मन्त्रिमण्डलोंको बर्खास्त कर सकते हैं, विधानसभाएँ भंग कर सकते हैं और निर्वाचक-मण्डलोंसे अपील करके यह जान सकते हैं कि निर्वाचक-मण्डल किसका समर्थन करते हैं। यदि कांग्रेसका उद्देश्य गतिरोध पैदा करना हो तो गवर्नरोंसे आश्वासन माँगनेसे क्या लाभ है? जैसाकि मैं पहले ही कह चुका हूँ और जैसाकि मैंने कांग्रेस-प्रस्तावको समझा है, कांग्रेसका उद्देश्य गतिरोध पैदा करना नहीं है, बल्कि उसका उद्देश्य निस्सन्देह यह है कि कांग्रेसकी स्थिति इतनी मजबूत बना दी जाये कि वर्तमान अधिनियमका स्थान, जिसे कोई नहीं चाहता, वह अधिनियम ले ले जो जन-समुदायकी इच्छाका प्रतिनिधित्व करता हो। यह उन संवैधानिक उपायों द्वारा ही किया जायेगा जो स्वयं अधिनियमके अनुसार उचित होंगे। यदि कांग्रेस अपने बहुमतके

१. गांधीजी ने *टाइम्स ऑफ इंडिया*, बम्बई और *न्यूज क्रॉनिकल*, लन्दन के संवाददाताओं द्वारा पूछे गये प्रश्नोंके उत्तर दिये थे।

२. इलाहाबाद जाते हुए गांधीजी इस तारीखको नागपुरसे गुजरे थे।

३. देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", ३०-३-१९३७।

४. देखिए पृ० ४-५; "भेंट : बॉम्बे क्रॉनिकलके प्रतिनिधिको", पृ० १६७ भी।

बलपर और कांग्रेस मन्त्रियोंकी चतुराईसे अपनी संवैधानिक स्थितिको ऐसा बना लेती है कि ब्रिटिश मन्त्री सम्भवतः उसका हथियारोंकी ताकतके बगैर प्रतिरोध न कर सकें, तो निस्सन्देह इसमें शिकायतकी कोई बात नहीं होनी चाहिए।

आपने कहा है[1] कि कांग्रेस यह चाहती है कि हस्तक्षेप न किया जाये, यह नहीं कि उन्हें बर्खास्त न किया जाये। क्या आप कृपया दोनोंमें अन्तर बतायेंगे?

भद्र पुरुषके नाते मैं सम्भवतः उन्हें ऐसी प्रतिज्ञा करनेके लिए तो नहीं कह सकता कि मन्त्रिमण्डल कभी भंग ही नहीं किया जायेगा। परन्तु मैं यह कह सकता हूँ कि प्रतिदिनके प्रशासनमें हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए। मैं नहीं चाहता कि मन्त्रिमण्डल इस स्थितिमें हो कि जरा-सा बहाना मिलने पर उसे त्यागपत्र देना पड़े। सम्मानजनक ढंगसे त्यागपत्र देनेके लिए कोई सम्मानजनक कारण भी होना चाहिए जो हर किसीको दिखाई दे। यदि मुझे हस्तक्षेप न करनेका आश्वासन नहीं मिला तो गवर्नर अपने मन्त्रियोंको परेशान कर सकते हैं जो उन्हें बुरा लगेगा। परन्तु वह इतना समझमें आनेवाला कारण नहीं होगा जिसे इस्तीफेके लिए जनताके सामने उचित ठहराया जाये। मैं कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलको इस उलझन-भरी और अपमानजनक स्थितिमें कभी नहीं डालूँगा। यही बात गवर्नरों पर भी लागू होती है। यदि वे मामूली-से बहाने पर मन्त्रिमण्डलको बर्खास्त करेंगे तो वे बेहद मूर्ख लगेंगे। इसलिए यदि गवर्नर भद्र पुरुष हैं और जिस राष्ट्रका वे प्रतिनिधित्व करते हैं, उस राष्ट्रकी मान-मर्यादाकी रक्षा करना चाहते हैं, तो वे मन्त्रिमण्डलको बर्खास्त करनेसे पूर्व पचास बार सोचेंगे। मैं उन्हें [मन्त्रियोंको] उस स्थितिमें रखना चाहता हूँ जिससे कि गवर्नरोंकी ओरसे उन्हें कोई परेशानी न हो। उन सब मन्त्रियोंने जिन्होंने मॉण्टफोर्ड-सुधारोंके अधीन काम किया था, इस तरहकी परेशानियोंकी बात कही है। उनकी स्थिति बड़ी असह्य और दयनीय बना दी गई थी, परन्तु तब भी वे इस्तीफा नहीं दे सके। सम्भवतः वे इस्तीफा देना ही नहीं चाहते थे। मुझे नहीं मालूम कि कारण क्या था।

[अंग्रेजीसे]

हितवाद, २८-४-१९३७

१. देखिए पृ० १४७।

१३४. पत्र : अमृत कौरको

इलाहाबाद
२६ अप्रैल, १९३७

प्रिय बागी,

मैं जब इलाहाबाद पहुँचा तो तुम्हारी चिट्ठी वहाँ पड़ी ही थी।

जवाहरलाल बहुत कमजोर, लगभग बूढ़े लगने लगे हैं। उनकी आवाज कमजोर हो गई है। वे इतने पीले पड़ गये हैं कि देखकर रुलाई आ जाये। इन्दु काफी अच्छी है; यों वह पहलेकी तरह दिखती तो नाजुक है। वृद्धा श्रीमती नेहरू बिस्तरसे उठ नहीं पाती, वैसे कुछ दिन पहलेकी अपेक्षा उनकी तबीयत अब बेहतर है। सुभाष आ गये हैं, पर मैं उनसे अभी मिला नहीं हूँ। १२ बजने ही वाले हैं; मैं अब मौन तोड़ूँगा।

सुभाष मुझसे १ बजे मिल रहे हैं। कार्य-समितिकी बैठक ढाई बजेसे है। मैं यहाँसे २८ को चलूँगा और २९ को वर्धा पहुँच जाऊँगा। मौसम, लगता है इस बार सभी जगह अजीब रहा। यहाँ बहुत गर्मी है। महादेव, प्यारेलाल और राधाकृष्ण मेरे साथ हैं।

सस्नेह,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७८) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९३४ से भी

१३५. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको

२६ अप्रैल, १९३७

गांधीजी से उनके पूनाके वक्तव्य[1] पर 'टाइम्स' और 'मैंचेस्टर गार्जियन' की सम्पादकीय टिप्पणियोंके बारेमें पूछे जानेपर उन्होंने कहा :

जहाँतक मेरा सवाल है, खाईको पाटनेका काम सरकारकी ओरसे होना चाहिए। इसलिए आशा यह की जाती है कि 'टाइम्स' और 'मैंचेस्टर गार्जियन'-जैसे प्रतिनिधि पत्र मुझपर या कार्य-समिति पर असर डालनेकी कोशिश न करके ब्रिटिश सरकारपर असर डाले। कार्य-समिति अपनी फिक्र खुद कर लेगी और अपनी बात खुद कह लेगी।

१. देखिए पृ० १४७-९।

मैं अपनी स्थिति बिलकुल स्पष्ट कर चुका हूँ। यह फैसला सरकारको ही करना है कि जो संविधान उन्होंने गढ़ा है, उसमें उनका मंशा प्रान्तीय स्वायत्त शासन रहा है या उससे विपरीत कोई चीज। किन्तु जन-साधारणको कानूनी वक्रोक्तियाँ या संविधान तककी कोई जानकारी नहीं है, केवल यही सवाल है।

नागपुरसे भेजे गये समाचारकी एक रिपोर्ट[1] के बारेमें यह पूछने पर कि आपके खयालसे यदि कांग्रेस मन्त्रि-पद स्वीकार नहीं करती है तो क्या अल्पमतके मन्त्रिमण्डल अपनी सुधारवादी कार्रवाइयोंसे निर्वाचकोंको अपने पक्षमें नहीं कर लेंगे, गांधीजी ने कहा था कि "मुझे कोई आश्चर्य नहीं होगा," गांधीजी का कहना है :

नागपुरसे जिस किसीने भी तार भेजा है उसने, मेरा जो आशय था या कम-से-कम जो-कुछ मैं कहना चाहता था, उससे बिलकुल उलटी रिपोर्ट दी है। मेरा जवाब यह था कि कांग्रेसके मन्त्रि-पद स्वीकार न करने पर यदि अल्पमतके मन्त्रि-मण्डल अपनी सुधारवादी कार्रवाइयोंसे निर्वाचकोंको अपने पक्षमें कर लें तो मुझे आश्चर्य होगा। भीड़में से मुझे रेलके डिब्बेके अन्दर, जो कोई बहुत खाली नहीं था, एक पुर्जा पकड़ाया गया था जिसपर कुछ सवाल लिखे हुए थे। मैंने जल्दी-जल्दी पेंसिलसे जवाब लिख दिये। यदि रिपोर्टरका यह दावा है कि मैंने 'नहीं' शब्द लिखा था, तो मैं उस मूल पुर्जेको देखना चाहूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २७-४-१९३७

१३६. पत्र : मीराबहनको

इलाहाबाद
२७ अप्रैल, १९३७

चि० मीरा,

तुम्हारा पोस्टकार्ड और लालीके बारेमें पत्र मुझे यहाँ मिले।

यह तय हुआ है कि हम कल शामको यहाँसे चल देंगे और २९ की शामको वर्धा पहुँच जायेंगे। तुम रातको ८ बजे या उसके आसपास मेरे सेगाँवमें होनेकी उम्मीद कर सकती हो।

यहाँ बहुत गर्मी है, पर रातको छतपर काफी ठंडक होती है।

सुबह घूमते समय मैंने जो-कुछ कहा था, आशा है, तुम उसे समझ गई होगी। लेकिन जिसे तुम तुरन्त नहीं बदल सकती उसके लिए मैं तुम्हें दोष नहीं देना चाहता।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३७९) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८४५ से भी

१. देखिए पृ० १६१।

१३७. पत्र : लीलावती आसरको

२७ अप्रैल, १९३७

चि० लीला,

तेरी अस्त-व्यस्तता दूर हो जानी चाहिए। यह धीरे-धीरे जायेगी। बातें कम किया कर, विचार अधिक किया कर। धीरजके साथ सब-कुछ कर। मेरे चरखेमें चमड़ेकी एक चकरी होनी चाहिए थी; वह नहीं मिली। सूत उतारते हुए तूने उसे गिरा दिया। यह तो एक उदाहरण हुआ।

घी तो तूने राधाकिशनको भेज दिया होगा।

द्वारकादासकी चिन्ता मत कर। यदि तुझे जाना ही हो, तो जा।

आशा है, तू दैनन्दिनी लिखती होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३५९) से। सी० डब्ल्यू० ६६३४ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

१३८. तार: जमनालाल बजाजको

इलाहाबाद
३० अप्रैल, १९३७

सेठ जमनालालजी
वर्धा

दु:ख है कि वर[1]-वधू[2]को आशीर्वाद देनेके लिए उपस्थित नहीं हो सकूंगा। कृपया रामेश्वरदाससे क्षमा माँग लें। शनिवारकी दोपहरको पहुँचूंगा। मगनवाड़ी, सेगाँव को सूचित कर दें।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १८५

१. श्रीराम, धूलिया-निवासी रामेश्वरदास पोद्दारके पुत्र।
२. लक्ष्मी, जानकीदेवी बजाजके भाई पुरुषोत्तमदास जाजोदियाकी पुत्री।

१३९. भेंट: 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको[1]

३० अप्रैल, १९३७

यह पूछने पर कि क्या वे अभीतक इसी विचारपर कायम हैं कि यदि गवर्नर यह आश्वासन दे दें कि 'साधारणतः' वे कांग्रेसी मन्त्रियोंकी संवैधानिक गतिविधियोंमें हस्तक्षेप नहीं करेंगे, तो कांग्रेस मन्त्रि-पद स्वीकार कर लेगी, गांधीजी ने कहा, इस मामलेमें उनकी स्थितिको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। मैं नहीं मानता कि 'साधारणतः' शब्दके जोड़नेसे ही यह व्यवस्था उनके या कांग्रेसके लिए सन्तोषजनक हो जायेगी। इस तरहका आश्वासन मुझे तभी स्वीकार होगा जब इस विशेषण का "हमारे लिए सन्तोषप्रद ठीक-ठीक अर्थ किया जाये।" गांधीजी ने आगे कहा:

'साधारणत' शब्दका अर्थ हमें पहले मालूम हो जाना चाहिए।[2]

हमारे संवाददाताने तब गांधीजी का ध्यान आजके 'लीडर' में छपी प्रोफेसर कीथ[3] की नवीनतम संवैधानिक अधिघोषणाकी ओर खींचा और उनसे गवर्नरके विशेषाधिकारोंके विषयमें कांग्रेसकी स्थितिके बारेमें पूछा।

गांधीजी मुस्कराये और बोले कि यह बासी खबर है। मैं इसे कल ही किसी समाचारपत्रमें पढ़ चुका हूँ।

जब मैं प्रोफेसर कीथके वक्तव्यको पढ रहा था तो मैंने देखा कि उन्होंने कांग्रेसकी इस स्थितिका पूर्ण समर्थन किया है कि कांग्रेस अधिनियमको रद्द नहीं कराना चाहती है।

यह पूछने पर कि अल्पसंख्यकोंके न्यायोचित अधिकारोंको कुचलनेकी कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलकी कोशिश क्या असंवैधानिक नहीं होगी, गांधीजी ने घोषणा की कि यह केवल असंवैधानिक ही नहीं बल्कि 'आत्मघाती' भी होगी।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १-५-१९३७

१. गांधीजी की प्रतिनिधिसे यह भेंट वर्धा जाते हुए रेलगाड़ीमें हुई थी।
२. देखिए पृ० १६२-३।
३. ए० बी० कीथ, इंग्लैंडके एक संवैधानिक विधिवेत्ता।

१४०. हरिजनोंसे बेगार

समाचारपत्रोमें यह आशंका व्यक्त की गई है कि सम्भव है कितने ही गाँवोंके कितने ही हरिजन बेहतर बरतावके आश्वासनपर और खास तौरसे सवर्ण हिन्दुओ की बेगारसे पिण्ड छुडानेके लिए ईसाई मिशनोकी शरणमें चले जायें; वे उनसे हिन्दू-धर्म छुडवानेकी कोशिशमें लगे है। लगता है कि हिन्दू मिशन और हरिजन सेवक सघके प्रतिनिधि उन पीडित हरिजनोसे मिले थे और उन्होने सवर्ण हिन्दुओसे यह वचन ले लिया है कि हरिजनोंके साथ बेहतर बरताव किया जायेगा। तूफान इस वक्त तो टल गया है। मेरी समझमें नही आता कि हरिजन यदि उस धर्ममें चले जाते तो उससे उन मिशनोको क्या लाभ होता और उन हरिजनोको कहाँ तक सच्चे रूपमें धर्मान्तरित व्यक्ति कहा जा सकता था। मैं यह जानता हूँ कि धर्म-परिवर्तनकी इस तरहकी कोशिशें समाजको भ्रष्ट करती है, सन्देह और कटुता पैदा करती हैं और समाजकी चहुँमुखी प्रगतिको रोकती है। यदि ईसाई मिशन बेहतर बरतावके बदलेमें तथाकथित धर्म-परिवर्तनकी इच्छा न करके, हरिजनोका बोझ हलका करने में हरिजन-सेवकोके साथ सहयोग करे, तो उनकी सहायताका स्वागत होगा और समाजके विकासकी गति तेज होगी।

किन्तु मुझे टिप्पणी लिखते समय मिशनोंके प्रकाशमें आये हुए तरीकोकी आलोचनाका उतना ध्यान नही है जितना कि सवर्णोंकी अन्तरात्माको जगानेका। भारतमें प्राय सर्वत्र यह प्रथा है कि छोटे जमीदार हरिजनों और पिछडी कही जानेवाली अन्य जातियोसे बेगार लेते हैं। ये छोटे जमीदार ज्यादातर हिन्दू हैं। हरिजन और अन्य लोग कानूनन बेगारका विरोध कर सकते है। उन्हें धीरे-धीरे, किन्तु निश्चित रूपसे, अपने अधिकारोका एहसास होता जा रहा है, और वे संख्यामें इतने अधिक है कि वे उन्हे अपनी बात मानने को लाचार कर सकते है। किन्तु यदि सवर्ण हिन्दू अपनी इस नियतिको लाचारीमें स्वीकार करेंगे, तो उसमें कोई शोभा नही रहेगी। इससे यह कही बेहतर होगा कि वे हरिजनोको सगे भाई-जैसा मानना अपना कर्तव्य समझें और यह स्वीकार करे कि उन्हें मनुष्योचित सम्मान और स्वेच्छासे की गई अपनी सेवाओका उचित पारिश्रमिक पानेका अधिकार है।

हरिजन-सेवकोका, चाहे वे किसी भी सगठनसे सम्बद्ध हों, यह विशेषाधिकार है कि वे हरिजनोसे मित्रता करें, उनकी दशाका विस्तारसे अध्ययन करे, सवर्ण हिन्दुओके पास जायें और यथासम्भव बहुत ही सौम्य ढंगसे उन्हे यह समझायें कि जिन लोगोके साथ उन्होने बहिष्कृतोका-सा बरताव किया है और जिन्हें उनके कानूनी अधिकारो तकसे वंचित रखा है, उनके प्रति आज उनका क्या कर्तव्य है।

मेरे सामने जो कागज-पत्र हैं, उनसे यह भी पता चलता है कि गुजरातके ओद और अन्य गाँवोंमें सवर्ण हिन्दू अपने मृत ढोरोंको ठिकाने लगानेवाले हरिजनोंसे ढोरोंकी आधी खाल ले लेते हैं। यह बात जिन मृत ढोरोंको हरिजन हटायें, पूरी खाल उन्हींके पास रहने देनेकी आम प्रथाके विपरीत है। कहीं-कहीं हरिजन केवल मृत ढोरोंकी खाल ही अपने पास नहीं रखते, बल्कि वे उन्हें उठा ले जानेकी मजदूरी भी पाते हैं। इस मामलेकी और अधिक छानबीन होनी चाहिए और इसे उचित ढंगसे निपटा देना चाहिए। यदि हरिजनोंके साथ बेहतर बरताव हो और यदि सवर्ण हिन्दू मृत ढोरोंसे घबरायें नहीं और अशौचके अन्धविश्वासपूर्ण नियमोंको छोड़ दें, तो वे मृत ढोरोंकी खाल अलग करने और लाशके हर भागको दौलतमें बदलनेकी कला सीख जायेंगे। यह चीज खुद उनके और हरिजनों, दोनोंके लिए लाभदायक होगी। मृत ढोरोंको ठिकाने लगानेके काममें वे हरिजनोंसे सहायता माँग सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-५-१९३७

१४१. वस्तु-विनिमय पद्धतिपर निबन्ध

पाठकोंको याद होगा कि वस्तु-विनिमय पद्धतिके पक्षमें लिखे जानेवाले सर्वश्रेष्ठ निबन्धके लिए ५०० रुपयेके एक पुरस्कारकी घोषणा की गई थी। उसकी शर्तें भी बता दी गई थीं। निबन्ध भेजनेकी अवधि समाप्त हो जाने पर परीक्षक बोर्डने अपना काम शुरू किया और अब यह रिपोर्ट दी है कि कोई भी निबन्ध निर्धारित शर्तोंको पूरा नहीं करता। उसकी रिपोर्ट[1] इस प्रकार है . .

दानी सज्जनने पुरस्कार वापस नहीं लिया है। परीक्षकों — प्रोफेसर के० टी० शाह, श्री वैकुंठ मेहता और प्रोफेसर जे० सी० कुमारप्पाने कृपापूर्वक यह जताया है कि भविष्यमें यदि और निबन्ध भेजे गये तो वे उनकी भी परीक्षा करनेको तैयार हैं। परन्तु मैं प्रतियोगियोंको, यदि कोई [प्रतियोगिताके लिए] तैयार हो तो, यह सलाह देना चाहूँगा कि परीक्षकों द्वारा निर्धारित शर्तोंका वे कड़ाईसे पालन करें। उनकी टिप्पणीसे यह स्पष्ट है, और यह स्वाभाविक भी है, कि उनके द्वारा अपेक्षित स्तरका न होने पर कोई भी निबन्ध पुरस्कारके योग्य नहीं समझा जायेगा, और लेखक जब तक इस विषयके आवश्यक साहित्यका अध्ययन करने और अपने अध्ययनके आधार पर एक मौलिक निबन्ध लिखनेका श्रम नहीं करेंगे, तब तक कोई भी निबन्ध उस स्तरको प्राप्त नहीं कर सकेगा। हो सकता है कि यह पुरस्कार इस तरहके प्रयासके लिए यथेष्ट प्रलोभन न हो। उस स्थितिमें मैं केवल यही कह सकता हूँ कि जो लोग केवल पुरस्कारोंकी राशिको ध्यानमें रखकर लिखते हैं, वे दानियोंकी अपेक्षाओंको शायद

१. यहाँ नहीं दी गई है; देखिए "पत्र: जे० सी० कुमारप्पाको", ३-४-१९३७ भी।

ही कभी समझ पाते हैं। वस्तु-विनिमय पद्धतिपर आयोजित इस प्रतियोगिता-जैसी कठिन प्रतियोगिताओंमें उस विषयसे लगाव हुए बिना, उच्च कोटिकी योग्यताकी आशा नहीं की जा सकती। निबन्ध भेजनेकी अन्तिम तारीख ३१ दिसम्बर, १९३७ निश्चित की गई है। सभी निबन्ध प्रोफेसर जे० सी० कुमारप्पा, मगनवाड़ी, वर्धाको भेजे जाने चाहिए। यह अवधि अब और नहीं बढ़ाई जायेगी, और यदि कोई भी प्रयास सफल नहीं रहा, तो पुरस्कार अन्तिम रूपसे वापस ले लिया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-५-१९३७

१४२. धर्म-संकट[1]

एक सज्जन लिखते हैं :

> करीब ढाई साल हुए, हमारे शहरमें एक घटना हो गई थी, जो इस प्रकार है :
>
> एक वैश्य गृहस्थकी १६ बरसकी एक कुमारी कन्या थी। इस लड़कीका मामा जिसकी उम्र लगभग २१ वर्षकी थी, स्थानीय कॉलेजमें पढ़ता था। यह तो मालूम नहीं कि कबसे इन मामा और भानजीमें प्रेम था, पर जब बात खुल गई तो इन दोनोंने आत्महत्या कर ली। लड़की तो फौरन ही जहर खानेके बाद मर गई, पर लड़का दो रोज बाद अस्पतालमें मरा। लड़कीको गर्भ भी था। इस बातकी शुरू-शुरूमें तो खूब चर्चा चली। यहाँ तक कि अभागे माँ-बापको शहरमें रहना भारी हो गया। पर वक्तके साथ-साथ यह बात भी दब गई और लोग भूलने लगे। कभी-कभी जब इससे मिलती-जुलती बात सुननेको मिलती है तब पुरानी बातोंकी भी चर्चा होती है और यह वाक़िआ भी दोहरा दिया जाता है। पर उस जमानेमें, जब सभी करीब-करीब लड़कीको और लड़केको भी बुरा-भला कह रहे थे, मैंने यह राय अर्ज की थी कि ऐसी हालतमें समाजको विवाह कर लेनेकी इजाजत दे देनी चाहिए। इस बातसे समाजमें खूब बवण्डर उठा था। आपकी इस विषयमें क्या राय है ?

मैंने स्थान और लेखकका नाम नहीं दिया है, क्योंकि लेखक नहीं चाहते कि उनका अथवा उनके शहरका नाम प्रकाशित किया जाये। तो भी इस प्रश्नपर जाहिर चर्चा आवश्यक है। मेरी तो यह राय है कि ऐसे सम्बन्ध जिस समाजमें त्याज्य

१. इसका संक्षिप्त अंग्रेजी अनुवाद हरिजन, २९-५-१९३७ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

माने जाते है, वहाँ विवाहका रूप वे यकायक नही ले सकते। लेकिन किसीकी स्वतन्त्रता पर समाज या सम्बन्धी आक्रमण क्यो करें? ये मामा और मानजी सयानी उम्रके थे, अपना हित-अहित समझ सकते थे। उन्हे पति-पत्नीके सम्बन्धसे रोकनेका किसीको हक नही था। समाज भले ही इस सम्बन्धको अस्वीकार करता, पर उन्हें आत्महत्या करने तक जाने देना तो बहुत बड़ा अत्याचार था।

उक्त प्रकारके सम्बन्धका प्रतिबन्ध सर्वमान्य नही है। ईसाई, मुसलमान, पारसी इत्यादि कौमोमें ऐसे सम्बन्ध त्याज्य नही माने जाते है — हिन्दुओमें भी प्रत्येक वर्णमें वे त्याज्य नही है। उसी वर्णमें भी भिन्न प्रान्तमें भिन्न प्रथा है। दक्षिणमें उच्च माने जानेवाले ब्राह्मणोमें ऐसे सम्बन्ध त्याज्य नही, बल्कि स्तुत्य भी माने जाते है।[1] मतलब यह है कि ऐसे प्रतिबन्ध रूढियोसे बने होते है। यह देखनेमें नही आता कि ये प्रतिबन्ध किसी धार्मिक या तात्त्विक निर्णयसे बने हो।

लेकिन समाजके सब प्रतिबन्धोंको नवयुवक छिन्न-भिन्न करके फेंक दें, यह भी नही होना चाहिए। इसलिए मेरा यह अभिप्राय है कि किसी समाजमें रूढ़िका त्याग करवानेके लिए लोकमत तैयार करनेकी आवश्यकता है। इस बीचमें व्यक्तियोको धैर्य रखना चाहिए। धैर्य न रख सकें तो बहिष्कारादिको सहन करना चाहिए।

दूसरी ओर, समाजका यह कर्तव्य है कि जो लोग समाजके बन्धन तोडें, उनके साथ निर्दयताका बरताव न किया जाये। बहिष्कारादि भी अहिंसक होने चाहिए। उक्त आत्महत्याओंका दोष जिस समाजमें वे हुई उसपर अवश्य है, ऐसा ऊपरके पत्रसे सिद्ध होता है।

हरिजन-सेवक, १-५-१९३७

१४३. पत्र : अमतुस्सलामको

सेगाँव, वर्धा
१ मई, १९३७

बीबी जान उर्फ बेटी अमतुल सलाम,

आते ही तेरा खत मिला। मालूम होता है, तू अच्छा काम कर रही है। इस तरह रहते हुए यदि तू अपना शरीर अच्छा रख सके तो जरूर रह। ५० रु० के नोट इसके साथ भेजता हूँ। कान्ति अभी राजकोटमें है। वह त्रिवेन्द्रम नही जायेगा। लगता है, मैसूर तो जायेगा ही। फिलहाल ज्यादा लिखनेका समय नही है। हम आज ही इलाहाबादसे आये।

तेरा यह मानना ठीक नही है कि हिन्दू भाई-बहनोने तुझे हरिजन-सेवा नही करने दी। लेकिन उसकी कोई चिन्ता नही। तू अच्छी हो जा और जहाँ शान्तिसे सेवा

1. देखिए "मेरी भूल", ६-६-१९३७।

कर सके, वहाँ कर। यदि अपनी ही जमीनपर रहकर अच्छा काम कर सके तो जरूर कर। अगर और भी पैसे चाहिए हो तो मँगा लेना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यहाँसे मैं ९ तारीखको गुजरात जाऊँगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८०) से।

१४४. काठियावाड़ी गाय

श्री नरहरि परीख गोसेवा संघके मन्त्री हैं। उन्होंने काठियावाडके कई राज्योंका, वहाँके गोधनका निरीक्षण करनेके लिए दौरा किया और उसका संक्षिप्त विवरण मुझे भेजा है। मैं उसे 'हरिजनबन्धु' में दो किस्तोंमें प्रकाशित करना चाहता हूँ। पहली किस्त यहाँ अन्यत्र दी जा रही है।[1] एक समय ऐसा था जब काठियावाड़ी गायकी नस्ल बड़ी अच्छी मानी जाती थी। वह नस्ल अब भी मौजूद तो है, लेकिन अब वह दिनोदिन क्षीण होती जा रही है। यदि काठियावाडके राज्य और उनके अधिकारी प्रयत्न करें, तो आज भी यह नष्ट हो रहा धन बचाया जा सकता है और उसमें अकल्पनीय वृद्धि भी हो सकती है। प्रयेक उद्योगमें सुधारकी गुंजाइश है। प्रत्येकको सुधारकर आमदनी बढाई जा सकती है। किन्तु यह वृद्धि गोधनमें जितनी सम्भव है, उतनी कदाचित् और किसीमें नहीं है। इसके लिए केवल ज्ञान, परिश्रम और धैर्यकी आवश्यकता है। वर्तमान जानकारीके अनुसार तो यह भी कहा जा सकता है कि मनुष्य-जातिका आरोग्य गोधन अर्थात् गायके दूधपर विशेष रूपसे आधारित है। हिन्दुस्तान ऐसा देश है, जिसमें गायकी स्थिति अच्छीसे-अच्छी होनी चाहिए, किन्तु है वह हीनातिहीन दशामें, और इस समय तो वह हिन्दुस्तानके लिए भाररूप ही हो रही है।

भावनगर-संस्थानके पशुपालन-विशेषज्ञ श्री पुरुषोत्तम जोशी गोधनकी रक्षाके निम्न तीन उपाय सुझाते हैं :

१. आवारा साँडोको अनिवार्य रूपसे बधिया किया जाये और उनका उपयोग बैलोंकी तरह किया जाये।

२. गाँव-गाँवमें अच्छे साँड़ रखे जायें और उनकी सार-सँभाल की जाये।

३. प्रत्येक किसान गाय रखे।

१. यहाँ नहीं दी गई है। दूसरी किस्त ९ मईके अंकमें प्रकाशित हुई थी। ये किस्तें "काठियावाडमें गोरक्षा" शीर्षकसे प्रकाशित हुई थीं।

यह काम काठियावाड़के सभी राज्य आसानीसे और बिना कोई नुकसान उठाये कर सकते हैं। किन्तु अब पाठक श्री नरहरि परीखका वक्तव्य पढ़ें।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २-५-१९३७

१४५. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
२ मई, १९३७

प्रिय पगली,

कल जब मैं वर्धा पहुँचा तो देखा कि तुम्हारा पत्र पहले ही वहाँ पहुँच चुका है।

इलाहाबादमें पूरे समय कामका बहुत बोझ रहा। विवाद कोई नहीं हुआ। पर जिन विचार-विमर्शोंमें मुझे भाग लेना पड़ा उनका काफी दबाव रहा। वहाँ भीषण गर्मी थी। पर छतपर रातें सुखदायी होती थीं। जवाहरलाल पीले और कमजोर थे। वे अबतक जहाजसे बर्मा रवाना हो चुके होंगे। इस यात्रासे उन्हें लाभ होगा। मैंने उनसे कमसे-कम एक महीना वहाँ बितानेको कहा है। उसके बाद वे, मौलाना अबुल कलाम आजाद और मैं कुछ दिनोंके लिए मिलेंगे।

तुमने यदि प्रभावतीको अभीतक पत्र न लिखा हो तो अब लिख देना। उसका पता है . मार्फत ब्रजकिशोर प्रसाद, श्रीनगर, सिवान, बिहार।

यहां गर्मी बढ़ती जा रही है। यह मेरे लिए कष्टकर नहीं है। पर मुझे गुजरातके मामले निबटानेके लिए २० दिनके लिए वहाँ जाना है। वहाँ मेरा पता होगा . तीथल, बलसाड़, बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे। तीथल समुद्रके किनारे है। १० और ११ को मैं बारडोलीमें होऊँगा। यहाँसे मैं ९ को चलूँगा और १२ को बलसाड़ पहुँच जाऊँगा।

तुम्हारी तरफसे मनुको देने योग्य कोई चीज मुझे नहीं मिली। इसलिए खुद तुम्हें किसी सस्ती और उपयोगी चीजके बारेमें सोचना पड़ेगा।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७९) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९३५ से भी

१४६. पत्र : पी० जी० मैथ्यूको

२ मई, १९३७

प्रिय मैथ्यू,

मैं कल लौटा हूँ। रविवार, ९ तारीखको मैं यहाँसे चल दूंगा। इस बीच यदि तुम आना चाहो तो आ सकते हो।

तुम्हारा,
बापू

प्रोफेसर पी० मैथ्यू
लिओनॉर्ड कॉलेज
जबलपुर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५४२) से।

१४७. पत्र : प्रभावतीको

२ मई, १९३७

चि० प्रभा,

मैं तो तेरे पत्रकी राह ही देख रहा था। कल इलाहाबादसे लौटने पर दो पत्र मिले। यदि तू अपना पता न लिखे और तुझे मेरे पत्र न मिले, तो क्या यह मेरी गलती है? मैंने तुझे पटना 'सर्चलाइट' के पतेपर पत्र लिखा था, क्योंकि मैं तेरा निजी पता भूल गया था। उसके बाद तो मैं इलाहाबाद गया, वहाँ तेरे पत्रकी राह देखी, लेकिन पत्र नहीं मिला। मैंने भी सोचा कि अब वर्धा लौटकर लिखूंगा। बोल, अब इसमें किसकी गलती है? तेरी तो नहीं ही है, लेकिन क्या मेरी है? इतना याद रख कि प्रत्येक पत्रमें अपना पूरा पता लिखना चाहिए।

राजकुमारीका पता दे चुका हूँ। यह फिर ले:

श्री राजकुमारी अमृत कौर, मनोर विला, शिमला।

जवाहरलालकी तबीयत ठीक नहीं थी, इसलिए बैठक इलाहाबादमें हुई। यदि तू वहाँ आ पाती, तो अच्छा लगता।

तेरी तबीयत कैसी है? क्या काम बहुत रहता है? क्या खाती है? वसुमती यहीं है। अमतुल अपने गाँवमें है। वहाँ कुआँ खुदवाना है।

मुझे ९ तारीखको गुजरात जाना पड़ेगा। १०-११ बारडोली, १२ से ३० तक तीथल, वलसाड़, बी० बी० सी० आई० आर०।

मैं अच्छा हूँ।

तू अहमदाबाद कब जानेवाली है?

जयप्रकाशके क्या समाचार हैं?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९९) से।

१४८. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२ मई, १९३७

भाई घनश्यामदास,

मिलके बारेमें नैतिक दृष्टि यह कहती है कि मजदूरोंसे कह देना जब तक वे न्याय पुरसर नहीं चलेंगे तब तक मिल बंद रहेगी, नये आदमी नहीं लिये जायेंगे। वे मकान खाली करके चले जायेंगे और हल्ला नहीं मचायेंगे। तब ही नये आदमीसे काम चलेगा। मेरा तो ख्याल है कि यह मार्ग नैतिक तो है ही आर्थिक भी है। इसमें पूर्ण उतर न आ जाय तो पूछो। ९ तारीखको बारडोली जाता हूं। १२ ता० तीथल (वलसाड)[1] [पहुँचूंगा]। हरिजन से० स० की कार्यकारिणी समिति तीथलमें मिल सकती है।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०३१ से, सौजन्य . घनश्यामदास बिड़ला

१. रोमन लिपिमें है।

१४९. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
४ मई, १९३७

प्रिय पगली,

तुम्हारे पत्र मेरे सामने है। यहाँ गर्मी है, पर वह मुझे खास तकलीफ नही देती। रातें ठंडी होती है।

मैं तुम्हारी इस बातसे बिलकुल सहमत हूँ कि लॉयनेल[1] को यह नौकरी छोड़ देनी चाहिए और इंग्लैंडमें जो-कुछ कर सके, सो करना चाहिए। काश, तुम उसे नौकरी छोड़ने और इंग्लैंड जानेको समझा सकती।

शम्मी[2] की छूतकी आशंका सही है। तुम्हारे लिए अपने प्रियजनोंको ऐसे खतरोंमें डालना ठीक नही है जिन्हे वे और उनके माता-पिता खुशीसे न झेलना चाहें।

तुमने सस्कृतका अध्ययन फिर शुरू कर दिया है, इससे मुझे खुशी हुई। हिन्दी किसी भी हालतमें मत छोड़ना।

अपनी गतिविधियों के बारेमें मैं तुम्हें बता ही चुका हूँ। ९ को रातके १० बजे प्रस्थान, १०-११ को बारडोली, १२ से ३० मई तक तीथल-बलसाड़।

मीराको फिर ज्वर हो गया है। वह मेरे बगैर नही रह सकती। सो वह इस बार मेरे साथ जा रही है और मै समझता हूँ, हर बार जब भी मैं बाहर जाऊँगा, आग्रह करेगी। जिस तरह उसे सेगाँव वापस आनेसे रोकनेकी मेरी कोशिशें बेकार रहीं, उसी तरह इससे रोकनेकी कोशिश भी बेकार है।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७८०) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९३६ से भी

१. लॉयनेल फील्डेन, ऑल इंडिया रेडियोके प्रथम महानिदेशक; देखिए खण्ड ६३, पृ० ३२६ और खण्ड ६४, पृ० २३०।

२. अमृत कौरके भाई लेफ्टिनेंट कर्नल कुँवर शमशेरसिंह, जो अवकाश-प्राप्त डॉक्टर थे।

१५०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

४ मई, १९३७

भाई वल्लभभाई,

तुम मुझे कहाँ ले जा रहे हो? जहाँ ले जाओगे वहाँ तुम्हें बड़ी पार्टीकी देखभाल करनी पड़ेगी। और मैं किसीको रोक नहीं सकूँगा। मुझे तो इसमें कोई हर्ज नजर नहीं आता, परन्तु हम जिनके बँगले में जाकर ठहरेंगे, उनका[1] खयाल तो करना ही होगा। मीराबहनका नोटिस मिल गया है। इस बार मैं जहाँ जाऊँगा, वहाँ वह मेरे साथ आयेगी। मुझे खुद ऐसा नहीं लगता कि मेरे लिए समुद्रकी हवाकी आवश्यकता है। बारडोलीमें मुझे जबतक रखना उचित हो तबतक अवश्य रखो। सूरतमें रखना हो तो वहाँ रखो। और पार्टी बड़ी हो जानेपर भी तुम हर्ज न मानो, तो यह मत समझो कि मुझे कोई ऐतराज है। मुझे तो बहुत ही संकोच होता है। अबतक की सूची यह है:

बा, कानो, मीरा, प्यारेलाल, महादेव, राधाकृष्ण, कनु, मनोहरलाल, शारदा।

आशा है, तुम आराम ले रहे होगे।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
डॉ० कानूगाका बँगला
एलिस ब्रिज, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृ० २००

१. भूलाभाई ज० देसाई।

१५१. पत्र : नारणदास गांधीको

४ मई, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। जयसुखलालको पत्र लिख दिया है। हो सकता है, वह जहाँ है वहीं जम जाये। गोसेवाके शास्त्रका अध्ययन करके यदि वह पोरबन्दर-राज्यमें गोधनकी वृद्धि करे, तो बहुत काम किया माना जायेगा। साथ-साथ खादीका काम तो कर ही सकता है। तुमसे जितना मार्गदर्शन करते बने, करना।

कन्हैयाकी तबीयत ठीक हो गई है। एक समय तुम्हारे साथ कुछ समय बिताने की उसकी प्रबल इच्छा थी, अब वह मन्द पड गई है, फिर भी है तो सही। अगर वह तुम्हारे पास पहुँच जाये तो ठीक ही होगा। तुम्हारी क्या इच्छा है; वह कब आये? उसकी इच्छा है कि वह जब आये, तब पुरुषोत्तम और विजया वहाँ हो।

कुमीकी लडकीकी फीस-सम्बन्धी बात मैं समझ गया था। उचित तो यही है कि वह कुमीके साथ-साथ बढ़ती रहे।

अमतुल सलाम पटियाला रियासतमें है। लीलावती मजेमें है। उसका आलस्य तो प्रसिद्ध है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५१८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१५२. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

४ मई, १९३७

चि० मनुड़ी,

तेरा पत्र मिला। इसके साथ मणिलाल और सुशीलाके पत्र हैं। जब तुम सब उन्हें पढ़ लो, तब किशोरलालको भेज देना।

तेरा सितार भेजूंगा। साथ ही सुरेन्द्रके लिए जूतोंकी जो जोड़ी थी, वह भी भेजूंगा।

आशा है, तेरा सब काम ठीक चल रहा होगा। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना। भोजनमें संयम बरतना। कातना और प्रार्थना करना मत भूलना।

बा को तो तेरी गैरहाजिरी अखरती ही है। मेरी पूछे, तो मेरी भी ऐसी ही स्थिति समझ। किन्तु यदि तू नियमपूर्वक पत्र लिखती रहेगी तो मैं सन्तोष कर लूंगा।

मुझे ९ को गुजरातकी ओर जाना है। पूरा महीना उसी ओर बीत जायेगा। १२ को तीथल पहुँचूंगा। वहाँ लगभग पन्द्रह दिन लग जायेंगे।

दोनोंको

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५६५) से; सौजन्य : मनुबहन सु० मशरूवाला

१५३. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

४ मई, १९३७

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। तेरा कार्यक्रम अच्छा है। आबोहवाकी दृष्टिसे जितनी जल्दी बंगलौर पहुँच सके, उतना अच्छा।

वली से तूने अपनी माँ की कहानी जान ली, यह अच्छा किया। वह कहानी मामूली कहानी नहीं है। सभी बहनोंमें चंची सबसे अधिक नम्र थी। चाहे जैसी स्थिति हो, उसमें औचित्यपूर्वक रहनेकी शक्ति उसमें थी।

अमतुल सलामको मैंने दो दिन पहले ही लिख दिया कि वह खुशीसे अपने गाँवमें रह सकती है। मुझे डर था कि वह वहाँ दुःखी रहेगी। लेकिन देखता हूँ कि वह कहीं भी रहे, अपने पिताके प्रभावके कारण उसे कोई अड़चन नहीं होगी। फिर, एक खास बात और मालूम हुई कि वह घोड़ेकी सवारी करती है। लेकिन मैंने उसे अनुमति दे दी है, इसलिए अब वह शायद न रहे। देखें, वह क्या करती है। सरस्वतीका तुझे लिखा पत्र मुझे नहीं मिला। कल सुरेन्द्र और मनुके आनेकी सम्भावना है। पूछताछ करूँगा। पापरम्मा[1] का पत्र आया था, जो मैंने तुझे भेजनेको कह दिया था। वह पत्र भूलसे खोल लिया गया था। पहले तो मैं कुछ समझ ही नहीं सका कि यह खान[2] कौन है। बादमें जब मैंने पापरम्माकी सही देखी तब समझा।

१. पद्मावती, सरस्वती की माता।

२. साधन-सूत्रमें यह शब्द रोमनलिपिमें लिखा है।

अगर कोई दिखा सके, तो राजकोटमें हम जहाँ-जहाँ रहते थे, वे मकान देख लेना। एक मकान तो दरबारगढ़के बाजूमें था, दूसरा जरा दूरके माढ[1] में था। वह तो शायद अब गिरा भी दिया गया होगा। उसमें आग लग गई थी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैं ९ को बारडोली जा रहा हूँ, १२ को तीथल।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२०)से, सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

१५४. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदीको

सेगाँव, वर्धा
५ मई, १९३७

भाई बनारसीदास,

सुमात्रा ईत्यादिकी यात्राका जो कारण है उसके साथ मारिशियश ई० की यात्रा किसी तरह नही मिलती है। ब्रह्मदेश, सुमात्रा, जावा, सायाम ई० पूर्वकी संस्कृतिसे संबध रखनेवाले देश है उनका हिंदुस्तानी भाषाओके साथ सबध होना स्वाभाविक प्रतीत होता है। इसमें मतलब यह नही है कि वे लोग सबके सब हिन्दी सीखेंगे, लेकिन उनमें से कोई हिन्दीका अभ्यास करे तो आश्चर्यजनक न माना जाय।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५५९) से।

१. मकानोंका समूह, जहाँ एक ऐसे बाड़ेमें से होकर जाना होता था, जो उसे शेष बस्तीसे पृथक करता था।

१५५. पत्र : कार्ल हीथको

सेगाँव, वर्धा
६ मई, १९३७

प्रिय मित्र,

कामके बोझसे बहुत अधिक दबा रहा और इस कारण मैं आपके पत्रों और तारका जवाब नहीं दे सका, हालाँकि उनके बारेमें उचित कार्रवाई की जा चुकी है। मुझे मालूम है कि जो-कुछ यहाँ हो रहा है, अगाथा हैरिसन आपको उससे अवगत रखती हैं।[1] शान्ति स्थापित करनेके लिए जो-कुछ भी सम्भव है, किया जा रहा है, पर यह कोई आसान काम नहीं है। इसलिए मेरा विशेष योगदान नकारात्मक है। मेरी रायमें कांग्रेसी नेता गम्भीर उत्तेजनाके बावजूद अधिक-से-अधिक संयमसे काम लेते रहे हैं। साधारण परिस्थितियोंमें मुझे लॉर्ड लिन्लिथगोसे भेंटका प्रयास करते हुए कोई झिझक नहीं होती, पर इस समय मेरा इस तरहका प्रयास करना गलत होगा। क्योंकि सही व्यक्ति तो, जिनसे वाइसरायकी भेंट होनी चाहिए, स्पष्टतः जवाहरलाल नेहरू ही हैं। और इस तरहकी भेंटोंके लिए प्रयास करनेमें उनकी कोई आस्था नहीं है, क्योंकि उनका खयाल है कि इनसे कोई लाभ नहीं हो सकता। फिर भी यदि उन्हें बुलाया गया तो वे जरूर जायेंगे। मैं खुद इस गतिरोधको किसी सम्मान-पूर्ण ढंगसे खत्म करनेके उपाय और मार्ग सोच रहा हूँ। यदि मुझे इस सिलसिलेमें किसी जिम्मेदार व्यक्तिसे बात करनेकी प्रेरणा हुई तो आप यह भरोसा रखें कि मैं अपनी प्रतिष्ठाके सवालको उसके आड़े नहीं आने दूँगा।

इंग्लैंड जानेसे ठीक पहले लिखा गया आपका पत्र मेरे लिए अमूल्य था। मैं आपको जहाजपर चढ़नेसे पहले एक पंक्ति लिख भेजना चाहता था, पर मुझे खेद है कि वैसा करना सम्भव न हुआ। परन्तु उस पत्रसे मुझे यह पता चल गया कि आपने भारतके अपने प्रवासमें वातावरणको बेहतर बनानेके लिए कितनी सावधानीसे कोशिश की थी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री कार्ल हीथ
व्हाइट विंग्स
मैनरवे
गिल्डफोर्ड

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३०) से।

१. देखिए "पत्र: अगाथा हैरिसनको", ९-४-१९३७।

१५६. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

६ मई, १९३७

प्रिय सी० आर०,

तुम्हारा वक्तव्य[1] मैंने पढ लिया। वह काफी अच्छा और प्रभावशाली है। हम अभी मामलेके पकने तक ठहर सकते हैं। मैंने एक वक्तव्य[2] प्रकाशनार्थ भेजा है। यदि वह छपा तो तुम उसे देख ही लोगे। आशा है, तुम रचनात्मक कार्यका संगठन कर रहे हो और स्वस्थ हो।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६२) से।

१५७. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

६ मई, १९३७

चि० अम्बुजम्,

हरिहर शर्मा और कमला तो यहाँ थे ही; अब कमलाका पति भी आ पहुँचा है। मेरी समझमें कुछ नही आता। पति लक्ष्मणरावका कहना है कि वह पिताजी का ड्राइवर रह चुका है और तुम उसे अच्छी तरह जानती हो। मैं चाहता हूँ कि तुम उसके, उसकी मुँहबोली माँ और कमलाके बारेमें जो-कुछ भी जानती हो, वह मुझे बता दो। इस मामलेमें कुछ रहस्य है, जब तक कुछ और प्रकाश न डाला जाये, मैं उसे सुलझा नही सकूँगा। इसलिए, तुम इस समस्यापर जितना प्रकाश डाल सकती हो, डालो।

आशा है, तुम्हारी पढाई ठीक चल रही होगी और तुम सब बिलकुल अच्छी तरह होगे।

मैं इसी ९ तारीखको गुजरातके लिए चल दूंगा। पर तुम मुझे मगनवाडी, वर्धाकी मार्फत पत्र भेजना।

१. जगदीशशरण शर्मा-कृत इण्डिया सिंस द ऐडवेन्ट ऑफ द ब्रिटिश के अनुसार १६ मई को "च० राजगोपालाचारीने एक प्रेस-वक्तव्यमें इस सुझाव के सम्बन्धमें कांग्रेस के दृष्टिकोण को स्पष्ट किया कि किसी मन्त्रिमण्डल द्वारा त्याग-पत्र देने तथा उसे पदच्युत किये जाने, इन दोनों बातोंमें कोई विशेष अन्तर नहीं है।"

२. सम्भवत: १२ मई, १९३७ का; देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", १२-५-१९३७।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च .]

लक्ष्मणरावको शराब या जुएकी लत तो नहीं थी? वह तुम्हें कैसा आदमी लगा?

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६११) से, सौजन्य: एस० अम्बुजम्माल

१५८. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

६ मई, १९३७

चि० मनुडी,

यदि मेरी किस्मत ही खराब हो, तो तू क्या कर सकती है? तूने मुझे पत्र लिखने को कहा, उससे पहले ही मैं तुझे पत्र लिख चुका था। इसी बीच तुम दोनो के यहाँ आनेकी बात लिखी, तो मैंने वह पत्र रोक लिया। लेकिन अब तो तुमने यहाँ आनेका इरादा ही छोड़ दिया है, सो वह पत्र फिर डाकमें भेज रहा हूँ।

९ तारीखको बारडोली जाते हुए हम लोग अकोलासे गुजरेंगे। हम लोग करीब एक बजे वहाँ पहुँचेंगे। उस समय या तो कोई आकर सितार और जूतोकी जोडी ले जाये अथवा स्टेशन मास्टरसे कह जाये, जिससे वह ये दोनो चीजें खुद ले ले। अगर तू उसी दिन तैयार हो जाये, तो तू भी साथ चलना। और अगर सितार साथ ले चलना हो, तो वह भी ले चलेंगे। तू तीथल चल रही है, तो उसे साथ ले चलना ही ठीक होगा। १२ या १३ को तीथल जाना होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५६६) से; सौजन्य: मनुबहन सु० मशरूवाला

१५९. पत्र : दामोदरको

६ मई, १९३७

चि० दामोदर,

मैंने गंगाबिसनके नाम एक हजार रुपये भेजे हैं। तुम वे रुपये 'हिन्दी हरिजन'[1] के लिए ठक्कर बापाको हरिजन निवासके पतेपर भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०७४) से।

१६०. पत्र : मो० सत्यनारायणको[2]

६ मई, १९३७

भाई सत्यनारायण,

तुम्हारी योजना अण्णा को भी बताई है। उनका अभिप्राय इसके साथ है।

पंजाबी के बारेमें जो-कुछ प्रथम पेरेमें लिखा है वह कुछ ठीक नहीं लगता है। क्योंकि अगर पंजाबी हिंदीसे मिलती-जुलती है तो बंगला, उडिया, आसामी और सींध कहाँ कम मिलती है? लेकिन यह कहा जा सकता है कि जैसे पंजाबमें पंजाबी चलती है वैसी हिन्दुस्तान या उर्दूकी कल्पी है इसलिये वहाँ अगर कुछ भी काम किया जाय तो वह स्थानिक लोगोंके मार्फत ही होना चाहिये। इस कारण जैसे संयुक्त प्रांतमें हिंदी प्रचार कार्यालयके तरफसे कुछ प्रवृत्ति नहीं चलती है ऐसे ही पंजाबमें न चले। याद रखना चाहिये कि हमारी दृष्टिसे जिस जगह उर्दू बोली जाती है वहाँ हम कुछ प्रचार नही करते हैं। उर्दू बोलनेवालोंको हम हिन्दी बोलनेवाले में गिनते हैं। बाकी योजनाके बारेमें मेरा यह अभिप्राय है कि वह सब स्वावलंबी पद्धति-से चलाई जाय।

और एक विचार दे दूं। मेरा ऐसा कुछ अभिप्राय बन रहा है कि हमने शिक्षण-कलामें मौलिक काम नही किया अर्थात् हिंदी शिक्षा आसान और रसीक कैसे हो सकती है उस दिशामें शायद ही कुछ प्रयत्न किया हो। जैसा अंग्रेजी ई० के बारेमें

1. अभिप्राय स्पष्टतः हरिजन-सेवक से है।

2. दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाके।

हुआ है। हमारेमें से कौन कह सकता है कि कितने दिनमें हिंदी सीखाई जा सकती है? कितने दिनमें लिपि सीखाई जा सकती है? हमने आदर्श स्वयशिक्षक किसी भाषामें नही बना रखा है। तामील ई० भाषामे कुछ प्रयत्न हुआ है उसे मैं मौलिक नही मानता हूँ अर्थात् उसमें असाधारणता नही मानता हूँ। न हम ऐसा कुछ काम कर सकते हैं तो हिंदी प्रचार बड़ी वेगसे चल सकता है और लाखो रुपये बच जा सकता है। हमारे पास दक्षिण[भारत हिन्दी] प्रचार [सभा] के कारण काफी शिक्षक तो है लेकिन उत्तम प्रकारसे काम करनेवाले कोई है? मुझे कुछ अच्छा लगता है कि कोई व्यापक योजनामें ऐसे प्रयोगको स्थान देना आवश्यक है।

बापूके आशीर्वाद

मूल पत्रसे राष्ट्रभाषा प्रचार समिति पेपर्स, सौजन्य . नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१६१. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको

वर्धा
६ मई, १९३७

प्र० : मैं ऐसा समझता हूँ कि मन्त्रि-पद स्वीकार करनेके बारेमें कार्य-समितिका जो नवीनतम प्रस्ताव[1] है, उसमें आपका बहुत हाथ रहा है। यदि यह ठीक है तो क्या इस कथनमें कोई सचाई है कि आप वामपक्षियोंके आगे झुक गये हैं?

उ० वस्तुतः इस बार न कोई वामपक्षी था, न कोई दक्षिणपक्षी। विचार-विमर्श केवल इस प्रश्नपर हुआ कि प्रस्तावका क्या रूप हो।

क्या आप यह नहीं देख रहे कि श्री बटलरके वक्तव्य[2] और कार्य-समितिके प्रस्तावमें बहुत ही कम अन्तर है?

१. २८ अप्रैलको इलाहाबादमें पास किया गया प्रस्ताव, जिसमें कहा गया था : "ब्रिटिश सरकारकी पिछली कार्रवाइयों और उसके वर्तमान रुखसे यह लगता है कि कांग्रेस द्वारा माँगे गये विशिष्ट आश्वासनोंके बिना जनताका प्रतिनिधित्व करनेवाले मन्त्री ठीक तरहसे अपना कार्य नहीं कर सकेंगे और परेशान करनेवाले हस्तक्षेप होते रहेंगे। इन आश्वासनोंसे यह अपेक्षा नहीं है कि गवर्नर और उसके मन्त्रियोंमें गम्भीर मतभेद पैदा होनेकी स्थितिमें गवर्नरको मन्त्रियोंको बर्खास्त करने या प्रान्तीय विधान-सभाको भंग करनेका जो अधिकार है, वह रद कर दिया जाये। परन्तु इस समितिकी गम्भीर आपत्ति इस बातपर है कि बजाए इसके कि गवर्नर मन्त्रियोंको बर्खास्त करनेकी जिम्मेदारी अपनेपर ले, मन्त्रियोंको ही गवर्नरके हस्तक्षेपके आगे झुकना पड़ेगा, नहीं तो उनके लिए यही विकल्प रह जाता है कि वे स्वयं अपने पदसे त्यागपत्र दे दें।"

२. भारतके गृह अवर-सचिव; उनके द्वारा २८ अप्रैलको हाउस ऑफ कॉमन्समें दिये गये उत्तरमें कहा गया था : "विशेषाधिकारोंको पार्लियामेंटने जिन प्रयोजनोंके लिए रखा है, उनसे भिन्न प्रयोजनोंके लिए

यदि ऐसा है तो श्री बटलरको गवर्नरोंको यह आदेश देनेमें कि वे कांग्रेसी नेताओंको कांग्रेस-प्रस्तावकी शर्तोंके अनुसार मन्त्रि-पद सौंपें, कोई भी कठिनाई क्यों होनी चाहिए?

लॉर्ड जेटलैंडके भाषण[1] को फिलहाल यदि हम छोड़ दें तो श्री बटलरके वक्तव्यमें आपको सौजन्यकी कमी कहाँ दिखाई देती है?

कांग्रेसकी तरहके किसी बड़े दलके आगे, जिसका बहुमत हो, मन्त्रि-पद खैरात की तरह फेंका जाये और उसके नेताओंके साथ प्रार्थियोंका-सा व्यवहार किया जाये, ऐसा मैंने कभी नहीं देखा। यदि वे मन्त्री होते तो क्या उन्हें गवर्नरोंसे भेंटके लिए प्रार्थनापत्र भेजने पड़ते और अपनी प्रार्थनाओंके तुरन्त रद हो जानेकी जोखिम उठानी पड़ती? मैं तो यह सोचता था कि स्वशासनमें मंत्री अपने गवर्नरोंसे जब चाहे मिल सकते हैं और जहाँ मन्त्रियोंको कोई बात अप्रसन्न या असन्तुष्ट होने योग्य लगती है तो प्राय: गवर्नरोंको झुकना पड़ता है। ब्रिटिश सरकार यह जानती है कि कांग्रेस पूर्ण स्वाधीनताके लिए प्रयत्नशील है। मुझे ऐसा लगता है कि ब्रिटिश मन्त्रि-मण्डलको कांग्रेसका यह रुख बुरा लगता है। यदि ऐसा है तो उन्हें कांग्रेसको और दुनियाको यह साफ-साफ बता देना चाहिए कि वे पूर्ण स्वाधीनताको बर्दाश्त नहीं करेंगे; उन्हें 'स्वशासन' शब्दके साथ खिलवाड़ नहीं करनी चाहिए। यदि भारतका अपनी नियति की ओर, वह जो-कुछ भी हो, स्वाभाविक विकास उन्हें बुरा नहीं लगता, तो उन्हें कांग्रेसके साथ उसकी प्रतिष्ठाके अनुरूप सम्मानजनक व्यवहार करना चाहिए और उनके भाषण और कार्यके कारण जो सन्देह गहरा होता जा रहा है, उसे दूर करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, ७-५-१९३७

उनके प्रयोगको बढ़ावा देनेका सम्राट्की सरकारका कोई इरादा नहीं है। उसका निश्चय ही यह इरादा नहीं है कि पार्लियामेंटका आशय मन्त्रियोंको जो व्यापक अधिकार देनेका था और जिनका प्रयोग उन्हें अपने प्रतिपादित कार्यक्रमकी पूर्तिके लिए करना चाहिए, गवर्नर उनका अपने दायित्वोंकी संकीर्ण और मात्र कानूनी व्याख्या द्वारा अतिक्रमण करें।"

१. लॉर्ड लोथियनको उत्तर देते हुए उनका ८ अप्रैलका वक्तव्य, जिसमें कहा गया था: "गवर्नरोंसे जो माँग की गई है, वह ऐसी है जो संविधानमें संशोधन किये बिना स्वीकार नहीं की जा सकती।... मैं तो यह भी कहूँगा कि यदि संविधानमें इस तरहका वचन देनेकी स्वीकृति हो तो भी उसे देना भारतके अल्पसंख्यकों और अन्य लोगोंके साथ विश्वासघात होगा।... इस तरहके रक्षोपायोंकी सीमा और आवश्यकताके बारेमें मतभेद हो सकता है, पर इसमें सन्देह नहीं कि भारतके अल्पसंख्यक समुदाय स्वयं उन्हें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानते हैं।"

१६२. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको[1]

[६ मई, १९३७ के पश्चात्][2]

इस भाषणकी ध्वनि तो निस्सन्देह इसी विषयपर दिये गये उनके पिछले भाषणसे बेहतर है, परन्तु मेरा खयाल है कि इससे गतिरोध दूर करनेमें मदद नही मिलेगी।

कार्य-समितिका पिछला प्रस्ताव[3] अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके उस प्रस्तावकी, जिसके अनुसार आश्वासन माँगे गये थे, यथासम्भव अधिकसे-अधिक स्पष्ट व्याख्या है। और यह सर्वविदित है कि उसका आशय क्या था। गवर्नर यदि यह आश्वासन देते हैं कि जब भी उन्हें असह्य लगनेवाली परिस्थिति पैदा हो तब गवर्नर मन्त्रियोंसे त्यागपत्रकी या अपनी इच्छाओंके आगे झुकनेकी अपेक्षा रखनेकी बजाय उन्हें बर्खास्त करनेका, जिसका कि उन्हें अधिकार है, दायित्व अपने ऊपर ले लेंगे, तो इस आश्वासनसे निश्चय ही संविधानके अधिनियमपर कोई दबाव नही पड़ेगा।

सार्वजनिक विरोधके बावजूद गवर्नरों द्वारा सगठित मन्त्रिमण्डलोंकी उपलब्धियाँ गिनानेसे स्थिति सुधरती नहीं है, बल्कि इससे सन्देहकी और पुष्टि ही होती है। मेरी रायमें कांग्रेस वास्तवमें उत्सुक है, और यदि वह मन्त्रि-पद स्वीकार करेगी तो उस माध्यमसे यथासम्भव संवैधानिक रूपसे जितना सम्भव है, पूर्ण स्वतन्त्रताके अपने निर्दिष्ट लक्ष्यकी ओर आगे जानेका सच्चा प्रयास करना चाहेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ऐनुअल रजिस्टर, १९३७, खण्ड १, पृ० २५८

१ और २. यह भेंट ६ मईको हाउस ऑफ लॉर्ड्समें दिये गये लॉर्ड जेटलैंडके भाषणके सम्बन्धमें थी; देखिए परिशिष्ट ४।

३. देखिए पृ० १८५, पा० टि० १।

१६३. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव, वर्धा
७ मई, १९३७

चि० नारणदास,

इसके साथका पत्र कमुको देना। यह जिस पत्रका जवाब है, सो भी संलग्न है। जो-जो काम वह कर सकती है, यदि उससे वे सब काम लिये जायें, तो तुम उसकी कितनी कीमत आँकोगे? तुम्हारी शाला यह बोझ उठा सकेगी या नहीं, यह बात विचारणीय नही है।

अण्णाके बारेमें तो तुमने 'हरिजन'[1] में पढ़ा होगा। जिसके साथ उसका पतन हुआ, वह कमलाबाई इस समय यही है। वह पश्चात्ताप कर रही है। अण्णाको तो मै यही ले आया हूँ। मै मानता हूँ, उसे पश्चात्ताप हो रहा है। कमलाबाईकी बात मैं नही जानता। वह कहती है कि उसे इतनी गहरी चोट लगी है कि अब भविष्यमें उससे भूल होनेकी सम्भावना ही नहीं है। दोनोको सेगाँवमें रखना ठीक नही लगता। किन्तु अण्णाको मैं अपने पास ही रखनेमें भलाई देखता हूँ। अत. कमलाबाईको तुम्हारे मातहत रखनेकी इच्छा हो जाती है। उसका खर्च मैं उठाऊँगा। जो तुम्हारी मर्जीमें आये, वह काम तुम उसे सौंप सकते हो। उसमें सामर्थ्य तो है ही। उसकी मातृभाषा कन्नड़ है। वह हिन्दीकी शिक्षिका है। दूसरा भी जो काम उसे सिखायें, वह करनेको तैयार है। सिलाई वगैरह तो वह सिखा सकती है। तुम्हें कोई संकोच हो, तो 'ना' लिख देना। और उसे आश्रय देनेको तैयार हो, तो तार करना। हम लोग यहाँसे ९ को रवाना हो रहे हैं। १०, ११ और १२ बारडोली, १२ के बाद वलसाड़के पास तीथल। तार बारडोली करना।

बा, मीरा, प्यारेलाल, कानो, महादेव, राधाकृष्ण, कन्हैया मेरे साथ होंगे। अकोला से शायद मनु साथ हो ले। शारदा भी वहाँ आयेगी। दूसरे भी दो-एक होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५१९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. ३ अप्रैल, १९३७ के; देखिए पृ० ५०-२।

१६४. कोचीन-त्रावणकोर

आखिर वही हुआ, जिसका मुझे भय था। कोचीन और त्रावणकोर एक-दूसरेसे लड़ रहे हैं। दुःखकी बात यह है कि लडाई एक ऐसी बातपर चल रही है जो हिन्दू-धर्मके लिए और इसीलिए पूरे भारतके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह लड़ाई प्रकाश और अन्धकारकी है। कोचीनकी जनता कोचीनके महाराजाकी इस कार्रवाईके पक्षमें हो सकती है, यह बात मैं सोच ही नही सकता। कोचीनके मन्दिरोंमें, जो उनके अधिकार-क्षेत्रमें हैं, वे पूजा-उपासनाका मनचाहे ढंगसे नियमन कर सकते हैं। परन्तु अत्यन्त कट्टर हिन्दू-धर्म भी उन्हें कोचीनके मन्दिरोंमें जानेवालोंके निजी आचरण को नियमित करनेकी शायद ही अनुमति देगा। भारतके किसी भी ऐसे मन्दिरमें, जहाँ हरिजनोंको पूजाकी अनुमति नही है, ट्रस्टियोंको यह अधिकार नहीं है कि वे सवर्ण हिन्दुओंके कार्योंकी छानबीन करें; मन्दिरोंमें जाना तो उनका अधिकार ही है।

कोचीनमें महाराजाने जिस मन्दिर[1] के बारेमें हस्तक्षेप किया है, उसपर उनका एकान्तिक नियन्त्रण नही है। इन मन्दिरोंपर त्रावणकोरके महाराजाके भी वास्तविक अधिकार हैं। स्पष्ट ही कोचीन-आदेश उनमें हस्तक्षेप करता है। त्रावणकोरने यदि पाप किया है, तो कोचीनको उससे कुछ लेना-देना नही है। कोचीन-आदेश तो निजी रूपसे निर्णय लेनेके अधिकारमें हस्तक्षेप है।

मेरे विचारसे इस संकटमें जनताका कर्तव्य स्पष्ट है। देश-भरमें सभाएँ करके कोचीनके आदेशोंकी निन्दा और उन्हें वापस लेनेकी माँग की जानी चाहिए। अत्यन्त कट्टर हिन्दू भी, चाहे वे सभी मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए खोल देनेके पक्षमें न हों, इस तरहकी विरोध-सभाओंमें शामिल हो सकते हैं। चूँकि कोचीनके जन-साधारणका महाराजाकी इस कार्रवाईसे सीधा सम्बन्ध हैं, इसलिए वे इस आन्दोलनका नेतृत्व कर सकते हैं। भारतके पंडितोंको इन आदेशोंकी शान्तचित्त होकर जाँच करनी चाहिए और अपनी निष्पक्ष सम्मति व्यक्त करनी चाहिए। मेरा अपना विचार यह है कि त्रावणकोर दरबारको, कोचीन-आदेश धार्मिक दृष्टिसे उचित है या नहीं, इस एक प्रश्नपर पंडितोंकी सम्मति प्राप्त करनी चाहिए और उसके अनुसार चलनेका वचन देना चाहिए। दूसरे शब्दोंमें, त्रावणकोर यह प्रस्ताव रख सकता है कि वह एक ऐसे पंचके फैसलेको माननेको तैयार है जिसमें सभीको स्वीकार्य निष्पक्ष पंडित हों। इस तरहके पंडितोंकी एक परिषद्‌की सम्मति पंच-फैसलेके बहुत निकटकी बात होगी। कारण, कि त्रावणकोर दरबारको इस बातका तो पूरा अधिकार है कि वह

१. कूटल्मणिक्कम मन्दिर; विवादके विवरणके लिए देखिए परिशिष्ट ५; देखिए अगला शीर्षक और "कोचीनकी अछूत प्रथा", ५-६-१९३७ भी।

ऐसे मन्दिरोंको जिनपर केवल उसीका अधिकार और स्वामित्व है, पण्डितोंकी सम्मति लिए बिना हरिजनोंके लिए खोल दे, पर जो मन्दिर संयुक्त अधिकार-क्षेत्रके अन्तर्गत आते हैं, उनके बारेमें एक नई व्यवस्था देना कदाचित् ही ठीक हो। हरिजन-कार्य सदैव और सर्वत्र इस तरह होना चाहिए कि कोई उस पर उँगली न उठा सके। त्रावणकोरका शानदार कार्य नैतिक सचाईपर आधारित कड़ी-से-कड़ी कसौटी पर खरा उतर सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-५-१९३७

१६५. कोचीनके मन्दिरोंमें प्रवेशपर प्रतिबन्ध

पिछला लेख लिखे जा चुकनेके बाद[1] केरल हरिजन सेवक संघके प्रधान श्री सी० के० परमेश्वरन् पिल्लेका निम्नांकित पत्र मिला है। . . .[2]

एर्णाकुलमसे किसीने 'मद्रास मेल' को २० अप्रैल, १९३७ का एक पत्र भेजा है। उसमें यह कहा गया है कि इरिञ्ञायलक्कुडामें कूडलमणिकम मन्दिरके बारेमें कोचीन सरकारने जो आदेश जारी किया है, उसके बारेमें त्रावणकोरमें हो रही आलोचनापर बहुत ज्यादा रोष अनुभव किया जा रहा है और रियासतके हिन्दुओंकी बहुत बड़ी संख्या सरकारकी कार्यवाहीका समर्थन कर रही है। . . . २३ अप्रैलको 'मद्रास मेल' के अपने संवाददाताने उस पत्रको लिखा कि "इरिञ्ञायलक्कुडाके प्रमुख नागरिक कोचीन सरकारकी इस घोषणाका समर्थन करते हैं कि अवर्णोंको जिन मन्दिरोंमें जाने दिया जाता है, उनमें पूजा-अनुष्ठान करानेवाले तन्त्रियोंने कूडलमणिकम मन्दिरके समरोहोंमें भाग लेकर इसे भी अपवित्र कर दिया है। . . ."

कोचीन-विधानसभा हर साल ऐसे प्रस्ताव पारित करती रही है जिनमें सरकारसे सिफारिश की गई है कि छुआछूत समाप्त कर दी जाये। सार्वजनिक सभाओंमें भी कई अवसरोंपर हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके समर्थनमें प्रस्ताव पारित किये गये हैं। इसलिए 'मद्रास मेल' में छपे वक्तव्यके सही होनेमें सन्देहके कारण थे। अतः मैं २५ अप्रैलको सेवा-निवृत्त जज और हरिजन सेवक संघकी त्रिवेन्द्रम जिला-समितिके अध्यक्ष श्रीयुत एम० गोविन्दन, बी० ए०, बी० एल० के साथ कोचीनके मामलोंकी सही स्थितिका अध्ययन करनेके लिए एर्णाकुलम गया। मैंने कई महत्वपूर्ण व्यक्तियोंसे, जिनमें कूडलमणिकम मन्दिरके प्रशासक और एस० एन० डी० पी० योगम्के प्रधान तच्चुडय कैमल भी थे, भेंट की। अब मैं निश्चित रूपसे यह कहनेकी स्थितिमें हूँ कि 'मद्रास

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. परमेश्वरन् पिल्लेके कोचीनकी यात्रासे वापस आनेपर लिखे गये पत्रमें से यहाँ कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं। इस पत्रमें उनकी एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको दी गई भेंटका विवरण था।

मेल' में छपे इस वक्तव्यमें कोई सचाई नहीं है कि कोचीनके अधिकांश लोग तन्त्रियोंका बहिष्कार करनेकी कोचीन सरकारकी कार्यवाहीका समर्थन करते हैं। २३ अप्रैलके 'हिन्दू' में दो वक्तव्य छपे हैं . . . जिनमें सम्बन्धित तन्त्री नेडुंपल्लि नम्बूदिरीके विरुद्ध सरकार द्वारा की गई कार्यवाहीकी भर्त्सना की गई है। . . .

सामाजिक और नैतिक दृष्टिकोणसे कोचीन सरकारकी कार्यवाही अन्यायपूर्ण और असगत है। धर्मशास्त्रोंमें स्पष्टतः कहा गया है कि जो भी व्यक्ति समुद्र-यात्रा करता है — ऐसा व्यक्ति भी जो तीन दिन लगातार समुद्रपर रहता है — पतित बन जाता है। इसी कारण प्रोफेसर (अब सर) रमुन्नी मेननको कोचीन सरकारने समाजसे वहिष्कृत कर दिया था और कोचीनके मन्दिरोंमें उनके प्रवेशपर रोक लगा दी थी। कुछ साल बाद जब महाराजा कोचीनका पुत्र इग्लैंडमें शिक्षा प्राप्त करके वापस लौटा तब यह नियम रद कर दिया गया और इग्लैंडसे लौटे हुए सभी लोगोको मन्दिरोंमें प्रवेशकी अनुमति दे दी गई। कोचीनके मन्दिर तो तब भी अपवित्र हो गये थे और त्रावणकोर सरकारको उस वक्त ही नेडुंपल्लि नम्बूदिरीके विरुद्ध ये कदम उठाने चाहिए थे, जो कोचीन सरकारने अब उठाये हैं।

यदि वस्तुतः हम धर्मशास्त्रोके नियम आजकल दृढतासे लागू करे तो सभी सवर्ण हिन्दू पतित माने जायेंगे और वे वहाँ मन्दिरोंमें प्रवेश नही कर सकते। परन्तु इन प्रगतिके दिनोंमें कोई भी विचारशील सरकार ऐसी तर्कहीन कार्यवाही करनेकी बात नही सोच सकती। इसलिए मुझे आशा है कि कोचीन सरकार अपने आदेशपर पुन विचार करेगी और उसे वापस ले लेगी। रियासतके दीवान सर आर० के० षण्मुखम् चेट्टी आधुनिक विचारोके सुसस्कृत व्यक्ति है और जस्टिस पार्टीके समर्थक हैं। मुझे इसमें कोई सन्देह नही है कि वह ऐसे ही कदम उठायेंगे जो सही होंगे और अपने प्रशासनमें जनताका विश्वास फिरसे जाग्रत करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-५-१९३७

१६६. स्वयं-दण्डित अस्पृश्यता

इस पत्र[1] का प्रकाशन यह स्पष्ट करनेके विचारसे किया जा रहा है कि बंगालके ये महान वयोवृद्ध सज्जन बड़ी समस्याओंको कितनी नयी दृष्टिसे देखते हैं। इनके पहलेके जिस पत्रका इस पत्रमें उल्लेख है, वह भूलसे नष्ट हो गया। पर यह खुशीकी बात है कि पाठकको उसका सार इसमें मिल जाता है। श्री हरदयाल नागने सच ही कहा है कि यदि मन्दिरोंसे अस्पृश्यता खत्म नहीं हुई, तो मन्दिरोंको खत्म करना होगा; और यदि मन्दिर खत्म होते हैं तो उनके साथ जिस हिन्दू-धर्मसे हम परिचित हैं वह भी खत्म हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-५-१९३७

१६७. पत्र : अमृत कौरको

सेगांव, वर्धा
८ मई, १९३७

प्रिय बागी,

यह कागज, जिसपर मैं लिख रहा हूँ, प्रभुदयालका बनाया हुआ है। वह बहुत-सारे कागज लाया है और बड़े गर्वसे मुझे दिखा रहा है। इसलिए मैंने सोचा कि उसके हाथका यह काम तुम्हे भी दिखा दूँ। यह उनमें से किसी श्रेष्ठ कागजका नमूना तो नहीं है, पर इसका आकार काटनेके विचारसे सुविधाजनक था।

साधारणतया औसत आदमी और औसत स्त्रियाँ एक-जैसे अच्छे-बुरे होते हैं। पता चला है कि तुम्हारा व्यवहार अगर लॉयनेलसे गया-बीता नहीं तो बुराईमें उसीके बराबर तो था ही। मीराको लिखे तुम्हारे पत्रसे देखता हूँ कि तुम मुझे अपने स्वास्थ्यकी कोई खबर नहीं देतीं और मैं यह समझता रहता हूँ कि तुम ठीक हो। परन्तु मैंने इससे तो यह जाना कि तुम बहुत ठीक नहीं हो। यह सब आखिर मुझे मालूम क्यों नहीं होना चाहिए? और तुम दवाएँ भी ले रही हो! तुम्हें ठीक-ठीक बताना ही होगा कि तुम्हें क्या हुआ है?

1. हरदयाल नागका, जो यहाँ नहीं दिया गया है।

बालकृष्ण[1], जैसा तुम उसे छोड़ गई थी, उसी हालतमें ही है। मेरा खयाल था कि मैं तुम्हें इतना लिख चुका हूँ।

संस्कृतपर तुम इतना समय लगा रही हो, यह मेरे लिए खुशीकी बात है। तुम्हारे हिन्दीके अक्षर थोड़े अधिक बड़े होते हैं, पर तुम्हारी यह त्रुटि एहतियातकी दृष्टिसे ठीक है। हाथ जम जानेपर जल्दी ही अक्षरोंको स्वाभाविक आकारमें लिखने लगोगी।

मुझे मेहतासे बिल नहीं मिला है। उसे पूरा पता दे दिया गया था। पर तुम्हारे पतेके बारेमें यह एक बड़ी मुसीबत है कि उसे मेरे सिवा कोई सही लिख ही नहीं सकता। आशा है, तुम्हें अतिरिक्त कुछ नहीं देना पड़ा होगा। मैं सोचता हूँ यह उपयोगी तो रहेगी ही। तुम दिनशा मेहताको लिख देना कि केतलीका बिल तुम्हें भेज दिया जाये।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७८१) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९३७ से भी।

१६८. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

८ मई, १९३७

चि० ब्रजकृष्ण,

तुम्हारा खत मिला। मैं तो अब गूजरात जा रहा हूँ। १३[2] तारीखको तिथल पहुचूंगा। अच्छा तो यह होगा कि वह भाईसे सब बयान लेकर मुझे भेज दो। और बयान पढनेके बाद आवश्यकता होगी तो मैं उन्हें बुला लूंगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४५३) से।

१. बालकृष्ण भावे, विनोबा भावेके छोटे भाई, जो उन दिनों बीमार थे।
२. गलतीसे '१२' की जगह '१३' लिखा गया है।

१६९. पत्र : सरस्वतीको

८ मई, १९३७

चि० सरस्वती,

तुम्हारे खत मिले थे। समयाभावके कारण मैं उत्तर नही दे सका हूँ। बड़े ध्यानसे अभ्यास करती है! अगर ऐसा है तो सब बयान मुझे दे दो कि इतने समयमें कहां तक आगे बढ सकी है? रामचंद्रनको अब कैसा है? संगीतमें कितनी उन्नति की है, फिर यहां कब आनेकी आशा रखती है, यहा आजकल काफी गरमी पडती है। लेकिन रातमें अब तक तो ठंडी रहती है। इसलिये गरमी सहन करनेमें बहूत मुसीबत नही पडती है।

बापुके आशीर्वाद

श्री सरस्वती
मार्फत जी० रामचन्द्रन
हरिजन सेवक सघ
थाईकड, त्रिवेन्द्रम

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१५९) से। सी० डब्ल्यू० ३४३२ से भी; सौजन्य · कान्तिलाल गांधी

१७०. गांधी सेवा संघके कर्तव्य

कुमरी बेलगाँवसे लगभग १७ मील दूर एक छोटा-सा गाँव है। वहाँ श्री गंगाधर रावने एक आश्रम स्थापित किया है। गांधी सेवा संघकी वार्षिक बैठक हुदलीमें होनेवाली थी, किन्तु वहाँ राजा इन्द्रने विघ्न उपस्थित कर दिया, और संघके सदस्योंने हुदलीके मंडपसे भागकर कुमरी आश्रमकी बुनाई-शालाके छप्परके नीचे आश्रय लिया। वहाँ बहुत-सी चर्चाके बाद कई महत्वके प्रस्ताव पारित हुए। उनमें से निम्न प्रस्ताव ध्यान आकर्षित करनेवाले हैं। इन्हें[1] हिन्दी भाषामें ही दे रहा हूँ।

१. प्रस्ताव यहाँ नहीं दिये गये हैं। ये प्रस्ताव चरखेके द्वारा, पीनेके पानीके कुओं द्वारा, हिन्दीके प्रयोग और प्रचार द्वारा, छुआछूतके उन्मूलन द्वारा तथा गोरक्षा द्वारा रचनात्मक कार्य करनेके बारेमें थे।

प्रस्तावोंकी हिन्दी इतनी सरल है कि कोई पाठक यह नहीं कहेगा कि इनका अनुवाद होना चाहिए था। फिर भी, प्रस्ताव यदि किसीकी समझमें न आयें, तो वह किसी हिन्दी समझनेवाले सज्जनसे अनुवाद करा ले।

पहले [तीन] प्रस्तावोंके बारेमें तो मैं इतना ही कहूँगा कि जो परिवर्तन किये गये हैं, वे रचनात्मक कार्यका विस्तार करनेके लिए ही किये गये हैं। ये परिवर्तन न तो रचनात्मक कार्यके विकल्पके रूपमें हैं, और न उसकी वृद्धिके रूपमें, बल्कि अनुमति[1] का उद्देश्य केवल इस कार्यकी सहायता करना है। यदि यह उद्देश्य स्पष्ट रीतिसे न समझ लिया जाये, तो जिस अनिष्टका भय श्री किशोरलालको है, उसके सच निकलनेकी सम्भावना है। संघका अस्तित्व ही रचनात्मक कार्यको जीवित रखने, रसमय बनाने, तथा उसे कश्मीरसे कन्याकुमारी तक और कराचीसे डिबरूगढ तक फैला देनेके लिए है और यह इसलिए कि रचनात्मक कार्यको सत्य और अहिंसाके चिह्नके रूपमें माना गया है। इस कार्यकी सिद्धिके लिए तीन करोड मतदाताओंके साथ सम्पर्क आवश्यक है। इस सम्पर्कको प्रभावशाली बनानेके लिए यदि गाधी सेवा सघके कुछ सदस्योंको विधानसभामें जाना पडे, तो उन्हे वहाँ भेजना सघका कर्तव्य है, जो इन परिवर्तनोंसे स्पष्ट होता है।

चौथा प्रस्ताव स्वयंसिद्ध ही है। जितने अधिक कुएँ और तालाब होंगे, वे उतना अधिक काम देंगे। इतना ही नही कि इससे हिन्दुस्तानकी सम्पत्ति बढ़ेगी बल्कि संघकी मार्फत बननेवाले कुएँ, तालाब आदि जलाशय सभी हरिजनोंके लिए अनिवार्यत. खुले रहेंगे। इसलिए यदि वे उपयुक्त स्थानोंपर खुदवाये जायें, तो वे असख्य प्यासे हरिजनोंको पानी देंगे और उनकी शीतल आँतोका आशीर्वाद दानियों तथा सघको मिलेगा। अतः जिसकी इच्छा हो, वह आँख मूँदकर हरिजनोंके लिए कुएँ खुदवानेके लिए संघको दान भेजे।

पाँचवाँ प्रस्ताव सबको समेट लेनेवाला है। इसमें ग्राम-सेवाका प्रारम्भ भंगी-सेवासे यानी गाँवकी सफाईसे माना गया है। प्रस्तावमें बताया गया है कि यह कैसे किया जा सकता है। ओषधि-वितरण करने तथा पाठशाला चलानेका कार्य आवश्यक नही माना गया, यह ध्यानमें रखने लायक बात है। चरखे आदिके उद्योगोंका उल्लेख भी इस प्रस्तावमें नही है। इसका अर्थ यह है कि उक्त काम तो करने ही हैं; किन्तु जोर इस बातपर दिया गया है कि प्रारम्भ किस कामसे करें। क्योंकि कई सदस्योंको सफाईका काम करनेसे बहिष्कार आदिकी अड़चन उपस्थित हो सकनेकी आशंका थी। यह प्रस्ताव उस आशंकाका निवारण करनेके लिए है।

छठे प्रस्तावमें हिन्दीके प्रचारका आग्रह है, और संक्षेपमें यह बताया गया है कि वह आग्रह सफल कैसे बनाया जा सकता है। जब तक नेतागण हिन्दीकी परीक्षा देना अपनी शानके खिलाफ समझते हैं, तब तक दूसरोंको कुछ बहुत प्रोत्साहन नहीं मिलेगा;

१. संघके सदस्योंको, कार्य-समितिके समर्थनसे विधान-सभाके चुनावमें खड़े होनेके लिए; देखिए पृ० १२६-३० भी।

और जब तक सार्वजनिक संस्थाएँ अपना काम हिन्दीमें नहीं करेंगी अथवा, जहाँ अंग्रेजी भाषाका उपयोग आवश्यक हो जानेपर हिन्दीमें अनुवाद प्रस्तुत नहीं किया जायेगा, तब तक बड़े पैमानेपर हिन्दीका प्रचार हो ही नहीं सकता। यहाँ हिन्दीमें हिन्दुस्तानी भाषाका अन्तर्भाव तो है ही। संघकी दृष्टिमें दोनोंमें कोई भेद नहीं है।

सातवें प्रस्तावके द्वारा संघने राष्ट्रीय शिक्षाके बारेमें अपनी उत्कण्ठा दिखाई है, किन्तु इस उत्कण्ठाको शान्त करनेका भार विद्यापीठोंके ऊपर डाला गया है, और यह उचित ही है।

आठवें प्रस्तावमें, संघकी दृष्टिमें अस्पृश्यता-निवारणका जो अर्थ है, उसे स्पष्ट किया गया है। हरिजन सेवक संघने करोड़ों व्यक्तियोंके लिए अस्पृश्यता-निवारणकी जो सीमाएँ स्वीकार कर ली हैं, उन सीमाओंसे संघके सदस्य जो सत्य और अहिंसाको मेरी दृष्टिसे देखते हैं, किसी प्रकार सन्तुष्ट नहीं रह सकते। जब तक जातिके आधार पर रोटी-बेटीके व्यवहारपर प्रतिबन्ध रहेगा, तब तक अस्पृश्यता कुछ अंशोंमें तो बची ही रहेगी। संघके सदस्योंके लिए इसका त्याग आवश्यक है। सच्चे मनसे हरिजनोंकी सेवा करनेवाला व्यक्ति अपने सम्बन्धमें ऐसे प्रतिबन्धोंको मान्यता दे ही नहीं सकता।

नवें प्रस्तावका यद्यपि कांग्रेसके रचनात्मक कार्यके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है, तथापि हिन्दुस्तानकी आर्थिक स्थितिके साथ उसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। गो-धनकी रक्षाके सम्बन्धमें हिन्दुस्तान उदासीन रहता है; इससे करोड़ोंका नुकसान होता है। एक ओर गाय और भैंसके बीच, और दूसरी ओर मनुष्य और गाय-भैंसके बीच — इस प्रकार दुहरा संघर्ष चल रहा है। यदि ये संघर्ष इसी प्रकार चलते रहें, तो तीनोंका नाश हो जायेगा; क्योंकि यदि गाय गई, तो भैंसको जाना ही पड़ेगा, और मनुष्यको भी जाना ही पड़ेगा। यदि गाय जीती रही, तो मनुष्य जियेगा, लेकिन भैंसको या तो पहलेके समान जंगली हो जाना है, या फिर उसे कम संख्यामें किसी तरह जीवन चलाना है। इस अल्प-मृत्युसे बचनेके लिए जो सरल, सीधा और परिणाममें सस्ता मार्ग है, वह संघने बताया है; और वह यह है कि आग्रहपूर्वक सदा गायके, और केवल गायके ही दूध आदिका यथासम्भव उपयोग किया जाये। और यदि यथाशक्ति प्रयत्न किया जाये तो इस बातकी सम्भावना नहीं है कि इसे सफल बनानेके लिए बहुत कष्ट उठाना पड़ेगा। गो-शास्त्रके अध्ययनकी जो सिफारिश की गई है, वह शोधके सम्बन्धमें ऊपरके प्रस्तावमें कही गई बातोंकी यथार्थता सिद्ध करने, तथा गो-सेवा प्रचारककी सहायता करनेके लिए की गई है।[1]

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ९-५-१९३७

१. देखिए पृ० १४५-६ भी।

१७१. सन्देश : सर्वधर्म छात्र-सम्मेलनको[1]

वर्धा
९ मई, १९३७

आगामी सर्वधर्म छात्र-सम्मेलनमें मैं यह कहना चाहूँगा कि एकत्रित छात्रोंको अपना विचार-विमर्श आरम्भ करनेसे पहले यह समझ लेना चाहिए कि वे एक ही मचपर मिल रहे हैं, और जिन धर्मोंका वे प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, उन सबको वहाँ एक-सा सम्मान मिलना चाहिए। यदि वे मनमें कुछ दबाये रखकर पूरी तरहसे बिना खुले अपना कार्य करेंगे तो कोई दृढ बन्धु-भाव स्थापित नहीं होगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १७-५-१९३७

१७२. पत्र : हरिभाऊ उपाध्यायको

सेगाँव
९ मई, १९३७

भाई हरिभाऊ,

तुम्हारा पत्र पढ गया हूँ। तुम परसों रातको चलकर गये, यह मुझे बहुत अच्छा तो लगा ही; लेकिन मुझे डर भी लगा कि तुम कुछ ज्यादा ही थक जाओगे। अपनी शक्तिके बाहर शारीरिक अथवा मानसिक परिश्रम मत करो।

समर्थ व्यक्ति बहुधा न करने योग्य काम करके भी बेदाग छूट जाते हैं। इस सम्बन्धमें यदि हम उनकी आलोचना करने लगें, तो किसीको भी हमारी बात जँचेगी नहीं। इसीलिए तुलसीदासजी-जैसे व्यक्तिने भी लिखा है. 'समरथको नहिं दोष गुसाईं'। इस लौकिक उक्तिमें जीवनका तथ्य ठीक-ठीक निहित है। लेकिन बड़े चाहे जो करें, उनसे हमें क्या लेना-देना ; जो लोग अपने दोषोंपर पर्दा डालनेके लिए बड़ोंके दुष्कर्मोंकी ओट लेते हैं, उन्हें हम क्या उत्तर दे सकते हैं?

मैं तुम्हारा लेख[2] पढ गया। बहुत गहरे उतरकर विचार करनेका समय नहीं निकाल पाया। एक जगह सुधार किया है, वह देख लेना। वह परिवर्तन अपने-आपमें स्पष्ट है।

१. यह सम्मेलन बम्बईमें १५ मई को हुआ था जिसमें उक्त सन्देशको अधिवेशनके सभापतिने पढ़कर सुनाया था।
२. देखिए "विवाहकी मर्यादा", १५-५-१९३७।

मैं साढ़े सात बजेके आसपास वर्धा पहुँचनेकी आशा करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ६०८६) से; सौजन्य: हरिभाऊ उपाध्याय

१७३. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

भुसावल
१० मई, १९३७

चि० मुन्नालाल,

सेगाँवमें सब एकदिल नहीं है, यह बात मुझे बहुत खटकती है। लीलावतीमें दोष बहुत है, इसी प्रकार गुण भी बहुत हैं। अब वह तुम्हारा मन जीते, या तुम्हें उसका मन जीतना चाहिए। इसपर विचार करना।

अपना काम व्यवस्थित कर लेना। मलाई निकले हुए दूधके लिए ग्राहक खोजना। इस कामको अपने क्षेत्रमें गिनना।

मैंने चिरंजीलालके साथ सब बातें कर ली हैं। उस समय जमनालालजी भी साथ बैठे हुए थे। मन्त्री भी थे, नये दीवानजी तथा श्री जावलेकर भी। मुझे खबर देते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५८७) से। सी० डब्ल्यू० ७००९ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

१७४. पत्र : विजया एन० पटेलको

१० मई, १९३७

चि० विजया,

तुझे साथ नहीं लाया, इसका दुःख तो हुआ ही; फिर भी मुझे विश्वास है कि न आनेमें ही तेरी भलाई थी।

लीलावतीके बारेमें तूने कुछ उतावलीमें राय बना ली है। उसमें अहंकार है, क्रोध है, किन्तु द्वेष बिलकुल नहीं है। फिर तुझे तो सभीसे कुछ सीखना है। सबके गुण देखने चाहिए, दोष नहीं। यह दोहा याद कर ले:

जड़ चेतन गुन दोषमय, बिस्व कीन्ह करतार।
सन्त हंस गुन गहहिं पय, परिहरि बारि बिकार।।[1]

१. रामचरितमानस, बालकाण्ड।

इसका अर्थ समझमें न आये, तो अण्णासे समझ लेना। मूक भावसे सबकी सेवा करनेका मंत्र साध लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०६५) से। सी० डब्ल्यू० ४५५७ से भी, सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

१७५. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

१० मई, १९३७

चि० अमृतलाल,

मैंने अण्णासे मीराबहनके कताई वगैरहके कामकी देखभाल करनेके लिए कहा है। अभी उसे अभ्यास नहीं है, इसलिए जितना बताना सम्भव हो, बताना। लेकिन अपनी शक्तिसे अधिक काम मत करना।

गायोंकी सेवाके लिए सब लोग आधा घंटा निकालें। तकलीके माध्यमसे बालकोंकी बुद्धिका विकास सम्भव बनाना। उन्हें तकली घुमानेका नया ढंग ही सिखाना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

कमलादेवीकी देखभाल करना। अण्णा बहुत पुराने आश्रमवासी हैं। उनका पूर्ण विश्वास करना। उन्होंने गम्भीर भूल की है, लेकिन मुझे आशा है, वे अपनी भूलसे सबक लेकर अपने भीतरसे सारा कलुष निकाल डालेंगे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७२९) से।

१७६. पत्र : बलवन्तसिंहको

१० मई, १९३७

चि० बलवन्तसिंह,

तुमारे साथ ठीक बातें हुई। तुमारे समाज के साथ रहनेका इल्म सीख लेना है। लीलावती और दूसरे सबके गुणोंको देखो। दोषोंको भूल जाओ। गायोके बारेमें सेवायज्ञका आरंभ किया होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८९९)से।

१७७. पत्र : नारणदास गांधीको

बारडोली
१० मई, १९३७

चि० नारणदास,

मीराबहनके लिए हर तीसरे अथवा छठे महीने जो पैसा आता था, क्या वह अभी तक आता है? यदि आ रहा है, तो कितना आता है? सब मिलाकर कुल कितना आया होगा?

कमलाबाई के सम्बन्धमें मेरा पत्र मिला होगा। अकोलासे मनु मेरे साथ हो गई है, इसलिए हमारा काफिला काफी बड़ा हो गया है। अभी भी एक-दो आदमियोंके और बढ़नेकी सम्भावना है। कन्हैया तो साथ है ही, और उसका दिलरुबा भी है। मनु अपना सितार लाई है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

हम लोग १२ को तीथल पहुँचेंगे। जवाब वहीं भेजना।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८५२० से भी, सौजन्य : नारणदास गांधी

१७८. पत्र : अन्नपूर्णाको

१० मई, १९३७

अपनी जो आकांक्षाएँ तूने मुझे आज सुनाई हैं, वे सभी सफल हों और तू शुद्ध सेविका बने।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४२३) से।

१७९. बातचीत : कार्यकर्ताओंके साथ[1]

बारडोली
[११ मई, १९३७][2]

कांग्रेसी कार्यकर्ता : आप कहते थे कि स्थान स्टेशनसे ७ मीलसे ज्यादा दूर नहीं होना चाहिए, परन्तु वह स्थान तो स्टेशनसे ११ मील है। सिदला दो फर्लांग दूर है और अफवा केवल दो मील।

गांधीजी : यदि मैंने सात मील कहा तो मेरा मतलब ७० मीलसे था। जो भी हो, हमारा उद्देश्य वही होना चाहिए। आखिर तो हमें उन्हीं गाँवोंमें पहुँचना है जो आज दुर्गम समझे जाते हैं। और फिर जो हजारों लोग आनेवाले हैं, उनके लिए अधिक मात्रामें पानी तथा इतनी ज्यादा खुली जगह अन्यत्र कहाँ मिल सकती है? खुली जगह उन असंख्य गायोंके लिए भी चाहिए जो उनके लिए रखनी जरूरी होगी। और फिर 'हरिपुरा' कितना सुन्दर नाम है! हरि अर्थात् ईश्वर।

१. कुछ कांग्रेसी कार्यकर्ता जो हरिपुराको कांग्रेस-अधिवेशनके लिए ठीक नहीं समझते थे, गांधीजीसे स्वराज्य-आश्रममें मिले। यह अंश महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से लिया गया है। महादेवने लिखा था : "कामके साथ थोड़ा आराम करनेके लिए इस समुद्र तटवर्ती स्थान तीथलमें आनेके पहले हम लोगोंने दो दिन बारडोलीमें बिताये। जबसे हम लोगोंने कांग्रेस-अधिवेशन गाँवोंमें करनेका निश्चय किया है, तबसे कांग्रेस-अधिवेशनके स्थानका चयन संगठनकर्ताओंके लिए एक अतिरिक्त समस्या बन गई है. . . बारडोली ताल्लुकामें कई ऐसे गाँव हैं जिन्होंने हाल ही में अपने त्याग और कष्टसहनके द्वारा प्रसिद्धि पा ली है।... किन्तु गांधीजीने संगठनकर्ताओंको यह बता दिया कि हम केवल उसी बातको ध्यानमें रखकर स्थानके बारेमें निर्णय नहीं ले सकते। चुना गया स्थान गाँवोंके बीच होना चाहिए तथा प्राकृतिक सुविधाओंसे युक्त होना चाहिए। ... इसलिए हरिपुराने, जो ताप्ती नदीके किनारे सुन्दरतासे बसा हुआ है, जिसमें काफी जमीन ठीक नदीके तटसे लगी हुई फैली है, गांधीजीके हृदयको मोहित कर लिया।"

२. हिन्दू, १३-५-१९३७ और १९-५-१९३७ से।

मोटरगाड़ियोंपर तथा बसोंपर चीजोंको लादकर दस मील ले जाना, यह बेहद खर्चीला काम होगा। यह स्थान ताल्लुकाके बिलकुल बीचमें भी नहीं है, जैसे कि दूसरे स्थान हैं, और ताल्लुकाके एक सिरेसे दूसरे सिरे तक जानेमें देहाती लोगोंको बहुत कठिनाई होगी।

इन दूरियोंसे हमें घबराना क्यों चाहिए और हमारे पास मोटरगाड़ियाँ क्यों होनी चाहिए? इस ताल्लुकेमें बैलगाड़ियोंकी कोई कमी नहीं है।

यदि हम अफवामें कांग्रेस-अधिवेशन रखते हैं तो हम थोड़ेसे खर्चेमें बारडोलीसे पानी प्राप्त कर सकते हैं। ओटाई करनेवाली कम्पनियाँ भी अपने इंजिनोंसे बिजली लगानेके लिए सहायता करेंगी और इससे करीब-करीब १५,००० रु० बच जायेंगे।

इसका तात्पर्य यह हुआ कि हमें कांग्रेसका अधिवेशन हमेशा शहरों और कस्बोंके पास ही रखना चाहिए। क्यों न हम बिजलीके बगैर ही काम चलायें? और जहाँ सूरत और उसके पास-पड़ोसके गाँवोंसे लोग बारडोलीके पास स्थित अफवामें बड़ी संख्यामें जमा होंगे, पहाड़ी इलाकेमें रहनेवाले रानीपरजके लोगोंका क्या होगा जिन्हें हम कुछ हद तक कांग्रेससे परिचित कराना चाहते हैं?

जब तक मेरे तर्क आपके विवेक और अनुभवको ठीक नहीं जँचते तबतक आपको उनका कायल नहीं होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-५-१९३७

१८०. पत्र: प्रभावतीको

तीथल जाते हुए
१२ मई, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मुझे बारडोलीमें मिला। मैं तुझे दोष नहीं देता, लेकिन तेरे और मेरे दोनोंके नसीब टेढ़े ही कहे जायेंगे न? अन्यथा 'सर्चलाइट' के पतेपर तुझे भेजा पत्र कैसे भटक जाता? लेकिन इससे तू इतना तो सीख ही ले कि मैं तुझे पत्र लिखे बिना नहीं रहता। तेरा पत्र आया कि फौरन जवाब लिख डालता हूँ।[1]

तुझे इलाहाबाद बुलानेकी मेरी हिम्मत ही नहीं हुई।

सरदारकी मान्यता है कि जयप्रकाश आज अवश्य छूट जायेगा। उसने उर्दू सीखना शुरू किया है, यह तो बहुत अच्छा किया। उसकी श्रमशीलताके बारेमें तो कोई कुछ कह ही नहीं सकता।

पिताजीके बारेमें मैं समझता हूँ। उनका अब बुढ़ापा भी आ गया है। उन्हें कामसे बिलकुल छुट्टी दे देना। तेरा कहा वे मानेंगे।

१. देखिए "पत्र: प्रभावतीको", २-५-१९३७ भी।

तीथलमें ३१ तक ठहरना पड़ेगा। फिर सेगाँव जाऊँगा, और मेरी इच्छा तो कांग्रेसके अधिवेशन तक वहीं रहनेकी है।

मेरी खुराक, जो तूने देखी थी, वही है। वजन ११२ के आसपास है, जो ठीक ही माना जायेगा। तीथल बिलकुल समुद्रके किनारे पर है, इसलिए वहाँ ठंडक काफी रहेगी। हम आज लगभग ३ बजे वहाँ पहुँचेंगे। अभी हम नवसारीमें हैं। मणिलाल कोठारी बहुत बीमार हैं, उन्हें हम देखने आये हैं।

तीथलमें बा, कानो, मनु, महादेव, प्यारेलाल, मीराबहन, कन्हैया, राधाकिसन, मनहर (शंकरलालके भानजे), सरदार, मणिबहन, इस प्रकार हम सब होंगे। कुछ और लोग भी आयेंगे।

तेरे बारेमें मैं समझता हूँ। मैं समझता हूँ कि तू जब छुट्टी पायेगी, तभी मृदुला[1] के पास जायेगी। वहाँ जाते हुए शायद मेरे पास आयेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५००) से।

१८१. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

तीथल (वलसाड)
१२ मई, १९३७

मुझे आश्चर्य है कि मेरे कथनका[2] गलत अर्थ लगाया जा रहा है। मैं अभी भी यह मानता हूँ कि लॉर्ड जेटलैंडके वक्तव्यमें मीठे-मीठे शब्द भले ही प्रयुक्त हुए हों, परन्तु वह गतिरोध दूर नहीं करता। गतिरोध दूर न करनेसे मेरा मतलब यह है कि कांग्रेसकी इस सुस्पष्ट माँगका उस वक्तव्यमें कोई निश्चित जवाब नहीं है कि गवर्नरोंको जब भी किसी ऐसी आपत्कालीन स्थितिके उपस्थित होनेकी आशंका होगी जिसमें यह अपेक्षा करनेके बजाय कि मन्त्रिमण्डल त्यागपत्र देगा या गवर्नरोंकी इच्छाओंके आगे झुक जायेगा, वे मन्त्रिमण्डलको पदच्युत कर दें तो ऐसी स्थितिमें हस्तक्षेप करनेके अपने इस अधिकारका प्रयोग गवर्नर किस प्रकार करेंगे। मेरा विचार है कि यह दोनों ही पक्षोंके लिए संवैधानिक और समान रूपसे सम्मानजनक है। गवर्नर लोग अपने मन्त्रियोंको समझायेंगे। वे जो-कुछ कहेंगे, उसे नम्रतापूर्वक सुननेके लिए मन्त्रिगण बाध्य होंगे। लेकिन यदि उनके तर्कसे मन्त्रिगण कायल नहीं हुए तो दोनों पक्षोंके लिए एकमात्र उचित रास्ता यही होगा कि गवर्नर ऐसे मन्त्रियोंको पदच्युत

१. मृदुला साराभाई।

२. "भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको," पृ० १८७ का जिक्र करते हुए हिन्दू के सम्पादकने गांधीजीको निम्न तार भेजा था : "आपके इस कथनका, कि 'परन्तु मेरा खयाल है कि इससे गतिरोध दूर करनेमें मदद नहीं मिलेगी' यहाँ सरकारी हलकोंमें गलत अर्थ लगाया जा रहा है। यह कहा जा रहा है कि अपने वक्तव्यमें लॉर्ड जेटलैंडने कांग्रेसकी माँगको उचित बताया है और यह एक महत्त्वपूर्ण बात है। परन्तु आप इसे स्वीकार नहीं कर रहे हैं। इस गलतफहमीको दूर करनेकी प्रार्थना करता हूँ।"

कर दें और विधानसभाको विघटित कर दें अथवा सवैधानिक रूपसे जो रास्ते उनके लिए खुले हो, उन्हें अपनायें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-५-१९३७

१८२. पत्र : विजया एन० पटेलको

तीथल, वलसाड
१२ मई, १९३७

चि० विजया,

मैं नारणभाई[1] से मिला। सरदार भी हाजिर थे। हमने खूब बातें की। उनका तुझ पर प्रेम अगाध है। मैंने मनुभाई[2] की बात की, तो रो पड़े। उन्होंने कहा, "जो उसे हमें खुश करके ही व्याह करना है, तो मनुभाईका नाम बारम्बार क्यो लेती है? हम तो इस विवाहसे कदापि प्रसन्न नही होगे। उसने कुँआरी रहनेका व्रत लिया है, उसका पालन करे। किन्तु यदि उसे विवाह करना ही है, तो हमारी जातिके दो-तीन अच्छे युवक हैं, उनमें से किसी एकको पसन्द करे।" यह उनके कहनेका सार है। मैंने उन्हें शान्त किया और बताया कि तेरा आग्रह नही है। तू यदि विवाह करेगी, तो मनुभाईसे ही करेगी; किन्तु यदि माता-पिता प्रसन्न होकर आशीर्वाद नही देंगे, तो कुँआरी रहनेको तैयार है। हाँ, किसी दूसरेसे विवाह करनेका आग्रह माता-पिता न करे, यह अवश्य तेरी इच्छा है, यह भी मैंने कहा। सरदारने भी मनुभाईके बारेमें कहा। आजकलकी लड़कियोको आजादी देनी चाहिए; पढ़ायें-लिखायें, और फिर हमारी जो इच्छा हो वही लड़की करे, ऐसी आशा रखना उचित नही है; यह सब कहा। लेकिन इस सबका कोई असर नारणभाईपर नही हुआ। मैंने उन्हे आश्वासन दिया है कि मैं तेरी शादी मनुभाईसे चुपचाप नही कर दूंगा।

अब मेरी सलाह यह है कि यदि तेरी इच्छा हो, तो तू यह पत्र मनुभाईको भेज दे। न भेजे तब भी अगर तुझे ठीक लगे, तो लिख दे कि विवाहमें देर तो है ही और अन्तमें शायद वह न भी हो। माता-पिताकी आँखें मुंदनेके बाद तो तू विवाह करेगी ही नही। और वे बहुत बरस जियें, ऐसी तुम दोनोको इच्छा करनी चाहिए। तेरे धीरजके कारण, अथवा तेरे शुद्ध आचरणसे, अथवा मनुभाईकी पवित्रतासे वे पिघल जायें, यह अलग बात है। किन्तु इसमें काल और तुम दोनोंके आचरणके अतिरिक्त दूसरा कोई कुछ कर सकता है, ऐसा मुझे नही लगता। यह ठीक है कि प्रसग आने पर मैं और भी अधिक कहनेके लिए तैयार रहूँगा। किन्तु उन्हें कष्ट पहुँचानेकी मेरी हिम्मत नही होगी। सरदार प्रयत्न करनेवाले हैं।

१. विजया एन० पटेलके पिता।
२. मनुभाई पंचोली, लोक-भारती, सनोसराके एक संस्थापक-सदस्य।

देखता हूँ, मनुभाई अधीर हो गये हैं। उन्हें धीरज धरना चाहिए।

मेरा पिछला पत्र[1] मिला होगा। लीलावतीसे मेल कर लिया होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

मेरा दो फलवाला चाकू, जो मेरे कलमदानमें था, उसमें नहीं दिखाई देता। अगर वहाँ रह गया हो, तो सँभालकर रखना। न मिले, तो समझना खो गया।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०६६) से। सी० डब्ल्यू० ४५५८ से भी, सौजन्य . विजयाबहन एम० पचोली

१८३. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

तीथल, वलसाड़
१२ मई, १९३७

चि० कान्ति,

तेरा पत्र आज ही मिला। हम लोग आज ही यहाँ पहुँचे। बाल आया है। कल उस ओर जायेगा।

तू खूब यात्रा कर रहा है, और अनुभव भी खूब प्राप्त कर रहा है। पोरबन्दरके पुराने घर ध्यानपूर्वक देखे? उनकी प्रत्येक कोठरीमें इतिहास है।

नवीन वहाँ है, यह मुझे बिलकुल मालूम नहीं था। तू मजेमें बंगलौरमें रह। मेरे लिए तो दोनों समान हैं। रामचन्द्रन[2]का संग-साथ मिलेगा, यह भी अच्छी बात है। अधिक अनुभव शायद बंगलौरमें ही प्राप्त होगा। देवदास लिखता है कि उसे तेरे बहुत संक्षिप्त पत्र मिलते हैं। ब्योरेवार लिखना। अपना कार्यक्रम भी बताना।

हरिलाल फिर असन्तुलित हो गया है। फिर उसने अखबारमें मनमाने विचारोंसे भरा पत्र लिखा है। जिन स्वामीजीके साथ था, उनका साथ अब उसने छोड़ दिया है। अब वह जो करे सो ठीक है। मैं तो भगवानके भरोसे हूँ। उसे जो करना हो, करे।

बा, कानो, मनु, कन्हैया, महादेव, प्यारेलाल, राधाकिसन यहाँ साथ हैं। (चमनलालजीकी) शारदा आयेगी। तू, जब तेरी इच्छा हो, आ सकता है। यहाँ जगह जितनी चाहिए उतनी है। बबू[3]के साथ तुझे अच्छा अनुभव प्राप्त हो रहा है। मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि उद्योग-धन्धे सीखते हुए बुद्धिका पूर्ण विकास किया जा सकता है। इस कथनमें साहित्यके ज्ञानका निषेध नहीं है, किन्तु बुद्धिका सच्चा विकास तो उद्योगोंके द्वारा ही सधता है। बादमें साहित्य आदि हस्तामलकवत् हो

१. देखिए पृ० १९८-९।
२. जी० रामचन्द्रन्।
३. निर्मला देसाई, महादेव देसाईकी चचेरी बहन।

जाते हैं, और अपना उचित स्थान प्राप्त कर लेते हैं। इस समय साहित्य केवल विलासकी वस्तु हो गया है, जिसके परिणामोंका अनुभव हम कर रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२१) से; सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

१८४. तार: नन्दलाल बोसको

वलसाड
१३ मई, १९३७

नन्दलाल बोस
शान्तिनिकेतन

कांग्रेसके अगले अधिवेशन-स्थलका निरीक्षण करने और योजना आदिके बारेमें सलाह देनेके लिए क्या आप जल्दी आ सकेंगे? आनेकी तारीख सूचित कीजिए। भुसावल होते हुए बारडोली आइए।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९८२५) से।

१८५. पत्र: अमृत कौरको

तीथल, वलसाड़
१३ मई, १९३७

प्रिय पगली,

क्रमश: ७ और ११ तारीखके लिखे तुम्हारे दोनों पत्र अभी-अभी पहुँचे हैं। हम कल तीन बजे अपराह्नमें यहाँ पहुँच गये।

चार दिनका अन्तर अधिक है या नहीं, यह अपनी-अपनी रायका विषय है। बारडोलीमें और यहाँ भी कल तुम्हारा पत्र मुझे नहीं मिला। किन्तु तुम हमेशा ही क्षम्य हो। मैं यह नहीं चाहता कि तुम अपने स्वास्थ्य या कामको नुकसान पहुँचाकर पत्र लिखो। मैं पत्र तभी चाहता हूँ जब तुम किसी बोझ या परेशानीके बिना लिख सको।

नगरपालिकाको लिखा हुआ तुम्हारा पत्र अच्छा है। यदि तत्काल कुछ राहत नहीं मिलती, तो तुम्हें नगरपालिकाका पर्दाफाश जरूर कर देना चाहिए। तुम श्रीमती लिनलिथगोको क्यों न लिख दो? उन्हें क्वार्टरोंका दौरा करनेके लिए बुलाओ।

जब तक तुम पूरी तरहसे स्वस्थ नही हो जाओगी, मैं तुम्हे योग्यताका प्रमाण-पत्र नही दूंगा। और तुम स्वस्थ हो सकती हो, यदि तुम निश्चिन्त होकर रहो और दूध, रसवाले फल तथा सलाद लेती रहो। अभी तुम कितना दूध ले रही हो?

मैं इस बातको सही नही समझता कि तुम मिलनेपर मुझे बतलानेके लिए कुछ बातें जमा रखती रहो। इसका परिणाम यह होता है कि या तो तुम उन्हें भूल जाती हो या फिर वे इतनी पुरानी हो जाती है कि बताने योग्य नही रहती, या फिर उन्हे बतानेके लिए समय ही नही बचता।

अगर कभी सर पर ओले पडने लगें तो तुम ऐसा क्यो नही कह सकती कि "ईश्वरकी करनी वही जाने।" ईश्वर नही तो और कौन जानेगा? जब मौसम ऐसा हो जिसे बहुत अच्छा कहा जाये, तभी ईश्वरको धन्यवाद क्यो दें; जब दु:खद तूफानी आंधी हो तब क्यों न दें? धन्यवाद कतई न देनेकी बात समझ सकता हूँ। किन्तु जब भी हमें आनन्द मिलता है, हम चाहे उसे स्पष्ट शब्दोमें व्यक्त करे या न करे, धन्यवाद देते ही है। प्रसन्न होना ही व्यवहार द्वारा धन्यवाद व्यक्त करना है।

अब भोजन आ गया है और मुझे पत्र समाप्त करना चाहिए।

सस्नेह,

जालिम

[पुनश्च .]

हिन्दीका पत्र बहुत अच्छा है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६०३) से, सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६४१२ से भी

१८६. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१३ मई, १९३७

प्रिय घनश्यामदासजी,

कोचीनके विषयमें आपके पत्र[1] का जवाब अभी देना है। हम मामलेको हलके ढंगसे नहीं ले सकते। बापूकी रायमें वह काफी गम्भीर है तथा उसके लिए काफी प्रचारकी भी जरूरत होगी। लेकिन यह तो साफ ही है कि हम शायद उसे आर्थिक मदद नहीं देंगे। जैसे असहाय बच्चोंका भरण-पोषण किया जाता है, ऐसी मदद अधिक दिन तक नहीं दी जा सकती। फिर भी बापूका खयाल है कि आप चाहें तो परमेश्वरन् पिल्लैको ब्योरेवार बजट पेश करनेके लिए कह सकते हैं। उसके बाद हम

१. ७ मईके अपने पत्रमें बिड़लाने महादेव देसाईको लिखा था: "परमेश्वरन् पिल्ल प्रचार-कार्य जारी रखनेके लिए आर्थिक मदद चाहते हैं। मुझे नहीं मालूम कि इसके बारेमें बापूके क्या विचार हैं, किन्तु मैं खुद कोचीन-आन्दोलनको अनावश्यक महत्व नहीं देना चाहूँगा। कदाचित् उससे उद्देश्यको कोई लाभ नहीं पहुँचेगा।"

उसकी जाँच कर सकते है और बेहतर ढंगसे निर्णय लेनेकी स्थितिमें हो सकते हैं। हम २०को आपके यहाँ पहुँचनेकी आशा करते है।

हृदयसे आपका,
महादेव

अंग्रेजीसे: बिड़ला पेपर्स; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१८७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

तीथल, वलसाड़
१३ मई, १९३७

चि० प्रेमा,

आज ही तेरा पत्र मिला और आज ही जवाब दे रहा हूँ। तेरा पहलेका पत्र तो मेरे बस्तेमें ही रखा है। खैर, इसको तो निबटा दूँ। उसका भी जवाब हो जायेगा।

सुशीलासे कहना कि यहाँ तुम सब आते तो सभा जरूर जाते, परन्तु वहाँका एकान्त मैं कैसे देता? और फिर वहाँकी ठंडक; तेरा वहाँका वर्णन ठीक हो तो? यहाँ तो गरमी मालूम होती ही है।

नरीमन[1] के साथ अन्याय होनेकी बात मैं नही जानता। ऐसा कैसे हो सकता है कि जो बम्बईका नेता हो उसे सारे प्रान्तका नेता भी होना ही चाहिए? और तीन प्रान्तोके प्रतिनिधियोंको कौन बहका सकता है, कौन दबा सकता है? यदि अन्याय हुआ ही हो, तो वे सभी प्रतिनिधि जो आज भी जीवित हैं, वे कैसे बर्दाश्त करेंगे? इसलिए अन्यायकी बात मेरी तो समझमें ही नही आती। सरदारने क्या किया, यह भी मेरी समझसे बाहर है। सारा आन्दोलन मुझे तो कृत्रिम लगा है। लेकिन अगर मैं न समझता होऊँ तो तू मुझे समझा। मेरा नरीमनके प्रति कोई दुर्भाव नही है। उनके प्रति जो आरोप लगाये जाते है, उनका इस वस्तुके साथ कोई सम्बन्ध नही। इन आरोपोके सच-झूठके बारेमें तो नरीमन जब चाहें तब जाँच हो सकती है। नरीमन तेरे मित्र हैं, यह मैंने आज ही जाना। अपना मत तो मैंने केवल तटस्थ भावसे प्रकट किया है।

. . .[2] के बारेमें पढ़कर दुःख हुआ। मैंने, जो उन दोनोंने कहा, वही प्रकाशित किया है और वह भी उनकी इच्छासे। . . .[3] के मनमें सत्यासत्यका भेद नहीं है, ऐसा मुझे लगता है। तू यह पत्र उसे पढ़नेको दे सकती है।

१. के० एफ० नरीमन, बम्बई प्रान्त कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष। वह बम्बई विधान-सभाके नेता-पदके चुनावमें हार गये थे और उन्होंने आरोप लगाया था कि उनको हरानेमें सरदार वल्लभभाईका हाथ था। अन्तमें मामला एक समितिके सामने रखा गया था। उसने सरदार पर लगाये गये आरोपोंको निर्मूल पाया था।

२ और ३. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।

देवको मैंने पत्र लिखा था। उनका उत्तर भी आया है। मैंने तुरन्त ही नही लिखा था।

सासवड़का काम बन्द हो गया, यह अच्छा नही लगा। 'अनारम्भो हि कार्याणाम्' वाली बातको मैं मानता हूँ। अब कुछ हाथमें ले तो उसे पकड़े रहना।

मुझसे तुम चारो जनोंने समय माँगा होता तो अच्छा होता। तेरी इस दलीलको मैं मानता हूँ कि सासवडकी परिस्थिति जाने बिना मैं क्या कह सकता था? तेरा यह कहना भी सही है कि गाँवोंके अनुभवोंका अभी मेरा आरम्भकाल ही है। इसलिए हम सब एक-से ही हैं। इतनेपर भी मेरे विचारमें थोडी मौलिकता है और इन सबके पीछे बल अहिंसाका है। इसलिए शायद तुम चारोको ही कुछ-न-कुछ जाननेको मिल जाता।

तू विचार करनेकी कला साध रही है, यह मुझे पसन्द है, क्योंकि हुदलीके तेरे भाषणमें[1] मुझे विचार-शून्यता मालूम हुई। वे विचार मुझे दिमागसे निकलनेवाले धुएँ-जैसे लगे। वे तेरे हृदयके उद्‌गार नहीं थे। मुझे तो समय निकालकर तुझसे उस विषयमें बातें करनी थीं और दो और दो चारकी तरह तेरे सामने उन विचारोकी शून्यता सिद्ध कर दिखानी थी। परन्तु तू जल्दी भाग गई, इसलिए वह अवसर ही नहीं आया। मुझे तेरी विचार-शून्यता सिद्ध कर दिखानेकी उतावली तो थी ही नही, इसलिए मैंने तुझे रोका नहीं। मुझे इतना विश्वास है कि तेरा यह दोष तू स्वय कभी देख लेगी। इसी बीच तेरे पत्रमें ही उसका स्वीकार देख रहा हूँ। हुदलीके विचारोंमें तुझे यह दोष दिखाई न दे, यह सम्भव है। लेकिन अगर सचमुच विचार करना सीख लेगी तो हुदलीके विचारोंकी न्यूनताएँ तू देखे बिना नहीं रहेगी।

इसलिए सिद्धान्तोंपर मेरी राय माँगना तूने स्थगित कर दिया, यह मुझे पसन्द है। और जब तक विचार करनेकी कला हाथ न लगे तब तक तू भाषण देना बन्द रखेगी, तो मुझे और भी अधिक अच्छा लगेगा। इससे तू विचार करनेकी कला जल्दी साध लेगी।

तुम सबको

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३८९) से। सी० डब्ल्यू० ६८२८ से भी; सौजन्य: प्रेमाबहन कंटक

१. देखिए पृ० ११०, पाद-टिप्पणी २।

१८८. पत्र : मोतीलाल रायको

तीथल, वलसाड़
१४ मई, १९३७

प्रिय मोती बाबू,

अरुणचन्द्र दत्त और उनकी सहयोगिनीको मेरा आशीर्वाद। मैं समझता हूँ कि इस कौमार्यका अभिप्राय है, मानसिक या शारीरिक, हर तरहके भोग-विलाससे परे रहना और वे अब नाममात्रके ही पति-पत्नी हैं तथा सेवा-कार्यमें सच्चे सहयोगी हैं।

आशा है, आप स्वस्थ हैं।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०४९) से।

१८९. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१४ मई, १९३७

प्रिय घनश्यामदासजी,

आपका १० तारीखका सुविस्तृत पत्र और उसके साथ संलग्न कागज मिला। वह पत्र और संलग्न कागज दोनोंको बापूने पढ़ा और कहा कि आपका यह सोचना गलत है — जैसाकि आप 'स्टैट्समैन' द्वारा कही गई बातसे सहमति रखते हुए सोचते जान पड़ते हैं[1] — कि अब वे एक अतिरिक्त माँग कर रहे हैं। कांग्रेसकी माँगमें जो अस्पष्टता थी उसे दूर करके उन्होंने सरकारका काम निश्चित रूपसे सरल कर दिया है। अब कोई यह नहीं कह सकता, जैसाकि लॉर्ड जेटलैंडने कहा,[2] कि यदि आश्वासन दे दिया गया तो उसकी व्याख्याको लेकर अन्तहीन वाद-विवाद उठेंगे तथा विश्वास-भंगके आरोप-प्रत्यारोप लगने लगेंगे। बापूने कांग्रेसकी माँगको सुस्पष्ट करते हुए अब केवल आश्वासन देनेको कहा है।[3] यदि आश्वासन सम्बन्धी यह माँग स्वीकार कर ली जाये तो [अधिनियमकी] व्याख्याको लेकर चलनेवाले अन्तहीन

१. १३ मईके अपने पत्रमें स्टेट्समैन में प्रकाशित अग्रलेखका उल्लेख करते हुए घनश्यामदास बिड़लाने लिखा था : "ऐसा लगता है कि लोगोंमें यह धारणा बनती जा रही है कि सीधी-सादी भाषामें बापूने जो-कुछ कहा है, उससे भिन्न उनका कोई गूढ़ अर्थ उनकी भाषामें छिपा हुआ है।"

२. इंग्लैंडकी लॉर्ड सभामें दिये गये अपने भाषणमें; देखिए परिशिष्ट ४।

३. देखिए "भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको", पृ० १८७ और "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको" पृ० २०३-४ भी।

विवाद और विश्वास-भंगके आरोपोंकी सम्भावना नहीं रह जायेगी। मुझे आश्चर्य है कि आप यह बात नहीं देख पा रहे हैं।

ऐसा जान पड़ता है कि मेरे मतलबके अलावा आपने मेरे वाक्यमें अनेक अर्थ पढ़े हैं।[1] मेरा मतलब यह था कि यदि लॉर्ड जेटलैंडका यह भाषण दो महीने पहले दिया गया होता तो इससे समझौता होनेमें बहुत मदद मिली होती। कहनेका तात्पर्य यह कि तब उस वक्तव्यसे बापू द्वारा माँगे गये आश्वासन तक पहुँचना बहुत आसान हो गया होता। भाषण जिस मैत्रीपूर्ण लहजेमें दिया गया, उसे बापूने सार्वजनिक रूपसे स्वीकार किया है, लेकिन उस भाषणमें लॉर्ड जेटलैंडके लिए यह कह सकनेकी काफी गुंजाइश है कि भारत सरकार अधिनियममें जो व्यवस्था है उन्होंने उससे अधिक कुछ नहीं कहा है। ब्रिटिश सरकारको इस वास्तविकताका सामना करनेके लिए तैयार हो जाना चाहिए कि इस देशमें जिस दलको प्रबल बहुमत प्राप्त है, वह एक नये संविधानकी माँग कर रहा है और वह दिया ही जाना चाहिए।

लॉर्ड लोथियनके पत्र[2] में नया कुछ नहीं है। उसी ढंगका एक कहीं ज्यादा लम्बा पत्र उन्होंने बापूको लिखा था।

शेष मिलनेपर।

हृदयसे आपका,
महादेव

अंग्रेजीसे : बिड़ला पेपर्स; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१९०. पत्र : लीलावती आसरको

१४ मई, १९३७

[चि० लीला][3] वती,

तू हठ करके चली। . . .[4] अण्णा लिखता है कि खूब अच्छी तरहसे . . .[5] इतना होते हुए भी तू मेरे साथ चली। . . .[6] यही हुआ। क्योंकि उससे तेरा हृदय . . .[7] हुआ होना चाहिए। मेरे पिछले पत्र पहुँचे होंगे।

१. १० मईके अपने पत्रमें घनश्यामदास बिड़लाने लिखा था: "लॉर्ड जेटलैंडके भाषणपर जब मैंने बापूकी भेंटवार्ता (देखिए पृ० १८७) पढ़ी तब मुझे ऐसा लगा कि या तो अब तक मैंने बापूको गलत समझा था अथवा हाल ही में उनका दृष्टिकोण कठोर हो गया है। . . . आप भी कहते हैं कि 'यदि उन्होंने अर्थात् लॉर्ड जेटलैंडने ठीक आरम्भमें ही यह कहा होता तो कोई भी गतिरोध पैदा नहीं हुआ होता।' इससे यह जान पड़ता है कि स्वयं भाषणमें कोई गलती नहीं है . . . बस उसे एक गलत अवसरपर दिया गया."

२. घनश्यामदास बिड़लाने महादेव देसाईको लिखे गये १० मईके अपने पत्रके साथ इस पत्रको संलग्न करके भेजा था।

३, ४, ५, ६ और ७. मूल पत्र कई जगहसे कटा-फटा है।

अण्णाको १३ रुपया देना। और कमलाबाईको — यदि वह राजकोट जानेको तैयार हो, तो — राजकोट तकका रेल किराया और दो रुपये देना। खाने-पीनेके लिए उसे जो चाहिए हो, बना देना। राजकोटका भाड़ा लगभग १३ रुपया होता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५८६) से। सी० डब्ल्यू० ६५५८ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१९१. रचनात्मक कार्यक्रम

कांग्रेस कार्य-समितिने इस बातकी आवश्यकतापर जोर दिया है कि विधान-सभाओंके सदस्य और अन्य कार्यकर्ता १९२० के रचनात्मक कार्यक्रमको भारतके तीन करोड़ गाँवों तक ले जायें, क्योंकि अब इन गाँवों और इन गाँवोंके प्रतिनिधियोंके बीच एक सीधा सम्पर्क स्थापित हो चुका है। बेशक ये प्रतिनिधि चाहें तो इन गाँवोंकी उपेक्षा कर सकते हैं अथवा उन्हें उनके आर्थिक बोझसे छोटी-मोटी या काफी ठोस राहत दिला सकते हैं। लेकिन जब तक वे इन गाँवोंके रहनेवालोंके अन्दर सार्वत्रिक हाथ-कताईके जरिये खादीका सार्वत्रिक उत्पादन और उपयोग, हिन्दू-मुसलमान अथवा कहें कि साम्प्रदायिक एकता, जो लोग शराबखोरीके आदी हैं उनके अन्दर प्रचार-कार्यके द्वारा पूर्ण शराबबन्दीका प्रसार और हिन्दुओं द्वारा अस्पृश्यताका समूल नाश, इस चार-सूत्री रचनात्मक कार्यक्रमके प्रति दिलचस्पी नहीं पैदा करेंगे तब तक वे उनके अन्दर आत्मविश्वास, आत्म-गौरव और अपनी स्थितिको निरन्तर सुधारते जानेकी क्षमता नहीं पैदा कर सकते।

१९२० और १९२१ में हजारों सभाओंमें यह घोषित किया गया था कि इन चार चीजोंके बिना अहिंसात्मक तरीकेसे स्वराज्य प्राप्त करना असम्भव है। मैं मानता हूँ कि यह बात आज भी उतनी ही सच है।

राज्य द्वारा करोंके नियमन-नियन्त्रणके जरिये सामान्य जनताकी आर्थिक दशाको सुधारना एक बात है, और उनके अन्दर यह भावना पैदा कर देना बिलकुल दूसरी बात है कि उन्होंने पूरी तरह अपनी ही कोशिशसे अपनी दशाको सुधारा है। यह ऐसी चीज है जो वे हाथ-कताई और अन्य ग्रामीण दस्तकारियोंके जरिये ही कर सकते हैं।

इसी प्रकार, साम्प्रदायिक आचरणको नेताओंके बीच समझौतोंके द्वारा — चाहे ये समझौते राज्य द्वारा थोपे गये हों अथवा स्वैच्छिक हों — नियन्त्रित और संचालित करना एक बात है, और यह बिलकुल दूसरी बात है कि सामान्य जनता एक-दूसरेकी धार्मिक तथा अन्य प्रकारकी प्रथाओंके प्रति आदर-भावना रखे। ऐसा तबतक नहीं हो सकता जब तक विधायक और कार्यकर्ता गाँववालोंके बीच जाकर उन्हें पारस्परिक सहिष्णुताकी शिक्षा नहीं देंगे।

फिर, कानूनके जरिये शराबबन्दीको ऊपरसे थोपना, जैसाकि हमें करना भी चाहिए, एक बात है, और यह बिलकुल दूसरी बात है कि लोग खुशीसे इस निषेधका

पालन करें। यह कहना कि एक खर्चीली और विस्तृत गुप्तचर-प्रणालीके बिना शरावबन्दीको सफलतापूर्वक लागू करना सम्भव नहीं है, पराजयवादी मनोभावनाका द्योतक है जिसका यथार्थसे कोई सम्बन्ध नहीं है। यह निश्चित है कि यदि कार्यकर्ता गाँववालोंके बीचमें जायें, और जहाँ कहीं शराबखोरीका प्रचलन है, वहाँ शराबखोरी की बुराईको दिखलायें-समझायें, यदि शोधकर्ता शराबखोरीकी लतके कारणोंका पता चलायें और यह जानकारी गाँववालोंको दें, तो शराबबन्दीके काममें न केवल बहुत कम पैसा खर्च होगा बल्कि वह लाभजनक भी सिद्ध होगा।

और आखिरी चीज है अस्पृश्यता, जिसके दुष्परिणामोंको हमें कानून बनाकर खत्म कर देना चाहिए। लेकिन जब तक लोग छुआछूतकी भावनाको अपने दिलसे नहीं निकाल देंगे, तब तक हमें वास्तविक स्वराज्य नहीं प्राप्त हो सकता। जब तक सामान्य जनता अपने दिलसे अस्पृश्यताको बिलकुल निकालकर नहीं फेंक देती, तब तक उसके लिए एक व्यक्तिकी तरह या एक मन होकर काम कर सकना सम्भव नहीं है।

इस प्रकार यह और अन्य तीनों मुद्दे सच्ची जन-शिक्षाके विषय हैं। और अब, जब कि 'सही या गलत' तीन करोड़ स्त्री-पुरुषोंके हाथोंमें सत्ता दे दी गई है इस प्रकारकी जन-शिक्षा अत्यन्त आवश्यक हो गई है। इन मतदाताओंका वोट पानेकी इच्छा रखनेवाले कांग्रेसियों और दूसरे लोगोंको अब यह अधिकार प्राप्त हो गया है, भले ही यह अधिकार कितना ही सीमित क्यों न हो, कि वे इन तीन करोड़ लोगोंको सही या गलत जिस प्रकारकी शिक्षा भी देना चाहें, दे सकते हैं। जिन मामलोंका गहरा सम्बन्ध इन लोगोंके हितोंसे है उन मामलोंमें इन लोगोंकी उपेक्षा करना गलत चीज होगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-५-१९३७

१९२. दोष किसका ?

हिन्दुओं द्वारा ईसाइयोंके साथ कथित दुर्व्यवहार किये जानेके बारेमें १७ अप्रैल, १९३७ के 'हरिजन' में प्रकाशित मेरी टिप्पणी[1] के सम्बन्धमें मुझे दो पत्र प्राप्त हुए हैं। एक पत्र केरल हरिजन सेवक संघके अध्यक्ष श्री सी० के० परमेश्वरन् पिल्लैका है और दूसरा नागरकोइलके डॉ० एम० ई० नायडूका है। श्री पिल्लै लिखते हैं:

> नये-नये ईसाई बने कुछ लोगोंके मामलेमें आबकारी-विभागके एक चपरासी द्वारा हस्तक्षेप करनेके विरुद्ध फादर पेट्रोने जो शिकायत की है उसके विषयमें मैंने आपका वक्तव्य 'हरिजन' में देखा। मद्राससे वापस लौटते ही मैंने इस पादरीको लिखा कि अपने पोस्टकार्डमें उसने जिन घटनाओंका जिक्र किया है उनकी विस्तृत सूचना वह मुझे दे। कोई उत्तर न मिलनेपर मैंने उसे कल फिर एक पत्र लिखा है। अगर वह मुझे पर्याप्त सूचना देता है तो मैं मामलेकी जाँच करके उसकी रिपोर्ट दूँगा।

१. देखिए पृ० १००-१।

डॉ० नायडूने एक लम्बा पत्र लिखा है जिसमें उन्होंने कुछ जवाबी शिकायतें भेजी हैं। उन्होंने पिछले दो वर्षोंमें ईसाइयों द्वारा फसाद करनेके १२ दृष्टान्त दिये हैं। ये दृष्टान्त उन शिकायतोंमें से लिये गये हैं जो केरल प्रान्तीय हरिजन सेवक संघके पास समय-समयपर आती रहती हैं। मैं उनके पत्रमें से निम्नलिखित उद्धरण यहाँ दे रहा हूँ।[1]

यह तो तय है कि फादर पेट्रोने जो आरोप लगाये हैं उन्हें जवाबी आरोप लगाकर गलत नहीं सिद्ध किया जा सकता। अतः मैं आशा करता हूँ कि वह श्री पिल्लैके पत्रका जवाब देंगे ताकि श्री पिल्लै उनके आरोपोंके सम्बन्धमें कार्रवाई कर सकें या उनका खण्डन कर सकें। हरिजन सेवक संघका कर्तव्य है कि वह हरिजनों तथा उन लोगोंके बीचमें सद्भाव पैदा करे जिनके साथ प्रतिदिन उनका [हरिजनोंका] सम्पर्क होता है। उसका यह भी कर्तव्य है कि वह हरिजनोंकी दूसरोंके दुर्व्यवहारसे रक्षा करे और साथ ही उन अन्य लोगोंकी रक्षा भी करे जिनको हरिजन लोग सताते या मारते-पीटते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-५-१९३७

१९३. विवाहकी मर्यादा

श्री हरिभाऊ उपाध्याय लिखते हैं:

> 'हरिजन-सेवक' के इसी अंकमें "धर्म संकट"[2] नामक आपका लेख पढ़ा। उसमें आपने लिखा है कि "उक्त प्रकारके (अर्थात् मामा-भांजीके सम्बन्ध-जैसे) सम्बन्धका प्रतिबन्ध सर्वमान्य नहीं है। . . . .ऐसे प्रतिबन्ध रूढ़ियोंसे बने हैं। यह देखनेमें नहीं आता कि ये प्रतिबन्ध किसी धार्मिक या तात्विक निर्णयसे बने हैं।"
>
> मेरा अनुमान यह है कि ये प्रतिबन्ध शायद सन्तानोत्पत्तिकी दृष्टिसे लगाये गये हैं। इस शास्त्रके ज्ञाता ऐसा मानते हैं कि विजातीय तत्वोंके मिश्रणसे सन्तति अच्छी होती है। इसलिए सगोत्र और सपिण्ड कन्याओंका पाणिग्रहण नहीं किया जाता।
>
> यदि माना जाये कि यह केवल रूढ़ि है, तो फिर सगी और चचेरी बहनोंके सम्बन्धपर भी कैसे आपत्ति उठाई जा सकती है? यदि विवाहका हेतु सन्तानोत्पत्ति ही है और सन्तानोत्पादनके ही लिए दम्पतिका संयोग करना योग्य है, तो फिर वर-कन्याके चुनावके औचित्यकी कसौटी सुप्रजननकी क्षमता ही होनी चाहिए। क्या और कसौटियाँ गौण समझी जायें? यदि हाँ, तो फिर

१. यहाँ नहीं दिये गये हैं।
२. देखिए पृ० १७०-१।

किस क्रमसे यह प्रश्न सहज उठता है? मेरी रायमें वह इस प्रकार होना चाहिए :

(१) पारस्परिक आकर्षण और प्रेम
(२) सुप्रजननकी क्षमता
(३) कौटुम्बिक और व्यावहारिक सुविधा
(४) समाज और देशकी सेवा
(५) आध्यात्मिक उन्नति

आपका इस सम्बन्धमें क्या मत है?

हिन्दूशास्त्रोंमें पुत्रोत्पत्तिपर जोर दिया गया है। सधवाओंको आशीर्वाद दिया जाता है, 'अष्टपुत्रा सौभाग्यवती भव'। आप जो यह प्रतिपादन करते हैं कि दम्पति सन्तानके लिए संयोग करें तो इसका क्या यही अर्थ है कि सिर्फ एक ही सन्तान उत्पन्न करें, फिर वह लड़का हो या लड़की? वंशवर्धन की इच्छाके साथ ही 'पुत्रसे नाम चलता है' यह इच्छा भी जुड़ी हुई मालूम होती है। केवल लड़कीसे इस इच्छाका समाधान कैसे हो सकता है? बल्कि अभी तक समाजमें 'लड़कीके जन्म' का उतना स्वागत नहीं होता, जितना कि लड़केके जन्मका होता है। इसलिए यदि इन इच्छाओंको सामाजिक माना जाये तो फिर एक लड़का और एक लड़की — इस तरह दो सन्तति पैदा करनेकी छूट देना क्या अनुचित होगा?

केवल सन्तानोत्पादनके लिए संयोग करनेवाले दम्पति ब्रह्मचारीवत् ही समझे जाने चाहिए — यह ठीक है। यह भी सही है कि संयत जीवनमें एक ही बारके संयोगसे गर्भ रह जाता है। पहली बात की पुष्टिमें एक कथा प्रचलित है —

वसिष्ठकी कुटियाके सामने एक नदी बहती थी। दूसरे किनारे विश्वामित्र तप करते थे। वसिष्ठ गृहस्थ थे। जब भोजन पक जाता तो पहले अरुन्धती थाल परोसकर विश्वामित्रको खिलाने जाती, बादको वसिष्ठके घरपर सब लोग भोजन करते। यह नित्यक्रम था। एक रोज बारिश हुई और नदीमें बाढ़ आ गई। अरुन्धती उस पार न जा सकी। उसने वसिष्ठसे इसका उपाय पूछा। उन्होंने कहा — 'जाओ, नदीसे कहना, मैं सदानिराहारी विश्वामित्रको भोजन देने जा रही हूँ, मुझे रास्ता दो।' अरुन्धतीने इसी प्रकार नदीसे कहा और उसने रास्ता दे दिया। तब अरुन्धतीके मनमें बड़ा आश्चर्य हुआ कि विश्वामित्र रोज तो खाना खाते हैं, फिर सदानिराहारी कैसे हुए? जब विश्वामित्र खाना खा चुके, तब अरुन्धतीने उनसे पूछा, 'मैं वापस कैसे जाऊँ, नदीमें तो बाढ़ है?' विश्वामित्रने उलटकर पूछा — 'तो आई कैसे?' अरुन्धतीने उत्तरमें वसिष्ठका पूर्वोक्त नुसखा बतलाया। तब विश्वामित्रने कहा — 'अच्छा, तुम

नदीसे कहना, सदाब्रह्मचारी वसिष्ठके यहाँ लौट रही हूँ, नदी, मुझे रास्ता दे दो।' अरुन्धतीने ऐसा ही किया और उसे रास्ता मिल गया। अब तो उसके अचरजका ठिकाना न रहा। वसिष्ठके सौ पुत्रोंकी तो वह स्वयं ही माता थी। उसने वसिष्ठसे इसका रहस्य पूछा कि विश्वामित्रको सदानिराहारी और आपको सदाब्रह्मचारी कैसे मानूँ? वसिष्ठने बताया — "जो केवल शरीर-रक्षणके लिए ही ईश्वरार्पण बुद्धिसे भोजन करता है वह नित्य भोजन करते हुए भी निराहारी ही है, और जो केवल स्वधर्म-पालनके लिए अनासक्तिपूर्वक सन्तानोत्पादन करता है, वह संयोग करते हुए भी ब्रह्मचारी ही है।"

परन्तु इसमें और मेरी समझमें तो शायद हिन्दू शास्त्रमें भी केवल एक सन्तति — फिर वह कन्या हो या पुत्र — का विधान नहीं है। अतएव यदि आपको एक पुत्र और एक पुत्रीका नियम मान्य हो, तो मैं समझता हूँ, बहुतेरे दम्पतियोंको समाधान हो जाना चाहिए। अन्यथा मुझे तो ऐसा लगता है कि बिना विवाह किये एक बार ब्रह्मचारी रह जाना शक्य हो सकता है, परन्तु विवाह करने पर केवल सन्तानोत्पादनके लिए, और फिर भी प्रथम सन्ततिके ही लिए संयोग करके फिर आजन्म संयमसे रहना उससे कहीं कठिन है। मेरा तो ऐसा मत बनता जा रहा है कि 'काम' मनुष्यमें स्वाभाविक प्रेरणा है। उसमें संयम सुसंस्कारका सूचक है। 'सन्ततिके लिए संयोग' का नियम बना देनेसे सुसंस्कार, संयम या धर्मकी तरफ मनुष्यकी गति होती है, इसलिए यह वांछनीय है। सन्तानोत्पत्तिके ही लिए संयोग करनेवाले संयमीका आदर करूँगा, कामेच्छाकी तृप्ति करनेवालेको भोगी कहूँगा, पर उसे पतित नहीं मानना चाहता, न ऐसा वातावरण ही पैदा करना ठीक होगा कि पतित समझकर लोग उसका तिरस्कार करें। इस विचारमें मेरी कहीं गलती होती हो, तो बतायें।

विवाहमें जो मर्यादा बाँधी गई है, उसका शास्त्रीय कारण मैं नहीं जानता। रूढ़िको ही, जो मर्यादाकी वृद्धिके लिए बनाई जाती है, नैतिक कारण माननेमें कोई आपत्ति नहीं है। सन्तान-हितकी दृष्टिसे ही अगर भाई-बहनके सम्बन्धका प्रतिबन्ध योग्य है, तो चचेरी बहिन इत्यादिपर भी प्रतिबन्ध होना चाहिए। लेकिन भाई-बहनके सम्बन्ध-या ऐसे सम्बन्धके अतिरिक्त कोई प्रतिबन्ध धर्म नहीं माना जाता। इसलिए रूढ़िका जो प्रतिबन्ध जिस समाजमें हो, उसका अनुसरण उचित मालूम देता है। नैतिक विवाहके लिए जो पाँच मर्यादाएँ हरिभाऊजी ने रखी हैं, उनका क्रम बदलना चाहिए। पारस्परिक आकर्षण और प्रेमको अन्तिम स्थान देना चाहिए। अगर उसे प्रथम स्थान दिया जाये, तो दूसरी सब शर्तें उसके आश्रयमें जानेसे निरर्थक बन सकती हैं। इसलिए उक्त क्रममें आध्यात्मिक उन्नतिको प्रथम स्थान देना चाहिए। समाज और देश-सेवाको दूसरा स्थान दिया जाये। कौटुम्बिक और व्यावहारिक सुविधाको तीसरा। पारस्परिक आकर्षण और प्रेमको चौथा। इसका अर्थ यह हुआ कि जिस जगह इन प्रथम तीन शर्तोंका अभाव हो, वहाँ पारस्परिक प्रेमको स्थान

नहीं मिल सकता। अगर प्रेमको प्रथम स्थान दिया जाये, तो वह सर्वोपरि बनकर दूसरोंकी अवगणना कर सकता है और करता है, ऐसा आजकलके व्यवहारमें देखनेमें आता है। प्राचीन और अर्वाचीन नवलकथाओंमें भी यह पाया जाता है। इसलिए यह कहना होगा कि उपर्युक्त तीन शर्तोंका पालन होते हुए भी जहाँ पारस्परिक आकर्षण नहीं है वहाँ विवाह त्याज्य है। सुप्रजननकी क्षमताको शर्त न माना जाये। क्योंकि यही एक वस्तु विवाहका कारण है, विवाहकी शर्त नहीं।

हिन्दूशास्त्रमें पुत्रोत्पत्तिपर अवश्य जोर दिया गया है। यह उस कालके लिए ठीक था, जब समाजमें शस्त्रयुद्धको अनिवार्य स्थान मिला हुआ था, और पुरुषवर्गकी बड़ी आवश्यकता थी। उसी कारणसे एकसे अधिक पत्नियोंकी भी इजाजत थी और अधिक पुत्रोंसे अधिक बल माना जाता था। धार्मिक दृष्टिसे देखें, तो एक ही सन्तति 'धर्मज' या 'धर्मजा' है। मैं पुत्र और पुत्रीके बीच भेद नहीं करता हूँ, दोनों एक समान स्वागतके योग्य हैं।

वसिष्ठ-विश्वामित्रका दृष्टान्त सार रूपमें अच्छा है। उसे शब्दशः सत्य अथवा शक्य माननेकी आवश्यकता नहीं। उससे इतना ही सार निकालना काफी है कि सन्तानोत्पत्तिके ही अर्थ किया हुआ संयोग ब्रह्मचर्यका विरोधी नहीं है। कामाग्निकी तृप्तिके कारण किया हुआ संयोग त्याज्य है। उसे निन्द्य माननेकी आवश्यकता नहीं। असंख्य स्त्री-पुरुषोंका मिलन भोगके ही कारण होता है, और होता रहेगा। उससे जो दुष्परिणाम होते रहते हैं, उन्हें भोगना पड़ेगा। जो मनुष्य अपने जीवनको धार्मिक बनाना चाहता है, जो जीव-मात्रकी सेवाको आदर्श समझकर संसार-यात्रा समाप्त करना चाहता है, उसके लिए ही ब्रह्मचर्यादि मर्यादाका विचार किया जा सकता है। और ऐसी मर्यादा आवश्यक भी है।

हरिजन-सेवक, १५-५-१९३७

१९४. पत्र : अमृत कौरको

तीथल, बलसाड़
१५ मई, १९३७

प्रिय बागी,

तुम्हारी पुर्जी तथा कतरन मिली। जब तुम थकी हुई हो तो जरूर अपना हिन्दी या संस्कृतका पाठ छोड़ दोगी। ये चीजें कभी भी तुम्हारे लिए भार नहीं बननी चाहिए। वे तुम्हारे मनोरंजनकी चीजें होनी चाहिए। मनोरंजनात्मक कार्यके रूपमें उन्हें करनेसे तुम उन भाषाओंपर बेहतर ढंगसे अधिकार पा सकती हो तथा मानसिक और शारीरिक प्रगति भी कर सकती हो। तुम्हें रोजकी सैर किसी भी कारणसे बन्द नहीं करनी चाहिए।

जो तुमने कतरन भेजी है, असाधारण है। लेखकको मेरी हानिकी ज्यादा फिक्र है बजाय उन हरिजनोंकी हानिके, जो उनके ईसाई बननेसे हो रही है।

सरदारने मेरे लिए पूर्ण शान्तिकी व्यवस्था कर रखी है। मिलनेवालोंको वे मेरे पास नहीं आने देते। इससे मुझे पत्र-व्यवहार काफी नियमित रूपसे करनेका समय मिल जाता है।

सस्नेह,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६०४) से; सौजन्य . अमृत-कौर। जी० एन० ६४१३ से भी

१९५. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

१५ मई, १९३७

चि० अम्बुजम,

तुमने मुझे एक विस्तृत पत्र लिखा है जिसमें सिर्फ कामकी बातें ही हैं। लक्ष्मण राव जैसे आया वैसे ही गया। जैसा तुमने लिखा था, बिलकुल वह वैसा ही है। वह काफी विनीत था।

कमलाके एक मरा हुआ पुत्र पैदा हुआ। उसे मेरे कहनेपर कानपुरके एक जच्चा अस्पतालमें रखा गया था। अब उसे राजकोट भेजा जायेगा जहाँ आश्रमके प्रबन्धक नारणदास उसे अपनी देख-रेखमें रखेंगे। उसने आदर्श आचरणके बड़े-बड़े वादे किये हैं। हरिहर शर्मा सेगाँवमें होंगे। तुम और श्रीमती रंगाचारी उसका खर्च उठाने में कुछ मदद करना चाहो तो अलग बात है, वर्ना मुझे अभी तुम्हारी मददकी कोई जरूरत नहीं है। यदि वह योग्य साबित हुई तो अपनी जीविका स्वयं अर्जित कर सकेगी। इस बीच उसका खर्च उठानेमें कोई कठिनाई नहीं है। इसलिए मुझे कोई चीज भेजनेके लिए तुम्हें तकलीफ उठानेकी जरूरत नहीं है।

'रामायण' का तुम्हारा अनुवाद जब भी प्रकाशित हो, उसे प्रथम कोटिका और निर्दोष होना चाहिए। तुम्हारी कलमसे मैं कोई घटिया चीज नहीं चाहता।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१९६. पत्र : नन्दलाल बोसको

१५ मई, १९३७

प्रिय नन्द बाबू,

आपके स्वास्थ्यमें कोई गड़बड़ी नहीं होनी चाहिए। आपको उसकी सुविधा कहाँ है? इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप जल्दी ही स्वस्थ हो जायेंगे। यद्यपि ऐसा हो सकता है कि आपकी उपस्थिति बहुत ही जरूरी हो[1], फिर भी मैं आपके स्वास्थ्यको किसी जोखिममें नहीं डालूँगा। लेकिन आपका मन्तव्य मैं समझता हूँ। जैसे ही स्थान अन्तिम रूपसे निश्चित कर लिया जायेगा त्योंही, आशा है कि मैं उस जमीनका आकृतिमूलक ब्योरा तथा योजनाकी रूपरेखा भेजूँगा। सरदार पटेल, म्हात्रे[2] और रामदासको, जिन्हें आप जानते हैं, स्थानका चुनाव करने और स्थान निरूपणकी रूपरेखा तैयार करनेके लिए आमन्त्रित कर रहे हैं।

इस महीनेकी ३० तारीख तक मैं तीथलमें हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९८२६) से।

१९७. पत्र : विजया एन० पटेलको

तीथल
१५ मई, १९३७

चि० विजया,

तेरा पत्र मिला। लीलावतीमें अहंकार तो है ही, किन्तु द्वेष बिलकुल नहीं है। जिसमें जहर होता है, वह डंक मारता है। लीलावतीके मनमें जो बात आती है, वह उसे उसी समय बक डालती है, लेकिन बादमें उसके मनमें कुछ नहीं रहता। जिसके मनमें जहर होता है, वह दूसरेका भला नहीं देख सकता, और मौका आनेपर उसका नुकसान करनेमें नहीं हिचकिचाता। लीलावतीको मैंने ऐसा करते कभी नहीं देखा। कटाक्षपूर्वक कुछ कह सुनाना द्वेषकी निशानी नहीं है। कुछ लोगोंमें यह तो बोलनेकी आदत होती है। वह बहुत कम लोगोंको सम्मानकी दृष्टिसे देखती है, यह सच है।

१. देखिए "तार : नन्दलाल बोसको", १३-५-१९३७ भी।
२. बाबूराव डी० म्हात्रे, बम्बईके आर्किटेक्ट।

लेकिन यह तो अहंकारकी ही निशानी हुई। जिसे दूसरोंके साथ मिलकर रहनेकी तीव्र इच्छा हो, उसे मौन धारण करना चाहिए, और जितनी बने उतनी सेवा कर लेनी चाहिए। तुझमें विचार करनेकी शक्ति कम है, इसलिए तू तुलना भी कम ही कर सकती है। अतः स्पष्टतापूर्वक विचार करनेके लिए तुझे स्पष्ट लिखनेकी आदत डालनी चाहिए, और जो अच्छी लगे, ऐसी किसी गम्भीर पुस्तकका अध्ययन करना चाहिए। ऐसी पुस्तक 'रामायण' है, 'गीता' है। तू स्वभावसे अत्यन्त सरल है, तथा नैतिकतामें दृढ़ है, इसलिए सबपर तेरी छाप अच्छी पड़ती है। तेरा भला ही होगा।

तुम लोगोंको वहाँ लू लगती है, यहाँ हम लोगोंके सामने ही समुद्र है, इसलिए हमें मंद-मंद शीतल वायु मिलती रहती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०६७) से। सी० डब्ल्यू० ४५५९ से भी; सौजन्य: विजयाबहन एम० पंचोली

१९८. पत्र: मुन्नालाल जी० शाहको

१५ मई, १९३७

चि० मुन्नालाल,

तुमने लम्बा पत्र लिखा, यह बहुत अच्छा किया। तुम और लीलावती, दोनों परस्पर एक-दूसरेके अनुकूल बने रहो, बस यही मेरे लिए काफी होगा। उस रोज सबने अपना-अपना गुबार निकाल लिया, यह अच्छा ही हुआ।

मीराबहनके बारेमें जो लिखा है, वह मैं समझ गया। अगर उसमें दोष न हो, तो वह तो योगिनी हो जाये। हमें तो सबमें गुण ही देखना चाहिए। दोष किसमें नही होते? इसलिए उनका तो विचार ही नहीं करना चाहिए। मनुष्यके दोष देखने बैठें, तो हम पागल हो जायें और संसारमें अकेले पड़ जायें।

चिरंजीलालवाली बात समझा। हम सेवक हैं, इतना याद रखें, तो फिर किसी की नेतागिरी हमें नही खटकेगी। स्वार्थके लिए किसीके वश न हों, सेवाके लिए संसारके गुलाम होकर रहें।

नानावटी[1] की तबीयत कमजोर होती जा रही है, ऐसा लगता हो तो उसका कारण खोजना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५८६) से। सी० डब्ल्यू० ७०१० से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

१. अमृतलाल टी० नानावटी।

१९९. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

१५ मई, १९३७

चि० अमृतलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। अपना शरीर ठीक करनेके लिए जितना आराम लेना जरूरी हो, उतना लेना। अपना काम कुछ कम कर लेना पड़े, तो वह भी करना। कटिस्नान करते रहना। गन्ना शुरू किया है, यह अच्छा किया।

लीलावतीके दुःखसे तुम्हारा तो कोई सम्बन्ध ही नहीं है। तुम्हें उसके लिए आधा घंटा भी खर्च करनेकी जरूरत नहीं है। अपने दुःखका कारण तो वह स्वयं ही है। वह वहाँ अकेली पड़ गई है, यह सच है। जितना तुमसे उँडेला जाये, उतना प्रेम तो उसपर उँडेलना ही।

अण्णा खूब अनुभवी आदमी है। उसका पूरा वक्तव्य सुना था। मैंने उससे सिफारिश की है कि वह लीलावतीके आँसू पोंछे। उसमें यह शक्ति है भी। अब देखना, वह क्या कर सकता है।

खादी-सम्बन्धी दो पुस्तकें अण्णाके पास (मीराबहनके पास) हैं। बाकी तो नालवाड़ी या महिलाश्रमके पुस्तकालयसे मिल सकेंगी।

नानूभाई और खादी-कार्यालय वाले सज्जन आयेंगे, तो उनसे मिलूँगा।

खजूरके गुड़के बारेमें राधाकिसनको लिखना। उसने खरीद लेनेकी बात कही थी। गोसीबहन[1] को भी लिखना। मैंने गोसीबहनको लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३०) से।

१. गोसीबहन कैप्टेन।

२००. पत्र : बलवन्तसिंहको

१५ मई, १९३७

चि० बलवन्तसिंहजी,

गोशाला के बारे में पुस्तक की तलाश हो गई है। आ जायगी।

गोसेवा यज्ञ अच्छा चलता होगा।

बापुवती कनु[1]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९००) से।

२०१. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१५ मई, १९३७

चि० ब्रजकृष्ण,

तुम्हारा खत मिला और भाई डेका[2] का भी स्वतन्त्र मिला। डेका का खत और उसका उत्तर इसके साथ है। सोशियलिस्ट की बात जैसी डेका ने लिखी है ऐसेही तुम समझे थे क्या?

नरेला आश्रम के बारे में खत की प्रतीक्षा करता हूँ। तुम्हारा देहात अच्छी [लगता हो]गी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४५२) से।

१. इस पत्रपर "बापूकी ओरसे कनु" ने हस्ताक्षर किये हैं।

२. के० सी० डेका, दिल्लीमें मजदूर कार्यकर्ता।

२०२. पत्र : सरस्वतीको

१५ मई, १९३७

चि० सरस्वती,

तुम्हारे सब खत शाहीसे ही लिखने चाहिये। हम सब मुंबई से सौ मिल दूर पर दरियाके किनारे तीथल नामके देहात है वहां सरदारके साथ रहते हैं। बा, कनु, मनु, मीराबहिन वगैरह है। दो चार दिनके लिये कांति भी आ जायगा।

अम्मा[1] अभी क्यों नहीं कांतती है? हम खाना छोड़ सकते हैं। लेकिन कांतना कभी नहीं छूट सकता। वह तो एक महायज्ञ है। यह बात क्या अम्मा नहीं जानतीं हैं? तुम्हारे घरमें तो रोज धुनकी चर्खा है। चलने ही चाहिये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६०) से। सी० डब्ल्यू० ३४३३ से भी; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

२०३. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको

यह दुर्भाग्यकी बात है कि महामहिमने कार्य-समितिके स्वीकृत प्रस्तावपर सीधे-साफ ढंगसे कुछ विचार व्यक्त नहीं किये हैं, बल्कि घुमा-फिराकर उसपर कुछ कहा है। यदि उन्हें फिरसे वही कहना है जो उन्होंने [बम्बई] प्रेसिडेंसीके कांग्रेस संसदीय दलके नेता श्री खेरको कहा था तो जाहिर है कि पुरानीवाली स्थितिमें कोई सुधार नहीं हुआ है और यदि बेलगाँवका भाषण[2] लॉर्ड जेटलैंडके हालमें दिये गये भाषण[3] का भावानुवाद है तो स्थिति निश्चित रूपसे बेहतर नहीं हुई, शायद बिगड़ी ही है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १५-५-१९३७

१. सरस्वतीकी माँ।

२. इस भेंट-वार्ताका विषय बम्बईके गवर्नर, लॉर्ड ब्रैबोर्नका बेलगाँवमें दिया गया एक भाषण था। बम्बईके गवर्नरने कहा था: "संसद द्वारा गवर्नरको सौंपे गये विशेष उत्तरदायित्व उन मामलोंसे सम्बन्ध रखते हैं, जिनपर, ऐसी आशा की गई है कि, गवर्नर और उनके मन्त्रियोंके बीच कोई मतभेद नहीं पैदा होगा . . .। पदका कार्यभार सँभालनेका अर्थ कठिन परिश्रम तथा उत्तरदायित्वोंको स्वीकार करना है। लेकिन इनके बिना कोई भी देश अपना शासन नहीं चला सकता। मात्र नकारात्मक प्रवृत्ति कहीं भी नहीं ले जाती और उससे कुछ भी हासिल नहीं होता। मेरे मन्त्रिगण न केवल मेरे इस सद्भाव और सहानुभूतिपर विश्वास रखें, बल्कि यह भी विश्वास रखें कि मैं यथाशक्ति वह सब करूँगा जिससे कोई ऐसी परिस्थिति पैदा न हो जिसके कारण उत्तरदायित्वोंके दायरेमें हमारे बीच मतभेद पैदा हों।"

३. ६ मई, १९३७ के; देखिए परिशिष्ट ४।

२०४. बरू बनाम झरना कलम

प्रभुदास गांधी महादेवको इस प्रकार लिखते हैं:[१]

इस पत्रमें कुछ विनोद है, कुछ बुद्धि-विलास है और कुछ लिखनेवालेके मनकी उलझन है। पूरे लेखमें से एक यह बात झलकती है कि पुरानी चीजोंके मुकाबलेमें आधुनिक चीजें अधिक गतिसे काम करनेके लिए उपयोगी पड़ती हैं। यदि हम लोग गतिको आदर्श न मानें, उसे प्रधान स्थान न दें तो इस लेखका जवाब देना भी आवश्यक नहीं बचता। गाँवके लोग भी साधारणतया गतिकी ओरसे उदासीन नहीं होते। चरखा संघ और ग्रामोद्योग संघने ग्राम-वृत्तिको सुरक्षित रखकर [औजारोंकी] गति बढ़ानेका प्रयत्न भी किया है। तकलीकी गति तो कल्पनातीत रूपमें बढ़ाई गई है और उसमें ग्राम-वृत्ति किंचित् भी क्षीण नहीं होने पाई है। तकलीकी गति जिस तरह बढ़ाई गई वह पद्धति ग्रामीण व्यक्तियोंको सूझ भी सकती थी। तकलीकी गतिको बढ़ाते हुए जिस मर्यादाका ध्यान रखा गया है और जिस मर्यादाका ध्यान चरखा आदि औजारोंके विषयमें भी रखा जाता है, वही मर्यादा 'झरना कलम' के बारेमें भी लागू माननी चाहिए। गाँवमें रहनेवाले लोगोंके मनमें शहरकी भाग-दौड़को कोई स्थान नहीं है। उन्हें शहरके लोगों-जैसी व्यग्रतासे काम करना आवश्यक नहीं होता। ट्राम, मोटर, रेलों आदिमें बैठकर उनका सारा दिन एक जगहसे दूसरी जगह दौड़-धूप करनेमें नहीं बीतता। उन्हें सामान्य रूपसे अपने गन्तव्य स्थान तक पैदल ही जाना होता है। इसलिए मेरी दृष्टिसे तो गाँवोंमें झरना कलमके उपयोगकी कोई गुंजाइश नहीं है। लोहे-पीतलके निबकी जरूरत हो सकती है किन्तु मैं उसे भी स्थान देनेको तैयार नहीं हूँ। बरूकी नोक बनानेमें, उसकी कलम काटनेमें जो कला है, पीतल या लोहेसे बनी हुई कलमकी नोकोंने उस कलाका नाश कर दिया है। फिर भी उससे उतनी हानि नहीं हुई, जितनी झरना कलमसे हो रही है। गाँवमें झरना कलमको स्थान देना अर्थात् गाँवको शहर बनाने-जैसा ही है।

दरजीके लिए, साधारण सुई और सीनेकी मशीनका उदाहरण देना भ्रामक है। सीनेकी मशीनका आविष्कार सुईकी पूर्तिके विचारसे किया गया है। और इस यन्त्रका चलन भी घर-घरमें नहीं हो पाया; इसके सिवा इस यन्त्रके कारण व्यक्ति इतनी गतिसे काम कर सकता है कि यदि कोई सीनेको धन्धा बनाकर उससे जीविका कमाना चाहे तो वह उसके लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। इस दृष्टिसे देखें तो झरनाकलम शहरोंमें आशु लिपिकोंके लिए तो आवश्यक ही है।

१. लेखकने अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके सदस्यों द्वारा नरकटसे बनी कलमके उपयोगसे लिखनेकी गति धीमी होनेके आधार पर यह कहा था, "कि सीनेकी मशीन, बाईसिकल, आदि चीजोंकी तरह इसके स्थानपर फाउंटेनपेनका उपयोग स्वीकार्य होना चाहिए।"

श्री प्रभुदास गांधीने और भी कुछ औजारोंका प्रयोग किया है। बरू और झरना कलमकी तुलनाके सिलसिलेमें मैंने जिस तर्कका उपयोग किया है, वह उन दूसरी चीजोंपर भी लागू हो सकता है। वास्तवमें देखा जाये तो ऐसी बातोंके विषयमें कोई नियम सिद्धान्तके रूपमें निश्चित नहीं किया जा सकता। सब अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार ग्राम-वृत्तिका पालन-पोषण करें। इतना अवश्य याद रखना चाहिए कि शहरसे गाँवमें जाकर बसनेवाले लोग गाँवके लोगोंकी बुद्धि भ्रष्ट न करें।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १६-५-१९३७

२०५. सन्देश : अन्नक्षेत्रके उद्घाटनपर

१६ मई, १९३७

लाठीके ठाकुर साहब अपना अन्नक्षेत्र मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल रहे हैं, इसके लिए उन्हें बधाई। मेरी कामना है कि यह कार्य निर्विघ्न सम्पन्न हो। मैं आशा करता हूँ कि ठाकुर साहबके प्रजा-जन उनके इस धार्मिक पुरश्चरणको आगे बढ़ायेंगे, और हरिजन भाइयोंको जो छूट मिली है, उसका लाभ उठाकर वे अपना जीवन अधिक पवित्र बनायेंगे।

ठाकुर साहबको सम्बोधित करते हुए गांधीजी ने लिखा था :

अन्नक्षेत्र नामक अपना मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल देनेका आपने जो निर्णय किया है, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं आशा करता हूँ, आपके राज्यसे अस्पृश्यताका नामोनिशान मिट जायेगा।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २३-५-१९३७

२०६. पत्र : नारणदास गांधीको

तीथल, बलसाड़
१६ मई, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा तार ठीक समय पर मिल गया था। अब मैंने सेगाँव लिखा है। दिन तो वहाँ तय होगा, इसलिए या तो तुम्हें सीधे वहींसे सूचना मिलेगी, या फिर मैं दूँगा।

मीराबहनके पैसेके बारेमें पूछने[1] का कारण यही था कि उन पैसोंमें से कुछ का उपयोग यूरोपमें करनेकी इच्छा हो आती है।

कागजोंकी जो पेटी गुम हो गई थी, अभी तक नहीं मिली।

मैंने मन-ही-मन यह सोचा है कि जब मैं यहाँसे रवाना होऊँगा, तब कन्हैया राजकोटके लिए रवाना होगा।

मैं विजया वाली बात समझता हूँ।

प्रेमाका पत्र भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५२१ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

२०७. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

१६ मई, १९३७

चि० मुन्नालाल,

तुम्हें ठीक-ठीक विचार करना आ गया है। मुझे जितना लिखना हो, लिखा करो। जो दो अड़चनें तुमने बताई हैं, वे तो सच हैं, किन्तु इसी अर्थमें, कि वे एक कुटुम्बकी भावना उत्पन्न करनेमें बाधक हो सकती हैं। किन्तु मुझे तो इस बातका दुःख है कि सेगाँवमें रहनेवाले अखिल विश्वको एक कुटुम्ब नहीं मानते। शुद्ध सेवकके लिए इस भावनाकी अनिवार्य आवश्यकता है। जिनमें कुटुम्बकी भावना उत्पन्न हो जाती है, वे जहाँ जाते हैं, कुटुम्बके समान व्यवहार करते देखे जाते हैं; फिर चाहे जिनसे उन्हें व्यवहार करना है, वे उनसे पहले कभी न मिले हों और उनमें से प्रत्येककी प्रवृत्ति भिन्न

१. देखिए पृ० २०० ।

हो। फिर, कौटुम्बिक भावनामें पारस्परिक सहकारिताकी आवश्यकता नही होती। एक ही कुटुम्बमें जन्मे लोगोमें कुछ ऐसे सरल होते हैं कि वे मुँहफट कुटुम्बियोके साथ भी हिल-मिलकर रह लेते है। तुम्हारी यह बात सच है कि सेगाँव धर्मशाला-जैसा हो गया है। लेकिन मै क्या करूँ? मै लाचार हो जाता हूँ। बहुतोको रोकते हुए भी कुछको रोक ही नही सकता। किन्तु मैं आशा तो किये ही हूँ कि सेगाँवमें इस भावनाका पोषण करनेमें हम सफल होगे। यदि सफल नहीं हुए, तो सेगाँवमें हम कुछ कर नही सकेंगे, यह भी निश्चित है। मैं तो खबरदार रहूँगा ही, सबपर नजर भी रखूँगा, किन्तु परिणाम तो सबके पुरुषार्थपर ही निर्भर करेगा।

मैंने तो सोचा था, तुम कचन[1] के बारेमें चिन्ता नही करते, लेकिन अब देखता हूँ, मेरी वह मान्यता ठीक नही थी। चिन्ता करनेका बिलकुल कोई कारण नही है। महिलाश्रममें रहकर जो उससे बन सके, सो करे। तुम्हे चिन्ता करनेकी क्या जरूरत है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५८५) से। सी० डब्ल्यू० ७०११ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

२०८. पत्र : विद्या आ० हिंगोरानीको

१६ मई, १९३७

चि० विद्या,

तुम्हारा खत बहुत दिनोंके बाद मिला। तबियत बिगडनी नही चाहिये अगर बिगडे तो उसका दुःख नही मानना। धूपबाथ नित्य करना ही चाहिये। ऐसा ही घर्षण स्नान भी। रात्रीको पेटपर मिट्टी रक्खो। दूध और पानीके सिवा और कुछ खाना बंध किया जाय। मुझको लिखा करो। महादेव[2] को भेज दिया है वह अच्छा ही किया है। अब तो तुमसे अलग अवश्य रह सकता है। आनदसे कहो भले कैसा भी हिन्दी हो लेकिन हिन्दीमें लिखनेकी कोशीश करे। तुम्हारे साहस देना।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१. मुन्नालाल शाहकी पत्नी।
२. विद्या हिंगोरानीका पुत्र।

२०९. पत्र : अगाथा हैरिसनको

१७ मई, १९३७

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा पत्र अभी-अभी आया। और मै उसका फौरन जवाब दे रहा हूँ।

अखबारोमें श्री बटलर और लॉर्ड जेटलैंडका जो मंशा बताया गया है, यदि इन दोनोका वही मंशा है, तो फिर (कांग्रेसके) प्रस्तावमें जो आश्वासन माँगे गये हैं, वे आश्वासन सीधे-सीधे दे क्यो नही दिये जाते। क्या तुम सोचती हो कि मैं इससे भी ज्यादा स्पष्ट कुछ कह सकता था? अब मैंने एक कदम और आगे बढ़कर स्पष्ट शब्दोमें कहा है कि जब आपात्-स्थिति हो तो मन्त्रियोको बर्खास्त कर दें।

बम्बईके गवर्नरके भाषणका[1] मैंने जो अर्थ लगाया है उसके अनुसार तो वह उस चीजको अस्वीकार कर रहे है जिसके बारेमें माना जाता है कि उसे लॉर्ड जेटलैंडने अपने हालके भाषणमें[2] स्वीकार कर लिया था।

और पूर्ण स्वतन्त्रताके बारेमें मैंने जो-कुछ कहा है, उसमें जटिलता क्या है? क्या पूर्ण स्वतन्त्रता कांग्रेसके घोषित लक्ष्यमें नही है? क्या उसकी बात उसी प्रस्तावम शामिल नही थी जिसे गवर्नरोंको दिखाया गया था और जिसपर उन्होंने कोई आपत्ति नही उठाई थी?

हमें जिन कठिनाइयोका मुकाबला यहाँ करना होता है, उन्हें तुम नहीं जानतीं। जब तुम्हे लाखो मनुष्योकी समस्याओको सुलझाना हो तो किसी बातको मनमें छिपाकर रखना असम्भव होगा। विशेष रूपसे तब, जब तुम उन्हें सशस्त्र विद्रोहके लिए नही बल्कि एक ऐसी शान्तिपूर्ण क्रान्तिके लिए प्रशिक्षित कर रहे हो, जो इतिहासमें अभूतपूर्व है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि कूटनीतिज्ञ लोग यहाँ अथवा वहाँ जो भी कहे, उसपर तुम उत्तेजित न हो। किसी भी हालतमें तुम्हारी और मेरी पहली और आखिरी यह चेष्टा होनी चाहिए कि विश्वासको न छोड़ें, किन्तु क्रोधमें कुछ न कहे, श्लेषात्मक बात न कहें, पूर्ण सत्यके अलावा कुछ भी न कहें और इसके बाद परिणामको उस दिव्य और अदृश्य शक्ति पर छोड़ दें जिसकी इच्छाके आगे हमारी तुच्छ इच्छाएँ धरी रह जाती हैं।

इससे अधिक नही, क्योंकि डाक जानेका समय हो गया है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४९९) से।

१. देखिए पृ० २२३, पाद-टिप्पणी २।
२. देखिए परिशिष्ट ४।

२१०. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

तीथल, वलसाड़
१७ मई, १९३७

चि० सी० आर०,

घनश्यामदासको आपने जो पत्र लिखा है, उसकी अन्तिम पंक्ति मुझे अच्छी नहीं लगी। मैं जो-कुछ कर रहा हूँ, उसपर यदि आपको पूरा भरोसा नहीं है तो आपको मुझसे बहस करनी चाहिए और मुझे रोकना चाहिए; क्योंकि परिणाम आपको भुगतना होगा, मुझे नहीं। और यदि आप मात्र एक वकीलकी तरह व्यवहार करेंगे, चाहे कितने ही प्रतिभा-सम्पन्न वकीलकी तरह करें, लेकिन यदि उसके पीछे पूर्ण विश्वासका बल नहीं है, तो मैदान हार जायेंगे। मैं एक भी पंक्ति गहरे विश्वासके बिना नहीं लिखता। जेटलैंडने मुझे कुछ आशा बँधाई थी, लेकिन बम्बईके गवर्नरने उस आशाको चूर-चूर कर दिया है[1], बशर्ते कि जो-कुछ वह कहते हैं वही जेटलैंडका अभिप्राय है। किन्तु हमारा रुख सही है, इस बातपर मेरा पूर्ण विश्वास उनकी दुरंगी चालोंके कारण गहरा होता जा रहा है। जेटलैंडका भाषण और उसपर बटलरकी व्याख्याके इस भ्रममें पड़कर पद-ग्रहण करना मुझे स्वीकार नहीं होगा कि उन्होंने हमारे प्रस्तावकी बातोंको लगभग स्वीकार कर लिया है। इसके बजाय तो मैं यह पसन्द करूँगा कि हमारा प्रस्ताव रद कर दिया जाये और बिना किसी शर्तके हम पद-ग्रहण कर लें। मेरा यह विश्वास कायम है कि शर्तहीन स्वीकृति अवश्य ही घातक सिद्ध होगी। लेकिन उस धोखेमें पड़कर पद-स्वीकार करना तो उससे भी ज्यादा घातक सिद्ध होगा। अतः सम्मानपूर्ण रास्ता केवल यही है कि हम जिस स्थितिमें हैं उसी स्थितिपर कायम रहें — तब तक, जब तक कि हमें हमारी मनोवांछित चीज नहीं मिल जाती, और जिस ढंगसे चाहते हैं उसी ढंगसे नहीं मिलती। किन्तु यदि आपको मेरी यह स्थिति बिलकुल अवास्तविक लगती हो तो आपको मेरी खातिर और उससे भी ज्यादा हमारा जो उद्देश्य है, उसकी खातिर मेरा प्रतिरोध करना चाहिए।

आशा करता हूँ, लक्ष्मी और आप अच्छे होंगे।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६३) से।

१. यहाँ संकेत बम्बईके गवर्नर द्वारा बेलगाँवमें दिये गये भाषणकी ओर है; देखिए पिछला शीर्षक भी।

२११. पत्र : विजया एन० पटेलको

१७ मई, १९३७

चि० विजया,

मनुभाईका बहुत लम्बा पत्र आया है। उन्होंने पूरा इतिहास दिया है। उसमें तेरे लिए तो कुछ नया नही है। आशा है, मेरे पत्र तुझे मिले होंगे।

अपना [दैनिक] कार्यक्रम लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०६८) से। सी० डब्ल्यू० ४५६० से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

२१२. पत्र : लीलावती आसरको

१७ मई, १९३७

चि० लीला,

आज अण्णाका पत्र आया है, उसमें भी तेरी तबीयत खराब होनेकी खबर है। तुझे गेहूँ वगैरह कई महीनोके लिए छोड़ देना चाहिए। कुछ दिनोंके लिए दूध भी छोड़ देना चाहिए। पेटपर मिट्टीकी पट्टी रखनी चाहिए। कटि-स्नान लेना चाहिए। आराम जितना करना चाहे कर, लेकिन अपनी तन्दुरुस्ती ठीक कर ले। इस सीधे-सादे मामलेमें भी तू मेरी बात क्यो नही सुनती?

आशा है, अब चिन्ता नही करती होगी और सबके साथ हिल-मिल गई होगी। प्रार्थनामें नही जा सकती, तो कोई हर्ज नही। नीद पूरी लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६०) से। सी० डब्ल्यू० ६६३५ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

२१३. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

१७ मई, १९३७

चि० अमृतलाल,

अण्णा और मुन्नालाल लिखते हैं कि तुम्हारी तबीयत ठीक नही रहती। यह नही होना चाहिए। खुराकमें जो तुम्हें ठीक लगे, ऐसे परिवर्तन करो। काम कम करो। इससे भी तबीयत ठीक न हो, तो किसी ठंडी जगह जाओ। मलाड जाना ठीक लगे, तो बरसात शुरू होते ही वहाँसे लौट आना। यदि शरीर अच्छा हो जायेगा, तो मैं तुमसे बहुत काम ले सकूँगा। यदि कमजोर रहोगे, तो कोई भी काम सौंपते हुए मुझे झिझक लगेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३१) से।

२१४. पत्र : अमृत कौरको

तीथल, बलसाड़
१८ मई, १९३७

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। हाँ, सागर-समीरके मन्द-मन्द झोंके बहुत अच्छे हैं। कितना अच्छा होता कि उनका आनन्द लेनेके लिए तुम भी यहाँ होती। हम रोज सुबह-शाम समुद्रके पानीमें चलते हैं। यह एक स्फूर्तिदायक भ्रमण होता है। नन्ही-सी कनुको खूब आनन्द आता है। अब हम लगभग २५ लोग हैं और कुछ ही समयमें शायद हम लोग दुगने हो जायेंगे। तीथल एक छोटा-सा गाँव है जिसमें कुछ-ही 'बँगले हैं। हम भूलाभाईके यहाँ ठहरे हैं। अधिक व्यक्तियोंकी व्यवस्थाके लिए उन्होंने एक और बँगला किराये पर लिया है। सारा खर्च खुद ही उठा रहे हैं। मैं शायद ३० तारीख तक यहाँसे रवाना हो जाऊँ। सेगाँवकी गर्मीकी मुझे चिन्ता नही। मुझे अब और अधिक समय तक अनुपस्थित नही रहना चाहिए।

हरिजनोंके लिए तुम क्लबसे चन्दा एकत्रित कर सकी, इसकी मुझे खुशी है। उसका बड़ा हिस्सा अवश्य ही हरिजनो और खादीको ही मिलना चाहिए। किन्तु मैं जानता हूँ, तुम गतिमें तेजी नही ला सकती और न तुम्हें जबरदस्ती लानी ही चाहिए।

पैरके अँगूठेमें पीप मुझे ठीक नहीं लगती। फिर भी यह अच्छा है कि विष बाहर निकल रहा है। क्या तुम कटि-स्नान ले रही हो? घर्षण-स्नानके बारेमें कैसा-क्या है? कितना अच्छा होता कि तुम दोनो प्रकारके स्नान अच्छी तरहसे समझकर सही विधिसे करो। क्या लहसुन अब भी चालू है? क्या प्याज भी लेती हो? मैं समझता हूँ, तली हुई चीजें नहीं ले रही हो। और दालों[1] के बारेमें क्या है? तुम्हारे लिए तो एक चम्मच दाल भी विष है। आवश्यक होनेपर हरी सब्जियोंके साथ शुद्ध दूध मक्खन और रसीले फल तुम्हारा भोजन है। दूध कितना लेती हो?

क्या तुमने बालकृष्णको लिखा है?

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७३८२) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९३८ से भी

२१५. पत्र: चिमनलाल एन० शाहको

१८ मई, १९३७

चि० चिमनलाल,

मैं तुम्हें लिखूं-लिखूं कर रहा था कि आज तुम्हारा पत्र मिल गया। शारदा मजेमें है। अभी तो ऐसा जान पड़ता है कि उसे यहाँ अच्छा लगता है। यदि वह मेरे पास निश्चिन्त होकर रहे, तो मैं उसकी पूरी जिम्मेदारी तुमसे खुद ले लेनेको तैयार हूँ। यथासमय मुझे जहाँ ठीक लगेगा, मैं उसका ठिकाना कर दूंगा। जब तक उसका स्वास्थ्य ठीक न हो, तब तक तो वह मेरे पास ही रहेगी। उपचार जो मुझे ठीक लगेगा, करूँगा। अभी तो उसका कहना है कि वह मेरे पास रहनेको पूरी तरह तैयार है। वह यह भी कहती है कि तुम और शकरीबहन[2] दोनो उसे मुझे सौंप देनेको तैयार हो। सफेद पानी आता है, यह बात उसने नहीं कही थी। शर्माती थी। स्पष्ट है, रोग पुराना हो गया है। लेकिन यह दूर हो सकता है, ऐसा मैं मानता हूँ। समय लगेगा, यद्यपि मैं उसके विवाहकी बात भी समझ रहा हूँ। जबसे उसने यह बात बताई है, तभीसे मैं इस विषयपर विचार कर रहा हूँ। जब तक उसका स्वास्थ्य ठीक न हो जाये, तब तक तो विवाहकी बात करनी ही नहीं है। मेरा आग्रह तो उसे जातिसे बाहर, और यदि सम्भव हो तो प्रान्तके बाहर देनेका होगा। लेकिन यह तो आगेकी बात है। शारदा इसके लिए तैयार है, और कहती है कि तुम दोनो भी तैयार हो। इतना तो बबू[3] के बारेमें।

१. मूलमें 'पोल' है।

२. चिमनलाल एन० शाहकी पत्नी।

३. शारदा, चिमनलाल शाह की बेटी।

अब तुम दोनोके बारेमें। बबू २० वर्षकी है। लेकिन कई बातोमें अपनी उम्रसे ज्यादा होशियार मालूम होती है। तुम दोनोकी बहुत फिक्र करती जान पडती है। तुम्हारे पास — शकरी बहनके पास — ३००० रुपये है, जिनपर अभी तुम्हारा निर्वाह हो रहा है। इसमें मुझे कोई आपत्ति नही है। ये खर्च हो जायें, उसके बाद भी तुम्हें चिन्ता करनेकी जरूरत नही होगी। इतना परिग्रह तुम्हें करना ही नही चाहिए। लेकिन अभी तुम्हारे पास पैसा है, तो भले रहे। लेकिन इसके होते हुए भी, यदि तुम खरी कमाईसे कुछ पैसा प्राप्त करो, तो मुझे आपत्ति नही होगी। किन्तु जब तक यह है, तब तक तुम बिना कुछ लिये सेवा करो, यह तुम दोनोको अधिक शोभा देगा। लेकिन यह तो मेरा दृष्टिकोण हुआ। तुम दोनोंके गले यह न उतरे, तो तुम अवश्य ही दूसरा रास्ता इख्तियार कर सकते हो।

बबूने यह भी कहा कि तुम्हें बीजापुर माफिक नहीं आता। तुम्हारी इच्छा कहीं और जानेकी है। मैंने राजकोटका नाम लिया तो बबूने कहा कि वह तो तुम्हें नहीं ही जँचेगा, और उसका कारण है नारणदासका और तुम्हारा मनमुटाव। यह आज तक बना हुआ है, यह दुःखकी बात है। तुम दोनो आश्रमवासी हो, इसलिए तुम दोनोको सगे भाईसे ज्यादा सगा होना चाहिए। तुम्हें इस वैमनस्यको दूर करना ही चाहिए। इसका कोई गम्भीर कारण बिलकुल नही होगा, ऐसा मेरा विश्वास है। तुम दोनोका कोई व्यक्तिगत स्वार्थ तो है नही, फिर यह मनमुटाव क्यो? जो मतभेद होंगे, वे सिद्धान्तके ही होगे। ऐसे मतभेदोसे क्या डरना? तुम्हारी इच्छा हो, तो मैं इस मतभेदकी गहराईको जाननेकी कोशिश करूँ। राजकोट जाओ, चाहे न जाओ, वैमनस्य तो दूर होना ही चाहिए।

बबू यह भी कहती है कि तुम्हें अपना गाँव ज्यादा पसन्द है। वहाँ बसा जा सके, तो इस-जैसी उत्तम बात तो मैं कुछ और नहीं मानता। यदि वहाँ रहो, तो खर्च भी कम होगा और सहज ही गाँवकी सेवा भी हो जायेगी। अत यदि तुम अपने गाँवमें रहनेका निश्चय कर सको, तो करना।

यदि मुझसे मिलना चाहो, तो २५ के बाद मिल जाना। मैं यहाँसे ३० को वर्धाके लिए रवाना होऊँगा। बबूकी कोई चिन्ता मत करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१)से।

२१६. तार : च० राजगोपालाचारीको[1]

[१८ मई, १९३७ के पश्चात्][2]

मद्रास विधान-सभा के किसी भी कांग्रेसी सदस्य ने पद स्वीकार करने की अनुमति नही माँगी है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-५-१९३७

२१७. तार : बाबूराव डी० म्हात्रेको

वलसाड़
१९ मई, १९३७

म्हात्रे
आर्किटेक्ट
बम्बई म्युच्यूअल बिल्डिंग
हॉर्नबी रोड, बम्बई

कृपया अगले कांग्रेस-शिविरकी योजना बनाने के लिए आ जाइये। वलसाड़ तार से खबर दीजिए।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९८३२) से; सौजन्य : बाबूराव डी० म्हात्रे

१ और २. राजगोपालाचारीके १८ मईके पत्रके जवाबमें यह तार दिया गया था। अपने पत्रमें उन्होंने पूछा था कि क्या किसी कांग्रेसी सदस्यने "लॉर्ड जेटलैंडके वक्तव्यके आधारपर पद स्वीकार करनेकी अनुमति माँगी है और इस सम्बन्धमें [कांग्रेसकी] नीतिमें परिवर्तन करनेका अनुरोध किया है।"

२१८. पत्र : अमृत कौरको

१९ मई, १९३७

प्रिय बागी,

अब आन्ध्र प्रदेशमें हाथ-कते सूतसे जो फीता तैयार किया जा रहा है, उसका नमूना तुम्हारे पास भेजा जा रहा है। यह पत्र मात्र इसीके लिए है। कीमत प्रति गज ०-३-६ रु० है। क्या तुम्हें यानी तुम्हारे ग्राहकोंको इसकी कुछ आवश्यकता है? क्या यह फीता अपेक्षित किस्मका है? बम्बईके डिपोमें थोडी मात्रामें यह बेंचनेके लिए रखा है।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७८३) से, सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९३९ से भी

२१९. पत्र : एन० एन० गोडबोलेको

तीथल, वलसाड
२० मई, १९३७

प्रिय डॉ० गोडबोले,

मैंने अब आपकी पुस्तक ध्यानपूर्वक पढ ली है। अपनी सीमामें यह अच्छी पुस्तक है। इसकी कीमत बहुत ज्यादा है। पुस्तकके शीर्षकसे जिस विषयका अनुमान होता है, उस विषयसे बाहरकी चीजें भी इसमें हैं, किन्तु इसके अध्याय असम्बद्ध और अपूर्ण-से हैं। आमिष और निरामिष आहारकी आपने जहाँ चर्चा की है उसमें आपने निरामिष आहार विषयक साहित्यमें उद्धृत किये गये विशेषज्ञोंके विचारोंको ज्यों-का-त्यों दे दिया है। उसमें मौलिक कुछ भी नहीं है। किसी भारतीय अध्येतासे तो मैं कुछ मौलिक विचारोंकी अपेक्षा रखता हूँ। और फिर पशुओंके नस्ल-सुधार तथा उचित आहार-सम्बन्धी अध्याय भी बहुत सतही है। दुधारू पशुओंके विशेषज्ञोंने मुझे बताया है कि नस्ल-सुधार ही असली चीज है। उनसे प्राप्त दूधके परिमाण पर उनके आहारका बहुत कम असर पडता है। जिसमें भैंस तथा गायकी तुलना की गई हो, ऐसा कोई अध्याय मुझे नहीं दिखा। क्या दोनोंको एकसाथ पाला जा

सकता है; उनमें से कौन-सा पशु आर्थिक दृष्टिसे लाभप्रद है? शायद आपको पता ही होगा कि डॉ० आइकराड[1] क्रीम निकाले हुए दूधकी खूब सिफारिश करते हैं। किन्तु आपकी पुस्तकमें मुझे इस सम्बन्धमें पर्याप्त सूचना नहीं मिली कि ऐसे दूधका क्या-क्या उपयोग हो सकता है। अपनेको एक ग्रामीणकी मर्यादाके भीतर रखते हुए मैं स्वयं कुछ प्रयोग कर रहा हूँ और मैंने आशा की थी कि आपकी पुस्तकसे कुछ सहायता मिलेगी। और आपने दूधके उपयोगकी भारतीय विधियोंका तुलनात्मक अध्ययन भी प्रस्तुत नही किया है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

२२०. पत्र: अमतुस्सलामको

२० मई, १९३७

प्यारी बेटी अमतुल सलाम[2],

तेरा खत आज सुबह ही मिला। तेरे खत मुझे देरसे मिले और मैं लौटती डाकसे तुझे लिखूँ तो वे तुझे भी देरसे मिलें, तो इसमें किसका कसूर है? तूने स्वयं ही देहातमें रहनेकी इजाजत माँगी, इसलिए मैंने दे दी। घोड़ेपर बैठती है, हरिजनोंकी चाकरी करती है, गरीबोंका बोझ दूर करती है, कुएँ खुदवाती है, इससे ज्यादा तू क्या करनेवाली थी? इसलिए मैंने फौरन हाँ कह दिया। लेकिन सरहदपर जाये या ऐसा ही दूसरा काम करे, तो वह भी मुझे प्रिय होगा ही। मुझे इलाहाबाद एकाएक जाना पड़ा था, क्योंकि जवाहरके बीमार होनेसे कार्य-समितिकी बैठक वहीं हो सकती थी और मेरी हाजिरी उन लोगोंके लिए जरूरी थी।

सरदारके आग्रहके कारण मैं वलसाड़के पास तीथल नामक गाँवमें समुद्र-किनारे हूँ। बा, मीराबहन वगैरह साथ हैं। पहली तारीखको वर्धा पहुँचनेकी आशा है।

ऐसी सूखी हवामें दमा और खाँसी तुझे क्यों हैरान करते हैं? लेकिन तेरा खत मिले तो काफी दिन हो गये। इसलिए आशा है कि जब यह पत्र पहुँचेगा, तब तक तू अच्छी हो गई होगी।

लगता है कि कान्ति बंगलौरमें रहेगा। पढ़नेकी ज्यादा सुविधा वहाँ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८१) से।

१. न्यूट्रिशन रिसर्च लैबोरेटरीजके निदेशक डॉ० डब्ल्यू० आर० आइकराड।
२. सम्बोधन उर्दू लिपिमें है।

२२१. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

२० मई, १९३७

भाई भगवानजी,

साथका पत्र भेजना-न भेजना मेरी इच्छापर छोड़ा गया है, लेकिन मेरा कर्तव्य तो यही है कि मैं इसे भेज दूं।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८३३) से। सी० डब्ल्यू० ३०५६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२२२. पत्र : विजया एन० पटेलको

२० मई, १९३७

चि० विजया,

तेरा पत्र मिला। तुलनात्मक रूपसे यहांकी हवा ठंडी तो है ही, लेकिन काम करनेके लिए अनुकूल नहीं है। मेरी नींद यहाँ बढ़ गई है। जी होता है सोते ही रहें। फिर भी सेगांव-जैसी गरमी तो यहां बिलकुल नहीं है। अत: तुम लोगोंको तो गीले कपड़े लपेटकर अपनेको शीतल बनाये रखना चाहिए।

मनुभाईको मेरा पत्र भेज दिया, यह अच्छा किया। तू मेरे साथ नहीं आई, यह तेरे लिए स्पष्ट ही श्रेयस्कर था; क्योंकि वहाँ रहना तेरा कर्तव्य भी था। मेरे साथ आनेमें एक प्रकारका आनन्द था, मजा था; क्योंकि जो ऐसे निर्दोष आनन्दका भी त्याग कर सकते हैं, वे अपना श्रेय अवश्य साधते हैं। तू दृढ़ तो है ही, और न आकर तूने अपनी दृढ़तामें और वृद्धि की है। यह बात तू समझी है या नहीं?

तू और इन्दु, दोनों अण्णाके साथ जाती हो, और 'गीता' सुनती हो, यह अच्छी बात है। तू गाय दुहनेमें मदद करती है; यह ठीक है।

चक्कू यहाँ तो नहीं मिला, यानी गुम हो गया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०६९) से। सी० डब्ल्यू० ४५६१ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पचोली

२२३. पत्र : लीलावती आसरको

२० मई, १९३७

चि० लीला,

तू भले ३० बरसकी हो गई हो, लेकिन मुझे तो बच्ची ही लगती है और बच्ची ही लगती रहेगी। अगर तू धीरज धरे, तो सब ठीक हो जायेगा। यदि तू एक बार व्यवस्थित हो जाये, तो समझो कि सब हो गया। बाकीकी और सब बातें तुझमें हैं। जो व्यवस्थित हो जाता है, उसमें अह नही होता, यह तू समझती है न? मै जिस व्यवस्थाकी आशा करता हूँ, वह दोनो प्रकारकी व्यवस्था है — बाहरकी और अन्तरकी भी।

'टाइम्स [ऑफ इण्डिया'] न भेजनेके बारेमें मैंने लिखा है। तेरे मौनकी बात समझता हूँ।

राधाकृष्ण घी वापस नही कर सकता। वह चाहे और भी खरीद ले, लेकिन जो उसके पास है उसे वापस न भेजे।

तू अपना स्वास्थ्य सुधार लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६१) से। सी० डब्ल्यू० ६६३६ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

२२४. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२० मई, १९३७

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मै 'हरिजनबन्धु' आदिका प्रबन्ध कर रहा हूँ। लेकिन ये तुम्हें मिलते क्यों नही है, समझमें नही आता।

दूध भले दो पैसे सेर बिके। किसी भी तरह लोगोको दूध मिले, यह अच्छा ही है। दूध लेते कौन है? क्या हरिजनोके सिवा भी कुछ लोग लेते हैं? हालके तुम्हारे पत्र ठीक तुम्हारे मनका दर्पण होते है, यह मुझे अच्छा लगता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५८४) से। सी० डब्ल्यू० ७०१२ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

२२५. पत्र : हरिप्रसादको

२० मई, १९३७

भाई हरिप्रसाद,

तुमने पत्र लिखकर अच्छा किया। आगामी कांग्रेसके अधिवेशनकी प्रदर्शनी कैसे अच्छीसे-अच्छी हो, इसका विचार तो मैं भी कर रहा हूँ। तुम्हें जो सुझाव देना अच्छा लगे, सो अवश्य देना। सरदारके साथ बतचीत अवश्य करना। रामजीभाई जिस काममें रुचि लेते हैं, उस कामको अच्छी तरह करनेका सदा पूरा प्रयत्न करते हैं। अतः यदि उनकी शाला और उनका बगीचा तुम्हें पसन्द आये, तो इससे मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१३९) से।

२२६. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

२० मई, १९३७

चि० अमृतलाल,

तुम्हारी तबीयतके बारेमें शिकायतें आती ही रहती हैं। विजया लिखती है कि तुम्हारा वजन घटता ही जाता है। वसुमती लिखती है कि तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं रहती। इस सबका कारण तो तुम्हें ही खोजना होगा। कोई मानसिक व्यथा तो नहीं पाल रहे हो न? मुझे ब्योरेवार पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३२) से।

२२७. पत्र : कपिलराय ह० पारेखको

२० मई, १९३७

भाई कपिलराय,

अच्छा किया, तुमने पत्र लिखा। मैं यही पत्र सेठ जमनालालजी को भेज रहा हूँ। उनकी ओरसे जो जवाब आयेगा, वह तुम्हें भेज दूंगा। यह भी हो सकता है, वे सीधे तुम्हें ही लिखें।

बापूके आशीर्वाद

श्री कपिलराय पारेख
सनी साइड
ब्लॉक नं० १, प्लॉट २५३
माटुंगा, जी० आई० पी०, बम्बई

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७३०) से; सौजन्य : कपिलराय ह० पारेख

२२८. पत्र : भगतराम तोशनीवालको

[स्थायी पता :] सेगाँव, वर्धा
२० मई, १९३७

भाई भगतराम,

आपने ठीक लिखा है। जो मनुष्य अहिंसा धर्मको मानता है वह कतलखाना नहीं बनाएगा।[1]

मो० क० गांधी

गांधीजी और राजस्थान, पृ० ३०८

१. भगतराम तोशनीवालने अपने पत्रमें लाहौरके नये बूचड़खानेके विरुद्ध गांधीजीसे एक वक्तव्य जारी करनेका अनुरोध किया था। वह बूचड़खाना बड़े पैमानेपर बन रहा था और बन जानेपर वह संसार-भरमें दूसरे नम्बर पर होता।

२२९. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

तीथल, बलसाड़
२१ मई, १९३७

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। बलवन्तसिंह, लीलावती आदि सभीके साथ पूर्ण सौहार्द स्थापित करो, तब तुम्हारे पत्रोंकी सार्थकता सिद्ध होगी। कम सोचो, कम बोलो, कम लिखो, काम बहुत करो, और विचार, भाषा, लेखन तथा आचरणमें सामंजस्य स्थापित करो। जिन पत्रोंका जवाब देना है, उन्हें मैंने पास रख लिया है। जवाब दे सका, तो दूंगा, वर्ना वहीं बात करेंगे। अभी यहाँ काम बढ़ गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५८३) से। सी० डब्ल्यू० ७०१३ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

२३०. पत्र : लीलावती आसरको

२१ मई, १९३७

चि० लीला,

तेरा पत्र मिला। मैं जानता हूँ कि तू अधीर हो रही है, लेकिन मैं लाचार हो गया हूँ। ११ को वहाँ[1] पहुँचनेकी आशा कर रहा हूँ। धीरजका फल मीठा होता है। तू यहाँ तपनेके लिए आई है, मर्जा करने नही। "अनबूडे बूडे, तिरे जो बूडे सब अंग।" ध्रुवने असह्य दुःख हँसते-हँसते झेले थे, ऐसा माना जाता है। जोन ऑफ आर्क हँसते-हँसते जल गई थी, यह ऐतिहासिक बात है। आज भी कई स्त्रियाँ उत्साहके पागलपनमें चितामें कूद पड़ती है न? मुझसे तो सीखनेकी बड़ी सीख ही यह है, और मेरे पास क्या है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६२) से। सी० डब्ल्यू० ६६३७ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१. सेगाँव।

२३१. पत्र : के० बी० मेननको[1]

[२२ मई, १९३७ के पूर्व][2]

आपने मुझे बताया कि लन्दनमें ५ जूनको नागर स्वतन्त्रता परिषद् (कॉन्फ्रेंस ऑन सिविल लिबर्टीज)का सम्मेलन[3] होगा। ऐसी कोई भी चीज जिससे कहीं भी नागर स्वतन्त्रताओंकी रक्षा होती हो, उसे समझदार लोगोंकी सहानुभूति और समर्थन मिलना ही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-५-१९३७

२३२. त्रावणकोर बनाम कोचीन

केरल हरिजन सेवक संघके सचिव श्री जी० रामचन्द्रन् द्वारा तैयार की गई कूडलमाणिकम-विवादके विषयमें एक प्रामाणिक और सुविस्तृत टिप्पणी[4] पाठकोंको अन्यत्र मिलेगी। टिप्पणी प्रामाणिक इस दृष्टिसे है कि वह विशुद्ध रूपसे सरकारी ब्योरोंपर ही आधारित है। त्रिवेन्द्रम स्थित केरल हरिजन सेवक संघके कार्यालयसे प्राप्त निम्न ब्योरा इस टिप्पणीमें और जोड़ दीजिए :

> 'हरिजन' के ८ मईके अंकमें प्रकाशित महात्माजीके लेख 'कोचीन-त्रावण कोर'[5] के तीसरे अनुच्छेदमें नीचे दिये गये वाक्य मिले हैं:
>
> "भारतके पंडितोंको शान्तचित्त होकर इन आदेशोंकी जाँच करनी चाहिए और अपनी निष्पक्ष सम्मति व्यक्त करनी चाहिए। मेरा अपना विचार यह है कि त्रावणकोर-दरबारको, कोचीन-आदेश धार्मिक दृष्टिसे उचित है या नहीं, इस एक प्रश्नपर पंडितोंकी सम्मति प्राप्त करनी चाहिए और उसके अनुसार चलनेका वचन देना चाहिए। दूसरे शब्दोंमें, त्रावणकोर यह प्रस्ताव रख सकता है कि वह एक ऐसे पंच-फैसलेको माननेको तैयार है जिसमें सभीको स्वीकार्य निष्पक्ष पंडित हों। इस तरहके पंडितोंकी एक परिषद् की सम्मति पंच-फैसलेके

१. इंडियन सिविल लिबर्टीज यूनियनके महासचिव।
२. यह पत्र "बम्बई, २२ मई" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
३. यह सम्मेलन इंग्लैंडमें 'नेशनल कौंसिल फॉर सिविल लिबर्टीज' तथा 'इंडिया लीग' के तत्वावधानमें हुआ था।
४. देखिए परिशिष्ट ५।
५. देखिए पृ० १८९-९०।

बहुत निकट की बात होगी। कारण, कि त्रावणकोर-दरबारको इस बातका तो पूरा अधिकार है कि वह ऐसे मन्दिरोंको जिनपर केवल उसीका अधिकार और स्वामित्व है, पंडितोंकी सम्मति लिये बिना, हरिजनोंके लिए खोल दे, पर जो मन्दिर संयुक्त अधिकार-क्षेत्रके अन्तर्गत आते हैं, उनके बारेमें एक नई व्यवस्था देना कदाचित् ही ठीक हो।"

मैं कोचीनके मुख्य न्यायालयके फैसलेकी एक सत्य प्रतिलिपि प्रस्तुत कर रहा हूँ जिसमें कूडलमाणिकम मन्दिरके बारेमें कैमलकी स्थितिकी चर्चा है। यह फैसला कैमलको उस मन्दिरसे सम्बन्धित सभी मामलोंमें सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक अधिकारी बताता है। इसलिए, इस विषयमें पंडितोंका मत अनावश्यक जान पड़ता है।

इससे पाठक कोचीन-दरबारकी कार्यवाहीके औचित्यके विषयमें खुद फैसला कर सकते हैं। यदि टिप्पणी और कोचीन-न्यायालयके फैसलेपर विश्वास किया जाये, तो यह स्पष्ट है कि कोचीन-दरबारकी कार्यवाही बिलकुल गलत थी। इसका यह मतलब नहीं कि कैमलकी कार्यवाही धार्मिक दृष्टिसे सही थी। यदि नहीं थी तो कोचीन-दरबारके लिए एकमात्र रास्ता कैमलके साथ शास्त्रार्थ करना ही था, उसे बाध्य करना नहीं था, जैसाकि किया गया। त्रावणकोर-दरबार द्वारा उसकी नियुक्तिके पश्चात् वह धार्मिक मामलोंमें सर्वोच्च और अन्तिम अधिकारी बन जाता है। राजाके समान वह कोई गलती कर ही नहीं सकता। किन्तु वह भी अपने समकक्षोंके मतका विरोध अधिक देरतक नहीं कर सकता। मेरा खयाल है कि कोचीन-दरबारके अथवा किसीके लिए भी कैमलके फैसलेको प्रभावित करनेका एकमात्र रास्ता यह है कि आध्यात्मिक विषयोंके विद्वान पंडितोंकी राय ली जाये। कानूनी तौरसे तो उनकी राय भी कैमलको बाध्य नहीं कर सकती।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-५-१९३७

२३३. धार्मिक शपथ और गैर-धार्मिक शपथ

बनारसके महान समाजसेवी श्री शिवप्रसाद गुप्त लिखते हैं:

पहली मईका 'हरिजन' जबसे मुझे पढ़कर सुनाया गया है, तभीसे मैं उसकी "गांधी सेवा संघ और विधान-सभाएँ" शीर्षक टिप्पणीपर सोच-विचार कर रहा हूँ। आज मैंने उसे फिर पढ़ा और 'साप्ताहिक पत्र' भी पढ़ा, पर मेरे मनमें जो उथल-पुथल मच रही है, वह शान्त नहीं हुई।

टिप्पणीके अन्तिम अनुच्छेद[1] में लिखा है: "जहाँ तक मैं संविधानको समझता हूँ, यह कोई धार्मिक शपथ नहीं है और इसका हमारी तुरत और मूर्त स्वराज्यकी माँगसे जरा भी विरोध नहीं है।" इसपर मेरे मनमें निम्नलिखित प्रश्न उठ रहे हैं:

१. देखिए पृ० ११५।

१. क्या शपथें कई और विभिन्न प्रकारकी होती है?

२. ईश्वरके नाम पर ली गई शपथ या वैकल्पिक रूपमें ली गई ऐसी शपथ, जिसमें कि व्यक्तिको सत्यनिष्ठासे प्रतिज्ञा करनी होती है, क्या 'धार्मिक शपथ और गैर-धार्मिक शपथ' इन दो श्रेणियोंमें वर्गीकृत की जा सकती है?

३. गैर-धार्मिक शपथके पीछे निर्णायक विचार क्या होता है?

४. स्वयं सम्राटके प्रति निष्ठाकी शपथ "तुरत और मूर्त स्वराज्यकी माँग" के भला किस तरह अनुरूप हो सकती है? इस माँगका अर्थ तो, कमसे-कम मेरे लिए, उस प्रभुत्व-सम्पन्न सम्राटको उसकी प्रभुसत्तासे वंचित करना है।

मेरी बड़ी इच्छा है कि आप इन प्रासंगिक प्रश्नोंका उत्तर देनेकी कृपा करें।

पहले और दूसरे प्रश्नका मेरा उत्तर है, 'हाँ'। अन्य दो प्रश्नोका उत्तर जो-कुछ मै नीचे लिख रहा हूँ, उसमें से निकाला जा सकता है।

ईश्वरके नामपर ली गई शपथ भी ऐसी हो सकती है जो धार्मिक न कही जा सके। गवाह अदालतमें जो शपथ लेता है, वह धार्मिक नही कानूनी शपथ होती है, जिसे तोड़नेके कानूनी परिणाम होंगे। ससदके सदस्य जो शपथ लेते है, उसे धार्मिक नही, संवैधानिक शपथ कहा जा सकता है, जिसे तोड़नेके लौकिक परिणाम हो सकते है। धार्मिक शपथको तोड़नेके कोई कानूनी परिणाम नही होते, पर शपथ लेनेवालेकी रायमें उसका दैवी दण्ड मिलता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि शपथके इन तीन प्रकारोमें से कोई भी किसी विवेकशील मनुष्यके लिए दूसरोसे कम बन्धनकारी होता है। विवेकशील गवाह कानूनी परिणामोके डरसे नही, बल्कि हर हालतमें सच ही बोलेगा। विधायककी शपथकी व्याख्या सम्बन्धित सविधानके अनुसार होती है, जो कि उस शपथको निर्धारित करता है। वह व्याख्या खुद सविधानमें दी जा सकती है, या फिर चलनसे विकसित हो सकती है। जहाँ तक ब्रिटिश संविधानको मैं समझ सका हूँ, निष्ठाकी इस शपथका अर्थ केवल इतना ही है कि विधायक अपनी नीति और दृष्टिकोणके अनुसार कार्य करते हुए सविधानका पाबन्द रहे। मेरी यह धारणा है कि विधायक, ब्रिटिश सविधानके अधीन ली गई अपनी शपथका पालन करते हुए, विधान-सभामें पूर्ण स्वाधीनताके लिए कार्य कर सकता है। मेरे विचारसे ब्रिटिश सविधानकी यही सबसे बड़ी अच्छाई है। मेरा ऐसा खयाल है कि दक्षिण आफ्रिकाकी संघीय संसदके सदस्य जो शपथ लेते है, वह तत्वत: वही शपथ है जो भारतमें सदस्योको लेनी होती है। परन्तु वह संसद आज निष्ठाकी शपथको किसी भी तरह तोड़े बिना पूर्ण स्वतन्त्रताकी घोषणा कर सकती है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि ब्रिटिश सविधान सिद्धान्तत: व्यक्तिको या राष्ट्रको, जिसका कि वह सदस्य है, अपनी सर्वोच्च आकांक्षा पूरी करने देता है। इसीलिए मैंने कार्य-समितिको यह सलाह दी है कि वह मन्त्रि-पद स्वीकार करनेके लिए मेरा फार्मूला मान ले। और उसी विश्वासके बल पर मैं इस बातकी जी-तोड़ कोशिश कर रहा हूँ कि ब्रिटिश सरकार भी उसके प्रति अपनी अनुकूल प्रतिक्रिया दिखाये। मै इस दु:खद तथ्यसे भी अभिज्ञ हूँ कि वे इस यन्त्रणाको चरमावस्था

तक पहुँचायेंगे। पर मैं यह जानता हूँ कि यदि हममें आस्था और धैर्य रहा तो हम हर मुद्देपर जीतेंगे और खूनकी एक बूंद भी बहाये बिना अपने लक्ष्य तक पहुँच जायेंगे। अंग्रेज फुटबॉलके खेलपर, जिसे मैं उनकी ईजाद मानता हूँ, जो नियम लागू करते हैं, वही राजनीतिके खेलपर भी करते हैं। वे प्रतिपक्षीको न तो कोई छूट देते हैं और न उससे कोई छूट माँगते हैं। पर हमारे मामलेमें मूल अन्तर यह है कि हमने शस्त्रोपयोग त्याग दिया है। इससे वे उलझनमें पड़ गये हैं। हमारी घोषणाओंपर उन्हें विश्वास नहीं है। पूर्ण स्वतन्त्रताके हमारे आन्दोलनकी, जब तक हम उसे संविधानकी सीमामें रखते हैं, उन्हे कोई फिक्र नहीं है। और विधायक अपनी विधान-सभाओंमें इसके अतिरिक्त और कर ही क्या सकते है और उन्हें करना ही क्या है? अपनी जेबोंमें वे पिस्तौल तो ले नहीं जायेंगे। वैसा करना उस शपथका और कानूनका स्पष्ट उल्लंघन होगा। श्री शिवप्रसाद गुप्तको कांग्रेसियो द्वारा ली जाने-वाली शपथके औचित्यके बारेमें परेशान नहीं होना चाहिए। पूर्ण स्वतन्त्रताका आन्दो-लन यदि उस शपथके प्रतिकूल होता, तो यह निश्चित था कि ब्रिटिश सरकार खुद कांग्रेसियोके चुनावके लिए खड़े होने तक पर शुरूमें ही आपत्ति करती।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-५-१९३७

२३४. पत्र : मु० अ० जिन्नाको

तीथल
२२ मई, १९३७

प्रिय श्री जिन्ना,

श्री खेर[1] ने आपका सन्देश मुझे दिया है। कितना अच्छा होता कि मैं कुछ कर सकता, लेकिन बिलकुल लाचार हूँ। एकतामें[2] मेरा विश्वास जैसा ज्वलन्त पहले कभी था, उतना ही आज भी है, हाँ बात इतनी है कि इस अभेद्य अन्धकारमें प्रकाश मुझे दिखाई नहीं देता है और ऐसी परेशानीके समयमें प्रकाशके लिए मैं ईश्वरको गुहारता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

फाइल सं० ३००१/एच०/४-८/३८, पुलिस आयुक्त कार्यालय, बम्बई; सौजन्य : महाराष्ट्र सरकार। लीडर्स करेस्पांडेंस विद जिन्ना, पृ० ३७ से भी।

१. बी० जी० खेर, जो बम्बई विधान-सभामें कांग्रेस-पार्टीके नेता चुने गये थे।
२. हिन्दू-मुस्लिम एकता।

२३५. पत्र : एन० एस० हर्डीकरको

२२ मई, १९३७

प्रिय डॉ० हर्डीकर,

कल आपका पत्र[1] मिला। मेरा विचार है कि आपको प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके साथ सलाह-मशविरा करना चाहिए और यदि वह सहमत हो तो आप यह विरोध प्रकट करते हुए कि सेवा-दलपर, जिसके कामके लिए भवन निर्मित हुआ था, प्रतिबन्ध अभी भी लगा हुआ है, सम्पत्तिका कब्जा ले लें। कमेटीके साथ सलाह-मशविरा करनेसे पहले यह अच्छा होता कि आप सरकारसे यह पूछ लें कि क्या भवनको हस्तान्तरित करनेका अर्थ दलपर से प्रतिबन्ध हटाया जाना है। जिस समय तक भवनको अधिकारमें लिया जायेगा तब तक जवाहरलाल लौट आये होंगे और वह यह निश्चित करेंगे कि इसे किस उपयोगमें लाया जाये।[2]

आशा है, आप बिलकुल स्वस्थ हो गये होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजीसे : एन० एस० हर्डीकर पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

1. १९ मईके अपने पत्रमें हिन्दुस्तानी सेवा-दलके संगठन-मन्त्री एन० एस० हर्डीकरने बंगलोर स्थित सेवा-दलके भवनका कब्जा लेनेके सम्बन्धमें गांधीजीकी सलाह माँगी थी। १९३२ में सरकारने भवन और दूसरी चल सम्पत्तिको, जिनका उपयोग सेवा-दलके स्वयंसेवकोंके लिए प्रशिक्षण-शिविरके रूपमें किया जाता था, जब्त कर लिया था। १९३१ में सेवा-दलको कांग्रेसकी अधीनस्थ संस्थाके रूपमें मान्यता मिल जानेके बाद अ० भा० कां० कमेटी की इस सम्पत्तिको कर्नाटक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीको हस्तान्तरित कर दिया गया था। भवनके उपयोगके सम्बन्धमें हर्डीकरको कुछ शंकाएँ थीं, क्योंकि सेवा-दलपर लगा प्रतिबन्ध अभी तक हटाया नहीं गया था।

2. १४ जूनको उत्तर लिखते हुए एन० एस० हर्डीकरने कहा था कि बम्बई-सरकारके कथनानुसार प्रतिबन्ध "अभी भी जारी" है। उसने यह भी कहा कि जैसाकि अ० भा० कां० कमेटी चाहती है, कर्नाटक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने "भवनका उत्तरदायित्व लेनेके लिए" उसे अधिकार प्रदान किया है। लेकिन ६ जुलाईके अपने पत्रमें हर्डीकरने गांधीजीको बताया कि चूँकि भवन ठीक हालतमें नहीं है इसलिए वह भवनको लेनेके लिए इच्छुक नहीं है। अतएव उसने निरीक्षकको लिखा : "...जब तक सरकार भवनकी पूरी और यथोचित मरम्मत नहीं करेगी, मैं कथित सम्पत्तिका उत्तरदायित्व नहीं ले सकता।..." देखिए "पत्र : एन० एस० हर्डीकरको", १३-७-१९३७ भी।

२३६. पत्र : प्रभावतीको

तीथल, बलसाड़
२२ मई, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तू अपनी तबीयत मत बिगाड़ लेना। हजारीबाग हो आई, यह अच्छा हुआ। सरदारने तो यही माना था कि कम समयकी सजावाले कैदियोको छोड़ ही दिया जायेगा।

तुझे मैंने इलाहाबाद नही बुलाया, क्योंकि वह शायद जयप्रकाशको अच्छा न लगता। अकारण उसे नाराज करना मुझे नही रुचता। जहाँ तक हो सके, उसके अनुकूल बने रहना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।

पिताजीके पास जितना रहते बने, रह, वह ठीक है। उन्हे तेरी मदद तो खूब मिलेगी ही। उनसे तुझे साहसपूर्वक कहना चाहिए कि चिन्ता बिलकुल न करे। चिन्ताका कारण भी समझना चाहिए।

तुझे सिताब दियारा क्यो बुलाया है? सिताब दियारामें गर्मी ज्यादा पडती है या कम? साग-भाजीका सुभीता कहाँ ज्यादा रहेगा? मनु अब राजकोट गई। सेगाँवमें तो इस समय बस वसुमती, विजया, लीलावती, नानावटी, मुन्नालाल और बलवन्तसिह हैं। वहाँ गर्मी काफी पड़ती है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

हम लोग यहाँसे ३० को रवाना होगे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०२) से।

२३७. पत्र : नारणदास गांधीको

२२ मई, १९३७

चि० नारणदास,

चि० कमूको इस महीनेसे ही यानी पहली तारीखसे तीस रुपये भेज दिया करना। इसमें से जो-कुछ भी शालाके खातेमें डाला जा सके, डालना; बाकी सब मेरे खातेसे लेते रहना।

कमलाबाईकी तबीयत अभी भी अच्छी हो गई हो, ऐसा नहीं लगता। उसने, जब तक मैं सेगाँव पहुँचूं, तब तक वहाँ रहनेकी इच्छा प्रकट की है, और मैंने उसकी बातको स्वीकार कर लिया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५२२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

२३८. भाषण : तीथलमें[1]

२२ मई, १९३७

यदि हम ग्रामीणोकी जरूरतोकी दृष्टिसे सर्वाधिक अनुकूल शिक्षा प्रदान करना चाहते हैं तो हमें विद्यापीठ गाँवोमें ले जाना चाहिए। हमें उसे प्रशिक्षण-विद्यालयमें बदल देना चाहिए ताकि हम शिक्षकोको ग्रामवासियोकी जरूरतोको ध्यानमें रखते हुए व्यावहारिक प्रशिक्षण दे सकें। आप शिक्षकोको ग्रामवासियोकी जरूरतोके विषयमें

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत। अपने विवरणमें महादेव देसाईने लिखा था : "२२ मईको तीथलमें गुजरात राष्ट्रीय विद्यालयोंके शिक्षकोंका एक छोटा-सा सम्मेलन हुआ था। संयोजकने आमंत्रित शिक्षकोंको एक प्रश्नावली भेजी थी, जो अपने-आपमें स्पष्ट है : '(१) वह कौन-सी शिक्षा है जो गाँवोंकी आवश्यकताओंके सबसे अधिक अनुकूल और उनके लिए सबसे अधिक लाभदायक है? (२) ग्राम जनताकी निरक्षरता और अज्ञानताका निराकरण किस प्रकार किया जाये? (३) क्या बौद्धिक विकासके लिए साक्षरता अनिवार्य है? क्या शिक्षाका आरम्भ वर्णमाला और पढ़ना-लिखना सिखानेसे करनेकी पद्धति बौद्धिक विकासके लिए हानिकर है? (४) उद्योग-धन्धोंकी तालीमको सारी शिक्षाका केन्द्र-बिन्दु बनानेकी आवश्यकता। (५) आधुनिक राष्ट्रीय विद्यालयोंका भविष्य। (६) पूरी शिक्षा बच्चोंकी मातृभाषामें ही प्रदान करनेकी सम्भावना। (८) विद्यमान विद्यालयोंमें राष्ट्रीय शिक्षाके किन अनिवार्य तत्वोंकी कमी है? (८) प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षणके प्रारम्भिक वर्षोंमें हिन्दी-हिन्दुस्तानीको अनिवार्य बनानेकी आवश्यकता।' इन मुद्दों पर अपने विचार व्यक्त करनेके लिए आमन्त्रित किये जानेपर गांधीजीने यह भाषण दिया और अपनी बात समझानेके लिए कुछ व्यक्तिगत उदाहरण भी दिये। मैं उदाहरणोंको छोड़कर यहाँ केवल भाषणका संक्षेप दे रहा हूँ, क्योंकि वे उदाहरण उपस्थित श्रोताओंके लिए तो रोचक थे, परन्तु आम पाठकोंके लिए उनका कोई उपयोग नहीं है।"

शहरमें स्थित प्रशिक्षण-विद्यालयके द्वारा नहीं पढा सकते और न ही इस तरह उनमें गाँवोकी हालतके प्रति रुचि ही पैदा कर सकते हैं। शहरवासियोमें गाँवोके प्रति रुचि पैदा करना और उन्हे गाँवोमें रहनेके लिए राजी करना सरल बात नही है। मेरे इस निष्कर्षकी पुष्टि सेगाँवमें रोज हो रही है। मै निश्चित रूपसे यह नहीं कह सकता कि सेगाँवमें एक वर्ष तक रहनेसे हम देहाती बन गये हैं या कि सार्वजनिक हितके लिए हम उनके साथ एक हो गये है।

फिर, प्राथमिक शिक्षणके विषयमें मेरा सुनिश्चित मत यह है कि वर्णमाला पढ़ाने और लिखना-पढ़ना सिखानेसे प्रशिक्षणका प्रारम्भ करना बालकोके बौद्धिक विकासमें रुकावट डालना है। मै उन्हें वर्णमाला तब तक नही पढ़ाऊँगा जब तक कि वे इतिहास, भूगोल, जबानी हिसाब और कातनेकी कलाका प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त न कर ले। इन तीनोके माध्यमसे मुझे बालकोकी बुद्धिका विकास करना चाहिए। यहाँ यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि तकली अथवा चरखेके माध्यमसे बुद्धिका विकास कैसे साधा जा सकता है? लेकिन सच तो यह है कि यदि इन्हें महज यान्त्रिक ढगसे न सिखाया जाये तो इसके द्वारा बुद्धिका विकास आश्चर्यकी सीमा तक साधा जा सकता है। जब आप बच्चेको हरेक प्रक्रियाका कारण बतायेंगे, तकली और चरखेकी यान्त्रिक रचना स्पष्ट करेंगे, कपासका इतिहास और सभ्यताकी प्रगतिसे उसका सम्बन्ध बतायेंगे उसे, गाँवके खेतोमें जहाँ कि कपास उगाया जाता है, ले जायेंगे; काते हुए सूतके तार गिनना और उसकी मजबूती तथा समानता आदि जाननेकी रीति सिखायेंगे, तब आप बच्चेमें विषयके प्रति दिलचस्पी पैदा करेंगे और साथ-ही-साथ उसके हाथों को, आँखोको और मस्तिष्कको प्रशिक्षित बनायेंगे। इस प्रारम्भिक प्रशिक्षणके लिए मैं छ महीने देना चाहूँगा। सम्भवत बच्चा तब तक यह सीखनेके लिए तैयार हो गया होगा कि वर्णमाला किस तरह पढ़ी जाये और जब वह उसे तेजीसे पढने लगेगा तो सरल चित्रकारी भी सीखनेके लिए तैयार हो चुकेगा और जब वह ज्यामितिकी आकृतियाँ और पक्षियोके चित्र आदि खीचना सीख लेगा तो वह वर्णमालाके अक्षर टेढे-मेढे नहीं लिखेगा। मैं अपने बचपनके उन दिनोकी याद कर सकता हूँ जब मुझे वर्णमाला सिखाई जा रही थी। मै जानता हूँ, वह कितना बडा बोझ था। किसीको इस बातकी चिन्ता नही थी कि मेरी बुद्धिको जग क्यो लग रहा है। लिखावटको मैं ललित कला समझता हूँ। छोटे बालकोपर वर्णमालाको लादकर और उसे पढ़ाईमें प्रारम्भिक स्थान देकर हम इस ललित कलाको खत्म कर देते हैं। इस प्रकार हम लिखावटकी कलाकी हिंसा करते है और जब हम उसे समयके पहले वर्णमाला सिखानेकी कोशिश करते हैं, तब हम बालकके विकासको अवरुद्ध करते हैं।

वास्तवमें मेरी रायमें जिस चीजपर हमें खेद होना चाहिए और जिसके लिए हमें लज्जित होना चाहिए, वह निरक्षरता नहीं, अज्ञान है। अत प्रौढोकी शिक्षाके लिए भी मैं इस अज्ञानको दूर करनेमें समर्थ एक गहन कार्यक्रम चाहूँगा। यह कार्यक्रम सावधानीसे चुने गये शिक्षको द्वारा कार्यान्वित किया जायेगा और उसके लिए उतनी ही सावधानीसे चुना हुआ पाठ्यक्रम भी होगा जिसके अनुसार वे शिक्षक उन प्रौढ़

ग्रामवासियोंको शिक्षा देंगे। इसका यह मतलब नहीं है कि मैं उन्हें वर्णमालाका ज्ञान नहीं दूंगा। मैं उसे इतना ज्यादा महत्त्व देता हूँ कि शिक्षाके माध्यमके रूपमें मैं न तो उसकी निन्दा कर सकता हूँ और न उसकी इस उपयोगिताको तुच्छ ही मानता हूँ। वर्णमालाको सरल बनानेमें प्रो० लॉबैकके कठिन परिश्रमकी और इसी दिशामें प्रो० भागवतके महत् व्यावहारिक योगदानकी भी मैं तारीफ करता हूँ। प्रो० भागवतको, वे जब भी चाहें, सेगाँव आने, और वहाँके पुरुषों, महिलाओं और यहाँ तक कि बच्चोंपर भी अपनी कलाका प्रयोग करनेके लिए मैंने आमन्त्रित किया है।

शिक्षाके मध्यबिन्दुके रूपमें ग्रामीण हस्तउद्योगोंके प्रशिक्षणकी आवश्यकता और उसके महत्वके विषयमें मुझे कोई सन्देह नहीं है। भारतीय शिक्षा-संस्थाओंमें जो पद्धति प्रचलित है, उसे मैं शिक्षा नहीं कहता। यह व्यक्तिके सर्वश्रेष्ठ गुणोंको उभारना नहीं बल्कि बुद्धिके साथ भ्रष्टाचार करना मात्र है। वह जैसे-तैसे मस्तिष्कमें कुछ जानकारी भर देती है, जबकि बिलकुल प्रारम्भसे ही मुख्य तथ्यके रूपमें ग्रामीण हस्तउद्योगोंके माध्यमसे मस्तिष्कको प्रशिक्षित करनेकी पद्धति मस्तिष्कका सच्चा और अनुशासनबद्ध विकास सिद्ध करेगी, जिसके फलस्वरूप बौद्धिक और अप्रत्यक्ष रूपसे आध्यात्मिक शक्तिकी भी रक्षा होगी। यहाँ भी यह न समझा जाये कि ललित कलाओंके महत्वको मैं कम कर रहा हूँ, किन्तु मैं उन्हें गलत स्थान नहीं दूंगा। गलत स्थानपर रखी हुई चीज ही कूड़ा-कचरा है, यह कथन बिलकुल ठीक है। जो-कुछ मैं कह रहा हूँ, उसके प्रमाणके लिए मैं उस वाहियात और भद्दे साहित्यका दृष्टान्त दूंगा जो हमारे बीच तेजीसे बढ़ता जा रहा है, जिसके परिणाम हर आदमी देख सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-६-१९३७

२३९. ग्राहकोंकी सूची

श्री जेराजाणी लिखते हैं:[1]

यह सूचना विचारणीय है। हरेक केन्द्रमें ग्राहकोंकी सूची रखी हो तो वह उपयोगी हो सकती है। शंका ऐसी सूचीकी व्यावहारिक शक्यताके विषयकी ही है। जो सूची जल्दी, सम्पूर्ण, और बहुत थोड़े खर्चेमें या खर्चा बढ़ाये बगैर तैयार हो सके, उसे मैं व्यावहारिक सूची मानता हूँ। कारीगरोंकी सूची बनाना मुश्किल नहीं है और सामान्यतया कहा जा सकता है कि जिन कारीगरोंका नाम रजिस्टरमें चढ़ा लिया गया, वे हमेशा काम करेंगे, पर ग्राहक तो रोज बदलते रहते हैं। आज जो मनुष्य एक आनेकी खादी खरीद ले जाता है, वह फिर आयेगा ही, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। पर यदि सम्पूर्ण सूची रहे, तो ऐसे ग्राहकका नाम भी लिख लेना

१. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने सुझाया था कि अगर ग्राहकोंकी उनके नाम और पतेके साथ सूची रखी जाये तो वह लाभदायक सिद्ध होगी।

चाहिए। इसकी उपयोगिता क्या है? तब क्या अमुक प्रकारके ही ग्राहकोंकी सूची बनाई जाये? ऐसी सूचीको उपयोगी बनानेके लिए उसे अकारादि क्रमसे तैयार करना चाहिए। ऐसा करनेमें खर्च करना ही पड़ेगा। क्या उनकी सूची बनाई जायें, जो हर साल अमुक चन्दा जमा करें? यदि हाँ, तो उन्हें क्या लाभ पहुँचाया जाये? मुझे इस विषयमें कुछ अनुभव नहीं, इसलिए मैं तो इस प्रकारके प्रश्न ही करना जानता हूँ। श्री जेराजाणीकी इस सूचनापर चर्चा हो जाये, इसलिए मैंने इसे प्रकाशित किया है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-५-१९३७

२४०. बहुत पुराने प्रश्न

मेरे पास एक पत्र आया है, उसका सार यह है :

> हमारे देशमें रंग बिलकुल नहीं बनते। हमारे यहाँ जो खादी बिक रही है, उसमें तरह-तरहकी रंगीन खादी देखनेमें आती है। ये रंग तो विदेशी ही होते होंगे। समझमें नहीं आता कि यह कैसे पुसाता होगा। हिन्दुस्तानमें रंग बनाना अशक्य तो नहीं ही है, तो फिर खादी-जैसी पवित्र वस्तु विदेशोंके रासायनिक रंगोंसे क्यों रँगी जाये? राष्ट्रीय कारणोंसे खादी हम हिन्दुस्तानियोंकी दृष्टिमें श्रेष्ठ वस्तु भले ही समझी जाये, पर उसे हम मलमल-जैसा बारीक क्यों न बनायें? एक जमानेमें तो सारी दुनियाके लिए मलमल हिन्दुस्तानमें ही बनती थी।

इन तीनों प्रश्नोंपर, जब 'नवजीवन' निकलता था, तब अच्छी तरह चर्चा हुई थी। साधारण तौरपर आज इन प्रश्नोंको कोई नहीं उठाता। पत्र-लेखकने इसका उत्तर 'हरिजनबन्धु' की मार्फत ही चाहा है इसलिए उक्त प्रश्नोंके उत्तर मैं यहाँ दे रहा हूँ।

१९१८ की सालमें जब मैंने खादीको स्वदेशीका मध्यबिन्दु माना, तबसे मैं कहता आ रहा हूँ कि विदेशीसे द्वेषके कारण हम स्वदेशीका व्रत न पालें, बल्कि स्वदेशीके मूलमें सिर्फ स्वदेशके हितका ही विचार होना चाहिए। इसलिए जिस विदेशी वस्तुको देशमें हम तुरन्त न बना सकें, देशको जिसकी जरूरत हो और जिसे दाखिल करनेसे देशको कोई हानि न पहुँचे, उस वस्तुको अवश्य स्वीकार कर लिया जाये। ऐसी विदेशी वस्तुओंके उदाहरण तो सभी दे सकते हैं। खादीके प्रचारके सम्बन्धमें आरम्भ-कालमें ही रंगका यह प्रश्न उपस्थित हुआ था। उस समय चरखा-संघका जन्म भी नहीं हुआ था। मैंने तब यह राय दी थी कि जहाँ देशी रंग न मिल सके वहाँ विदेशी रंगका इस्तेमाल करनेमें जरा भी अड़चन नहीं होनी चाहिए। पर जहाँ तक हो सकता है वहाँ तक देशमें अच्छे रंग बनाने और उन्हें काममें लानेकी नीति आज भी चलाई जा रही है। देशी रंगोंके प्रयोग हो रहे हैं। सुविधानुसार उनका उपयोग भी किया जाता है।

जो विदेशी रंगका इस्तेमाल नहीं करना चाहता, वह सफेद खादी पहनकर अपना काम चला लेता है। खादीका प्रचार खादीके लिए नहीं किया जा रहा है और न बगैर सोचे-विचारे ही। खादी-विज्ञानके पीछे विचारश्रेणी यह है: अगर हिन्दुस्तान खादीको ही काममें लाये, तो करोड़ों कत्तिनों, लाखों जुलाहों, धुनियों, धोबियों, रंगरेजों आदिको रोजी मिल सकती है, और करोड़ों रुपया हिन्दुस्तानका हिन्दुस्तानमें रहने लगे और वह उन ग्रामवासियोंकी जेबमें जाने लगे जो अधभूखे रहते हैं और जिनका आधा या सारा समय बेकारीमें जाता है। चरखा-संघने बहुत थोड़ी पूंजी लगाकर खादीके कारीगरोंकी जेबमें अब तक लगभग साढ़े तीन करोड़ रुपया पहुँचाया है। शहरके सौ-दो सौ या दस-बीस हजार आदमियोंको अगर इतना रुपया दिया होता तो आज उसकी तारीफके नगाड़े बजते। पर लाखों भूखों मरते हुए ग्रामवासियोंके घरमें इतना पैसा बगैर किसी शोरोगुलके पहुँचा है, इसलिए किसीको आश्चर्य नहीं होता। मगर मेरी *दृष्टिसे तो यह एक छोटा-सा चमत्कार ही है। विदेशी रंगके इस्तेमालसे किसीके* धन्धेको नुकसान नहीं हुआ, कोई नया धन्धा बन्द नहीं हुआ, और खादीको प्रोत्साहन मिला है। रासायनिक रंग हिन्दुस्तानमें बन सकते हैं, यह मैं मानता तो हूँ, पर यह एक नया और स्वतन्त्र धन्धा है। किन्तु ऐसा साहस करनेका कर्तव्य धनी व्यक्तियोंका है। ऐसे साहसके काम खादी-सेवकोंके क्षेत्रसे बाहर हैं।

मलमल-जैसी खादी तो आज भी जितनी चाहिए, उतनी बनती है। पाटणके रेशमी वस्त्र किसीको पहनने हों तो अब भी मिल सकते हैं। पर उनकी कीमत देनेवाले उदार ग्राहक बहुत कम हैं। यदि कोई यह आशा रखे कि मिलोंमें तैयार होनेवाली मलमल-जैसी और उतनी ही सस्ती खादी बननी चाहिए तो मैं यह कहूँगा कि कारीगरोंके ऊपर जोर-जबरदस्ती किये बगैर ऐसी मलमल हाथसे तैयार कराना अशक्य है; और अशक्य होना चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-५-१९३७

२४१. पत्र : अमृत कौरको

तीथल, वलसाड़
२३ मई, १९३७

प्रिय बागी,

इस समय मैं बहुत ज्यादा व्यस्त हूँ। कितना अच्छा होता यदि रोचक प्रसंगोंका वर्णन करनेके लिए मेरे पास समय होता। यह तो तुम्हारे पत्रकी पहुँचकी सूचना-भरके लिए है। पुनर्रचना-सम्बन्धी तुम्हारी गश्ती-चिट्ठी अच्छी है। मैं उस चिट्ठीको इतने ध्यानसे नहीं पढ़ सका हूँ कि कुछ लाभप्रद सुझाव दे सकूँ।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७८४) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९४० से भी

२४२. पत्र : वल्लभ विद्यालयके विद्यार्थियोंको

२३ मई, १९३७

वल्लभ विद्यालयके बालको,

अपने विद्यालयके नामका गौरव बढ़ाना।

मो० क० गांधी

[गुजरातीसे]

जीवनद्वारा शिक्षण, भूमिका; बापुनी आश्रमनी केलवणी, पृ० ८१ से भी।

२४३. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

२४ मई, १९३७

भाई विट्ठलदास,

जितना तुम्हारे पास हो अथवा जितना तुम भेजना चाहो, उतना फीता निम्न पतेपर उधार भेजना। बहुत करके सब बिक जायेगा। अगर उसमें से कुछ बिका नही तो वापस भेज देंगे। ज्यादा न हो, तो पोस्टल पार्सल भेजोगे न? अगर भेजो, तो पता यह है: श्री राजकुमारी अमृत कौर, मनोरविला, शिमला।

हरजीवन[1] वाली बात समझा। कलकत्तेसे पूछो, और वे कितना वेतन देंगे, आदि भी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

श्री कैलेनबैकके कपड़े सीनेके लिए दर्जी आनेवाला था न?

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७९३) से।

१. हरजीवन कोटक, खादीके एक कार्यकर्ता; देखिए "एक पत्र", ३०-५-१९३७।

२४४. पत्र : अमृत कौरको

तीथल, वलसाड़
२४ मई, १९३७

प्रिय बागी,

अखिल भारतीय चरखा संघकी खादी डिपो, कालवादेवी, वम्बईके जेराजाणीको पत्र लिखा है[1] कि वे आपको फीता बिक्रीके लिए या लौटा देनेके लिए भेजें। तुम्हें भी अपना नमूना या अपनी टीका-टिप्पणी, जिसे वे समझ सकते हैं, भेजनी चाहिए।

इसी तरह तुम्हें अपनी राय गाधी सेवा सेनाके पास भी भेजनी चाहिए।

बेचारा तोफा! तुम्हारे प्रत्येक पत्रमें उसके जिक्र रहते हुए भी मैंने उसके बारेमें सोचा तक नहीं। इसके लिए मैं तुमसे और उससे क्षमा चाहूँगा। यद्यपि कुत्तों और मनुष्योंको मैं बराबर एक-जैसी दृष्टिसे देखता हूँ, फिर भी कुत्तेकी बीमारीसे मुझे उतना महसूस नही हो सकता जितना मनुष्यकी बीमारीसे। लेकिन तुम्हारी खातिर मैं चाहता हूँ कि वह पूरी तरहसे स्वस्थ हो जाये। इस घरेलू बीमारीसे यही नैतिक शिक्षा मिल सकती है कि तुम एक ही समयमें कुत्तेकी तथा आदमीकी सेवा नही कर सकती हो। इसीलिए कुत्तोंको पालतू पशुओंकी तरह घरमें नही रखना चाहिए। यह बात कठोर मालूम हो सकती है, लेकिन है यही ठीक। तुम अपनी वफादारीको दो के बीच नही बाँट सकती।

चुभी हुई फाँसका घाव, एक ऐसे बड़े जख्मसे, जिसमें कि तुम उँगली भी डाल सकती हो, अधिक खतरनाक हो सकता है। इसलिए छोटी तकलीफ समझकर किसी रोगकी अवहेलना मत करो।

सस्नेह,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६०५) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६४१४ से भी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२४५. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

२४ मई, १९३७

चि० मनुडी,

तेरा पत्र मिला। सुरेन्द्रके प्रणाम भी। अब तुझे वहाँ, या कहीं भी, और कितने समय रहना है, यह मैं थोड़े ही कह सकता हूँ। यह निश्चय तो तुझे और सुरेन्द्रको करना है। जहाँ भी रहे, [आश्रमके] नियमोंका पालन करना। चाहे जैसे प्रलोभन उपस्थित हो, चाहे जैसा दवाव पड़े, स्वीकार किये हुए नियमोंको मत तोड़ना। दोनों रोज '१२ वाँ अध्याय'[1] ध्यानपूर्वक पढ़ना और उसपर विचार करना। अब तक दोनोंको वह मुखाग्र हो गया होगा। हरएक मामलेमें व्यवस्था रखनी चाहिए। जल्दीमें कोई काम नहीं करना चाहिए। दो दिन तो यहाँ बहुत लोग रहे। कहा जा सकता है, आज सब खाली हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६६८) से; सौजन्य : मनुबहन सु० मशरूवाला

२४६. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२४ मई, १९३७

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारे पत्रका उत्तर लम्बा देना चाहिए। लेकिन आजकल यहाँ काम इतना अधिक निकल आया है कि लम्बा जवाब देने लायक समय नहीं निकाल पाया। तुम बराबर लिखते रहो; इससे तुम्हारे विचार स्पष्ट होंगे। तब मैं तुम्हें अधिक अच्छी तरह समझूँगा और तुम्हारा ठीक मार्गदर्शन कर सकूँगा। एक बात तो लिख ही दूँ। मैं सेगाँव इससे अधिक नहीं आ सका, अपनी यह कमी मुझे बहुत अखरी है। किन्तु मैंने यह सोचकर सन्तोष किया है कि इसका कारण मेरा आलस्य नहीं था, बल्कि अन्य अनिवार्य काम थे। लेकिन इससे न तो मेरी त्रुटि दूर हो जाती है, न हलकी होती है। हम लोग बिलकुल कुछ नहीं कर सके, यह मेरे कहनेका आशय

१. भगवद्गीता का।

नहीं था; बल्कि यह था कि जो हुआ है, उसकी कीमत बहुत नहीं आंकी जा सकती। और इसमें दोष निकालनेकी तो बात नहीं है, भविष्यका विचार करनेकी बात है, जो तुम कर ही रहे हो। आशा है, उपवासके बारेमें आगे और अधिक जानूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५८१) से। सी० डब्ल्यू० ७०१४ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

२४७. पत्र: अमृतलाल वि० ठक्करको

२४ मई, १९३७

बापा,

यदि जमनालालजी राजी हों, तो तुम जुलाईमें वर्धामें हरिजन-सभाका अधिवेशन करना।

संघकी आर्थिक स्थिति-सम्बन्धी टिप्पणी अभी मिली। अब आज तो क्या पढ़ी जायेगी। अभी यहाँ राष्ट्रीय शिक्षकोंकी सभा हुई थी, इसलिए पत्रोंका ढेर लग गया है। २८ से पहले अपनी राय भेजनेका आश्वासन मैं तुम्हें नहीं दे सकता।

वियोगी हरि[1] लिखते हैं कि 'हरिजन-सेवक' में घाटा बना ही रहता है, और पूछते हैं कि अब क्या किया जाये। घनश्यामदासके साथ बातें हुईं। वे कोई निश्चय नहीं कर पाते। क्या तुम कर सकते हो? कोई कुछ न कर सके, और घाटा बना ही रहे, तो मेरी राय तो तुम जानते ही हो — उसे बन्द कर दो।

बापू

श्री ठक्कर बापा
हरिजन निवास
किंग्जवे, दिल्ली

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११७८) से।

१. वियोगी हरि, प्रसिद्ध हिन्दी कवि और लेखक, तथा हरिजन-सेवक के सम्पादक।

२४८. पत्र : नत्थूभाई एन० पारेखको

२४ मई, १९३७

भाई नत्थूभाई,

तुम्हारा पत्र कान्तिने मुझे दिया है, और तभी मुझे 'वनप्रवेश' (इक्यावनवें वर्षमें प्रवेश) की बात मालूम हुई। मैं भटकता रहता हूँ, तो पत्र भी मेरे पीछे भटकते रहते हैं। तुम्हारा पत्र अभी मुझे नहीं मिला। पत्र जिस रोज आते हैं उसी रोज सबके-सब मेरे पास नहीं आ पाते। यह अच्छा ही है कि तुमने ५० वर्ष पूरे कर लिये। इस अवस्थासे जो लेते बने, वह सब लेकर आगे बढ़ते जाओ। जयन्ती[1] भी आकर मिल गया। इन्दु[2] तो मेरे पास सेगाँवमें ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२४९) से।

२४९. तार : छोटेलाल जैनको

वलसाड
२५ मई, १९३७

छोटेलाल
मगनवाडी
वर्धा

अफसोस, १० जून तक के लिए जाना स्थगित। सेगाँव में सूचना दो। वसुमती मलाड जा सकती है या साबरमती जाते हुए यहाँ आ सकती है। कमलाबाई को बारडोली के रास्ते से राजकोट जाते समय यहाँ आना चाहिए। यदि आवश्यक हो, तो स्वास्थ्य-लाभके लिए नानावटी को मलाड जाना चाहिए।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३३) से।

१ और २. नत्थूभाई एन० पारेखके पुत्र।

२५०. पत्र : विजया एन० पटेलको

तीथल, वलसाड़
२९ मई, १९३७

चि० विजया,

तू इस बीच दुबली हो गई है। ऐसा नहीं होने देना चाहिए। पत्र लिखनेमें आलस क्यों करती है?

मनुभाईके पत्र अब मेरे पास आने लगे हैं। नानाभाई भी यहाँ थे। उनके साथ भी बातें हुई हैं। तेरे आत्म-संयमकी बात नानाभाईको पसन्द आई है, ऐसा मैं समझा हूँ। अतः अब वे मनुभाईको समझा देंगे।

मेरा वहाँ पहुँचना ११ दिन और आगे टल गया, यह मुझे अच्छा नहीं लगा। जहाँ मैं रहता हूँ, वहाँ काम तो होता ही है, लेकिन मेरा सच्चा काम तो वहीं है।

बलवन्तसिंहसे कहना कि उनका पत्र मिल गया है। लेकिन उसके जवाबमें लिखने लायक खास कुछ नहीं है, इसलिए आज तो समय बचाये ही लेता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७०) से। सी० डब्ल्यू० ४५९२ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

२५१. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२९ मई, १९३७

चि० मुन्नालाल,

जो प्रभुकी इच्छा होती है, वही होता है। सरदार १० जून तक मुझे यहाँ से जाने नहीं देंगे। लेकिन मेरा मन वहाँ है। वहाँकी गरम हवा मुझे अच्छी लगती है और यहाँकी शीतल वायु गरम लगती है, क्योंकि मेरा स्थान वहाँ है। आज भी तुम्हारे [पहलेके] पत्रका जवाब नहीं दे पाऊँगा, क्योंकि समय नहीं है और काम बहुत है। तुम गेहूँ खाना शुरू करनेवाले हो, यह बात मुझे बहुत ठीक नहीं लगती।

१. दक्षिणामूर्ति, भावनगरके नृसिंह प्रसाद कालिदास भट्ट।

तुम्हे २-३ महीने बिना गेहूँ यानी विना स्टार्चका भोजन खाये रहना चाहिए। गेहूँ न खानेसे कुछ भी नुकसान होनेकी सम्भावना नही है, और फायदा तो स्पष्ट है।

आज मैंने एक तार[1] भेजा है, वह छोटेलालजीने तुम्हारे पास पहुँचाया होगा। अत. उसके बारेमें यहाँ कुछ नही लिखता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५८२) से। सी०. डब्ल्यू० ७०१५ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

२५२. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

२५ मई, १९३७

चि० नानावटी,

तुम्हारा कोई पत्र आया ही नही, यह तो ठीक नही है। मैंने तो तुम्हें कई पत्र लिखे हैं। मुझपर झूठी दया मत करो। तबीयत खराब ही रहती हो तो कही वायु-परिवर्तनके लिए जाओ। मेरा वहाँ आना टल गया है, इसलिए मैं परेशान हो गया हूँ। पहली तारीखको पहुँचना ही है, ऐसा सोचकर मैं धीरज रखे था। मैंने तार[2] तो किया ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३४) से।

१ और २. देखिए पृ० २५७।

२५३. पत्र : अ० बा० लट्ठेको

तीथल, बलसाड़
२६ मई, १९३७

प्रिय श्री लट्ठे[1],

आपने अच्छा किया जो मुझे पत्र लिखा। मेरे बादवाले वक्तव्योंसे मेरी स्थिति किसी भी रूपमें बदल नहीं जाती है। चूंकि मैं यह मानता हूँ कि, यदि गवर्नरोंके विशेषाधिकारोंकी व्याख्या करनेवाली धारा रद न की गई तो, ऐसी परिस्थितियोंकी कल्पना की जा सकती है, जिनमें हस्तक्षेप आवश्यक हो जाये, इसलिए जब यह पूछा गया कि गवर्नरके हस्तक्षेपका मुकाबला मैं कैसे करूँगा, तब उसके जवाबमें बरखास्तगीवाली तजवीज प्रस्तुत की गई। मैंने कहा कि मैंने ऐसे मन्त्रिमण्डलकी कल्पना नहीं की है जो सदन द्वारा विपक्षमें मतदान किये जानेके सिवा किसी और तरह हटाया ही न जा सके। मैंने कहा, मैं तो ऐसी स्थितिमें गवर्नरों द्वारा मन्त्रि-मण्डलोंके बर्खास्त किये जानेकी बात भी सोचता हूँ, जब कि गवर्नरों और उनके मन्त्रियोंके बीच ऐसा मतभेद पैदा हो जाये जो किसी भी बातचीत द्वारा हल न हो सके। स्वयं त्यागपत्र देनेके बजाय बरखास्तगीको मैंने अच्छा समझा, क्योंकि मैं चाहता था कि इसका भार गवर्नरोंके कन्धोंपर ही बना रहे। इससे विरोध-पक्षकी छेड़छाड़ रुक जायेगी या बहुत कम हो जायेगी और एक ऐसे दलके द्वारा, जो सम्बन्धित अधिनियम तथा ब्रिटिश साम्राज्यवादी नीतिका स्पष्टरूपसे विरोधी है, इन पदोंके उत्तरदायित्वका निर्वाह काफी हद तक आसान बन जायेगा। अब लॉर्ड जेटलैंडने जो प्रस्ताव रखा है, यदि उसमें तथा बरखास्तगीमें बहुत कम अन्तर है, तो निश्चय ही कांग्रेसके झुकनेकी बजाय सरकारको ही यह भेद मिटाना है। मेरी पहलेकी स्थिति कतई बदली नहीं है, यह तो इसी बातसे स्पष्ट हो जायेगा कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके स्वीकृत प्रस्ताव द्वारा जिन आश्वासनोंकी कल्पना की गई है, उन्हें यदि दे दिया गया तो मैं पूरी तरह सन्तुष्ट हो जाऊँगा। कार्य-समिति का अन्तिम स्वीकृत प्रस्ताव अ० भा० कां० कमेटीके स्वीकृत प्रस्तावकी व्याख्या मात्र है। उसमें न तो कोई परिवर्तन हुआ है, न कोई संशोधन। मैं आशा करता हूँ कि यह पत्र आपके पत्रमें उठाये गये सभी मुख्य मुद्दोंको स्पष्ट करता है, किन्तु इसके अलावा भी कुछ हो तो मुझे लिखनेमें संकोच नहीं कीजिएगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७९८२) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. वे बादमें कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल बननेपर बम्बईके वित्तमन्त्री बने।

२५४. पत्र : नारणदास गांधीको

२६ मई, १९३७

चि० नारणदास,

कमलाबाई वहाँ अचानक पहुँच गई। साथका पत्र उसे देना। उसकी शक्तिके अनुसार जो काम उससे लेना हो, लेना। जैसा उसने वचन दिया है, उसके अनुसार सेवा करे, तो वह बहुत काम कर सकेगी। उससे जो प्रश्न पूछना चाहो, पूछनेमें सकोच करनेकी जरूरत नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मुझ तो यहाँ १० तारीख तक रहना पड़ेगा, इसलिए कनूको भी यहाँसे १० को ही रवाना होना चाहिए न?

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५२३ से भी, सौजन्य : नारणदास गाधी

२५५. पत्र : भुजंगीलाल छायाको

२६ मई, १९३७

चि० भुजंगीलाल,

चन्दूभाईकी पुत्रीका पाणिग्रहण कर लिया, यह बहुत अच्छा किया। तेरे पिताजीको तो इससे सन्तोष होगा ही।

मनुके प्रति तेरे आचरणमें मैंने कोई दोष नही पाया। वह तेरी नजर पर चढ़ गई, इसमें तू क्या करता? जैसा एक नवयुवकको उचित था, तूने वह बात मेरे सामने रखी। इसमें तूने कोई मर्यादा भंग की हो, ऐसा मैं नही मानता। तेरे पिताजी सहमत हो जाते, तो मै अवश्य तेरी बात मनुके सम्मुख रखता, और वह मेरी बात मान जाती। लेकिन पिताजीके आशीर्वाद प्राप्त होना असम्भव मानकर तूने अपनी इच्छा दबा ली, और इस प्रकार अपनी और छाया-कुटुम्बकी कीर्ति बढ़ाई है। इस पत्रका तू जो उपयोग करना चाहे, कर सकता है।

भविष्यमें तुझे कौन-सा काम हाथमें लेना है, यह बात विचार करने-जैसी है। लेकिन यह मिलनेपर।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैं यहाँ १० जून तक हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६००) से।

२५६. पत्र : महादेव देसाईको

२६ मई, १९३७

चि० महादेव,

हम क्या जानते हैं? जानकीनाथ तकको खबर नहीं थी कि उन्हें वनवासके लिए जाना पड़ेगा। अमतुस्सलामको भेजना। इन्स्युलिन हम नहीं देंगे, फिर भी मधुमेह ठीक कर देंगे। टांसिल्सके बारेमें देखा जायेगा। मैंने कितना ऊधम मचा रखा था!

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५२१) से।

२५७. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

२६ मई, १९३७

चि० नानावटी,

तुम्हारा पत्र बहुत दिनके बाद मिला। नीमूको यहाँ आये पाँच दिन हो गये। अभी तो वह यहीं रहेगी। भविष्यका कोई निर्णय नहीं किया। अगर गर्मीकी ऋतु सेगाँवमें ही बितानेका आग्रह हो, तो काम कम करके नींद कमसे-कम दस घंटे की लेना — रातको पूरे आठ घंटे और दिनको पूरे दो घंटे — चाहे एक बारमें लगातार या फिर थोड़ा-थोड़ा करके। वजन स्थिर तो रहना ही चाहिए। दर्दका कारण तो स्पष्ट ही कमजोरी है। कटि-स्नान बराबर ले रहे होगे। दूध बढ़ाया जा सके, तो बढ़ाना। फिर रोटीकी भी जरूरत नहीं होगी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

अन्य पत्र लिखनेका समय गंगाबहन झवेरीने ले लिया है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३५) से।

२५८. पत्र : बलवन्तसिंहको

२६ मई, १९३७

चि० बलवन्तसिंह,

तुमारा खत मिला। दूधके बारेमें मुन्नालालसे पूछता हूँ। तुम्हारी दलील सही-सी लगती है। मैं न तुमको निकालूंगा न किसीको। अपने आप भाग जायेंगे उनको रोकुँगा नही। और सबसे यथाशक्ति सेवा भी लूँ। यो तो कुछ न कुछ सब करते है लेकिन मेरे हिसाबसे वह काफी नही है। कभी नही हारना भले सारी जान जावे यह भी मेरे जीवनका एक मत्र है। सबको रहने दिया मैंने अब मैं सबको रुखसत दे दूं तो मैं हारूँ और मूर्ख बनूंगा। मूर्ख बनना आपत्ति नही है ऐसे तो मूर्ख हूँ लेकिन यह आपत्ति होगी। इसलिए हारनेकी बात मैं कैसे सहूँ?

आज किशोरलालभाई और गोमतीबहिन मुबई गये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९०१) से।

२५९. निर्देश : कातनेवालोंको

[२६ मई, १९३७ के पश्चात्][1]

पू० बापुजीको सूचना है कि कांतते हुए जब धागा टूट जाय तो उसको फेंक देनेकी अपेक्षा जोड़ दिया जाय। इससे बिगाड़ कम होगा। उत्तम तो यह है कि ऐसा ही कांता जाय ताकि जोड़नेकामौका पैदा न हो। अक्सर असमान सूत निकलनेसे ही धागा टूटता है। निकलते हुए सूतकी अपेक्षा जिस समय बारीक सूत निकला उसी समय धागेको पूनीमें से तोड़कर बारीक सूतके पास पूनीको रखकर कांतनेका शुरु किया जाय तो बिगाड़ नहीं होगा। मजदूरीसे कांतनेवाले ऐसा ही करते हैं।

बापुजीकी आज्ञासे नानावटी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७३६) से।

१. गांधी स्मारक निधि संग्रहालयमें इस पत्रको "पत्र : अमृतलाल टी० नानावटी", पृ० २६२ के बाद रखा गया है।

२६०. पत्र : अमृत कौरको

तीथल, वलसाड़
२७ मई, १९३७

प्रिय ,बागी,

तुम्हारे पत्रके एक अंशका जवाब महादेव देसाईने दे दिया है।

अम्मुको लिखा गया जवाहरलालका पत्र निर्दोष है। कोमल वचनोंसे महिलाओंका गुजारा नहीं होगा। उनके दृष्टिकोणकी सराहना की जानी चाहिए। पत्रको तुमने बीच न घुमाकर तुमने ठीक किया। यदि आवश्यक हो तो यह पत्र किसी ऐसी सभामें पढ़कर सुनाया जा सकता है जहाँ तुम मौजूद हो, जिससे कि इस पत्रकी वजहसे यदि कोई गलतफहमी होती दीख पड़े तो तुम उसे दूर कर सको। लेकिन जिस प्रकार उनके दृष्टिकोणको समझना आवश्यक है, ठीक उसी प्रकार तुम्हारे लिए भी अपनी मर्यादाएँ जान लेना आवश्यक है। तुम दो शक्तियोंके बीच खड़ी हो। इसलिए तुम्हारी संस्था[1] कभी प्रजातान्त्रिक नहीं बन पायेगी। तुम्हारी संस्थाका नाम भ्रामक है। तुम उस नामको चाहो तो बनाये रख सकती हो, किन्तु अपनी मर्यादाओंकी स्पष्ट व्याख्या कर दो। जब हम जुलाईमें मिलेंगे, तब इस विषयपर और विचार किया जा सकता है। (है न?) आशा है कि फाँसका घाव नीचेसे भर गया होगा। आशा करता हूँ कि तुम कैलेनबैकसे मिलोगी। वह तुम्हें पसन्द आयेंगे।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७८५) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९४१ से भी

२६१. पत्र : विजया एन० पटेलको

२७ मई, १९३७

चि० विजया,

तूने अपना कार्यक्रम ठीक-ठीक दिया है। कार्यक्रम अच्छा है। दादी माँ के लिए तू जो रोती है, वह तो अपने स्वार्थवश। उनका घर जब जीर्ण हो गया तो क्या लोगोंकी सेवा करनेके लिए वे उसमें पड़ी रहतीं? यदि वे जाकर किसी नये घरमें वास करें, तो हमें उनसे ईर्ष्या क्यों होनी चाहिए? क्योंकि हम मृत्युका रहस्य नहीं जानते इसलिए स्वार्थवश रोते हैं। इतनी सीधी-सादी बात तू समझ ले, तो रोना भूल जाये।

१. यहाँ अखिल भारतीय महिला-सम्मेलनकी ओर संकेत है।

मनुभाईके दो पत्र आ चुके हैं। तेरे लिए सहेज कर रखे हैं। वहाँ आकर मैं वे पत्र तुझे देनेवाला हूँ। लेकिन अगर तूने धीरज खो दिया हो, तो लिखना; वे पत्र वापसी डाकसे भेज दूँगा। लेकिन तू इस बारेमें अधीर नहीं है, ऐसा मैंने मान लिया है। इसीलिए, पत्र आते ही तुरन्त नही भेजे, न आज ही भेज रहा हूँ। अब तेरी जैसी इच्छा होगी, वैसा करूँगा। आशा है, तेरी तबीयत ठीक हो गई होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७१) से। सी० डब्ल्यू० ४५६३ से भी, सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

२६२. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२७ मई, १९३७

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारे पत्र मेरी पकड़में नही आते। जैसे-जैसे सूझते जाते है, तुम्हारे प्रश्नोके उत्तर देता जाता हूँ। मैं शहरमें क्वचित् ही जा सका हूँ, यह याद दिलानेमें तुमने जरा भी गलती नही की। तुम्हारा हेतु शुद्ध था। मेरी लाचारी तुमने स्वय ही समझ ली, और इस प्रकार तुमने आलोचना करनेकी अपनी योग्यता सिद्ध कर दी है।

बलवन्तसिंह दूधके बारेमें क्या लिखते हैं? मुझे लगता है, गायोके लिए जितना मलाई निकाला दूध उन्हे चाहिए, उतना दिया जाना चाहिए। न देनेका क्या उद्देश्य हो सकता है? बकरा बच गया, यह तो ठीक ही हुआ। किन्तु तुमने उपवास करनेके अपने जिस निर्णयका उल्लेख किया है, वह सत्याग्रह ही था, इस बातको मैं और अधिक जानकारीके बिना स्वीकार नही करूँगा। सत्याग्रह कभी-कभी असफल होते देखा जाता है, और दुराग्रह सफल। इसका यह अर्थ नही है कि सत्याग्रह, सत्याग्रह नही रह जाता, अथवा दुराग्रह, दुराग्रह नही होता। अर्थात् परिणामके आधारपर हम किसी बातके ठीक होनेका निर्णय नही कर सकते। "मा फलेषु कदाचन्",[1] यह बात सदा याद रखने लायक है।

जमनालालजीसे सम्बन्ध और [सेगाँवमें] उनका मकान, ये हमारे लिए बाधक नही होने चाहिए। सब-कुछ इस बातपर निर्भर करता है कि हम उनका किस प्रकार उपयोग करते हैं। हम तो यही आशा करे कि उनका सदुपयोग ही होगा।

'गीता' के श्लोकका जो अर्थ तुमने दिया है, वह तुम्हारे लिए तो ठीक हो सकता है। लेकिन इसमें तो अवतारी कृष्णकी ही बात हुई। लोग "मनुष्य देहमें

१. भगवद्गीता, २, ४७।

होनेसे मुझे पहचान नही सकते",[1] यह बात देहधारी कृष्णके बारेमें है, सब देहोमें गुप्त रूपसे रहनेवाले ईश्वरके बारेमें नही है। लेकिन ऐसा मानना हो, तो यह भी ठीक हो सकता है। क्योंकि दोनो अर्थोका अन्तिम परिणाम एक ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५८०) से। सी० डब्ल्यू० ७०१६ से भी, सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

२६३. पत्र: लीलावती आसरको

२७ मई, १९३७

चि० लीलावती,

तूने अच्छा पत्र लिखा है। मैंने तो तुझे बन्धनमुक्त कर दिया है न? लेकिन तू अपनी ही इच्छासे बन्धनमें रहे, तो यह मुझे पसन्द होगा। तू तो अपना कल्याण मेरे हाथोमें सौंपती है, लेकिन मुझे खुद अपनी भी कोई खबर है क्या? फिर भी, मैं तेरी श्रद्धाका सम्मान करता हूँ। तेरा मार्गदर्शन करते हुए मुझसे भूलें हो सकती है, लेकिन तुझमें श्रद्धा होनेसे तेरा कल्याण तो होगा ही।

मलाई निकाले दूधके बारेमें मुन्नालालको लिख चुका हूँ।[2] मुझे लगता है कि बलवन्तसिंहको दूध दिया जाना चाहिए। लेकिन पहले मुन्नालालसे पूछकर दूध न देनेका कारण समझ लेना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६३) से। सी० डब्ल्यू० ६६३८ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर

१. भगवद्गीता, ९, ११।
२. देखिए पृ० १९८।

२६४. पत्र : चिमनलाल एन० शाहको

२७ मई, १९३७

चि० चिमनलाल,

शारदाकी चिन्ता मत करो। उसका सकोच निकल जायेगा। उसका वजन दो पौड बढ़ा है। वह प्रफुल्लित रहती है। यदि मुझे उसके लिए वर खोजना पड़े, तो जहाँ तक सम्भव होगा, दूसरे प्रान्तका ही खोजेंगे। मणिलाल और सुशीला जो इतनी दूर फीनिक्समें बैठे हैं, तो क्या हुआ? इस युगमें क्या दूर और क्या पास? अतः शकरीबहनके इस निराधार विरोधको दूर करना।

नारणदासके साथका तुम्हारा वैमनस्य मिटना ही चाहिए। मैं उसे लिखूंगा। अपने भाईके पैसेके बारेमें यदि तुम्हें विश्वासघातकी गन्ध आती हो, तो तुम्हें वह पैसा अवसर मिलते ही चुपचाप लौटा देना चाहिए। इसमें मुझसे अथवा किसी औरसे राय लेनेकी जरूरत ही नहीं है। जिसे कोई बात पाप-जैसी लगती है, उसके लिए वह पाप ही है, और उसे वह जल्दी ही धो डालना चाहिए।

बाकी जो पैसा बचे, उसका उपयोग कर लेना। भविष्यके लिए दोनों ईश्वरपर विश्वास रखना।

देशी राज्यके गाँवकी अपेक्षा ब्रिटिश सीमाके भीतरका गाँव पसन्द करो, यह ज्यादा अच्छा होगा — इस बातमें तो कोई सन्देह नहीं है।

प्याज उबालकर खानेसे वह रोचक हो जाता है। उबाले प्याजके साथ थोड़ा कच्चा प्याज भी खाओ, तो कोई हर्ज नहीं। चौलाई वगैरह भाजियाँ तो उबालकर खानी ही चाहिए। इससे खून बहना जरूर बन्द हो जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० २२) से।

२६५. पत्र : नारणदास गांधीको

२७ मई, १९३७

चि० नारणदास,

इस पत्रके साथ चिमनलालके पत्रका संगत अंश तुम्हारे विचार करनेके लिए भेज रहा हूँ। चिमनलालकी इच्छा बीजापुर छोड़नेकी है, इसलिए मैंने सहज भावसे बात कही कि वह राजकोट क्यों न जाये। इसके जवाबमें जब शारदाने कहा कि "वहाँ तो वे नहीं जायेंगे" तब मुझे तुम दोनोंके बीचके वैमनस्यकी बात याद आई, और मैंने उससे पूछा कि "क्या यही कारण है?" तो उसने स्वीकार किया। इस पर मैंने चिमनलालको उलाहना दिया[1] कि आश्रमके दो पुराने निवासी, जिनके बीच सगे भाईयोंसे भी अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध होना चहिए, इतने अधिक भेदभाव को मनमें स्थान कैसे देते हैं? साथके पत्रमें इस प्रश्नका उत्तर है। पहले भी इस वैमनस्यके बारेमें कुछ जाननेका प्रयत्न मैंने किया था, और तुमने कोई पत्र भी लिखा था। लेकिन उसमें क्या था, सो कुछ याद नही रहा। इसलिए अब तुम अपना दृष्टिकोण लिखना।

कमलाबाई वहाँ पहुँच गई होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफ़िल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५२४ से भी; सौजन्य. नारणदास गांधी

२६६. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२७ मई, १९३७

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा लम्बा खत मिला। उसे मैं ध्यानसे पढ गया हूँ। डेका भी मुझे मिल गया। मुझे वह अच्छा नवयूवक लगा है। उसने जो कुछ लिखा और माना उसमें कोई गलती देखने में नहिं है। इसलिये उस बातको दोहरानेकी कोई आवश्यकता नहिं है। वह खुद अगर वहांके मजदूरोंमें काम करनेके लिये आवे तो मजदूर ओफिस में कमसे कम तीन माह काम कराना चाहता है। अब तुमारी हाजत तात्कालिक लगती

१. देखिए पिछला शीर्षक।

है। क्योंकि रघुनंदनको प्रेसमें मदद चाहिये। मेरा ऐसा ख्याल है कि डेकाको अपना अनुभव पूरा करने दो इससे वह ज्यादा काम दे सकेगा।

सत्यवतीकी बात करूणाजनक है वह अपनी कमजोरीयोका उल्लेख करती है वह क्या चीज है? उसको अच्छी होनेके लिये जो मदद दी गई है सो तो ठीक ही कहा जाय। कहा तक उसे दौरनेके लिये तुम योग्य हो कहना कठिन है। देखो तुमारे आत्मविश्वासपर सब कुछ निर्भर है। मेरा तो उसके लिये पक्षपात है। लेकिन बहादुर है इतनी हि स्वेच्छाचारिणी है। उसका भला होगा अगर तुमारी बातको मानेगी तो। उनके खत वापिस करता हू। माताजी अच्छी होगी।

मैं यहाँ १० जून तक हूँ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४५१) से।

२६७. पत्र : नारणदास गांधीको

तीथल, बलसाड
२८ मई, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। कमूके सम्बन्धमें मेरे सामने प्रश्न योग्यताका नहीं, आवश्यकताका था। वह अपने पाससे खर्च करके भी चला सकती है, यह तो मैं मानता हूँ, लेकिन यह बात मैं उसे समझा नहीं सका। और उसके साथ बहसमें पड़ना ठीक नहीं लगा, इसलिए ३० रुपये देनेका निर्णय किया। १० रुपयेकी बात मुझे मालूम नहीं थी। तुमने ३० पढा, वही ठीक था। १० के बारेमें तुम्हें मालूम हो कि कौन देता है, तो मुझे लिखना। मैं कमूको लिखूंगा।

...[1] के बारेमें तो मैं लिख चुका हूँ। कुसुम[2] मेरे साथ मौन-व्रतका पालन करती मालम होती है। उसकी तबीयत तो ठीक रहती है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५२५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. नाम छोड़ दिया गया है।
२. मगनलाल गांधीकी पुत्री।

२६८. लाठी-रियासतका उदाहरण

पाठक महादेव देसाईके "साप्ताहिक पत्र" में यह शुभ सूचना देखेंगे कि लाठी-रियासतके शासकने अपना मुख्य मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल दिया है। यह घटना काठियावाड़के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है और ठाकुरसाहब प्रह्लादसिंहजी हिन्दू-धर्म और मानवताके सभी प्रेमियोंकी बधाईके पात्र हैं। प्रकाशित खबरोंसे पता चलता है कि इस कार्यके विरुद्ध कोई कानाफूसी तक नहीं हुई और सवर्ण हिन्दुओंने उद्घाटन-कार्यवाहियोंमें निस्संकोच भावसे भाग लिया। इससे मैं वही निष्कर्ष निकालता हूँ जो मैंने त्रावणकोरकी घोषणासे निकाला था। प्रजाके लिए राजाकी धार्मिक घोषणाएँ 'स्मृतियों' के विधान-जैसी ही हैं। लाठीके ठाकुरसाहबकी इस उदार कार्यवाहीका सभीने जिस तरह स्वागत किया, उसे किसी और आधारपर मैं समझ ही नहीं पाता हूँ। लाठीके सवर्णोंकी हठधर्मीका मुझे कटु अनुभव है। वे हरिजन बस्तियोंमें जाते ही नहीं थे। एक हरिजन स्त्रीके लिए, जो निमोनियासे मर रही थी, डॉक्टरी सेवा-शुश्रूषाका प्रबन्ध करनेमें मुझे जाने कितनी कठिनाई हुई थी। रियासतके औषधालयमें भेदभाव बरता जाता था। प्रसंगवश हम यह बता दें कि ये निर्योग्यताएँ कोई खास तौरपर लाठीमें ही नहीं थी। काठियावाड़के सभी भागोंमें और उसके बाहर गुजरातमें ये आम थी। दरअसल, अस्पृश्यताके कुछ महत्वपूर्ण मामलोंमें गुजरातकी स्थिति और जगहसे खराब है और काठियावाड़की तो सबसे ही खराब है। लाठीके मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोलनेसे सभी निर्योग्यताओंका चलन समाप्त हो जायेगा, मैं ऐसा नहीं सोचता हूँ। फिर भी, त्रावणकोरकी तरह लाठीके ठाकुरसाहबके इस उचित कार्यमें सवर्ण हिन्दुओंका निःसकोच सहयोग हमारे सामने अस्पृश्यताकी समस्याका एक आशुफलदायी समाधान रखता है। क्योंकि यदि मेरे तर्कमें कुछ सार है तो त्रावणकोर और लाठीके उदाहरणोंपर अन्य भारतीय नरेशोंके चलनेसे चाहे अस्पृश्यता भारतीय रियासतोंमें पूरी तरह खत्म न हो, पर उसका जोर तो जाता ही रहेगा। और यदि यह चीज इतने बड़े पैमानेपर होती है, तो ब्रिटिश भारत भी इस प्रक्रियासे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। समझमें नहीं आता कि नरेश इस मामलेमें, जो हिन्दू-समाजके एक बड़े भागके लिए जिन्दगी और मौतका सवाल है, इतनी सुस्ती क्यों दिखा रहे हैं। काश कि नरेश हिन्दू-धर्मको अस्पृश्यताके विषसे मुक्त करनेके अपने स्पष्ट कर्तव्यको देख पाते और समय रहते कदम उठाते।

लाठीके ठाकुरसाहबने अपने भाषणमें यह कहा बताते हैं कि उनकी इच्छा है कि उपयुक्त पुजारी और शिक्षक मिलते ही वे हरिजनोंके लिए और भी मन्दिर खोल देंगे और

उनमें सभी जातियोके बच्चोके लिए स्कूल कायम करेंगे। इसका जो उपाय मैंने त्रावणकोरके अधिकारियोको सुझाया था, वह मैं उन्हें भी सुझाना चाहता हूँ। लाठीमें एक छोटा प्रशिक्षण विद्यालय खुलना चाहिए, जिसमें मन्दिरोकी पूजा-अर्चना और स्कूलोंके संचालनका प्रशिक्षण दिया जाये। ये दोनो कार्य एक व्यक्ति न कर सके, ऐसा कोई कारण नजर नही आता। हृदयकी पवित्रता जितनी पुजारीके लिए आवश्यक है, उतनी ही स्कूलके अध्यापकके लिए भी आवश्यक है। और पुजारीके लिए भी अध्यापन कलामें कोरा होना कोई आवश्यक नही है। इस समय सबसे शोचनीय बात यही है कि मन्दिरोके पुजारी आम तौरपर अशिक्षित लोग होते हैं जिनमें प्राय. चरित्रका अभाव होता है। प्रशिक्षण-कार्यक्रम छ महीनेसे लम्बा रखनेकी जरूरत नहीं है। यदि आकर्षक वेतन दिया जाये तो स्कूलको सुशिक्षित और निर्दोष चरित्रवाले युवक मिल सकते हैं। मेरा सुझाव, नि सन्देह, यह मानकर रखा गया है कि लाठीके इस सुधारकी जडें आध्यात्मिकतामें है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-५-१९३७

२६९. पत्र : अमृत कौरको

तीथल, वलसाड
२९ मई, १९३७

प्रिय पगली,

मैं तुम्हें पहले ही बता चुका हूँ कि १० जूनको यहाँसे रवाना होकर १२ जूनको सेगाँव पहुँचूंगा और (ईश्वरने चाहा तो) हरिपुरा कांग्रेस-अधिवेशनमें भाग लेनेके लिए ही यहाँसे निकलूंगा, उससे पहले नही। अत मैं जुलाईमें तुम्हारे आनेकी आशा करता हूँ। उसके बाद मेरे समयमें से जितने सेकड, मिनट या घंटे तुम ले सको, ले लेना और जो भी सलाह, मार्गदर्शन और आदेश तुम चाहोगी, तुम्हें मिलेगा।

हाँ, कुमारप्पाको लगता है कि उसकी व्याख्या सही थी और मेरी बिलकुल गलत और भ्रामक थी, और जब उसने मुझे बताया कि बहादुरजी भी उससे सहमत थे तो मैंने उससे कहा कि मुझे उनकी [बहादुरजीकी] राय लिखित रूपमें चाहिए। कुमारप्पाने कि वह उनकी लिखित राय मँगा लेगा। उसके बाद क्या हुआ, मुझे नही पता। मैं अभी भी मानता हूँ कि कुमारप्पाको कानूनकी समझ नही है। लेकिन इससे क्या होता है? वह अच्छा और समझदार आदमी है, निष्ठावान कार्यकर्ता है। अतः अगर उसकी व्याख्या ही सही सिद्ध होती है तो मुझे खुशी होगी। वैसी स्थितिमें

लोग जो समझते हैं कि मेरे पास कानूनी भेजा है, उस भेजेको मुझे फोड़ फेंकना होगा।

तुम्हारी फाँस तो मुझे बराबर गड़ती रहती है। तुम्हें उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। तुम दूसरी अन्य चीजोंमें चाहे कितनी भी व्यस्त क्यों न हो, लेकिन तुम्हें चाहिए कि शम्मीके पीछे पड़कर उसे ठीक करवाओ।

तुम्हारी दाल भी एक फाँस सरीखी है। मैं किसी पूर्वाग्रहके कारण नहीं, बल्कि अनुभवके आधारपर ऐसा कह रहा हूँ। सामान्यतः तन्दुरुस्त लोग बहुत-सी चीजें खाते हैं और उन्हें कोई नुकसान नहीं होता। लेकिन तुम इससे कोई नतीजा नहीं निकाल सकती। मैं तुम्हें बताता हूँ कि ऐसे मामले भी हैं जिनमें सिर्फ एक चम्मच-भर दाल नाजुक हाजमेको गड़बड़ कर देती है। और तुम्हारा हाजमा तो कुछ ज्यादा ही नाजुक है। काफी मात्रामें लिये जायें तो दूध और चपातीसे ही काफी प्रोटीन मिल जाता है। मैं चाहूँगा कि तुम मेकेल[1] से सलाह करो जो आहार-विशेषज्ञ हैं। उनके नामके हिज्जे मुझे ठीक नहीं पता।

कैलेनबैकसे मिलनेमें अगर तुम चूक गईं तो मुझे दुःख होगा। भारतमें कोई भी चीज देखनेकी इच्छा नहीं है। वह तो मेरे पास ज्यादासे-ज्यादा समय तक रहनेकी इच्छासे आये हैं। उन्हें पता नहीं कि कितने समय तक रुक सकेंगे। हालाँकि अब वह एक बहुत बड़े आर्किटेक्ट बन गये हैं और उनकी कम्पनीकी चार शाखाएँ हैं जिनमें ३५ आर्किटेक्ट काम करते हैं, लेकिन अपने निजी जीवनमें वे अभी भी उतने ही सादगी-पसन्द हैं जितना १९१४ में उनसे विदा होते समय मैंने देखा था।

आशा है, बम्बईसे तुम्हें फीते (लेस) मिल गये हैं।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यु० ३७८६) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९४२ से भी

१. डॉ० मेकेल, जो सेवेन्थ डे एडवेंटिस्ट मिशनसे सम्बद्ध थे; साधन-सूत्रमें "मैकन" दिया गया है।

२७०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२९ मई, १९३७

चि० प्रेमा,

शायद तेरे पत्रका पूरा जवाब न दे सकूँ। वैसे, प्रयत्न करूँगा। मैंने भाषण न करनेका हुक्म तो नहीं निकाला। लेकिन अगर निकाला हो तो मैं उसे वापस ले लेता हूँ। मुझे किसीपर भी अपना हुक्म नहीं चलाना है। तेरे विचारोंमें परिवर्तन हो जाये तो इसमें मैं क्या कह सकता हूँ? तू अपने स्वभावके अनुसार आचरण करेगी, जैसे सबको करना चाहिए।[1]

शुद्ध प्रेमके लिए स्पर्शकी आवश्यकता नहीं होती, इस कथनका अर्थ ऐसा थोड़े ही है कि स्पर्शमात्र मलिन है। अपनी माँ के प्रति मेरा शुद्ध प्रेम था; लेकिन जब उसके पैर दुखते तब मैं उन्हें दबाता था। उसमें कोई मलिनता नहीं थी। विकारी स्पर्श दूषित है। इसलिए मैं यह कहूँगा कि जो लोग ऐसा कहते हैं कि स्पर्शके बिना शुद्ध प्रेम अशक्य है, वे शुद्ध प्रेमको जानते ही नहीं हैं।

नरीमनके बारेमें तू क्या कहना चाहती है, यह मैं अभी तक नहीं समझा। उनके साथ अन्याय किस प्रकार हुआ और किसने किया? सत्यकी खातिर भी तुझे अपने मनकी सफाई करनी चाहिए। मेरे लिए यह असह्य है कि उस मामलेमें मेरे और तेरे बीच मतभेद रहे। यदि तू दृढतापूर्वक यह मानती हो कि नरीमनके साथ अन्याय हुआ है, तो तुझे वह अन्याय मेरे सामने साबित कर देना चाहिए, क्योंकि इच्छा न होनेपर भी मुझे इस मामलेमें पड़ना पड़ा था। इसके सिवा, नरीमनसे तो मैंने कहा ही है कि जब वे चाहें तब उनके मामलेकी जाँच करनेको मैं तैयार हूँ। परन्तु वे आयें या न आयें, तेरा धर्म स्पष्ट है।

. . .[2] के बारेमें तू जो मान बैठी है वह ठीक नहीं है। तुझे जो सबूत मिला है, उसकी कोई कीमत नहीं। ऐसी बात माननेसे पहले सम्बन्धित व्यक्तिसे पूछना चाहिए। मैं यह नहीं कहना चाहता कि उसने असत्याचरण नहीं किया होगा। परन्तु इसकी पक्की जाँच कर लेनी चाहिए। मुझे कोई कहे कि प्रेमाने ऐसा किया तो क्या तुझसे पूछे बिना मुझे उसकी बात मान लेनी चाहिए?

तू हुदलीमें जो बोली वह तेरे हृदयके उद्‌गार भले ही हो; परन्तु अब तू जो लिख रही है उससे तेरा भाषण भिन्न था, इतना तो तू स्वीकार करेगी? जो

१. देखिए "पत्र : प्रेमाबहन कंटकको" १३-५-१९३७ भी।

२. नाम छोड़ दिया गया है।

भी हो, मैंने तो तुझे बता दिया कि मेरा अनुभव तेरे अनुमानसे अलग था। तू मेरे अनुभवसे अपने अनुमानका मूल्य अधिक जरूर आँक सकती है। परन्तु मैं क्या करूँ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३९०) से। सी० डब्ल्यू० ६८२९ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

२७१. पत्र : लीलावती आसरको

२९ मई, १९३७

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला। क्या मैंने यह कहा था कि मैं सेगाँव किसीको भी पत्र लिखूँ, तो तुझे भी उसके साथ पत्र लिखूँगा ही? और यदि मैंने ऐसा कहा था तो तुझे ऐसी बात असम्भव माननी चाहिए थी। मेरे पास किसीको दो लकीर लिखने लायक ही वक्त हो, तो भी तुझे लिखूँगा ही, यह मैं पहलेसे नहीं सोच सकता। लेकिन तुझे तो मैंने अधिकसे-अधिक पत्र लिखे ही हैं। एक भी हफ्ता तुझे पत्र लिखाये बिना नहीं गया। मुझे तो लगता है कि दो दिनसे अधिकका अन्तर पड़ा ही नहीं है। तू अपनी दैनन्दिनीमें से आँकड़े निकाल सकती है।

अपनी तबीयत ठीक रखके यदि तू वहाँ रह सकती हो, तो यह अच्छा ही होगा। जितनी गर्मी औरोंको लगती है, उतनी मुझे नहीं लगती। इसका कारण यह हो सकता है कि मैं तो घूमता रहता हूँ, चूल्हेके पास तो मुझे बैठना नहीं पड़ता, तो फिर गर्मी कैसे लगे? लेकिन अब तो तय हो गया। १० तक तो यहीं चिपका हूँ। १० के बाद तो फिर वहाँ गर्मी हो या न हो, ईश्वरकी कृपा हुई, तो १२ को मिलेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६४) से। सी० डब्ल्यू० ६६३९ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

२७२. एक पत्र

३० मई, १९३७

मेरे कहनेपर श्री हरजीवन कोटकको कश्मीरके अखिल भारतीय चरखा सघके भण्डारसे हटा लिया गया है जिसके मुख्य कारणका उनकी भण्डार-सचालन विधिसे कोई सम्बन्ध नही है। जहाँ तक मुझे मालूम है, उन्होने भण्डार-सचालन कालमें कभी भी कोई ऐसा काम नही किया जिससे उनकी ईमानदारीपर कोई आँच आये। उनकी व्यापारिक क्षमता और अध्यवसायपर भी कभी कोई शका नही की गई। उन्हें दुर्भाग्यवश जो व्याधि है, यदि वे उससे मुक्त होते तो वे किसी भी व्यापारमें जुट जाते और अखिल भारतीय चरखा सघ-जैसे लोकोपकारी सगठनसे प्राप्त होनेवाले पारिश्रमिकसे कही अधिक कमा सकते थे।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे . प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

२७३. पत्र : बलवन्तसिंहको

तीथल
३० मई, १९३७

चिरंजी बलवंतसिंह,

गोशालाके सामने बरडा किया जाय। अगर उसमें कुछ ज्यादा खर्चा न हो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९०२) से।

२७४. पत्र: अमृत कौरको

तीथल, बलसाड़
३१ मई, १९३७

प्रिय पगली,

तुम्हारे दो पत्रोंका जवाब नही दे पाया। मुझे प्रसन्नता है कि कुत्तेकी हालत बेहतर है किन्तु फाँसके घावमें अभी भी थोड़ी कसर बाकी रह गई। क्या तुम उसका कारण जाननेके लिए किसी डॉक्टरसे सलाह नही ले सकतीं?

तुम्हें जवाहरलालका पत्र वापस चाहिए।[1] क्या तुमने पहले पत्रमें उसके लिए कहा था? क्योंकि वह टाइप-कापी थी, इसलिए जवाब देनेके बाद मैंने उसे फाड़ दिया। उसका मूल अम्मुके पास अवश्य होना चाहिए। मूलको भी नष्ट कर दिया होगा तो मुझे दुःख होगा। ऐसा हो नही सकता। आइन्दा जब तुम्हें कोई लिखी हुई चीज वापस लेनी हो तो उसपर हमेशा "वापस भेजा जाये" लिख दिया करो।

ठीक समयपर आनेकी तरह ठीक समयपर जाकर तुम्हें लोगोंको समयकी पाबन्दीका पाठ पढ़ाना चाहिए। क्या मैंने तुम्हें यह बात बताई थी कि एक अंग्रेज मित्रने ठीक पहलेसे घोषित समयपर ही अपनी सभा आरम्भ कर दी थी, यद्यपि तब वहाँ केवल एक ही व्यक्ति, स्त्री या पुरुष यह मुझे याद नहीं, उपस्थित था?

यह नामुमकिन नहीं कि जब तुम जुलाईमें आओ, तो कैलेनबैक सेगांवमें हो।

क्या मैंने तुम्हें बताया नहीं कि मैं १० को सवेरे यहाँसे प्रस्थान करूँगा? ९ जून तक पत्र यहाँ आ सकते हैं।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६०६) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४१५ से भी

१. देखिए पृ० २६४।

२७५. पत्र : वैकुण्ठलाल एल० मेहताको

३१ मई, १९३७

भाई वैकुण्ठभाई,

मित्रका सन्देशा लेकर बुधवारकी शामको जरूर आइए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३६४) से।

२७६. पत्र : नारणदास गांधीको

१ जून, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। चिमनलालवाली बात समझा। तुम्हारा लिखा नोट उसे भेज रहा हूँ। इसमें गलतफहमीके सिवा और क्या हो सकता है? कमलाका बोझ तुम्हारे ऊपर मैंने सोच-विचार कर डाला है। यह बोझ उठानेकी शक्ति मैंने और किसीमें नही मानी। उसको लिखा मेरा पत्र पढ़ना। उसकी यदि कोई माँग हो, तो उसके बारेमें स्वतन्त्र निर्णय करना और उसपर अमल करनेके बाद मुझे बताना, जिससे यदि मुझे कोई आलोचना करनी हो तो करूँ। जहाँ तुम्हें शका हो, वहाँ पहले पूछ लेना। पत्रोंके बारेमें उससे पूछकर और जानकर, फिर जहाँ लिखनेकी अनुमति देना उचित लगे, वहाँ उसे लिखने देना। उसे हर मिनट काममें लगाये रहना। वह पढे, सिये, पढाये, काते, सफाई करे, पीजे — उसका शरीर चले, तब तक सब करे। उसमें खामियाँ देखो, तो उसे बताना।

कमूके बारेमें सुना है कि उसके दस रुपये इस महीनेसे बन्द होनेवाले हैं।

चोरवाड़से विजया[1] का तार आया था: "कनूभाईको भेजो"। मैंने जवाब भेज दिया है: "१० तक यहाँ रहना चाहता है। जल्दी क्यो बुला रही हो?"

किशोरलालभाईके भाषणके बारेमें तुमने जो लिखा है, उसमें मुझे जवाब देने-जैसा कुछ नहीं लगा। गो-सेवा संघके चन्देमें बिनौला जोड़ देनेके सुझावको तो मै दोषयुक्त नही मानता। इसी प्रकार रोज-रोज थोड़ा-थोड़ा कातनेके बदले यदि एक ही बारमें सबका-सब कात लिया जाये, इसमें भी दोष नही निकाला जा सकता। यह हो सकता है कि सबसे एक ही प्रकारका चन्दा लेनेका ध्येय अथवा कोई और

१. विजया गांधी, नारणदासकी पुत्रवधू।

भी ध्येय ऐसा करनेसे बदल जाये। सूतके रूपमें चन्दा लेनेमें जो दृष्टिकोण था, उससे भिन्न दृष्टिकोणसे किशोरलालने इस प्रश्नपर विचार किया — इससे हमें यह नही मानना चाहिए कि उसकी विचारधारामें दोष है।

सर्वधर्म-समभावके बारेमें जो उन्होंने लिखा है, उसके सम्बन्धमें तो कुछ कहने-जैसा लगता नही। लेकिन यदि हमें दोष दिखाई देते हो, तो मौका पड़नेपर हम उन्हें क्यों न बतायें? बतानेका समय देखना चाहिए, यह अलग बात है। तुमने कोई दूसरा अर्थ निकाला हो, तो मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५२६ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

२७७. भेंट: 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको

तीथल
१ जून, १९३७

मैं बहुत उत्सुक हूँ कि कांग्रेसी लोग मन्त्रि-पद ग्रहण करें — लेकिन तभी जब सरकार कांग्रेसको सन्तुष्ट करनेकी इच्छा प्रकट करे।

कहा जाता है कि लॉर्ड ज़ेटलैंडने बर्खास्तगीके सवालको छोड़कर बाकी सब बातें मान ली हैं। यदि ऐसी बात है तो कांग्रेस सरकारसे अनुरोध करती है कि वह थोड़ा और आगे आये और यह माँग भी मान ले। अभी तक सुलहकी सारी कोशिशें कांग्रेसकी ओरसे हुई हैं। इलाहाबादवाली बैठकमें दिल्लीवाले प्रस्तावकी संकीर्ण व्याख्या करके समझौतेके दरवाजेको बन्द कर देना बहुत आसान था। लेकिन ऐसा न करके उसे खुला रखा गया।

जहाँ तक इस समय देखा जा सकता है, इसमें एकमात्र अड़चन कांग्रेसकी इस माँगके कारण है कि गवर्नर और उसके कांग्रेसी मन्त्रियोंके बीच किसी गम्भीर मतभेदकी स्थितिमें गवर्नर मन्त्रिमण्डलको भंग कर दे। तथापि यदि गवर्नर यह भी वचन दे दे कि ऐसी स्थिति उत्पन्न होनेपर वह अपने मन्त्रियोंसे त्यागपत्र देनेको कहेगा, तो व्यक्तिगत रूपसे मैं इतने से भी सन्तुष्ट हो जाऊँगा।

श्री गांधीने यह माननेसे इनकार किया कि कांग्रेस के लिए यह एक बहुत छोटा सवाल है। उन्होंने कहा कि इसके पीछे इरादा यह है कि अपने मन्त्रियोंको बर्खास्त करनेकी जिम्मेदारी अपने सिर लेनेसे पहले गवर्नरको कमसे-कम पचास बार सोचना पड़े। दूसरे शब्दोंमें श्री गांधी "मनुष्यके इस साधारण गुण या कहें कि कमजोरीका फायदा उठाना चाहते हैं कि वह मूर्ख नहीं दिखना चाहता।" कांग्रेसके आलोचकोंका कहना है कि यह एक नगण्य माँग है। [श्री गांधीने पूछा:]

यदि यह नगण्य है तो कांग्रेसकी यह नगण्य-सी माँग मान क्यों नही ली जाती?

श्री गांधीने स्वीकार किया कि कांग्रेसकी माँगका उद्देश्य सरकारके इरादेकी ईमानदारीको परखना है। सरकार कांग्रेसको मन्त्रिमण्डल बनाने देना चाहती है या नहीं? दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटेन ने बोअर लोगोंको बड़े यत्नपूर्वक सन्तुष्ट किया था। लेकिन भारतमें इस प्रकारकी कोई चेष्टा नहीं की गई। बल्कि सच तो यह है कि गतिरोधको दूर करनेकी दिशामें जो भी कदम उठाये गये, वे कांग्रेस द्वारा ही उठाये गये।

कांग्रेस कोई कानूनी परिवर्तन नहीं चाहती। लेकिन बजाय इसके कि कांग्रेससे बातचीत की जाये, कांग्रेसके विरुद्ध ही बातें की जा रही हैं। ऐसा लगता है कि ब्रिटिश राजनयज्ञ और प्रान्तीय गवर्नर जो-कुछ कहते हैं वह दुनियाको सुनानेके लिए कहते हैं, कांग्रेस से नहीं कहते। सच तो यह है कि उनपर यह आरोप लगाया जा सकता है कि वे हमेशाकी तरह कांग्रेसको गलत साबित करने और अलग-थलग डाल देनेकी कोशिश कर रहे हैं।

कांग्रेसी लोग यदि पद-ग्रहण करेंगे तो अपनी जिम्मेदारीके पूरे अहसासके साथ करेंगे। कांग्रेसकी नीति अधिनियमको असफल बनाने और संवैधानिक तरीकोंसे स्वाधीनता प्राप्त करनेकी है, और जब तक सरकार उनकी इस नीतिको एक बिलकुल वैध नीतिके रूपमें स्वीकार नहीं करती तब तक वह कांग्रेसी बहुमतका शासन पसन्द नहीं करेगी।

श्री गांधी की राय है कि इस गतिरोधको समाप्त करने के लिए वाइसराय यदि कोई कदम उठायें तो उनके वैसा करनेमें कोई संवैधानिक बाधा या अनौचित्य नहीं है। यह जानी हुई बात है कि गवर्नरोंने जब कांग्रेसी नेताओंको पद-ग्रहणके सिलसिलेमें बातचीतके लिए बुलाया था, उससे पहले वाइसरायने गवर्नरोंके साथ सलाह-मशविरा किया था। इसलिए वाइसराय द्वारा कांग्रेस अध्यक्ष को मुलाकातके लिए बुलानेमें कोई अड़चन नहीं हो सकती। [श्री गांधीने कहा :]

मैं यह नहीं कहता कि ऐसा करना जरूरी है। इतना ही काफी है कि इलाहाबादवाले प्रस्ताव[1] में बताई गई कांग्रेसकी माँगको पूरा कर दिया जाये।

यदि सरकार कोई पहल नहीं करती तो गतिरोध जारी रहेगा। इसका परिणाम अन्तमें यह हो सकता है कि धारा ९३ को लागू कर दिया जाये, जिसका मतलब है नये संविधानके लोकतान्त्रिक अंशको निलम्बित कर देना। श्री गांधी इसके लिए और इसके सम्भावित परिणामोंके लिए तैयार हैं। उनकी रायमें प्रच्छन्न रूपसे कांग्रेस मन्त्रियोंका दमन और उनके कार्यमें हस्तक्षेप किया जाये, इसकी अपेक्षा सत्तावादके अन्तर्गत होनेवाला खुला दमन कहीं ज्यादा अच्छा है। उन्होंने कहा कि मैं दमनका सामना करनेके लिए तैयार हूँ, लेकिन उसकी नौबत आये, यह मैं बिलकुल नहीं चाहता। इससे ब्रिटेन और भारतके सम्बन्धोंमें इस समय जो कटुता

१. देखिए पृ० १८५, पाद-टिप्पणी १।

और घृणाकी भावना है, वह और बढ़ेगी। इस दुःखद स्थितिको मैं मरकर भी रोकनेकी कोशिश करूँगा, लेकिन ऐसा भी समय आयेगा जब मेरी कोशिश निष्फल होगी। श्री गांधीने अन्तमें कहा:

अभी तक किसीने यह नहीं कहा कि पद स्वीकार करनेकी कांग्रेसकी मौजूदा शर्त असंवैधानिक है। अपने सम्मान और अपने घोषित उद्देश्यकी सीमामें रहते हुए समझौतेकी दिशामें कांग्रेस जहाँ तक जा सकती थी, गई है। अब यदि सरकार सचमुच चाहती है कि कांग्रेस पद-ग्रहण करे तो अगला कदम सरकारको उठाना होगा।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया, २-६-१९३७.

२७८. परिचय-पत्र

[स्थायी पता:] सेगाँव, वर्धा (भारत)
२ जून, १९३७

भावनगर दरबार डेरीके अधीक्षक श्री पी० एन० जोशी पिछले १४ वर्षोंसे भारतकी मवेशी-समस्याका अध्ययन कर रहे हैं और उन्होंने काठियावाड़में स्वदेशी नस्लकी गायोंके नस्ल-सुधारकी दिशामें कुछ काम किया है। उन्हें आनुवंशिकी और पशुपालनका अध्ययन करनेके लिए भावनगर राज्य द्वारा डेनमार्क और संयुक्त-राज्य अमेरिका भेजा जा रहा है जिससे कि इस देशके पशुधनके सुधारके लिए इनके ज्ञानका उपयोग हो सके। श्री जोशी अपने जीवनमें इन देशोंमें पहली ही बार जा रहे हैं और वहाँ उन्हें जो-कुछ सुविधाएँ और मार्गदर्शन प्रदान किये जायें, उनके लिए मैं आभार मानूँगा।

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

२७९. पत्र: अमृत कौरको

तीथल, वलसाड़
२ जून, १९३७

प्रिय पगली,

बधाई। कितनी बड़ी है फाँस।[1] तो मेरी चिन्ता उचित ही थी और उसी प्रकार तुम्हारी मूर्खता भी। अब तुम कील-फाँसकी उपेक्षा करनेकी गलती दुबारा

१. **लेटर्स टु राजकुमारी अमृत कौर** नामक अपनी पुस्तकमें अमृत कौरने लिखा है: "सेवाग्राममें गांधीजीके साथ रहते समय टहमेरे पैरमें एक फाँस घुस गई। हफ्तोंतक वह अन्दर ही रही और अन्तमें अपने-आप ही बाहर निकल आई। फाँस काफी बड़ी थी और मैंने उसे गांधीजीके पास देखनेके लिए भेज दिया।"

नही करना। आशा है कि इस पत्रके मिलने तक तुम पूरी तरह ठीक हो चुकी होगी।

हिंसाके सम्बन्धमें तुम्हारे प्रश्नको मैं समझता हूँ। अच्छे परिणामोसे हिंसाका औचित्य सिद्ध नही होता और न उनसे हिंसा से पैदा होनेवाली बुराइयाँ ही दबती है। हिंसा द्वारा पैदा होनेवाली बुराइयोको हमेशा पहचान सकना भी सम्भव नही है। उदाहरण के लिए, किसी हत्यारेको जब फाँसीपर लटकाया जाता है, तो उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न होनेवाली बुराईको तोल सकना सम्भव नही है, भले ही हम उसको मारकर राहतकी साँस क्यो न लें। अगर हम चीजका कारण जान सकते तो विश्वास का कोई अर्थ ही नही होगा। क्या मैंने तुम्हारा प्रश्न सही समझा है?

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६०७)से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४१६ से भी

२८०. पत्र : शान्तिकुमार एन० मोरारजीको

२ जून, १९३७

चि० शान्तिकुमार,

बहुत बरस जियो और खूब सेवा करो। आशा का सूर्य बाहर नही है, हमारे भीतर है। वहाँ उसे खोजो, तो वह अवश्य मिलेगा। माँ[1] और गोकीबहन[2] से कहना, मैं उन्हें बहुत बार याद करता हूँ। सुमति[3] और मणिको आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८०१) से; सौजन्य: शान्तिकुमार एन० मोरारजी

१, २ और ३. शान्तिकुमार मोरारजी की क्रमश: दादी, चाची और पत्नी।

२८१. पत्र : कपिलराय ह० पारेखको

तीथल
२ जून, १९३७

भाई कपिलराय,

तुम्हारा कार्ड मिला। जमनालालजी की ओरसे जो जवाब आया था, वह कल तुम्हे सीधा भेज दिया। लेकिन उसपर गलत पता लिखा गया है, इसलिए वह पत्र तो भटक जायेगा। यह बात मुझे अभी मालूम हुई। पत्रका सार यह है कि उस जगह पर तो एक बड़े अनुभवी और सजग विशेषज्ञ हैं। अतः यदि तुम उससे नीचे का पद स्वीकार करनेको तैयार हो, तो तुम्हे सेठ केशवदेवजी नेवटियासे ३९५, कालबा-देवी रोडपर, बच्छराज ऐण्ड कम्पनीमें मिलना चाहिए।

बापूके- आशीर्वाद

श्री कपिलराय हरिवल्लभ पारेख
"सीता सदन", रूम न० ८
लखमसी नैपू रोड, माटुंगा (बम्बई)

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७३१) से; सौजन्य: कपिलराय ह० पारेख

२८२. पत्र : लीलावती आसरको

तीथल
२ [जून][1], १९३७

चि० लीलावती,

तो तूने इन्दुके साथ पत्र नही भेजा? दिन गिन रही है न? १२ की जगह ११ तो हो गई, इससे जल्दी होना सम्भव नही है। बा मरोलीमें रह जायेगी। कनु राजकोट जायेगा। यानी हम जितने वहाँसे चले थे, उतने सब नही आयेंगे। लेकिन कुछ लोगोंके बदले हम और लोग लायेंगे: खान साहब[2], मेहरताज[3], लाली[4] और श्री कैलेनबैक।

१. जून, १९३७ में गांधीजी तीथलमें थे। इसमें और आगेके दो शीर्षकोंमें साधन-सूत्रमें दिया हुआ 'जुलाई' भूलसे लिखा गया है।
२, ३ और ४. क्रमशः अब्दुल गफ्फार खाँ, उनकी पुत्री तथा पुत्र।

सो तू तरो-ताजा और रौबदार हो लेना। यदि अपना वजन घटाती ही रही तो फिर रसोई क्या बना पायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५८७) से। सी० डब्ल्यू० ६५५९ से भी, सौजन्य: लीलावती आसर

२८३. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

तीथल
२ [जून][1], १९३७

चि० मुन्नालाल,

इन्दुने तुम्हारे पत्र मुझे दिये हैं। उन्हे पढकर हँसूँ, रोऊँ, या नाराज होऊँ, बारी-बारी से ये विकल्प मनमें आये, और अन्तमें तीनमें से एक भी न करनेका निश्चय किया। इन्दुने मुँहजबानी जो विवरण दिया, वह मैं कुछ समझ नही सका। किसका दोष, यह भी निर्णय नही कर पाया।

मैं १२ के बजाय ११ को पहुँचनेकी आशा करता हूँ। आऊँगा, तब सब सुनूँगा; अथवा तब तक बादल छँट गये होंगे। इसलिए झगडेकी बातके बारेमें मैं कुछ नही कहना चाहता। उसका तो आपसमें निपटारा कर सको, तो कर लेना। तुमने लिखा है कि लीलावती, बलवन्तसिंह वगैरह का मन जीतनेका उत्तरदायित्व मैंने तुमपर डाला है; लेकिन इसके बदले यदि ग्राम-सेवाका उत्तरदायित्व डाला होता, जिसके लिए तुम तथा अन्य लोग सेगाँवमें हो, तो तुम उसे निभा लेते। लेकिन तुम जो इस प्रकार भेद करते हो, यही ठीक नही है। ग्राम-सेवा, क्रोध आदिको जीतनेसे भिन्न काम नही है, ऐसा हम लोगोंने निश्चय किया है। लीलावती आदिके मनको जीतना, अर्थात् क्रोध आदिको जीतना, अर्थात् ग्राम-सेवा करना, यह समीकरण निर्धारित किया है। लेकिन जब तक तुम इन दो बातोंको अलग-अलग मानते हो, तब तक तुम्हारा दृष्टिकोण ही भिन्न है। मैंने तो इस प्रश्नका भी निपटारा कर दिया था। मैंने तुमसे और बलवन्तसिंह से कह दिया था कि तुम खाना, पीना आदि सब काम अलग-अलग कर सकते हो। तुम्हारा सम्बन्ध केवल मुझसे रहेगा। अपना समय तुम केवल अपनी मनपसन्द सेवामें ही लगाओगे। लेकिन सोच-विचारके बाद तुम दोनोंने वह सुझाव अस्वीकार कर दिया। और मुझे भी लगता है कि तुम्हारा ऐसा करना उचित था। ऐसा करके कोई भी आदमी सेवा-कार्य नही साध सकता। हम स्वतन्त्र नही जन्मे हैं। गर्भवाससे लेकर देहावसान तक परावलम्बी ही हैं और रहेंगे। लेकिन यह सब ज्ञान मैं यहाँ नही उँडेलता। जब मिलेंगे, और समय मिलेगा, तब चर्चा करूँगा।

[1]. देखिए पिछले शीर्षककी पाद-टिप्पणी १।

उस बकरे[1] के सम्बन्धमें तुम्हारा क्या कर्तव्य था, यह तुम्हें सोचना ही नही है। वह तो केवल तुम्हारा हठ था। लोगोका मन बदलकर एक बकरा बचाना भी अच्छा है। लोगोके मन बदले बिना करोड़ो बचाओ, तो इसका कोई मूल्य नहीं है; अथवा है, तो नहीके बराबर। अतः सच पूछो, तो तुम्हें लोगोसे माफी माँगनी चाहिए और कहना चाहिए कि "मेरा काम आपको कर्तव्य समझानेका था, उपवास की धमकी देनेका नहीं। अतः मैंने जो धमकी दी, उसके लिए मैं क्षमा माँगता हूँ। यद्यपि आपको रोकनेके लिए मैं उपवास नही करूँगा, फिर भी आपसे कहता तो रहूँगा कि यह काम खराब है; और इसे मैं दृष्टान्त तथा तर्कसे सिद्ध करनेका प्रयत्न करूँगा।"

बलवन्तरायके बारेमें तो मैं कुछ नही समझ सका। वहाँ आऊँगा, तब समझमें आयेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५७८) से। सी० डब्ल्यू० ७०१८ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल जी० शाह

२८४. पत्र : चिमनलाल एन० शाहको

तीथल

२ [जून][2], १९३७

चि० चिमनलाल,

तुम्हारे पत्रका नारणदाससे सम्बन्धित अंश मैंने उसे [नारणदासको] भेजा था। उसका जवाब आया है। इसके बारेमें तुम्हें क्या कहना है? यह पत्र मैंने शारदाको नही दिखाया। वह तीव्र बुद्धिकी होनेसे यह पत्र पढकर सोच-विचार करने लगेगी। उसमें भावनाएँ उत्पन्न होगी और चिन्ता भी कर सकती है। फिर, उसे पढने दूँ, तो मुझे उससे इस पर चर्चा भी करनी पड़ेगी, जिसका असर उसके स्वास्थ्यपर जरूर पड़ेगा। यह सब अनावश्यक है। इसलिए तुम जो जवाब लिखो, वह भी मेरे पतेपर भेजना, जिससे इस प्रकरणसे उसका कोई सम्पर्क ही न हो पाये।

नारणदासके पत्रसे मैं देखता हूँ कि सिवा मतभेदके और कोई कारण नही है। और यदि प्रमाणिक मतभेद ही हो, तो दुःखकी अथवा रोषकी तो कोई बात नही है। यदि तुम तर्कपूर्ण उत्तर लिखो, तो नारणदासका पत्र मुझे वापस भेजना, जिससे मुझे विचार करनेमें मदद मिले, क्योंकि तुम्हारा जवाब आने तक मैं नारणदासके पत्रमें लिखी बातें भूल चुकूँगा।

१. देखिए पृ० २६५।
२. देखिए पृ० २८२, पाद-टिप्पणी १।

शारदाकी तबीयत ठीक रहती है। वह, जैसा चाहिए, घूमती है। जैसा चाहिए, खाती है। उसका वजन इतवारको ८० पौंड हो गया। इसे मैं शुभ चिह्न मानता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० २३) से।

२८५. पत्र : बलवन्तसिंहको

तीथल
२ जून, १९३७

चि० बलवन्तसिंह,

अच्छे तो हो। वहा से सब लिखते हैं जब तक रहना है तब तक तीथल में रहो, हमारी चिंता न करो। और सब या कहो बहूत चिंताका सामान पैदा करते हैं और मेरी ओर फेंक रहे हैं। अब मैं चिंता करनेवाला नही हू। न यहा से दस के पहले निकालू। दस तारीखको अवश्य यहा से निकालने की चेष्टा करूंगा। ग्यारहकी सुबह पहुचने की आशा रखता हू। और तब पानी की, दूध की, बैल की, गाय की, कुए की, खेत की मुन्नालाल के उपवास की ऐसी-ऐसी विविध बातें सुनुगा और फैसला करता जाऊंगा।

ठीक है ना?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फ़ोटो-नकल (जी० एन० १९०३) से।

२८६. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२ जून, १९३७

चि० ब्रजकृष्ण,

शायद गिरीराज[1] को तुम जानते हो। उसे दो लडके हैं। गिरीराज साबरमती आश्रम में थे। उसका ठिकाना नीचे है, "विद्याश्रम, १५७ क्लोथ मार्केट, दिल्ली"। उसके पास शिक्षक का प्रमाणपत्र है। कहता है पढाने का, दफ्तर का और बिक्री का जो कुछ दो, कर सकता हूं। उसकी मासीक ३५ पैंतीसकी है। उसे मिलो और जो असर पड़े वह मुझ को लिखो। और कोई सेवाकार्य में आवश्यकता हो तो देखो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४५०) से।

१. गिरिराज किशोर भटनागर।

२८७. पत्र : एम० आर० मसानीको

तीथल, वलसाड
३ जून, १९३७

प्रिय मसानी,

तुमने अपने पत्रमें जो कैफियत दी है उसकी कोई जरूरत नहीं थी। मेरी जानकारीमें तो तुमने कभी किसीके साथ अनादरका व्यवहार किया नहीं है। जिस भाषणका जिक्र है उसमें किसी के प्रति अनादर नहीं था। मुझे आश्चर्य है कि पटवर्धनको लगा कि मैंने ऐसी बात कही जिसमें तुम्हारे भाषण की भाषापर रोष व्यक्त होता था। मेरी टिप्पणी विषयवस्तुके सम्बन्धमें थी। मैंने तो तुम्हारे भाषण को अनुशासनहीनता का एक नमूना बताया था। अ० भा० का० कमेटी ने जैसा निश्चय किया था, नेताओं ने उसके अनुसार ही काम किया था और तुम्हें उसकी आलोचना नहीं करनी चाहिए थी। मैं अभी भी मानता हूँ कि तुमने गलती की।

आशा है कि अल्मोड़ामें तुम्हारा समय खूब आनन्द से बीता।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८८६) से, सौजन्य: एम० आर० मसानी। जी० एन० ४१२८ से भी

२८८. पत्र : पी० कोदण्डरावको

३ जून, १९३७

प्रिय कोदण्डराव[1],

आपका स्वागत है। आशा है कि अपनी लम्बी अनुपस्थितिके दौरान आपने समयका खूब फायदा उठाया होगा। मैं बम्बई नहीं जा रहा हूँ। इस महीनेकी १० तारीखके बाद यहाँ अथवा सेगाँव आ जाइए।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२८४) से।

१. १८९०-१९७५; शिक्षाशास्त्री, लेखक और समाज-सेवक; सर्वेंट्स ऑफ इण्डिया सोसायटीके १९२७ से १९५८ तक सदस्य।

२८९. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

३ जून, १९३७

चि० मुन्नालाल,

आज तुम्हारे बहुत-से पत्रोका उत्तर देनेका प्रयत्न करता हूँ। कचनके बारेमें जो तुम्हें चिन्ता होती है, उसके कारणोका विश्लेपण करो। वह ठिकाने लग गई है। जितना पढ सकती है, उतना पढ़ती है। वह जहाँ है, वहाँसे अधिक अच्छा स्थान उसे रहनेका नही मिल सकता। फिर चिन्ता करनेका क्या मतलब? क्या यह कि तुम उसके साथ रहो? यदि यह हो, तो यह चिन्ताका नही, तुम्हारी इच्छाका प्रश्न है। यदि उस इच्छाको तुम नियन्त्रित कर रहे हो, तो फिर नियन्त्रित करना चाहिए या नही, यह सोचनेकी बात हुई।

गाँवोमें लोग ज्वार और बेसनपर गुजारा करते हैं। तुम उनकी नकल नही कर पाओगे। हमें अपनी सीमाओको पहचानना चाहिए। अत. जिस विचारधाराका आश्रय लेकर तुमने अनाज खाना आरम्भ किया है, वह गलत है। अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे और नैतिक दृष्टिसे भी, अनाज खाकर बीमार पड़ो और काम कम हो, तो क्या वह महँगा नही पड़ेगा? और तुलनामें महँगा माना जानेवाला दूध पीकर नियमानुसार काम करो, तो क्या वह सस्ता नही पड़ेगा?

सच्चा जीवन जीनेकी सुनहरी कुजी एक ही है। जो सेवाकार्य सहज रूपसे सामने आये, उसमें कूद पडना और ध्यानावस्थित हो जाना। फिर मनमें भी विचार केवल कार्यको पूर्ण करनेका ही रहे, न कि काम उचित है अथवा अनुचित, इस बातका।

हमने भगी रखा है और सड़क बनवा रहे हैं, यह निस्सन्देह सेवा है। हम लोगोसे इस प्रकार पैसा खर्च करानेकी स्थितिमें है। इसका उपयोग न करे, तो हम मूर्ख माने जायें। फिर यह पैसा भी मालगुजार देता है, यानी इस प्रकार, अप्रत्यक्ष रूपमें ही सही, हम मालगुजारको उसके गाँवमें रुचि लेनेको बाध्य करते है। यह कोई मामूली बात नही है। गाँवके लोग कुछ करें, इसकी राह देखते रहकर हम गाँवकी सफाईका काम रोके नही रख सकते। प्रत्येक गाँवके मालगुजारका हृदय यदि हम इस प्रकार पिघला सकें, तो हमारा काम बहुत सरल हो जाये। लेकिन हमें तो समाजके सभी अंगोको साथ लेना है, और प्रत्येक अंगकी सीमा हमारी शक्तिकी सीमा रहेगी।

सेगाँवमें मेरी इच्छा अकेले रहनेकी थी। इसका अर्थ यह नही था कि और भी लोग वहाँ होंगे, तो सेवाका क्षेत्र बढाया नही जा सकेगा; बल्कि यह देखना था कि अकेले मुझसे क्या हो सकता है। मैं अकेला काम कर सकता हूँ या नही, यह

मैं स्वयं देखना चाहता था। वह हुआ नहीं, और दूसरे आकर मेरे साथ हो गये। अब उनका उपयोग मुझे करना चाहिए, और उन्हें काम देना चाहिए।

जमनालालजीके साथ अपने सम्बन्धको हमें अपने काममें बाधा नहीं बनने देना चाहिए। हम स्वयं यदि इस सम्बन्धके कारण आरामतलब हो गये, तो सूखे पत्तोंके समान झर जायेंगे; और तब वही उचित भी होगा। लेकिन यदि हम चौबीसों घंटे सेवाकी रट लगाये रहे और शुद्ध बने रहनेका प्रयत्न करते रहें, तो फिर करोड़पतिके हमारे साथ रहने के बावजूद लोग हमें गलत नहीं समझेंगे।

तुम्हारे पत्रोंसे मैं देखता हूँ कि तुम अधिक समय स्वप्नोंकी दुनियामें रहते हो, और इससे तुम्हारा काम सँवर नहीं पाता। तुम्हारा हेतु साफ है; लेकिन तुम चलना सीख लेनेसे पहले ही दौड़ने लगते हो, और दौड़ते-दौड़ते उड़नेकी अभिलाषा करने लगते हो, जिससे दौड़ना, उड़ना तो कुछ होता नहीं, चलना भी खटाईमें पड़ जाता है। तुम बीमार पड़े, तब किसी तरह तुम्हारा काम तो चला, लेकिन क्या इससे सन्तोष किया जा सकता है?

अब मैं तुम्हारे सब पत्रोंके उत्तर दे चुका हूँ। पत्र मैंने अपने सामने रख लिये थे और उन्हें देखता गया। प्रत्येक पंक्तिका अलग-अलग उत्तर दिया जाये, मुझे यकीन है कि तुम यह नहीं चाहोगे। इन उत्तरोंसे अपनी सब उलझनें तुम सुलझा सकते हो। लेकिन मेरी सलाह तो यह है कि इस प्रकारके विचार करना ही बन्द कर दो, और जो भी काम हाथमें लिया है, उसे सांगोपांग पूरा करो। ऐसा करते रहे, तो तुम्हारी सारी समस्याएँ अनायास हल हो जायेंगी, और जैसे सुखका अनुभव तुमने कभी नहीं किया होगा, वैसे सुखका तुम अनुभव करोगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५७९) से। सी० डब्ल्यू० ७०१७ से भी; सौजन्य: मुन्नालाल जी० शाह

२९०. तार: भारतन कुमारप्पाको[1]

४ जून, १९३७

तुम्हारा विवाह-बन्धन सुखद और देश के लिए फलप्रद हो। प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-६-१९३७

1. डेविड देवदासकी पुत्री सीता देवीके साथ श्री कुमारप्पाके विवाहोत्सव पर। विवाह कोडाइकनालके इंग्लिश चर्चमें सम्पन्न हुआ था।

२९१. तार : नारणदास गांधीको

वलसाड
४ जून, १९३७

नारणदास गाधी
मिडिल स्कूल के सामने
राजकोट

वे[1] सुख से जिये, सुखसे मरे, इसके लिए ईश्वरको धन्यवाद देना चाहिए। दु खकी कोई वात नही।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२९२. पत्र : एडमंड और युवान प्रिवाको

तीथल, वलसाड
४ जून, १९३७

प्रिय आनन्द और भक्ति,

इतने लम्बे अन्तरालके पश्चात् तुम्हारा पत्र पाकर बहुत खुशी हुई। मेरी गतिविधियोंके बारेमें 'हरिजन' से तुम्हें हर हफ्ते कुछ पता चलता रहता है। इस समय मैं छोटे-से समुद्र तटवर्ती स्थानपर हूँ जहाँ सरदार वल्लभभाई पटेल मुझे ले गये हैं। मीरा, महादेव और प्यारेलाल मेरे साथ हैं। १० तारीखको हम इस स्थानसे वर्धाके लिए रवाना होंगे। खान अब्दुल गफ्फार खाँ भी मेरे साथ हैं और दक्षिण आफ्रिकाके एक मित्र श्री कैलेनबैक भी जो यहाँ अभी हालमें सिर्फ मुझसे मिलने के लिए आये हैं। प्रो० बोवे[2] जब अक्टूबरमें यहाँ आयेंगे तो उनसे मिलकर मुझे बहुत खुशी होगी। उनकी पुस्तकके लिए जो भूमिका तुम चाहते हो, उसे लिख सकूँगा या नही, मैं नही कह सकता। फिर भी मैं उत्सुकताके साथ उनसे मिलनेकी प्रतीक्षा करूँगा और देखूँगा कि क्या किया जा सकता है।

तुम दोनोंको प्यार।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २३४०) से।

१. नारणदासके पिता, खुशालचन्द गांधी।

२. न्यू एजुकेशन फेलोशिप डेलीगेशन के सदस्य। डेलीगेशन के दो अन्य सदस्य प्रो० डेवीस तथा डॉ० जिलियाकस के साथ उन्होंने २२ और २३ अक्टूबरको वर्धामें हुए शिक्षा-सम्मेलनमें भाग लिया था तथा शिक्षा-सम्बन्धी गांधीजीकी योजनाकी सराहना की थी।

२९३. पत्र : बी० एस० गोपालरावको

४ जून, १९३७

प्रिय गोपालराव,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि तुम्हारा प्रयोग वही है जिसकी वकालत तुमने हमारी उस दुर्भाग्यपूर्ण मुलाकात[1] में की थी और मैंने लोभमें आकर फौरन वहीं ठीक तुम्हारे निर्देशोंके अनुसार तुम्हारे उस प्रयोगको आजमाया था, तो मैं यह जानना चाहूँगा कि क्या तुम राजमहेन्द्रीमें उससे बढ़कर कुछ काम दिखा सकते हो। मुझे विश्वास हो गया है कि मानव-जातिने अभी तक कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं ढूंढ निकाला है जो पूर्णतः दूधका स्थान ले सके। मेरे दिमागमें यह बात भी स्पष्ट है कि न तो मण्डमय तथा नाइट्रोजनी खाद्य-पदार्थोंको और न ही आलू-जैसी मण्डमय सब्जियोंको पकाये बिना खाना चाहिए।

हृदयसे तुम्हारा,

श्रीयुत बी० एस० गोपालराव
हाईड्रो क्रोमोपैथिक रिसर्च ऐण्ड नेचर-क्योर अकेडमी
राजमहेन्द्री

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

२९४. पत्र: पी० के० चेंगम्मालको

४ जून, १९३७

प्रिय चेंगम्माल,

आपका पत्र मिला और आपके पुत्रका भी। यदि गोपालन भारत आया तो मैं देखूँगा कि उसके लिए क्या किया जा सकता है। यदि वह अभी रवाना नहीं हुआ है तो उसे बता दीजिए कि भारतमें जीवन-यापन कठिन है और जो लोग दक्षिण आफ्रिकामें जन्मे और पले हैं, उनको सम्भवतः यहाँकी जलवायु भी

१. १९२९ में; देखिए खण्ड ४१, पृ० ३३-५, ५२-५ और २०३ तथा खण्ड ४९, पृ० ४०७ भी।

अनुकूल न आये। फिर भी यदि गोपालन् सादगीका जीवन बिताये और अपने-आपको भारतीय रीति-रिवाजोंके अनुरूप ढाल सके तो उसे कोई कठिनाई नही होगी।

हृदयसे आपका,

श्री पी० के० चेंगम्माल
१९, डॉविस स्ट्रीट
डूर्न जूतीन
जोहानिसबर्ग
दक्षिण आफ्रिका

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य : प्यारेलाल

२९५. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

४ जून, १९३७

भाई भगवानजी,

तुम वकील होते हुए भी बात समझनेमें गलती करो, और फिर मेरा व्यवहार तुम्हे अप्रिय लगे, तो मैं इसमें क्या करूँ? तुम्हारी अप्रसन्नता मुझे सहन कर लेनी चाहिए; बस तुम देख सकते हो कि तुमने जो मामले गिनाये, उनमें किसीने मुझे पंच नही चुना था। तो क्या मुझे प्रार्थना करनी चाहिए थी कि मुझे पच चुना जाये? करता, तो देवचन्दभाई, नरभेराम, प्रभाशंकर शायद मुझे चुनते। लेकिन उससे क्या मुझे न्यायाधीश बनकर बैठ जाना चाहिए? बिरले मामलोंमें ही मैं पच बनता हूँ, किन्तु जब भी बना हूँ, मैंने निश्चयात्मक निर्णय दिये है। लेकिन पच होना मेरे क्षेत्रके बाहरकी बात है। दोनो पक्षोको समझाकर काम करना, यह मेरा खास तरीका है। लेकिन हमेशा ऐसा हो नही पाता, और इसमें मुझे माथापच्ची भी बहुत करनी पडती है। और तुम तो मानो मुझपर दया करके ऐसे अटपटे मामले ही मेरे सामने रख सकते हो, जिनमें मुझे घटो लगाने पडे। इतना समय कहाँसे लाऊँ? अत. मैं तुम्हारी राय बर्दाश्त कर लूं, यही एक चारा है।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८३४) से। सी० डब्ल्यू० ३०५७ से भी, सौजन्य : नारणदास गांधी

२९६. पत्र : तुलसी मेहरको

४ जून, १९३७

चि० तुलसीमेहर,

तुमारा खत मिला। ऐसी हालतमें वहां[1] रहकर क्या कर सकोगे? चर्खा प्रचार भी कितना होगा? तुमारा वहां रहना सेवा की दृष्टि से उचित है या नहिं, सोचनेकी बात है। इस बातपर काफी सोचकर मुझे लिखो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५५०) से।

२९७. कोचीनकी अछूत प्रथा

कोचीनके एक सज्जन लिखते हैं:

मैंने ८ मई, १९३७ के 'हरिजन' में प्रकाशित आपका लेख[2] "कोचीन-त्रावणकोर" अभी-अभी पढ़ा। मुझे लगता है कि सम्भवतः अनजाने ही आपने सत्यके पक्षको स्पष्ट हानि पहुँचाई है।

कूडलमणिकम मन्दिरके बारेमें जो विवाद है, उसे किसी भी अर्थमें प्रकाश और अन्धकारके बीचका युद्ध नहीं माना जा सकता। कोचीनके लोगोंकी रत्तीभर भी यह भावना नहीं है कि जिस पापसे उन्हें संघर्ष करना चाहिए, वे पुण्य मानकर उसे गले लगाये रहें।

जब आप यह कहते हैं कि "अत्यन्त कट्टर हिन्दू-धर्म भी उन्हें (कोचीनके महाराजाको) कोचीनके मन्दिरोंमें जानेवालोंके निजी आचरणको नियमित करनेकी शायद ही अनुमति देगा", तब ऐसा लगता है कि आप गलतफहमी के शिकार हैं। "भारतके किसी भी ऐसे मन्दिरमें, जहाँ हरिजनोंको पूजाकी अनुमति नहीं, ट्रस्टियोंको यह अधिकार नहीं है कि वे सवर्ण हिन्दुओंके कार्योंकी छानबीन करें; मन्दिरोंमें जाना तो उनका अधिकार ही है"। जहाँ तक कोचीन-सरकारका सम्बन्ध है, उसने कोचीन-मन्दिरमें दर्शनार्थियोंके 'निजी आचरण' को नियमित करनेकी बात नहीं सोची है। उसने उन सवर्ण

१. नेपालमें।

२. देखिए पृ० १८९-९०।

हिन्दुओंके कामोंकी जाँच करनेके अधिकारकी बात भी कभी नहीं सोची जिन्हें मन्दिरोंमें प्रवेशका अधिकार प्राप्त है।

उसने तो महज त्रावणकोरमें हरिजनोंके लिए खोले गये मन्दिरोंमें पूजा-अनुष्ठान करानेवाले तन्त्रियोंको, जहाँतक कोचीनके मन्दिरोंका सम्बन्ध है, अपवित्र घोषित कर दिया है। जिन सवर्ण हिन्दुओंने त्रावणकोरके मन्दिरोंमें पूजाकी है उनके कोचीनके मन्दिरोंमें प्रवेशको किसी भी प्रकारसे निषिद्ध नहीं किया गया है।

तन्त्रियों पर यह प्रतिबन्ध भी कोचीन द्वारा पड़ोसी राज्यके प्रति किसी प्रकारकी घृणा या दुर्भावनाके कारण नहीं लगाया गया था बल्कि केवल वैदिकों और चाद्यारोंके विधानको मानकर लगाया गया था जो न जाने कबसे आध्यात्मिक मामलोंमें इस तरह विधान देनेके अधिकारी माने जाते रहे हैं।

आपका यह कहना है कि "कोचीनमें महाराजाने जिस मन्दिरके बारेमें हस्तक्षेप किया है, उसपर उनका एकान्तिक नियन्त्रण नहीं है। इन मन्दिरों पर त्रावणकोरके महाराजाके भी वास्तविक अधिकार है। स्पष्ट ही कोचीन-आदेश उनमें हस्तक्षेप करता है।"

इतिहास, परम्परा, रीति-रिवाज, व्यवहार सभी इस तथ्यकी ओर इंगित करते हैं कि जबकि कूडलमणिकम मन्दिरके बारेमें त्रावणकोरके महाराजाका अधिकार तच्चुडय कैमलकी नियुक्ति करने तक ही है, कोचीनके महाराजा योगकरोंके अध्यक्षकी हैसियतसे इसके आध्यात्मिक और व्यावहारिक दोनों तरहके मामलोंमें असीम अधिकारोंका उपयोग करते आये हैं। अभी हालमें जब उपद्रव हुए तो वर्तमान कैमलने कोचीनके महाराजाकी सलाह और उनका निर्देश माँगा था — इसी तथ्यसे इस बातका पर्याप्त और निश्चित रूपमें पता चल जाता है कि त्रावणकोरके पास जिन "एकान्तिक अधिकारों" के होनेकी बात कही गई है, उनमें मन्दिरके आध्यात्मिक मामलेमें निर्णय देनेका अधिकार किसी भी हालतमें शामिल नहीं है।

इस बारेमें आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि तिरुवल्लमें त्रावणकोर के दीवान सर सी० पी० रामास्वामी अय्यरने अपने हाल ही के भाषणमें यह स्वीकार किया है कि कूडलमणिकम मन्दिरमें जो-कुछ हुआ है, उसके बारेमें त्रावणकोरकी सरकारको कोई शिकायत नहीं है। क्या यह अपने-आपमें प्रमाण नहीं है कि त्रावणकोरको कोचीनके रुखमें कोई दोष नहीं दिखाई देता?

आपका यह सुझाव कि इन उलझे हुए मामलोंमें पण्डितोंकी राय ले ली जाये, निःसन्देह सभीको मान्य होने योग्य है। मुझे आश्चर्य है कि आप इस सुझावके साथ ही कोचीनके लोगोंसे जो यह अपील करते हैं कि वे महाराजाके आदेशके खिलाफ विरोध-सभाएँ करें और सारे मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल

दिये जानेके लिए आन्दोलन करें — तो आप अपनी इस बातको युक्तिसंगत कैसे ठहरायेंगे? जब तक पण्डितगण अपनी राय न दे दें तब तक इन्तजार क्यों न कर लिया जाये?

"त्रावणकोर दरबारको इस बातका तो पूरा अधिकार है कि वह ऐसे मन्दिरोंको जिनपर केवल उसीका अधिकार और स्वामित्व है, पण्डितोंकी सम्मति लिये बिना, हरिजनोंके लिए खोल दें, पर जो मन्दिर संयुक्त अधिकार-क्षेत्रके अन्तर्गत आते हैं, उनके बारेमें एक नई व्यवस्था देना कदाचित ही ठीक हो। हरिजन-कार्य सदैव और सर्वत्र इस तरह होना चाहिए कि कोई उसपर उँगली न उठा सके।"

इस प्रकारका रुख अपनाना पूरी तरह समझदारीकी बात होगी। यदि त्रावणकोरमें "संयुक्त-अधिकार क्षेत्रके अन्तर्गत" आनेवाले मन्दिरोंके बारेमें "एक नई व्यवस्था" देनेका कोई प्रयास न किया जाये तो हम, कोचीनके निवासी निश्चित रूपसे प्रसन्न होंगे।

मैं यह पत्र सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ। महाराजा कोचीनके जिस पत्रका ऊपर उल्लेख है, वह निम्नांकित है:

कोचीनके महाराजाकी राय है कि कूडलमणिकम मन्दिरमें बिना और देर किये शुद्धीकरणसे सम्बन्धित अनुष्ठान कर दिये जायें। महाराजा समझते हैं कि अवर्णोंके लिए प्रवेशानुमति-प्राप्त मन्दिरोंमें पूजा-अनुष्ठान करनेवाले लोगोंने इस मन्दिरमें प्रवेश करके और यहाँके समारोहोंमें भाग लेकर इसे अपवित्र कर दिया है। कोचीनके महाराजाने अब निश्चित आदेश दिया है कि वे सभी व्यक्ति जिन्होंने अवर्णोंके प्रवेशसे अपवित्र उन मन्दिरोंके अनुष्ठानोंमें भाग लिया है, और [इस कारण] अपवित्र हो गये हैं, उन्हें उपयुक्त प्रायश्चित्त किये बिना कोचीनके मन्दिरोंमें प्रवेशका अधिकार नहीं होगा। शुद्धि होनेके पहले ऐसे लोगोंके लिए मन्दिरोंमें प्रवेश करना, तालावों और कुँओंको छूना निषिद्ध है।

मेरी टिप्पणी उपर्युक्त आदेशके सारपर आधारित थी। इसमें तन्त्रियोंका कोई जिक्र नहीं है। और क्या तन्त्री सवर्ण हिन्दू नहीं है? मेरा कहना यह था और अब भी मैं यही कहता हूँ कि सवर्ण हिन्दू इस कारण हरिजन नहीं बन जाते कि वे उन मन्दिरोंमें जाते हैं या जाकर धार्मिक अनुष्ठान करते हैं जहाँ हरिजनोंको प्रवेशकी अनुमति है। चूंकि आदेश उन्हीं तक सीमित है जिन्होंने त्रावणकोरके मन्दिरोंमें अनुष्ठान किये हैं, इसलिए मेरा यह सोचना गलत था कि आदेश उन सब सवर्ण हिन्दुओंपर लागू होता है जिन्होंने त्रावणकोरके मन्दिरोंमें जाकर दर्शन किये हैं। वैसे मैं अपनी यह गलती तो खुशीसे मान लेता हूँ, किन्तु इससे मेरे तर्कमें कोई फर्क नहीं पड़ता। सवर्णोंको भी उनके छुआछूतमें विश्वास न करनेके कारण अछूत मानकर महाराजाने निश्चय ही छुआछूतके सिद्धान्तका विस्तार किया है।

परन्तु 'हरिजन' मे जो सही और सांगोपांग विवरण छपा है[1] उससे मेरे पत्र-लेखककी अधिकांश दलीलें समाप्त हो जाती हैं। क्योंकि उस विवरणके अनुसार कूडलमणिक्कम मन्दिरके प्रशासनके मामलेमें न तो कोचीन और न त्रावणकोरके महाराजाका ही कोई अधिकार है। इसलिए जब सर सी० पी० रामस्वामी अय्यरने यह कहा कि त्रावणकोरको कोई शिकायत नही है तब उन्होंने मात्र वैधानिक स्थितिका वर्णन किया है। अधिकार केवल तच्चुडय कैमलको ही है और शिकायत करना उन्हीका कर्तव्य है। यह आशा की जा सकती है कि जब तक उन्हे हस्तक्षेपसे पूरी मुक्ति नही मिल जाती और जब तक उन्हें पूजा करनेवालो और अनुष्ठान करनेवाले तन्त्रियोके प्रवेशके बारेमें नियम बनानेका पूरा अधिकार नही मिल जाता, वे चैनसे नही बैठेंगे।

पत्र-लेखकने मामलेको यह सुझाकर निश्चित रूपसे उलझा दिया है कि हरिजनो के लिए मन्दिर खोल देनेके लिए संघर्ष करनेकी कोचीनके हिन्दुओको दी गई मेरी सलाह मेरे इस प्रस्तावसे मेल नही खाती कि सवर्ण हिन्दुओको अछूत घोषित किये जानेकी वैधताके प्रश्नपर (जैसाकि कोचीनके महाराजाके आदेशसे हुआ है) पण्डितो की राय ले ली जाये। और अब यह ज्ञात हो चुकनेपर कि महाराजाको ऐसा आदेश निकालनेका (जैसाकि उन्होने किया है) कोई अधिकार नही था, अब पण्डितोंकी राय लेनेका प्रस्ताव अनावश्यक हो गया है, और इसका महत्व मात्र सैद्धान्तिक रह गया है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-६-१९३७

२९८. यदि यह सच है तो शर्मनाक है

ठक्कर बापाने मुझे निम्नलिखित वक्तव्य भेजा है। यह उन्हे निजामकी रियासतमें हालकी अपनी यात्राके दौरान मिला था.

> छः महीने पहलेकी बात है कि निजामकी रियासतके वारंगल जिलेके करपल्ली नामक स्थान पर एक घटना घटी। ईसाई मिशनरी हिन्दुओं और विशेषकर हरिजनोंका धर्म-परिवर्तन करनेमें जिन तरीकोंका इस्तेमाल करते हैं, उनका पता उस घटनासे लगता है। निश्चित तारीखके कुछ दिन पहले गाँवके पादरियोंने आगामी कार्यक्रमकी सूचना आसपासके सभी गाँवोंमें फैला दी और इस तरह यह सुनिश्चित कर लिया गया कि सभी जातियोंके हिन्दू और विशेषकर हरिजन इस अवसरपर बड़ी संख्यामें मौजूद हों। उसके बाद उस जगह एक पादरी अपने साथ एक १२ सालकी लड़कीको लिये हुए आये।

१. देखिए परिशिष्ट-५।

पादरीने कहा कि वह लड़की वहाँ उपस्थित लोगोंकी सारी बीमारियाँ दूर कर देगी और उन्हें ईश्वर-प्राप्तिका सच्चा मार्ग दिखायेगी।

उसके बाद वह पादरी खड़ा हो गया और उपस्थित लोगोंको सम्बोधित करते हुए उसने कहा: "आप उन देवताओंपर विश्वास करते हैं जो मर गये हैं। आपके रामने जन्म लिया, उसने साधारण मनुष्यकी तरह आचरण और काम किया और उसके बाद मर गया। कृष्णका भी यही हाल था। उसने तो बड़े पाप किये। यहाँ आपके सामने एक व्यक्ति है जो ईसा मसीहका अवतार ही है। अब इस लड़कीमें ईसा मसीहका निवास है। इस तथ्यकी परख आप स्वयं इस तरह कर सकते हैं कि इसके हाथोंके स्पर्शमात्रसे आपकी सारी बीमारियोंका इलाज हो जायेगा। उन देवताओंपर क्यों विश्वास किया जाये जो गुजर चुके हैं और जिनका अब कोई प्रभाव नहीं है? आप सबको ईसा मसीहपर विश्वास करना चाहिए और उनके द्वारा बताये मार्ग पर चलना चाहिए। उनका जन्म कुमारी मेरीसे हुआ। उन्होंने बाइबिलका उपदेश दिया जो हमें मुक्ति दिलाता है; वे बाहरी तौरपर तो मर गये परन्तु संसारके लाखों प्राणियोंका उद्धार करनेके लिए तीसरे दिन फिर जीवित हो गये।"

प्रत्येक व्यक्तिसे एक आना चन्दा और एक धातुके बने क्रॉसके लिए दो आने उगाहे गये। उनसे कहा गया कि जबतक वे क्रॉसको हर वक्त नहीं पहने रखेंगे और उन्हें ईसाई-धर्मकी सचाई और प्रभावपर विश्वास नहीं होगा, तब तक बीमार लोगों पर इलाजका असर नहीं होगा।

ऐसा दो बार हुआ। तीसरी बार जिला-कमेटीके सचिव और दूसरे दोस्त उनसे मिले और उन्हें समझाया कि यदि वे अपने धर्मका प्रचार करना चाहते हैं तो करें, परन्तु वे झूठी बातोंका प्रचार करके लोगोंकी भावनाओंको ठेस न पहुँचाएँ। स्थानीय पुलिसने जब यह समझा कि उस जगह शान्ति भंग होनेकी आशंका है तो उसने वह कार्यवाही रुकवा दी।

यदि यह सत्य है तो यह अपने-आपमें कलककी बात है। मैं चाहूँगा कि सम्बन्धित मिशन इस शिकायतकी जाँच करें और इसपर प्रकाश डालें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-६-१९३७

२९९. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

तीथल, वलसाड़
३/[५][1] जून, १९३७

चि० मणिलाल और सुशीला,

तेरा पत्र मुझे अच्छा लगा। मेरे वाक्यमें अनेक अर्थोका समावेश रहता है, यह ठीक है, इसलिए जो अर्थ तूने लगाया है, वह अर्थ लगाया जा सकता है। किन्तु दूसरा अर्थ जो तूने सुझाया है, वह भी उसमें निहित है। सत्यको कटु बनाना जरूरी नहीं होता, न उसे सँवारना जरूरी होता है। एक मनुष्य दूसरे मनुष्यपर तलवारका प्रहार करे और साक्षी उसका वर्णन करे, तो वह कटु सत्य नहीं होगा। उस वर्णनका परिणाम भले ही प्रहार करनेवालेके लिए कटु सिद्ध हो, फिर भी उससे सत्य कटु नहीं हो जायेगा। हाँ, यदि तलवारके प्रहारका वर्णन नमक-मिर्च मिलाकर किया गया हो, तो वह सत्य कटु माना जा सकता है। इतना लिखनेके बाद मैं यह कहना चाहूँगा कि मुझे दोमें से एकको पसन्द करना पडे, तो मैं असत्यकी अपेक्षा कटु सत्यको पसन्द करूँगा। अत. यदि तुझे मीठा लिखना न आता हो तो मुझे मीठेकी जरूरत नहीं है। कटु भापाको मीठी बनानेमें यदि सत्यकी हत्या होती हो, तो कटु भाषाका ही प्रयोग किया कर।

सहायकोंके मामलेमें तू भाग्यहीन रहा है। कोई अच्छा आदमी तुझे मिला ही नहीं। लेकिन सुशीला ठीक सहायक मिल गई है। यह न होती, तो तेरा क्या होता, यह एक सवाल है। इसलिए केवल स्वार्थकी दृष्टिसे भी सुशीलाको ठीक खुराक, व्यायाम तथा जल-चिकित्सासे अपना स्वास्थ्य अच्छा बना लेना चाहिए।

श्री कैलेनबैक आखिर आ गये हैं। वे मजेमें हैं। अभी तो यहीं हैं। तीथल, समुद्रके किनारेसे छ:-सात फर्लांगपर एक छोटा-सा देहात कहा जा सकता है। हम लोग वहीं हैं। हम १० को रवाना होंगे और ११ को सेगाँव पहुँचेंगे।

हरिलालका पत्र अभी मिला, इसलिए बतौर नमूनेके इस पत्रके साथ उसे भेज रहा हूँ।

फीनिक्सके न्यासका विवरण पढ़ गया। न्यासमें परिवर्तन करनेकी आवश्यकता नहीं है। किन्तु तू यदि कोई सुझाव पेश करना चाहता हो, तो वह शायद कार्यान्वित किया जा सके। इसलिए मैं कोई मसौदा बनाऊँ, उसकी अपेक्षा तेरा ही मसौदा

१. पुनश्चसे यह स्पष्ट है कि यह पत्र गांधीजीने खुशालचन्द गांधीकी मृत्युसे सम्बन्धित नारणदास गांधीका पत्र मिलनेके बाद पूरा किया था; देखिए अगले दो शीर्षक।

बनाना ठीक होगा। श्री कैलेनबैकके साथ मैंने बात की थी। वे कहते हैं कि न्यासमें परिवर्तन करने की अथवा न्यासियोंकी संख्या बढ़ानेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

खुशालभाईके सुन्दर स्वर्गवासके विवरणकी प्रति इस पत्रके साथ संलग्न है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८६३) से।

३००. पत्र : लीलावती आसरको

तीथल
५ जून, १९३७

चि० लीलावती,

कल दोपहरको नारणदासका खुशालभाईके देहान्तका तार आया था। आज उसका सुन्दर पत्र भी आया है। उसकी प्रति इस पत्रके साथ भिजवा रहा हूँ। वहाँ सब लोग इसे पढ़ लें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६५) से। सी० डब्ल्यू० ६६४० से भी, सौजन्य : लीलावती आसर

३०१. पत्र : नारणदास गांधीको

५ जून, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारे तारका जवाब मैंने तार[1] से दिया था; मिला होगा। आज तुम्हारा अत्यन्त सुन्दर पत्र मिला, न एक पंक्ति ज्यादा न एक कम। तुम्हारे सौभाग्यकी तो कोई सीमा ही नहीं है। सारे भाइयों [खुशालचन्द गांधी और मुझ] में से हम दो भाइयोंमें जो विशेष प्रेम था, उसका पता मैंने तुम्हारे जन्मसे पहले ही पा लिया था। फिर भी, अन्तिम घड़ीमें तुम उनके पास रह सके, और मैं यहीं रह गया। लेकिन यह तो जो बिलकुल उचित था, वही हुआ। उनके प्रेमके कारण मैं थोड़े ही वहाँ रह सकता था। तुम्हारा वहाँ रहना तुम्हारा धर्म था, इसलिए तुमने

१. देखिए पृ० २८९।

मेरी जगह ली। अन्तिम घडीमें, वे कुछ और साँसें ले सकें, इसके लिए तुमने उन्हें दवा नही दी, न इन्जेक्शन देने दिये, यह बिलकुल ठीक किया। उनके जीवनसे हमें बहुत सीखनेको मिला है, अब उसी प्रकार उनकी मृत्युमें भी मिले।

कमलाका कामकाज ठीक चल रहा होगा।

जमना[1] का मन बिलकुल शान्त होगा। कन्हैया तो शान्त है ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८५२८ से भी; सौजन्य. नारणदास गांधी

३०२. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

तीथल
५ जून, १९३७

चि० मनुडी,

तेरा पत्र मिला। तूने अपनी बुद्धिका ठीक उपयोग नही किया। इस बातके लिए तुझे मौसीने ही प्रेरित किया अथवा सुरेन्द्र ही प्रेरित कर सकता है, यह तूने कैसे मान लिया? मुझसे अलग हुई कि तूने प्रलोभनोंके विशाल क्षेत्रमें प्रवेश किया। तू अत्यन्त भोली, मनकी सरल तथा कमजोर लड़की है। कोई कम हो या कोई अधिक, लेकिन हम सब होते ऐसे ही हैं। इसीलिए नियमोंके रूपमें अनेक रेखाएँ अपनी रक्षाके लिए हम स्वयं अपने आसपास खीच लेते हैं। मैं मानता हूँ कि ऐसी कुछ रेखाएँ तूने भी अपने आसपास खींच ली होगी। उनका तू कभी उल्लंघन न करे, यह मेरी इच्छा है, यह मेरी माँग है; फिर तुझे ललचानेवाला समस्त संसारमें से चाहे जो व्यक्ति हो? चाहे मौसी हो अथवा पति हो, माँ हो या बाप हो, काका हो या कोई बिलकुल पराया हो।

हम लोग यहाँसे १० को रवाना होनेवाले हैं।

मेरा पत्र तू समझी या नही? तेरा सितार और जूते वसुमतीके साथ बम्बई भेज दिये हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५६१) से; सौजन्य. मनुबहन सु० मशरूवाला

१. नारणदास गांधी की पत्नी।

३०३. पत्र : विजया एन० पटेलको

५ जून, १९३७

चि० विजया,

अब तो तू पक्की हो गई है, इसलिए तुझे पत्र न लिखूं, तब भी चल सकता है। वैसे मैं व्यस्त तो हूँ ही। और फिर अब तो तू गाड़ी हाँकने लगी, खाद ढोने लगी यानी ठीक कनबन[1] हो गई। कनबनको पत्र कैसा? फिर भी चाहती है, तो ले।

तू पत्र सुधरवा लेती है, यह अच्छा करती है। इससे विचार यदि अस्पष्ट हुए, तो स्पष्ट हो जायेंगे, तथा लिखनेमें छूटे हुये शब्द जाँचनेमें जोड़ दिए जानेसे अर्थको स्पष्ट करेंगे।

तुम सब गर्मीका अनुभव करो और मुझे न करने दो, यह तुम लोगोंकी कैसी विचित्र इच्छा है! मैंने तो ११ को वापस पहुँचनेका निश्चय कर लिया है। बहुत करके इतनी जल्दी वर्धामें बरसात शुरू नहीं होती, इसलिए मुझे भी वहाँकी गर्मी भोगनेको मिल जायेगी।

जिन्होंने हमारी रसोई नहीं खाई थी, उन्हें भी उलटी हुई, इसलिए उसका कारण हमें उस भोजनसे अलग खोजना चाहिए। सम्भव है, कारण पानी हो। कुएँमें पोटाशियम परमेंग्नेट डाला जाना चाहिए। पहलेके समान पानी उबालकर रखें और उसका उपयोग करें। यह भी हो सकता है कि किसीने इतना भोजन कर लिया हो कि गर्मीके कारण पच न सका हो और इससे उलटी हो गई हो। गहराईमें जाकर सोचें तो और भी कारण ध्यानमें आ सकते हैं। लेकिन इसके लिए वहीं जाँच करनेकी जरूरत होगी। यह जाँच मैं वहाँ आने तक रोके रखता हूँ।

फिलहाल रात्रिशाला बन्द कर दी, यह अच्छा किया। यदि अपनी शक्तिसे अधिक करने जायें, तो आगे बढ़कर भी पीछे रह जायेंगे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७०७२) से। सी० डब्ल्यू० ४५६४ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली

1. [illegible] एक जाति कनबीका स्त्रीलिंग।

३०४. मेरी भूल

१ मईके 'हरिजन-सेवक' में 'धर्म-संकट'[1] शीर्षक लेखमें मैंने लिखा है कि मामा-भानजीके विवाह-सम्बन्ध दक्षिणमें उच्च माने जानेवाले ब्राह्मणों तकमें त्याज्य नही है, बल्कि स्तुत्य भी माने जाते हैं। ईसाई, मुसलमान, पारसी इत्यादि कौमोमें भी ऐसे सम्बन्ध त्याज्य नही माने जाते। प्रो० बलवन्तराय ठाकोर[2] ने इस सम्बन्धमें एक दिलचस्प पत्र लिखकर मेरी इस भूलको सुधारा है, और उन्होने बताया है कि मामा-फूफीके लड़के-लड़कीके बीच दक्षिणमें विवाह-सम्बन्ध हो सकता है, पर मामा-भानजीमें नही। मुसलमानोमें ऐसा सम्बन्ध मना है, ऐसा कवि चमन बतलाते हैं। इन भूल-सुधारोके लिए मै इन दोनो सज्जनोका आभार मानता हूँ। मामा-फूफीके लड़के-लड़की के सम्बन्धका मुझे प्रत्यक्ष ज्ञान था। तो मामा-भानजीके बीच भी सम्बन्ध होता होगा, ऐसा अनुमान निकालकर मैंने निश्चयात्मक वाक्य लिख दिया। इसके लिए मैं अपने को अक्षन्तव्य समझता हूँ। ऐसे विषयमें ऐसे अनुमानोके लिए स्थान नही होता, यह मुझे समझ लेना चाहिए था। यदि अनुमान निकाला था तो शंकाको स्थान देना चाहिए था। पर मैंने तो निःशंक रीतिसे, जिसका मुझे प्रत्यक्ष ज्ञान न था, उसे इस तरह लिख दिया मानो वह प्रत्यक्ष ज्ञान है। इसमें मेरे सत्यके आग्रहको लाछन लगा है। इसकी माफी पाठकोसे तो माँगता ही हूँ। वे तो उदारतापूर्वक माफी दे देंगे, पर मेरी अन्तरात्मा यों आसानीसे माफ करनेवाली नही। अनुमान-प्रमाण निकालनेमें बहुत सावधानीसे काम लेना पड़ता है, यह सार-मर्म अपनी इस भूलमें से मै अधिक स्पष्टता-पूर्वक निकालता हूँ, और इसके बाद अब ऐसी भूले न करनेमें मै अधिक सावधान रहनेका प्रयत्न करूँगा।[3]

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ६-६-१९३७

१. देखिए पृ० १७०-१।
२. बलवन्तराय कल्याणराय ठाकोर, गुजरातीके कवि और विद्वान्।
३. देखिए "टिप्पणी", २७-६-१९३७।

३०५. पत्र : जमनालाल बजाजको

तीथल
६ जून, १९३७

चि० जमनालाल,

. . .[1] के बारेमें मेरी अकल हैरान है। उसके साथ पत्र-व्यवहार चल रहा है। पर इस घड़ी तो इस तरह लिखनेका मन हो जाता है कि जिस तरह बहुत-से भिक्षुक तुम्हारे पास आते हैं और उन्हें देने अथवा न देनेके लिए तुम्हें मेरी रायकी जरूरत नही रहती, उसी तरह इसे भी समझो और जैसा जँचे वैसा करो। अगर मेरी राय चाहिए ही तो तुम्हें राह देखनी पड़ेगी।

आशा है कि तुम आराम ले सकते होगे, खूब टहलते होगे, और खानेमें परहेज करते होगे।

१० तारीखको सुबह या ९ की शामको हमें यहाँसे रवाना होना है। यदि तुम इस रास्ते से जाओ तो हम साथ चलें। पर जैसी सुविधा हो वैसा करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८४) से।

३०६. पत्र : लालजी परमारको

६ जून, १९३७

भाई लालजी,

आपका पत्र मिला। भंगी भाइयोंके हस्ताक्षरोंवाला पत्र भी मैंने पढ़ लिया। यदि आपको केवल जवाहरलालजी और मुझपर ही भरोसा है और दूसरे अधिकारियों पर नही है तो हम दोनोंको काम करनेमें बड़ी मुश्किल होगी। स्वयं मैं तो कांग्रेसमें हूँ भी नही और हम दोनों जो-कुछ भी कर सकते हैं, वह कांग्रेसके पदाधिकारियोंके माध्यमसे ही कर सकते हैं। मैं समझता हूँ कि म्युनिसिपैलिटीके अध्यक्ष महोदय बापाके निर्णयका पूरी तरह पालन करना चाहते हैं। चन्दूभाई तो वहाँ हैं ही। सरदार यहाँ हैं। परीक्षितलाल[2] इस काममें दिन-रात जुटे रहते हैं। आपको इन सब लोगोंकी मदद मिल सकती है। किन्तु यदि आपको इनमें से किसीपर भी

१. नाम छोड़ दिया गया है।
२. परीक्षितलाल मजमूदार।

विश्वास नहीं हो तो भला मैं किस प्रकार आपकी मदद कर सकता हूँ? मैं १० तारीखको वर्धाके लिए रवाना हो जाऊँगा। आपमें से किसीको भी आना हो तो आप उस तारीखसे पहले आ जाइए। आप मुझसे मिल सकेंगे और सरदारसे भी। आपको मेरी यह खास सलाह है कि आप जल्दबाजीमें कोई कदम उठाकर बादमें मेरी मदद न माँगें, बल्कि कदम उठानेसे पहले ही मेरी सलाह लें।

गुजरातीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

३०७. पत्र : रुस्तम कामाको

६ जून, १९३७

भाई रुस्तम कामा,

जिस प्रकार ग्रामोफोनकी चाभी भर देते हैं तो वह बजता चला जाता है, उसी प्रकार यदि हम अन्तःकरणकी चाभी भर दें तो प्रत्येक श्वासके साथ रामनामका जप होता रहेगा। और उससे उसी प्रकार हृदय शुद्ध हो जायेगा जिस प्रकार कि शरीरमें रक्त-सचरण होनेसे शरीर शुद्ध रहता है। काम करते समय भी, यहाँ तक कि सोते-सोते भी इसी प्रकार रामनामकी रट लगी रहनी चाहिए। इसकी परीक्षा यही है कि मनमें एक भी मलिन विचार न आये, तभी कह सकते हैं कि आत्माकी उन्नति हो रही है।

गुजरातीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

३०८. पत्र : राजेन्द्र प्रसादको

६ जून, १९३७

भाई राजेन्द्र बाबु,

आपका पत्र मिला। हिन्दी-उर्दू बारे में मेरा अभिप्राय[1] स्पष्ट है। सरक्यूलर का विरोध करना ही चाहिये। इससे पहले मि० युनिस[2] से मिलो। डा० मुहमद से मश्वरा करो। दूसरे अच्छे मुसलमानों से भी मिल लो। मौ अबुलकलाम आजादका फतवा ले लो। इस बारे में जवाहरलाल की राय भी लेना आवश्यक है। बिहार प्रधान मंडल में जो हिन्दु सभ्य हैं उनकी भी इस सरक्युलर में संमति होगी ना? यदि थी तो क्यों? सरक्युलर में कुछ कारण बताया है?

१. देखिए "हिन्दी बनाम उर्दू", ३-७-१९३७।

२. बिहार विधान-सभामें स्वतन्त्र मुस्लिम दलके नेता मुहम्मद यूनुस। सरकार बनानेके लिए गवर्नरके आमन्त्रणको कांग्रेस द्वारा ठुकरा दिये जानेपर इन्होंने सरकार बनाई थी।

आफिस स्वीकार करने के बारे में टाइम्स आफ इंडिया में जो इन्टरव्यु[1] है वह पढ़ लिया? मेरा अभिप्राय तो उसीमें है। हमारी शर्त भले कैसे भी नरम की जाय, लेकिन उसका स्वीकार न करें तो हमारे प्रधान मंडल न बनाना चाहिये। ऐसा मेरा दृढ अभिप्राय है। लेकिन अगर जो छ सूबे[2] के नेता लोग है उनका अभिप्राय और अनुभव अलग है तो मेरे अभिप्राय को रद करना चाहिये।

आपकी तबियत अच्छी होगी।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९८८० से; सौजन्य: राजेन्द्र प्रसाद

३०९. पत्र: अमृत कौरको

तीथल, बलसाड़
७ जून, १९३७

प्रिय बागी, पगली और सब कुछ,

३ तारीखके तुम्हारे पत्रका पता नही चला। जरूर वह किसी गलत जगहपर चला गया है। किन्तु ४ तारीखके तुम्हारे पत्रसे इसका सकेत मिल जाता है कि सम्मेलनके बारेमें ३ तारीखके पत्रमें क्या रहा होगा। उस मामलेपर 'हरिजन'[3] में लिखा जा रहा है।

खुशी इस बातकी है कि फाँसका घाव रिसना बन्द हो गया है। तुम अब यह जान गई हो कि किसी बातको छिपाना कितना पापपूर्ण होता है। यदि तुमने मुझे बता दिया होता तो फाँस, अगर थी तो,-सेगाँवमें ही निकल गई होती। वह जरूर रही होगी, तभी तो पैरके अँगूठेमें घुस गई। अब अपने-आपको लानत-मलामत मत देना।

शिमलाके खादी-भण्डार पर लहराते कांग्रेसके झण्डेको चोरी-छिपे हटानेवाले दो अंग्रेजोके बारेमें क्या तुम कुछ जानती हो?

शिमलामें सम्मेलनके समय मैं कहाँ होऊँगा, इसकी हमें पहलेसे अटकल नहीं लगानी चाहिए। तुम जानती ही हो कि यदि मैं आनेकी स्थितिमें रहा तो जरूर आना चाहूँगा।

क्या मैंने तुम्हे बताया था कि 'जपजी'[4] की टिप्पणियों और मूल पाठ-सहित एक सुन्दर गुजराती अनुवाद मेरे पास है? यदि हिन्दीमें ऐसी कोई चीज नही है,

१. देखिए पृ० २७८-८०।
२. मद्रास, संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त, बिहार, उड़ीसा, और बम्बई।
३. देखिए "टिप्पणियाँ", १२-६-१९३७ के अन्तर्गत उप-शीर्षक "राजनैतिक संगठन नहीं"।
४. सिखोंकी प्रार्थना-पुस्तक।

तो यह शर्मकी बात है। लेकिन तुम अब उसे खोजना मत। मेरी आवश्यकताएँ गुजराती-अनुवाद अच्छी तरह पूरी कर देता है।

सस्नेह,

डाकू

[पुनश्च :]

१० को सुबह सवेरे ही यहाँसे चल दूँगा, ११ को सुबह लगभग ७ बजे वर्धा पहुँच जाऊँगा।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६०८) से; सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६४१७ से भी

३१०. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

७ जून, १९३७

चि० अम्बुजम,

तुमने अपने जवाबके लिए मुझे खूब प्रतीक्षा कराई है। लेकिन अन्धेरसे देर भली।

हाँ, गोमती[1] को सभाकी ओरसे मदद दी जा सकती है, लेकिन तभी जब वह सभाके लिए काम करे; अन्यथा नहीं। तुम उसे काम करनेके लिए तैयार करो। यह . . .[2]

कमला राजकोटमें है। वह खुश नजर आती है।

मैं 'रामायण' के अनुवादके गुण और दोषोंके बारेमें पता करूँगा।

कम्बनकी 'रामायण' का एक हिन्दी अनुवाद भी हो, तो अच्छा रहेगा। मैंने सुना है कि वह अत्यन्त सुन्दर कृति है। . . .[3]

तुम्हारे पत्रपर तारीख नहीं है, . . .[4] अपूर्ण है। तुम्हारा अन्तिम . . .[5] अपूर्ण है।

मूल अंग्रेजीसे : अम्बुजम्माल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. किशोरलाल मशरूवालाकी पत्नी।
२ से ५. इन जगहों पर साधन-सूत्र कटा-फटा है।

३११. पत्र : प्रभावतीको

७ जून, १९३७

चि० प्रभा,

इस बार तूने खूब प्रतीक्षा कराई, लेकिन कोई हर्ज नहीं। अधिक कामकाज में ऐसी ढील हो जाती है। अगर फुर्सत मिले, तो पढ़ना मत भूलना, और चरखेको तो भूलना ही नहीं चाहिए। पिताजीकी सेवा कर पा रही है, यह तो अच्छी बात है ही। *श्रीनगरसे सिताब दियारा कितनी दूर है? वह तो गंगा तटपर ही है न?* फिर भी क्या वहाँ गर्मी होती है? तू बगीचेमें कुछ साग-सब्जियाँ क्यों नहीं बोती? बँगलेके आसपास जमीन तो होगी।

वसुमती यहाँ है। अब वह राजकोट जायेगी। बा अभी मरोलीमें है। अतः सेगाँवमें इस समय, जो लोग वहाँ हमेशा रहते हैं उनके अतिरिक्त, बबु (शारदा) होगी, और कैलेनबैक, मेहरताज, लाली, खान साहब, लीला, विजया, मुन्नालाल, बलवन्तसिंह और अण्णा होंगे। नानावटी तो वहाँ है ही। हम लोग यहाँसे १० को सुबह तीन बजे रवाना होंगे, और ११ को सुबह सात बजे वर्धा पहुँचेंगे।

तीथलमें ठंडक मजेकी रहती है। मन्द, मधुर वायु बहती ही रहती है। हम लोगोंमें से बहुत-से तो आकाशके नीचे चौगानमें सोते हैं। ओस नहीं गिरती। तू यहाँ आ सकी होती, तो मैं तेरा वजन बढ़ा देता, दूध भी बढ़ा देता।

'हरिजनबन्धु' वगैरह मिलते होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०१) से।

३१२. पत्र: अमृत कौरको

तीथल
८ जून, १९३७

प्रिय बागी,

३ तारीखका पत्र आज ६ तारीखवाले पत्रके साथ ही मिला। महादेव जाँच कर रहा है।

मीरा ठीक है परन्तु तो भी उसे जब-कभी ज्वर हो जाता है। वह किसी पर्वतीय स्थानपर जानेके लिए तैयार है। उसके तुम्हारे पास आनेके बारेमें तुमने क्या कहा था, वह मैं भूल गया हूँ। मेरा खयाल है कि तुमने अन्तमें 'ना' कर दिया था, और उसका ऐसा खयाल है कि तुमने शायद 'हाँ' कहा था। यदि तुम उसे ले जाना चाहती हो तो तुम शम्मीसे जरूर मिलो और उसे निर्णय करने दो। सुव्यवस्थित घरमें अतिथिके रूपमें वह किसीके लिए असुविधाका कारण नहीं बनती। लेकिन कोई बात नहीं। तुम इसका निश्चय रत्तीभर भी संकोच किये बिना करना। तुम्हारी अस्वीकृतिको गलत नहीं समझा जायेगा।

'हरिजन' में मैंने जो कहा[1] है, वह तुम देख लेना। यदि वह काफी न हो तो मुझे बताना।

तुममें राजनीतिक समझ हो सकती है। मुझमें बिलकुल नहीं है। परन्तु मुझमें अहिंसाकी समझ है, जिससे कपूरथलाकी रहनेवाली तुम अपरिचित हो। मैं तो अहिंसा की शक्तियोंको आगे बढ़ानेमें ही [समस्याओंका] समाधान देखता हूँ। यही मेरी नीति रही है और इससे मेरा काम अच्छी तरह चलता रहा है। जब मुझपर जबरदस्ती यह दोष लगाया जाता है कि मुझमें अपेक्षित कुशाग्रताकी कमी है तब मुझे लगता है कि कुशाग्रता मुझमें पर्याप्त मात्रामें है। वे मेरे प्रस्ताव[2]को किसी और तरह इतना तुच्छ कैसे ठहरा सकते हैं? परन्तु मैं किसी भी दलका अनुयायी नहीं हूँ। कांग्रेस सुझावको रद कर सकती है, पदोंको बिलकुल अस्वीकार कर सकती है या फिर अपना कदम वापस लेकर उन्हें बिना शर्त स्वीकार कर सकती है।

तुम फीतेके बारेमें विट्ठलदासको लिखो। यह आश्रममें बनता है। तुम्हें जो पसन्द है, उसके नमूने उसे भेजना।

सस्नेह,

बापू

१. सम्भवत. हिन्दी साहित्य सम्मेलनके बारेमें; देखिए पृ० ३१४-५।
२. देखिए "भेंट: टाइम्स ऑफ इंडिया के प्रतिनिधिको", पृ० २७८-८०।

[पुनश्च :]

मुझे मीराके बारेमें वर्धा तार करना।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७८७) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९४३ से भी

३१३. पत्र : लीलावती आसरको

८ जून, १९३७

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला। तू नाहक घबराती है। जब तक तेरी तबीयत ठीक नहीं है, तब तक तुझे औरोंसे सेवा लेनेका अधिकार है। चाय पीना कोई इतना बड़ा अपराध नहीं है कि उसके लिए आश्रम छोड़ना पड़े। आश्रम छोड़नेके कारण तो बड़े होतेहैं। हाँ, तुझे वहाँ रहना अच्छा ही न लगता हो, तो और बात है। जब तक तू महाव्रतोंके पालनका प्रयत्न कर रही है, तब तक तुझे भागनेकी बिलकुल जरूरत नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३६६) से। सी० डब्ल्यू० ६६१४ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

३१४. पत्र : जे० बी० कृपालानीको

तीथल
९ जून, १९३७

प्रिय प्रोफेसर,

सरदारने उत्तर देनेके लिए आपका गत मासकी ३१ तारीखका पत्र मुझे सौंप दिया है।

मैं आपसे पूर्णतः सहमत हूँ कि अखबारोंमें जिन अपहरणोंकी खबरें छपी हैं उनके मामलेमें कांग्रेसको सोच-विचार कर अपनी एक नीति निर्धारित करनी है और इस सम्बन्धमें अगुआ बनना है। सबसे पहले तो हमें तथ्योंका निश्चय कर लेना चाहिए और इसके लिए एक निष्पक्ष जाँच करनी होगी। सीमा प्रान्तके कांग्रेसियों पर इस कामका भार डालना होगा कि कबाइलियोंपर उनका जो-कुछ भी प्रभाव हो, उसका सहारा लेकर वे अपहृत लड़कियोंका पता लगायें और उन्हें लौटा लायें। यदि ये अपहरण केवल राजनैतिक उद्देश्यसे हैं तो वे लोग सिर्फ लड़कियोंका ही अपहरण क्यों करते हैं? यदि वे सरकारके भड़कानेपर ऐसा करते हैं तो हमारे पास इस कथनका कुछ प्रमाण होना चाहिए।

सरकारकी सीमाप्रान्तीय नीतिपर हमारे प्रस्ताव तो हों, उनके साथ-साथ हम अपहरणोंकी प्रकट रूपसे निन्दा करें और कबाइलियोंसे विनती करें तथा सामान्य कांग्रेसजनोंके लिए और विशेष रूपसे सीमाप्रान्तके कांग्रेसजनोंके मार्गदर्शनके लिए अपनी नीति स्पष्ट निर्धारित करें।[1]

आपका,

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल। फाइल नं० ३००१/एच०/३६-३७/४-१ से भी; सौजन्य: महाराष्ट्र सरकार

३१५. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

९ जून, १९३७

चि० कान्ति,

यद्यपि तू प्रथम श्रेणीमें नहीं आया, फिर भी उसके बहुत करीब पहुँच गया। तेरी तैयारी तो बहुत कम थी, इसलिए जो मिला वही बहुत है; कमसे-कम मैं तो ऐसा ही मानता हूँ।

खुशालभाईका अवसान उनके योग्य ही हुआ। अन्त तक भगवानका ध्यान करते-करते ही गये। आज अब यहां आखिरी दिन है, इसलिए इतना ही लिखता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२३) से; सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

३१६. पत्र : ब्रजकृष्ण चांदीवालाको

९ जून, १९३७

चि० ब्रजकृष्ण,

तुम्हारा खत मिला। इतना बहुत परिश्रम गिरिराजके लिए उठानेकी आवश्यकता नहीं है[2]।

परसों सेगांव पहुंचुगा। कांग्रेस तक वहीं रहनेका ईरादा तो है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४४९) से।

१. इस सिलसिलेमें जवाहरलाल नेहरूने २२ जूनको एक वक्तव्य दिया था, देखिए "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", १५-६-१९३७ भी।

२. देखिए "पत्र: ब्रजकृष्ण चांदीवालाको", २-६-१९३७।

३१७. भाषण: गोरक्षापर, तीथलमें[1]

[१० जून, १९३७ के पूर्व][2]

दयनीय बात यह है कि हमारे अधिकांश गोरक्षा संघ गाय और भैंस दोनोंको पालते हैं और भैंसका दूध बेचकर अपनी संस्थाको एक लाभकारी संस्थाके रूपमें चलानेकी कोशिश करते हैं। उनकी राय है कि गाय आर्थिक दृष्टिसे लाभकर नहीं है। वे यह नहीं जानते कि गायकी यदि विशेष देखभाल की जाये, उसकी दूध देनेकी क्षमता बढ़ाने पर ध्यान दिया जाये, उसकी नस्लको उन्नत बनानेका प्रयत्न किया जाये, और मरनेपर उसके मृत शरीरके छोटे-से-छोटे भागका भी उपयोग किया जाये तो आर्थिक दृष्टिसे भी गाय कहीं अधिक लाभजनक सिद्ध होगी। यदि कोई मुझे यह विश्वास दिला दे कि उन्हें अपनी उदरपूर्तिका साधन बनाये बिना, उनको कसाईके हवाले किये बिना गाय और भैंस दोनोंकी रक्षा की जा सकती है तो मैं अपनी योजनामें दोनोंको सम्मिलित करना चाहूँगा। फिर भी सच बात तो यह है, कि उससे जो दूध मिलता है उसे छोड़कर भैंस आर्थिक दृष्टिसे एक लाभकर प्राणी नहीं है। थोड़ेसे नमीवाले प्रदेशोंको छोड़कर, खेतीके लिए भैंस बिलकुल अनुपयोगी है, और इसीलिए हम भैंसके नर बच्चोंको या तो भूखा रखते हैं या खत्म कर देते हैं। प्रसिद्ध दुग्ध-केन्द्रोंमें से कुछ ऐसी डेरियाँ हैं जिन्हें इस बातका गर्व है कि उनके यहाँकी गायोंका दुग्ध-उत्पादन बहुत है, लेकिन उनमें भी बछड़ोंको मार डाला जाता है। हमें उन गायोंको अच्छी दूध देनेवाली बनाना चाहिए और हल के लिए उत्तम बैलोंको जन्म देनेवाली माँ बनाना चाहिए। ऐसा कहनेमें कोई फायदा नहीं कि गायके दूधकी माँग नहीं है। यदि हम गायके दूधके अलावा अन्य दूधको मुहैया करनेसे इनकार कर देते है और यदि हम उत्तम, शुद्ध, अच्छे, ढंगसे सुरक्षित रखे हुए दूधकी पूर्ति करनेका आश्वासन देते हैं तो हरेक व्यक्ति हमारा नियमित ग्राहक बननेके लिए राजी हो जायेगा। लेकिन पहली बात यह है कि भैंसको अलग कर देना चाहिए। यह ठीक खादीपर विशेष जोर देनेके समान ही है। आप अपना ध्यान खादी और मिलके कपड़ेके बीच बाँटकर खादीको प्रोत्साहन नहीं दे सकते। किन्तु हम लोगोंने गायके आहार और उसके रख-रखाव की ओर आवश्यक ध्यान नहीं दिया। उत्तम परिणामोंको आप दिखलाइए फिर मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आपको संरक्षणके अभावकी शिकायत नहीं होगी। सोचिए कि अमुक कम्पनीके

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत।

२. १० जूनको गांधीजीने तीथलसे वर्धा के लिए प्रस्थान किया था; देखिए पिछले दो शीर्षक तथा "पत्र: अमृत कौरको", ७-६-१९३७ भी।

दोवरोंकी खातिर लोग पागलों-जैसे क्यों दौड़ रहे हैं? क्योंकि लोग जानते हैं कि वह एक अधिक मुनाफा देनेवाली कम्पनी है। यदि आप लोगोंमें विश्वास भर दें कि आपकी योजना भी आमदनीवाली होगी तो वे आपके पास दौड़े आयेंगे और अपना संरक्षण देंगे। एक जगहको चुन लीजिए और उसपर ध्यान दीजिए। बम्बई जैसा एक शहर लीजिए, वहाँ बच्चोंकी गणना लीजिए, ऐसे लोगोंकी सूची तैयार कीजिए जो अपने बच्चोंके लिए केवल गायका ही दूध खरीदेंगे। अब आप अपने दुग्ध-केन्द्रको ऐसा बनायें जो विशेषरूपसे गायके दूधकी ही पूर्ति करता हो। क्या आप जानते नहीं कि चायकी कम्पनियाँ चाय जैसी चीजको भी किस प्रकार लोकप्रिय बना रही हैं। वे चायकी पुड़ियाँ मुफ्त बाँटती हैं, मुफ्त चायकी दुकानें चलाती हैं। ऐसा ही आप कर सकते हैं और गायके दूधको लोकप्रिय बना सकते हैं। पूरे बम्बईकी आवश्यकताको पूरा करना आपकी आकांक्षा होनी चाहिए। कलकत्ता जैसे शहरमें गायके दूधकी माँग है। हरियाणाकी उत्तम नस्लकी गायें कलकत्तामें लाई जाती हैं, किन्तु गायका दूध देना बन्द होते ही वे उसे कसाईके पास भेज देते हैं। फलस्वरूप पंजाबमें हरियाणाकी गायोंकी कमी हो रही है। नहीं, गायोंको कभी कसाईके पास भेजनेकी जरूरत नहीं है। उसके दूध और उसकी सतानोंसे जो मुनाफा होगा, वह इतना काफी होगा कि दूध बन्द होनेके बाद भी उसे मरने तक बिना हानि उठाये चारा-पानी दिया जा सके। मरनेके पश्चात् भी वह वही कीमत लायेगी जो कीमत उसकी जीवितावस्थामें थी। गायकी सुरक्षा या तो राज्य द्वारा होगी या उन लोगों द्वारा जो उनकी ओर सच्ची धार्मिक दृष्टिसे देखते हैं। पलभरके लिए हम राज्यको एक तरफ रख दें तो धार्मिक प्रवृत्तिके लोग ही हैं जो इस काममें आगे आयेंगे और वैज्ञानिक ढंगसे तथा उद्यमपूर्वक गोपालनका काम करेंगे। ज्ञानके अभावमें मानवीयता व्यर्थ ही नहीं है, वह हानिकारक भी हो सकती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-६-१९३७.

३१८. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

वर्धा
११ जून, १९३७

प्रिय सी० आर०,

जेटलैंड और उनके दलके बारेमें हमारी आपसी बातचीतको यदि प्रगट करना ही पड़ा, तो फिर वह किस ढंगसे पेश की गई इस बारेमें कुछ नहीं कहना है। रफी क्या कहते हैं, तुम्हें इसका तो कोई खयाल नहीं करना चाहिए। फिर भी, मैं महसूस करता हूँ कि तुम्हारी स्थिति मुझसे भिन्न है। मैं तटस्थ दृष्टिसे एक मध्यस्थ व्यक्तिकी तरह लिख-बोल सकता हूँ, परन्तु तुम ऐसा नहीं कर सकते। मेरी बातका बिना किसी खतरेके खण्डन किया जा सकता है; लेकिन तुम्हारी बातका नहीं।

जिसमें घनश्यामदासके पत्र[1] के एक अंशकी ओर तुमने मेरा ध्यान आकर्षित किया था, वह पत्र मुझे मिल गया था। मैं उसे पहले ही देख चुका था, पर मुझ पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। बेशक उनके तर्कमें बल है। पर मेरे दृष्टिकोणसे वह अप्रासंगिक है। मैं पद-ग्रहण करूँ, इससे पहले उन लोगोंकी ओरसे एक संकेत चाहता हूँ, और मैं उस संकेतको अत्यावश्यक मानता हूँ। अतः मेरी नजरमें जब तक हमारी शर्तें, वह जो भी हो, पूरी नहीं होती तब तक स्वीकृति एक भारी और घातक गलती ही होगी। इसलिए इस बातसे मेरी स्थितिमें कोई फर्क नहीं पड़ता कि मेरी शर्त जाहिरा तौरपर बचकानी या अर्थहीन तक है।

तुम्हारे टिकटके लिए पूछनेकी जो बात सुनी, वह क्या है?

जेटलैंडने अभी-अभी जो कहा है उसके बारेमें तुम्हारा क्या कहना है?

आशा है, लक्ष्मी अच्छी तरह होगी।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०६४) से।

३१९. पत्र : एच० रनहैम ब्राउनको

११ जून, १९३७

प्रिय मित्र,

मेरी इतनी इच्छा होती है कि मैं सम्मेलनके दरम्यान आपके साथ शरीक हो सकता। किन्तु निश्चय ही आपके लिए मेरी शुभ कामनाएँ हैं। आपके सम्मेलनकी सफलताका अर्थ होगा शान्तिकी सफलता और घृणाका नितान्त अभाव होनेके कारण एक संघर्षविहीन राज्य स्थापना।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री एच० रनहैम ब्राउन,
११ एवे रोड
एनफील्ड (मिडलसेक्स)
इंग्लैण्ड

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

१. महादेव देसाईके नाम २६ मईके अपने पत्रमें घनश्यामदास बिड़लाने लिखा था: "यद्यपि मैं यह मानता हूँ कि इस्तीफेकी अपेक्षा बरखास्तगीमें हमें कुछ ज्यादा मिल सकता है, पर मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि बरखास्तगी भी कोई हस्तक्षेपसे मुक्त चीज नहीं है। ... सभी कहते हैं कि जेटलैंडके भाषणके बाद भी मन्त्रि-पद स्वीकार न करना एक बड़ी गलती होगी ... मेरी अभी तक यही राय है कि जेटलैंडके भाषणके बाद, जिससे मेरे ख्यालमें मुद्दा पूरा हो जाता है, सम्बन्ध तोड़ना भारी गलती होगी। ... यह कहना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ, क्योंकि बापू परिस्थिति पर पुनर्विचार कर सकते हैं।"

३२०. पत्र : डैनियल ऑलिवरको

११ जून, १९३७

प्रिय मित्र,

आपके दिनाक २० मईके पत्रके लिए धन्यवाद। मेरे पास देने लायक और कोई सन्देश नही है सिवाय इसके कि इस धरतीकी किसी भी जाति या सभी जातिके लोगोके त्राणका एकमात्र उपाय यही है कि जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें, बिना किसी अपवादके, सत्य और अहिंसाका पालन हो। और यह निष्कर्ष आधी शताब्दीसे कुछ ऊपरके अनवरत अनुभवपर आधारित है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री डैनियल ऑलिवर,
हम्माना
लेबनॉन, सीरिया

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य . प्यारेलाल

३२१. पत्र : अब्बास के० वर्तेजीको

सेगांव
११ जून, १९३७

चि० अब्बास,

तेरा पत्र मिला। तुझे नारणदासभाईको छोड़ना पड़ा, यह अच्छा नही हुआ। लेकिन तूने काम करना शुरू कर दिया है, यह अच्छी बात है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३१३) से।

३२२. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेगाँव
[११] जून, १९३७ [या उसके पश्चात्][1]

चि० अंबुजम,

तुम्हारा खत मिला। फल भी मिले। रेल्वेमें किसीने सेव थोडे चुरा लिये थे। टोकरी अच्छी तरहसे पैक होनी चाहिये। दोबारा जब फल भेजनेका मौका आ जावे तो खट्टे लीबू रखना। यहां वह अच्छे नही मिलते हैं। वर्षामें धूप तो काफी पड़ती है। गोमतिके बारेमें लिख चुका[2] हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६१०) से; सौजन्य : एस० अम्बुजम्माल। अम्बुजम्माल पेपर्स भी; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३२३. टिप्पणियाँ

राजनैतिक संगठन नहीं

हिन्दी प्रेमियोंको मालूम ही है कि हिन्दी साहित्य-सम्मेलनका अगला अधिवेशन शिमलामें होना है। एक सज्जनने, जो शिमलामें ही काम करते हैं, लिखा है कि यहाँ यह सन्देह फैला है कि सम्मेलन मुस्लिम-विरोधी प्रवृत्तियोंवाला एक राजनैतिक संगठन है। दो बार इसका प्रधान रह चुकनेकी हैसियतसे मैं निस्संकोच यह कह सकता हूँ कि यह एक विशुद्ध गैर-राजनैतिक सगठन है। राजा और महाराजा इसके संरक्षक है। बहुत-से गैर-कांग्रेसी व्यक्ति इससे जुड़े हैं। राजा और महाराजा प्रायः इसके अधिवेशनोंमें भाग लेते हैं। हिज हाईनेस महाराजा बड़ौदा इसके प्रधान रह चुके हैं। जहाँ तक मुझे मालूम है, इसमें मुस्लिम-विरोधी प्रवृत्तियाँ बिलकुल नही है। यदि मुझे किसी ऐसी प्रवृत्तिका सन्देह भी होता तो मै इसका प्रधान नही बन सकता था। मै आशा करता हूँ कि 'मुस्लिम-विरोधसे आशय उर्दू-विरोध नही है। बहुत-से लोग उर्दू-विरोध और मुस्लिम-विरोधको समानार्थी शब्दोकी तरह प्रयुक्त करते हैं। पर यह तो एक अन्ध-विश्वास हुआ। उर्दू पंजाब, दिल्ली और कश्मीरमें समानरूपसे बहुत-से हिन्दुओं और मुसलमानोंकी भाषा है। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि

१. मूलमें यह कटा-फटा है और तारीख अपाठ्य है। गांधीजी सेगाँव ११ जून, १९३७ को पहुँचे थे।
२. देखिए पृ० ३०५।

१९३५ में हुए सम्मेलनके इन्दौर-अधिवेशनने हिन्दीकी व्याख्या करते हुए उसे वह भाषा बताया था, जिसे उत्तरके हिन्दू और मुसलमान बोलते हैं और देवनागरी या फारसी लिपिमें लिखते हैं। इसलिए मैं यह आशा करता हूँ कि मुस्लिम-विरोध शब्दका प्रयोग यदि उर्दू-विरोधके अर्थमें हुआ है, तो भी पत्र-लेखकने जिस सन्देहका जिक्र किया है वह दूर हो जायेगा और शिमलामें होनेवाले हिन्दी साहित्य-सम्मेलनके अधिवेशनकी तैयारीका काम, उसके उद्देश्य या रुखमें किसी भी तरहके सन्देह बिना जारी रहेगा।

सामाजिक चारा

एक बहनने, जिसे 'साल्वेशन आर्मी' के कार्यके अध्ययनका अवसर मिला है, मुझे यह दिलचस्प टिप्पणी भेजी है.

> 'साल्वेशन आर्मी' सचमुच तो एक धार्मिक संगठन है, जिसकी मुख्य विशेषता 'आक्रामक ढंगसे इंजील-प्रचार' है। 'आर्मी' जो सामाजिक कार्य करती है उसे 'आर्मी के नेताओंने शुरूसे ही सामाजिक बुराइयोंके खिलाफ ऐसी संगठित लड़ाई माना है जिससे इंजील-प्रचारके लिए रास्ता साफ हो सके।' ये वाक्य इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (संस्करण १४)से उद्धृत हैं। उसमें आगे कहा गया है, 'ऐसा महसूस किया गया है कि बहुत-से लोगोंकी, विशेषतः बड़े शहरोंमें, भौतिक और पारिवेशिक स्थिति ऐसी है कि उनके लिए 'आर्मी' द्वारा दिये जानेवाले आध्यात्मिक सन्देशको समझना अत्यन्त कठिन हो गया है। इसलिए विविध सामाजिक गतिविधियाँ शुरू की गईं जो स्वरूपमें विभिन्न होते हुए भी एक ही उद्देश्यसे प्रेरित हैं।' जनरल बूथने अपने पुत्रको एक पत्रमें स्वयं लिखा था कि 'सामाजिक कार्य तो चारा है, पर मुक्ति वह काँटा है जो मछलीको ऊपर किनारेपर लाता है।'
>
> इस मिशनका उद्देश्य और कार्य, इसके संस्थापकके अनुसार, 'ऐसे लोगोंकी उपेक्षित भीड़को जो ईश्वरविहीन और आशाविहीन जीवन बिता रहे हैं, परिवर्तित करना है, और इस प्रकार इन परिवर्तित लोगोंको ईसाई बिरादरीमें संगठित करना है।' 'साल्वेशन आर्मी'की १९३७ की वार्षिकीमें यह भी कहा गया है कि सभी जगहोंकी 'साल्वेशन आर्मीके सदस्योंसे यह अनुरोध किया गया कि वे वैयक्तिक इंजील-प्रचारको महत्वपूर्ण समझें — प्रत्येक व्यक्ति दूसरोंकी मुक्तिके लिए ईश्वरके आगे उत्तरदायी है। उनका ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया कि वैयक्तिक सम्पर्क, वैयक्तिक बातचीत, वैयक्तिक प्रयास सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं; यही नहीं, हमारी वर्दी पहननेवाले प्रत्येक व्यक्तिका यह कर्तव्य तक है।' इस प्रकार 'हर सैनिक आत्माका विजेता है' यह एक प्रेरणादायी नारा बन गया और अभी भी है।

निस्सन्देह, 'आर्मी' के बारेमें जो बात सच है, वही कमोबेश सभी ईसाई मिशनोंके बारेमें भी सच है। वे सामाजिक कार्य सामाजिक कार्यके लिए नहीं करते, बल्कि

इसलिए करते हैं कि वह सामाजिक सेवा ग्रहण करनेवालोंकी 'मुक्ति' में सहायक होता है। यदि ईसाई भारतमें हमारे बीच रहनेके लिए और हमारे जीवनको अपने जीवन की सुरभिसे, यदि उनमें कोई सुरभि है तो, सुवासित करनेके लिए आते, तो भारत का इतिहास किसी और ही रूपमें लिखा गया होता। तब परस्पर सद्भावना होती और सन्देहका नामोनिशान भी न होता। परन्तु उनमें से कुछका कहना है, 'जो-कुछ आप कहते हैं यदि ईसा उसे ठीक समझते तो दुनियामें एक भी ईसाई न होता।' इसके उत्तरसे एक विवाद खड़ा हो जायेगा, जिसमें फँसनेकी मुझे कोई इच्छा नहीं है। पर मैं यह अवश्य कहना चाहूँगा कि ईसाने एक नये धर्मका नहीं, बल्कि एक नये जीवनका उपदेश दिया था। उन्होंने लोगोंको प्रायश्चित्त करनेका आह्वान दिया था। यह उनका ही वचन था, 'मेरे आगे प्रभु-प्रभु कहनेवाला हर आदमी स्वर्गके राज्यमें प्रवेश नहीं करेगा, बल्कि जो स्वर्गमें रहनेवाले मेरे पिताकी इच्छाके अनुसार कार्य करता है, केवल वही प्रवेश करेगा।'[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १२-६-१९३७

३२४. हरिजन

परन्तु जहाँ तक खुद हरिजनोंका सवाल है, मैं निश्चय ही इस बातसे सहमत नहीं हूँ कि वे मूर्ख या बुद्धिहीन हैं या उनमें धार्मिक भावना नहीं है। वे असंस्कृत भी नहीं हैं। आप हमपर जोर-जबरदस्तीके जिन तरीकोंको काममें लानेका आरोप लगाते हैं यदि हमने वैसा करनेकी कोशिश की होगी तो यह तय है कि हमें कोई सफलता नहीं मिलेगी। मुझे वे उतने ही भले आदमी लगते हैं जितने कि मैं, मेरे कुछ भाई-बहन और मित्र आदि हैं। वे उत्पीड़ित और अनपढ़ अवश्य हैं, साफ-सुथरे भी नहीं, पर वे विचारशील, धर्मपरायण, उदार और दयालु हैं। चरित्रमें वे मुझे आम आदमीसे नीचे नहीं, कुछ ऊँचे ही लगते हैं। मुझे तो वे सवर्णोंसे ज्यादा अच्छे लगते हैं — पर हो सकता है यह मेरी रुचिका अभाव हो।

फिर भी, मैं यह समझ नहीं पाती कि उनके बीच रहते हुए भी आप उनके प्रति यह सतही रुख कैसे अपनाये हुए हैं। मेरे खयालसे इसका कारण केवल यही हो सकता है कि या तो आप उन्हें जानते नहीं हैं, या फिर आपमें सच्ची लगन नहीं है। दूसरी बात ध्यान देने लायक नहीं है। यह पहली बात सच हो सकती है क्योंकि कभी-कभी हम अपने ही साथ, एक ही घरमें रहनेवालोंके बारेमें भी लगभग कुछ नहीं जानते। हरिजनोंमें एक जबरदस्त आत्मरक्षात्मक मनोग्रन्थि होती है जिसे तोड़ना मुश्किल होता है। यह एक

१. सेंट मैथ्यू, ७-२१।

ऐसा संकोच है जिसके निकट वे किसी भी बाहरी आदमीको आसानीसे नहीं आने देते। वे आपके 'महात्मापन' के रोबमें आ जायें, यह तो हो सकता है। (हम सभी थोड़े-बहुत अंशमें इस रोबमें दबे हैं) या इसका कारण यह हो सकता है कि वे सोचते हैं, आप रामके अवतार हैं; सचमुच वे ऐसा सोचते हैं। हो सकता है आप शुरुआत उनके 'उद्धार' की कोशिशसे कर रहे हों। मनुष्य अपना 'उद्धार' किये जानेकी बातकी सराहना करे, यह मानव-स्वभावके प्रतिकूल है। हो सकता है आपका रुख अनजाने ही सही, थोड़ा-बहुत अपने 'ऊँची जातिवाला' होनेका हो — सवर्ण ईसाइयोंको कभी-कभी यह कठिनाई होती है। हो सकता है यह दृष्टिकोण आपके शहरी होनेके कारण हो। कुछ भी हो, पर जिस तरह मैं उन्हें देखती हूँ, आप उन्हें उस तरह नहीं देखते।

मैं यह मानती हूँ कि मुझे कुछ सुविधाएँ हैं। मैं खुद गाँवकी रहनेवाली हूँ, इसलिए खेती, बागबानी और मुर्गी, सुअर, बकरी, गाय पालनेवालोंके साथ घुलमिल सकती हूँ। चूँकि मैं एक नर्स भी हूँ, मैं बीमारीमें उनकी मदद कर सकती हूँ और उन्हें स्वास्थ्यको सुधारनेके ढंग सिखा सकती हूँ। सवर्ण हिन्दू मुझे उन्हींकी तरह अस्पृश्य मानते थे। गाँवोंका दौरा करते हुए मुझे उन पोखरोंकी बजाय, जहाँ सुअर और भैंसें लोट रही थीं, मवेशियोंकी एक अच्छी नाँदसे पानी लेनेकी अनुमति मिल जानेसे मुझे खुशी ही हुई थी। इस तरह हरिजन मुझे अपने बीच पहुँचनेपर कोई बाहरी आदमी या 'अतिथि' नहीं मानते थे, बल्कि वे मुझे अपना 'सम्बन्धी,' अपनेमें से एक मानते थे। परिणामस्वरूप हम एक-दूसरेको चाहने लगे, एक-दूसरेका सम्मान करने लगे और आन्तरिक रूपसे एक-दूसरे पर भरोसा करने लगे। हमारा आन्तरिक मेल-मिलाप सदा समानता पर आधारित था। मैंने उन्हें जितना दिया, उनसे मुझे उतना ही, शायद उससे भी अधिक मिला। कमसे-कम मैं पूरी ईमानदारीके साथ यह कह सकती हूँ कि मैंने अपने जीवनमें जो थोड़ा-बहुत गहरा आध्यात्मिक चिन्तन किया, मुझे जो सर्वोत्तम आध्यात्मिक उपलब्धि हुई, उसे मैंने दलित वर्गके हिन्दुओंके भीतर ही देखा है — यहाँ मेरा आशय कुछ अपवादरूप शिक्षित व्यक्तियोंसे नहीं, बल्कि अनपढ़ ग्रामवासियोंसे है। किन्तु यदि मैं उन्हें लालच आदि देकर ईसाई बन जानेके लिए उनके पीछे पड़ती, तो क्या मैं उनमें ये गुण देख सकती थी? निस्सन्देह तब यह असम्भव होगा।

कभी-कभी मैं, इनमें से जो ईसाई विचारधारासे पूरी तरह परिचित होता था, उससे जानकारीके लिए यह पूछती थी कि वह ईसाई-धर्मके बारेमें, उसके पक्ष और विपक्षमें क्या सोचता है। और वह तुरन्त और निस्संकोच इस तरह जवाब देता था मानो मैंने यह पूछा हो कि बैलको खली खिलाई जाये या ज्वार, और किसलिए।

यह तो ठीक है कि राजनैतिक और आर्थिक मामलोंपर भी वे हमसे बातचीत करते हैं। किन्तु इस बातका कारण तो उनकी आध्यात्मिक रुचि है कि वे आधी-आधी रात तक हमारे पास बैठे रहते हैं। और पौ फटते ही या फिर कड़ी दोपहरीमें हमारे पास यह कहते हुए आ जाते हैं कि "ईश्वरको हमसे प्रेम है, यह बात सुननेकी हमारी लालसा कितनी प्रबल है, यदि इसका पता आपको होता तो आपका मन आराम करनेका होगा ही नहीं।"

यदि आप उस आवश्यकताको पूरा नहीं कर पाये तो आप दलित-वर्गको आकर्षित नहीं कर सकते और यदि आप उसे पूरा कर सकें तो आप उन्हें आकर्षित कर सकेंगे। क्योंकि उनकी माँग ही यह है, यहाँ तक कि शूद्रों और कुछ वैश्यों और ब्राह्मणों तककी भी यही माँग है।

यह एक अमेरिकी बहनके, जो मिशनरीकी हैसियतसे भारतमें बरसो रही है, लम्बे पत्र[1] का एक अंश है। इस अंशकी आखिरी बातका मैं हृदयसे समर्थन करता हूं। निस्सन्देह, यदि मैं हरिजनोंकी आध्यात्मिक आवश्यकताएँ पूरी न कर पाऊँ तो मैं उन्हें आकर्षित नहीं कर सकता। पर मैं यह सोचनेकी भूल ही नहीं कर सकता कि मैं या कोई भी व्यक्ति अपने पड़ोसीकी आध्यात्मिक आवश्यकताएँ पूरी कर सकता है। जैसे शरीरकी आवश्यकताएँ आत्माके रास्ते पूरी नही हो सकती, वैसे ही आध्यात्मिक आवश्यकताएँ बुद्धिके रास्ते या पेटके रास्ते पूरी नहीं हो सकती। ईसाके सुप्रसिद्ध वचनको इस रूपमें रखा और कहा जा सकता है: "शरीरको वह दे जो शरीरका है, और आत्माको वह दे जो आत्माका है।" अपने पड़ोसीकी आध्यात्मिक आवश्यकताएँ मैं केवल इसी तरह पूरी कर सकता हूँ कि उसे एक भी शब्द कहे बिना आध्यात्मिक जीवन जीऊँ। आध्यात्मिक जीवनके फलस्वरूप व्यक्ति अपने पड़ोसीसे प्रेम करेगा। इसलिए मुझे इसमें रत्ती-भर भी सन्देह नहीं है कि यदि तथाकथित सवर्ण हिन्दू, हरिजनों — जातिच्युत हिन्दुओ — से आत्मीयता मानकर प्रेम नहीं करेंगे तो हरिजन हिन्दू-धर्म छोडकर चले जायेंगे (और यह ठीक ही होगा)। यदि सवर्ण हिन्दू और कुछ नही केवल यही करें, तो इससे हिन्दू-धर्म और हरिजनों और स्वयं उनकी भी रक्षा होगी। यदि वे ऐसा नही करते, तो उनका और हिन्दू-धर्मका नाश अवश्यम्भावी है। तथाकथित सवर्ण हिन्दू हरिजनोंके लिए लाखो रुपये भले ही खर्च कर दें, पर यदि वे यह आवश्यक चीज नही करते है अर्थात्, हरिजनोंको आध्यात्मिक क्षेत्रमें अपने बराबर नही मानते तो वह भौतिक सहायता उन्हें दुर्गन्ध देगी और वे उसे बेकार समझकर अमान्य कर देंगे, जो उचित भी है।

परन्तु, हरिजनोंकी आध्यात्मिक आवश्यकता वैसी ही है जैसी कि बाकी सब लोगोंकी है, यह स्वीकार कर लेनेका अर्थ यह नही है कि वे ईसाई-धर्मके बौद्धिक प्रस्तुतीकरणको उतना ही समझ सकेंगे जितना, उदाहरणके लिए, मैं समझ सकता

१. यह गांधीजीके लेख "शोध" के उत्तरमें मिला था; देखिए खण्ड ६४, पृ० ४८३-५।

हूँ। मैं उनका वही स्तर मानता हूँ जो मैं अपनी पत्नीका मानता हूँ। उसकी आध्यात्मिक आवश्यकताएँ मुझसे कम नहीं हैं पर वह ईसाई-धर्मके प्रस्तुतीकरणको एक साधारण हरिजनसे अधिक नहीं समझेगी। कारण स्पष्ट है। जब हम साथ हुए, तब हम एक तरहसे बच्चे ही थे। विवाहके बावजूद मेरी पढ़ाई-लिखाई चलती रही। वह विवाहसे पहले कभी किसी स्कूलमें गई ही नहीं थी। मैंने भी उसकी शिक्षापर ध्यान नहीं दिया। यदि धर्म-परिवर्तनकी दृष्टिसे किसी व्यक्तिके आगे कोई अन्य धर्म प्रस्तुत किया जाता है तो वह केवल बुद्धि या पेट या दोनोंके माध्यमसे की गई अपील ही होगी। जो अंश मैंने उद्धृत किया है, उसके बावजूद मेरा यह कहना है कि हरिजनों का, और इस मामलेमें तो भारतीय मानव समाजका भी, विशाल जन-समूह ईसाई-धर्मके प्रस्तुतीकरणको समझ नहीं सकता और धर्म-परिवर्तन आम तौरपर जहाँ कहीं भी हुआ है, किसी भी अर्थमें आध्यात्मिक कार्य नहीं रहा। लोगोंने धर्म-परिवर्तन सुविधाके विचारसे किया है। मुझे देशमें बार-बार और दूर-दूर किये गये अपने दौरोंमें इसके सच होनेके प्रचुर प्रमाण मिले हैं।

चूंकि मैं मानता हूँ कि हरिजन ईसाई-उपदेशोंको समझनेमें असमर्थ हैं, इसलिए मैं हरिजनोंको काफी नहीं जानता या उनसे काफी प्रेम नहीं करता — पत्र-लेखिकाके पास यह कहनेके लिए कोई प्रमाण नहीं है। मेरा रुख, जैसाकि वह कहती हैं, 'सतही' नहीं है। वह कैसा भी हो, पर गहरे अनुभव और एक दिनके या एक सालके निरीक्षणपर नहीं बल्कि भारतके हजारों जन-साधारणके साथ वर्षोंके निकट सम्पर्कपर आधारित है — और इस सम्पर्कका रूप अपनेको एक उच्चतर व्यक्ति महसूस करनेका न होकर अपनेको उन्हींमें से एक माननेवाला रहा है। परन्तु उनका यह कहना बिलकुल ठीक है कि 'कारण कुछ भी हो, पर जिस तरह मैं उन्हें देखती हूँ, आप उन्हें उस तरह नहीं देखते।' वे मेरे आत्मीय बन्धु हैं, हम एक ही हवामें साँस लेते हैं, एक ही जीवन जीते हैं, हमारी आस्था और आकांक्षाएँ एक हैं, और एक ही धरती अपने जीवन-कालमें हमें गोदमें लिये है और मृत्युमें भी वही धरती हमें अपने अंचलमें जगह देगी। पर उस [विदेशी बहन] को क्या ऐसा लग सकता है?"

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-६-१९३७

३२५. जमशेदपुरकी हरिजन-बस्ती

मैं टाटा-परिवारसे अनुरोध करता हूँ कि वे इस तर्कसंगत तथा विवेकपूर्ण वक्तव्य[1] की ओर ध्यान दें। जंजीर केवल उतनी ही मजबूत होती है जितनी मजबूती उसकी दुर्बलतम कड़ीमें हो। जमशेदपुर नगरमें चाहे जितनी सफाई-स्वच्छता रखी जाये किन्तु यदि उसकी हरिजन-बस्तीकी उपेक्षा हो, जैसीकि दृष्टिगोचर होती है, वहाँ गन्दगीके कारण होनेवाले रोगोंके बुरी तरह उभरनेका खतरा बना रहेगा। टूटी-फूटी झोंपड़ियोंमें उचित स्वच्छता-पालन असम्भव है। समाजके सबसे उपयोगी सेवकोंको

१. विन्ध्येश्वरी प्रसाद वर्माका वक्तव्य, जिसे यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है।

समुचित निवास-स्थान प्रदान करना एक ऐसे पक्के धन्धेमें पूंजी लगानेके समान है जिसमें कभी भी घाटा नहीं बल्कि हमेशा लाभ-ही-लाभ है। अतएव आशा की जाती है कि विन्ध्येश्वरी बाबू द्वारा सुझाये गये सुधारपर अविलम्ब कदम उठाया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-६-१९३७

३२६. पत्र: रामेश्वरी नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
१२ जून, १९३७

प्रिय भगिनि,

तुमारा खत मिला है। मैं तो जितना आश्वासन दे सकता हूं देना चाहता हूं। जुलाइमें आ जाओ दोनो।[1] बाते करेंगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९८१) से। सी० डब्ल्यू० ३०८० से भी; सौजन्य: रामेश्वरी नेहरू

३२७. पत्र: आनन्द तो० हिंगोरानीको

१२ जून, १९३७

प्रिय भाई आनन्द,

तुम्हारा और विद्या के ९-६-१९३७ के पत्र बापूजीको मिले हैं। फुरसत न होनेके कारण वह अपने हाथ से पत्र आपको नहीं लिख सके।

वह कहते हैं कि तुम्हें अगर अनिवार्य लगे तो अवश्य अपने पत्रका अमुक भाग अंग्रेजीमें लिख सकते हो परन्तु हिन्दी लिखनेकी प्रथा डाली है तो अब इसे जारी ही रखना चाहिये। हिन्दीका मुहावरा और बढ़ाना चाहिये। अगर कुछ विचार प्रगट करनेमें कठिनाई भी लगे तो उसकी बहोत परवाह नहीं। और अंतिम उपायके तौरपर अंग्रेजीमें लिखनेकी छूट तो हैं ही।

शेष तो विद्याके बारेमें अधिक विगत मिलने पर ही कुछ होगा तो [बापूजी] लिखेंगे।

भवदीय,
प्यारेलाल

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१. विराम-चिह्न गलत लगा हुआ प्रतीत होता है। वाक्य इस प्रकार होना चाहिए: "जुलाईमें अवश्य आ जाओ। दोनों बातें करेंगे।"

३२८. भाषण : सेगाँवके ग्रामवासियोंके समक्ष[1]

१२ जून, १९३७

आपको समझ लेना चाहिए कि यह काम आपके अपने हितके लिए है, मालगुजारकी भलाईके लिए नहीं। उसने तो इसके बारेमें कभी सोचा भी नहीं था। परन्तु आप अपना वायदा पूरा नहीं कर रहे हैं और मैं आपसे यही कहनेके लिए आया हूँ कि इससे मुझे दुःख हुआ है। आपको याद रखना चाहिए कि यह एक ऐसा कार्य है जिसमें बार-बार सहयोग देना पड़ेगा। आपको हर साल सड़ककी मरम्मत करनी होगी और पत्थर लाने होंगे। यदि आप मेरे साथ सहयोग नहीं करते, तो इस साल हमने जितनी मेहनत की है, वह सब बेकार जायेगी। इस साल इस गाँवसे इतनी आमदनी नहीं हुई है कि उससे जो सब काम हमने अपने जिम्मे लिये हैं, वे पूरे हो सकें। और इस गाँवके कामोंके लिए जमनालालजी की दूसरी आमदनीसे रुपया लेनेकी बात मैंने कभी भी नहीं सोची। इसलिए मुझे खर्चा सेगाँवके कार्यके लिए मिलनेवाले चन्दोंसे पूरा करना होगा। अब आप समझ सकते हैं कि वायदा तोड़नेसे कितना नुकसान होगा। इसलिए आप लोगोंमें से जिन्होंने अपना वायदा पूरा नहीं किया है, मैं उनसे अपील करता हूँ कि वे दूसरी सड़कपर पत्थर पहुँचा दें। जमनालालजी से मैं पत्थरों की कीमत अदा करने और उस आयको सेगाँवके फायदेके लिए काममें लानेको कहूँगा।

मुझसे यह कहा गया है कि यहाँ जो-कुछ हो रहा है, उसमें आप दिलचस्पी नहीं ले रहे हैं। इसकी आपको कोई परवाह नहीं है कि सड़कें बनती हैं या नहीं। मेरा आपसे यह कहना है कि आप आपसमें सोच-विचारकर यह फैसला करें कि आप हमारे साथ सहयोग करना चाहते हैं या नहीं। मेरा मतलब छुआछूतसे नहीं है। इस काममें या आपके गाँवके उद्योगोंका पुनरुद्धार करनेमें छुआछूतका कोई सवाल

१. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत। उन्होंने उसमें यह रिपोर्ट दी थी: "गत शनिवारको, जब मैं वहाँ था, मैंने उन्हें ग्रामवासियोंकी एक छोटी-सी सभामें भाषण देते देखा। वहाँ स्त्रियाँ तो बहुत थोड़ी थीं, पर पुरुष अच्छी संख्यामें मौजूद थे। एक सड़क गाँवमें से गांधीजीके निवास-स्थान तक और एक सड़क वर्धा तक बनाने की बात तय हुई थी। वर्धा वाली सड़क जमनालालजीके खर्चे पर बन रही थी। गाँववाली सड़कका प्रस्ताव खुद ग्रामवासियोंने रखा था। ७० लोगोंके हस्ताक्षरसे उन्होंने लिखतमें यह वायदा किया था कि उनमें से हरेक तीन दिन गाड़ीमें पत्थर भरकर लायेगा और बाकी खर्चा गांधीजी उठायेंगे। जमनालालजीने उस गाँवसे होनेवाली सारी आमदनी गाँवकी सार्वजनिक भलाईके लिए गांधीजीको सौंप दी थी। परन्तु काम जब सचमुच आरम्भ हुआ तो हस्ताक्षरकर्ताओंको अपना वायदा पूरा करनेके लिए राजी करनेमें कार्यकर्ताओंको बड़ी मुश्किल होने लगी। १५-२० आदमियोंको छोड़कर बाकीने अपना वायदा पूरा नहीं किया; परन्तु गांधीजी अपना वचन नहीं तोड़ सकते थे। वे इस परिस्थितिको समझ गये और उन्होंने सारी स्थिति गाँववालोंको समझाई।"

नहीं आता। यदि आप सहयोग करें तो मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि आपकी आमदनी आसानीसे दुगनी हो जायेगी। फिर सफाईका भी सवाल है। आप लोगोंके सहयोगके बिना मैं आपके गाँवको साफ-सुथरा और सुगंधित नहीं बना सकूँगा। हमने एक जमादार नियुक्त कर लिया है। उसके कामके लिए हम उसे वेतन देते हैं, पर अपनी सड़कों और गलियोंको साफ रखना तो आपका काम है। यहाँ कचरेके ढेर लगे है, पर मैंने सुना है कि आप इसे हटानेके लिए अपनी गाड़ियाँ तक किरायेपर देनेको तैयार नहीं हैं। लोगोंमें इस तरहकी उदासीनता हमें और कहीं नहीं मिलती। भारतमें और दुनियामें सभी जगह किसान खाद उठाते हैं और उसका सदुपयोग करते हैं।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-६-१९३७

३२९. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा

१३ जून, १९३७

चि० मीरा,

आशा है, तुम्हें डलहौजी[2] पहुँचनेमें दिक्कत नहीं हुई होगी और अलग-अलग स्टेशनोंपर लोग तुमसे मिल गये होंगे। मैं कितना चाहता हूँ कि तुम किसी तरह पूर्ण स्वस्थ होकर और शरीरको फिरसे पूरी तरह ताजा बनाकर लौटो। जल्दी अच्छी होनेकी चिन्तामें अपनेपर बहुत भार न डाल लेना।

आज इससे अधिक नहीं।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३८०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८४६ से भी

१. महादेव देसाईने अपनी रिपोर्ट समाप्त करते हुए लिखा था: "गाँवके मुखिया, बूढ़े पटेलने कहा कि गांधीजीने जो-कुछ कहा है, वह सब ठीक है। गांधीजी हमारे बीचमें हैं, यह खुशीकी बात है और यह ईश्वरकी कृपा है। पर हम दो काम नहीं कर सकते। हम छुआछूत नहीं छोड़ सकते और मेहतर नहीं हो सकते। बाकी सब बातोंमें हम सहयोगका वायदा करते हैं।"

२. मीराबहन स्पष्ट करती हैं: "मैं डलहौजी गई थी। स्वास्थ्य बिगड़ जानेके कारण बापूने मुझे वहाँ भेज दिया था। मैं वहाँ डॉ० और श्रीमती धर्मवीरके यहाँ ठहरी थी। सुभाषबाबू भी उन दिनों वहाँ ठहरे हुए थे।"

३३०. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव
१३ जून, १९३७

प्रिय बागी,

तुम्हारा पत्र मिला।

मुझे इसमें कोई शक नहीं है कि 'हरिजन' का लेख[1] अन्यत्र भी लिया जायेगा। इससे सन्तोष हो जाना चाहिए। पर यह तो मैं कह ही चुका हूँ कि कुछ और जरूरी लगे तो मुझे बताना। मुसलमानोंमें जो अविश्वास और तज्जनित विरोध है, उसे दूर करना कठिन है। लेकिन यदि कोई यह काम कर सकता है तो वह बस तुम ही हो। इसलिए इस पूरे सवालको तुम्हें अच्छी तरह समझ लेना चाहिए ताकि उनकी हर आपत्तिका तुम जवाब दे सको। जिस बातका तुम जवाब न दे सको, उसे मेरे पास भेज देना, उससे मैं निपटूँगा। मुझे डर है कि यह लिखावट इतनी फीकी है कि पढ़ी नहीं जा सकेगी। यदि ऐसा हो तो मुझे लिखना। बल्कि तुम इस पत्रको ही लौटा देना, जिससे मैं इससे हमेशाके लिए सबक ले लूँ। स्याही बहुत ही गाढ़ी थी। मैंने उसमें पानी मिला दिया। इससे मेरा काम तो चल गया, पर मुझे शक है कि इस पत्रके तुम्हारे पास पहुँचने तक कहीं लिखावट उड़ ही न जाये।

हम कल[2] बहुत सवेरे आये और प्रातः साढ़े सात बजे सेगाँव पहुँच गये। यहाँ अभी तक काफी गर्मी है। वर्षा टलती चली जा रही है।

सस्नेह,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७८८) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९४४ से भी

१. देखिए पृ० ३१४-६।
२. यह शब्द स्पष्टतः भूल है; गांधीजी वर्धा ११ जूनको पहुँच गये थे।

३३१. पत्र : एन० वी० राघवनको

१३ जून, १९३७

प्रिय राघवन,

सभाके कार्योंसे तुम मुझे बराबर अवगत रख रहे हो। राजगोपालाचारीने तुम्हारे ऊपर जो जिम्मेदारी थोप दी है, उसे पूरा करनेमें तुम्हे जो कठिनाइयाँ हो रही है, उनके बारेमें सदस्योको लिखा गया तुम्हारा पत्र मैने ध्यानपूर्वक पढ़ा है। जब तुमने हल पकड़ ही लिया है तो मै चाहूँगा कि जब तक तुम्हे अपनेसे ज्यादा योग्य आदमी स्वयं ही न मिल जाये तब तक हलको छोडो नही। राजगोपालाचारीने जब तुम्हारा नाम सुझाया था तब तुम्हारी उन्होने बहुत तारीफ की थी और उसके बादसे मैंने जो-कुछ सुना है उससे उनके कथनकी पुष्टि ही होती है। क्या तुम्हारा ऐसा अनुभव नही है कि जिन लोगोकी किसी विशेष कार्यके लिए बहुत ज्यादा जरूरत होती है, उनके पास पहले ही ऐसे बहुत सारे काम होते है जिसमें उनकी जरूरत होती हैं? सारी दुनियामें ही सच्चे कार्यकर्ताओकी ऐसी जबरदस्त कमी है। लेकिन यह कमी हमारे देशमें कही ज्यादा अनुभव होती है। इसलिए मै आशा करता हूँ कि तुम्हारी जगह ले सके, ऐसा कोई योग्य व्यक्ति ढूंढ़े बगैर तुम अपनी जिम्मेदारी नही छोड़ोगे।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री एन० वी० राघवन
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा
मद्रास

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

३३२. तार : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धागंज
१४ जून, १९३७

जवाहरलाल
मार्फत डॉक्टर विधान राय
वेलिंग्टन स्ट्रीट
कलकत्ता

आशा है तुम्हारा और इन्दुका स्वास्थ्य ठीक होगा। उसके और मौलाना के साथ अन्तिम सप्ताह में आओ। मौसम ठंडा हो रहा है। प्यार।

बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३३३. पत्र : अमृत कौरको

१४ जून, १९३७

प्रिय बागी,

तुम्हारा पत्र मिलनेके तुरन्त बाद ही तुम्हें यह पत्र केवल यह बतलानेके लिए लिख रहा हूँ कि तुम्हारा 'ना'[१] मैं समझता हूँ और पसन्द भी करता हूँ। तुम 'ना' करोगी, इसकी मुझे आशा थी। सुभाषका तार मिलनेके बाद कल मीरा डलहौजी चली गई। मुझे 'ना' कहने की कैफियत देनेकी चिन्ता तुम्हें क्यों होनी चाहिए? क्या हर 'हाँ' और 'ना'के लिए कैफियत जरूरी होती है? जिस प्रेममें कैफियत देने की जरूरत पड़े, वह तो घटिया चीज हुई। मेरा प्रेम ऐसा कभी नहीं रहा। वह तब तक 'ना-ना' सहता जायेगा जब तक उस 'ना'में 'हाँ' मिला-जुला है।

१. मीराबहनकी यात्राके बारेमें; देखिए पृ० ३०७।

अब और अनाप-शनाप नही। समय तेजीसे बीत रहा है।

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६०९) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४१८ मे भी

३३४. पत्र: अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
१४ जून, १९३७

प्रिय बागी,

एन्ड्रयूजका पत्र इसीके साथ है। जो खुश होना हीं नही चाहते, उन्हें खुश करना नामुमकिन है। मेरा पक्का विश्वास है कि तुम्हारे उदास होनेका कोई कारण ही नही है। सही काम भी करो और उससे यदि किसीकी भावनाओंको ठेस लगे तो इस वजहसे भी तुम उदास हो जाओगी। ऐसे मूर्ख लोगोंको कैसे खुश रखा जा सकती है? उदासीसे बचनेके लिए, क्या ऐसे लोगोंको गलत काम करनेके लिए कहा जाये? 'गीता' का छठा अध्याय या 'जपजी' पढ़ो। तुम्हें 'जपजी' में इस उदासीको, जिसे अज्ञान समझना चाहिए, समाप्त करनेके बहुत सारे उपाय मिल जायेंगे।

मैं समझता हूँ, जवाहरलालने तुम्हे और मुझे एक ही समय पत्र लिखे थे। क्योंकि उन्होंने पत्रमें अपने गलेके दर्दका उल्लेख किया है। इस महीनेके आखिरी सप्ताहमें सम्भवत: वे मेरे साथ रहेंगे।

सस्नेह,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१०) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४१९ से भी

३३५. पत्र : जी० रामचन्द्रनको

१४ जून, १९३७

प्रिय रामचन्द्रन,

बहुत समयसे तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला। सरस्वती कहती थी वहाँ काफी गर्मी है। क्या अब अमतुस्सलामके आने लायक ठंडक हो गई है? वह वहाँ जल्दीसे-जल्दी पहुँच जाना चाहती है।

तुम्हारा क्या हाल है? . . .[1] के बारेमें क्या रहा। सरस्वती कैसी है?

सस्नेह,

बापू

अँग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७०३) से।

३३६. पत्र : महादेव देसाईको

१४ जून, १९३७

चि० महादेव,

इस पत्रके साथ ९० रुपयेका एक चेक और १०० रुपयेका एक बैंक नोट है। अमतुस्सलाम कहती है कि इन्हें मिलाकर उसके हिसाबमें ६९० रुपये हो जायेंगे। अगर यह ठीक हो, तो ६०० रुपये सावधि खातेमें डालने हैं और ९० रुपये उसके साधारण खातेमें जमा करने हैं। साथमें तार है, इसे भेज देना। तुमने सुभाषको तो तार कर दिया होगा। कुछ लिफाफे भेजना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५२२) से।

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ शब्द अस्पष्ट हैं।

३३७. पत्र : प्रभावतीको

१४ जून, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा ९ तारीखका पत्र मुझे आज १४ को मिला। मैंने तो तुझे पत्र लिखा है; मेरे पास तारीख भी दर्ज है। लगता है, हमारे पत्र टकरा गये हैं।

हाँ, मैं ११ को आया था। तीथलमें दस दिन ज्यादा रहना पड़ा। यहाँ अमतुस्सलाम और शारदा है। बा और कानो मरोलीमें है, कनु राजकोटमें। अपनी तबीयत सँभालना।

तुझे तो दोनों बड़े-बूढ़ोंकी सेवा करनी है। जो बन सके, वह करना। घबराना नही। जो हो सके, सो करती रहना।

जयप्रकाश जेलका फायदा उठा रहा है, यह अच्छा है।

यहाँ श्री कैलेनबैक है। इनके बारेमें तो तू काफी पढती होगी। तू इनसे नहीं मिल सकेगी। अब तो तू शायद अहमदाबाद नही जा सकेगी। कान्ति बंगलौर गया है। वह वहाँ पढेगा। उसके तो पत्र भी तुझे मिलते होंगे। अब आज और नहीं लिखता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९१) से।

३३८. पत्र : सरस्वतीको

१४ जून, १९३७

चि० सरस्वती,

तुमारा खत . . .[1]। खूब पढो, खूब कातो, पापरम्मा को भी कातना है ही। धुनकी भी चलाओ।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७०३) से। सी० डब्ल्यू० ४४४९ से भी; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

१. कागज फट गया है, इसलिए खाली जगह है। सम्भवतः यहाँ कोई भी शब्द नहीं थे। वाक्य पूरा है।

३३९. पत्र : मीराबहनको

१५ जून, १९३७

चि० मीरा,

मैं कल्पना करता हूँ कि तुम अभी-अभी डलहौजी[1] पहुँची होगी या पहुँचनेवाली होगी। सुभाषबाबूने रास्ते, खर्च और समयके बारेमें काफी सूचनाएँ दे दी हैं। वह पत्र अपने-आपमें पूरा है। रायजादा हंसराजका तार है कि वे तुम्हें अपने यहाँ ठहराना चाहते हैं। लेकिन मैंने तार दे दिया है कि तुम सुभाषबाबूके साथ रहोगी। उनके साथ तुम्हें डॉक्टरी सहायता भी अच्छी मिलेगी। आज तुम्हारी तरफसे तार मिलनेकी आशा रखूँगा।

गर्मी यहाँ अब भी बहुत सता रही है। मैंने रोटी बिलकुल छोड़ दी है।

राजकुमारीका पत्र इसके साथ है।[2]

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३८१) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८४७ से भी

३४०. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

सेगाँव, वर्धा
१५ जून, १९३७

चि० मनुड़ी,

तू तो बड़ी कठोर मालूम होती है। तुझे मैं तेरे पतेपर और खुद अपने हाथसे ही पत्र लिखूँ, क्या तभी ऐसा माना जायेगा कि मैंने पत्र लिखा? तू मेरा मतलब समझ गई, यह अच्छा हुआ। सुरेन्द्र मुझे बारडोलीमें मिला था; उसके साथ खूब बातें हुई। उसे भी मैंने अपनी बातका मतलब समझा दिया।

तेरी तबीयत अच्छी रहती होगी। कुछ अध्ययन करती है क्या? अपना कार्य-क्रम लिखना।

१. देखिए पृ० ३२२।
२. देखिए पृ० ३२५।

अमतुस्सलाम यहाँ है। मीराबहन बीमारीके कारण पहाड़पर गई हैं। बा और कानो तो मरोलीमें ही हैं।

खान साहब परसों आयेंगे। मेहरताज और लाली भी आयेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५६८) से; सौजन्य: मनुबहन सु० मशरूवाला

३४१. पत्र: कान्तिलाल गांधीको

१५ जून, १९३७

चि० कान्ति,

तेरा पत्र अभी मिला। उस बहनका विवरण मजेदार है। मैं लिख रहा हूँ, और अमतुस्सलाम यहाँ पासमें बैठी पंखा झल रही है। मीराबहन पंजाबमें डलहौजी के पहाड़पर गई है। बुखार उसका पीछा नहीं छोड़ रहा था।

तू फीस माफ कराना चाहता है, यह ठीक नही लगता। वकीलको जुर्माना हुआ, वह भी ठीक नही हुआ। अगर छात्रावासमें रहे बिना चल सके, तो वह खर्च बचाने योग्य है। मैं तेरी बातसे यह समझा था कि तू रामजीके पास रहेगा और इस प्रकार रहने-खानेका खर्च बचायेगा। लेकिन यदि छात्रावासमें रहनेसे बहुत फायदा होता हो, तो ज्यादा खर्च हो जाने दे। देवदासको सारा ब्योरा लिख दिया, यह अच्छा किया। तू गरीबकी परिभाषामें बिलकुल नही आ सकता। गरीब वह होता है, जिसका कोई नही होता। वकीलको जुर्माना कितना हुआ था?

अपनी तबीयत सँभालना। जब कुछ भी लिखनेकी फुर्सत न हो तब भी हफ्तेमें एक कार्ड तो लिखना ही चाहिए। लेकिन हर हफ्ते पचास कार्डके बराबर लम्बा पत्र भी लिखना हो, तो लिखना। बरसातकी उमस तो यहाँ होती रहती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२२) से; सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

३४२. पत्र: कनु गांधीको

१५ जून, १९३७

चि० कनैयो,

रास्तेमें लिखा तेरा पत्र मिला था। मैं तेरी मनोदशा समझता हूँ। मैं तुझे किसी प्रकारके बन्धनमें नहीं डालूँगा। तू नये सिरेसे सारी बातपर विचार करना, और जैसा तुझे ठीक लगे, वैसा करना।

भणसालीभाई[1] कलसे यहाँ आने लगे हैं। उन्होंने कलसे दूध भी शुरू किया है। उन्हें चलनेसे थकावट नहीं आती। घाव अभी पूरी तरह सूखा नहीं है। मीराबहन कल पहाड़के लिए रवाना हो गई।

नारणदासका पत्र मिल गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३४३. पत्र: नत्थूभाई एन० पारेखको

१५ जून, १९३७

भाई नत्थूभाई,

वानप्रस्थ-अवस्था तो ५८वें वर्ष तक रहेगी।[2] इतने बरसोंमें तो तुम बहुत आगे बढ़ सकते हो। मनुष्य वनमें प्रवेश करता है, तो पेड़-पत्तों, पशु-पक्षियोंसे मित्रता तो करता ही है। निर्भयता प्राप्त करता है; प्रकृतिको पहचानता है; संसारके मनुष्यों और जीवधारियोंके बीच रहते हुए, उनके बीच अपना स्थान जान लेता है; और जब वनसे बाहर आता है, तब तक इतना ज्ञान प्राप्त कर चुका होता है कि अपने लिए और पड़ोसियोंके लिए वह मार्गदर्शक बन सकता है। हमें तो ऐसा वन अपने हृदयमें उत्पन्न करना चाहिए। बाह्य तृष्णा मन्द पड़ जाये, हम अन्तर्मुखी हो जायें, तो समझो सब हो गया।

१. जयकृष्ण भणसाली।

२. देखिए पृ० २५७।

मेरी भूलके बारेमें तुमने खूब ऊहापोह की है। इस सम्बन्धमें चार-पाँच गुजरातियोंके भी पत्र दक्षिण प्रान्तसे आये हैं। इन्दु मेरे साथ काफी देर तक रहा और बहुत बातें कीं। वह अभी बच्चा है। अभी उसे अपनी जिम्मेदारीका पूरा भान नहीं है। उसकी कई भावनाएँ अच्छी हैं। कान्तिके लिए उसके मनमें खूब सम्मान है। तुम्हारे ऊपर जो बोझ पड़ गया है, उसे उतारनेमें हाथ बँटानेकी उसकी इच्छा है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि वह कुछ करेगा। अब तो वह कान्तिकी सीधी देख-रेखमें रहेगा, इसलिए अच्छा ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२५०) से।

३४४. पत्र : जेठालाल जी० सम्पतको

सेगाँव
१६ जून, १९३७

भाई जेठालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। अब ३० जुलाई मनाना। लेकिन ३० के बदले ३१ जुलाई मना सकते हो, क्योंकि जुलाईमें ३१ दिन होते हैं। पुस्तक विनोबाको जरूर भेजना। मैं समझता हूँ, त्रावणकोरका चलता-फिरता बुनाई-प्रशिक्षणालयकी बात उस पुस्तकके पन्नोंमें ही होगी। मैंने तो उसका कोई नामोनिशान वहाँ नहीं देखा। मेरे गुजरात जानेकी कोई कैफियत दी ही नहीं जा सकती। दो-चार दिनके लिए कांग्रेस [अधिवेशन] की जगह देखने जाने की बात जरूर थी; फिर न जानेके लिए भी मेरे पास कोई कारण नहीं था। सरदारका आत्यन्तिक आग्रह मुझे खींच ले गया, ऐसा मैं कह सकता हूँ। लेकिन यह अपने बचावमें कहने जैसी कोई बात नहीं है। सरदारका एक आग्रह यदि मुझसे कोई सदोष काम करा सकता है, तो उनके दूसरे आग्रह उससे भी अधिक सदोष काम करा सकेंगे। इतना सब समझते हुए भी मैं उनका आग्रह नहीं टाल सका।

अब गायके घीकी बात लेता हूँ। मैं एक सेर घी के तीन रुपये लेता हूँ, ढाई भी लेता हूँ। जितने दाम बैठते हैं, उतने लेता हूँ। इतने दाम इसलिए मिल जाते हैं, क्योंकि जमनालालजी जैसे व्यक्ति यहाँ हैं, जिनसे आग्रह किया जा सकता है कि वे वर्धामें तैयार किया गया गायके दूधका घी ही लें। लेकिन यह तीन रुपये सेरके घीका व्यापार मैं बहुत दिन नहीं चला सकता। और तुम्हारा घी तो मुफ्त भी नहीं बेच सकता, क्योंकि भैंसके दूधकी एजेन्सी तो हम ले ही नहीं सकते। फिर तुम्हारे घीमें तो मिलावट होती है। मुझे तो पूर्ण विश्वास है कि तुम्हारा यह व्यापार नाजायज है। तुम गो-सेवा संघके नियमोंका अनुसरण नहीं करते, इसलिए गो-सेवा संघकी सहायतासे वंचित होते हो, और इसलिए घरमें मिलावटी घी तैयार करते हो। इसकी कीमत तुम्हें बाजारमें कम मिले, यह स्वाभाविक है। इस समय बाजारमें भैंसके खालिस दूधसे निकाले घीकी ही कीमत

है। गायके खालिस दूधसे निकाले घीकी कीमत कम ही मिलती है। अतः यदि इस समय तुम गाय और भैंसमें कोई भेद न मानो, तो तुम्हें केवल भैंसके दूधसे घी बनाकर उसका व्यापार करना चाहिए। उसमें तुम अवश्य सफल होगे। लेकिन उससे तुम्हें मानसिक सन्तोष नहीं मिलेगा, यह बात मैं समझता हूँ। भैंस और गायके दूधकी मिलावट करनेसे तुम्हें कोई सन्तोष होता हो, तो यह झूठा सन्तोष है। इसलिए मेरी तो तुम्हें निश्चित सलाह यही है कि या तो गायके दूधसे घी बनाओ और उसे सामान्य भावपर बेचो, और यदि ऐसा न किया जा सकता हो, तो फिर ऐसा कोई धन्धा खोजो जिससे गाँववालोंको लाभ पहुँचे। और उस धन्धेसे जो आय हो यदि उससे तुम्हारा पूरा न पड़ता हो तो सार्वजनिक सहायता ले लो।

लेकिन यह तो रहा मेरा विचार। इस सम्बन्धमें मेरे ही विचारका अनुसरण किया जाये, यह कोई जरूरी बात नहीं है। मैं तो कोई आग्रह नहीं करूँगा। इसलिए मेरे तर्कपर विचार करनेके बाद तुम्हें जो उचित लगे, सो करना। यह पत्र किशोरलालभाई तो पढ़ेंगे ही। हो सका, तो विनोबा भी पढ़ेंगे। उन दोनोंके विचार इस पत्रके साथ तुम्हें भेजनेका प्रयत्न करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९८६२) से; सौजन्य : नारायण जे० सम्पत

३४५. पत्र : मीराबहनको

१७ जून, १९३७

चि० मीरा,

कल तुम्हारा पत्र मिला। केवल मेरे साथ ही तीसरे दर्जेके डिब्बेमें सफर करना आसान है। फिर भी तुम आरामसे डलहौजी[1] पहुँच गईं, यह बड़ा अच्छा हुआ। उम्मीद तो नहीं है, फिर भी आजकी डाकसे तुम्हारा दूसरा पत्र आ सकता है। आशा है कि मेरे सब पत्र तुम्हें मिले होंगे। केवल कल मैं तुम्हें कोई भी पत्र नहीं भेज सका। डॉ० धर्मवीरका ठीक-ठाक पहुँच जानेका तार समय पर मिला था। मुझे पूरी उम्मीद है कि तुम वहाँ अच्छी हो जाओगी।

अभी तक इधर बारिश नहीं हुई है। कलकी रात ही पहली ठंडी रात लगी। दिनमें फिर उमस हो गई है।

कैलेनबैककी खुराक अभी तक कम ही बनी है। उसने थोड़े खसखसके दाने और आठ औंस दही आमके साथ लेना शुरू कर दिया है।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३८२) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८४८ से भी

१. साधन-सूत्रमें यहाँ 'दिल्ली' लिखा है, जो स्पष्ट भूल है।

३४६. एक पत्र

मगनवाड़ी, वर्धा
१७ जून, १९३७

प्रिय मित्र,

तुम्हारे पत्रका स्वागत है। मैं स्वीकार करता हूँ कि दिल्लीकी सभाके बाद और उसके बाद जो निर्णय किया गया था उसके बारेमें मैं भूल गया था। लेकिन हुदलीमें मैंने जो-कुछ कहा था[1], वह मैं नहीं भूला हूँ। मेरा आरोप उन लोगोंके विरुद्ध था जो मुझे बेलगाँवकी सभाकी अध्यक्षताके लिए राजी करने आये थे। मैं इसके लिए बिलकुल अनिच्छुक था, क्योंकि मैं अच्छी तरह जानता था कि मेरा कार्य-क्रम और मेरा कामका तरीका लोगोंको पसन्द नहीं आयेगा। लेकिन गंगाधररावने जिन्हें मैं अच्छी तरह जानता था, मेरी आपत्तिका शमन कर दिया और मुझे विश्वास दिलाया कि श्री चिकोडी और अन्य लोग पूरे मनसे मेरी योजनाको कार्यान्वित करेंगे। गंगाधरराव स्वयं स्वीकार करते हैं कि इसमें वह असफल रहे। वह स्वयं व्यक्तिगत रूपसे भी अपना कार्य-क्षेत्र केवल गायके दूध तक ही सीमित नहीं रख सके, और न श्री चिकोडी ही रख सके, जिन्हें कि इस आन्दोलनका एक सक्रिय कार्यकर्ता होना था। जैसाकि मैंने कहा, इस बड़े संगठनके प्रस्तावकी विफलता दुखद थी, हालाँकि इसमें किसीका दोष नहीं था। लेकिन मेरी गलती यह थी कि मैंने अच्छी तरह इस बातको नहीं समझा कि गोरक्षा-कार्यक्रमको चलानेका मेरा तरीका लोकप्रिय नहीं होगा, और यह भी नहीं समझा कि मुझे प्रयोगों द्वारा परिणाम दिखाने होंगे। ये प्रयोग अभी चल ही रहे हैं। अहमदाबादमें चमड़ा कमानेका काम सफल नहीं हुआ, क्योंकि वहाँ जो तथाकथित विशेषज्ञ थे वे सचमुच विशेषज्ञ थे ही नहीं। लेकिन मेरे मनमें उसकी जैसी कल्पना हमेशा थी, उसने वर्धा और बंगालमें ठोस रूप धारण किया है। वर्धामें सीधे मेरी देख-रेखमें प्रयोग चल रहा है, और बंगालमें मेरे एक सहयोगीकी देख-रेखमें। प्रयोग बिलकुल नया और कठिन है, इसलिए अभी भी मैं कोई परिणाम दिखा सकनेकी स्थितिमें नहीं हूँ। यह कार्यक्रम ग्राम-आन्दोलनका हिस्सा नहीं है, हालाँकि हो सकता है। इसे ग्राम-विकास योजना नहीं, बल्कि गोरक्षा-योजनाके एक अंगके रूपमें स्वतन्त्र रूपसे चलाया जा रहा है। मेरी यह बात तो अपनी जगह अभी भी कायम है कि जिन लोगोंने मुझे गोरक्षा-कार्यको हाथमें लेनेके लिए बेलगाँव बुलाया वे लोग पहलेसे ही इस

१. देखिए पृ० १४४-६।

क्षेत्रमें कार्य कर रहे थे, और उनको केवल इसी कारण यह काम नहीं छोड़ देना चाहिए था कि मैं इसमें विफल हो गया या विफल होता दिखा।

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

३४७. पत्र : कनु गांधीको

१७ जून, १९३७

चि० कनैयो,

लगता है, हिसाबकी किताब [भूलसे] तेरे साथ चली गई है। किसने कितने रुपये दिये हैं, यह तो उसीमें दर्ज होगा न? यदि ऐसा हो, तो वह किताब रजिस्ट्रीसे महादेवभाईको भेज देना। अथवा किसके खातेमें कितना रुपया जमा है, यह सूचना भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

वहाँ गर्मी कैसी पड़ती है? यहाँ तो ज्यादा पड़ती ही है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३४८. पत्र : वसुमती पण्डितको

[१७ जून, १९३७][1]

चि० वसुमती,

तू वहाँ पहुँच गई होगी। देखता हूँ, अब तू अपनी तन्दुरुस्ती किस तरह सुधारती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. साधन-सूत्रमें यह पत्र पिछले शीर्षक, ("पत्र : कनु गांधीको",) के नीचे ही लिखा हुआ है।

३४९. पत्र : तुलसी मेहरको

सेगाँव
१७ जून, १९३७

चि० तुलसीमेहर,

तुम्हारा खत मिल गया। कैसा जीवन! लेकिन जब तक तुमको वहीं रहने में सतोष है तब तक मुझे कुछ कहने का नहीं है। जब मौका मिले मुझे लिखा करो। प्रवृत्ति कैसे चलती है उसका बयान दे दो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५५१) से।

३५०. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
१८ जून, १९३७

प्रिय बागी,

मैंने तुम्हें कभी लगातार दो दिन पत्रसे वंचित नहीं रखा। कभी-कभी तो मैं दो दिन लगातार पत्र लिखता रहा हूँ। जैसाकि तुमने देखा ही होगा, मैंने पद-स्वीकृतिके प्रश्नपर वक्तव्य देनेसे इनकार कर दिया है। क्योंकि 'टाइम्स ऑफ इंडिया' को दी गई भेंट[1] अपने-आपमें परिपूर्ण है और जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, वह मेरा अन्तिम वचन है। अब कार्य-समितिको अपनी बात कहनी है।

तुम्हारा हिन्दीमें लेखन कम होता जा रहा है। परन्तु मैं इसकी शिकायत नहीं करता। तुम्हारे पास बहुत काम रहता है। इसलिए जो-कुछ मुझे मिल जाता है, उसीसे सन्तोष कर लेता हूँ।

खानसाहब, मेहर[ताज] और लाली कल आये थे।[2]

डाकू

[पुनश्च :]

अभी मैं तत्परतासे काम कर रहा हूँ।

सस्नेह,

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७८९) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९४८ से भी

१. देखिए पृ० ३७८-८०।

२. परन्तु "पत्र : मीराबहनको", १९-६-१९३७ में गांधीजी लिखते हैं कि वे १९ तारीखको आये थे। देखिए अगला शीर्षक भी।

३५१. पत्र : जमनालाल बजाजको

१८ जून, १९३७

चि० जमनालाल,

यदि खानसाहेब राजी हैं तो जांय। बयानी[1] को तार देना कि खानसाहेबसे व्याख्यान न करायें। खानसाहेब जायेंगे तो महूर और लाली का क्या? कल यहां आनेवाले थे।

कमल पहुंच गया तो अच्छा हुआ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८६) से।

३५२. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१८ जून, १९३७

चि० कृष्णचन्द्र,

आश्चर्य की बात है कि तुमने मैंने जो अनासक्तियोग[2] में लिखा है उसमें और आज कल जो लिख रहा हूं उसमें जो ऐक्य है उसको नहीं पहिचाना। हम सबके सब प्राणी "धर्मज" संतान नहीं हैं, "कामज" हैं। और माना कि कोई ऐसा पुरुष हो जो स्थिरवीर्य है लेकिन उसे संतान की इच्छा होती है और कोई स्त्री भी उसको अनुकूल मिलती है जो उसीकी मारफत संतान उत्पत्ति कराना चाहती है और कोई विकार नहीं है तो उसका पुत्र "धर्मज" होगा। लेकिन इसका यह अर्थ तो कभी नहीं हुआ कि जिसके दोनों वंशज हैं उसके वंशमें "कामज" संतान कभी थे ही नहीं।[3] इसलिये हम सब दोष से भरे हुअे हैं ऐसा होते हुवे भी हमारा प्रयत्न तो दोषमुक्त होने का रहना ही चाहिये ये ही मेरे कहनेका मतलब है।

१. ब्रजलाल बियाणी, विदर्भ कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष; देखिए "पत्र : जमनालाल बजाजको", १९-६-१९३७ भी।

२. देखिए खण्ड ४१, पृ० ९२-९।

३. यह वाक्य गांधीजीने २ जुलाईके पत्रमें इस तरह बदल दिया था : "लेकिन इसका यह अर्थ तो कभी न किया जाए कि "धर्मज" संतानके पूर्वज सब "धर्मज" थे अथवा भविष्यमें संतान सब "धर्मज" होंगे।"

"धर्मज" संतान पैदा हो सकते हैं या नहीं इसका मुझे अनुभव तो नहीं है लेकिन आदि पर्व में जो व्यासजी के बारे में लिखा है वह अनुभव वाक्य है ऐसा मैं मानता हूं।[1] संभव है कि वह काव्य ही है — अनुभव नहीं। उससे मेरी दलील को हानि नहीं होती क्योंकि अगर पति पत्नी विकाररहित होते हुये भी संतान की इच्छा से संयोग करते हैं तो उनके ब्रह्मचर्य को कोई हानि नहीं होती है। ऐसा संतान एक ही हो सकता है। यह सब आदर्श स्थिति का वर्णन है। इस आदर्श को हम, जहांतक हो सके पहोंच जाएं।

संतानोत्पत्ति किसीका धर्म नहीं है। लेकिन उसकी इच्छा अधर्म भी नहीं है। जिसकी ऐसी इच्छा नहीं है उसके लिये विवाह सर्वथा त्याज्य है। अर्थात् विवाहका कारण कामेच्छा कभी नहीं हो सकता है। इस आदर्श को खयाल में रखकर विवाहित संसार अपना कर्तव्य पालन करें।

नौकरी के लिये जब तुम्हारे सब प्रयत्न निष्फल हों तब मुझे लिखो। इतना तो याद रखोगे कि उस वक्त मेरे पास क्या साधन होंगे उसका मुझे कुछ पता नहीं। और अगर यहां आने का ही होगा तो दत्तचित्त हो कर बैठना है। क्योंकि किसी सेवा कार्य में जुट जाना वह ज्यादा तनखाह मिलने तक ही नहीं होना चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२८२) से।

३५३. ईसाई कैसे बनाते हैं?

ठक्कर बापाका ध्यान शाहाबाद जिलेमें लोगोंको दी जा रही ईसाई-धर्मकी तथाकथित दीक्षा की ओर आकर्षित किया गया था। तब उन्होंने, इस विषयमें जो बातें उन्हें बताई गई थीं, उनपर रिपोर्ट मांगी। स्थानीय हरिजन सेवक-संघने नीचे लिखी रिपोर्ट[2] भेजी है:

> कोई चालीस बरस हुए तब आरा, जिला शाहाबादमें एक मेथॉडिस्ट एपिस्कोपल ईसाई मिशनकी स्थापना हुई थी। इसके प्रयत्नों द्वारा १९३१ तक बहुत बड़ी संख्यामें यानी कोई ३००० हरिजन ईसाई बना लिये गये। . . . पिछले वर्ष यहां एक रोमन कैथोलिक मिशन भी आ पहुंचा। तबसे दोनों मिशनोंका कार्य बढ़ गया। . . . जाँच करने पर पता चला है कि वे अपना प्रचार-कार्य मुख्यतः रविदास (चमार) जातिमें ही चला रहे हैं और उनमें से कुछ लोगोंको ईसाई बनानेमें उन्होंने सफलता भी प्राप्त की है। मोटे तौरपर वे इस तरह काम करते हैं:

१. देखिए पृ० १२०।
२. यहाँ कुछ अंश ही दिये गये हैं।

पहले वे गाँवमें कई बार आते-जाते हैं और हरिजनोंसे कुछ मेलजोल हो जानेपर वे वहाँ एकदम एक पाठशाला खोल देते हैं। पाठशालामें ऐसे हरिजन-शिक्षकको रखते हैं जो या तो खुद प्रभावशाली हो या जो किसी प्रभावशाली आदमीका रिश्तेदार हो। फिर जब कभी इन मिशनरियोंको पता चलता है कि गाँवमें कहीं हरिजनों और अन्य गाँववालोंमें झगड़ा हो गया है या कोई मुकदमेबाजी चल रही है तो वे फौरन इस अवसरसे लाभ उठाकर गरीब हरिजनोंका पक्ष ले लेते हैं और उन्हें सलाह-मशविरा तथा धनकी सहायता देकर उनकी मदद करते हैं। बस, ईसाई उनके मुक्तिदाता बन जाते हैं और मानों इस उपकारका बदला चुकानेके लिए वे हरिजन अपना धर्म छोड़कर ईसाई बन जाते हैं।

इन मिशनोंका काम तो सारे थानेमें दूर-दूर तकके देहातोंमें सब जगह फैला हुआ है। इसलिए हम सब जगहोंकी जाँच नहीं कर सके हैं। . . . धर्म-परिवर्तनकी इन नवीन घटनाओंकी विशेषता तो यह है कि लोग झुण्डके-झुण्ड धर्म-परिवर्तन कर रहे हैं। जब कभी किसी गाँवका हरिजन मुखिया ईसाई-धर्म ग्रहण करता है तो उसकी बिरादरीके तमाम लोग ईसाई बन जाते हैं। . . . जितने भी नये-पुराने लोग धर्म-परिवर्तन द्वारा ईसाई बनाये गये हैं उनमें एक भी उदाहरण ऐसा नहीं है जिसमें धार्मिक विश्वासके कारण धर्म-परिवर्तन हुआ हो। . . . इसलिए धर्म-परिवर्तनके मुख्य कारण तो आर्थिक तथा सामाजिक ही हैं। आम तौरपर हरिजनोंको कई अन्याय सहने पड़ते हैं, उनसे बलपूर्वक बेगार वसूल की जाती है और उन्हें बड़ा जलील किया जाता है जिसका अब वे बुरा भी मानने लगे हैं। . . . कुछ नये-पुराने ईसाई जो अभी नाममात्रके ही ईसाई हैं, पुनः हिन्दू-धर्म ग्रहण करनेके लिए तैयार हैं बशर्ते कि उनकी शिकायतें दूर कर दी जायें। जाँचके दौरान पता लगा है कि उनकी शिकायतें संक्षेपमें निम्नलिखित हैं:

१. दूसरे गाँवोंमें उन्हें जो मजदूरी मिल सकती, उससे प्रायः आधी या उससे भी कम मजदूरीपर अपने मालिकों तथा गाँवके अन्य सवर्ण हिन्दुओंके यहाँ काम करनेके लिए उन्हें मजबूर किया जाता है।

२. विवाह और मृत्युके अवसरोंपर उन्हें अपने मालिकों तथा गाँवके दूसरे सवर्णोंके यहाँ काम करना पड़ता है और उसके लिए उन्हें प्रायः कुछ भी मजदूरी नहीं मिलती।

३. प्रति परिवार उनसे छः आना सालके हिसाबसे मुतर्फा (मकान-किराया) लिया जाता है।

४. उन्हें हर गाय, बैल और भैंसकी खालकें क्रमशः एक, दो, और तीन या चार रुपये मरे हुए जानवरके मालिकको देने पड़ते हैं, यदि वे उन्हें उतने ही जोड़े जूते बनाकर न दे सकें।

५. उनकी औरतोंको अपने गाँवमें सवर्ण हिन्दुओंके घरोंमें प्रसवके समय दाईका काम करना पड़ता है। लेकिन इसकी मजदूरी उन्हें थोड़ी, याने लड़का हुआ हो तो ४ आने और लड़की हुई हो तो २ आने दिये जाते हैं। और फिर कभी-कभी तो यह मजदूरी दी भी नहीं जाती।

६. हरिजनोंको अपनी खेती वगैरहके कामकी हानि करके, बीमार होनेपर या अपने सामाजिक अथवा धार्मिक कार्योंमें लगे होनेपर भी, अपने मालिकों और गाँवके सवर्णोंके यहाँ काम करनेके लिए मजबूर किया जाता है।

७. आम तौरपर चौकीदारी-कर उनपर बहुत ज्यादा लगा दिया गया है।

८. उन्हें उन कुओंसे पानी नहीं खींचने दिया जाता, जिनसे सवर्ण पानी लेते हैं।

९. उन्हें मन्दिरोंमें प्रवेशकी अनुमति नहीं है और न ही उनके घरों पर धार्मिक-कथा सुनानेके लिए ब्राह्मण-पुरोहित ही मिलता है।

यदि रिपोर्टमें धर्म-परिवर्तनके सम्बन्धमें जो-कुछ लिखा है, वह सही है तो मेरी दृष्टिसे निन्दनीय है। इस तरहके बाह्य धर्म-परिवर्तनका परिणाम पारस्परिक सन्देह और संघर्ष ही होगा। पर अगर कोई मिशनरी संस्था या व्यक्ति इन्हीं उपायोंसे काम लेना चाहे तो उसे रोकनेके लिए कुछ भी नहीं किया जा सकता। इससे कहीं अच्छा तो यह होगा कि हम अपने ही अन्दर ध्यानसे देखें और अपनी खामियोंको ढूँढ़ें। सौभाग्यकी बात है कि इस विवरणसे हमें इस सबमें सहायता मिल सकती है। कुल नौ कारण बताये गये हैं, जिनकी वजहसे हरिजनोंको अपना धर्म छोड़नेके लिए ललचाया जाता है। इनमें से सात तो शुद्ध आर्थिक हैं, एक सामाजिक है और एक शुद्ध धर्मसे सम्बन्ध रखता है। इस तरह उन्हें धनकी दृष्टिसे दीन-हीन, सामाजिक दृष्टिसे पतित और धर्म-कार्योंसे बहिष्कृत कर दिया गया है। आश्चर्य इस बात पर नहीं होना चाहिए कि वे हिन्दू-धर्मको क्यों छोड़ रहे हैं, बल्कि आश्चर्यकी बात तो यह है कि अब तक उन्होंने उसे क्यों नहीं छोड़ा, और आज जब वे अपना पैतृक धर्म छोड़ भी रहे हैं तो इतने थोड़े लोग छोड़ रहे हैं। इससे हमें जो सबक सीखना चाहिए, वह तो स्पष्ट है। शाहाबादकी जाँचमें तो जो बातें हमें मालूम हुई हैं, उस तरहकी हर जाँचका नतीजा तो यह होना चाहिए कि हम अपने-आपको अधिक शुद्ध बनायें, हरिजन-कार्यके लिए अधिक शुद्ध भावसे अपने-आपको अर्पित कर दें, और हरिजनोंके साथ अधिक तादात्म्य अनुभव करने लगें। और इस जाँचका परिणाम स्थानीय संघपर यह होना चाहिए कि वह अब एक ओर तो हरिजनोंकी सेवाके लिए और दूसरी ओर तथाकथित सवर्णोंके बीच प्रचार करनेके लिए अधिक

कार्यकर्ता जुटाये -- अलवत्ता उन्हें गाली देनेके लिए नहीं, वल्कि यह बतानेके लिए कि हरिजनोंके साथ वे जिस तरहका व्यवहार करते हैं, वह धर्मसंगत नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-६-१९३७

३५४. हरिपुरामें खादी

श्रीयुत दास्ताने चाहते हैं कि हरिपुरामें कोई ऐसी विशेष वात हो जिससे खादी इस समय जितनी लोकप्रिय है, उससे ज्यादा लोकप्रिय हो जाये। उनके अलावा भी कई कार्यकर्ता हैं जो निःसन्देह यह उम्मीद रखते हैं कि हरिपुरामें खादीके हितमें कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाये जायेंगे। बारडोलीने सन् १९२१ में जो यह वचन दिया था कि वह खादीके सम्बन्धमें पूरी तरह स्वावलम्बी हो जायेगी, वह अभी तक पूरा नहीं किया है। यही नहीं, दुःखके साथ यह कहना पड़ता है कि दूसरे स्थानोंकी भाँति बारडोली भी सस्ती और अच्छी रंगीन खादीके लिए वर्धाका मुँह ताकती है। खादीके आन्दोलनमें केन्द्रीकरणके लिए तो स्थान है ही नहीं। वर्धाको बाहरी आश्रयकी जरूरत नहीं। और अगर वह बाहरी आश्रयपर निर्भर रहने लगेगा, तो आगे चलकर इससे खुदको तथा खादीको भी हानि पहुँचायेगा। खादीकी सफलताकी कुंजी तो इसीमें है कि प्रत्येक तहसील नहीं तो कमसे-कम प्रत्येक जिला तो जरूर ही अपनी खादी स्वयं बना ले और स्वयं उसका इस्तेमाल करे।

लेकिन श्रीयुत दास्ताने कहते हैं कि यद्यपि कार्य-समितिने १९२०के चतुर्विध रचनात्मक-कार्यक्रमपर फिरसे जोर दिया है, तो भी शायद ही कोई विधायक अपने निर्वाचन-क्षेत्रमें इस रचनात्मक-कार्यक्रमके विषयमें कुछ कहता हो। और इसी प्रकार अगर खादीके प्रेमी भी अपनी मौलिकता और अध्यवसायका परिचय नहीं देंगे, तब तो खादीके व्यापक प्रसारकी उम्मीद कम ही है। श्रीयुत दास्तानेके कथनमें बल है। लेकिन दरअसल वस्तुस्थिति ऐसी निराशाजनक नहीं है जैसी वे समझ रहे हैं। नाल-वाड़ीमें विनोबा लगभग अपना पूरा ध्यान खादीपर लगा रहे हैं। वे इस बातके प्रयोगोंमें लगे हुए हैं कि प्रतिदिन आठ घंटे कातकर तीन आनेकी मजदूरी मिल सके, यह सहज साध्य बात है या नहीं। खुशी है कि उसमें सफलता मिलनेकी आशा दृष्टिगत हो रही है। वहाँ एक सोलह वर्षका बिलकुल सामान्य कोटिका देहाती लड़का है जो चार आने रोज कमाता है। अगर एक मामूली देहाती अपनी आँखों यह देख ले कि मनुष्य केवल कताईके द्वारा प्रतिदिन तीन आने कमा सकता है और साथ ही अगर वह यह भी जान ले कि देशमें एक ऐसी संस्था है जो निश्चित समानता और मजबूतीवाला तमाम सूत खरीद सकती है, तो देशमें इसका असर पड़ेगा ही और लोग अपने-आप कातने लगेंगे। यह एक निहायत ठोस काम है और ऐसे कामोंमें जल्दबाजी तथा चमत्कारपूर्ण प्रदर्शनोंके लिए स्थान नहीं होता। फिर इसके मार्गमें

एक भारी कठिनाई भी है। कातने और बुननेवाले तथा इस व्यवसायमें लगे हुए अन्य कारीगरोंसे यह उम्मीद की जाती है कि वे अपने कपड़ोंके लिए केवल खादी ही इस्तेमाल करें। इसके मानी यह हुए कि अब लोगोंको खादीका अर्थशास्त्र समझाने और उनकी मनोवृत्तिमें परिवर्तन करनेकी जरूरत है। गरीब कारीगर नहीं जानते कि वे क्यों इस कदर लाचार और गरीब हैं। और यह तो उनमें से और भी कम लोग जानते हैं कि अज्ञान तथा गरीबीसे उनका उद्धार कैसे हो सकता है। ऐसे ज्ञानके प्रसारके लिए बड़ी संख्यामें ऐसे कार्यकर्ता होने चाहिए जिन्हें खादीसे प्रेम हो, जो उसके अर्थशास्त्रको जानते हों और उसकी सारी क्रियाओंसे वाकिफ हों।

इस तरह खादीको व्यापक बनानेके काममें अनेक वास्तविक कठिनाइयाँ हैं। श्रीयुत दास्ताने तथा अन्य लोग, जो खादीके बारेमें उनके ही जैसा महसूस करते हैं, खादीके शास्त्रका गहरा अध्ययन करें, और अगर उनमें कुछ मौलिक योगदान कर सकनेकी क्षमता हो तो स्वयं अपने प्रयोग करें या उसी पुराने मार्गपर चलते हुए खादीपर अपना सम्पूर्ण ध्यान लगायें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-६-१९३७

३५५. मनुष्यकी अमानुषिकता

बहुत-से लोगोंको यह पता भी न होगा कि 'फूका' क्या चीज है। उससे भी कम लोगोंको इस बातका पता होगा कि कलकत्तामें 'फूका-विरोधिनी समिति' नामकी एक संस्था है। उसके संरक्षक महाराजाधिराज सर विजयचन्द महताब बहादुर और न्यायमूर्ति सर एल० डब्ल्यू० जे० कॉस्टेलो हैं। अध्यक्ष हैं श्री रामकुमार बांगड़। इसका दफ्तर ६५, पथुरियाघाट स्ट्रीटपर है। संस्थाके मन्त्रीने 'फूका-क्रिया' का वर्णन इस प्रकार दिया है:

> मैं आपकी सेवामें निवेदन करना चाहता हूँ कि प्रत्येक दुधारू पशु पर दिनमें दो बार फूकाका अत्याचार किया जाता है। पशुके चारों पैर चार मजबूत खम्भोंसे बाँध दिये जाते हैं। फिर दो आदमी इस पशुको इतनी जोरसे पकड़े रहते हैं कि वह बेचारा जरा भी इधरसे-उधर नहीं हो सकता। फिर २२ इंच लम्बा और ८ इंचके घेरेवाला एक बाँस या नली लेकर उसे पशुकी जननेन्द्रियमें जोरसे घुसायी जाती है। फिर एक आदमी जननेन्द्रियमें हवा भरता है जिससे वह पूरी तरह फैल जाये। उसके फूलनेसे दूधकी उन ग्रन्थियोंपर विशेष दबाव पड़ता है जिससे दूध निकालनेवालेको उसके थनोंसे एक-एक बून्द दूध निकालनेमें सहायता मिलती है। दूध निकालनेकी क्रिया भी इतनी अमानुषिक है कि उसका वर्णन नहीं हो सकता। पशुकी पीड़ाकी परवाह किये बिना जब तक थनोंसे खून नहीं निकलने लगता, तब तक

दुहना बन्द नहीं किया जाता। कभी-कभी तो खूनकी बूंदें दूधमें गिरकर मिल जाती हैं। चूंकि गाय या भैंस जरा भी हिल नहीं सकती, इस अमानुषिक अत्याचारको वह चुपचाप सहती रहती है और उसकी मूक पीड़ा आँसुओंकी धारा और पसीनेके प्रवाहके रूपमें उसके गालों और शरीरपर पसीजकर वह निकलती है। यह अमानुषिक अत्याचार दिनमें दो बार किया जाता है। और हर बार गरीब पशु मूर्च्छित हो जाता है।

मन्त्रीने जो वर्णन दिया है, उससे अधिक दुःखदायक और घृणित क्रियाकी कल्पना करना भी कठिन है। संस्थाकी एक बैठककी कार्यवाही पढ़नेसे मालूम होता है कि जो भी गाय या भैंस इस क्रियाका शिकार होती है, वह वन्ध्या हो जाती है। इसलिए जब 'फूका' करनेपर भी वे दूध नहीं दे सकतीं, तब कसाइयोंके सुपुर्द कर दी जाती हैं।

संस्था यह अमानुषिकता बरतनेवालोंपर मुकदमा चलानेका जिम्मा लेती है। वह इन अपराधियोंको खोजनेके लिए सादी पोशाकमें घूमनेवाले खुफियाओंको तैनात करती है। जहां तक इस संस्थाके कार्यका सम्बन्ध है, वह अच्छा है। पर मेरे खयालमें इससे भी आगे बढ़नेकी जरूरत है। कुछ अपराधियोंको सजा दे देने-भरसे इस अमानुषिकताकी रोकथाम नहीं हो सकेगी। अपराधियोंके बीच इसके खिलाफ प्रचार करने, उन्हें समझाने और इस क्रियाकी बुराइयोंको उनके ध्यानमें लानेकी जरूरत है। अलबत्ता, इस बुराईको रोकनेका सबसे उत्तम और कारगर उपाय तो यह है कि खुद कॉर्पोरेशन ही पूरे कलकत्ताको दूध पहुँचानेका भार अपने ऊपर ले ले और तमाम ग्वालोंको तनख्वाहदार नौकर बनाकर रख ले। तब उन्हें आजकी तरह कोई प्रलोभन नहीं रहेगा। उनपर स्वास्थ्य-विभागकी निगरानी रहेगी। दूध निकालनेका काम ठीक नियन्त्रणके साथ होगा। नागरिकोंको यह भरोसा रहेगा कि उन्हें अपने पैसोंके बदलेमें शुद्ध दूध मिलेगा। और कोई वजह नहीं कि दूध मुहैया करनेवाला यह महकमा स्वावलम्बी क्यों न हो? अगर दूध कुछ महँगा करना पड़ेगा तो नागरिक खुशी-खुशी एक पाई अधिक दे देंगे। दूधकी पूर्तिका प्रबन्ध भी अगरमें नगरपालिकाको अपने हाथमें ले लेना चाहिए और जिस तरह ट्राम-लिफ्टपर सरकारका एकाधिकार होता है, उसी तरह दुग्ध-उद्योगपर उसका एकाधिकार होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-६-१९३७

३५६. पत्र : मीराबहनको

१९ जून, १९३७

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र अभी आया है। आशा है कि पहाड़की हवासे तुम ठीक हो जाओगी। डॉ० धर्मवीरके नाम पत्र इसके साथ हैं। सुभाषबाबूको मेरा स्नेह कहना। उन्हें अलग पत्र लिखने का समय मेरे पास नहीं है।

तुम्हें यह जानकर दुःख होगा कि कल बरसात शुरू हो गई और उसने नाले के पुलके पासका मिट्टीका काम नष्ट कर दिया और दोनों तरफके घर लगभग बरबाद हो गये। अगर बरसात पाँच मिनट और होती रहती तो घर बह जाते। अब मैं सोच रहा हूँ कि क्या किया जाये।

खानसाहब और मेहरताज आज आये।[1]

और बातोंके लिए अब वक्त नहीं है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३८३) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८४९ से भी

३५७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१९ जून, १९३७

भाई वल्लभभाई,

अच्छा हुआ वह काँटा[2] निकल गया। ठीक राजकुमारी[3] के जैसा ही हुआ। डॉक्टरोंकी अक्ल ख़त्म हुई और कुदरत डॉक्टर बन गई। भड़ौंचका किस्सा मैंने पढ़ लिया। ऐसे असत्य तो चलते ही रहेंगे। दिनकरराय[4]-जैसोंके प्रति दूसरा और क्या

१. देखिए "पत्र : अमृत कौरको", १८-६-१९३७।

२. साधन-सूत्रके अनुसार वल्लभभाई पटेल तीथलमें समुद्रतटपर गांधीजीके साथ घूमते समय एक दिन पाँव में काँटा घुस जानेसे पन्द्रह दिनसे ज्यादा परेशान रहे।

३. देखिए पृ० २८०-१।

४. दिनकरराय देसाई उस समय भड़ौंच-नगरपालिकाके अध्यक्ष थे; वहाँके भंगियोंने हड़ताल कर दी थी; देखिए पृ० ६३।

व्यवहार हो सकता है? कार्य-समितिकी बैठकमें तो अब मैं २६ से २९ के बीच ही भाग ले सकता हूँ। इतना समय बहुत है। इसमें शक नहीं कि बैठक जितनी जल्दी हो उतना अच्छा।

किशोरलालकी तबीयत नरम-गरम बनी रहती है। इसलिए वे मेरे पास नहीं आ सके। मैं जिस दिन आया उस दिन दो-चार मिनट उनसे मिला था। वे सेगांव आनेवाले थे। परन्तु बीमारीके कारण नहीं आ सके।

तुम्हारा स्वास्थ्य अन्यथा तो अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
पुरुषोत्तम बिल्डिंग
ऑपेरा हाउसके सामने
न्यू क्वीन्स रोड, बम्बई-४

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो–२: सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०१

३५८. पत्र : जमनालाल बजाजको

१९ जून, १९३७

चि० जमनालाल,

यह तार भेज दो:

"खानसाहब अपनी ओर से उत्सुक नहीं हैं। यदि उनकी उपस्थिति बहुत अनिवार्य हो तो आकर उनसे बात कर लें"।[1]

यदि यह तार उचित माना जाये तो भेजो। मैं हुक्म निकालकर नहीं भेजना चाहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८७) से।

१. यह तार मसौदा अंग्रेजीमें है। [illegible] देखिए पृ० ३३७ भी।

३५९. पत्र: अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
२० जून, १९३७

प्रिय बागी,

तुम्हारे दो पत्र मेरे सामने हैं। देहाती स्याहीमें कोई दोष नहीं है। दोष मेरा है। मैंने आलसके मारे देहाती स्याहीके प्रयोगमें जिन नियमोंका पालन करना चाहिए, उनका पालन नहीं किया। फिरसे आलस्यका पोषण करनेवाली शहरी स्याही काममें लाने लगूं तो मेरा आलस्य नहीं छूटेगा। मेरा आलस्य यदि जायेगा तो तभी जायेगा जब मैं इसी तरह देहाती स्याहीके प्रयोगपर डटा रहूँ और यदि मेरे अक्षर इतने फीके हों कि पढ़े ही न जा सकें, तो तेरे-जैसे लोग मेरी भर्त्सना करें।

मीरा डलहौजीमें खुश है। सदा ही बर्फसे ढँकी चोटियोंने उसे मोहित कर लिया है जिन्हें वह रोज देखती है, और डॉ० धर्मवीर तथा सुभाष उसका बहुत खयाल रखते हैं। तुम्हारा यह कहना ठीक है कि वहाँ वह अपनेको भीड़-भड़क्केमें महसूस नहीं करेगी। तुम्हें उसे पत्र लिखना चाहिए।

तुमने यह अच्छी खबर दी है कि हरिजनोंकी कुछ झोपड़ियाँ तोड़ी जा रही हैं और उनके लिए नये मकान बन रहे हैं।[1]

ज्यादा सम्भावना यही है कि कार्य-समितिकी बैठक यहाँ अगले सप्ताह होगी। इस बार इलाहाबाद जानेका कोई सवाल पैदा नहीं होता।

उन तीन पुस्तिकाओंकी किसने सिफारिश की थी? क्या तुम्हें उनके बारेमें कुछ मालूम है? जो लोग यह चाहते हैं कि मैं किताबें पढ़ूं, उनसे तुम्हें मेरी वकालत करनी चाहिए। समय ही नहीं है।

सस्नेह,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३११) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४२० से भी

१. सम्भवत: अमृत कौर द्वारा नगरपालिकाके अधिकारियोंको अभिवेदन भेजनेके परिणाम-स्वरूप; देखिए पृ० २०६ भी।

३६०. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

२० जून, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

तुम्हारे नाम वास्ता का पत्र और उनके नाम अपना पत्र इनके साथ ही भेज रहा हूँ। आशा है, जो चीजें उन्होंने माँगी है वे तुमने भेज दी होंगी। मुझे आशा है कि तुम उन्हें लिखोगे ही, इसलिए मेरा पत्र अपने पत्रके साथ ही भेज देना।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०११८) से।

३६१. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२० जून, १९३७

भाई खम्भाता,

बहुत दिनोंमें आखिर तुम्हारी डायरी आई। जो रोग किसी भी उपचारसे न जाये, उसे सहन किये बिना गति नहीं है और सहन करनेकी शक्ति तुम्हें ईश्वरने खूब दी है।

तुम दोनोंको

बापूके आशीर्वाद

श्री बहराम खम्भाता
वेल्वेडर कोर्ट
चर्चगेट रेलवे स्टेशन
फोर्ट, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६१३) से। सी० डब्ल्यू० ४४०४ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता

३६२. पत्र : कल्याणजी वी० मेहताको

२० जून, १९३७

भाई कल्याणजी,

तुम्हारा पत्र मिला। हो सके तो बा को एक बार मणिलालके पास ले जाना। और हो सके तो कानमको तकलीपर कातनेका अभ्यास डलवाना। यहाँ शुरू किया था, बादमें छूट गया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७१४) से।

३६३. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
२१ जून, १९३७

प्रिय बागी,

तो तुमने विजय लगभग प्राप्त कर ली। पर तुम्हें इस मामलेको अन्त तक पहुँचाना होगा; कहीं ऐसा न हो कि नगरपालिका खो जाये।[1]

तुम ठीक कहती हो। सुभाषको डलहौजीसे रवाना होनेमें जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। उनके सामने जो काम है उसके लिए उन्हें पूरी तरह स्वस्थ हो जाना चाहिए। मुझे अफसोस है कि मैं तुम्हें यह बताना भूल गया था कि जमनालालजी ६ तारीख को यहाँ आ गये थे; और तीन-चार दिनके सिवा, जब उन्हें अपने पुत्रके विवाहके लिए कलकत्ता जाना है, वे यहीं रहेंगे। वे २९ को जा रहे हैं।

तुम्हें जब भी दो मिनटका समय मिले तो मीराको पत्र लिखना।

अपने आहारके बारेमें तुम मैन्चन या मैक्कलसे[2] परामर्श क्यों नहीं करती? तुम्हें अजीर्णसे तो छुट्टी पा ही लेनी चाहिए। मैं इतनी दूरसे तुम्हारा अधिक पथ-प्रदर्शन नहीं कर सकता। इसलिए अपनी खानेकी सूचीमें क्या रखना चाहिए और क्या नहीं, इसमें तुम्हें वहीं किसीकी मदद लेनी चाहिए।

१. देखिए पृ० ३४६।

२. साधन-सूत्र में मैक्कन है; देखिए पृ० २७२ भी।

कार्य-समितिकी ४ और ५ जुलाईको वर्धामें बैठक हो रही है। उसमें मन्त्रि-पद स्वीकार करने, न करनेके सवालका आखिरी तौरपर फैसला हो जाना चाहिए।

सस्नेह,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९०) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९४६ से भी

३६४. पत्र : मीराबहनको

२१ जून, १९३७

चि० मीरा,

तुम्हारा डलहौजीसे लिखा गया दूसरा पत्र अभी मिला। मैंने यह आशा नहीं रखी थी कि डलहौजीमें कोई जादू हो जायेगा। परन्तु धीरज रखोगी तो वहाँ तुम्हें पूरा आराम हो जायेगा। अगर डॉक्टरकी राय दूसरी हो, तो अपनी बातका आग्रह न करो। अलबत्ता, व्रतोंकी बात दूसरी है। परन्तु मांस और शराबके परहेजके सिवाय और कोई व्रत तो हैं ही नहीं।

यहाँ उल्लेखनीय वर्षा नहीं हुई है। मौसम जरा ठण्डा हो गया है। बा के २४ तारीख तक लौट आनेकी आशा है। खानसाहब और मेहरताज अच्छे चल रहे हैं। कैलेनबैकको ७ जुलाईको जहाज पकड़ना है। लेकिन वह दिसम्बरमें वापस आने और तीन महीने ठहरनेका वायदा करते हैं।

बलवन्तसिंहको मकान बनानेका खब्त है। गोशाला पूरी हो चुकी, परन्तु बड़ा चौक बननेमें काफी समय, जगह और रुपया लग रहा है। देखें क्या होता है। पारनेरकर[1] यहीं है और यहाँ ठहरेगा।

अपने मेजबानोंको मेरी याद दिलाना।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३८५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८५१ से भी

१. एक कृषि-विशेषज्ञ और गो-सेवा संघके मन्त्री। बलवन्तसिंह अपनी पुस्तक **बापूकी छायामें** (पृ० १७९) में लिखते हैं कि "पारनेरकरजी धूलिया छोड़कर (स्थायी तौरपर) सेवाग्राम आ गये थे जहाँ उन्हें कृषिका काम सौंपा गया था।"

३६५. पत्र : प्रभावतीको

२१ जून, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा १६ तारीख का पत्र मिला। मैं तो तुझे लिखता ही रहता हूँ। अनायास जो सेवा हाथ लगे, उसमें लीन हो जाना और सन्तोष करना।

अमतुस्सलाम यहीं है, खान साहब और मेहरताज भी। बबु, यानी शारदाके बारेमें तो तुझे लिख ही चुका हूँ। अभी सुशीलाकी सहेली डॉ० सुन्दरम[1] दो दिनके लिए आई है। वह वीणा बहुत अच्छी बजाती है। बा शायद २४ के आसपास आये। पारनेरकर भी यहीं रहने आये हैं। बहुत-सा निर्माणकार्य हो रहा है। तू आयेगी, तब बहुत-कुछ नया देखेगी।

मीराबहनको पत्र लिखना। उसका पता है: मार्फत डॉ० धर्मवीर, डलहौजी, पंजाब।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तेरा 'हरिजनबन्धु' अभी मेरे देखनेमें आया। यह पटनासे वापस लौटा है। जब तेरा पता बदलता है, तब तू इसकी खबर पूना क्यों नहीं देती? अब तुझे मिलने लगा है या नहीं, लिखना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४८९) से।

३६६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२१ जून, १९३७

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र और जवाहरका जवाब पढ़ लिया। मालूम होता है, नरीमन गड्ढा खोद रहे हैं। वह खुद उसीमें गिरेंगे। देखें कि अब वह क्या करते हैं। हमें उतावली करनेकी जरूरत नहीं है। कार्य-समितिके सामने यह बात आयेगी ही। बैठक बहुत देरमें तो होगी, परन्तु इसका कोई उपाय नहीं है। जो हो सो होने दिया जाये।

१. जी० रामचन्द्रन की पत्नी; देखिए "पत्र : कनु गांधीको", २४-६-१९३७।

लोथियनका लम्बा पत्र[1] मिला है, अभी पढ़ नहीं पाया हूँ। अब तुम चलने-फिरने लायक हो गये होगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०२

३६७. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२१ जून, १९३७

चि० मणिलाल और सुशीला,

मणिलालका पत्र मिला है। कैलेनबैक यहाँसे ७ जुलाईको रवाना होंगे। उनके दिसम्बरमें फिर यहाँ वापस लौटनेकी आशा है। यहाँ तो वे बिलकुल हम लोगों-जैसे रहते हैं। केवल धोती पहने रहते हैं। कभी-कभी कुर्ता भी पहनते हैं। उन्होंने बहुत-सी खादी खरीदी है। कपड़े सिलवाये हैं। इस बार उनकी कहीं जानेकी इच्छा ही नहीं थी। दूसरी बार आये तो उन्हें ताज वगैरह देखने भेजूंगा।

सेगाँवमें एक झोंपड़ीकी जगह अब अनेक घर हो गये हैं। निर्माणका सिलसिला खत्म ही नहीं होता। जनसंख्या भी बढ़ती जा रही है।

बा कानो[2] के साथ मरोलीमें मीठूबहनके यहाँ हैं। अब कुछ दिन बाद उनके आनेकी सम्भावना है।

लक्ष्मीके मद्रासमें पुत्रजन्म हुआ है। दोनों ठीक हैं। इस बार कष्ट नहीं भोगा। कान्ति बंगलौरमें कॉलिजमें पढ़ने गया है। किशोरलाल आज अच्छे तो कल बीमार बने रहते हैं।

ये अक्षर फीके लगते हैं या नहीं, लिखना। पत्र ठेठ देशी स्याहीसे लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८६४) से।

१. महादेव देसाईने इस पत्र की प्रतिलिपि २५ जून को अपने पत्र के साथ (सी० डब्ल्यू० ६३८६) मीराबहनको भेजी थी। उसमें उन्होंने बताया था: "लॉर्ड लोथियनने बापू को एक अनुरोध-भरा इस आशय का पत्र लिखा है कि कांग्रेस को पद ग्रहण कर लेना चाहिए। यह अपेक्षाकृत अधिक तर्कपूर्ण पत्र है। फिर भी उसमें दृष्टिकोण वही अपनाया गया है जो वाइसराय के भाषण में है। इनके सोचने का कैसा एक जैसा ढंग है!" वाइसराय के भाषण के लिए देखिए परिशिष्ट ६।

२. रामदास गांधी के पुत्र।

३६८. पत्र : पुरुषोत्तम का० जेराजाणीको

२१ जून, १९३७

भाई काकूभाई,

जो कम्बल मैंने तुम्हें भेजा है, वह स्कॉटलैंडका है और हाथका बुना हुआ है। कहते हैं कि उसका ऊन भी हाथका कता हुआ है। इसकी खूबसूरती इसके विभिन्न रंगोंके मिश्रणमें है। इसे भेजनेका अभिप्राय यह है कि इस डिजाइनका इस्तेमाल तुम कश्मीरमें या और दूसरी जगह कर सको तो करो। वरना एक नमूनेके तौरपर इसे सँभालकर रख लेना। इसके बारेमें मैं लिखना भूल गया था। मुझे खुशी है कि तुमने मुझे याद दिला दी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८३२) से; सौजन्य: पुरुषोत्तम का० जेराजाणी

३६९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
२२ जून, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र अभी-अभी मिला। तीन दिन होंगे तो बहुत ही कम, पर कुछ नहींसे तो यह अच्छा ही है। अफसोस है कि इन्दु तुम्हारे साथ नहीं आ सकेगी। बहुत साल पहले उसके टॉन्सिल का जो ऑपरेशन हुआ था, मैंने उसे आखिरी माना था। सोचता हूँ, यह ऑपरेशन भी पिछले की तरह ही आसान होगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक-संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३७०. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

२२ जून, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

जनतन्त्रपर तुम्हारा निबन्ध और धर्म-परिवर्तनपर तुम्हारा भाषण, दोनों मैंने पढ़े। अच्छे हैं, पर तुम्हें अपने व्यक्तिवादी सांस्कृतिक जनतन्त्रको पूरी तरह विकसित करना चाहिए। हिन्दू-धर्म पर यह आक्षेप किया जाता है कि वह बहुत अधिक व्यक्तिपरक है। विचार करनेपर मुझे यह आक्षेप निराधार लगा है। पर तुम्हारा विचार कुछ और मालूम होता है। मेरी अपनी राय यह है कि हिन्दू-धर्मने इस दिशामें सबसे अधिक शोध की है, पर वह अपनी खोजोंको व्यावहारिक रूप नहीं दे पाया और इसीलिए वह व्यक्तिपरक, अर्थात्, स्वार्थी लगता है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०.११९)से।

३७१. पत्र : बाबूराव डा० म्हात्रेको

२२ जून, १९३७

प्रिय श्री म्हात्रे,

आपकी रिपोर्ट[1] पाकर बड़ी खुशी हुई। यह यातायातको व्यवस्थित करने और, यदि सम्भव हुआ तो, खराब सड़कोंकी मरम्मतमें बहुत सहायक होगी। मैं यह रिपोर्ट सरदारके पास भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९८२७) से; सौजन्य : बाबूराव डी० म्हात्रे

१. हरिपुरा में होनेवाले ५१ वें कांग्रेस-अधिवेशन के स्थान के बारेमें; देखिए पृ० २३४ भी।

३७२. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको

२२ जून, १९३७

एसोसिएटेड प्रेसके विशेष संवाददाताने आज सवेरे ही, भारतके नाम वाइसरायके सन्देशकी एक प्रतिके साथ, महात्मा गांधीसे सेगाँवकी उनकी कुटियामें भेंट की। महात्मा गांधी सेठ जमनालाल बजाज और अन्य कार्यकर्ताओंके साथ विचार-विमर्श कर रहे थे। उन्होंने संवाददातासे कुछ मिनट प्रतीक्षा करनेको कहा। १५ मिनटमें महात्मा गांधीने संवाददाताको भीतर बुला लिया और वाइसरायका जो वक्तव्य संवाददाता द्वारा पहले ही उनके पास भेज दिया गया था, उसे लौटाते हुए ऊँचे स्वरमें पढ़नेको कहा, जिससे कि वे स्वयं और उपस्थित अन्य लोग उसे सुन सकें। संवाददाताने जब तक धीरे-धीरे पूरा सन्देश पढ़ा, गांधीजी ध्यानसे उसे सुनते रहे। पढ़ना समाप्त होनेपर महात्मा गांधीने संवाददातासे पूछा :

अब कहिए आप क्या चाहते हैं?

यह कहनेपर कि इस वक्तव्य पर उनकी प्रतिक्रिया चाहिए, महात्मा गांधी तैयारी की मुद्रामें बैठे और संवाददाताको लिखनेका इशारा किया।

'वाइसरायका वक्तव्य मैंने बहुत ही ध्यानसे सुना है, पर मुझे खेद है कि मैं कोई वक्तव्य नहीं दे सकता। देशके सामने जो गम्भीर प्रश्न है, कार्य-समिति उसपर ५ जुलाईको अन्तिम निर्णय लेगी और मुझे आशा है कि कांग्रेस-जन उस निर्णयका पहलेसे अनुमान लगाना और उसकी आलोचना करना नहीं चाहेंगे।

उसके बाद बातचीत सेगाँव और वहाँके निवासियोंके बारेमें होने लगी। महात्मा गांधीने कहा कि गाँवमें काफी सुधार हुआ है और वर्धाके अन्य स्थानोंसे इस गाँवकी गायें अच्छी हैं। लोग स्वस्थ हैं और उन्हें मुझसे भी ज्यादा भरपूर ताजी हवा मिलती है, क्योंकि वे हिम्मती हैं, नाजुक-मिजाज नहीं।

[अंग्रेजीसे]
हितवाद, २९-६-१९३७

३७३. पत्र : अतुलानन्द चक्रवर्तीको

सेगाँव, (वर्धा)
२३ जून, १९३७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। बात दुर्भाग्यकी तो है, पर है सच कि मैं साम्प्रदायिक गुत्थीको सुलझानेमें आपकी पद्धतिकी उपयोगिताका कायल नहीं हो सका। इसका अर्थ यह नहीं है कि सांस्कृतिक सम्पर्कका कोई मूल्य ही नहीं है। मेरे खयालमें उसका बहुत मूल्य है। परन्तु इस तरहके सम्पर्क संगठित किये जा सकनेमें मुझे बहुत सन्देह है। पता नहीं मैं अपनी बात साफ कर सका हूँ या नहीं। उस दिशा में शायद विश्वके किसी भी व्यक्तिसे अधिक योगदान रवीन्द्रनाथने किया है। पर वह उन्होंने किसी संगठनके द्वारा नहीं किया है। उनकी रचनाओंने बरबस लोगोंका ध्यान आकर्षित किया है। यदि आपकी रचनाएँ वैसी ही उपयोगी सिद्ध हों तो यह बड़ी प्रसन्नताकी बात होगी। किन्तु तब कवि[1] की ही तरह आपको मेरे या किसी अन्य व्यक्तिके प्रमाण-पत्रकी जरूरत नहीं होगी। पता नहीं मैं अपनी स्थिति स्पष्ट कर सका हूँ या नहीं। चाहे जिस कारण से हो, मुझे यह महसूस होता है कि आपकी स्थिति भिन्न है। हो सकता है, मैंने उसे समझा न हो और इसीलिए मैं उसके प्रति उदासीन रहा हूँ। यदि मैं आपको यह विश्वास दिला सकूँ तो मुझे सन्तोष होगा कि मेरी उदासीनताके पीछे किसी प्रकारकी हठधर्मिता नहीं है और न ऐसा ही है कि आपने जो विचार व्यक्त किये हैं, उनका मैंने ध्यान से अध्ययन नहीं किया है। जिस क्षण भी मुझे आपकी पद्धति ठीक लगने लगेगी, मैं अपने विनम्र ढंगसे उसका प्रचार करूँगा। परन्तु आप तो, लगता है कि मेरे समर्थन के बिना बिल्कुल लाचार हैं, जिससे मुझे चोट पहुँचती है। आपको मेरे विज्ञापनकी जरूरत क्यों होनी चाहिए? जिन प्रतिष्ठित लोगोंका समर्थन आपने प्राप्त कर लिया है, वे निश्चय ही आपके कामको मुझसे कहीं अधिक अच्छी तरह समझ सकते हैं।

मैं अब आपके प्रश्नोंका उत्तर अधिक आसानीसे दे सकूँगा।

गाँवोंके लिए जिस ठोस काम की कल्पना मेरे मनमें है, वह वैसा-कुछ है जैसाकि चरखा-संघ हजारों कारीगरोंमें उनकी जाति या धर्मका खयाल किये बिना कर रहा है। मैं वे आँकड़े प्रकाशित करनेवाला हूँ जिनसे यह स्पष्ट हो जायेगा कि चरखा-संघ ने कितने कारीगरोंके साथ राजनैतिक नहीं, विशुद्ध आर्थिक सम्पर्क स्थापित किया है। ऐसा कोई भी व्यक्ति जिनकी इस तरहके सम्पर्कमें आस्था है, यदि चरखा-संघके

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

काम करनेके ढंगको सीखनेकी इच्छा रखता हो तो निस्सन्देह वह इस [सम्पर्क] के लिए काम कर सकता है।

यह कार्य आवश्यक रूपसे गाँवों तक सीमित है, क्योंकि ये कारीगर ज्यादातर गाँवोंमें ही मिलते हैं और यही वे लोग हैं जिन्हें, जैसी सहायता हम दे रहे हैं, वैसी सहायताकी जरूरत है।

तीसरे और चौथे प्रश्नोंके उत्तर ऊपरके अनुच्छेदोंमें ही आ जाते हैं।

पाँचवें प्रश्नका उत्तर शुरूके अनुच्छेदमें आ गया है।

ऐसा नही लगता कि आपने अपने पत्रकी कोई नकल रखी होगी। इसलिए मैं आपके पत्रको इस विचारसे लौटा रहा हूँ कि आप देख सकें कि मैंने आपके सभी प्रश्नोंके उत्तर दे दिये हैं या नहीं। यदि कोई प्रश्न छूट गया हो तो आप मुझे बतायें। मैं फिर आपके प्रश्नोंका उत्तर देनेकी कोशिश करूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४७६) से; सौजन्य: ए० के० सेन

३७४. पत्र: भगवानजी अ० मेहताको

२३ जून, १९३७

भाई भगवानजी,

तुम खम्भातके पास वडवाश्रम हो आये, यह अच्छा हुआ। तुम्हारे लिखनेका मुझे दुःख हो ही नही सकता। कुछ विचार तुम्हारे मनमें उठें, उन्हें तुम व्यक्त करो, तो इसमें हर्ज क्या हो सकता है? जब तक तुम स्वयं मौजूद हो, तब तक करसनजी मूलचन्दका नाम मिट जाये, यह हो ही कैसे सकता है? मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ कि तुम्हारे बारेमें भाई नरसेरामको लिखनेमें मैंने कोई कसर नहीं छोड़ी थी। मैंने शायद तुम्हें यह खबर नही दी होगी कि इस सम्बन्धमें प्रो० ठाकोरके साथ भी मेरा पत्र-व्यवहार हुआ था। यदि यह खबर नहीं दी तो इसीलिए नही दी होगी कि उसमें विशेष कुछ महत्व का नही था। लेकिन मैंने कोशिश करनेमें कुछ उठा नहीं रखा था। तुम दोनोंके बीचके झगड़ेका निपटारा करनेमें मैं असमर्थ था। न मेरे पास इतनी सामग्री थी, न इतना समय।

अब तुमने देवचन्दभाईको लिखा पत्र मुझे भेजा है। मैं इस सम्बन्धमें क्या कर सकूँगा, नही जानता। पत्र देवचन्दभाईको भेज रहा हूँ। इसका जो जवाब आयेगा, सो बताऊँगा। और मुझसे कुछ हो सकेगा, तो मैं अवश्य करूँगा।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८३५) से। सी० डब्ल्यू० ३०५८ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

३७५. पत्र : लॉर्ड लोथियनको

सेगाँव, वर्धा
२४ जून, १९३७

प्रिय लॉर्ड लोथियन,

आपके लम्बे पत्र[1] के लिए हार्दिक धन्यवाद। आप अपनी सलाहकी सचाईका मुझे विश्वास दिलानेके लिए बड़े धैर्यसे जो प्रयास कर रहे हैं, मैं उसकी सराहना करता हूँ। जो-कुछ आप कहते हैं, उसके अधिकांशसे मैं पूर्णतया सहमत हूँ। मन्त्रि-पद स्वीकार करनेके प्रश्नका कांग्रेस कार्य-समितिकी आगामी बैठकमें अन्तिम रूपसे फैसला हो जायेगा। सरकारके रुखके बारेमें वाइसरायने अभी आखिरी बात कह दी है[2]। मैं यह मानता हूँ कि स्थितिके बारेमें लॉर्ड जेटलैण्डके पहले भाषण[3] से वह बेहतर है।

कार्य-समितिका फैसला चाहे जो हो — और उसका आपको इस पत्रके पहुँचनेसे पहले पता चल जायेगा — पर मैं जिस विषयपर आपको लिखना चाहता हूँ वह उपनिवेशों और भारतके मूल अन्तरके बारेमें है। जहाँ तक मुझे ज्ञात है, उपनिवेशवासी सशस्त्र थे और शस्त्रोंका प्रयोग जानते थे। यहाँके तीन करोड़ मतदाताओंकी जबरदस्त संख्यामें से प्राय: सभी निरस्त्र हैं, वे शस्त्रोंका प्रयोग करना नहीं जानते, और यदि इन्हें शस्त्र रखनेकी पूरी आजादी दे भी दी जाये तो भी शायद वे उन्हें रखना नहीं चाहेंगे — भारतीय संस्कृति इसी तरह की है। इसलिए, यद्यपि मेरी आस्था संवैधानिक तरीकोंसे काम करनेकी रही है, तथापि हर हिन्दुस्तानीकी तरह, मुझे या तो कोई ऐसा कार्यक्रम सोचना है जिससे हर वयस्कको शस्त्रोंके प्रयोगमें प्रशिक्षित किया जा सके, या फिर इसका कोई विकल्प ढूँढ़ा जाये। मेरे अनुरोधपर, कांग्रेस पिछले अट्ठारह वर्षोंसे उस विकल्पको, जो अहिंसात्मक असहयोग, सविनय-प्रतिरोध आदि कहलाता है, आजमानेकी कोशिश कर रही है। जहाँ तक मेरा सवाल है, मैंने अन्तिम उपायके तौरपर शस्त्रोंके प्रयोगसे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके विचारको तिलांजलि दे दी है और सभी रूपों और ढंगोंमें अहिंसाको उसका चरम विकल्प मान लिया है। शस्त्रोंका प्रयोग कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे कई तरहसे आजमाकर न देख लिया गया हो, अहिंसाके क्षेत्रमें शोध की असीमित सम्भावनाएँ हैं। इसलिए मैं एक ऐसा सूत्र खोजनेके लिए उत्सुक हूँ जिससे कांग्रेसके पूर्ण स्वतन्त्रताके ध्येयसे संगत बने रहकर मन्त्रि-पद स्वीकार किया जा सके। परन्तु मुझे यह बात स्वीकार कर लेनी चाहिए कि आपकी तरह मुझे यह विश्वास नहीं है कि वर्तमान अधिनियमको पूर्ण स्वतन्त्रताका साधन बनाया जा सकता है। इसके विप-

१. देखिए पृ० ३५१, पाद-टिप्पणी १।
२. देखिए परिशिष्ट ६।
३. देखिए परिशिष्ट ४।

रीत, बहुत बड़ी संख्यामें शिक्षित भारतीयोंकी तरह, मेरा यह विश्वास है कि भारत जो-कुछ चाहता है, वह अधिनियम उसे वह दे नहीं सकता, और जितनी जल्दी कोई भारतीय योजना इसकी जगह ले ले, उतना ही अच्छा है।

निस्सन्देह, इस अधिनियममें कछुएकी चालसे भारतका सैनिकीकरण करनेकी बात है; और इसीलिए जो भारतीय भारतको एक सैनिक शक्ति बनाना चाहते हैं उनमें से अधिकांश लोगोंको यह उतना अरुचिकर नहीं लगता जितना कि मुझे लगता है। मैं तो, यदि मेरा बस चले तो, भारतको एक बिलकुल ही दूसरे मार्गपर ले जाना चाहता हूँ।

इसलिए, यदि आप यह सोचते हैं कि मेरा तर्क गलत है और भारत सैनिक प्रशिक्षण या अहिंसात्मक प्रशिक्षण, इन दोनोंमें से किसी एककी भी पृष्ठभूमि तैयार किये बिना पूरे उत्कर्ष तक पहुँच सकता है, तो आपको आगामी शरद ऋतुमें, और किसी कारणसे नहीं तो मुझे नसीहत देनेके लिए ही, भारत पधारना चाहिए। हर हालतमें, यदि कांग्रेस मन्त्रि-पद स्वीकार करनेका फैसला कर लेती है तो एक तरहसे असली कठिनाई तब शुरू होगी और आपका आना उसे सुलझानेमें सहायक हो सकता है। यदि कांग्रेस अन्यथा निर्णय करती है, तो शायद आपको स्वयं ही यहाँ आनेकी प्रेरणा होगी, जिससे विपत्ति टालनेकी कोई भी कोशिश बाकी न रह जाये। किन्तु जनतन्त्र, जिसमें मतदाताओंका शासन होता है, चाहे कितना आरम्भी ढंगका क्यों न हो, तलवारके शासनसे अच्छा है, क्योंकि तलवारका शासन स्थापित हुआ तो वह एक भयंकर विपत्ति होगी।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ६३८६ ए) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८५२ से भी

३७६. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

२४ जून, १९३७

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। महादेवको लिखा तेरा पत्र भी पढ़ा। महादेवको लिखे तेरे पत्रको मैं उत्तम मानता हूँ। तू उसमें अपने हृदय-मंथनका ठीक चित्रण कर सका है। तेरा निर्णय तो उत्तम है ही। तुझमें पराक्रम हो — और पराक्रम तो है ही — तो तेरे लिए तो कोई भी कॉलेज ठीक ही होगा। लेकिन बंगलौर और बम्बईकी तुलनामें बंगलौर बाजी ले जायेगा, क्योंकि बंगलौरमें सब मिलाकर आजादी ज्यादा मिलेगी। वहाँके मुख्य अध्यापकने अपने लड़केको बम्बई भेजा है, इस बातकी मेरे लेखे कोई कीमत नहीं है, क्योंकि ऐसा करके उसने तो बम्बईकी उपाधिकी ऊपरी प्रतिष्ठा आँकी है। तेरे लिए तो यह प्रतिष्ठा गौण बात है; और होनी चाहिए, ऐसा मैं मानता हूँ।

पराक्रमी विद्यार्थीको विद्यापीठ नही सँवारते, वह स्वय विद्यापीठको सँवारता है। इग्लैण्डमें लाउथ एक छोटा-सा देहात है। वहाँकी पाठशालामें कुछ दिन [महाकवि लॉर्ड] टेनीसन पढ़ा था, इसलिए उसके शिक्षक आज भी उस शालाकी बात करते हुए अभिमानका अनुभव करते हैं। इस प्रकार तू बंगलौरके कॉलेजकी प्रतिष्ठा बढ़ाना। जब कोई व्यक्ति इग्लैण्डकी ओर अथवा पश्चिमकी ओर प्रस्थान करता है, तब मुझे मुख्यत जो बात खटकती है, वह यह है कि यहाँसे पश्चिममें जाकर प्रतिष्ठा प्राप्त करनेवाले लोग स्वयं अपनी तो कोई प्रतिष्ठा नही बढ़ाते, पश्चिमकी डिग्रीकी कीमत उससे जरूर बढ़ती है। प्रतिष्ठाकी उपासना करनेवाले कोई प्रतिष्ठा प्राप्त नही कर सकते, यह तो समझमें आने लायक बात है। पश्चिमकी डिग्री प्राप्त अनेक लोग ठोकर खाते घूमते हैं। किन्तु जिसमें शक्ति होती है, उसे तो, चाहे उसने पश्चिमकी डिग्री प्राप्त की हो या पूर्वकी, प्रतिष्ठा प्राप्त होती ही है। डॉ० त्रिभुवनदास अब नही रहे। वे केवल एल० एम० ऐण्ड एस० थे, वे एक दिनकी १००० रुपया फीस लेते थे। क्या चिकित्सकके नाते और क्या शल्य-चिकित्सकके नाते उनमें अद्वितीय शक्ति थी। कटी हुई नाकको जोड़नेकी कलामें तो उनकी बराबरी करनेवाला सारे ससारमें कोई नही था। इसका एक विशेष कारण तो यह था कि उस समय डाकुओने बड़े-बड़े अधिकारियोंकी नाक काट लेना अपना धन्धा बना लिया था। उस समय, यदि त्रिभुवन-दास कोई कच्चे असामी होते, तो अग्रेज डॉक्टरोको बुलाते। लेकिन स्वयं साहसी होनेसे चाकू और सुई उन्होने अपने हाथमें ही रखे, और जितनी नाकें कटी थी, उनमें से अधिकाश अथवा सभी जोडी। फिर, मनुष्य प्रामाणिक हो, तो अभ्याससे कुशल तो हो ही जाता है। यह सब तेरे निर्णयको दृढ बनानेके लिए लिखा है, क्योकि तेरा निर्णय बदलनेके लिए अनेक प्रकारके तर्क तो अभी लोग तेरे समक्ष प्रस्तुत करते ही रहेंगे। तुझे तो ज्ञान प्राप्त करना है। डिग्री प्राप्त कर लेनेके बाद ज्ञान नही प्राप्त करना है, ऐसी तो कोई बात है ही नही। बल्कि शायद सच्चा ज्ञान तो डिग्री प्राप्त करनेके बाद ही प्राप्त होता है। अनेक लोगोका तो यही अनुभव है। अपने निवास और भोजनकी व्यवस्था तो ऐसी ही करना जो तेरे स्वास्थ्य तथा अध्ययनके लिए अनुकूल हो।

सरस्वतीके पत्र तो मुझे मिले थे, मैंने उसे जवाब भी दिया था। हाँ, वह आगे-पीछे पहुँचा हो, यह हो सकता है।

तेरे पत्रमें एक वाक्य है, "यहाँके लोगोके कुछ रीति-रिवाज तो बहुत ही असभ्य मालूम होते हैं।" किन लोगोके?

बा, कनु और कुसुम देसाई परसो यहाँ आयेंगे।

यहाँ अब ठंडक तो हो गई है, लेकिन मौसमके शुरूमें जितनी बरसात होनी चाहिए, उतनी नही हुई।

बहुत करके अमतुस्सलामके टॉन्सिलका ऑपरेशन परसो होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२४) से; सौजन्य . कान्तिलाल गांधी

३७७. पत्र : कनु गांधीको

२४ जून, १९३७

चि० कनैयो,

तेरा पत्र मिला। मैं तेरी राह तेरी निर्धारित अवधिके बीत जानेके बाद देखूँगा।

यहाँ परसों मद्रासकी एक बहन आई थी, और परसों ही चली गई। प्यारेलाल कहता है कि तू उसे जानता है। उसका नाम है सुन्दरम। वह अपनी वीणा भी लाई थी, जो १५० रुपयेकी थी। वीणाकी इस अधिक कीमतका मुख्य कारण उसकी सजावट था। सजावटके बिना उसकी कीमत ८० रुपये होती। लेकिन मुझे जो अच्छा लगा, वह तो था उसका वीणापर सधा हुआ हाथ। साथ-साथ वह गाती भी थी। उसका कण्ठ मधुर है। उस पूरे समय तू मुझे याद आता रहा। उसने कहा है कि वह फिर किसी समय आयेगी।

लेखाकर्म[1] के बारेमें मैंने जो प्रश्न पूछे हैं, उन्हें तू समझा नहीं। इसका अर्थ यही है कि तू लेखाकर्मके सारे पारिभाषिक शब्द नहीं समझता। अर्थात् उतने ही अंशमें लेखाकर्म भी नहीं समझता। वह पत्र नारणदासको दिखाना। यदि वह तेरी भाषा न समझे तो मुझे ऐसा समझना पड़ेगा कि मैं ही लेखाकर्मकी भाषा नहीं जानता, इसलिए ठीक नहीं लिख सका। नारणदास तो लेखाकर्मको ठीक जाननेवाला है। मैंने तो वकालत-भरके लिए अपने-आप प्रयत्न करके थोड़ा हिसाब-किताब सीख लिया था, इसलिए हो सकता है कि एक लेखाकर्मका विशेषज्ञ जैसी पारिभाषिक भाषाका प्रयोग कर सकता है, वैसी मैं न जानता होऊँ। संक्षेपमें, मैंने जो तुझसे चाहा था, वह था बहीके विभिन्न हिसाबोंका संक्षिप्त विवरण, जिसे अंग्रेजीमें 'एब्स्ट्रैक्ट' कहते हैं। यहाँ न तो पंजी है, न प्रपंजी; अतः किसके खातेमें कितना लेना है अथवा कितना देना है, यह समझमें नहीं आ सकता; और इन आँकड़ोंके जाननेकी आवश्यकता तो बहुत बार उत्पन्न होती ही रहती है। हिसाबका सारा काम तो तू पूरा कर ही लेना। जब तक वहाँ है, तब तक खतौनी[2] के अपने ज्ञानमें जितनी वृद्धिकी आवश्यकता हो, उतनी सब कर लेना।

इसी प्रकार संगीतका ज्ञान जितना बढ़ाना चाहता हो, बढ़ा लेना। चोरवाड़ तू जल्दी हो आना चाहता है, यह ठीक ही है।

१ और २. बुक-कीपिंग।

अमतुस्सलामके आँकड़े मिल गये हैं। तू ११ बजे सोता है। इसे मैं देर से सोना मानता हूँ। सबको १० बजे सो जानेकी आदत डालनी चाहिए। लेकिन वहाँ जैसी सबकी सुविधा हो, तुझे भी उसीके अनुसार व्यवहार करना चाहिए।

पुरुषोत्तमका स्वास्थ्य अच्छा है, यह मेरे लिए शुभ समाचार है।

बा बहुत करके परसों आयेगी। इस समय यहाँ घर भरा हुआ है। जमनालालजी का बँगला तैयार हो गया, इसलिए सबके ठीक-ठीक रहने-बसनेका सुभीता हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३७८. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२४ जून, १९३७

चि० ब्रजकृष्ण,

इसके साथ डेका का खत है। मैंने तुम्हें डेका से मिलने के बाद शीघ्र लिख दिया था। वह खत[1] तुमको मिला ही होगा। क्या निश्चय किया वह डेका को लिखा। मेरा अभिप्राय तो यह था कि डेका को मजदूर सेवाके लिये दिल चाहे तब बुला लेना। दूसरे तीसरे कार्योंके लिए उसको बुलाने से मजदूर सेवा का काम रह जाएगा। डेका खुद मानता है कि अगर मजदूर सेवा के बारे में उस को दिल्ही जाना है और वह इस बात को पसंद भी करता है तो उसको मजदूर संघ में कुछ न कुछ तालीम लेनी चाहिये ही। अब क्या करना सो तो तुम्हारे और डेका ने निश्चय करना है। ऐसे कुछ मैंने तुम्हें लिखा था।

तुम्हारी शारीरिक प्रकृति अच्छी होगी। नरेला आश्रम के बारे में तुम लिखनेवाले थे अब समय हो तब लिखना।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४४८) से।

१. देखिए पृ० २२२।

३७९. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
२५ जून, १९३७

चि० मीरा,

मुझे खुशी है कि तुम पहलेसे अच्छी हो। डॉ० धर्मवीरका पत्र साथमें है। उनकी रायमें वहाँ बाहर सोना यदि हानिकारक है तो बाहर सोनेके लिए तुम्हें जिद नहीं करनी चाहिए। उनके बताये अनुसार आचरण करना अच्छा होगा। जिगर, तिल्ली और शरीरकी ग्रंथियोंका इलाज होना चाहिए तथा उन्हें ठीक करना चाहिए। तुम भोजनमें क्या लेती हो? क्या तुम्हें अच्छे फल और साग-सब्जियाँ मिलते हैं? क्या तुम्हारा जुकाम ठीक हो गया है?

बा कल आ रही है। हमारा परिवार बढ़ रहा है।

गोविन्द[1] काकासाहबके पास चला गया है। वह कुछ ऐसा ही चाहता था।

सवेरेकी प्रार्थनाके ठीक पहले ही यह पत्र लिखा जा रहा है।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३७७) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८५३ से भी

३८०. पत्र : अमृत कौरको

२५ जून, १९३७

प्रिय बागी,

मैं सुल्तान अहमदके पत्र[2] को लौटा रहा हूँ। वह अच्छा है। मुझे नहीं लगता कि सम्मेलन[3] का नाम बदलना सम्भव है। मैंने बड़ी मुश्किलसे [हिन्दीकी] परिभाषाको ठीक करवाया। आवश्यकता तो भावना बदलनेकी है न कि नाम, जो कि बहुत पुराना

१. सेवाग्राम का एक बालक, जिसे गांधीजीकी सेवा के लिए मीराबहन प्रशिक्षण दे रही थीं।

२. सुल्तान अहमद ने गांधीजीके नाम अपने पत्र में लिखा था कि जब गांधीजी उत्तर भारत में बोली जानेवाली सामान्य भाषाका प्रचार करने का प्रयास कर रहे थे, उस समय मुसलमान और हिन्दू दोनों उस भाषा में अरबी और संस्कृत के कठिन शब्द तथा मुहावरे डालने की कोशिश कर रहे थे तथा इस तरह एक और साम्प्रदायिक समस्या खड़ी कर रहे थे।

३. हिन्दी साहित्य सम्मेलन।

है। मैं आशा करता हूँ कि तुम किसी ऐसी चीजका वायदा नही करोगी जो तुम्हे तथा सम्मेलनके अधिकारियोको परेशानीमें डाले। क्या तुमने सम्मेलनके अध्यक्षोका कोई अध्यक्षीय भाषण पढ़ा है? यदि तुम्हें समय मिले तो उन्हे अवश्य पढना।

आज इससे अधिक नही। यह पत्र बिलकुल अभी सवेरेकी प्रार्थनाके बाद पारनेरकरको वर्धा ले जानेके लिए लिखा है।

सस्नेह,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९१) से, सौजन्य. अमृत कौर। जी० एन० ६९४७ से भी

३८१. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

२५ जून, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

सरहदी नीतिपर तुम्हारा वक्तव्य अभी मिला। खानसाहबने और मैंने उसे पढ लिया है। वह मुझे बहुत पसन्द आया। मुझे नही लगता कि स्पेनवालो और अंग्रेजोकी बमबारी बिलकुल एक-सी है या नही। अंग्रेजो द्वारा की हुई हानिकी मात्रा कितनी है, यह कैसे मालूम हुआ? अंग्रेजोकी बमबारीका प्रकट कारण क्या बताया गया है? इस बातपर न तो हँसना और न क्रोध करना कि मै इन चीजोको उतनी अच्छी तरह नही जानता जितनी कि तुम जानते हो। अखबारोको जितना कम मै देखता हूँ, उससे मुझे बहुत कम ही जानकारी हो सकती है। मगर मेरे प्रश्नोका उत्तर देनेका कष्ट मत उठाना। तुम्हारे वक्तव्यपर होनेवाली प्रतिक्रियाओका मै ध्यान रखूंगा। शायद उनसे कुछ प्रकाश पड़े। और जो कमी रह जायेगी, उसे जब हम मिलेंगे, तुम पूरी कर ही दोगे। आशा है, मौलाना आयेंगे। लेकिन वह न आ सकें तो भी मै चाहूँगा कि तुम तो उस तारीखपर अवश्य पहुँच जाओ। मै चाहता हूँ कि हम लोग तीन दिन शान्तिपूर्वक व्यतीत करें।

आशा है, इन्दु अच्छी तरह होगी।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च.]

खानसाहब चाहते है कि तुम साथवाले पत्रको देख लो।

अंग्रेजीसे. गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य· नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

३८२. पत्र : प्रभावतीको

२५ जून, १९३७

चि० प्रभा,

तेरा पत्र अभी मिला। तू चिन्ता क्यों करती है? तू सेवा कर पाये, तो कृतार्थ हो गई समझ। देहका रहना-जाना अपने हाथमें कहाँ है? हर्पुबाबूसे मेरी ओरसे कहना, शरीरकी चिन्ता न करें, बल्कि रामका ध्यान करें। उसे जो करना होगा, वह करेगा। मुझे तू एक कार्ड भी लिखती रहे, तो काफी है।

बा ३० को आयेंगी। शान्ताबहन[1] जो खेड़ीमें थीं, यहाँ आई हैं। अभी यहीं रहेंगी। कुछ समय बाद विलायत जायेंगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५०३) से।

३८३. पत्र : रामेश्वरदास बिड़लाको

२५ जून, १९३७

भाई रामेश्वरदास,

तुमारा खत मिल गया था। रुपैये के बारे में भी वईराज कंपनी से पता मिल गया है। एक लाख तक तो ग्रामउद्योग संघ में जायेगा। निजी खर्च के लिये जो देते हो सो तो अलग है ही।

व्रजमोहन के मार्फत मैं कोई गोरे सेवकों के लिये कार्गो बोट में इंग्लैंडकी टीकट लेता था। अब तो वह नहीं है। कलकत्ता किसको लिखुं? अथवा तुम ही लिख कर पूछोगे कि किसी कार्गो बोट में एक इंग्रेजी बहन को भेज सकते हैं क्या?

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०३२ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. एक अंग्रेज महिला, जो मगनवाड़ी में ग्रामोद्योग संघके कार्यालय में काम करती थीं। देखिए अगले दो शीर्षक भी।

३८४. पत्र : शान्तिकुमार एन० मोरारजीको

२५ जून, १९३७

चि० शान्तिकुमार,

एक अंग्रेज - सेविकाको उसकी मांके पास इंग्लैण्ड भेजना है। क्या तुम्हारे ध्यानमें कोई मालवाहक जहाज अथवा साधारण बोट है, जिसमें उसे जल्दी भेजा जा सके। उसका भाडा क्या बैठेगा? घनश्यामदासने तो दो बहनोंको किसी मालवाहक जहाजमें मुफ्त भेजा था। वे तो यहाँ है नही। फिर भी मैंने रामेश्वरदासकी मार्फत पूछताछ[1] की है। लेकिन उन्हें शायद तत्काल सुभीता न हो अथवा बिलकुल न हो, इसलिए तुम्हें कष्ट दे रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७२६) से, सौजन्य : शान्तिकुमार एन० मोरारजी

३८५. पत्र : महादेव देसाईको

२५ जून, १९३७

चि० महादेव,

ठीक है। मैं अमतुस्सलामको देखने वहाँ नही आऊँगा। तुम रहोगे, यह काफी है। मुझे कोई डर नही है। मैं तो केवल अपने सन्तोषके लिए आनेका विचार करता था। परिणाम मुझे तुरन्त बताना।

बाबलों का पत्र सुन्दर है। उसे पत्र बादमें लिखूंगा। बचुको अमतुस्सलामके लिए रोक लेना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

और किसीकी जरूरत हो, तो क्या यहाँसे भेजूं? शान्तिकुमार और रामेश्वरके पत्रोंके लिफाफे वहाँ तैयार कर लेना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५२३) से।

१- देखिए पिछला शीर्षक।

३८६. पत्र : अमतुस्सलामको

२५ जून, १९३७

प्यारी बेटी अमतुल सलाम,[1]

तेरी चिट्ठी मिली। महादेव लिखते है कि मै आऊँगा तो डॉक्टर घबरा जायेंगे। इसलिए मै नही जाऊँगा। मुझे कोई चिन्ता नही है। तू बहादुर बनी रहना। ऑपरेशनके बाद जरूरत मालूम होगी तो तुझसे मिलने आ जाऊँगा। तू ही मुझे खबर देना। कान्तिका खत आज भेजा जा रहा है। उसे तू पढ लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८२) से।

३८७. पत्र : कमलनयन बजाजको

२५ जून, १९३७

चि० कमलनयन,

श्री कैलेनबैक मुझे परेशान कर रहे है कि तुम्हारे विवाहके अवसरपर वह तुम्हें कोई भेंट देंगे। वह सौसे अधिक रुपये खर्च करना चाहते है। उन्होंने तो २५ पौंड कहा था। मैंने साफ ना कर दी। उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या देना चाहिए। मैंने कहा, "पुस्तकें"। उन्होंने पूछा कि "कौन-सी पुस्तके?" मैं निश्चय न कर सका। तुम्ही बताओ, तुम्हें कौन-सी पुस्तकें अच्छी लगेंगी?

जवाब वापसी डाकसे भेजना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०५६) से।

1. इतना उर्दू लिपि में है।

३८८. दुर्भाग्यपूर्ण परन्तु अनिवार्य

जमशेदपुरके स्थानीय हरिजन सेवक संघके मन्त्रीने अन्य लोगोंके साथ-साथ एक महिलासे भी चन्देकी प्रार्थना की थी। उन्हें उसका निम्नलिखित उत्तर मिला:

> कुछ समय पहले आपका ५ फरवरीका पत्र मिला था जिसमें चन्देके लिए अपील थी।
>
> आपका संघ जमशेदपुरमें अच्छा कार्य कर रहा है, इसकी मैं सराहना करती हूँ। परन्तु, सिद्धान्ततः मेरा मन किसी ऐसी संस्थाको चन्दा देनेके लिए राजी नहीं हो पाता जो अपने नामके साथ 'हरिजन' लगाती है, क्योंकि उस शब्दका इस देशमें एक विशेष अर्थ लगाया जाता है।
>
> मुझे विश्वास है कि जब तक समाजके किसी भी अंगका वर्गीकरण ऐसे नामसे किया जायेगा जिसमें हीनताकी गंध हो, तब तक समाजके उस अंशको कभी ऊपर नहीं उठाया जा सकेगा। मैं चाहती हूँ कि 'हरिजन', 'दलित वर्ग' और इसी अर्थके अन्य सभी नाम हमारे शब्द-भण्डारसे निकाल दिये जायें। इनका प्रयोग उन लोगोंको अलग दिखानेके लिए हो रहा है जिन्हें अपने ही समाजके अन्य बन्धुओंसे कभी भी पृथक् नहीं गिना जाना चाहिए।

इस बहनने जो आपत्ति उठाई है, वह नई नहीं है। 'हरिजन' नाम अपनानेमें बात हमारी पसन्दगीकी नहीं, मजबूरीकी थी। जब तक पीड़ित वर्ग मौजूद हैं, उनके लिए कोई नाम आवश्यक होगा। इसी तरह दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंको आम तौरपर 'कुली' या 'सामी' कहकर बाकी लोगोंसे अलग दिखाया जाता था। उन्होंने उसका विरोध किया। इसका थोड़ा-बहुत प्रभाव भी पड़ा। यो विरोध एक अलग नामसे नहीं था; बल्कि ऐसे नामसे था जिसमें तिरस्कारका भाव निहित था और जो हीनता व्यक्त करता था। इसलिए अन्तमें उनका वर्गीकरण भारतीय नामसे किया जाने लगा, जैसाकि शुरूसे ही होना चाहिए था। इसी तरह अस्पृश्योंको विविध नामोंसे पुकारा जाता था जो तिरस्कार और हीनता व्यक्त करते थे। सरकारी अधिकारियोंने 'दलित', 'पिछड़े'-जैसे नाम खोजे हैं और अब उन्हें 'अनुसूचित वर्ग' कहा जाता है। सुधारकोंके सामने 'हरिजन' नामका सुझाव दलित वर्गोंके ही किसी आदमीने रखा था। वह नाम हरिजन सेवक संघने स्वीकार कर लिया, क्योंकि उसके अर्थमें तिरस्कारका भाव बिलकुल नहीं है और वह इस अर्थमें उपयुक्त भी है कि जो मनुष्य द्वारा तिरस्कृत हैं, वे ईश्वरके प्रिय हैं, और हरिजनका अर्थ भी यही है। इसलिए, जो काम सम्भव है और किया भी जा रहा है, वह है हीनताके नामो-निशानको खत्म करनेका काम। लेकिन उन्हें एक विशेष नामसे तबतक पुकारना ही पड़ेगा जब तक कि हीनता

और अस्पृश्यताके अभिशापसे मुक्ति पानेवाले लोगोंकी अन्य हिन्दुओंसे अलग पहचान करनेकी जरूरत बनी रहेगी, भले ही सवर्ण हिन्दुओंके मन तकसे उन्हें हीन माननेकी बात बिलकुल निकल भी चुकी हो। इसलिए मुझे आशा है कि आपत्ति करनेवाली यह बहन दलित वर्गके लिए एक अलग नामकी अनिवार्यताको स्वीकार करेगी, और साथ ही इस तथ्यको भी समझेगी कि संघने जो नाम चुना है, उसमें तिरस्कारका जरा भी भाव नहीं है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि वे चन्दा देकर एक ऐसे ध्येय की, जिससे अधिक उपयुक्त ध्येय और कोई नहीं हो सकता, सक्रिय रूपसे सहायता करेंगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-६-१९३७

३८९. क्या शपथें कई प्रकारकी हैं?

'धार्मिक शपथ और गैर-धार्मिक शपथ' वाला मेरा लेख[1] पढ़कर एक क्वेकर मित्रने अपने एक दोस्तको एक पत्र लिखा था। यह सज्जन मेरे भी मित्र हैं, और उन्होंने वह पत्र मेरे पास भेज दिया है। पत्र[2] मैं नीचे देता हूँ:

> ऐसा प्रतीत होता है कि इस लेखमें गांधीजी दो अलग-अलग प्रश्नोंपर विचार कर रहे हैं। उनमें से एकका जो जवाब उन्होंने दिया है, उससे तो मैं पूरी तरह सहमत हूँ। किन्तु मुझे अदबके साथ कहना पड़ता है कि इसी लेखके दूसरे हिस्सेसे मैं पूरी तरह असहमत हूँ।... मैं उनसे इस बातपर पूरी तरह सहमत हूँ कि किसी कांग्रेसीको शपथके औचित्यकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए।
>
> २. पर महात्माजी शपथोंमें धार्मिक और गैर-धार्मिक का जो सूक्ष्म भेद करते हैं वह बात मेरी समझमें नहीं आती। जो हो, देखिए, हम सीधे-सादे क्वेकर लोग तो इस तरह विचार करते हैं: धर्मके मानी हैं मनुष्यकी ईश्वर-सम्बन्धी खोज और समस्त जीवनको ईश्वरमय कर देना। सत्य-कथन करने अथवा सत्य-आचरण करनेकी प्रतिज्ञा मनुष्य द्वारा अपने अहं को ब्रह्मके साथ जोड़ने का प्रयत्न है। क्योंकि सत्य वस्तुतः ईश्वरके स्वरूपका एक अंग है। इसलिए ऐसे तमाम वचन धार्मिक क्रियाएँ होंगी। क्वेकर लोगोंको शपथोंसे इसलिए आपत्ति है कि वे धार्मिक मनुष्य होनेका दावा करते हैं, अर्थात् ऐसे मनुष्य जो कि ईश्वरसे डरते हैं और ईश्वरकी शपथ लिये बिना ही सत्यका आचरण करना चाहते हैं। आप तो जानते ही हैं कि उन्होंने कितने कठिन प्रयास और कुर्बानीके बाद शपथके स्थानपर अभिवचन देनेका हक हासिल किया है। किन्तु हमारे लिए तो

१. देखिए पृ० २४३-५।
२. पत्रके कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

अभिवचन अथवा शपथ दोनों धार्मिक क्रियाएँ हैं। हाँ, अगर धर्मको कोई ऐसी वस्तु समझता हो जो जीवनके अधिकांश हिस्सेसे कोई ताल्लुक नहीं रखती है, तो बात दूसरी है। मैं नहीं मानता कि एक धार्मिक मनुष्यके लिए अदालत या पार्लियामेंट धर्मसे कोई बाहरी वस्तु है। . . . हम क्वेकर लोगोंको तो इसमें शंकाके लिए कोई स्थान ही नहीं कि एक धार्मिक मनुष्यके लिए तो सारा जीवन धर्ममय है और जीवनसे अलग किये गये धर्मसे हमें कोई खास मतलब नहीं है। . . .

दो हिन्दुस्तानी अखबारोंकी कतरनें भी मेरे पास भेजी गई हैं, जिनमें मेरे उस लेखपर टीका की गई है।

इस पत्रको और उन कतरनोंको पढ़नेके बाद मैं देखता हूँ कि खास तौरपर ऐसे गैर-मामूली विषयोंपर जब मैं कुछ लिखता हूँ तो अपने दिलके भावोंको पूरी तरह समझाना मेरे लिए बहुत मुश्किल होता है। ऐसी स्थितिमें मेरा काम यही रह जाता है कि मैं अपने हृदयके भावोंको समझानेकी कोशिश करूँ, और कोई बात बगैर समझाये न छोड़ूँ।

मुझे तो अपनी दलीलोंमें कोई ऐसी सूक्ष्म बात नजर नहीं आती। बल्कि मुझे तो अदालत या विधान-सभामें ली जानेवाली शपथ या अभिवचनमें और परमात्माके नामपर ली जानेवाली उस शपथमें, जिसे कि मनुष्य प्राय रोज सुबह उठते ही और शामको सोनेके पहले लेता है, साफ-साफ भेद दिखाई देता है। इनके तो कार्य और क्षेत्र दोनों भिन्न हैं।

मेरा तो खयाल है कि इन क्वेकर मित्रका सारा पक्ष उसी क्षण गिर जाता है जब वे मेरे वैधानिक या कानूनी शपथके अर्थसे सहमत हो जाते हैं। उनकी आपत्ति तो सिर्फ इन शपथोंके नामपर है। अगर मेरा नामकरण सदोष है तो मुझे दूसरा कोई नाम स्वीकार करनेमें कोई आपत्ति नहीं होगी, बशर्ते कि वह नाम इस भेदको ठीक तरहसे प्रकट करता हो और जिसके गर्भित अर्थको यह मित्र भी स्वीकार करते हों।

इस कानूनी शपथका शाब्दिक अर्थ उस अर्थसे पूरी तरह भिन्न है, जो कि उसे कानून और परम्परासे प्राप्त हो गया है। एक मामूली आदमीको, जो कानून और परम्पराको नहीं जानता, वही आपत्ति होगी जो कि श्री शिवप्रसाद गुप्तने उठाई है। अपने सन्दर्भ और इतिहाससे अलग करके एक वाक्यका केवल व्याकरणके अनुसार अथवा शाब्दिक अर्थ यदि आप लगायेंगे तो वह अकसर गलत और कभी-कभी तो निश्चित रूपसे हानिकारक भी होगा। मैं तो कानूनी शपथका पूर्वापर सम्बन्ध जानता था। इसीलिए मैंने यह सुझाया कि पूर्ण स्वतन्त्रताके अपने ध्येय और इस विधानको तोड़नेके निश्चयको लेकर भी एक कांग्रेसी कानूनकी मंशाके अनुसार वह शपथ ले सकता है जिसे कि संक्षेपमें मैं कानूनी शपथ कहता आया हूँ, और इसीलिए मुझे यह कहनेमें भी कोई झिझक नहीं हुई कि इसमें सत्यका भंग नहीं किया जायेगा और खींचातानी नहीं होगी।

मैं फिर याद दिलाता हूँ कि यहाँ भी मेरे कथनका मतलब पूर्वापर सम्बन्ध और ऐतिहासिक दृष्टिको ध्यानमें रखकर ही लगाया जाये। विधान-सभामें जानेवाला एक कांग्रेसी कानूनकी मर्यादाके अन्दर रहते हुए इस तरह काम करेगा कि जिससे वह पूर्ण स्वराज्य प्राप्त कर सके, अर्थात् कानूनकी मर्यादामें रहते हुए ही वह इस विधानको तोड़नेका भी यत्न करेगा। क्योंकि अगर कांग्रेसी इस कानूनके अन्दर रहते हुए विधान-सुधारके लिए काम कर सकता है, और उसमें कोई अनौचित्य नहीं, तो वह उसी तरह इस कानूनको रद कराने अर्थात् तोड़नेका भी प्रयत्न कर सकता है, और इसमें भी कोई अनौचित्य नहीं होगा। यही नहीं, बल्कि कानूनमें तो वैधानिक जिच (डेडलॉक) के लिए भी स्थान है। प्रतिपक्षी भले ही चिढ़ाते रहें कि आखिर अब तो विधानको कबूल करना ही पड़ा, पर वह घबरायेगा नहीं और न शर्मसे अपना सिर नीचा करेगा। जब तक कि वह अपने दिलको जानता है, कोई बात छिपाकर नहीं रखता और तमाम व्यवहारोंमें बिलकुल सच्चा है, वह किसीकी परवाह नहीं करेगा और न उसे करनी चाहिए।'

अलबत्ता, क्वेकर मित्रके इस कथनसे मैं जरूर सहमत हूँ कि एक धार्मिक और आध्यात्मिक वृत्तिवाले मनुष्यके सारे विचार, शब्द और क्रियाएँ धर्म अथवा यो कहें कि धर्म-वृत्तिसे ही प्रेरित होती हैं।

पर यह कहनेके बाद भी मैं अपने पूर्वकथनपर दृढ़ हूँ कि जीवनमें उन असंख्य प्रसंगोंपर तो हमें अपने कार्योंमें सामाजिक, राजनैतिक, व्यापारिक, धार्मिक आदि भेद करने ही पड़ेंगे। और ये भेद तो असंख्य हो सकते हैं। मगर ईश्वरको ढूंढनेवाला तो अपनी धार्मिक भावना और आध्यात्मिक वृत्तिसे ही हर जगह काम लेगा — खेलकूदमें भी, अगर उसके पास इनके लिए समय हो तो।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-६-१९३७

३९०. पत्र : अमृत कौरको

२६ जून, १९३७

मैं तुम्हें एक बातके बारेमें लिखना भूल गया। तुमने देवदासके तीसरे बच्चेका जिक्र किया था। मैं तुम्हारी इस बातसे सहमत हूँ कि उसे अब यह रोक देना चाहिए। मुझे तो लिखना नहीं चाहिए, पर तुम लिख सकती हो, और शायद तुम्हें लिखना भी चाहिए। निस्सन्देह वह यह समझता है। पता नहीं अधिक दोष किसका है। वे एक-दूसरेको बेहद प्रेम करते हैं। और प्रेम अपनेको इस कष्टकारक रूपमें व्यक्त करता है। मेरा खयाल है कि वे अपनेको रोक नहीं पाते। मैं जानता हूँ कि शारीरिक प्रेमको छूट मिल जाये, तो आत्म-नियंत्रण रखनेके लिए कितनी कोशिश करनी पड़ती है। कर्तव्यने हमें लम्बे-लम्बे समय तक जुदा रखा। उससे मुझे सोचने और अपने-

आपको अनुशासित करनेका समय मिला। देवदासके जन्मके बाद मैंने अपने भीतरके पशुपर बहुत हदतक काबू पा लिया। तीव्र और बहुत कड़ी सार्वजनिक गतिविधिने मुझपर एक ऐसा भार डाल दिया, जिसे मैं परिवारकी वृद्धि करनेके साथ-साथ वहन ही नहीं कर सकता था। इस प्रकार प्रकृतिने मेरी मदद की। और मेरा सबसे बड़ा सौभाग्य यह रहा कि बा एक ऐसी सहधर्मिणि निकली जिसने, जहाँ तक मुझे याद है, कभी लोभाकृष्ट नही किया। मौजूदा पीढीके साथ यह बात नही है। मेरी पीढीकी स्थिति बेहतर थी या नही, सो मैं नही जानता। बा-जैसी स्त्रियाँ शायद अपवाद हैं। इस तरह तुम देख सकती हो कि देवदासके प्रति मुझमें अपार उदारता है। फिर भी मेरी बडी इच्छा है कि लक्ष्मीपर जो जबरदस्त भार है, वह हटाया जा सके। देवदास और लक्ष्मी तो शायद गर्भ-निरोधकोंके उपयोगको प्राय उचित ठहराना चाहते हैं। परन्तु फिर भी मैं यह जानता हूँ कि इनके कठिन उदाहरणके आधारपर यह निष्कर्ष निकालना घातक होगा। यदि वे अपने ऊपर नियन्त्रण नही रख सकते तो लक्ष्मीको कष्ट भोगना ही चाहिए। यदि तुममें देवदासको पत्र लिखने लायक आत्मविश्वास हो, तो अब तुम्हें सारा आवश्यक आधार तो मैंने दे दिया है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

३९१. पत्र : सी० ए० तुलपुलेको

सेगाँव (वर्धा)
२६ जून, १९३७

प्रिय तुलपुले,

जो-कुछ आपने किया है, वह मुझे लिख भेजना बिलकुल ठीक ही होगा। अन्य मित्र भी मुझे लिख रहे हैं, और इस तरहके पत्रोंसे मुझे लोकमतका अन्दाज लगानेमें सहायता मिलेगी। क्योंकि मेरे लिए सैद्धान्तिक राय रखना एक बात है और उसे व्यावहारिक अनुभवपर आधारित करना दूसरी बात।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री सी० ए० तुलपुले, एम० एल० ए०
तिलक रोड
पूना

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० २८९७) से; सौजन्य : सी० ए० तुलपुले

३९२. पत्र : टी० एस० सुब्रह्मण्यनको

२६ जून, १९३७

प्रिय सुब्रह्मण्यन,

अगर तुम्हारी अन्तरात्माने वैसा कहा है तब फिर तुम जिस निष्कर्षपर पहुँचे हो, वह असंदिग्ध रूपसे सही है, और चाहे कैसी ही आर्थिक या दूसरे प्रकारकी कठिनाइयाँ तुम्हें उठानी पड़ें, तुम फिर भी दिनोंदिन ज्यादा शक्तिका अनुभव करोगे। मुझे आशा है कि तुम खादी तथा अन्य ग्रामोद्योगों, मद्य-निषेध, हरिजन-सेवा, साम्प्रदायिक एकता आदिके कार्योंमें आकण्ठ डूब जाओगे। ये कार्य ऐसे कार्य हैं जो अहिंसाके चिन्तन-मननसे प्रेरित हैं और अहिंसाके निश्चित प्रतीक हैं। इन्हें वैज्ञानिककी भावनासे चलाना चाहिए। ये कार्य जब उक्त भावनासे किये जाते हैं तब उनमें हमें अपनी सारी शक्ति लगानी होती है। उसमें हमें गहरा सन्तोष प्राप्त होता है, और हमारे अन्दर अच्छे-से-अच्छे जो गुण हैं, वे उभर कर सामने आते हैं।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्री टी० एस० सुब्रह्मण्यन
प्लीडर
बेलारी

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

३९३. पत्र : अमतुस्सलामको

२६ जून, १९३७

प्यारी बेटी अमतुल सलाम,[1]

रात अच्छी बीती होगी। मैं यहाँ बैठा हूँ, लेकिन मन तेरे पास है। तुझे लिखनेका श्रम मत करना। चाहे तो जबानी कहला भेजना।

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८३) से।

१. साधन-सूत्रमें सम्बोधन उर्दू लिपिमें है।

३९४. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

२६ जून, १९३७

चि० काका,

यह पत्र पढो और मेरा मार्गदर्शन करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७६९४) से।

३९५. पत्र : छगनलाल जोशीको

२६ जून, १९३७

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने रामजीभाईको लिखा है। जो तुम कह रहे हो, वह यदि सच हो, तो दुःखकी बात है। किन्तु तुमने उसे लिखे अपने पत्रमें जो उद्‌गार व्यक्त किये हैं, वे यदि केवल शिष्टाचारवश हैं, तो यह सत्याग्रहीको शोभा नही देते। सत्याग्रहीकी भाषामें शिष्टता तो होनी ही चाहिए, किन्तु वह सत्यसे भरी हुई भी होनी चाहिए। तुम लिखते हो, "तुम्हारा यह नया कदम देखकर मुझ-जैसे काठियावाड़के नये खादी-कार्यकर्ताओके पाँव ढीले पड जाते है। यदि अभी भी सोच-विचार करके अपनी राय बदल सको, तो बदल करके मुझ-जैसे कार्यकर्ताओको आश्वस्त करना।" तुम नये खादी-कार्यकर्ता कहे ही नही जा सकते। और तुम्हारे-जैसे खादी-कार्यकर्ताओको तो साथियोके गिरनेसे ढीला नही पडना चाहिए, वरन् अधिक दृढ होना चाहिए, अपने-आपको और अधिक समर्पित करना चाहिए और अधिक कार्यदक्ष हो जाना चाहिए। किन्तु यदि रामजीभाईके खादीका काम छोड़ देनेसे तुम सचमुच ढीले पडे हो, तो तुमने शुद्ध सत्य कहा है। और यदि ऐसा हो, तो तुम स्वयं कहाँ हो, यह तुम्हारे और मेरे लिए विचार करनेका प्रश्न हो जाता है। क्योकि खादी आदिकी अपनी प्रवृत्तियोंके ऊपर सकट तो अनेक आते ही रहेंगे, अत. यदि हमारी श्रद्धा हमारे अन्तरसे उद्‌भूत न हो बल्कि दूसरोपर निर्भर हो, तब तो हमारी एक-एक प्रवृत्ति छिन्न-भिन्न हो जायेगी। कुछ व्यक्ति तो ऐसे होने चाहिए, जिनकी

श्रद्धा हिमालयसे भी अधिक अडिग हो, और आमरण न डिगे। रामजीभाईको तुमने कितना अच्छा पत्र लिखा, और उसपर मैंने यह कैसा व्याख्यान दे डाला !

बापू

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

३९६. एक महान प्रयोग

अहमदाबादके मजदूर-संघने हाल ही में एक महान प्रयोग शुरू किया है, जो सभी मजदूर संगठनोंके लिए बहुत दिलचस्प और महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है। उस प्रयोग का सार यह है कि संघके सदस्योंको मिलोंके अपने मुख्य धन्धेके अलावा किसी सहायक धन्धेकी तालीम दी जाये, जिससे तालाबन्दी, हड़ताल या और किसी कारणसे पैदा हुई बेकारीकी हालतमें उन्हें भूखो मरनेकी नौबत न आये और उनके पास जीविका का कोई-न-कोई साधन सदा बना रहे। मिल-मजदूरोंके जीवनमें सदा उतार-चढ़ाव आते ही रहते हैं। खर्चमें काट-कसर करके बचत करते रहना बेशक इसका एक उपाय है। परन्तु इस प्रकार की गई बचतसे बहुत मदद नहीं मिलती, क्योंकि हमारे मिल-मजदूरोंमें से अधिकांशको मुश्किलसे खाने और रहने तककी पूरी सुविधा नहीं मिल पाती और अगर कोई कुछ बचा भी ले तो भी बेकार बैठकर बचतके पैसोंसे उसका काम कैसे चल सकता है? उद्योगी मनुष्यको तो आलस्य मानो काटता है। सच्चा आत्मविश्वास पैदा करनेके लिए यह आवश्यक है कि व्यक्तिके पास आजीविकाके एकाधिक साधन हों।

मिल-मजदूरोंके लिए सहायक धन्धेकी कल्पना मेरे मनमें पहले-पहल १९१८ की अहमदाबादके मिल-मजदूरोंकी तेईस दिनकी ऐतिहासिक हड़तालके दिनोंमें आई थी।[1] मुझे उस समय यह बात सूझी कि यदि हड़तालको सफल होना है तो मिल-मजदूरो को चन्दे आदिके बदले अपनी मेहनतके बलपर टिक सकना चाहिए। उस समय कोई धन्धा तो दृष्टिमें था नहीं। सत्याग्रहाश्रममें मकान आदि बन रहे थे; उससे बहुतोंको काम दिया गया। कुछको नगरपालिकामें विभिन्न कामोंपर भी लगाया गया। उसी समय मैंने कहा था कि मिल-मजदूरोंको कोई सहायक धन्धा सीख रखना चाहिए। परन्तु दूसरी हड़तालके शुरू होने तक मेरा वह सुझाव खटाईमें ही पड़ा रहा। फिर दूसरी हड़तालके समय हाथ-बुनाईका शिक्षण शुरू किया गया। परन्तु दूसरी हड़ताल खत्म होनेके साथ ही लोगोंने इसे फिर भुला दिया।

अब मजदूर-संघकी ओरसे इस दिशामें संगठित और व्यवस्थित प्रयत्न किया जा रहा है। मिल-मजदूरोंको ऐसे धन्धे चुनना सिखाया जा रहा है, जिससे उन्हें घर पर फुरसतके समय कुछ अतिरिक्त आमदनीके लिए बेकारीके दिनोंमें आजीविका मिल

१. देखिए खण्ड १४।

सके। ये धन्धे कपास-सम्बन्धी सारी क्रियाएँ — ओटाई, सफाई, धुनाई और कताई, बुनाई तथा सिलाई, कागज और साबुनसाजी और कम्पोजिंग वगैरह है।

यदि मजदूर स्वाधीन रहना चाहते हो, स्वाभिमानकी रक्षा करना चाहते हो और आजीविकाके बारेमें निर्भय रहना चाहते हों तो उन्हे आजीविकाके अनेक साधन अपनाने चाहिए। मेरी रायमें विविध धन्धोको कर सकनेकी शक्ति मजदूर-वर्गके लिए वैसी ही वस्तु है, जैसी पूंजीपतिके लिए उसकी पूंजी। जैसे पूंजीपति अपनी पूंजी को मजदूरके सहयोगके बिना सफल नही बना सकता, वैसे ही मजदूर अपने श्रमको पूंजीके सहयोगके बिना सफल नही बना सकता। यदि मजदूर और पूंजीपति दोनोमें बुद्धि हो और दोनोको सामान्यतया एक-दूसरेकी शक्तिके सहयोगका भरोसा रहे, तो वे एक-दूसरेके प्रति सम्मानपूर्ण व्यवहारकी आवश्यकताको समझने लगें। जिस तरह पूंजीपति सगठित हो सकते है, उसी प्रकार मजदूर भी अपने-आपको सगठित कर सकते है। मजदूर अपनेको असहाय महसूस करता है, क्योंकि उसकी बुद्धिका विकास नही हो पाया है और वह सगठित भी नही है। उन्हें अपनी शरीर-रूपी पूंजीकी कीमतका अहसास नही हुआ है। यदि उनकी बुद्धिका विकास हो जाये, वे संगठित हो जायें और अपनी शक्तिका मूल्य समझ जायें तो मजदूर भी पूंजीपतियोकी ही तरह निश्चिन्त होकर रहने लगें।

पैसा जगतमें बहुत-कुछ कर सकता है किन्तु मजदूरका यह मानना घोर अन्धविश्वास है कि वह पैसेवालोका दास है। यह अज्ञानका लक्षण है। अहमदाबादका मजदूर-सघ इस थोथे अन्धविश्वासको मिटानेका प्रयत्न कर रहा है। इसीलिए इस प्रयत्नकी अवधिमें यह बहुत आवश्यक है कि मजदूर अनेक सहायक धन्धे सीख ले। अहमदाबादके मजदूर महाजन सघने जो प्रयत्न प्रारम्भ किया है, उसे लगातार लगन के साथ जारी रखा जाना चाहिए। मै आशा करता हूँ कि मजदूर इस शुभारम्भसे संयुक्त बने रहेगे। यदि वे इस दिशामें जुटे रहें तो इसके द्वारा उनकी बुद्धिका भी अनायास विकास होगा। किन्तु इसका विशेष आधार रहेगा शिक्षकोंके ऊपर।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २७-६-१९३७

३९७. टिप्पणी

तो क्या मेरी भूल नहीं थी?

"मेरी भूल"[1] वाली टिप्पणी पढ़कर अनेक पाठकोको दु:ख हुआ मालूम होता है। 'हरिजनबन्धु' पढ़नेवाले तो गुजराती ही होते हैं। लेकिन गुजराती सभी प्रान्तोमें फैले हुए है, इसलिए उनमें जो सतर्क होते है, उन्हे अपने उन प्रान्तोके रस्म-रिवाजो का पता रहता है। ऐसे लोगोके पत्र मेरे पास ठेठ मलाबारसे लेकर तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश और कर्णाटकसे आये है। उन सबमें लिखा है कि मेरा अनुमान ठीक था। इन सभी प्रदेशोमें उच्च और नीच कहे जानेवाले हिन्दुओमें मामा-भानजीके बीच विवाह-सम्बन्ध होता है, और इतना ही नही, बल्कि अधिकतर यह सम्बन्ध स्तुत्य भी समझा

१. देखिए पृ० ३७१।

जाता है। एक लेखकने तो इसपर एक वकीलकी राय माँगी थी। वकीलने लिखा है कि मामा-भानजीके विवाह-सम्बन्धकी प्रथा दक्षिणके सभी प्रान्तोंमें है, और प्रथा ही नहीं बल्कि कानूनमें भी उसके लिए साफ-साफ इजाजत है।

इस तरह कुछ हद तक प्रो० ठाकोर का किया हुआ संशोधन यद्यपि सही साबित नहीं होता, तो भी जिस रीतिसे मैंने वह अनुमान लगाया था, वह रीति सदोष तो थी ही। मेरा निकाला हुआ अनुमान हिन्दू-समाजके लिए सही ठहरता है, इसे एक संयोग ही समझना चाहिए। मामा-फूफीके लड़के-लड़कीके बीच विवाह-सम्बन्धकी छूट है, इसमें से मामा-भानजीके सम्बन्धका अनुमान निकालनेका मुझे कोई अधिकार नहीं था। इसलिए प्रो० ठाकोरने तो मुझपर उपकार ही किया है।

जिन सज्जनोंने मेरी प्रतिष्ठाका खयाल रखकर मुझे पत्र लिखे हैं, उनके प्रेमको मैं जान सकता हूँ। उन्होंने मुझे जो ठीक-ठीक खबर दी उसके लिए उन्हें मैं धन्यवाद देता हूँ, और जो जिस प्रान्तमें जाकर बस गये हैं, उन्हें वहाँके रीति-रिवाजोंकी जानकारी रखनेके लिए भी मैं धन्यवाद देता हूँ।

मामा-भानजीका विवाह-सम्बन्ध दक्षिणमें ग्राह्य समझा जाता है, इससे किसीको यह सारांश तो नहीं निकालना चाहिए कि जहाँ ऐसे विवाह त्याज्य माने जाते हैं वहाँ उनको ग्राह्य माननेका प्रयत्न आदरणीय हो जायेगा। विवाहका क्षेत्र इतना बड़ा है कि अपने सगोंके बीच विवाह-सम्बन्धोंके बारेमें जहाँ रुकावटें है वहाँ उन्हें तोड़नेकी शायद ही जरूरत हो। जिस सुधारकी हिन्दू-समाजको जरूरत है, वह तो जात-पाँतके बन्धन तोड़नेकी है। ये प्रतिबन्ध निश्चय ही समाज-विकासके लिए घातक हैं। इसलिए सुधार तो भिन्न-भिन्न प्रान्तोंमें और भिन्न-भिन्न जातियोंके बीच विवाह-सम्बन्धकी छूट देने और लेनेके विषयमें करना है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २७-६-१९३७

३९८. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
२७ जून, १९३७

चि० मीरा,

वह तो केवल एक सँकरा नाला है, जो वर्षाके पानीको इकट्ठा करता है, और फिर बहा देता है। इसलिए वह जितनी जल्दी खाली हो जाता है उतनी ही जल्दी भर भी जाता है। मुश्किलसे आधा इंच पानी गिरा होगा, और वह भी जोरसे नहीं, परन्तु वह इस नालेको भरनेके लिए काफी था। इस नालेको तो तुम जानती ही हो। सेगाँवके चारों ओर कमरबंदकी तरह चला गया है। लोगोंका खयाल था कि उसपर एक पुल बना दिया जाये। बनाया भी गया किन्तु पानीके बहावने पुलके शुरू और आखिरमें मिट्टीका जो काम किया गया था, उसे नष्ट कर दिया। यदि पानी

पड़ना जारी रहता तो खण्डू और प्रह्लादके मकान भी नष्ट हो जाते। इसलिए काफी पैसा खर्च करके उस नालेको पहले जैसा ही बना दिया गया। लेकिन पानी तो कोई खास बरसा नही जिसके बारेमें कुछ कहा जा सके, जबकि बम्बईमें पहले ही तीस इंच पानी बरस चुका है।

बा कल वापस आ रही है। महिलाओं द्वारा सूत कातना फिर शुरू हो गया। गोविन्द अपनी इच्छानुसार काकासाहबके पास गया है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३८८)से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८५४ से भी

३९९. पत्र : नारणदास गांधीको

२७ जून, १९३७

चि० नारणदास,

तुमने किसी पत्रके बारेमें लिखा है। मुझे तो याद नही आता। उसमें कोई बात पूछी हो, तो फिरसे लिखकर पूछना।

कहा जा सकता है कि अब तुम्हें कन्हैयाका ठीक-ठीक अनुभव हो गया। उस-परसे तुमने कोई राय कायम की हो, तो लिखो। उसकी मानसिक स्थिति कैसी है? उसके बारेमें अगर वह सब लिख सको जिससे मुझे मदद मिले, तो लिखना।

कमलाके बारेमें तुम्हें जो अनुभव हुआ हो, वह भी ब्योरेवार बताना।

तुम्हारा खादी-सम्बन्धी पत्र उत्तम है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से। सी० डब्ल्यू० ८५२९ से भी; सौजन्य . नारणदास गांधी

४००. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

सेगाँव, वर्धा
२७ जून, १९३७

चि० मनुड़ी,

तेरा पत्र मिला। तुझे पढ़ने और सितारका अभ्यास करनेके लिए समय निकालना चाहिए। बा और कानो कल आ रहे हैं। खान साहब और मेहरताज बा की कोठरीका उपयोग कर रहे थे। कुसुम देसाई भी आ रही है। अब घर भर जायेगा। वहाँ तो बरसात हो गई, यहाँ नहीं हो रही है।

तुम सबको

बापूके आशीर्वाद

श्री मनुबहन
मार्फत वोरा हरिदास वखतचन्द
हाईस्कूलके पीछे
राजकोट सी० एस०, काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६६९) से; सौजन्य : मनुबहन सु० मशरूवाला

४०१. पत्र : महादेव देसाईको

२७ जून, १९३७

चि० महादेव,

यहाँ अब फलोंका अकाल शुरू हो गया है। आज मोहनलालको कुछ फल भेजनेको लिखा है। खजूर खत्म हो गये हैं। खजूरकी पेटियाँ आती रहती हैं न? खान साहबको क्या दूँ? शहदके लिए लिख दिया है या नहीं? न लिखा हो तो तुरन्त लिखना और तुरन्त भेजनेके लिए कहना। कालेश्वर रावको लिखा या नहीं? वहाँसे चीकू और मीठे व खट्टे नीबू मँगाये थे।

हाँ, बा को लेनेके लिए साढ़े चार बजे कोई जाये। उस गाड़ीसे नहीं आई, तो दूसरी गाड़ीसे आयेगी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इस पत्रके साथ बालकृष्णका टेम्परेचर-चार्ट है। इसे अमतुस्सलामको दिखाना, और जो भी दवा वह दे, भेजना। उसके पास आजकी दवा ही बची है। चार्ट भी वापस भेजना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५२४) से।

४०२. पत्र : मिर्जा इस्माइलको

वर्धागंज
२८ जून, १९३७

प्रिय सर मिर्जा,

मैं आपके पत्र[1] की प्रशंसा करता हूँ। कार्य-समितिके निर्णयके सम्बन्धमें मुझे कोई पूर्वानुमान नहीं लगाना चाहिए। मैं जानता हूँ कि वह पूरी देशभक्तिकी भावना से काम लेगी। उन दिनोंमें भगवानसे मार्गदर्शन मिले, इसके लिए मैं पूरी तन्मयतासे प्रार्थना कर रहा हूँ।

आपको, लेडी मिर्जा, हुमायूँ तथा परिवारके अन्य सदस्योंको हार्दिक अभिवादन।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८०) से। अंग्रेजीकी प्रति : जी० ए० नटेसन पेपर्स से भी, सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. पत्रमें, जिसपर २६ जूनकी तारीख थी, लिखा था : "...वाइसरायने ऐसी सद्भावनापूर्वक कांग्रेसको आमन्त्रित किया है कि इस आमन्त्रणको अस्वीकार करके कांग्रेस देशका और स्वयं अपना बड़ा अहित करेगी। पदभार स्वीकार करके अर्थात् प्रशासन सँभालकर ही कांग्रेस अपने उद्देश्यकी पूर्ति जल्दी और सन्तोषप्रद रूपसे कर सकती है . . .।"

४०३. पत्र : महादेव देसाईको

२८ जून, १९३७

चि० महादेव,

कल तो कई लोग यहाँ मिलने आये थे। वे वर्धाके बाजारसे ११२ आम लाये थे। आम बहुत अच्छे थे। डेढ़ रुपयेके १२०। वे ११२ आम दे गये। फिर छोटेलाल कुछ ले आये। आज अमरूद और सेब आ गये हैं, इसलिए अब कुछ दिन तो काम चलेगा।

जानबा[1] के साथ दो दर्जन खट्टे नीबू भेजना।

बा आज वहीं रह जाना चाहे, तो रह जाये, लेकिन अभी आकाश खुला है। इस बीच आ जाये, तो अच्छा हो। खान साहबको बुखार है। बा से कहना, खान साहब और मेहरताजको उसकी कोठरीमें रखा है। इसमें कोई हर्ज तो नहीं हुआ न? खान साहब उसे छोड़नेकी बात कर रहे थे। शायद मीरा-कुटीरमें चले भी गये हों। तुम्हारा लेख सुधार कर भेज रहा हूँ।[2] उसकी नकल कैप्टेनको भेजनी चाहिए। दो लेख और भेज रहा हूँ। बाकी[3] जानबाके साथ दोपहरको भेजूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५२५) से।

४०४. पत्र : महादेव देसाईको

[२८ जून, १९३७][4]

चि० महादेव,

कल आना। बा कल आ जाये, तो ठीक होगा; लेकिन उसे जो अच्छा लगे। खान साहबने कोठरी खाली कर दी है। सभी लेख भेज रहा हूँ। विलायती वाटर-प्रूफ ले लेना। और भी तरीके हैं, लेकिन कोई बात नहीं। इस पत्रके साथ कमलनयनके लिए पत्र है। जाकर उसे विदा कर आना। क्या आज और कोई डाक नहीं है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५२०) से।

१. आश्रम का एक कार्यकर्ता जो प्राय: डाक और अन्य सामान लाना-ले जाता था।

२. देखिए पृ० ३८८-९०।

३. देखिए अगला शीर्षक।

४. देखिए पिछला शीर्षक।

४०५. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
२९ जून, १९३७

चि० मीरा,

तुम्हारी चित्रकारी[1] अच्छी है। यह अभ्यास जरूर जारी रखो। यह तुम्हारे लिए अच्छा मनोरंजन रहेगा।

डॉ० धर्मवीरने मुझे फिर आगाह किया है कि तुम्हे अपनी रफ्तार धीमी रखनी चाहिए। उन्हे विश्वास है कि वे तुम्हे पूर्ण स्वस्थ कर देंगे।

बा अभी-अभी कुसुम देसाई और कानमके साथ आई है। उसके बायें पैरकी हड्डी कुछ तड़क-सी गई है।

ठीक तौरपर तो वर्षा कल आरम्भ हुई। मौसम अब बिलकुल ठडा हो गया है। हवा तेज चल रही है।

खान साहब तुम्हारीवाली झोंपडीमें रह रहे हैं। उन्हें थोड़ा ज्वर है। बलवन्तसिंह और पारनेरकर गायें खरीदने गये है। तीन गायें थोड़े दिनमें दूध देना बन्द करनेवाली हैं।

मेरी बकरी बहुत थोड़ा दूध दे रही है। इसलिए हमें एक बकरी भी जुटानी पड़ेगी। इस प्रकार परिवार चारो ओरसे बढ रहा है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३८९) मे, सौजन्य . मीराबहन। जी० एन० ९८५५ से भी

१. मीराबहन अपने पत्रोंके साथ छोटे-छोटे रेखाचित्र भी बापूको भेजा करती थी।

४०६. पत्र : भारतन् कुमारप्पाको

२९ जून, १९३७

प्रिय भारतन्,

राव ग्वालेके बारेमें मेरी फिशरसे बातचीत हुई थी। औरोंने भी मुझसे बात की है। पारनेरकर उसे हिदायतें देने और घी की परीक्षा करनेके लिए उसके पास गया था। राव काम करनेवाला आदमी नहीं लगता। वह बहुत ज्यादा और फिजूलकी बातें करता है। यदि वह वैसा ही है जैसाकि फिशर और अन्य लोग बताते हैं तो उसे चलता कर देना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२०) से।

४०७. पत्र : तुलसी मेहरको

२९ जून, १९३७

चि० तुलसी मेहर,

तुम्हारा खत मिला है। जब तक वहाँ रहनेसे तुमको शांति मिलती है और कुछ काम होता ही है तब तक वहाँका काम छोडने की आवश्यकता है ऐसे मैंने नहीं माना। जब तुमको वहांके काममें रस न रहे तब ही नेपाल छोडनेका मैंने कहा[1] है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५५२) से।

[1] देखिए पृ० २९२

४०८. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
३० जून, १९३७

प्रिय पगली,

मैं जानता था कि मैकेल[1] सनकी है परन्तु मुझे यह नही मालूम था वह मूर्ख भी है। निस्सन्देह तुम्हारे स्वास्थ्यमें जो भी अनियमितता हो, तुम्हें उसकी सूचना मुझे देनी ही चाहिए, चाहे मैं उसके बारेमें कुछ भी न कर सकूँ। लहसुनसे कभी दस्त नही लगते। दाल या कोई प्रोटीन या स्टार्च-युक्त खाद्य इसका मूल कारण रहा होगा।

क्या तुम धर्मवीरको जानती हो? तुम्हारा उसके बारेमें क्या विचार है? मै समझता हूँ कि मुझे तुम्हारे ऊपर किसी नये कामका बोझ नही डालना चाहिए, चाहे वह काम किसीको पत्र लिखना ही क्यो न हो।

क्या तुम 'पगली' नही हो? तुमने जो यह सुझाव दिया है कि सामान्य भाषा देवनागरी या फारसी — किसी भी लिपिमें लिखी जा सकती है, इसमें कोई नई बात नही कही है। [इस विषयमें] मेरा सिद्धान्त[2] तुम 'हरिजन' में पढ़ोगी। परन्तु हिन्दी नाम कभी नही बदला जायेगा। यह तो वैसा ही होगा जैसे कोई लोगोको खुश करनेके लिए अपना नाम बदल ले। 'हिन्दी' मूल नाम है। ज्यादासे-ज्यादा यह किया जा सकता है कि 'हिन्दुस्तानी' शब्द समानार्थकके रूपमें स्वीकार कर लिया जाये। क्या तुम्हे इसका स्पष्ट कारण दिखाई नही देता? वायुमण्डलमें हिंसा व्याप्त है और किसी एक व्यक्ति द्वारा नही अपितु एक सस्था द्वारा यह माँग करना कि नाम बदल दिया जाये, हिंसा ही है, जिसके आगे झुकना नही चाहिए। इसमें कोई तर्क या कारण नही है। क्या मैं किसी पुराने साहित्यिक-सघ[3]को बिना किसी बहुत ही युक्तिसंगत कारणके, अपना नाम बदलनेके लिए कह सकता हूँ? क्या तुम मेरी बात समझ रही हो?

पार्किन्सनका पत्र अच्छा है।

अब मानसूनकी वर्षा बाकायदा शुरू हो गई है। बा कल आई है — अपने साथ पुरानी आश्रमवासिनी कुसुमको भी लाई है। मौसम कभी ठडा कभी गर्म हो जाता है। जब तुम आओ तो अपनी मच्छरदानी जरूर लेती आना। यद्यपि बहुत

१. मूल में "मैकेन" है।
२. देखिए "हिन्दी बनाम उर्दू", ३-७-१९३७।
३. हिन्दी साहित्य-सम्मेलन; देखिए पृ० ३६२-३ भी।

ज्यादा मच्छर नहीं हैं, तो भी मैं नहीं चाहता कि तुम कोई ऐसा खतरा मोल लो जो टाला जा सकता हो।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च:]

मैंने बालकृष्णको कह दिया है कि तुमने संस्कृतके लिए शिक्षक रख लिया है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३०९२) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९४८ से भी

४०९. पत्र: परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

३० जून, १९३३

भाई परीक्षितलाल,

इस पत्रके साथ भाई सोनी वालजी तुलसी का कार्ड भेज रहा हूँ। अपने कार्डमें वे क्या कहना चाहते हैं, मैं समझा नहीं। मैंने उन्हें लिखा है कि उन्हें वहाँसे कोई पैसा नहीं मिल सकता। वे अपना धन्धा न छोड़ें। अपना धन्धा करते हुए जो समय बचे, सो सेवामें लगायें और जो तुम कहो सो करें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०२७) से।

४१०. पत्र: महादेव देसाईको

३० जून, १९३३

चि० महादेव,

डॉक्टरकी कैफियत सन्तोषजनक मालूम होती है। शंकरके उलाहनोंकी क्या बात की जाये? उसका स्वभाव जैसा था, वैसा ही बना हुआ है। लगता है, मैंने उसे जो पत्र लिखा था, वह तुमने नहीं पढ़ा। मैंने उसे बुरी तरह डाँटा है। फिर भी तुमने जो लिखा है, वह सब तो नहीं लिखा था; अब वह भी लिख भेजूँगा। शान्तिकुमारको लिखना और उसे बताना कि इसके बाद निर्णय करूँगा। घरनल बम्बईसे मँगाना। अब

ठीक ऐसा ही तो कैसे मिलेगा? बकरी तो महँगी पड़ती लगती है। मैं दुविधामें पड़ गया हूँ। सारे पत्र भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

ककलभाईको तुम भी लिखोगे, इसलिए मैंने लिफाफा बन्द नहीं किया। गोकुलभाईका कार्ड आया था, मैं तुमसे कहना भूल गया। उन्हें लिखना कि १० तारीख खुशीसे निश्चित कर सकते हैं।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५२६) से।

४११. पत्र : जमनालाल बजाजको

जून, १९३७

चि० जमनालाल,

यदि हरजीवनसे खर्च देनेको कहा हो तो १,००० रुपया तारसे भेज दो। संघकी ओरसे उत्तर इस प्रकार दो :

"तारसे यात्रा-खर्चके लिए एक हजार भेज रहे हैं। पेशगी कर्ज देनेमें असमर्थ।"

मैं समझता हूँ, तुमने कर्ज देनेका कोई आश्वासन नहीं दिया है। इसलिए कर्ज देनेकी जरूरत मुझे तो नहीं लगती।

शंकरका तुम्हें लिखा पत्र वापस भेज रहा हूँ। उसे पुस्तकें भेजना ठीक ही है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

हरजीवनका पत्र भी वापस भेज रहा हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८५) से।

४१२. पत्र : कृष्णचन्द्रको

सेगाँव
२ जुलाई, १९३७

चि० कृष्णचंद्र,

तुमने जो शंका उठाई है वह बिलकुल सही है। अब मैं कह नही सकता कि मैंने ऐसा निरर्थक वाक्य कैसे लिखवाया[1]। उसको इस तरह पढ़ो "लेकिन इसका यह अर्थ तो कभी नहीं किया जाए कि धर्मज संतान के पूर्वज सब धर्मज थे अथवा भविष्य में संतान सब धर्मज होंगे।"

हठयोग शारीरिक आरोग्य के लिये सीखने में और करने में कोई दोष नही है। लेकिन जो सिखानेवाले हैं वह सब ज्ञानकार नहीं रहते। मैंने ऐसे भी अनुभव किया है कि हठयोग की क्रिया व शास्त्र जानते नहीं हैं ऐसे लोगके मारफत काफी नुकसान होता है। हरएक आसन हरएक आदमी नहीं कर सकता है। इसका मतलब इतना ही है कि तुम्हारे विवेक-बुद्धि से काम लेना है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२८३) से। एस० जी० ५९ से भी

४१३. बातचीत : एक अमेरिकीके साथ[2]

सेगाँव
[३ जुलाई, १९३७ के पूर्व]

गांधीजी : इसमें लिखाई, पढ़ाई और गणितकी नहीं, बल्कि चिन्तन और जीवनके परिवर्तित ढंगोंकी गहन शिक्षा शामिल है। लोगोंकी मनोवृत्तिमें यह परिवर्तन लाना एक भगीरथ कार्य है। पर यह इसलिए है, क्योंकि हमारा रास्ता अहिंसाका है, समझाने-

१. देखिए पृ० ३३७।

२. महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत। उन्होंने यह रिपोर्ट दी थी: "एक युवा अमेरिकी ने भारत की गरीबी, ग्रामोद्योगों के पुनरुत्थान-कार्यक्रम के अर्थ और भारत में ब्रिटिश शासन की उलझनों के बारे में अनेक प्रश्न पूछे। एक ऐसे व्यक्ति को जो तुरन्त परिणाम पानेका आदी हो, यह ग्राम-पुनर्निर्माण कार्यक्रम निश्चय ही थोदा लगता है। परन्तु गांधीजी को, हमारे अपने लोगों की तरह, इस तरह के लोगों को भी यह बताने में कोई संकोच नहीं होता कि यह कार्यक्रम एक भगीरथ कार्य है, जिसे पूरा करने के लिए भगीरथ संकल्प चाहिए।"

बुझाने का है। जोर-जबरदस्तीके तरीकेसे अहिंसाका तरीका सदा ही धीमा होता है, पर साथ ही वह अधिक निश्चित और अधिक टिकाऊ भी होता है।

अमेरिकी : परन्तु यदि अंग्रेज चले जायें तो क्या इससे किसी तरहकी सहायता मिलेगी? यदि अंग्रेज १५० साल पहले चले गये होते तो क्या आपकी स्थिति बेहतर होती?

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है। हमें नये ढंगसे और कमसे-कम किसी राजनैतिक बाधाके बिना काम शुरू करना है। आप ब्रिटिश सरकार द्वारा स्थापित शान्तिकी बात करते हैं। मैं इस बातसे इनकार नहीं करता कि उन्होंने एक तरहकी शिक्षा चालू की है, स्कूल और कॉलेज बनाये हैं, और एक अद्वितीय रेल-व्यवस्था कायम की है। पर हमारी मुश्किल यह है कि जहाँ अन्यत्र इन सब चीजोंने देशोंको समृद्ध किया है, वहाँ इनका यहाँ उल्टा ही परिणाम निकला है। देशकी दौलत ही नहीं बल्कि हमारी प्रतिभा तक बाहर बह गई है। जीवनमें कोई आशा ही नहीं रही। मैं यह नहीं कहता कि अंग्रेजोंके जाते ही कोई जादू हो जायेगा। हम केवल अपना इतिहास नये सिरेसे शुरू करेंगे। भारतका भाग्य तब उसके अपने हाथमें होगा। आप यह भी याद रखिये कि यदि अंग्रेज स्वेच्छासे मित्रों और सहयोगियों की तरह रहें, तो हम नहीं चाहेंगे कि वे जायें।

लेकिन यदि लोग इस शासनको नहीं चाहते हैं, तो वे इसे सहन क्यों करते हैं? यहाँ संयुक्त इच्छा-शक्तिका अभाव क्यों है?

इसके अनेक कारण हैं जिन्हें मैं इस समय स्पष्ट नहीं कर सकता। इसमें अनेक बातोंका योग रहा है, पर मूल कारणकी व्याख्या नहीं हो सकती। इच्छा-शक्ति आज सक्रिय नहीं है; यद्यपि वह अस्पष्ट रूपसे मौजूद अवश्य है।

सरकारका यह खयाल है कि भारत अभी स्वशासनके योग्य नहीं है, इसलिए जनताकी इच्छाको ठुकराना क्या वह अपना अधिकार मानती है?

मैं ऐसा नहीं सोचता; और न मुझे यह सन्देह है कि अंग्रेज ऐसा सोचते हैं। यदि वे ऐसा सोचते तो उन्होंने यह संविधान तैयार न किया होता। नहीं, यह प्रान्तोंको स्वायत्त बनानेका सच्चा प्रयास है। वर्ना, वे ३ करोड़ निर्वाचकोंको वोटकी शक्ति क्यों दे देते? पर यह सच्चा प्रयास इस बातसे दूषित हो जाता है कि इसीके साथ-साथ ब्रिटेनके साथ भारतका सम्बन्ध एक तरहसे बलपूर्वक बनाये रखनेका प्रयास भी चल रहा है और यह वे भारतके शोषणके लिए कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-७-१९३७

४१४. भेंट: कैप्टेन स्ट्रंकको[1]

सेगाँव
[३ जुलाई, १९३७ के पूर्व]

गांधीजी: स्वतन्त्रतासे हमारा आशय यह है कि हम पृथ्वीके किसी भी जन-समुदायकी तावेदारीमें नहीं रहेंगे। भारतमें एक ऐसा बड़ा दल है जो इस स्थितिको लानेके लिए मृत्युका आलिंगन करेगा। यद्यपि हम मारे जा सकते हैं, पर हम किसीको मारते हुए नहीं मरेंगे। मैं जानता हूँ कि यह एक अनोखा प्रयोग है। मुझे मालूम है कि हिटलर-जैसा कोई भी व्यक्ति यह नहीं मानता कि शक्तिके प्रयोगके बिना मानव-सम्मानकी रक्षा हो सकती है। पर हममें से बहुत-से लोग यह महसूस करते हैं कि अहिंसात्मक उपायोंसे स्वतन्त्रता प्राप्त की जा सकती है। यदि हमें इसके लिए खून की नदी पार करनी पड़ी, तो वह दिन सारी दुनियाके लिए एक दुर्दिन होगा। भारत यदि अपनी स्वतन्त्रता सशस्त्र संघर्षसे प्राप्त करता है, तो दुनियाके लिए वास्तविक शान्तिका दिन अनिश्चित कालके लिए टल जायेगा। इतिहास सतत युद्धोंका एक लेखा है, पर हम नया इतिहास बनानेकी कोशिश कर रहे हैं। मैं ऐसा इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि, जहाँ तक अहिंसाका सवाल है, मैं राष्ट्रीय मानसका प्रतिनिधित्व करता हूँ। तलवारके सिद्धान्तको मैंने खूब सोच-विचार करनेके बाद छोड़ा है। उसकी सम्भावनाओंका मैंने हिसाब लगाया है और मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि जंगलके कानूनकी जगह प्रबुद्ध प्रेमके कानूनकी स्थापना ही मनुष्यकी नियति है। स्वतन्त्रताकी आकांक्षा ऐसी आकांक्षा है जो यूरोपके सभी राष्ट्रोंको आविष्ट कर रही है। परन्तु वह स्वतन्त्रता स्वैच्छिक साझेदारीका बहिष्कार नहीं करेगी। साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षाका साझेदारीसे कोई मेल नहीं है।

कैप्टेन स्ट्रंकने मशीनों, पाश्चात्य सभ्यता, पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञान, आदि पर गांधीजीके विचारोंके बारेमें कुछ अस्पष्ट बातें सुन रखी थीं। इसलिए वे इन सब बातोंके विषयमें उन्हींसे जानना चाहते थे।

गां०: मेरा यह कहना है कि हम पाश्चात्य प्रतिमानोंको बिना उनकी परीक्षा किये ग्रहण नहीं कर सकते। भारतके मशीनीकरणमें मेरा विश्वास नहीं है। मैं यह मानता हूँ कि गाँवोंका पुनर्निर्माण सम्भव है।

१. इसे महादेव देसाई के "वीकली लेटर" से लिया गया है। उन्होंने बताया था: "कैप्टेन स्ट्रंक जर्मनी के सरकारी दैनिक पत्र के प्रतिनिधि और हिटलर के स्टाफ के सदस्य थे, जो भारत की परिस्थितियों की छानबीन के लिए सेगाँव आये थे। वे यह जानना चाहते थे कि स्वतन्त्रता से क्या आशय है और उसके लिए भारत के लोगों में कहाँतक सच्ची लगन है।"

स्ट्रंक : स्वतन्त्रताके अपने ध्येयको प्राप्त कर लेनेके बाद क्या आपके इन विचारोंके बदलनेकी सम्भावना है?

गा० : नही। ये विचार मेरे स्थायी विश्वासोको प्रकट करते है। परन्तु मशीनो, रेल आदिके मेरे विरोधका अर्थ यह नही है कि जैसे ही हम स्वतन्त्र होगे, इन सबको हम उखाड फेंकेंगे। आज ये चीजें मुख्य रूपसे सैनिक-उद्देश्योकी पूर्तिके लिए हैं; तब उनका उपयोग राष्ट्रकी भलाईके लिए होगा।

स्ट्रंक : कभी-कभी आपका भाषण पाश्चात्य सफाई-व्यवस्था और पाश्चात्य शल्य-चिकित्साके विरुद्ध होता है। भारतके बारेमें आपकी भावी योजना क्या है?

गा० : आपने यह प्रश्न पूछा इसकी मुझे खुशी है। पाश्चात्य सफाई-व्यवस्थाके विरोधमें मैंने कुछ नही कहा है। वस्तुत गाँवोकी सफाई-व्यवस्थाका अपना विचार मैंने अंग्रेज डॉक्टर पूरसे ही लिया है और मैंने यहाँ उसीका अनुकरण किया है। परन्तु पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञानके विरुद्ध मै जरूर बोला हूँ। मैंने उसे घनीभूत पैशाची विद्या कहा है। मेरा यह विचार मेरी अहिंसासे उत्पन्न हुआ है; मेरी आत्मा जीव-जन्तुओ की चीर-फाड़के खिलाफ विद्रोह करती है। आपको पता नही है कि मैंने अपने अध्ययनके लिए लगभग चिकित्सा-विज्ञानको चुन ही लिया था, पर अपने स्वर्गीय पिताकी अभिलाषाकी पूर्तिके लिए मैंने कानून लिया। दक्षिण आफ्रिकामें मैंने एक बार फिर चिकित्सा-विज्ञानकी बात सोची। पर जब मुझे बताया गया कि मुझे जीव-जन्तुओंकी चीर-फाड करनी होगी तो मेरी आत्माने उसे स्वीकार न किया। मैंने सोचा कि मै स्वय अपने ऊपर जिस तरहकी क्रूरता कदापि नही करूँगा, वह मुझे निम्न स्तरके जीवोपर क्यो करनी चाहिए? परन्तु मै चिकित्सा-विज्ञानके सभी उपचारोको बुरा नही मानता। मै यह जानता हूँ कि निरापद प्रसव और शिशुओंकी देख-रेखके बारेमें हम पश्चिमसे बहुत-कुछ सीख सकते है। हमारे यहाँ बच्चे बस जैसे-तैसे पैदा हो जाते है और हमारी अधिकतर स्त्रियाँ शिशु-पालनके विज्ञानसे अनभिज्ञ है। इस दिशामें हम पश्चिमसे बहुत-कुछ सीख सकते है।

परन्तु, पश्चिम वाले मनुष्यके पार्थिव जीवनको दीर्घ बनानेपर जरूरतसे ज्यादा जोर देते है। पृथ्वीपर मनुष्यके अन्तिम क्षण तक आप उसे औषधियाँ और इंजेक्शन देते रहते है। जिस निर्भीकतासे आप युद्धमें अपने प्राण गँवाते है, मेरे खयालमें यह चीज उससे मेल नही खाती। यद्यपि मै युद्धके विरुद्ध हूँ, पर इसमें कोई सन्देह नही कि युद्ध व्यक्तिमें निर्भीकता और साहस जगाता है। मुझे कभी किसी युद्धमें भाग नही लेना है, फिर भी मैं आप लोगोसे किसी महान ध्येयके लिए अपने प्राण न्यौछावर करनेकी कला सीखना चाहता हूँ। किन्तु पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञान जीव-जन्तुओंके प्रति करुणा तकका त्याग करके मनुष्यमें जीनेकी जिस अत्यधिक जिजीविषाको प्रोत्साहित करता लगता है, उसे मै ठीक नही समझता। फिर भी, पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञानका रोगकी रोकथामपर जोर देना मुझे पसन्द है।

स्ट्रंक : भारतमें जबरदस्त बौद्धिक शिक्षण दिया जा रहा है और बहुत-से शिक्षित बेकार है। शिक्षित युवकोंकी यह सेना गाँवोंमें भेजकर क्या काममें नहीं लाई जा सकती?

गां० : वह आन्दोलन आरम्भ हो गया है। पर वह अभी शैशवावस्थामें है। और फिर यहाँ जबरदस्त बौद्धिक शिक्षण नहीं दिया जा रहा, बल्कि शैक्षणिक उपाधियोंका अत्युत्पादन हो रहा है। बौद्धिक शक्ति बिलकुल नहीं बढ़ी है, केवल कंठस्थ करनेकी कलाको प्रोत्साहन मिला है, और उपाधि-प्राप्त ऐसे लोग तो गाँवोंमें भेजे नहीं जा सकते। यदि कुछ अकुंठित मस्तिष्क बचे हों तो केवल वे काममें लाये जा सकते हैं। उपाधियोंके लिए दी जानेवाली इस शिक्षाने हमसे पहल करनेकी शक्ति छीन ली है। इसे पाकर हम गाँवोंके लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं। विश्वविद्यालयका यान्त्रिक अध्ययन मौलिकताकी हमारी इच्छाको समाप्त कर देता है। वर्षों तक रटते रहनेसे मनमें ऐसी क्लान्ति आ जाती है कि हममें से अधिकतर क्लर्कीके लिए ही उपयुक्त रह जाते हैं। फिर भी ग्राम-आन्दोलनको जीवित रहना है।

कैप्टेन स्ट्रंक जब चलनेकी तैयारी करने लगे, तो गांधीजीने उनका परिचय श्री कैलेनबैकसे कराया।

गां० : आपकी आज्ञा हो तो मैं बताऊँ कि ये एक जिन्दादिल यहूदी और जर्मन यहूदी हैं। युद्धके दिनोंमें ये जर्मनीके जबरदस्त समर्थक थे।

कैप्टेन स्ट्रंकको वहाँ एक जर्मन यहूदीको नंगे बदन खादीकी धोतीमें बैठे देखकर आश्चर्य हुआ।

स्ट्रंक : मेरे बहुत-से यहूदी मित्र हैं।

गा० : तब मैं आपसे यह समझना चाहूँगा कि जर्मनीमें यहूदियोंको पीड़ित क्यों किया जा रहा है।

कैप्टेन स्ट्रंकने समझानेकी कोशिश की। बहुत-से यहूदियोंने युद्धमें भाग लिया था और जर्मनीको उनसे कोई शिकायत नहीं थी। पर युद्धके बाद जो यहूदी जर्मनीपर छा गये, जिन्होंने जर्मनोंको उनके धन्धोंसे हटा दिया और हिटलरके विरुद्ध लड़ाईका "निर्देशन किया", उन्हें वहाँ सहन नहीं किया गया।

स्ट्रंक : व्यक्तिगत रूपसे मेरा यह खयाल है कि इसमें हमने अति कर दी है। क्रान्तियोंमें ऐसी त्रुटियाँ हमेशा होती हैं। यूरोपमें आज कितनी घृणा है। और स्पेनमें तो वह चरम-सीमापर पहुँच गई है। स्पेनका यह युद्ध क्रूरतापूर्ण, हृदयहीन, मूर्खता-भरा और अमानवीय है। इसकी किसी भी अन्य युद्धसे तुलना नहीं की जा सकती।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-७-१९३७

४१५. हिन्दी बनाम उर्दू

एक पत्र-लेखक लिखते हैं कि उर्दूके प्रति मेरे रुखको लेकर उर्दूके समाचार-पत्रोंमें मेरे खिलाफ काफी कुछ लिखा जा रहा है। ये पत्र यहाँ तक कहते हैं कि यद्यपि मैं हिन्दू-मुस्लिम एकताकी बात करता हूँ, फिर भी मैं सारे हिन्दुओंसे ज्यादा साम्प्रदायिक विचार रखनेवाला हिन्दू हूँ।

मुझे पत्र-लेखक द्वारा उल्लिखित बातोंसे अपने बचावके लिए कुछ कहनेकी इच्छा नहीं है। मेरा जीवन हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नपर मेरे रुखका जीता-जागता सबूत होना चाहिए।

लेकिन हिन्दी-उर्दूका यह सवाल बारहमासी बन गया है। हालाँकि इसके बारेमें मैं बहुत बार अपने विचार जाहिर कर चुका हूँ, तथापि उन्हें फिरसे प्रकट करना गलत नहीं होगा। अतः इस बारेमें मैं जो-कुछ मानता हूँ, उसे यहाँ मैं बिना किसी दलीलके सीधे-सादे रूपमें रख देता हूँ.

मेरा विश्वास है कि

१. हिन्दी, हिन्दुस्तानी और उर्दू शब्द उस एक ही जबानके सूचक हैं जिसे उत्तर भारतमें हिन्दू-मुसलमान दोनों बोलते हैं और जो देवनागरी या फारसी लिपिमें लिखी जाती है;

२. इस भाषाके लिए 'उर्दू' शब्द शुरू होनेसे पहले हिन्दू-मुसलमान दोनों इसे 'हिन्दी' ही कहते थे;

३. 'हिन्दुस्तानी' शब्द भी बादमें (यह मैं नहीं जानता कि कबसे) इसी भाषाके लिए इस्तेमाल होने लगा है;

४. हिन्दू-मुसलमान दोनोंको यह भाषा उसी रूपमें बोलनेकी कोशिश करनी चाहिए, जिसमें उत्तर भारतके ज्यादातर लोग इसे समझते हैं;

५. लेकिन तब भी अनेक हिन्दू और बहुत-से मुसलमान क्रमशः केवल संस्कृत और केवल फारसी या अरबीके ही शब्दोंका व्यवहार करनेका आग्रह करेंगे। यह स्थिति हमें तब तक बरदाश्त करनी पड़ेगी जब तक हमारे बीच एक-दूसरेके प्रति अविश्वास और अलहदगीका भाव बना हुआ है। पर जो हिन्दू किसी खास तरहके मुस्लिम खयालातको जानना चाहेंगे, वे फारसी-लिपिमें लिखी हुई उर्दूका अध्ययन करेंगे और इसी तरह जो मुसलमान हिन्दुओंकी किसी खास बातका ज्ञान हासिल करना चाहेंगे उन्हें देवनागरी लिपिमें लिखी हुई हिन्दीका अध्ययन करना होगा;

६. अन्तमें जाकर जब हमारे दिल घुल-मिल जायेंगे और हम सब अपने-अपने प्रान्तोंके बजाय अपने देश हिन्दुस्तानपर गर्वका अनुभव करने लगेंगे और मुख्तलिफ धर्मोंको एक ही वृक्षके विभिन्न फलोंके रूपमें जानने और तदनुसार उनपर अमल करने

लगेंगे तब हम प्रान्तीय भाषाओंको प्रान्तीय कामकाजके लिए कायम रखते हुए एक ही सामान्य लिपिवाली सामान्य भाषापर पहुँच जायेंगे;

७. किसी प्रान्त या जिले अथवा जनतापर कोई एक ही लिपि या हिन्दीके किसी एक रूपको लादनेका प्रयत्न करना देशके सर्वोत्तम हितकी दृष्टिसे घातक है।

८. आम भाषाके सवालपर विचार करते समय धार्मिक भेदभावोंका खयाल नहीं करना चाहिए;

९. रोमन-लिपि न तो हिन्दुस्तानकी सामान्य लिपि हो सकती है, और न होनी चाहिए। यह प्रतियोगिता तो फारसी और देवनागरीके बीच ही हो सकती है। और इसके अपने मौलिक गुणोंको अलग रख दें तो भी देवनागरी ही सारे हिन्दुस्तानकी सामान्य लिपि होनी चाहिए। क्योंकि विविध प्रान्तोंमें प्रचलित ज्यादातर लिपियाँ मूलत: देवनागरीसे ही निकली हैं और इसलिए उनके लिए उसे सीखना ही सबसे ज्यादा आसान है। लेकिन इसके साथ ही मुसलमानोंपर या दूसरे ऐसे लोगोंपर जो इससे अनजान हैं, उसे जबरदस्ती लादनेका हमें किसी तरहका कोई प्रयत्न नही करना चाहिए;

१०. अगर उर्दूको हम हिन्दीसे अलग मानें तो मैं कहूँगा कि इन्दौर[1] में जब मेरे कहनेपर हिन्दी साहित्य-सम्मेलनने धारा नं० १ में दी हुई व्याख्याको स्वीकार कर लिया और नागपुर[2] में मेरे कहनेपर भारतीय साहित्य परिषद्ने भी उस व्याख्याको स्वीकार करके अन्तर्प्रान्तीय व्यवहारकी सामान्य भाषाको हिन्दी या हिन्दुस्तानी कहा तो इस प्रकार मैंने उर्दूकी सेवा की ही है। क्योंकि इससे हिन्दू-मुसलमान दोनोंको सामान्य भाषाको समृद्ध बनानेके प्रयत्नमें शामिल होने और प्रान्तीय भाषाओंके सर्वोत्तम विचारोंको उस भाषामें लानेका पूरा-पूरा मौका मिल गया है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-७-१९३७

४१६. बैलगाड़ीको अपनाओ

बड़ौदाके श्री ईश्वरभाई एस० अमीनने मशीनके मुकाबले पशुओंकी सामर्थ्यके विषयमें एक लम्बा पत्र मेरे पास भेजा है। उसमें से सम्बद्ध बातें मैं यहाँ देता हूँ:[3]

> खेतोंमें या थोड़ी दूरीके काममें पशुओंसे काम लेना मशीनकी ताकतसे काम लेनेकी बनिस्बत महँगा नहीं पड़ता, और इसलिए अधिकांश बातोंमें पशु मशीनका मुकाबला कर सकते हैं। लेकिन इस समय प्रवृत्ति यह है कि पशुओंके मुकाबलेमें हम मशीनकी शक्तिको ही तरजीह देते हैं।

१. अप्रैल, १९३५ में।
२. अप्रैल, १९३६ में।
३. पत्रके केवल कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

मिसालके तौरपर आप बैलगाड़ीको ले लीजिए। १०० रुपये तो गाड़ीके दाम हुए और २०० रुपये बैलोंके। यह बैलगाड़ी गाँवोंकी ऊबड़-खाबड़ और रेतीली सड़कोंपर १६ बंगाली मनका बोझा १५ मील प्रतिदिनके हिसाबसे ढो सकती है। इसमें १२ आने दोनों बैलोंका, ६ आने गाड़ीवानका और ४ आने टूट-फूटका, इस तरह रोज कुल १ रु० ६ आना खर्च पड़ेगा। मोटरलारी यह काम करे तो इसमें भी इससे कम नहीं पड़ेगा, हाँ, बढ़िया पक्की सड़क हो और बोझा लगातार काफी दूर ले जाना हो तब जरूर मोटरलारी बाजी मार ले जायेगी और बैलगाड़ी सुस्त और आर्थिक दृष्टिसे अनुपयोगी मालूम पड़ेगी।... तो सिर्फ धीमी चाल ही एक ऐसी चीज है जो बैलगाड़ीके विरुद्ध पड़ती है।... अगर कोई किसान अपनी खुदकी गाड़ी रखे और उसमें सफर करे तो नकद रुपयेके रूपमें उसे कोई रकम खर्च नहीं करनी पड़ेगी, बल्कि अपने खेतमें पैदा हुई चीजें खिलाकर ही वह बैलोंसे काम निकालेगा। सच तो यह है कि किसान चारे और अनाजको ही अपना पेट्रोल, गाड़ीको मोटरलारी और बैलोंको घाससे शक्ति उत्पन्न करनेवाला इंजन समझे। मशीनमें न तो घासकी खपत होगी और न उससे गोबर ही निकलेगा जो कि खादके लिए बड़ा उपयोगी है। गाँवमें बैल तो रखने ही पड़ते हैं और घास भी हर हालतमें होती है। अगर गाड़ी भी रहे तो उसके कारण गाँवके बढ़ई और लुहारका धन्धा चलेगा तथा अगर गाय पाली जाये तो वह कल्पतरुका काम देगी। वह वनस्पतियोंके तेलसे ठोस मक्खन या घी बनानेवाली और साथ ही वह बैलोंका उत्पादन करनेवाली मशीन प्रमाणित होगी — इस प्रकार एक पन्थ दो काज सरेंगे।

मोटरलारीका आक्रमण सफल हो या न भी हो, किन्तु प्रवीण कार्यकर्ता इसके हानि-लाभका अध्ययन करके निश्चित रूपसे गाँववालोंका पथ-प्रदर्शन करें तो वह बुद्धिमानीकी बात होगी। अतः श्री ईश्वरभाईने जो-कुछ लिखा है और जो दिशा सुझाई है, उसपर सब ग्राम-सेवकोंको विचार करना चाहिए और देखना चाहिए कि ऐसा करना कहाँ तक ठीक है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३-७-१९३७

४१७. क्या किया जाये ?

नीचे लिखे पत्र, नोटिस और दरख्वास्त तीनों[1] ही पढ़ने योग्य हैं:

मैंने नाम और पते छोड़ दिये हैं। जिन भाईने यह पत्र लिखा है, वे अहिंसाके पुजारी हैं। प्रश्न उनका बिलकुल ठीक हैं। जो जालिमका सामना करता है वह कुछ-न-कुछ बच जाता है, और जिसमें सामना करनेकी शक्ति ही नहीं, वह पीटा जाता है। इस स्थितिमें अहिंसावादी क्या करे? क्या सताये हुएको यह शिक्षा दे कि वह जुल्म करनेवालेको पीटे, या कमसे-कम अदालतमें मामला ले जाये? दोनों बातें कानूनके अनुकूल हैं। जिसे गैर-कानूनी तौरपर पीटा जाता है उसे अपनी रक्षाके लिए सामना करनेका अधिकार कानून देता है। अदालतमें जानेका अधिकार तो उसे है ही।

लेकिन अहिंसावादी ऐसी शिक्षा नहीं देगा। वह समझता है कि मारका बदला मारसे लेनेसे जुल्मको मिटानेका सच्चा मार्ग जगतको नहीं मिलता। यह मार्ग दुनियाने आज तक ग्रहण तो किया है, लेकिन इससे जुल्म कम नहीं हुआ — रूपान्तर उसका भले ही हो गया हो।

अहिंसावादी तो उत्पीड़ितोंको असहयोगकी शिक्षा देगा। कोई आदमी किसीकी गुलामी करनेके लिए मजबूर नहीं किया जा सकता। इसलिए जिन हरिजनोंपर सख्तियाँ होती हों, उन्हें यह सीखना चाहिए कि जुल्म ढानेवाले जमींदारोंकी जमीनोंको वे छोड़ दें। जमीनें छोडकर कहाँ जायें यह प्रश्न स्वभावतः उठता है। हरिजन-सेवकका धर्म है कि वह ऐसे निराधारोंके लिए कोई-न-कोई धन्धा तलाश कर दे। इसमें कठिनाई नहीं होनी चाहिए। अहिंसाका मार्ग कठिन तो है, लेकिन उसका परिणाम स्थायी और दोनोंके लिए ही शुभ होता है। मारका बदला मारसे लेना तो चलता ही आया है। किन्तु उससे जगतमें न सुख बढ़ा है, न अन्याय और जुल्म ही दूर हुआ है। उसे मिटानेकी कुंजी तो अहिंसा ही है, ऐसा मेरा अनुभव है।

जो मैंने ऊपर बताया है वह अन्तिम इलाज है। लेकिन मारका जवाब मार नहीं है, इतना निश्चय कर लेनेके बाद और असहयोगकी शिक्षा देनेके पहले अहिंसावादी सेवक जमींदारोंके पास जायेगा, और उन्हें उनका धर्म समझानेकी कोशिश करेगा। सम्भव है कि जमीदार कुछ पिघल जायें। ऐसे जुल्मोंके बारेमें लोकमत जाग्रत किया जा सकता है। जब जालिम मूढ़ बन जाता है, किसीकी बात सुनता ही नहीं है तब असहयोग यानी उसका त्याग सर्वोत्कृष्ट उपाय है।

१. यहाँ नहीं दिये गये हैं। इनमें यह बताया गया है कि जमींदार गाँवों में हरिजन मजदूरोंको किस तरह परेशान करते हैं। पत्र-लेखकने पूछा था कि क्या मजदूरोंको बदला लेनेकी सलाह दी जाये?

ऐसी शंका न की जाये कि जब दलित चमार असहयोग करेंगे, तो दूसरी जातियाँ उस जालिमसे मिल जायेंगी। इस समय तो सिर्फ दुखियोंका ही प्रश्न है। दूसरे मिलेंगे तो उन्हें भी असहयोग सिखाया जा सकता है।

हरिजन-सेवक, ३-७-१९३७

४१८. छुट्टीके दिन

शालाकी छुट्टीके दिन किस प्रकार बिताये जायें, यह प्रश्न सदा विद्यार्थियोंके सामने रहता है। राजकोट राष्ट्रीय शालाके कुछ विद्यार्थियोंने अपनी छुट्टी कैसे बिताई, यह नीचे दिये हुए श्री नारणदास गांधीके पत्र[1] से मालूम होगा।

मेरी दृष्टिमें यह कार्यक्रम उत्तम रहा। इसमें विद्यार्थियोंने व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त किया और उनका बुद्धि-विकास हुआ; क्योंकि लगता है, उन्होंने जो काम किया, वह समझदारीसे और उत्साहसे किया। छुट्टीके दिनोंमें बहुधा विद्यार्थी रेलका किराया खर्च करके दूर-दूर जाते हैं, और खाली हाथ लौट आते हैं। इसके बदले यदि वे अपने क्षेत्रके पासके गाँवों और गाँववालोंसे परिचय प्राप्त करें, उनकी सेवा करें, उनमें चरखेका प्रचार करें, स्वच्छताका प्रचार करें, तो यह काम मामूली नहीं होगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ४-७-१९३७

१. पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने ब्योरेवार बताया था कि कैसे दो विद्यार्थियोंने ६२ दिनकी अपनी छुट्टीमें २०० लच्छी सूत काता। दस विद्यार्थियों और एक शिक्षकने राजकोटके पासके ६ गाँवोंमें काम करते हुए बड़ी सादगीका जीवन व्यतीत किया। इस टोलीमें दो हरिजन बालक थे और एक खोजा बालक था; गाँववालोंका सापेक्ष सहयोग बहुत उत्साहवर्धक था। कातनेका अभियान भी, जिसमें विद्यार्थियोंने प्रशंसनीय कार्य किया, सफल रहा। इस शिविरके फलस्वरूप तीन हरिजन बालकों और एक खोजा बालकने शालामें बने रहना तय कर लिया है।

४१९. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

सेगाँव
४ जुलाई, १९३७

चि० परीक्षितलाल,

मंगी भाइयोंसे सम्बद्ध तुम्हारा पत्र मिला। तुमने पत्र लिखा, यह अच्छा किया। ठक्कर बापाके निर्णयकी व्याख्या करनेकी जिम्मेदारी मुझपर आनेवाली है। देखता हूँ, क्या कर पाता हूँ।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९६३) से। सी० डब्ल्यू० १४५ से भी; सौजन्य : परीक्षितलाल एल० मजमूदार

४२०. पत्र : महादेव देसाईको

४ जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

इस पत्रके साथ, जो लेख तैयार हो गया है, उसे भेज रहा हूँ। भणसालीभाई कुछ समय वहाँ रहेंगे। तुम आराम जरूर करना। मैं यहाँका काम देख लूँगा। बाकी [सामग्री] तैयार हो रही है। ताड़ीवाले लेख[2] की एक और प्रतिलिपि नहीं करानी पड़ेगी, क्योंकि वह तो गुजरातीसे है, और इसलिए ['हरिजन] सेवक' को उसकी जरूरत नहीं होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५२८) से।

१. देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", २२-७-१९३७ भी।
२. देखिए खण्ड ६६, "विरोध ताड़का नहीं, ताड़ीकी शराबका" १९-९-१९३७।

४२१. पत्र : गुलाबचन्द जैनको

४ जुलाई, १९३७

भाई गुलाबचंद,

तुम्हारा मिला है, और उसके साथ पत्र-व्यवहार की नकल भी। मैं नही जानता हूं कि इस बारे में मैं क्या कर सकता हू। वही शुद्ध अंदोलन से जो कुछ किया जा सकता है उसीसे संतुष्ट रहना चाहिये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७४३) से।

४२२. पत्र : मीराबहनको

सेगांव
५ जुलाई, १९३७

चि० मीरा,

इन दिनों मेरे पत्र न मिलनेका कारण तुम समझती होगी।[1] तुम्हारी चित्रकारी मुझे बहुत पसन्द है। आशा है, तुम मजेमें होगी।

कैलेनबैक सुबह वर्धा चले गये। रामदास उनके साथ दक्षिण आफ्रिका जा रहा है। वे बुधवारको जहाजपर सवार होंगे। कण्डू और चार-पाँच अन्य लड़के बरोडासे कातने आये है। उन्हें नालवाडीवाले[2] अपने हिसाबसे दाम दे रहे हैं। वे खुश हैं। इस प्रकार तुम देख लो कि तुम्हारा बोया हुआ बीज फूट निकला है और शायद काफी फल देगा। आज और अधिक नही।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३९०); सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८५६ से भी

१. गांधीजी कांग्रेसकी कार्य-समितिकी बैठकमें व्यस्त थे।
२. विनोबा भावेका नालवाडी-आश्रम।

४२३. पत्र : अमृत कौरको

५ जुलाई, १९३७

प्रिय पगली,

मेरे पास समय नहीं है। पर तुम्हें अकेलापन महसूस होने देनेकी मेरी हिम्मत नहीं होती। इसलिए यह [पत्र] तुम्हारे पत्रोंकी मात्र प्राप्ति स्वीकार करनेके लिए है। मै तुम्हें, जैसी तुम्हारी इच्छा है, तार[1] भेजूंगा।

कानके पासवाले धब्बेमें यदि स्रावके लक्षण दिखाई देते हैं, और तुम मिट्टीकी पट्टी रखनेका कष्ट उठाना नही चाहती हो, तो तुम उसे भापसे सेंको; उसपर बर्फ भी आजमाना चाहिए। जब तुम आओ तो भाप देनेका उपकरण साथ लेकर आना। वह अभी मेरे पास नहीं है।

आशा है, तुम्हारा खेल, यदि और कुछ नहीं तो हरिजन-कार्यके ही कारण, बन्द हो गया होगा।

जवाहरलाल अब पहलेसे बेहतर और प्रसन्न दीखते हैं। हमारे दो दिन अच्छे बीते।

रामदास कैलेनबैकके साथ दक्षिण-आफ्रिका जा रहा है, सब खर्च कैलेनबैक उठा रहे हैं। उनके पास खूब धन है और उनसे मेरे सम्बन्ध इस तरहके हैं कि मैं उनका प्रस्ताव स्वीकार करनेको बाध्य हूँ।

सप्रेम,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९३) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९४९ से भी

१. देखिए "तार : अमृत कौरको", ७-७-१९३७।

४२४. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

५ जुलाई, १९३७

चि० प्रेमा,

आज तो इतना ही लिखना है कि लौटती डाकसे तुझे 'गीताई'[1] भेजी है। वह तुझे मिल गई होगी। बाकी समय मिलनेपर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३९१) से। सी० डब्ल्यू० ६८३० से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

४२५. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

५ जुलाई, १९३७

चि० कान्ति,

आजकल मेरा पत्र-व्यवहार कुछ पिछड़ गया है, इसलिए तेरे पत्रका जवाब देना रह गया। लेकिन आज तो दो सतरें लिख ही देता हूँ।

बाल का कराचीमें ठिकाना जम गया है, यह तो उसने तुझे लिखा ही होगा।

कैलेनबैक आज बम्बई गये। बुधवारको दक्षिण आफ्रिकाके लिए रवाना हो जायेंगे। उनके साथ रामदास जायेगा। रामदासकी तबीयत इस बीच ज्यादा बिगड़ गई है। कुछ खा नहीं सकता। इसीलिए दक्षिण आफ्रिका जानेको सहमत हो गया। कैलेनबैक फिर नवम्बर या दिसम्बरमें तीन महीनेके लिए आयेंगे। शायद ज्यादा भी रहें। वे अन्त तक बड़ी सादगीसे रहे।

सेगांव कल लगभग खाली हो गया, यानी [पहले] खानसाहब और मेहरताज गये; अब कैलेनबैक।

कुसुमबहन देसाई यहाँ है। अमतुस्सलामको टॉन्सिलका ऑपरेशन कराना था। लेकिन पेशाबमें शक्कर जाती है, इसलिए सर्जनने अभी ऑपरेशन टाल दिया है। अब आगे जो हो। बहुत करके कार्य-समितिकी बैठकके बाद वह त्रिवेन्द्रम जायेगी।

१. विनोबाजी-कृत भगवद्गीता का सम-श्लोकी मराठी अनुवाद।

तेरा सब काम ठीक चल रहा होगा। भोजन ठीक मिलता है न? कक्षाएँ बराबर चल रही होंगी। शायद आजसे शुरू होंगी।

क्या मैंने तुझे लिखा था कि बा की पिंडलीकी हड्डी दरक गई है?[1] फिलहाल उसे पड़े रहना पड़ता है। बुखार वगैरह नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२५) से; सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

४२६. पत्र: महादेव देसाईको

५ जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

मौलानाके बारेमें तुमने जो लिखा है, मेरी आलोचना उसके सम्बन्धमें नहीं थी, बल्कि मौलानाके वक्तव्यके उद्धरणके सम्बन्धमें थी। उद्धरण तो तुमने ठीक दिया है, लेकिन ऐसे मामलोंमें इतना ही काफी नही होता। वे स्वयं ही अपना वक्तव्य प्रकाशित करनेको कहते, तो और बात होती। हमारे लिए तो ऐसे मामलोंमें सबसे भली चुप[2]।

एवेलिन अंडरहिलके बारेमें जो तुम कहते हो ठीक है[3]। आज तो तुम्हें बहुत कुछ भेजा है, इसलिए तुम्हें बहुत ज्यादा खटनेकी जरूरत नहीं होगी।

मेरा छोटा-सा लेख[4] इस पत्रके साथ है।

दो-एक पत्रोंके लिए जानवाको रोकना पड़ा है। मैं भी क्या करूँ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५२९) से।

१. देखिए पृ० ३८१ भी।

२. देखिए पृ० ४११।

३. "अपने धर्मके अलावा दूसरे धर्मको समझने और उसकी कदर करनेका सही तरीका विद्यार्थी सीख सकें, इसके लिए" महादेव देसाईने हरिजन, १०-७-१९३७ के लिए लिखे अपने "वीकली लेटर" में एवेलिन अंडरहिलकी पुस्तक वर्शिप ("पूजा") से निम्न उद्धरण दिया था: "उनकी दृष्टिमें समस्त पूजा पवित्र थी, क्योंकि उनका विश्वास था कि अत्यन्त अज्ञानी तथा अत्यन्त मूर्ख पूजकोंकी पूजाके पतितसे-पतित रूपोंमें भी भगवानकी-सच्ची खोजकी थोड़ी-बहुत भावना रही है, तथा इनके और चरम दार्शनिक सत्यपर आधारित अत्यन्त भव्य पूजा-विधिके बीच इतना कम फासला है कि हम सोच सकते हैं कि स्वर्गके सन्त उसकी ओर बस मुस्करा कर देखते होंगे।"

४. देखिए पृ० ४०९-१०।

४२७. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

५ जुलाई, १९३७

चि० मणिलाल-सुशीला,

तुम्हारा पत्र मिला है। यह पत्र तो रामदासके साथ आयेगा। दोनों भाई सलाह करके जो ठीक लगे वह करना। मैं रामदासका शरीर पहले-जैसा हट्टा-कट्टा देखना चाहता हूँ। आज ज्यादा लिखनेकी गुंजाइश नहीं है। और जरूरत भी क्या है, जब दो आदमी[1] मुझसे मिलकर वहाँ आ रहे हैं?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८६५) से।

४२८. भाषण : कार्य-समितिकी बैठक, वर्धामें

६ जुलाई, १९३७

कहा जाता है कि महात्माजीने शुरूमें इस बातकी चर्चा की कि कांग्रेसजनोंके काफी बड़े वर्गमें यह गलतफहमी है कि संवैधानिक गतिरोध-सम्बन्धी वक्तव्यसे पहलेके उनके अन्य वक्तव्योंमें वस्तुतः कांग्रेस द्वारा अपनाये गये रुखको कमजोर करनेकी प्रवृत्ति थी। अपने कई वक्तव्योंके गहरे विश्लेषणसे महात्माजी समितिके सदस्योंको यह विश्वास दिलानेमें सफल हो गये कि उनका आशय केवल कांग्रेसकी स्थितिको स्पष्ट करना था, जिसे यहांके और इंग्लैंडके उच्चाधिकारी ठीक तरह नहीं समझ रहे थे और गलत ढंगसे रख रहे थे।

इसके बाद महात्माजीने समितिको समझाया कि कांग्रेसके सामने इस समय जो परिस्थितियां हैं, उनमें उनके लिए दूसरा मार्ग क्या हो सकता था। ऐसा समझा जाता है कि गांधीजीने इस तथ्यको छिपानेकी कोशिश नहीं की कि अ० भा० कां० कमेटीके दिल्लीवाले प्रस्ताव[2] में आश्वासनकी धारा रखते समय उनके मनमें जिस आश्वासनकी बात थी, वह उन्हें लॉर्ड लिनलिथगोके सन्देश[3] में नहीं मिला है। गांधीजीने यह आशंका प्रकट की कि इस तरह गवर्नरके हस्तक्षेपके विशेषाधिकार अक्षुण्ण बने

१. कैलेनबैक और रामदास गांधी।

२. देखिए पृ० ४-५।

३. देखिए परिशिष्ट ६।

रहते हैं; और उनके कारण देर-सवेर संघर्षकी सम्भावना बहुत है; क्योंकि गवर्नरके विशेषाधिकारोंके क्षेत्र और मन्त्रियोंकी गतिविधियोंके सामान्य क्षेत्रको एक-दूसरेके अतिक्रमणसे रोकना कठिन सिद्ध होगा। इसीलिए यह आशंका व्यक्त की गई कि लॉर्ड जेटलैंड और लॉर्ड लिनलिथगोकी सच्चे हृदयसे व्यक्त की गई इच्छाओंके बावजूद, नया संविधान कांग्रेसी मन्त्रियों द्वारा कांग्रेस-उद्देश्यकी पूर्तिके लिए शायद बहुत दिन अमलमें नहीं लाया जा सकेगा।

कहा जाता है कि महात्माजीने कोई निश्चित मत व्यक्त न करते हुए भी यह स्वीकार किया है कि उन लोगोंके तर्कमें कुछ बल है जो यह कहते है कि कांग्रेसको बहुमतवाले छः प्रान्तोंमें मन्त्रि-पदका उपयोग देशकी जनतामें शक्ति पैदा करनेके लिए करना चाहिए, जिससे कि जब संविधान अंतिम रूपसे भंग हो — क्योंकि भंग तो उसे होना ही है — और कांग्रेसको भविष्यमें कोई जन-आन्दोलन शुरू करना आवश्यक लगे, तो इस नव-विकसित जन-शक्ति और जन-उत्साहको भली भाँति काममें लाया जा सके।

अन्तमें, कहते हैं, गांधीजीने अपनेको श्री जवाहरलाल नेहरूकी इस रायसे पूर्ण सहमत बताया कि कांग्रेसके प्रतिनिधि अपने पदोंपर रहें या न रहें, पर कांग्रेसका झण्डा किसी भी तरह झुकना नहीं चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-७-१९३७

४२९. कांग्रेस कार्य-समितिका प्रस्ताव[1]

वर्धा
७ जुलाई, १९३७

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने दिल्लीमें हुई १८ मार्च[2] १९३७ की अपनी बैठकमें नये संविधानके बारेमें कांग्रेसकी मूल नीतिकी पुष्टि करते हुए एक प्रस्ताव पास किया था जिसमें वह कार्यक्रम भी रखा गया था जिसपर विधानसभाओंके कांग्रेसी सदस्योंको विधानसभाओंके अन्दर और बाहर चलना है। उसमें यह निर्देश भी था कि उस नीतिका अनुसरण करते हुए कांग्रेसियोंको यह अनुमति दे देनी चाहिए कि जिन प्रान्तोंमें कांग्रेसका विधानसभामें बहुमत है, वहाँ वे मन्त्रि-पद स्वीकार कर सकते हैं, और कांग्रेस-दलके नेताको विश्वास है और वह सार्वजनिक रूपसे यह कह सकता है कि गवर्नर हस्तक्षेपके अपने विशेषाधिकारोंका प्रयोग नहीं करेगा और न मन्त्रियोंकी संवैधानिक गतिविधियोंमें उनकी सलाहको ही अमान्य करेगा। इन

१. यह गांधीजी द्वारा तैयार किया गया था। तिथि-पंक्ति हितवाद, ९-७-१९३७ से ली गई है।
२. वस्तुत: १६ मार्चको; देखिए पृ० ४-५।

निर्देशोंके अनुसार, कांग्रेस दलोंके नेताओंने, जिन्हें गवर्नरोंने मन्त्रि-मण्डल बनानेके लिए आमन्त्रित किया था, आवश्यक आश्वासन माँगे थे। वे जब नहीं दिये गये तो नेताओंने मन्त्रि-मण्डल बनानेकी जिम्मेदारी लेनेमें अपनी असमर्थता प्रकट कर दी थी। परन्तु कार्य-समितिकी गत २८ अप्रैलकी बैठकके बाद लॉर्ड जैटलैंड, लॉर्ड स्टेनली और वाइसराय इस सवालपर ब्रिटिश सरकारकी ओरसे घोषणाएँ[1] कर चुके हैं। कार्य-समितिने इन घोषणाओंपर ध्यान से विचार किया है और उसकी यह राय है कि यद्यपि इनमें कांग्रेसकी माँगकी दिशामें बढ़नेकी इच्छा तो दिखाई देती है, पर ये उन आश्वासनोंसे कम बैठती हैं जिनकी अ० भा० का० कमेटी के प्रस्तावमें माँग की गई थी और कार्य-समितिके २८ अप्रैलके प्रस्ताव[2] में व्याख्या की गई थी। उपरोक्त घोषणाओंमें से कुछमें साझेदारीका जो सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया है, कार्य-समिति उससे भी सहमत नहीं है। ब्रिटिश सरकार और भारतके लोगोंके बीच इस समय जो सम्बन्ध है वह शोषक और शोषितका है, और इसीलिए प्रायः हर महत्वपूर्ण विषयपर उनके दृष्टिकोणोंमें भिन्नता है। फिर भी समिति यह महसूस करती है कि बादकी परिस्थितियों और घटनाओंके कारण पैदा हुई स्थिति यह विश्वास पैदा करती है कि गवर्नरोंके लिए अपने विशेषाधिकारोंको प्रयुक्त करना आसान नहीं होगा। इसके अतिरिक्त, समितिने विधानसभाओंके कांग्रेसी सदस्यों और आम कांग्रेसियोंकी रायपर भी विचार किया है।

इसलिए समिति इस निष्कर्ष और निश्चयपर पहुँची है कि जहाँ कांग्रेसियोंको मन्त्रि-पद ग्रहण करनेके लिए आमन्त्रित किया जाये, वहाँ उन्हें उसे स्वीकार करनेकी अनुमति दे दी जाये। परन्तु समिति यह बात स्पष्ट कर देना चाहती है कि कांग्रेस चुनाव घोषणा-पत्रमें जो दिशाएँ निर्धारित की गई हैं, उनके अनुसार काम करने और यथासम्भव सभी तरीकोंसे कांग्रेसकी इस नीतिको आगे बढ़ानेके लिए ही मन्त्रि-पदको स्वीकार और प्रयुक्त किया जायेगा कि एक ओर तो नये अधिनियमसे जूझना है और दूसरी ओर रचनात्मक कार्यक्रमको अमलमें लाना है।

कार्य-समितिको विश्वास है कि इस निर्णयमें उसे अ० भा० का० कमेटी का समर्थन और अनुमोदन प्राप्त है, और यह प्रस्ताव कांग्रेस और अ० भा० का० कमेटी द्वारा निर्धारित आम नीतिको आगे बढ़ाता है। इस मामलेमें यह समिति अ० भा० का० कमेटीसे निर्देशन प्राप्त करनेके अवसरका स्वागत करती, पर उसकी यह राय है कि इस अवस्थामें, जब तत्काल निर्णायक कार्यवाही आवश्यक है, एक निर्णय लेनेमें विलम्ब करना देशके हितोंके लिए हानिकारक होगा और लोगोंके मनमें भ्रम पैदा करेगा।

[अंग्रेजीसे]

कांग्रेस बुलेटिन नं० ५, जुलाई १९३७। गृह-विभाग, राजनैतिक शाखा, फाइल सं० ४/१५/३७, सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. लॉर्ड जेटलैंड और वाइसराय के भाषणों के लिए देखिए परिशिष्ट ४ और ६।

२. इलाहाबादमें स्वीकृत; देखिए पृ० १८५, पाद-टिप्पणी १।

४३०. तार : अमृत कौरको

वर्धागंज
७ जुलाई, १९३७

राजकुमारी अमृत कौर
शिमला

हाँ[1]। प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९४) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६९५० से भी

४३१. भाषण : राष्ट्रभाषा अध्यापन मन्दिर, वर्धामें[2]

७ जुलाई, १९३७

राजेन्द्र बाबूने यह कहकर कि प्रचारक चरित्रवान व्यक्ति होने चाहिए, मेरा काम हलका कर दिया है। यह बात तो स्वयंसिद्ध है कि जिनमें विद्वत्ता नहीं है उनसे काम नहीं चलेगा। पर यह चीज ध्यानमें रखनी जरूरी है कि चरित्रकी आवश्यक योग्यताके बिना, विद्वत्ता भी बेकार रहेगी।

उनका हिन्दी भाषापर, जैसीकि इन्दौर साहित्य सम्मेलनने उसकी व्याख्या की है, अर्थात्, उत्तर भारतके हिन्दुओं और मुसलमानों द्वारा बोली जानेवाली और देवनागरी या फारसी लिपिमें लिखी जानेवाली भाषापर, अधिकार होना चाहिए। इस भाषापर अधिकारका अर्थ केवल जन-साधारण द्वारा बोली जानेवाली आसान हिन्दी-हिन्दुस्तानीपर ही अधिकार नहीं है, बल्कि संस्कृत शब्दोंसे भरी गरिमापूर्ण हिन्दी और फारसी व अरबी शब्दोंसे भरी गरिमापूर्ण उर्दूपर भी अधिकार है। इनके ज्ञानके बिना भाषापर अधिकार अपूर्ण ही रहेगा; यह उसी तरह जैसे कि चॉसर, स्विफ्ट और जॉन्सनकी अंग्रेजीके ज्ञानके बिना अंग्रेजी भाषापर, या वाल्मीकि और

१. अमृत कौरने तारपर यह टिप्पणी दी है : "हाँ — कांग्रेस द्वारा मन्त्रि-पद स्वीकार"।

२. यह भाषण महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत है, जिसमें उन्होंने भाषणका "शब्दशः" अनुवाद दिया था। तिथि-पंक्ति हिन्दू, ८-७-१९३७ से ली गई है।

कालिदासकी संस्कृतके ज्ञानके बिना संस्कृत भाषापर अधिकारका कोई दावा नही कर सकता।

फिर भी मैं प्रचारकोंके देवनागरी या फारसी लिपिके अज्ञान, या हिन्दी व्याकरणके अज्ञानको सहन कर भी सकता हूँ; चरित्रकी कमीको एक क्षणके लिए भी सहन नही करूँगा। ऐसे आदमी हमें यहाँ नही चाहिए, और यदि उम्मीदवारोमें कोई ऐसा है जिसके कसौटीपर खरा न उतरनेकी सम्भावना हो तो उसे समय रहते यहाँसे चले जाना चाहिए। उनसे जिस कामकी अपेक्षा की जाती है वह कोई आसान काम नहीं है। अग्रेजी जाननेवालोका एक शक्तिशाली वर्ग ऐसा है जो यह कहता है कि अग्रेजी ही भारतकी राष्ट्रभाषा हो सकती है। बनारस और इलाहाबादके पडित और दिल्ली व लखनऊके आलिम संस्कृत-जैसी हिन्दी और फारसी-जैसी उर्दू चाहते हैं। तीसरा वर्ग जिसका हमें सामना करना है, वह है जिसने यह शोर मचाया है कि 'प्रान्तीय भाषाएँ खतरेमें हैं'।

अकेली विद्वत्तासे इन शक्तियोसे सफलतापूर्वक जूझा नही जा सकता। यह कार्य विद्वानोका नही, बल्कि फकीरोका—ऐसे लोगोंका है जिनका चरित्र पवित्र हो और जिन्हे कोई स्वार्थ सिद्ध नहीं करना हो। यदि इस दिशामें आप पूरे नही उतरते हैं तो जिन लोगोंमे आप काम कर रहे हैं, यदि वे आपके साथ अभद्र व्यवहार करे तो मैं उन्हे दोष नही दूँगा। क्योंकि उन्होंने अहिंसाका व्रत नही लिया है।

धनसे भी हमें कोई बहुत सहायता नही मिलेगी। आप जानते हैं कि १९३५ में मैं इन्दौरमें साहित्य-सम्मेलनका प्रधान बननेको इस शर्तपर तैयार हुआ था कि स्वागत समितिको गैर-हिन्दी प्रान्तोमें और विशेषकर दक्षिण भारतमें हिन्दी-प्रचारके लिए १,००,००० रुपया एकत्रित करना चाहिए। मेरी इच्छा निमन्त्रणको स्वीकार करनेकी नही थी, पर जमनालालजी स्वागत-समितिके जमानती बन गये। समिति वह राशि एकत्रित नही कर सकी, वस्तुतः उसने तब एक तरहसे कुछ भी एकत्रित नहीं किया। परन्तु अगले वर्ष कोई २२,००० रुपये एकत्रित किये गये। जमनालालजीने अब २५,००० रुपये खुद अपनी जेबसे दिये हैं, और कानपुरके स्वर्गीय कमलाजीके धर्मस्व-निधिसे ७५,००० रुपयेका उन्हें वचन मिला है। इस तरह धनकी कमी नही है। पर धन क्या कर सकता है? वर्धा रुईका महज एक केन्द्र था जहाँ रुई ओटनेके कुछ कारखाने थे। जमनालालजीकी आकांक्षा इसे एक सांस्कृतिक और राष्ट्रीय गतिविधियोका केन्द्र बनानेकी थी। इसलिए उन्होंने यहां महिला-आश्रम, एक हाईस्कूल, हिन्दी प्रचार समिति, वर्तमान प्रशिक्षण विद्यालय, बुनाई विद्यालय, ग्राम कार्यकर्ता प्रशिक्षण विद्यालय, एक धर्मशाला आदि की स्थापनामें सहायता दी। परन्तु इन संस्थाओसे, धनसे अधिक हमें चरित्रकी आवश्यकता है। और इस कार्यमें मैं आपसे आज प्रात. उसी की माँग करने आया हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-७-१९३७

४३२. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको[1]

८ जुलाई, १९३७

गांधीजी : मेरी ताकमें यहाँ [भी] आ पहुँचे? तुम बड़े बटमार हो!

संवाददाता : मन्त्रि-पद आजमानेकी इस नई नीतिके उद्‌घाटनके अवसरपर क्या आप कांग्रेसको कोई सन्देश दे रहे हैं?

गां० : कांग्रेस कार्य-समितिके प्रस्तावमें सब-कुछ है। उसमें वह सन्देश और कार्यक्रम है जिसका कांग्रेसियोंको और देशको अनुसरण करना है।

उनसे पूछा गया कि आश्वासनकी माँगके जनक होनेके कारण, आपने कलके निर्णयसे दिल्लीमें अपनाई गई नीतिका मेल किस तरह बैठाया। इसपर गांधीजीने फिर कहा :

प्रस्तावमें इसपर विचार किया गया है। मुझे और कुछ नहीं कहना है।

मैंने उनका ध्यान जब इस तथ्यकी ओर खींचा कि अब आप गाँवमें अपने एकान्तवासका एक वर्ष पूरा करने जा रहे हैं, तो गांधीजीने कहा :

सेगाँवका मेरे लिए एक जबरदस्त आकर्षण है और मेरी इच्छा वहाँ अनिश्चित काल तक रहनेकी होती है।

मैंने यूरोपकी परिस्थिति, हथियारोंकी होड़ और युद्धके खतरेका उल्लेख किया और पूछा कि आप अहिंसाके संदेशवाहक हैं; क्या [ऐसी स्थितिमें] आप गाँवका एकान्त छोड़कर बाहर नहीं आयेंगे; मानव-जातिकी सेवाके लिए अहिंसाके सन्देशको विश्व-भरमें नहीं फैलायेंगे।

यह सब सुननेमें बड़ा अच्छा लगता है; पर मैं उस कार्यके लायक नहीं हूँ। तुम मुझे मेरी शक्तिसे अधिक गहराईमें ले जाना चाहते हो।

बाकी बातचीत तेज चलनेके बारेमें होती रही। गांधीजीने कहा कि औसत देहाती आदमी, चाहे मौसम अच्छा हो या बुरा, आराम और सहूलियतसे लम्बा रास्ता तय कर लेता है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-७-१९३७

१. गांधीजीने संवाददाताको यह भेंट साढ़े पाँच बजे सुबह सेगाँवसे वर्धा जाते हुए रास्तेमें दी थी।

४३३. वैधानिक शपथका भावार्थ

श्री किशोरलाल मशरूवाला लिखते हैं :

मुझे भय है कि वैधानिक शपथके सम्बन्धमें गांधीजीका अभिप्राय[1] अभी लोग अच्छी तरह नहीं समझ पाये हैं। अलबत्ता, कानूनी और नैतिक शपथमें तो हमें भेद नहीं करना चाहिए। लेकिन कानूनी और धार्मिक शपथमें भेद हो सकता है। मालूम होता है कि गांधीजी धार्मिक शपथ उसे कहते हैं जिसे कोई मनुष्य ईश्वरके नामपर लेता है। यह शपथ या तो उसकी ही बनाई हुई होती है या वह उसे अपने धर्मगुरु या धर्म-ग्रन्थोंके आज्ञानुसार लेता है। अगर शपथ उसीकी बनाई हुई है तो उसके प्रकट और अप्रकट सम्पूर्ण अर्थको वह खुद ही ठीक-ठीक जानता है और वह उन्हीं अर्थोंसे बँधा होता है, दूसरे किसीके बताये अर्थोंसे नहीं। यह सवाल उसके और उसकी अन्तरात्मा या ईश्वरके बीचकी बात है कि उसने शपथको निभाया है या नहीं। पर अगर शपथ उसने अपने धर्मगुरु या किसी धर्म-ग्रन्थके आज्ञानुसार ली है तो यही माना जायेगा कि उनका बताया अर्थ — प्रकट और अप्रकट — उसने स्वीकार किया है और अगर वे उसे कह देते हैं कि तुम बरी हो, तो वह बिलकुल बरी है। उस शख्सकी राय कोई मूल्य नहीं रखती जो उन धर्म-गुरुओं और धर्म-ग्रन्थोंको तो नहीं मानता, पर शपथकी केवल भाषा पढ़कर कह देता है कि यह तो भंग हो गई है।

कानूनी शपथ वह है जिसे किसी विशेष व्यक्तिने नहीं बल्कि उस विधानसभाने बनाया है जिसके मातहत वह व्यक्ति वस्तुतः है। उस शपथका वास्तविक अर्थ केवल उतना ही होगा जो उस विधानसभाने निश्चित किया हो। अतः शपथके वास्तविक अर्थके सम्बन्धमें अगर कोई सन्देह पैदा हो तो उस विधानसभाका अथवा इस विषयमें जिनको अधिकार दे दिया गया हो, उन न्यायालयोंका निर्णय ही प्रामाणिक माना जायेगा। हाँ, प्रसिद्ध वकीलोंकी राय भी मान्य होगी, पर वह अन्तिम नहीं होगी। सन्देहकी स्थितिमें उपर्युक्त दो का ही प्रमाण सर्वोपरि होगा। इस प्रकार निश्चित किये गये अर्थके अनुसार जो व्यक्ति उस शपथका पालन कर लेगा, वह केवल कानूनकी दृष्टिसे ही नहीं बल्कि नैतिक दृष्टिसे भी बरी हो जायेगा।

१. देखिए पृ० ३६८-७०।

शपथके रचयिताओं अथवा उनके द्वारा मनोनीत प्रवक्ताओंने नहीं, बल्कि सामान्य लोगोंने अपने मनका अर्थ उस शपथमें जोड़ दिया है, इसीलिए राजनिष्ठाकी शपथके अर्थके विषयमें इतनी भ्रान्ति पैदा हो गई है। सामान्यजन जो अर्थ लगाते हैं, सम्भव है उसका कोई इतिहास हो, पर फिर भी उसे प्रामाणिक तो नहीं माना जा सकता। यह प्रतीत होता है कि सामान्य जनोंकी दृष्टिसे तो शपथका अर्थ है राजाके व्यक्तित्वके प्रति वह श्रद्धापूर्ण एकनिष्ठा, जिसके कारण शपथ लेनेवाला राजाके लिए अपने प्राण तक सहर्ष उत्सर्ग कर दे। मालूम होता है, उसका यह भी खयाल है कि एक बार शपथ लेनेपर आदमी जीवन-भरके लिए उसमें बँध जाता है। किन्तु मुझे बताया गया है कि विधानके जानकारों और कानूनके प्रसिद्ध पण्डितोंके मतानुसार उपर्युक्त ये दोनों धारणाएँ गलत हैं। उनकी राय तो यह है कि शपथके केवल यही मानी हैं कि जब तक शपथ लेनेवाला उस शपथके अधीन है (अर्थात् उस शपथको बनानेवाली संस्थाका सदस्य है) तब तक वह राजाके खिलाफ शस्त्र धारण नहीं करेगा और न ही उसकी हत्यामें शरीक होगा। हाँ, विधानकी आज्ञा हो, तो बात दूसरी है। क्योंकि वैधानिक तरीकेसे वह भी सम्भव है। विधानके अनुसार विधानसभाओंको यह हक है कि वे उस शपथमें जो चाहें संशोधन करें या उसे बिलकुल रद भी कर दें; राजाको सिंहासनसे हटा दें या उसके शिरच्छेदका भी हुक्म दे दें। पर अगर विधानसभाको यह मंजूर न हो, तो विधानसभाका कोई भी सदस्य, जिसने वह शपथ ली है, राजाके खिलाफ तब तक हथियार नहीं उठा सकता, जब तक कि वह विधानसभासे अलग नहीं हो जाता।

गांधी सेवा-संघके सदस्यकी हैसियतसे, जिसने सत्य और अहिंसाकी प्रतिज्ञा ले रखी है, वह तो किसी भी हालतमें राजाके प्रति हिंसात्मक विचारोंको भी अपने दिलमें स्थान नहीं देगा। इसलिए ऊपर बताये अर्थके अनुसार राजनिष्ठाकी शपथ लेनेमें उसे कोई नैतिक आपत्ति हो ही नहीं सकती। जब तक वह विधानसभाका सदस्य है, तब तक, यदि वह वैध उपायोंसे स्वाधीनता प्राप्त करना चाहे तो, पूर्ण स्वराज्यको अपना लक्ष्य बनानेमें उसे कोई नैतिक बाधा नहीं हो सकती। हाँ, अगर वह दूसरे उपायोंका अवलम्बन लेना चाहता है, तो विधानसभासे त्यागपत्र देकर वह वैसा भी कर सकता है। सदस्यता त्याग देनेके बाद वह शपथ उसके लिए बाधक नहीं हो सकती। फिर विधानके पण्डितोंका तो यह भी मत है कि अगर सदस्य चाहें कि विधानको बिलकुल पलट दिया जाये और इसमें जरूरत हो तो हिंसासे भी काम लिया जाये तो वे ऐसा भी कर सकते हैं बशर्ते कि इसमें विधानसभाकी अनुमति हो। गांधी सेवा-संघके सदस्य इन उपायोंसे काम नहीं ले सकते; इसलिए नहीं कि वे विधानसभाके सदस्य हैं बल्कि इसलिए कि वे 'संघ' के सदस्य हैं।

अतः यह बात सही नहीं है कि शपथके कानूनी या नैतिक पहलू एक-दूसरेसे टकराते हैं।

धार्मिक और कानूनी शपथके बीच मेरे बताये भेदको यह स्पष्टीकरण बिलकुल साफ कर देता है, इसलिए मैं इसका हृदयसे समर्थन करता हूँ। पर एक मित्रका, जिन्होंने इस स्पष्टीकरणको पढ़ लिया है, अभी तक समाधान नहीं हुआ। उनका कहना है कि शपथके बनानेवालेका भाव चाहे जो हो, उसके अर्थके विषयमें अन्तिम निर्णय तो उसीका माना जाना चाहिए जो शपथ लेता है। और इसलिए उसे यह आजादी मिलनी चाहिए कि वह चाहे तो शपथ ले, और न चाहे तो न ले। यद्यपि ऐसे व्यक्तिको यह अधिकार है कि वह जो चाहे करे, किन्तु यदि उसका अर्थ, शपथके प्रणेता ने जिस भावसे वह शपथ बनाई है, उसके विपरीत जायेगा तो इसका कोई समर्थन नहीं कर सकेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-७-१९३७

४३४. शिक्षाप्रद आँकड़े

डॉ० सैयद महमूदसे एक बार बातचीतके दौरान मैंने यह कहा था कि अखिल भारतीय चरखा संघके रजिस्टरमें मुसलमान कतैयों, बुनकरों और धुनियोंकी संख्या बहुत अधिक है। मैंने यह बात संघके कामकी आम जानकारीके आधारपर कही थी। यह कुछ महीने पहलेकी बात है। परन्तु पहले सम्प्रदायवार रजिस्टर रखने या खादीके निर्माणकी विभिन्न प्रक्रियाओंमें लगे लोगोंकी जातिका पता लगानेका कभी कोई इरादा नहीं था। इसलिए आँकड़े तैयार करने में कुछ समय लगा। जो आँकड़े तैयार हुए हैं, वे आम तौरपर डॉ० महमूदके आगे व्यक्त की गई धारणासे मेल खाते हैं। आँकड़े इस अंकके पृ० १७१ पर दिये जा रहे हैं।[1]

इसीको मैं जन-साधारणसे, वे चाहे किसी भी जाति या धर्मके हों, जीवन्त सम्पर्क कहता हूँ। यदि कार्यकर्ता अपने कामके प्रति सच्चे हैं, तो सम्पर्क अवश्य टिकाऊ होगा। इसका परिणाम भारतके गाँवोंमें हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच अटूट सम्बन्धके रूपमें भी फलित होना चाहिए। अभी तक उन्होंने किसी एक ही संस्थाके अधीन समान उद्देश्यसे विचारपूर्वक और स्वेच्छासे काम नहीं किया था। अब उनमें प्रबुद्ध और हार्दिक एकता स्थापित होनेकी पूरी सम्भावना है। नई योजनासे, जिसमें कारीगरोंके हितोंको ही प्रधानता दी गई है, यह काम बहुत आसान हो जाना चाहिए। नई दिशा देनेमें सम्पर्क अब पहलेसे बहुत अधिक वास्तविक हो गया है। कतैयोंको, जिनकी संख्या संघमें सम्बद्ध कारीगरोंमें सबसे अधिक है, नियमित रूपसे प्रशिक्षण दिया जा रहा है। हर कतैयेपर अलगसे ध्यान दिया जाता है और उसे यह सिखाया जाता है

१. यहाँ नहीं दिये गये हैं।

कि बेहतर औजारोंको बेहतर ढंगसे कैसे काममें लाया जा सकता है। बहुतोंकी मजदूरी तिगुनी और चौगुनी तक हो गई है। इस नई योजनाका परिणाम कार्यकर्ताओंके लिए व्यक्तिगत रूपसे और पूरे राष्ट्रके लिए क्या होगा, अभी तो यह कहना मुश्किल है। पर एक परिणाम स्पष्ट है। ये कारीगर अब शोषित वर्गके लोग नहीं रहे। ये लोग आज अबोध होते हुए भी अखिल भारतीय चरखा संघके मुख्य हिस्सेदार हैं, और शीघ्र ही उसके प्रबुद्ध नियन्ता हो जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १०-७-१९३७

४३५. पत्र: अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
१० जुलाई, १९३७

प्रिय पगली,

ऐसा लगता है कि इधर कुछ दिनोंसे मैंने तुम्हारी बिलकुल ही उपेक्षा की है। आशा करता हूँ कि तुम्हें मेरा तार[1] मिल गया होगा। शायद खबर तारसे भी पहले पहुँच गई होगी। तुम्हारे लिए तो इतना ही काफी होना चाहिए कि मैं भूला नहीं। जवाहरलालका रवैया बराबर बहुत अच्छा रहा। जब भी कठिनाईयाँ उपस्थित हुई, उनके मनकी स्वभाव-सिद्ध निर्मलता प्रकट हुई और हमारी कठिनाइयाँ हल हो गईं। वे वास्तवमें वीर योद्धा हैं—'एकदम निर्भय और निष्कलुष'। मैं उन्हें जितना ज्यादा जान रहा हूँ, उनके प्रति मेरा प्रेम उतना ही बढ़ता जाता है। मौलाना और उनके साथ मेरी एकाधिक बार लम्बी बातचीत हुई। अगले साल उनकी जगहको भरना बहुत मुश्किल होगा।

रामेश्वरी यहीं है और शायद इस महीनेके अन्त तक मेरे साथ ही रहेगी। वह जमनालालके अतिथि-गृहमें ठहरी है।

आज इससे अधिक नहीं

सस्नेह,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९५) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९५१ से भी

१. देखिए पृ० ४०४।

४३६. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१० जुलाई, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

कल मौलाना साहबसे मेरी लम्बी बातचीत हुई। यदि प्रान्तो में मुस्लिम मन्त्रियो का चयन उनकी सलाहसे करना है तो मेरे विचारसे इस आशयकी सार्वजनिक घोषणा कर देना बेहतर होगा। मौलाना सहमत हैं। यदि तुम्हारे खयालमे कार्य-समितिसे परामर्श लेना चाहिए तो मेरा सुझाव है कि तारसे ले लिया जाये।

मैं आशा करता हूँ कि तुम हिन्दी-उर्दू के विषयमें जल्दी ही लिखोगे।[1]

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० २३५ से भी

४३७. पत्र : मीराबहनको

१० जुलाई, १९३७

चि० मीरा,

इन दिनोमें तुम्हें नही लिख सका हूँ। तुम्हारे पत्र और रेखाचित्र नियमित रूपसे आ रहे है। मैंने उन्हें नन्दलाल बाबूके पास रायके लिए भेजा है।[2] आनेपर तुम्हे मालूम हो जायेगी।

मुझे खुशी है कि डॉ० सेन वहाँ आ रहे हैं। तुम उनसे अपने स्वास्थ्यके विषय में बात करना और अगर वे कभी सेगाँव आना चाहें तो आनेको कहना।

१. जवाहरलाल नेहरूने कांग्रेस पोलिटिकल ऐण्ड इकनॉमिक स्टडीज पुस्तकमालाके लिए "भाषाओंका सवाल" नामक एक निबन्ध लिखा था। गांधीजीने इस निबन्धकी प्रस्तावना लिखी थी। इससे लिये गये उद्धरणों और ३ अगस्त, १९३७ को लिखी गांधीजीकी प्रस्तावनाके लिए देखिए खण्ड ६६।

२. नन्दलाल बोसने प्यारेलालको लिखे अपने पत्र (सी० डब्ल्यू० ६३९३) में लिखा था : "मैंने मीराबहनके रेखाचित्र बड़ी दिलचस्पीसे देखे। कृपया बापूजीको बतायें कि इनमें सच्ची कलाकारकी अन्तर्दृष्टि दिखाई देती है . . . आशा है मीराबहनमें लगन बनी रहेगी"

रामेश्वरी नेहरू यहाँ हैं और शायद महीना-भर रहेंगी।

कार्य-समितिकी बैठकके बारेमें मुझे कुछ कहनेकी जरूरत नहीं है।

मुझे खुशी है कि डॉक्टरने तुम्हें सादे भोजनपर रहनेकी इजाजत दे दी। अखरोट वगैरह तुम्हें नहीं खाना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३९१)से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८५३ से भी

४३८. पत्र: इन्दिरा नेहरूको

१० जुलाई, १९३७

चि० इंदु,

दूसरोंके लिये कैसी भी हो, मेरे लिये तो बहुत आलसी हो। कमला तो कभी भूलती नहीं थी? जवाहरलालने तुम्हारे हाल बताये हैं। ऐसी नाजुक क्यों रहती है? शरीर मजबूत बनना ही चाहीये। मेरी तो उमीद थी कि यहां आवेगी। मुझे सब हाल लिखो। ममी[1] कैसे है? सरुप[2] कहां है?

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे: गांधीजी-इन्दिरा गांधी-करेस्पांडेंस; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४३९. पत्र: अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा

११ जुलाई, १९३७

प्रिय पगली,

मैं तुम्हारे मूर्खतापूर्ण प्रश्नका उत्तर उल्टा तुम्हींसे प्रश्न पूछकर दे रहा हूँ: "क्या कपूरथलामें सभी बेईमान हैं?"

बा को लिखा तुम्हारा पत्र मैंने नहीं देखा।

यह पूछना कितना मूर्खतापूर्ण है कि क्या एक तुम्हारे आ जानेसे बहुत ज्यादा भीड़ हो जायेगी? क्या तुम यही बात मैंनरविला जाते हुए अम्मीसे पूछोगी? जा

१. इन्दिराकी दादी स्वरूपरानी नेहरू।

२. इन्दिरा की बुआ विजयालक्ष्मी पण्डित।

तुम वहाँ अपना अधिकार समझकर जाओगी? तुम्हारे लिए हमेशा ही ६×२ फुट जगह मेरी चटाईके किनारे रहेगी। और दोस्त नवीवरश[1] कहीं भी लेटा रहेगा।

बा को लिखा गया तुम्हारा पत्र बिलकुल सही है। यहाँ तुम बड़ी शीघ्रतासे प्रगति करोगी।

आज लिखनेको और कुछ नही है।

सस्नेह,

जालिम

[पुनश्च:]

आज श्रीमन्‌से, जिसे तुम जानती हो, मदालसाका विवाह हो गया। वह अत्यन्त सुसंस्कृत युवक है। मैं उसे जितना ज्यादा देखता हूँ, उतना ही वह मुझे ज्यादा प्रभावित करता जा रहा है। वह यहाँ नायकम्‌के हाईस्कूलमें है।[2] यदि तुम्हे उसका स्मरण हो तो मदालसा और श्रीमन्‌को पत्र जरूर लिखना। तुम्हें चाहिए कि जमनालालको भी एक पत्र लिखो। तुम चाहो तो मदालसाको एक उपहार भी भेज सकती हो। परन्तु वह मँहगा बिलकुल नही होना चाहिए। यदि यह खद्दर-जैसी कोई चीज हो तो ज्यादा अच्छा होगा।

कनु आज वापस आ गया। वह डाककी इन्तजार कर रहा है।[3]

तुम हिन्दी अच्छी लिख लेती हो। तुम्हारा व्याकरण मेरी निस्वत सम्भवत: ज्यादा सही है। तुम्हारे कानके पास जो धब्बा-सा है, उसका इलाज करनेकी कोशिश करेंगे।

क्या तुम इतना पढ सकती हो?

बापू

[पुनश्च:]

हिन्दीमें कांग्रेसका इतिहास[4] हिन्दुस्तान टाइम्स, दिल्लीमें उपलब्ध है।

मूल अंग्रेजी: (सी० डब्ल्यू० ३७९६) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ७८६७ से भी

१. अमृत कौरके पिता का स्वामीभक्त सेवक, जो उनकी मृत्युके बाद अमृत कौरके साथ रहता था।
२. अभिप्राय मारवाड़ी हाईस्कूलसे है; उन दिनों श्रीलंकाके आर्यनायकम् उसके प्रधानाचार्य थे।
३. साधन-सूत्रमें आगे के दो अनुच्छेद और हस्ताक्षर हिन्दीमें है।
४. पट्टाभि सीतारमैया द्वारा लिखित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका इतिहास।

४४०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

११ जुलाई, १९३७

भाई वल्लभभाई,

नरीमनके मामलेमें आपको चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं। सब ठीक हो जायेगा। अधिक नरीमनका आपको दिया हुआ उत्तर आनेपर लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापूना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०३

४४१. पत्र : निर्मला गांधीको

सेगाँव
११ जुलाई, १९३७

चि० नीमु,

कल ही तुम्हें पत्र लिखकर तैयार रखा था किन्तु डाकमें भेजनेमें देरी हो गई। इस बीच तुम्हारा दूसरा पत्र आ पहुँचा और चितलियाभाईसे भी मुलाकात हो गई।

नर्सका काम सीखनेके लिए इतने साल लगाना उचित नहीं है और विवाहित स्त्री यह काम भली प्रकार कर भी नहीं सकती। घर-गृहस्थी सँभालना और नर्सके रूपमें काम करना, ये दोनों बातें साथ-साथ निभ नहीं सकतीं। नर्सके कामके लिए चौबीसों घंटे तैयार रहना जरूरी होता है। इस कारण तुम्हें मेरी सलाह है कि तुम अंग्रेजी, हिन्दी और सिलाई, ये तीनों अच्छी तरह सीख लो। यह सब तो तुम बम्बई में रहकर या यहीं रहकर सीख सकती हो।[1]

इतना तो जल्दी में [लिखाया]। मैं चाहे जो-कुछ लिखूँ किन्तु तुम्हें जो रुचे वही करना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजरातीसे : निर्मला गांधी पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. इसके बादका अंश गांधीजीके स्वाक्षरोंमें है।

४४२. पत्र : हीरालाल शर्माको

११ जुलाई, १९३७

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला। तुमारी पुस्तक[1] अवश्य भेजो पढने की कोशिश करूंगा। तुमारा काम चलता होगा। मेरा कुछ ऐसा ख्याल है कि तुमारे अगले खतमें कुछ उत्तर देनेकी बात नहीं थी। अमतुस्सलाम यहां है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २६१

४४३. पत्र : मीराबहनको

सेगांव

१२ जुलाई, १९३७

चि० मीरा,

तुम्हारी लम्बी चिट्ठी मिली। यहां आनेके बारेमें तुम्हें चिन्ता नहीं करनी चाहिए। तुम्हें मलेरिया या और दूसरी बीमारियोंके लिए अभेद्य बन जाना चाहिए। मूसलाधार बरसात हो रही है। अलबत्ता, मैं देहातके लिए तरह-तरहकी बातें सोच ही रहा हूँ। परन्तु तुम्हें भी सोचना चाहिए।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च.]

शान्ता यहां है। वह एक या दो सप्ताहमें अपनी मां के पास चली जायेगी। उसे शान्ताकी मौजूदगीकी जरूरत है। डॉ० मेनको मेरी याद दिलाना।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३९२) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८५८ से भी

१. विदेशोंकी यात्राके दौरान हीरालाल शर्माने एक डायरी "लूज लीव्ज फ्रॉम ए सोशलिस्ट डायरी" बना रखी थी। उसकी एक टाइप की हुई प्रतिलिपि वह गांधीजीको उनके अवलोकनार्थ भेजना चाहते थे।

४४४. पत्र : ए० कालेश्वर रावको

१२ जुलाई, १९३७

प्रिय कालेश्वर राव,

यह आपकी कृपा है कि आपने मुझे फल तो भेज दिये पर बिल नहीं भेजे। आपके उपहारके मूलमें जो विचार है उसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ। परन्तु इससे यह कठिन हो जायेगा कि मैं बराबर अपनी माँगें भेजता रहूँ। कुछ भी हो, कृपया चीकू भेजना तो बन्द कर ही दें। उनमें से ज्यादातरमें कीड़े पड़ गये हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री ए० कालेश्वर राव
बेजवाड़ा

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९२०३) से। जी० एन० ९२४६ से भी

४४५. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

१२ जुलाई, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

महादेवने बताया कि सीता[1] आ गई है। आशा है, वह स्वस्थ होगी। उन्होंने यह भी कहा कि जब तक मौसम साफ नहीं हो जाता, शायद तुम नहीं आओगे। यदि ऐसा ही है तो रावके बारेमें क्या करना है? उसके बारेमें मुझे जो विवरण मिल रहे हैं, उन सबसे यही प्रगट होता है कि वह हमारे लिए शोभाका कारण नहीं है। ऐसा लगता है कि वह नुकसान ही करता आ रहा है। कृपया इसकी छानबीन करना।[2]

साथमें भेजे गये निबन्धको पढ़कर बताना कि क्या यह 'हरिजन' में छपने लायक है?

१. भारतन् कुमारप्पाकी पत्नी।

२ देखिए "पत्र : भारतन् कुमारप्पाको", पृ० ३८२ तथा "पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको", १४-७-१९३७ भी।

बेजवाड़ामें दिये गये तुम्हारे अध्यक्षीय भाषण[1]का सारांश उचित समय पर प्रकाशित होगा।

ग्राम-विकासके मामलेमें हमारे . . .[2] मन्त्रियोंका मार्गदर्शन कैसे किया जाये, इस विषय पर विचार करना।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२१) से।

४४६. पत्र : प्रभावतीको

१२ जुलाई, १९३७

चि० प्रभा,

जयप्रकाशका तार कल मिला। तुम दोनों इस मामलेमें बहादुर हो। रोगी कष्ट भोगता रहे, इसकी अपेक्षा यह अच्छा है कि वह रोगसे जल्दी छुटकारा पा जाये। इस दृष्टिसे मैं तो एक प्रकारसे खुश भी हुआ कि पिताजी[3] चले गये। जब तेरा पत्र आया, तभी मुझे लगा था कि उनके लिए इस बीमारीसे उठ पाना मुश्किल है। अब आगेका कार्यक्रम बताना। यह सब जयप्रकाशको समझा देना। उसे भी एक छोटा-सा पत्र लिख तो रहा ही हूँ।

रामेश्वरीबहन नेहरू यहाँ आई हैं। अभी यही रहेंगी। अमतुस्सलाम त्रिवेन्द्रम चली गई है। उसकी तबीयत अच्छी नहीं कही जा सकती। कनु राजकोटसे आ गया है। कुसुम देसाई अभी यहाँ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४९३) से।

१. खद्दर-संस्थानके दसवें वार्षिक समारोहके अवसरपर कुमारप्पा द्वारा दिया गया अध्यक्षीय भाषण हरिजन, २४-७-१९३७ में "एडवांटेजेज ऑफ बार्टर" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२. मूलमें यहाँ अस्पष्ट है।

३. हरसू दयाल, प्रभावतीके ससुर।

४४७. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

१२ जुलाई, १९३७

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। खर्चका विवरण बिलकुल स्पष्ट है। खर्चके बारेमें मुझे कुछ कहना नहीं है। अमतुस्सलाम राजाजीके साथ त्रिवेन्द्रम गई है। दो-एक दिन लक्ष्मीके साथ रहेगी। उसके त्यागकी शक्तिपर तो मैं मुग्ध हूँ। त्रिवेन्द्रमसे लौटते हुए वह तेरे पास जानेकी इजाजत माँगेगी। मैंने तो इरादा किया है कि इजाजत दे दूँगा। तुझे कोई आपत्ति तो नही है न? तेरे अध्ययनमें उसे खलल नहीं डालने दूँगा। तेरे लिए सूखती रहती है। उसके मनमें तो केवल की जानेवाली सेवाका, और तेरा, इन दो विचारोंके सिवाय तीसरा विचार ही नही उठता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२९) से; सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

४४८. पत्र : एन० एस० हर्डीकरको

सेगाँव (वर्धा)
१३ जुलाई, १९३७

प्रिय डॉ० हर्डीकर,

मेरा अपना विचार तो यह है कि अब चूँकि बम्बई प्रेसिडेन्सीमें कांग्रेसकी सरकार बननेवाली है अत: कोई सार्वजनिक घोषणा न करना ही अच्छा होगा।[1] परन्तु इस मामलेमें भी आपके लिए यही बेहतर है कि जवाहरलाल जो-कुछ कहें, उससे ही आप मार्गदर्शन प्राप्त करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० एन० एस० हर्डीकर
हुबली
(कर्नाटक)

मूल अंग्रेजीसे: एन० एस० हर्डीकर पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. ६ जुलाईके अपने पत्रमें हर्डीकरने गांधीजीसे पूछा था कि क्या वह यह बात प्रकाशित करें कि सरकारसे सेवा-दल भवनको लेनेमें क्या कठिनाइयाँ हैं; देखिए पृ० २४६ भी।

४४९. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

१३ जुलाई, १९३७

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। वसुमतीके बारेमें तो मैंने मजाक किया था। उससे पूछा था, "भाग क्यों गई?" लेकिन उसे जवाब देनेको बाध्य करनेके लिए समय कहाँसे पाता? तुम दोनोंके स्वभाव नहीं मिलते थे, इतना तो मैंने उसके पत्रोंसे जान लिया था। पूरी बात पूछता, तो वह ब्योरेवार बताती, लेकिन मैं पूछूं ही क्यों? पूछूं, तो फिर मुझे तुम्हें लिखना पड़े। हम सब बहुत समय साथ रहे हैं। किसीने कुछ खोया नहीं है। यथाशक्ति सबने एक-दूसरेको लिया-दिया। अतः वसुमतीके बोचासण छोड़नेमें मैं किसीका दोष नहीं देखता। सब अपने स्वभावको एक हद तक ही जीत सकते हैं। इसीलिए 'गीता' एक जगह कहती है, "निग्रह करो" और दूसरी जगह कहती है "निग्रह करनेसे क्या होगा?" रबरको भी एक हद तक ही खींचा जा सकता है। उसे उससे अधिक खींचें तो टूट जाये। अतः हम सबको अपनी शक्तिके अनुसार संयम करना चाहिए और आगे बढ़ते रहना चाहिए। कुसुम मजेमें है। मंजु[1] [की शादी] का कुछ तय हो, तो बताना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ९५

१. गंगाबहन वैद्यकी पौत्री।

४५०. पत्र : नारणदास गांधीको

१३ जुलाई, १९३७

चि० नारणदास,

कनु यहाँ कुशलपूर्वक आ गया है। लगता है, जैसे कभी गया ही नही था। उसके बारेमें अपना अनुभव लिखना।

चिमनलाल-सम्बन्धी पत्रोंका मुझे फिरसे अध्ययन करना है। मेरे पास पड़े हैं, लेकिन मुझे इसके लिए समय ही नहीं मिलता। जल्दी तो कोई है ही नहीं।

छगनलालको लिखा हुआ पत्र पढ़कर उसे देना। उसे रोक सको, तो जरूर रोक लेना। मुझे तो यह अच्छा लगेगा।

हरिजन-शालाके शिक्षकोंको प्रशिक्षण दे रहे हो, यह अच्छी बात है। किसी बातको शास्त्रके रूपमें सिखाने और उसीको उद्योगके रूपमें सिखानेमें अन्तर होता है, यह तो समझते हो न? शिक्षकोंको तो जो सिखाना है, वह शास्त्रके रूपमें सिखाया जा सकता है।

विजयाकी लड़की[1] मजेमें होगी।

किसी निजी शालाका निरीक्षण करनेका अधिकार राज्यको होना तो नहीं चाहिए। लेकिन जहाँ तानाशाही चलती हो, वहाँ अधिकार-अनधिकारकी क्या बात? इसलिए यदि कोई अधिकारी देखने आये, तो उसे सब-कुछ दिखा देना। आया है, तो किस अधिकारके बलपर आया है, यह जान लेना। हमें फिलहाल तो झगड़ा नही करना है। मुझे समाचार देते रहना। सम्भव हो, तो अपना विरोध व्यक्त कर देना।

६८ के अंकका उपयोग करनेमें मुझे तो कोई हर्ज मालूम नहीं होता। यदि किसीकी जयन्ती मनाना उचित हो, तो उसकी उम्रके वर्षके अंकका उपयोग करना स्वाभाविक हो जाता है। भादों वदी बारस को ६८ पूरे होकर मुझे ६९ वाँ लगेगा, या ६७ पूरे होकर ६८ वाँ लगेगा, यह ठीक याद नहीं पड़ता।

यहाँ बरसात ठीक शुरू हो गई है। चार दिनसे सूर्यके दर्शन नहीं हुए।

बापूके आशीर्वाद

१. अरुणा गांधी, नारणदास गांधीकी पोती।

[पुनश्च :]

जमनाको अलग से पत्र नहीं लिखता। लीलावती कहती है, तुम्हारे पास शब्दार्थवाली 'गीता' के गोरखपुर-संस्करणकी बहुत-सी प्रतियाँ हैं। यदि यह बात ठीक हो तो एक प्रति कमलाबाईको देना।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म एम० (एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४५१. तार : टी० एस० श्रीपालको

१४ जुलाई, १९३७

श्री टी० एस० श्रीपाल
ऑर्गनाइजर ऐण्ड लेक्चरार
साउथ इंडियन ह्यूमैनिटेरियन लीग
१३२, मिण्ट रोड, मद्रास-१

धर्मके नामपर पशु-बलि बर्बरता का अवशिष्ट रूप है।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९८७४) से।

४५२. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
१४ जुलाई, १९३७

प्रिय बागी,

डाक्टर का पत्र मैं लौटा रहा हूँ। मैं ऐसा नहीं मानता कि भारतके चावल खानेवाले भागके लोगोंकी बीमारियोंका कारण चावल है। बल्कि कारण यह है कि वे इतने गरीब हैं कि इस मुख्य भोजनके साथ, उत्तरके लोग जो अन्य चीजें लेते हैं, वो वे नहीं ले पाते। यदि हम यह मान लें कि सैकड़ों साल [पहले] उन्हें आवश्यक चीजें खरीदनेकी अबसे ज्यादा सुविधाएँ थीं, तो अवश्य ही वे अबसे अच्छी हालतमें रहे होंगे। पर पहले आँकड़े नहीं रखे जाते थे, इसलिए हमारे निष्कर्ष बहुत-कुछ अटकल पर ही आधारित माने जायेंगे।

श्रीमन् उनके[1] लिए आदर्श पति रहेगा। वह खुद भी इस चुनावसे बहुत खुश है।

१. मदालसा; देखिए पृ० ४१३ भी।

हमारी संस्थाओंमें तुम्हें जो भी चीजें गलत या अनियमित लगें, वे तुम्हें जिम्मेदार लोगोंकी दृष्टिमें लानी चाहिए। तभी तुम राष्ट्रीय बुराईसे निपट सकोगी। यदि तुम्हें फुरसत हो, तो खादी-भण्डारोंके बारेमें अपने विचार तुम्हें अहमदाबादमें शंकरलाल बैंकरको भेजने चाहिए और विशेष रूपसे शिमला-भण्डारके बारेमें अपनी योजनाएँ भी उन्हें बतानी चाहिए। जो काम बेकारके न सही पर कम उपयोगी हैं, उन्हें यदि तुम छोड़ दो तो फुरसत तुम्हें मिल सकती है।

अगर मैं तुम्हारी जगह होता तो हिन्दीके काममें मुसलमानोंके सहयोगके बारेमें परेशान न होता। हम यदि सच्चे हैं और हमारा कोई प्रयोजन शकके योग्य नहीं है, तो वे सहयोग करेंगे।

सप्रेम,

तुम्हारा,

डाकू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९६) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९५२ से भी

४५३. पत्र: जे० सी० कुमारप्पाको

१४ जुलाई, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

नलिनका एक पत्र तुम्हें इसके साथ भेज रहा हूँ। शिकायत करनेमें तो वह सबसे आगे था। झवेरभाई उसका समर्थन करते हैं। छोटालाल रावको सर्वथा अनुपयुक्त समझते हैं। फिगर उसे बिलकुल अविश्वसनीय मानते हैं। जैसाकि तुम्हें मालूम है, मेरा उसके पक्षमें पूर्वाग्रह था। पर इन सब कार्यकर्ताओंके पुरजोर बयानोंकी मैं उपेक्षा नहीं कर सकता। पारनेरकर उसकी योग्यताके बारेमें कोई राय जाहिर नहीं करते। आन्ध्रसे उसके बारेमें जो अच्छी रिपोर्ट है वह, जहाँ तक मैं जानता हूँ, व्यायाम-सम्बन्धी है, और किसी बातकी रिपोर्ट [वहाँसे] नहीं है। मुझे अभी पंडित हरिहर शर्मा मिले थे। वे मुझे बता रहे थे कि कुछ साल पहले वह उनके अधीन हिन्दी-प्रचारककी हैसियतसे काम करता था और उन्हें उसे अपने कर्तव्यके प्रति लापरवाह और बेईमान तक होनेके कारण बर्खास्त करना पड़ा था। उनका कहना है कि वह इच्छा करे तो कर्मठ हो जाता है; पर सदा वैसा नहीं रह पाता। फिर भी इन सब बातोंसे एक चेतावनी मिलनी चाहिए।[1]

आशा है, ज्वरने तुम्हारी बहनका पीछा छोड़ दिया होगा।

१. देखिए पृ० ४१६ भी।

मन्त्रियोंके मामलेमें मुझे कोई जल्दी नहीं है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२२) से।

४५४. पत्र : के० एफ० नरीमनको

१४ जुलाई, १९३७

प्रिय नरीमन,

मैंने अभी-अभी आपका सबसे ताजा वक्तव्य देखा है। इससे मुझे आश्चर्य और दुःख हुआ है। मुझे नहीं मालूम कि आपको जाँच बन्द करवानेकी सलाह किसने दी। आपने कार्य-समिति द्वारा की जानेवाली जाँच रोक दी थी, क्योंकि आप ही के शब्दोंमें, आपने सोचा कि कार्य-समिति इस मामलेको, जिसमें उसके अपने सदस्य फँसे हुए हैं, निष्पक्ष रूपसे नहीं निपटा सकती। इसलिए मैंने आपसे कहा कि मुझे सरदार की ओरसे आश्वासन मिल गया है कि कार्य-समितिको हवाला दिये बिना आप निष्पक्ष जाँच करवा लें, क्योंकि आपकी शिकायत समितिके विरुद्ध नहीं अपितु उसके किसी विशेष सदस्यके विरुद्ध है। यदि सदस्य राजी हो जाये तो समिति जाँचके बारेमें आपत्ति नहीं कर सकती। अब आप बिल्कुल ही अलग बात कह रहे हैं। क्या आपको इसमें कोई असंगति दिखाई नहीं दे रही है?

फिर यह भी प्रतीत होता है कि आप सरदारके वक्तव्य[1] पर क्रोध प्रकट कर रहे हैं। बात यह है कि उन्होंने यह वक्तव्य मेरी पुरजोर सलाहपर दिया है। मैंने सोचा कि ऐसा करना जनताके प्रति और आपके प्रति उनका कर्तव्य था। वे अब जोरदार वक्तव्य देनेके लिए बाध्य हैं। यदि आप उन वक्तव्योंको नहीं मानते और आपके पास साक्ष्य है, तो आपके लिए रास्ता आसान है। निस्सन्देह आपने मुझे यही संकेत दिया था कि जब आप सरदारको गाड़ीमें सैर कराने ले गये थे तब आपने उनसे मदद माँगी थी। और यदि मुझे सही सूचना मिली है तो आपने दूसरोंसे मदद भी माँगी थी। यदि आपने ऐसा किया तो उसमें गलत क्या था? सरदारके वक्तव्यके प्रत्युत्तरमें दिये गये अपने पहले वक्तव्यमें आपने इस बातको लगभग स्वीकार किया है। फिर भी, यदि आप सरदारपर झूठ बोलनेका आरोप लगाते हैं तो स्वाभाविक है कि अपना मामला आप ही को प्रमाणित करना होगा। याद रखिए, आप अभियोग लगानेवाले या वादी हैं। इसलिए आप अपनी शिकायत या दावा ध्यानपूर्वक तैयार कीजिए और मुझे न्यायाधिकरणके सदस्य या सदस्योंके नाम बताइए।

१. देखिए परिशिष्ट ७।

मैं पुरजोर शब्दोंमें आपको सलाह दूंगा कि आप समाचारपत्रोंको जल्दीमें कोई वक्तव्य न दें। इसका निर्णय करनेके लिए सहमति से एक ऐसा न्यायाधिकरण नियुक्त हो जाना चाहिए जिसकी अधिकार-सीमापर दोनो पक्षोंकी सहमति हो। समाचारपत्रों को बादमें संक्षिप्त वक्तव्य दिया जा सकता है।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

ए० आई० सी० सी० फाइल न० ७४७-ए, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४५५. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

१४ जुलाई, १९३७

भाई वल्लभभाई,

अगर तुम्हारे मनमें मौलानाके लिए शंका या भय था, तो तुम्हें इस बारेमें उन्हे तार नही देना चाहिए था। मैं मानता हूँ कि ऐसा करनेसे हम बहुत-सी आपत्तियोंसे बच जाते। फिर भी, मैं मानता हूँ कि इससे हमें लाभ ही होगा। तुम्हें याद होगा कि मैंने जवाहरलालको भी ऐसी चेतावनी दी थी[1]। और नोटिस जारी करनेका बोझ तो मैंने ही जवाहरलालपर डाला था। मैं जो विचार देता रहता हूँ, उसका असर यदि तुम्हारे मनपर न हो तो अमल करना हरगिज उचित नही। नरीमनको पत्र लिखा है।[2] उसकी नकल साथ है। अब तुम्हें कोई बयान नही निकालना है। मुझे तो आशा है कि यह काम अच्छी तरह निपट जायेगा। जिस बातकी बुनियाद ही न हो, वह कहाँ तक टिकेगी?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-२: सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०३-४

१. देखिए पृ० ४११।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

४५६. पत्र : अमतुस्सलामको

१४ जुलाई, १९३७

चि० अमतुल,

तुमारा खत मिला है। हा तुमको त्रिवद्रम में अच्छा न लगे तो दिल चाहे तब मेरे पास आ जाओ। तुमारे दर्द का सब हाल रामचद्रन को बता दो। वहा कुछ वैद्य लोग अच्छे रहते हैं उसे भी बताना ठीक माना जाय तो बताओ। वहां एक होमीयोपैथिक मिशन भी है। लेकिन सच्ची बात तो तुमारे मन की है। वहा बेचैन रहो तो यहा जल्दी आ जाओ। मेरा विश्वास तो ऐसा है कि पापरम्मा चि० तुमसे इतना प्यार करेंगे कि कममेकम वहां थोडे हफ्ते के लिये शांति रहेगी।

कांति का खत आया है वह इसके साथ है।

बा का पग अच्छा हो रहा है। कैसी पागल है? राजाजीके साथ बातें करने के लिये अवश्य इंटरमें बैठ सकती थीं[1]। लेकिन अब तो हूआ।

सब खर्चका हिसाब रखो। वारी[2] और बाकी[3] के कोई खत नहीं है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८४) से।

४५७. तार : च० राजगोपालाचारीको

श्री राजगोपालचारी
सीनेट हाउस
मद्रास

[१५ जुलाई, १९३७ के पूर्व][4]

निजी। हार्दिक प्रार्थना ही शक्ति का वह स्रोत है जिसका आश्रय मैं समितिको[5] रास्ता दिखाने के लिए लेता रहा हूँ। तुम जानते हो कि

१. राजाजी और अमतुस्सलाम मद्रास एक ही ट्रेनमें गये थे, लेकिन अमतुस्सलाम तीसरे दर्जेमें सफर कर रही थीं।

२ और ३. अमतुस्सलामके भाई।

४. १६ जुलाई को घनश्यामदास बिड़ला को लिखे हुए अपने पत्र में इस तारका उल्लेख करते हुए महादेव देसाईने कहा था: "राजगोपालाचारीने, मन्त्रि-पदकी शपथ ग्रहण करनेके अवसरपर बापूको उन्हें तथा अन्य साथियोंको आशीर्वाद भेजनेके लिखा था।" इंडिया सिंस द एडवेन्ट ऑफ द ब्रिटिश के अनुसार राजगोपालाचारीजी ने कांग्रेस मन्त्रिमण्डलका गठन मद्रासमें १५ जुलाई, १९३७को किया था।

५. कांग्रेस कार्य-समिति।

किस प्रकार मेरी आशाएँ तुमपर ही केन्द्रित हैं। ईश्वर तुम्हारे प्रयत्नोंको सफल बनाये। इसे प्रकाशित मत करना। सदस्योंको सन्देश भेजनेका मुझे कोई अधिकार नहीं है। उसके लिए तुम्हें जवाहरलाल से अवश्य पूछना होगा। प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजीसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल। इन दि शैडो ऑफ दि महात्मा, पृ० २३३ भी

४५८. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
१५ जुलाई, १९३७

दुबारा नहीं पढ़ा

प्रिय जवाहरलाल,

आज चुनावका दिन है।[1] मेरा ध्यान उस ओर है।

परन्तु यह पत्र मैं तुम्हें यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि मैंने कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डलोंके कार्य-कलाप और सम्बन्धित विषयों[2] पर लिखना शुरू कर दिया है। मुझे हिचकिचाहट थी, परन्तु मैंने देखा कि जब मेरी भावनाएँ इतनी तीव्र हो गई हैं तो लिखना मेरा कर्तव्य है। काश! मैं तुम्हे 'हरिजन' के लिए लिखे अपने लेखकी अग्रिम प्रति भेज सकता! यह पत्र महादेव देखेंगे। यदि उनके पास कोई प्रति होगी तो वह भेज देंगे। जब तुम उसे देख लो तो कृपया मुझे बताना कि मैं इसी तरह लिखता रहूँ क्या। इस सारी स्थितिको जिस तरह तुम सँभाल रहे हो उसमें मैं कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहता, क्योंकि देशके कामोंमें मैं तुम्हारा अधिकसे-अधिक योगदान चाहता हूँ। यदि मेरे लिखनेसे तुम्हें कोई परेशानी होगी तो फिर मैं यह समझूँगा कि मेरा लिखना हमारे उद्देश्यके लिए हानिकर है।

आशा है, मौलाना-सम्बन्धी मेरा पत्र[3] तुम्हें मिला होगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे: गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० २३५ भी

१. यहाँ झाँसी के बुन्देलखण्ड चुनाव-क्षेत्र से होनेवाले उप-चुनाव का जिक्र है जिसमें कांग्रेस की ओर से निसार अहमद शेरवानी और मुस्लिम लीग की ओर से रफी उद्दीन अहमद खड़े हुए थे। इसमें कांग्रेस का उम्मीदवार हार गया था। देखिए "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", ३०-७-१९३७।

२. देखिए "कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल", १७-७-१९३७ और "बुनियादी अन्तर", २४-७-१९३७।

३. देखिए ०पृ ४११।

४५९. पत्र : के० एफ० नरीमनको

१५ जुलाई, १९३७

प्रिय नरीमन,

आपने मुझे एक असाधारण पत्र[1] भेजा है। लगता है, आप या आपके मित्र किसी गलतफहमीमें पड़ गये हैं। जहाँ तक मुझे याद है, आपने यह मान लिया था कि तारके बारेमें कार्य-समितिका निर्णय अन्तिम होगा। अन्य आरोपोंके बारेमें तब आपके पास कोई प्रमाण नहीं था। आपके पत्रोंमें भी कोई प्रमाण नहीं मिलता था। इसलिए कार्य-समिति खुद आपके विरुद्ध निर्णय देनेके सिवाय और कुछ नहीं कर सकती थी और न वह आपके लिए कोई न्यायाधिकरण ही नियुक्त कर सकती थी। आपने अपने पत्रमें आरोप लगाते हुए जब एक न्यायाधिकरणकी माँग का अपना अधिकार सुरक्षित रखा, तो फिर आप यह कैसे कह सकते हैं कि आपने वह मामला खत्म कर दिया था? जहाँ तक मैं समझ सकता हूँ, मामला केवल तभी खत्म हो सकता है जब आप, सरदार वल्लभभाईके विरुद्ध आपके पास जो भी प्रमाण हो, वे सब सामने रखें, या साफ-साफ यह स्वीकार करें कि उनके विरुद्ध आपको कोई शिकायत नहीं है। क्या आप यह नहीं देख पाते कि कार्य-समितिका निर्णय, अपनी हद तक पूरी तरह आपके विरुद्ध है? यदि आप उस निर्णयको अन्तिम मानते हैं, तो जब आपके सामने सरदारकी बेहद बदनामी की जा रही है, तब क्या आप चुप बैठे रह सकते हैं? और आपके पत्रोंसे तो ऐसा लगता है कि उसमें आपका भी कुछ हदतक हाथ है।

आपके और मेरे बीच हुई पूरी बातचीतको यदि आप प्रकाशित करें तो उसमें मेरे प्रति कोई विश्वासघात नहीं होगा, बशर्ते कि आप जो-कुछ प्रकाशित करें, उसे पहले मुझे दिखला दें।

१. १४ जुलाईका, जिसमें लिखा था : "मुझपर यह आरोप लगाया जा रहा है कि मैं एक स्वतन्त्र न्यायाधिकरणकी माँग करके कार्य-समितिके दिल्ली और वर्धाके प्रस्तावकी अवज्ञा कर रहा हूँ और उससे कतरानेकी कोशिश कर रहा हूँ। . . आपके साथ . . . हुई बातचीतमें मैंने यह स्पष्ट कर दिया था कि मैं इस तरहके न्यायाधिकरणको केवल तभी स्वीकार करूँगा जब कार्य-समिति उसकी मंजूरी दे देगी। . . . कार्य-समितिके आगे भी मैंने अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी थी कि यदि कार्य-समिति एक स्वतन्त्र न्यायाधिकरणकी मंजूरी नहीं देती है . . . तो मुझे वह नहीं चाहिए। . . . मैंने यह भी स्पष्ट कहा था कि न्यायाधिकरण केवल . . . कार्य-समितिको एक रिपोर्ट दे और वह स्वयं अपना निर्णय घोषित करे। . . . परन्तु सभी सदस्योंकी राय निश्चित रूपसे प्रतिकूल होनेके कारण मैंने मामलेको आगे बढ़ानेका इरादा छोड़ दिया। . . ." देखिए पृ० ४२३-४।

आपके पत्रमें कुछ और भी गलत बातें है, जिनका जिक्र करना जरूरी नही है। पर एक बात मुझे स्पष्ट करनी है। यदि आप ऐसा महसूस करते है कि सरदार ने, किसी भी रूपमें, आपके साथ अनुचित व्यवहार किया है, या कोई अभद्रता की है, तो उनके प्रस्तावको स्वीकार करना आपका अनिवार्य कर्तव्य हो जाता है। यह आपका स्वयं अपने प्रति और अपने उस सहयोगीके प्रति दायित्व है जो पूरे जोरके साथ यह कह रहा है कि उसने कभी भी आपका कोई अहित न तो किया है और न चाहा है और न उसने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे कोई असम्मानजनक व्यवहार ही किया है। आपने मुझसे बार-बार जिस न्यायाधिकरणकी इच्छा व्यक्त की थी, यदि अब आप उसके लिए आग्रह नही करेंगे या सरदारके विरुद्ध अपना आरोप बिना शर्त वापस लिये बगैर उसे छोड़ देंगे, तो यह आपकी एक गम्भीर और बड़ी गलती होगी। कार्य-समितिके आपके सहयोगी तब निश्चय ही इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि केवल आपके मनका सन्देह ही आपको नचा रहा था; यों आपके पास उसकी पुष्टिके प्रमाणमें कुछ भी नहीं था। और इस तरह तो आप अपने आचरणसे सम्बधित उस रायकी पुष्टि कर देंगे जो सरदारने बम्बई-चुनावमें बनाई थी और जो उन्होंने गाड़ीमें उस सैरके दौरान आपको साफ-साफ बता भी दी थी।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

ए० आई० सी० सी० फाइल, नं० ७४७-ए०, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४६०. पत्र: नरसिंह चिन्तामणि केलकरको

१५ जुलाई, १९३७

प्रिय श्री केलकर,

देवने मुझे सलग्न कतरन भेजी है जिसमें आपके भाषणकी रिपोर्ट है।[1] वे चाहते है कि इस रिपोर्टमें मेरे बारेमें जो कतिपय आरोप लगाये गये है, उनका मैं

१. यह रिपोर्ट १०-७-१९३७के ज्ञानप्रकाश में प्रकाशित हुई थी और इसकी ओर गांधीजीका ध्यान महाराष्ट्र प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके प्रधान शंकरराव देवने अपने १४ जुलाईके पत्रमें आकृष्ट किया था। रिपोर्टमें कहा गया था कि न० चि० केल्करने पूनामें तिलक-स्मारक मन्दिरमें एक सभामें बोलते हुए गांधीजीपर ये आरोप लगाये थे कि गांधीजीने सावरकरकी रिहाईके लिए तैयार किये गये प्रार्थना-पत्र पर हस्ताक्षर करना अस्वीकार कर दिया था; कि महाराष्ट्रियोंके प्रति, जिनमें तिलक-जैसे महान नेता भी शामिल हैं, गांधीजीका रुख मित्रतापूर्ण नहीं है; कि पद-स्वीकृतिके लिए गांधीजीका तैयार हो जाना, उनके पिछले निश्चयसे मेल नहीं खाता।

उत्तर दूं।[1] लेकिन ऐसा करनेके पहले मैं चाहूंगा कि इस रिपोर्टके बारेमें आपकी राय जान लूं। क्योंकि मुझे मालूम है कि कितनी ही बार जान-बूझकर और कई बार अनजाने ही सार्वजनिक भाषणोंको तोड़-मरोड़ कर पेश किया जाता है।

आशा है कि आप पूरी तरह स्वस्थ हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१२१) से; सौजन्य: काशीनाथ एन० केलकर

४६१. पत्र: शंकरराव देवको

१५ जुलाई, १९३७

प्रिय देव,

अखबारकी एक कतरनके साथ आपका पत्र मिला। वह कतरन मैंने पुष्टिके लिए श्री केलकरके पास भेज दी है। उनका उत्तर मिलते ही मैं आपको और सूचना दूंगा।

आशा है, आप पूर्ण आरोग्यकी दिशामें बराबर प्रगति कर रहे होंगे।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-७-१९३७

४६२. एक पत्र

१५ जुलाई, १९३७

प्रिय मित्र,

१. श्री महादेव देसाईने मुझे आपका पत्र भेजा है।

२. जबरदस्ती पगड़ी, ईसाइयोंका हैट और तुर्की टोपी गद्दरमें बनाये जा सकते हैं और बनाये गये हैं।

३. जिस प्रकार परमात्माकी सुनिश्चित व्याख्या करना असम्भव है, उसी प्रकार सत्यकी भी असम्भव है। जब मैं सत्यकी सुनिश्चित व्याख्या करने लायक हो जाऊँगा तब सत्य मेरे लिए परमात्मा नहीं रह जायेगा।

१. देखिए "पत्र: शंकरराव देवको", २०-७-१९३७।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

४. मानव-जातिके प्रति मेरे प्रेममें आपकी शंका उचित ही है। सम्भव है, मेरी मृत्युके बाद इस शंकाका समाधान निकल आये।

५. यदि उपवनके सारे फूलोंके बुद्धि होती, तो मैं समझता हूँ कि यह सर्वथा सगत होता कि प्रत्येक फूल सभी फूलोंकी आधारभूत एकताको स्वीकार करते हुए भी अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व कायम रखे।

६. मेरे अन्दर इतनी मौलिकता नहीं है कि मैं जीवनका एक नया तरीका दिखा सकूँ। न ही जीवन-पद्धतिकी मेरी कल्पनासे मुझे कोई असन्तोष है। मैं इस जीवनको पूरी तरह जी सकूँ तो अत्यन्त सुखी होऊँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४६३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१५ जुलाई, १९३७

भाई वल्लभभाई,

नरीमन-सम्बन्धी तुम्हारे पत्र पढ़े। मुझे तो कोई घबराहट नहीं होती। मेरे खयालमें अब तुम्हारे लिए कहनेको कुछ रह ही नहीं जाता। नरीमनको मैंने लिखना शुरू कर दिया है। सार्वजनिक रूपमें कहनेका समय आयेगा, तब जरूर कहूँगा। अखबारोंमें कोई भी अखबार तुम्हारा पक्ष नहीं लेता, इसमें आश्चर्य नहीं। आखिरकार ये अखबार है ही कैसे? उनके पक्ष लेनेसे हम क्यों खुश हों?

मुन्शी और भूलाभाईके बारेमें तो तुम निपट ही लोगे। इसमें मेरा दखल नहीं है। गिल्डर आ जायेंगे तो अच्छा ही माना जायेगा।

मौलानाको तार देनेपर भी जवाब न मिले और इन्तजार करने-जितना समय ही न रहे तो दो बातें सम्भव हैं: एक तो यह कि जो आदमी ठीक जँचे उसकी नियुक्ति कर दी जाये या यह स्पष्ट घोषणा कर दी जाये कि मौलाना जिसे चुन लें वही नियुक्त किया जायेगा। मौलानाकी दीर्घसूत्रता तो हम जानते ही हैं। परन्तु मुस्लिम मन्त्रीका मामला मुश्किल है। मेरा विश्वास है कि मामलेको सार्वजनिक रूपसे . . .[1] के हाथमें रख देनेसे ही हम इस कठिनाईसे बच सकते हैं। तुम जवाहरलालको क्यों नहीं तार कर देते कि मौलानाकी सम्मति भेजें या खुद दूसरा सुझाव दें?

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

तुम भाइयोंको काफी जल्दी-जल्दी भेजने लगे हो[1]। वे हमारे लिए कहीं-न-कहीं जगह सुरक्षित रखेंगे। ईश्वर हमारा यहाँका काम जब पूरा हुआ समझेगा, तब वह हमें पल-भरमें उठा लेगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०४-५

४६४. पत्र : महादेव देसाईको

१५ जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

अगर अभी वहाँ टाइपराइटरकी जरूरत न हो, तो उसे यहाँ भेज दो। शान्ता जब तक यहाँ है, तब तक उससे इसका उपयोग करवाता रहूँगा। कनु भी सीखनेको तैयार हो गया है। आशा तो है कि वह ठीक तरहसे खाना भी शुरू कर देगा। अभी उसे कुछ भी खानेमें अरुचि हो गई है। अगर तुम्हारी इच्छा हो, तो अभीके लिए या हमेशाके लिए यहाँसे एक आदमी भेजूं, जो रोज डाक यहाँसे ले जाये और वहाँसे ले आया करे। मुझे यहाँसे एक आदमी भेजनेमें कोई अड़चन नहीं होगी।

दुर्गाका मामला आसान नहीं है। जब जुकाम हो, तो साँसके साथ भाप खींचनी चाहिए। बीच-बीचमें उपवास भी करना चाहिए। वह कुछ दिन यहाँ आकर क्यों नहीं रह जाती? निर्मला भी आये, जिससे मुझे कोई तकलीफ न उठानी पड़े। मैं तो उसे देखकर केवल उपचार ही बताऊँगा। मुझे विश्वास है कि दुर्गाका शरीर बिल्कुल निरोग हो सकता है। मेरे ही उपचारोंसे होगा, यह मैं नहीं कहता।

कुमारप्पाको अड़चन क्या है? क्या मैं लिखूं? पानी बहना तो बन्द होना ही चाहिए। अगर वे खुद न कर सकें, तो हमें अपने खर्चसे किसी कुशल कारीगरको बुलाकर उसे करवा देना चाहिए। नगरपालिकाके निर्माण-विभागसे कोई आदमी तो मिल ही सकता है। कहो, तो मैं लिखूं। पहलवानके मामलेमें तो मैं निबट लूंगा।

सूर्यबालाका पत्र गवजीभाईके साथ भेज दिया जाये। हरिवदनका तो मैंने उन्हें दिया ही है। यदि यह सम्भव न हो, तो सूर्यबालाका पत्र डाकसे भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५३०) से।

१. आशय वल्लभभाईके सबसे बड़े भाई सोमाभाईके देहान्तसे है। इसके पहले २२ अक्टूबर, १९३३ को उनके दूसरे भाई विट्ठलभाईका देहान्त हो चुका था।

४६५. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

१५ जुलाई, १९३७

चि० काका,

राघवनको लिखा तुम्हारा पत्र उत्तम है। मैं उसे संक्षिप्त कर लेता। राघवनके तर्कका सार यह था कि उस संस्थाको अधीनस्थ माना गया था। अतः तुम्हारा उसे गलतफहमी और दुर्भाग्यपूर्ण कहना, अप्रासंगिक माना जायेगा।

दोनों संस्थाएँ एक-दूसरेसे बिलकुल स्वतन्त्र हैं, यह कहना क्या ठीक है? मद्रासवाली संस्थाको हमने आन्तरिक मामलोंमें पूरी छूट दे रखी है, ऐसा मेरा खयाल है।

तुम्हारा पत्र तो चला ही गया है। यह तो भविष्यके लिए है। "मराठा" काहेके लिए?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७६९२) से।

४६६. पत्र : हरिवदनको

१५ जुलाई, १९३७

भाई हरिवदन,

रोहिणीके साथ तुम्हारे विवाह-सम्बन्धको मैं इसी दृष्टिसे देख पाता हूँ कि गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेपर भी तुम दोनों अपनी आजकी सेवाकी भावनामें वृद्धि करोगे, और अपने इस सम्बन्धको आदर्श स्वरूप दोगे। तुम दोनोंमें यह योग्यता तो है ही। ईश्वर तुम दोनोंको दीर्घायु करे, और तुम्हारी शुद्ध भावनाओंको सफल बनाये। रोहिणीको अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६५०) से।

४६७. पत्र: डाह्यालाल जानीको

१५ जुलाई, १९३७

चि० डाह्यालाल,

मैं यह पत्र दुःख-भरे हृदयसे लिख रहा हूँ। देवशर्माजी[1] ने तुम्हारा एक पत्र भेजा है। दूसरा उन्होंने फाड़ डाला था। तुम्हारा पत्र असत्योंसे भरा है। यह बात तुम देख सको, इसलिए उसे वापस भेज रहा हूँ। इसमें तो, लगता है, तुमने "जानी" ही लिखा था। आरम्भसे ही पत्रमें असत्य लिखा। यदि कांगड़ी-जैसी भव्य संस्थामें जानेकी इच्छा पहलेसे ही थी, तो सीधे ही वहाँ क्यों नहीं पहुँच गये? ईश्वर रामजीकी "संकोचभरी नीति" का वर्णन करके तुमने, जिस संस्थामें रहे हो, उसकी अनावश्यक निन्दा की है। मुझे उनकी ओरसे स्वेच्छासे लिखा गया जो पत्र मिला है, उससे तो कुछ अलग ही ध्वनि निकलती है।

तुम्हारे पहले वाक्यमें अत्यधिक मान व्यक्त किया गया है, जबकि अनुभव तुम वस्तुतः लाचारीका कर रहे थे।

तीसरे वाक्यमें अपना जोड़ ७५+५=१०० देखो! यह कैसी बेहोशी?

तुमने मेरे सामने नम्रताका पालन करनेका निर्णय लिया था। तुममें आवश्यक ज्ञान नहीं है, यह सिद्ध हो चुका है। चौथे वाक्यमें तुमने कितना बड़ा भारी दावा किया है? "इंग्रेजी विज्ञान वगैरह विषयोंमें नये ढंग रंगसे से शिक्षण दे सकूँगा।"[2] क्या तुम यह सिद्ध कर सकते हो? इसके बादका वाक्य भी ऐसा ही भयानक है। जिन संस्थाओंका उल्लेख किया है, उन सबमें, तुम कहते हो "वह भी आचार्य वर्ग [की] हैसियतसे"।[3] यह तो जान-बूझकर असत्यकी पराकाष्ठा हो गई न? "आपको मेरी सेवासे बिलकुल सन्तोष और यश ही मिलेगा"[4], क्या ऐसे शब्द मुँहसे निकालनेका तुम्हें अधिकार है?

पूरे पत्रकी अस्तव्यस्तता तो देखो। अक्षर तक ढंगके नहीं हैं।

तुममें अधीरता कितनी है! "जल्दी" शब्द तीन बार आया है।

देवशर्मा तो राजा आदमी हैं। वे तो तुम्हें लेनेको लगभग तैयार हो गये थे। अभी भी, मैं प्रोत्साहित करूँ, तो ले लें। अगर ऐसा पत्र किसी अनजान आदमीका आये तो मैं उसे रद्दीकी टोकरीमें फेंक दूँ। तुम्हारा पत्र ही तुम्हारी अयोग्यता सिद्ध करता है। तुमने शिक्षणशास्त्रकी तीन परीक्षाएँ कहाँसे पास की हैं? "[मन] सिर्फ

१. गुरुकुल कांगड़ीके आचार्य।

२, ३ और ४. साधन-सूत्रमें उद्धरण हिन्दीमें हैं।

पुण्यभूमिसे पावन होनेके कारण आपके वहाँ [आश्रममें] दौड़ता है।" क्या अभी तक दौड़ रहा है? मेरे इस पत्रसे तुम्हें जितना दुःख होगा, उससे अधिक मुझे हो रहा है। मेरे पास इतना लम्बा पत्र लिखनेका बिलकुल समय नहीं रहता, लेकिन मैं अपनी कलम रोक नही सका। तुम मुझे "पिता" कहते हो और अपनेको मेरा पुत्र बताते हो। क्या इसमें भी पाखण्ड अथवा छल नही है? यों मैं तो तुम्हें त्यागूँगा नही। लेकिन तुम्हें मेरी मदद करनी पड़ेगी। अपना हृदय-परिवर्तन कर लो और २० तारीखको साबरमती पहुँच जाओ। ऐसा अवसर फिर नहीं आयेगा। लेकिन अगर न जाना हो, तो तुम बन्धनसे मुक्त हो।

बापू

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई

४६८. पत्र: ना० र० मलकानीको

सेगाँव, (वर्धा)
१६ जुलाई, १९३७

प्रिय मलकानी,

तुम अपनी चीजोंका विज्ञापन करते हुए 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में एक नोट क्यो नही देते? या पाठकोंके पत्रोके कालममें छपनेके लिए "हिन्दुस्तान टाइम्स' को एक पत्र लिखो और उसमें जनताकी उदासीनताकी शिकायत करते हुए लोगोंको यह बताओ कि वहाँ कौन-कौनसी सुन्दर चीजें मिल सकती हैं।[1] दूसरे, तुम्हारे पास बिक्रीके लिए जो चीजें हैं उनकी तुम एक सूची तैयार करो और उसे दिल्लीके उपयुक्त पतोंपर भेजो। तुम्हे अवश्य कुछ आर्डर मिलेगे। तीसरे, तुम किसी फेरीवालेको नियुक्त कर सकते हो; वह इधर-उधर चक्कर लगाकर तुम्हारी चीजें कमीशनपर बेच सकता है। चौथे, कभी-कभी तुम स्वयं मित्रोंके यहाँ जा सकते हो और उनसे आर्डर प्राप्त कर सकते हो। यदि तुम सिलाई और जूते बनानेकी थोड़ी तकनीक भी सीख लो तो स्वयं माप ले सकते हो।

श्रीमती रामेश्वरी नेहरू तुम्हारी बस्तीके बने स्लीपर या ऐसी ही कोई चीज पहने हुई है। इससे उनके पाँवमें जगह-जगह छाले पड़ गये हैं। यदि तुम अपने ग्राहकोकी सख्या बढ़ाना चाहते हो तो तुम्हारी उद्योगशालाको अव्वल दर्जेकी चीजें तैयार करनी होंगी।

१. ना० र० मलकानी दिल्लीकी हरिजन उद्योगशाला के अधीक्षक थे, जहाँ सिलाई, जूते बनाने, बढ़ईगिरी आदि की शिक्षा दी जाती थी।

तुमने इस बातका भी जिक्र किया है कि प्रान्तोंमें और ज्यादा दिलचस्पीसे काम करनेवाले कार्यकर्ता मिलनेमें कठिनाई होती है। सचमुच यह शिकायत सभी जगह है। हम गुलामीके लायक हैं, इसीलिए तो गुलाम हैं।

जहाँ तक खुद लड़कोंका सवाल है, तुम अपनी उद्योगशालाकी इस तरह व्यवस्था क्यों नहीं करते कि बस्तीके सभी लड़कोंको खपा सको? इस तरह वे अच्छी जीविका कमाने लगेंगे और तुम खूब कार्यकुशल दर्जी, चर्मकार आदि तैयार कर सकोगे।

मुझे इससे आश्चर्य होता है कि तुम एक अध्यापक होकर भी आलस्य अनुभव करते हो और कहते हो कि तुम्हारे पास करने योग्य काफी काम नहीं है। वहाँ अट्ठारह बच्चे हैं जिनके हित और कल्याणके लिए पूर्णतया तुम्हीं उत्तरदायी हो; उनके लिए तुम माँ और बाप दोनों हो। इसलिए, मैं तो यह सोचता था कि तुम्हारे पास इतना काम है कि तुम उसे सँभाल नहीं सकोगे। क्या तुम किसी ऐसे विधुर पिताकी कल्पना कर सकते हो जिसे अट्ठारह बच्चोंकी देखभाल करनी हो और फिर भी उसे आलस्य सताता हो और समय काटना दूभर लगता हो? तुम्हारे पत्रका यह वाक्य बेचैन कर देनेवाला है। मेरा क्या आशय है, यह तुम समझ गये होगे।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२६) से।

४६९. पत्र : मीराबहनको

१६ जुलाई, १९३७

बेचारे सेनके प्रति तुम कठोर हो। निश्चय ही अनेक मांसाहारी ब्रह्मचारियों जैसे ही भले और किसी भी शाकाहारी-जितने संयमी होते हैं। दूधका शरीरपर लगभग मांस-जैसा ही प्रभाव होता है। रोमन कैथोलिकोंमें सैकड़ों या शायद हजारों ऐसे साधु और साध्वियाँ हैं जो आत्म-निग्रहमें किसी भी तरह किसीसे पीछे नहीं हैं। वैयक्तिक जीवनकी पवित्रता या दयालुतापर शाकाहारियोंका एकाधिकार नहीं है। क्या तुम ऐसे शाकाहारियोंसे परिचित नहीं हो जिन्हें यह पता ही नहीं है कि आत्म-निग्रह और मनुष्य या अन्य प्राणियोंके प्रति दया क्या चीज है? कुछ शाकाहारी पति, पिता और पशु-पालक तो ऐसे हैं कि मनुष्य और पशुके प्रति उनसे अधिक क्रूर कोई हो ही नहीं सकता। हमें शाकाहारिताका जड़पूजक और उसे लेकर असहिष्णु नहीं होना चाहिए। शाकाहारितापर हमें इतने गुण नहीं लादने चाहिए कि वह उन्हें वहन ही न कर सके। जब तक हम दूध लेते हैं, तब तक हमारा अपनेको शाकाहारी या निरामिषभोजी कहना गलत है। उनमें भेद तो है, पर तुम्हारा जैसा

खयाल लगता है, वैसी कोई सीमा बाँधना जरूरी नहीं है। केवल सच्ची धर्मपरायणता ही पूरी जीवन-प्रणालीको बदलती है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई

४७०. पत्र: महादेव देसाईको

१६ जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

मणसाली तो आ भी गये और पुराने भी हो गये। घावके ऊपर असिस्टेंट डॉक्टरने कास्टिक लगाया और उसकी मरहम-पट्टी की। उसने यह भी कहा कि तकलीफ शुरू होनेमें रोटी न खाना भी एक कारण हो सकता है। अब यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह बालकृष्णको देखें। मणसाली तो उससे दो दिन बाद जब वह फिर वहाँ जायेगा, तब भी मिल सकता है। अथवा वह यहाँ आकर मिल जाये, तब तो बहुत अच्छा। अथवा मणसाली जब वर्धा जायें, वह तो पूर्व-निर्धारित समयपर ही जाये, जिससे सिविल-सर्जनसे भेंट हो ही जाये।

दुर्गाको कैसे समझाया जाये? कपड़े धोनेके लिए तो अब यहाँ नौकरानी रख ली गई है। धीरे-धीरे ऐसे सब सुभीते यहाँ किये जा रहे हैं। थोड़े दिन रहकर ठीक न लगे, तो वापस चली जाये। यहाँ किसी प्रकारकी रोक-टोक कहाँ है? आये, तो [टाइपराइटर][1] वहींसे लाये। लेकिन अगर वहाँ उसका पूरा उपयोग होता रहता हो, तो यहाँ भेजनेकी जरूरत नहीं है। क्या कनुने सीखना शुरू भी कर दिया?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५३१) से।

४७१. पत्र: पुरातन जे० बुचको

१६ जुलाई, १९३७

चि० पुरातन,

आज तो बस दो ही लकीरें। कांग्रेसके अधिवेशनके समय अपनी इच्छाकी पूर्ति कर लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१७२) से।

१. देखिए पृ० ४३१ और "पत्र: महादेव देसाईको", पृ० ४४८ भी।

४७२. पत्र : महादेव देसाईको

[१७ जुलाई, १९३७ के पूर्व][1]

चि० महादेव,

राधाकृष्णको बिलकुल छुट्टी दे देनी चाहिए थी न? लेकिन मैं इस मामलेको ज्यादा नहीं जानता। तुम उसे ज्यादा जानते हो।

इस बारके तुम्हारे लेखमें तुमने सैयदको जो जवाब दिया था, वह मैंने निकाल डाला है। फिलहाल इन्हें, जो इनके मनमें आये, कहने दो। हम तो, जो हमें लिखना है, बस वही लिखते रहें। इसलिए मैंने टण्डनजीके पत्रमें से जो उद्धरण दिया है, वह देखना। उसके बाद पट्टाभिके भाषणमें से 'हरिजन' के लिए एक उद्धरण दिया है। उसे भी मैंने तुम्हारे लेखमें पिरो दिया है। अगर पसन्द न आये, तो निकाल देना। कहा जा सकता है कि इस बार 'हरिजन' के लिए मैंने राजनीतिक लेख[2] लिखा है; उसे देखना। यदि तुम्हें ठीक न लगे, तो रोक सकते हो। और यदि ठीक लगे, तो उसकी पेशगी नकल प्रेसको दी जा सकती है। मैं ठीक निर्णय नहीं कर पाता। कनुसे आज कैसे बात कर सकता हूँ?

शम्भुदयाल खूब कुनैन खाये, जानवा भी। वे रोटी न खायें। केवल दूध, गुड़ और मिले तो फल। रसीदें वगैरह कल देखूँगा। आज कनुको नहीं रोक सकता।

मुझे नहीं लगता कि नरीमनके उत्तरका प्रत्युत्तर देना जरूरी है। उस पत्रमें चुनौतीकी गन्ध नहीं है। वह नरम पड़ गया लगता है। लेकिन कौन जाने?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५२७) से।

१. तिथिका निर्धारण हिन्दी-उर्दू विवाद के विषयपर अशरफको भेजे गये पुरुषोत्तमदास टंडन के पत्र परसे तथा हरिजन सम्मेलन, बहरामपुरमें दिये गये पट्टाभि सीतारमय्याके भाषण परसे, जो महादेव देसाई के "वीकली लेटर" के अन्तर्गत **हरिजन**, १७-७-१९३७ में प्रकाशित हुआ था, किया गया है।

२. देखिए अगला शीर्षक; "बुनियादी अन्तर", २४-७-१९३७ भी।

४७३. कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल

मन्त्रिपद ग्रहण करनेके मामलेमें चूँकि कांग्रेस कार्य-समिति तथा कांग्रेसी लोगोंने अपने-आपको मेरी रायसे प्रभावित होने दिया है, इसलिए मेरे लिए शायद सर्व-साधारणको यह बताना जरूरी है कि पद-ग्रहणके सम्बन्धमें मेरी क्या कल्पना है और कांग्रेसके चुनाव-घोषणा-पत्रको ध्यानमें रखते हुए पद-ग्रहण करके क्या-क्या किया जा सकता है। यह बात शायद पाठकोंको उस मर्यादासे बाहरकी मालूम पड़े जो कि मैंने स्वयं 'हरिजन' के लिए बना रखी है; लेकिन इसके लिए मुझे माफी माँगनेकी जरूरत नहीं है। वजह बिलकुल साफ है। भारत सरकार अधिनियम हिन्दुस्तानकी आजादीके लिए बिलकुल नाकाफी है, यह आम तौरपर सभी मानते हैं। मगर इसे तलवारके शासनको बहुमतके शासनमें तबदील करनेका एक प्रयास कहा जा सकता है, फिर वह प्रयास कितना ही सीमित और कमजोर क्यों न हो। तीन करोड़ स्त्री-पुरुषोंके विशाल निर्वाचन-मण्डलका निर्माण करके उसके हाथमें विशाल सत्ता सौंप देनेको हम और कह ही क्या सकते हैं? यह सच है कि इसके अन्तर्गत यह आशा निहित है कि हमारे ऊपर जो-कुछ भी जबरदस्ती लादा गया है, वह हमें धीरे-धीरे अच्छा लगने लगेगा; यानी, अपने शोषणको अन्तमें वस्तुतः हम अपने लिए एक आशीर्वाद समझने लगेंगे। लेकिन तीन करोड़ मतदाताओंके प्रतिनिधियोंकी यदि अपनी सुनिश्चित निष्ठा हो और उनमें इतनी कुशलता हो कि अपने हाथमें आई हुई सत्ताका (जिसमें पद-ग्रहण भी शामिल है) अधिनियम बनानेवालोंके सोचे हुए इरादेको खण्डित कर देनेके उद्देश्यसे उपयोग कर सकें तो यह आशा निष्फल हो सकती है। और ऐसा करना कुछ मुश्किल नहीं है, बशर्ते कि हम कानूनी तौरपर इस तरह इस अधिनियमका उपयोग करें जिस तरहका उपयोग किये जानेकी उन्होंने आशा नहीं की है और जैसा वे चाहते हैं, उस तरह उसका उपयोग न करें।

उदाहरणके लिए, शराबकी आमदनीसे शिक्षाका खर्च चलानेके बजाय शिक्षाको स्वावलम्बी बनाकर मन्त्रिमण्डल तत्काल मद्य-निषेधको अमलमें ला सकते हैं। यह एक चौंका देनेवाली बात मालूम पड़ेगी, लेकिन मैं तो इसे सर्वथा व्यावहारिक और बिलकुल उचित समझता हूँ। इसी तरह जेलोंको सुधार-गृहों और कारखानोंका रूप दिया जा सकता है। उस हालतमें बजाय खर्चीले और ताजीरी महकमोंके वे स्वावलम्बी और शिक्षणात्मक हो जायेंगे। इर्विन-गांधी समझौते[1] के अनुसार, जिसकी कि सिर्फ नमकवाली धारा अब भी कायम है, गरीबोंके लिए नमक मुफ्त मिलना चाहिए; लेकिन

१. देखिए खण्ड ४५, परिशिष्ट ६।

ऐसा है नहीं। अब कमसे-कम कांग्रेस-प्रान्तोंमें तो यह हो ही सकता है। इसी तरह जो भी कपड़ा खरीदा जाये, वह खादीका ही होना चाहिए। शहरोंके बजाय गाँवों और किसानोंकी तरफ अब ज्यादा ध्यान दिया जाना चाहिए। ये तो इधर-उधरके कुछ उदाहरण-भर हुए। ये सब बातें पूरी तरह कानून-सम्मत हैं, मगर इनमें से किसी एकके लिए भी कभी प्रयत्न तक नहीं किया गया।

इसके बाद मन्त्रियोंके अपने निजी आचरणका सवाल आता है। कांग्रेसी मन्त्री किस तरह अपना फर्ज अदा करेंगे? कांग्रेसके अध्यक्ष तो तीसरे दर्जेमें सफर करते हैं। तब क्या वे 'प्रथम श्रेणी' में सफर करेंगे? इसी तरह कांग्रेस-अध्यक्ष तो खुरदरे और सादा खद्दरके कुर्ते-धोती और बंडीसे ही सन्तोष कर लेते हैं, तब क्या मन्त्री पश्चिमके रहन-सहनके ढंग और पैमानेपर खर्च करेंगे? गत १७ बरसोंसे कांग्रेसी लोगोंने कड़ाईके साथ सादगीका पालन किया है। अतः राष्ट्र अपने मन्त्रियोंसे यही आशा करेगा कि अपने प्रान्तोंके शासनमें वे उसी सादगीका प्रवेश करायें। इसके लिए वे लज्जित नहीं होंगे, बल्कि गर्वका अनुभव करेंगे। भूमण्डलपर हमारा ही राष्ट्र सबसे गरीब है। वह इतना गरीब है कि हमारे लाखों देशवासी अधभूखे रहते हैं। इसके प्रतिनिधि ऐसे ढंग और तौर-तरीकोंसे रहनेका साहस नहीं कर सकते जो उनके निर्वाचकोंके रहन-सहन और तौर-तरीकोंसे मेल न खाते हों। अंग्रेज लोग तो विजेता और शासकके रूपमें आये हैं, इसलिए वे रहन-सहनका ऐसा स्तर रखते हैं जो पराजितोंकी असहाय अवस्थासे बिलकुल मेल नहीं खाता। अतः मन्त्री लोग कुछ नहीं तो गवर्नरों और सरकारी अफसरोंकी नकल करनेसे ही बचे रहें तो वे दिखा देंगे कि कांग्रेसकी और उन लोगोंकी मनोवृत्तिमें कितना अन्तर है। सच तो यह है कि जैसे हाथी और चींटीके बीच कोई साझेदारी नहीं हो सकती, वैसे ही उनके और हमारे बीच भी नहीं हो सकती।

लेकिन कांग्रेसी लोगोंको यह खयाल कभी नहीं करना चाहिए कि सादगीपर उन्हींका ठेका है और १९२० में पतलून और कुर्सी छोड़कर उन्होंने कोई गलती की है। इस सम्बन्धमें मैं अबूबकर और उमरके उदाहरण पेश करूँगा। राम और कृष्ण इतिहाससे पूर्वके नाम हैं, इसलिए उनका यहाँ उदाहरणके रूपमें उपयोग नहीं करूँगा। इतिहासने हमें प्रताप और शिवाजीके अत्यन्त सादगीसे रहनेका हाल भी बताया है। लेकिन इस बारेमें मतभेद हो सकता है कि जब उनके पास सत्ता थी, तब उन्होंने क्या किया? मगर पैगम्बर, अबूबकर और उमरके बारेमें तो कोई मतभेद है ही नहीं। उनके कदमोंपर तो दुनिया-भरकी दौलत मौजूद थी, फिर भी उनका जीवन इतना कठोर सादगीका था कि इतिहासमें वैसी मिसाल मिलना मुश्किल है। हजरत उमर यह कभी पसन्द न करते कि सुदूर प्रान्तोंके उनके नायब खुरदरे कपड़े और मोटे अन्नके सिवा और किसी चीजका इस्तेमाल करें। कांग्रेस-मन्त्री अगर सादगी और मितव्ययताकी उस विरासतको कायम रखें जो १९२० से उन्हें मिली है, तो वे हजारों रुपयेकी बचत और गरीबोंमें आशाका संचार करेंगे और शायद हाकिमोंके रुखको भी बदल दें। मेरे लिए यह कहनेकी तो

शायद ही जरूरत हो कि सादगीका मतलब मैलापन या भद्देपनसे नहीं है। सादगीमें तो ऐसी सुन्दरता और कला है जिसे सादगीके मार्गपर चलनेवाला कोई भी व्यक्ति देख सकता है। साफ-सुथरा और सलीकेदार होनेके लिए रुपये-पैसेकी जरूरत नहीं होती। तड़क-भड़क और आडम्बर तो प्रायः अश्लीलताका ही दूसरा रूप है।

यह सीधा-सादा काम तो यह प्रदर्शित करनेकी भूमिकाके रूपमें होना चाहिए कि नया अधिनियम जनताकी इच्छापूर्ति करनेके लिए बिलकुल नाकाफी है और उसका अन्त करनेके लिए हम दृढ़ताके साथ तुले हुए हैं।

अंग्रेजीके अखबार हिन्दुस्तानको हिन्दू और मुसलमानोंमें विभाजित करनेका सिर-तोड़ प्रयत्न कर रहे हैं। वे, जिन प्रान्तोंमें कांग्रेसका बहुमत है, उन्हें हिन्दू और बाकी पाँच प्रान्तोंको मुस्लिम सूबोंका नाम देते हैं। यह साफ तौरपर गलत है, इसकी उन्हें कभी फिक्र ही नहीं हुई। अतः मुझे इस बातकी बड़ी आशा है कि छः प्रान्तोंके [जहाँ कि कांग्रेसका बहुमत है] मन्त्री उनकी ऐसी व्यवस्था करेंगे जिससे ऐसा कोई सन्देह न रहे। अपने मुसलमान साथियोंको वे बता देंगे कि हिन्दू, मुसलमान, ईसाई या सिख अथवा पारसीके बीच कोई भेदभाव नहीं है। और न सवर्ण और अवर्ण जातिके हिन्दुओंमें ही वे कोई भेदभाव मानेंगे। वे तो अपने हरेक कार्यसे यही जाहिर करेंगे कि उनके लिए सब एक ही भारत-माताकी सन्तान हैं, न कोई ऊँचा है, न कोई नीचा। गरीबी और आबोहवा, बिना किसी भेदभावके सबके लिए समान है और मुख्य समस्याएँ भी सबकी एक-सी ही हैं। और यद्यपि, जहाँ तक हम कार्योंके आधारपर निर्णय कर सकते हैं, वहाँ तक यही कहना होगा कि अंग्रेजी-पद्धतिका लक्ष्य हमारी पद्धतिसे बिलकुल भिन्न है, तथापि दोनों पद्धतियोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले स्त्री-पुरुष मूलतः एक ही मानव-कुटुम्बके हैं। उनको अब एक-दूसरेके सम्पर्कमें आनेका ऐसा अवसर मिलेगा, जैसा पहले कभी नहीं मिला। मानवीय दृष्टिसे मैंने अधिनियमका जो अध्ययन किया है, वह अगर सही है, तो उसके जरिये दो दल, हरेक अपने-अपने इतिहास, अपनी आधार-भूमि और अपना लक्ष्य सामने रखकर एक-दूसरेसे मिलनेके लिए आगे बढ़ते हैं। संस्थाएँ जड़ और आत्मा-रहित होती हैं, लेकिन उन्हें बनानेवाले और उनका उपयोग करनेवाले नहीं। अगर अंग्रेज या अंग्रेजियतमें पले हुए हिन्दुस्तानी और कुछ नहीं तो भारतीय दृष्टिकोणको देख सकें — और कांग्रेसका दृष्टिकोण यह भारतीय दृष्टिकोण ही तो है — तो समझना चाहिए कि कांग्रेसने लड़ाई जीत ली; और तब पूर्ण स्वाधीनता हमें एक बूंद खून बहाये बगैर ही प्राप्त हो जायेगी। मैं जिसे अहिंसात्मक तरीका कहता हूँ, वह यही है। यह चाहे बेवकूफीभरा समझा जाये, या काल्पनिक अथवा अव्यावहारिक, मगर यही वह सर्वोत्तम तरीका है जिसे कांग्रेसियों, अन्य भारतीयों तथा अंग्रेजोंको जानना चाहिए। यह ध्यान रहे कि पद-ग्रहण इसलिए नहीं किया जा रहा है कि किसी-न-किसी तरह नये अधिनियमपर अमल किया जाये। यह तो कांग्रेसके अपने पूर्ण स्वराजका ध्येय सिद्ध करनेकी दिशामें एक ऐसा गम्भीर प्रयत्न-मात्र है जिसमें एक ओर तो खूनी क्रान्ति यानी रक्तपातको बचाया जाये और दूसरी ओर सामूहिक सविनय-अवज्ञाको ऐसे पैमानेपर

करनेसे रोका जाये जिसपर कि अभी तक प्रयत्न नहीं किया गया है। ईश्वर हमारे इस प्रयत्नको आशीर्वाद दे!

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-७-१९३७

४७४. टिप्पणी: रेंटिया जयन्ती उत्सवके अवसरपर[1]

सेगाँव, वर्धा
१७ जुलाई, १९३७

पहले साल दो, दूसरे साल सोलह और तीसरे साल बीस लाख[2] — मैं इसे उत्तम प्रगति मानता हूँ। जो राजकोटके लिए सम्भव है, वह सभी शहरोंके लिए सम्भव हो सकता है। और जो सभीको खादीकी छूत लग जाये, तो "सूतसे स्वराज्य" सहज ही सिद्ध हो जाये। मैं कह सकता हूँ कि चरखे और खादीपर मेरा जो विश्वास बीस वर्ष पहले था, उससे आज बहुत करके, चढ़ा ही है। कमसे-कम वह घटा तो बिलकुल नहीं है।

मोहनदास गांधी

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

४७५. एक पत्र[3]

१७ जुलाई, १९३७

आपके सभी सन्देहों और प्रश्नोंका एक जवाब यह है। किसी व्यक्तिको रामनामका पूरा भरोसा है ऐसा तभी कहा जायेगा जब उसकी श्रद्धा हार्दिक हो। यदि आपका विचार है कि आपने सफलता नहीं पाई, तो निष्कर्ष यही निकलता है कि आपकी प्रार्थना हृदयसे नहीं होती केवल मुखसे निकलती है। इसका यह अर्थ नहीं कि आप सच्चे नहीं हैं बल्कि इसका यह अर्थ है कि आप जो परिणाम चाहते हैं, उससे प्रार्थनाका कुछ सम्बन्ध है और चूँकि अच्छे हिन्दूके नाते आप प्रार्थनामें विश्वास करते हैं, आप समझते हैं कि मुखसे प्रार्थनाका उच्चारण करके ही आपने

१. इस टिप्पणीको गांधीजीकी जन्मतिथिके उत्सवसे सम्बद्ध नारणदास गांधीकी पुस्तिकाके साथ संलग्न किया गया था। देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", १७-७-१९३७ भी।

२. सूतकी लम्बाई, गजोंमें।

३. साधन-सूत्रके अनुसार यह पत्र एक सिन्धी व्यक्तिको भेजा गया था।

प्रार्थनाकी सभी शर्तें पूरी कर दी हैं। मुखसे उच्चारण निस्सन्देह जरूरी है, लेकिन प्रार्थनाका प्रभाव देखना है तो प्रार्थनाको हृदय तक पहुँचना होगा। प्रार्थना हृदय तक पहुँची है या नहीं, इसकी कसौटी इस बातमें है कि मनुष्यको सच्ची मानसिक शान्ति है या नहीं। क्योंकि प्रार्थनाका अर्थ यह नहीं कि आप जो चाहते हैं, वह मिल जाये; बल्कि उसका अर्थ है कि आप हर चिन्तासे मुक्त हो जायें और इस बातसे उदासीन हो जायें कि प्रार्थित वस्तु मिलती है या नहीं।

मैं अपने जीवनसे जो दृष्टान्त दे सकता हूँ, वह यह कि किसी भी कठिन परिस्थितिमें जब भी मुझे सन्देहों या चिन्ताओंने घेरा है तब प्रार्थनाने उन्हें दूर किया है, मेरा अवसाद दूर हो गया है और मुझे शान्ति प्राप्त हुई है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य: नारायण देसाई

४७६. पत्र: एस० अम्बुजम्मालको

१७, जुलाई, १९३७

चि० अम्बुजम[1],

तुम्हारा पत्र और फल आ गये हैं। इस समय तो फल आनेकी बहुत खुशी हुई, क्योंकि उनकी बहुत ज्यादा जरूरत थी। मुझे बम्बईमें अच्छे संतरे या मुसम्बियाँ नहीं मिलतीं। और रोगियोंके लिए या उनम से कुछ-एक के लिए मुझे उनकी जरूरत रहती है। इसलिए जब भी सम्भव हो, तुम मुझे ऐसी ही मुसम्बियाँ भेजा करना। हमारा समझौता बस यह है कि वे काफी सस्ती होनी चाहिए। मैं समझता हूँ कि यदि मैं कीमतकी परवाह न करूँ तो मुझे लगभग सभी फल मिल सकते हैं। लेकिन ऐसा कतई नहीं होना चाहिए। मैंने मुसम्बी ली किन्तु दोसे ज्यादा लेनेकी मेरी हिम्मत नहीं हुई, क्योंकि दूसरे लोगोंको इसकी ज्यादा जरूरत थी।

मैं अब और अधिक नहीं लिखूंगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६१२) से; सौजन्य: एस० अम्बुजम्माल

१. मूलमें यह देवनागरी लिपिमें है।

४७७. पत्र : अगाथा हैरिसनको

१७ जुलाई, १९३७

प्रिय अगाथा,

आशा है, मन्त्रि-पद स्वीकार कर लेनेसे तुम्हारी चिन्ता मिट गई होगी। पर हमारी बढ़ गई है। दोनोंकी परीक्षा है। 'हरिजन' के पृष्ठों पर नजर रखना।

इसके साथ लॉर्ड हैलीफैक्सके लिए एक पत्र है।

तुम्हें अब थोड़ा आराम करना चाहिए।

सस्नेह,

तुम्हारा
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५०२)से।

४७८. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

१७ जुलाई, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

इसके साथ बुलेटिन[1] भेज रहा हूँ, जो पढ़नेमें काफी अच्छा है। मेरा सुझाव है कि एक वाक्य और जोड़ना चाहिए।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२३) से।

१. देखिए खण्ड ६६, "अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ बुलेटिन", ७-८-१९३७।

४७९. पत्र : गुरदयाल मलिकको

१७ जुलाई, १९३७

प्रिय गुरदयाल,

मेरा मन इस दुःखमें तुम्हारे साथ है। जब अभेद्य अन्धकार घिरा हुआ हो उस समय अविचलित रह सकनेपर ही हमारे विश्वासकी पुष्टि होती है। "निर्बलके बल राम"[1] अथवा "जबलग गज बल अपनो बरत्यो, नेक सर्यो नहिं काम"।[2] ये जीवन-अनुभवके कुछ नमूने हैं। और मृत्यु तो 'निद्रा और विस्मृति' के सिवा और क्या है? एक ही बारमें सारे प्रियजनोंकी मृत्यु हो जाये तो भी क्या? 'भलुं थयुं भांगी जंजाल, सहजे भजशे श्रीगोपाल'[3], ऐसा भक्त नरसिंह मेहताने गाया था। लेकिन मैं तो थोथी सान्त्वना ही दे रहा हूँ। लेकिन तुम्हारी शान्ति तो अन्दरसे ही पैदा होनी चाहिए। भजनोंसे, और रामनाम रटनेसे भी कुछ नहीं होगा। दिलमें भक्ति हो तो उसे स्वरकी मदद दरकार नहीं होती। हृदय सच्चाईको ग्रहण कर ले तो काफी है। ईश्वरकी कल्पना बहुत अस्पष्ट भले ही हो, लेकिन सत्यकी नहीं। और सत्य ही ईश्वर है। उसमें विश्वास रखो तो वह दर्शन देगा। ईश्वर तुम्हारे साथ है।

तुम्हारा,

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल

४८०. पत्र : के० एफ० नरीमनको

१७ जुलाई, १९३७

प्रिय नरीमन,

सर गोविन्दराव[4] ने आपको लिखे अपने पत्रकी एक नकल मुझे भेजी है। साथके पत्रमें उनको लिखे आपके पत्रमें से एक उद्धरण है। कार्य-समितिको लिखे आपके पत्रों तथा सर गोविन्दरावको लिखे आपके पत्रसे मैं देखता हूँ कि अपनी उत्तेजनामें, जो आपकी रोजकी बीमारी बन गई है, आप अपना कानूनी विवेक भी खो बैठे हैं। इस बुरे झगड़ेके बारेमें मैं जितना ही ज्यादा सोचता हूँ, उतना ही यह साफ होता जाता है कि आपकी शिकायत बिलकुल काल्पनिक है और आन्दोलन जारी रहने

१ और २. ये दो वाक्य साधन-सूत्रमें हिन्दी में हैं।

३. मूलमें यह वाक्य गुजरातीमें है जिसका अर्थ है कि जंजाल टूट गये यह अच्छा ही हुआ, अब मैं ईश्वरके और निकट होऊँगा।

४. बम्बई उच्च न्यायालयके न्यायमूर्ति गोविन्दराव मडगाँवकर।

देकर आप अपना और जनताके हितका नुकसान कर रहे हैं। मेरी जोरदार सलाह है कि आप कानूनी सलाह लीजिए और अपनी शिकायत सही ढंगसे तैयार कीजिए जिसे हर कोई समझ सके। मैं सर गोविन्दरावके इस कथनका पूरी तरह अनुमोदन करता हूँ कि आपका आरोप इतना अस्पष्ट है कि कोई भी वकील या न्यायाधीश उसे न तो समझ ही सकता है और न उसपर फैसला ही कर सकता है।

अपने सन्दर्भमें आप सरदार वल्लभभाईके इस आरोपका उल्लेख अवश्य करेंगे कि आपने गुप्त रूपसे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष ढंगसे मतदाताओंके मनमें कांग्रेस संसदीय दलके नेताके चुनावके सिलसिलेमें जहर भरा। कितना अच्छा होता कि आप समझ सकते कि आपने कैसे राईका पहाड़ बना दिया है। यह मान लिया जाये कि आप १९३४ में बम्बईके चुनावमें कांग्रेस-उम्मीदवारकी हारसे सर्वथा अनभिज्ञ थे — और फिर भी सरदारका आग्रह यह माननेको है कि आप अनभिज्ञ नहीं थे — और उन्होंने मतदाताओंको आपके विरुद्ध कर दिया, तो भी इस बातको आप एक गम्भीर शिकायतका कारण कैसे बना सकते हैं? यह बातें तो सार्वजनिक जीवनमें होंगी ही। क्या हम अपने साथियोंकी बातों पर अकसर सन्देह नहीं करते और उन सन्देहोंके अनुरूप काम नहीं करते? सर गोविन्दरावको लिखे पत्रमें आपने लिखा है कि आपके दावे उन आरोपोंके कारण पराजित हो गये, जो आपके विरुद्ध थे। क्या एक सार्वजनिक कार्यकर्ताका किसी चीज पर दावा होता है। क्या कांग्रेसके अध्यक्ष-पदपर जवाहरलालका कोई दावा था? वह अपने चुने जानेके लिए चाहे भरसक प्रयत्न करें, लेकिन अपनी हार पर उन्हें सोचते क्यों रहना चाहिए? यदि वे इस बातको उन लोगोंके विरुद्ध शिकायतका मामला बना लें जो उनकी हारके लिए जिम्मेदार थे, तो क्या यह उचित होगा? और फिर भी क्या आप यही नहीं कर रहे हैं, या कुछ और कर रहे हैं?

लेकिन सरदार वल्लभभाई आपके आरोपकी जाँचके लिए तैयार होकर उदारतापूर्वक आगे आये हैं। आप इस बातपर भी बुरा मान रहे हैं और उसे एक अतिरिक्त शिकायत बना रहे हैं। वह आपके बारेमें क्या विश्वास करते हैं, उन्होंने आपको साफ बता दिया है और किसी भी निष्पक्ष न्यायाधीशके सामने वह अपने उस विश्वासके आधार बतानेको तैयार हैं। वे आपको भी और जनताको भी बताते हैं कि उन्होंने कभी किसीको आपके विरुद्ध मत देनेको नहीं कहा बल्कि उल्टे वह तो अपने इस दावे को गलत सिद्ध करनेकी चुनौती आपको देते हैं। वे और अधिक क्या कर सकते हैं? आप चुने नहीं जा सके, यह निश्चय ही किसीका दोष नहीं, स्वयं आपका भी नहीं। बम्बई केवल बम्बई प्रेसीडेन्सी नहीं है। यदि आपको महाराष्ट्र, कर्नाटक और गुजरातका नेतृत्व करनेकी आकांक्षा है, तो यह क्षेत्र अब भी आपके लिए खुला है। सबसे अच्छा रास्ता निःस्वार्थ सेवाका है। और निश्चय ही निराधार उन्मत्ततापूर्ण आन्दोलनका रास्ता, जिसके लिए आपको ही जिम्मेदार ठहराना चाहिए, सही रास्ता नहीं है।

इस आन्दोलनके लक्ष्यको कुछ नुकसान नहीं पहुँचता। सरदारकी कोई चुनाव जीतनेकी महत्वाकांक्षा नहीं है। उन्हें नेतृत्वकी भी आकांक्षा नहीं है। प्रकृतिने उन्हें कुछ गुण दिये हैं और वह उनका उपयोग करते हैं। यदि जनतापरसे उनका असर

हट जाता है तो आप उन्हें समाचारपत्रोंमें जाकर शिकायत करते नहीं पायेंगे। इसलिए आप यह क्यों नहीं समझते कि अन्तमें नुकसान सिर्फ आपका ही होगा। इसलिए जाँच करा लीजिए और एक या कई न्यायाधीश पूरे मामलेको देख लें तथा यदि आप यह नहीं चाहते तो बहादुरीसे सम्मानपूर्वक घोषित कर दीजिए कि आपने ठीकसे चीजोंको तोला नहीं था तथा उनका सही मूल्यांकन नहीं किया था और अब आप साफ देख रहे हैं कि सरदार वल्लभभाई पटेलका आपकी पराजयमें कोई हाथ नहीं था। क्योंकि जहाँ तक मैं देख सकता हूँ आपका पूरा आरोप दरअसल यही है। मैं समझता हूँ कि मैंने बातचीतके दौरान आपको बताया था कि यदि आप मुझे भरोसा दिला दें कि सरदारने मतदाताओंके मनमें जहर भरा था तो कमसे-कम मैं उनसे जो घनिष्ठ सार्वजनिक सम्बन्ध रखे हुए हूँ, वह तोड़ दूंगा। उन्होंने मुझे बार-बार वही कहा जो अपने वक्तव्य[1] में कहा है जो, जैसाकि मैं कहता हूँ, मेरे कहनेपर बनाया गया था।

आशा है आप इस पत्रको एक हितैषी मित्रका पत्र मानेंगे।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

ए० आई० सी० सी० फाइल नं० ७४७-ए, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४८१. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
१७ जुलाई, १९३७

भाई वल्लभभाई,

तुम व्यर्थ दुःखी होते या गुस्सा करते हो। नरीमन्-कांडमें तुम्हारा बयान जल्दी ही निकलना चाहिए था। कार्य-समितिके प्रस्ताव[2] के अलावा सदस्योंसे और क्या आशा रखी जा सकती है? द्वेषभावसे हमले होते रहें, तो उसका क्या उपाय है? नुकसान भी अन्तमें नरीमनके सिवा किसका होगा? हाँ, यह मानता हूँ कि अगर हम गुंडाशाहीके आगे झुक जायें, तो बहुतोंको हानि हो सकती है। परन्तु तुम या दूसरे कोई उसके आगे झुकनेवाले थोड़े ही हो? साथमें नरीमनके नाम मेरे पत्रकी[3] नकल और सर गोविन्दरावके पत्रकी नकल भेज रहा हूँ।

१. देखिए परिशिष्ट ७।

२. १७ मार्च, १९३७ को कार्य-समितिने सम्बन्धित प्रस्तावमें कहा था: "यदि कार्य-समितिको ऐसा माननेका कोई कारण दिख जाता कि चुनावमें किसी ने अनुचित ढंगसे प्रभाव डाला है या चुनाव में सरदार पटेल की ओर से दबाव का उपयोग किया गया है तो समिति स्वयं ही नये चुनाव के आदेश दे देगी।" (बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-११-१९३७)

३. देखिए पिछला शीर्षक।

धीरज और शान्ति न छोड़ना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०५

४८२. पत्र : नारणदास गांधीको

१७ जुलाई, १९३७

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। जयन्तीका तुम्हारा कार्यक्रम काफी कठिन होता जा रहा है। मुझे तो यह ठीक लगता है। जयन्तीके अन्तर्गत 'खादीशास्त्र प्रवेशिका' जैसी कोई छोटी पुस्तिका क्यों न प्रकाशित करो? ऐसा कुछ करना आवश्यक भी है। पुस्तिकाके नीचे मेरी टिप्पणी[1] है।

मैं रामेश्वरी नेहरूको राजकोट भेजनेकी तजवीज कर रहा हूँ। वह आयेंगी या नहीं, यह कुछ दिनमें लिख सकूँगा। ये पंजाबके डाक-विभागके एकाउण्टेण्ट जनरलकी पत्नी हैं, और राजा नरेन्द्रनाथकी पुत्री हैं। खूब कार्यकुशल हैं। त्रावणकोरके हरिजन-आन्दोलनके दौरान उन्होंने वहाँका दौरा किया था। वह शारदा-समितिकी सदस्या थीं। वह विदुषी हैं।

इस पत्रके साथ प्रेमाका एक पत्र भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आवश्यक हो, तो क्या मैं बाहरके कामके लिए तुम्हारी सेवाओंका उपयोग कर सकता हूँ?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५३१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. देखिए पृ० ४४१।

४८३. पत्र : महादेव देसाईको

१७ जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

मैंने शान्ताके यहीं 'टाइप करनेके बारेमें उससे बिना पूछे तुम्हें लिख[1] दिया था। कल उसके साथ खूब बातें कीं; उनमें यह बात भी निकली, तो उसने कहा कि "मैं खुद वहाँ जाकर टाइप कर आऊँगी, और एक दिन महादेवभाईके पास रह भी आऊँगी।" यह बात मुझे बहुत अच्छी लगी। इसलिए वह सोमवारके सवेरे यहाँसे पैदल निकलकर वहाँ पहुँचेगी। वहाँ सवेरे आठके आसपास पहुँच सकेगी। उसे वहीं भोजन कराना। वह कभी ठीक और कभी बीमार रहती है। इसलिए उसे चपाती या पावरोटी ज्यादा न दी जाये। दूध, दही, गुड़, साग और कोई एक फल दिया जा सकता है। पावरोटीका एक टुकड़ा अथवा खाखरी दी जा सकती है। वह खुद ज्यादा लेना चाहे तो और बात है। उसके साथ थोड़ी बात भी करना। वह दुःखी रहती है। इसीलिए मैंने कल उसके साथ घूमते हुए कुछ बातें कीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५३२) से।

४८४. पत्र : सरस्वतीको

१७ जुलाई, १९३७

चि० सरस्वती,

तुमारा खत मिला। अमतुल सलामकी खूब सेवा करो और उनसे हिंदी उर्दू सीख लो। पापरम्मा तो मुझको कभी नहीं लिखेगी? वा अच्छी हो रही हैं। लक्ष्मी-को कभी लिखती है? जल्दी अभ्यासिनी बन जायगी तो जल्दी तुमको मेरे पास आनेकी ईजाजत मिल जायगी।

यह खत पढ़नेमें और समझनेमें कठिनाई लगे तो अमतुल सलामसे पूछो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६१) से। सी० डब्ल्यू० ३४३४ से भी; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

[1]. देखिए "पत्र : महादेव देसाईको", पृ० ४३६।

४८५. पत्र : अमतुस्सलामको

१७ जुलाई, १९३७

चि० अमतुल सलाम,

तुमारा त्रिवेंद्रमका पहला खत मिला। मैंने तो लिखा है ही। अच्छी तरह आराम लो। हां दाक्तर जो कहे वह खाओ। चिंता छोड़ो। कपड़े धोने वगैरेकी जिद छोड़ो। जो कुछ सेवाकी जरूरत है सो नम्रतासे ले लो।

बा अच्छी हो रही है। मुझे कुसुम या लीलावती पंखा करती है। बा ने भी आजसे कुछ न कुछ शरु कर दिया है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८५) से।

४८६. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

१८ जुलाई, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

शंकरन नायर मगनवाड़ी स्कूलमें था और बीमार था। उसकी चिकित्सा-सम्बन्धी परिचर्या, औषधि और आहारपर खर्च करना पड़ा। इस सबका बिल उसे चुकाना है। वह इस समय चर्मशालामें है। रामचन्द्रनसे उसे १० रुपये तो मिल गये हैं। बाकी रकम, वह कहता है, माफ कर दी जाये। तुम क्या कहते हो?

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२४) से।

४८७. पत्र : कनु गांधीको

१८ जुलाई, १९३७

चि० कनु,

तुझे यदि वहाँ अपना खाना स्वयं पकानेकी जरूरत महसूस हो तो जरूर पकाना। किन्तु यदि तू अपने समयके विभाजनकी व्यवस्था पहले की तरह कर सके तो फिर इसकी जरूरत नहीं होगी। जैसा भी हो, भोजनके मामलेमें किसी तरहकी अव्यवस्था मत करना। जब तू यहाँ आयेगा तब हम ज्यादा बातचीत करेंगे। टाइपिंग बहुत तेजीसे सीख लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

४८८. पत्र : महादेव देसाईको

सेगाँव

१८ जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

तुम्हें नरीमनके पत्रकी मेरे द्वारा भेजी गई प्रति मिली या नहीं? मैंने परसों तुम्हें कुछ समय ही नहीं दिया था इसलिए सोचा कि तुम्हें एक प्रति भेज देना ठीक होगा। शान्ता तुम्हारे पास आज ही आयेगी। जब तक वह रहना चाहे, तब तक उसे रखना और उससे पूरा काम लेना।[1]

मैं यहाँसे डाक दो बजे रवाना करनेकी कोशिश करूँगा।

मैं 'सेन्टिनल' एक नजर देख गया हूँ।

शान्ताको जब रवाना करना उचित लगे तब करना। मुझे तो वह सच्चा मोती लगी है। उसके पास पारपत्र है।

आनन्दप्रियका पत्र रोककर तुमने ठीक किया हालाँकि ऐसा करनेकी कोई जरूरत नहीं थी। ऐसे मामलोंमें मेरा काम लेनेका ढंग दूसरा है। अब तो वल्लभभाईका उत्तर आनेपर ही हम इसपर विचार करेंगे। डॉक्टर अपने साथ रक्तचाप मापनेका

१. देखिए "पत्र: महादेव देसाईको", पृ० ४४८।

यन्त्र भी लेता आये। वह चाहे तो मेरे रक्तचापकी जाँच कर ले। मैंने तुम्हारे लेखमें कोई संशोधन नहीं किया है।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५३३) से।

४८९. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१८ जुलाई, १९३७

भाई घनश्यामदास,

तुमारे सब खत ध्यानसे पढता हूं। मुझको लिखनेका समय नहीं मिलता है। लिखनेकी इच्छा भी नहीं होती थी। क्या लिखुं ? प्रतिक्षण हालत बदलती और बनती रहती थी। एसी हालतमें कुछ भी लिखना अयोग्य लगता था। मुझको दूसरोंका लिखना आवश्यक था। क्योंकि सबके लिखनेका असर जो-कुछ पड़ सकता था वह भले पड़े। इसमें तुमारे खतोंका क्या असर होता था मैं नहीं कह सकता। हां, इतना कह सकता हूं कि वहांसे जो खत आते थे उसका असर कम होता था, यहां जो कुछ होता था उसका बहूत। ऐसा कहो मेरी हालत प्रसूताकी सी थी। प्रसूताको भीतर सब कुछ होता है बिचारी उसका वर्णन नहीं दे सकती। अब तो हम जानते हैं क्या हूआ। इतना कहूँ। जवाहरलालने जो-कुछ वरकिंग कमिटीमें कहा और किया वह सबका सब अद्भुत था। यों भी उसका स्थान मेरी नजरमें ऊँचा था ही, अब तो वहूत वढ़ गया है। हमारा मतभेद कायम है। यहीं तो खूबी है।

सच्ची मुसीबत अब पैदा होती है। इतना अच्छा है कि हमारी शक्ति, सच्चाई, हिम्मत, दृढ़ता, हमारा परिश्रम, अभ्यास — इन सब चीजोंपर भविष्य निर्भर है। तुम कर रहे हो वह ठीक है। वहांके अधिकारीवर्ग समझे कि वर्किंग कमिटीके निर्णयमें कुछ भी 'पैंडिंग' नहीं है। हरेक शब्द सार्थ है, हरेकका अमल होनेवाला है। अंतमें, जो कुछ किया है वह ईश्वरके नामसे, ईश्वरके भरोसेसे। अच्छे होंगे, अच्छे रहो।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९८४ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. २४-७-१९३७ के **हरिजन** में प्रकाशित "वीकली लेटर"।

४९०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगांव
१९ जुलाई, १९३७

भाई वल्लभभाई,

५०० रु० के वेतन[1] की बात बहुत ही विचारणीय है। मैं यह नहीं समझ पाता कि ५०० रुपये के अतिरिक्त मकान-भत्ता और निजी सहायक तथा मन्त्रीमें क्या भेद है? लेकिन यदि तुम्हारे विचार अलग हों तो बताना।

नरीमनसे मैं निपट रहा हूँ, यह तुम देख रहे होगे। अब तो सब-कुछ मुझपर ही छोड़ दो। मुझे सार्वजनिक वक्तव्य देनेकी कोई जल्दी नहीं है। तुम अशान्त न हो।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

डाह्याभाई,

यह पत्र; तुम्हारे पिता जहाँ हों, वहाँ तुरन्त पहुँचा देना।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०६

१. १५ मार्च से २२ मार्च तक वर्धा में हुई कांग्रेस कार्य-समिति की बैठक में निम्न प्रस्ताव पारित हुआ था : "जैसाकि मौलिक अधिकार तथा आर्थिक कार्यक्रम सम्बन्धी कराची-प्रस्ताव ने कहा गया था, राज्य से आवास और गाड़ी की सुविधा मुफ्त मिलने के अतिरिक्त मन्त्रियों, अध्यक्षों तथा महाधिवक्ताओं का मासिक वेतन ५०० रुपये से अधिक नहीं होना चाहिए।" कराची-प्रस्ताव के लिए देखिए खण्ड ४५, पृ० ३९२-३।

४९१. पत्र : महादेव देसाईको

[१९ जुलाई, १९३७][1]

चि० महादेव,

इसकी एक-एक नकल राजा[2], राजेन्द्र बाबू, गोविन्दवल्लभ[3], खरे[4], खेर[5] और विश्वनाथदास[6] को भेजना। जवाहर और वल्लभभाईको भी भेजना। कहना कि यह अग्रिम प्रति है। यदि वे इसे रद कराना चाहें, तो तार भेजकर रद करा सकते हैं। लेकिन तुम तो, रद नहीं होगा, ऐसा समझकर इस लेख[7] की नकल पूना भेज देना। यदि इनमें से कोई बुधवारके बाद तार करना चाहे, तो सीधे पूनामें चन्द्रशंकर[8] को करे। उन्हें पूना का पता दे देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४१) से।

१. एस० एन० रजिस्टर से।

२. च० राजगोपालाचारी, मद्रासके प्रधानमन्त्री।

३. गोविन्दवल्लभ पन्त, संयुक्त प्रान्तके प्रधानमन्त्री।

४. डॉ० एन० बी० खरे, मध्य प्रान्तके प्रधानमन्त्री।

५. बी० जी० खेर, बम्बईके प्रधानमन्त्री।

६. उड़ीसा के तत्कालीन प्रधानमन्त्री।

७. देखिए, "बुनियादी अन्तर", २४-७-१९३७।

८. चन्द्रशंकर प्रमाशंकर शुक्ल, जो हरिजनबन्धु का सम्पादन कर रहे थे।

४९२. पत्र : वांदा दिनोव्स्काको

सेगाँव, वर्धा
२० जुलाई, १९३७

प्रिय उमा[1],

तुम्हारा विवरणपूर्ण पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। आशा है अपने भ्रमणके दौरान तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। जब भी इच्छा हो सेगाँव चली आना और जब तक अच्छा लगे, रहना।

सस्नेह,

बापू

श्री उमादेवी
मार्फत श्री एम० फ्रिडमैन
मसूर रोड, बंगलौर शहर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२००) से। सी० डब्ल्यू० ५०९४ से भी; सौजन्य : वांदा दिनोव्स्का

४९३. पत्र : मॉरिस फ्रिडमैनको

२०. जुलाई, १९३७

प्रिय फ्रिडमैन[2],

तो तुमने संन्यास ले लिया है। जब तुम सेगाँव आये तब भी क्या तुम संन्यासी नहीं थे? पर तुम्हारा जो आशय है वह मैं समझता हूँ। सबसे अधिक पददलित लोगोंकी बिलकुल निःस्वार्थ सेवाका तुम्हारा लक्ष्य, भगवान पूरा करे। जब भी अन्तरात्मा कहे यहाँ चले आना।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११९९) से। सी० डब्ल्यू० ५०९५ से भी; सौजन्य : वांदा दिनोव्स्का

१. पोलैंडवासी मॉरिस फ्रिडमैनकी पत्नी वांदा दिनोव्स्काको गांधीजी द्वारा दिया गया भारतीय नाम।

२. पोलैंडके एक इंजीनियर जो २५ जून, १९३६ को सेगाँव आये थे।

४९४. पत्र : शंकरराव देवको

२० जुलाई, १९३७

प्रिय देव,

अब मुझे श्री केलकरका पत्र मिला है। मैंने जो कतरन उन्हें भेजी थी, उसे लौटाना वे भूल गये हैं।[1] इसलिए मैं याददाश्तसे जवाब दे रहा हूँ।

श्री सावरकर की रिहाई के बारेमें जो स्मरण-पत्र तैयार किया गया था मैंने उसपर दस्तखत करनेसे मना कर दिया क्योंकि जो लोग उसे लेकर मेरे पास आये थे, मैंने उन्हें बताया था कि यह सर्वथा अनावश्यक है, क्योंकि नये कानूनके अमलमें आनेके बाद श्री सावरकरकी रिहाई तो हो ही जायेगी चाहे मन्त्री कोई भी हो। और वही हुआ है। सावरकर-बन्धु कमसे-कम यह तो जानते है कि हममें चाहे कुछ सिद्धान्तोको लेकर जो भी मतभेद रहे हो, लेकिन मेरी कभी यह इच्छा नही हो सकती थी कि जेलमें ही पडे रहें।

जब मैं यह कहूँगा कि मेरी ताकतमें जो-कुछ भी था, वह सब मैंने उनकी रिहाईके लिए अपने ढंगसे किया तो शायद डॉ० सावरकर[2] भी मेरी बातका अनुमोदन करेंगे। और बैरिस्टरको शायद याद होगा कि जब पहली बार हम लन्दनमें मिले थे, तब हमारे सम्बन्ध कितने मधुर थे और कैसे जब कोई आगे नही आ रहा था तब मैंने उस सभाकी अध्यक्षता की थी जो उनके सम्मानमें लन्दनमें हुई थी।

स्व० लोकमान्य तिलकके साथ मेरे सम्बन्धोकी बात यह है कि हमारे मतभेद सर्वविदित थे, फिर भी हमारे अच्छे मैत्री सम्बन्ध थे। आखिरकार आप, गगाधरराव देशपांडे और अन्य लोग जो मुझे जानते हैं, वे इस बातकी शायद पुष्टि करेंगे कि लोकमान्यकी ज्वलन्त देशभक्ति, उनकी निर्भीकता, उनका चुम्बक-जैसा व्यक्तित्व और महान विद्वता के प्रति आदरमें मैं किसीसे पीछे नही हूँ।

पद-ग्रहणके बारेमें मैंने अपने कदम वापस नही उठाये हैं। मैंने १९२० में विधान-सभाओंके बहिष्कारकी जो सलाह दी थी, उसपर मुझे कोई प्रायश्चित्त नहीं है। मुझे जरा-सा भी सन्देह नही कि काग्रेसके अलग रहनेसे उनकी झूठी शान जो उन्होने प्राप्त की थी, आधी छिन गई थी। अब मैंने काग्रेसको अपने प्रतिनिधि भेजने और पद-ग्रहण करनेकी जो पुरजोर सलाह दी है, वह सर्वथा नई परिस्थितिमें दी है जो कि उसके बाद सामने आई। सुसगतता की जड-पूजा करने की मूर्खता मैंने कभी नही की।

१. देखिए पृ० ४३८-९।

२. विनायक दामोदर सावरकर के भाई।

वैसे आप इस पत्रको प्रकाशित करनेके लिए आजाद हैं, लेकिन मेरी निजी इच्छा तो यह है कि श्री केलकरने मेरे इरादों तथा दृष्टिकोण का जो क्रूर और गलत अर्थ लगाया है, मैं मौन रहकर उसकी व्यथा सहूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-७-१९३७

४९५. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

२० जुलाई, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

मुझे कालपीके भगवानदासके बारेमें तुमसे बात करनी चाहिए थी। मैंने उनसे कहा था कि जब तक मैं उन्हें न लिखूं, वे न लौटें। क्या तुम्हें उनकी जरूरत है? वे शिक्षक तो अच्छे नहीं लगते। मुझे बताओ कि तुम्हारी रायमें मुझे क्या करना चाहिए। इस बीच अभी-अभी एक पत्र मिला। उसके उत्तरमें मैं लिख रहा हूँ कि वे न आयें।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२५) से।

४९६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२० जुलाई, १९३७

चि० प्रेमा,

तू कैसी अजीब है? तेरा १६ तारीखका पत्र आज २० तारीखको ११ बजे मिला। आज एकादशी हो गई। दशमीको आशीर्वाद[1] कैसे पहुँचाता? मेरा पिछला पत्र तुझे मिल गया होगा। तुझे क्या कहूँ? आशीर्वाद तो हैं ही। आगे बढ़ती ही रह और विजय प्राप्त कर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३९२) से। सी० डब्ल्यू० ६८३१ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. प्रेमाबहन का जन्मदिन आषाढ़ शुक्ल दशमी; १७ जुलाई, १९३७ को पड़ा था।

४९७. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२० जुलाई, १९३७

चि० मणिलाल-सुशीला,

एक पत्र तो श्री कैलेनबैकके साथ भेजा है। लेकिन तब तुम्हारे पत्र मेरे सामने नहीं थे। यदि उमर सेठ[1] के बारेमें जो तू लिख रहा है वह सच हो, तो यह बड़े दुःखकी बात है। उस सम्बन्धमें मेरा लिखना उचित हो, तो मैं लिख भी सकता हूँ। क्या तू चाहता है कि मैं लिखूँ?

रामदास अपनी इच्छासे वहाँ नही गया। मेरी प्रेरणासे गया है। यहाँ उसकी तबीयत ठीक रहती ही नही थी। इसलिए नीमुने मुझे लिखा कि रामदासको दक्षिण आफ्रिका भेजिए। तब मैंने उसे सुझाया। खर्च श्री कैलेनबैकने दिया। मैंने तो रामदाससे यहाँ तक कह दिया है कि यदि उसे वहाँ केवल तबीयत ठीक होने तक ही रहना हो, तो वह वैसा ही करे। देखें, अब क्या होता है। सीता[2] का पत्र अच्छा कहा जा सकता है। लेकिन इसका यह मतलब नही है कि वह गुजराती भूल जाये।

सुशीला आ सके अथवा तुम दोनों आ सको, तो मुझे अच्छा लगेगा। लेकिन वहाँका काम बिगाड़ कर बिलकुल नही। अब तो रामदास वहाँ पहुँच गया है; सोचना, क्या किया जा सकता है।

फीनिक्स ट्रस्टकी बात तो श्री कैलेनबैक समझा देंगे। वे खुद ही नवम्बरमें यहाँ वापस आनेकी सोचते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८६६) से।

१. प्रिटोरियाके उमर झवेरी।

२. मणिलालकी पुत्री; देखिए अगला शीर्षक भी।

४९८. पत्र : सीता गांधीको

२० जुलाई, १९३७

चि० सीता,

तेरा अंग्रेजी का पत्र तो बहुत अच्छा था। क्या ऐसा ही अच्छा पत्र गुजरातीमें नहीं लिखेगी? अथवा गुजराती लिखना आता ही नहीं? कुछ भी हो, अब मुझे पत्र लिखना शुरू किया है, तो समय-समयपर लिखती रहना। वहाँ करती क्या है, इसका विवरण भी दे सकती है।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८६७) से।

४९९. पत्र : एल० आर० डाचाको

२० जुलाई, १९३७

भाई डाचा,

आपका पत्र मुझे महादेवभाईने दिया है। देवीजीने भी मुझसे बात की थी। मलकानीजी ऐसे आदमी नहीं हैं कि किसीका पक्षपात करें। वे तो त्यागकी भावनासे काम करनेवाले सेवक हैं। अब आप वहाँ शान्त मनसे सेवा करें।

मो० क० गांधीके आशीर्वाद

श्री एल० आर० डाचा
सोशल वर्कर
३२२९, लिंगमपल्ली
हैदराबाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ४७४३) से; सौजन्य : एल० आर० डाचा

१. देखिए पिछला शीर्षक भी।

५००. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

२० जुलाई, १९३७

चि० काका,

तुम्हारी चिट्ठी कल ही मिली। इसपर तारीख नहीं है। यह मेरा पत्र मिलने से पहलेकी होनी चाहिए।

टण्डनजीके लिए मेरी राय इस पत्रके साथ है।

आजका लेख अभी पढ़ नहीं सका।

शोलापुरवाली बात तो मैं भूल गया हूँ। तुम जवाब तो दो। फिर जो हो, सो हो। मुझे कुछ याद नहीं आता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०३) से।

५०१. पत्र : महादेव देसाईको

२० जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

आज तो 'हरिजन' के लिए काफी मसाला भेज रहा हूँ। खेरको तार न भेजा हो, तो इस प्रकारका तार भेजो — भेज दिया हो, तो उसे इस तरह सुधार कर भेजो : "तुम्हारा और गुलजारीलालका पत्र मिला। उसकी आपत्ति अलभ्य लगती है। उससे सब प्रकारकी सहायता लो। मेरा सुझाव है, पदको रिक्त रखो और श्रम-विभाग अपने हाथमें ले लो। बापू।"[१]

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

कैलेनबैकका लिफाफा वहीं तैयार करना। मुझे उसका पता याद नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५३४) से।

१. साधन-सूत्रमें तार अंग्रेजी में है।

५०२. पत्र : महादेव देसाईको

२० जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

इस पत्रके साथ डाक भेज रहा हूँ। तुम्हारी चिट्ठी परसे अभी तो नही सूझता कि क्या किया जाये। आगे देखेंगे। बहुत कुछ सामग्री आज पहले ही भेज चुका था, इसलिए यह सब इससे पहले भेजना सम्भव नही था। एक बजे दो लेख भेज सकता था, लेकिन कनुने कहा कि 'हरिजन' की डाक तो रातको जायेगी, इसलिए फिर तीन बजे तक लिखता रहा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५३५) से।

५०३. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगांव, वर्धा
२१ जुलाई, १९३७

चि० कान्ति,

तेरे दोनों पत्र पढ़े। बम्बईमें भी तू अमतुस्सलामके साथ सम्पर्क तो रखे ही था। तेरे कुछ पत्रोंसे भी मैंने देखा कि तू अभी तक उससे चिपटा तो है ही। लेकिन मैं इसमें कोई भी बुराई नहीं देखता। तूने पहले उसपर पागल प्रेम उँडेला; वह तो भूल थी ही, लेकिन उसमें भी कोई मैल नही था। इसलिए तुझे उससे मिलना-जुलना एकदम नही छोड़ना चाहिए। लेकिन तुझे उसे बंगलौर आने देनेकी बिलकुल जरूरत नहीं है। प्रायश्चित्तके रूपमें भी नही। प्रायश्चित करनेको कुछ है ही नहीं। वह बच्ची है, तेरा यह कहना यथार्थ है। अब मेरी तुझे यह सलाह है कि तू ही उसे सीधे लिख कि मैंने तुझसे पूछा था और लिख कि तेरे प्रेममें जो अतिशयता थी, वह तेरी मूर्खता थी। उसका बंगलौर आना तुममें से किसी के लिए भी कल्याणकारी नही होगा, बल्कि उससे तुझे व्याकुलता ही होगी, आदि। यह सब लिख। ठीक-ठीक सुन्दर और लम्बा पत्र लिखना। बाकी मैं सँभाल लूंगा। उसे आघात लगेगा, लेकिन इसमें कोई हर्ज नही। उसे तू पत्र लिखते रहना, परन्तु पोस्टकार्डपर ही। एक कार्डका खर्च हर हफ्ते भले हो। मुझे लिखे गये तेरे पत्र उसने मुझसे माँगे

है। उससे सम्बद्ध तेरा पत्र तो मैं उसे नहीं भेजूंगा; बल्कि वह भेजूंगा, जिसमें तूने उस ईसाईके साथ अपनी बातचीतका वर्णन किया है। मैं अपनी विवेक-बुद्धिका उपयोग करता रहूँगा, और इस प्रकार उसे सन्तुष्ट करूँगा। उसके त्रिवेन्द्रम जानेकी बात बर्दाश्त कर जाना। तू उसपर मुग्ध हुआ, तो उसका कारण मूलतः सुन्दरताकी भावना ही थी। उसका त्याग अवर्णनीय है। बेचारीके बुद्धि नहीं है, और स्वास्थ्य गड़बड़ है। उसका शरीर मजबूत हो जाये, तो मैं उससे बहुत सेवा लेनेकी आशा करता हूँ। उसे एकदम निराश मत कर देना; लेकिन इसका यह अर्थ भी मत लगाना कि मैं भीतर-ही-भीतर चाहता हूँ कि तू उसे बंगलौर आने दे। इस विषयमें तो मैं तेरे निर्णयको सौ फीसदी स्वीकार करता हूँ। यह जवाब मैं वापसी डाकसे भेज रहा हूँ।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२७)से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

५०४. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
२२ जुलाई, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मौलाना साहब एक दिन वर्धा ठहर गये थे और हमारी लम्बी बातचीत हुई। उन्होंने मुझे विधान-सभाके मुस्लिम लीगी और कांग्रेसी सदस्योंके समझौतेका मसविदा दिखाया[2]। मेरे खयालसे यह अच्छा दस्तावेज है। परन्तु उन्होंने मुझे बताया कि तुम्हें तो यह पसन्द है, टण्डनजीको नहीं है। मौलानाके सुझावके अनुसार मैंने इसके विषयमें टण्डनजीको लिखा है। आपत्ति क्या है?

पाँच सौ रुपया वेतन, बड़ी-सी कोठी और मोटरपर कड़ी आलोचनाएँ हो रही हैं।[3] मैं जितना ही सोचता हूँ उतना ही शुरू-शुरूमें ही की जानेवाली इतनी फिजूलखर्ची मुझे बुरी मालूम होती है। इसके बारेमें भी मैंने मौलानासे बातचीत की थी।

इन्दु कैसी है?

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० २३६ से भी

१. देखिए "पत्र : अमतुस्सलामको", २७-७-१९३७ भी।
२. देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", पृ० ४११ भी।
३. देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको" पृ० ४५२ भी।

५०५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२२ जुलाई, १९३७

भाई वल्लभभाई,

ठक्करबापाके पंच-फैसले[1] में से कोई शब्द छूट गया दीखता है। क्या तुमने फैसला पढ़ लिया? अगर रह गये शब्द अर्थको न बदलते हों, तो ऐसा लगता है कि बापाके फैसलेके अनुसार म्युनिसिपैलिटी १८५ आदमियोंको रखनेके लिए बँधी हुई है। फिर भी दिनकररायके पत्रकी बाट देख रहा हूँ। वे भले ही वकीलसे, जो अर्थ निकलता हो, वह कराकर भेजें। मेरे लिए उदारता दिखानेकी बात नही है। परन्तु यदि १८५ वाला अर्थ निकलता हो, तब तो और हो ही क्या सकता हैं? मैं चाहता हूँ कि समय मिल जाये तो तुम वह फैसला पढ़ लो। साथमें नकल भेजता हूँ। मैं जल्दी भी नही मचाऊँगा। लेकिन देर भी नहीं होनी चाहिए।

क्या नरीमन-काड शान्त हो गया?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

फैसलेके ६ठे और १० वें पन्नेपर मैंने जहाँ चिह्न लगाये हैं, उतना ही पढ़ लो तो काफी होगा। इसपर विचार करो। म्युनिसिपैलिटीको १६० रु० वेतन अधिक देना पड़ेगा। परन्तु यदि २५ आदमी घटा दिये जायें, तो वह २५×११=२७५–१६०=११५ रुपये हर माह साफ बचा सकती है। यह अर्थ बापाके फैसलेका हो सकता है? अगर बापाने कही भी संख्या न बाँधी हो, तो यही परिणाम आता है न?

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०६-७

१. देखिए "पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको", पृ० ६३।

५०६. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

२२ जुलाई, १९३७

चि० काका,

शंकरका पत्र आधी बीमारीकी हालतमें पढ़ गया। उसका जवाब और बालके द्वारा भेजी गई नकल इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। पत्र बालको भेज देना। और तुम तो मेरे पत्र-पढ़ोगे ही।

इस मामलेमें मैं तुम्हें कैसे घसीटूं? फिर जैसाकि शंकर मानता है यदि . . .[1] वैसे ही हो तो उन बातो को जान लेना हर तरह से आवश्यक तो है ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७६९६) से।

५०७. तार : अमृत कौरको

वर्धागंज
२३ जुलाई, १९३७

राजकुमारी अमृत कौर
समर हिल
शिमला

सोमवार को तुम्हारी प्रतीक्षा है। प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७९७) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६९५३ से भी

१. नाम नहीं दिया गया है।

५०८. पत्र : अमतुस्सलामको

सेगाँव
२३ जुलाई, १९३७

प्यारी बेटी,[1]

तेरा खत मिला। अभी तो तू वहीं रह। महीना पूरा कर लेना ठीक होगा। बादकी बात फिर सोचेंगे। तू हरिजनोंके कपड़े सीनेका काम कर सकती है। वहाँ काम तो है ही। लेकिन जितना शरीर बर्दाश्त कर सके उतना ही करना।

अगर सरस्वती सचमुच आना चाहे और रामचन्द्रनकी भी इच्छा हो, तो सरस्वतीका आना मुझे अच्छा लगेगा। उसे व्यावहारिक ज्ञान तो यहीं मिलेगा। रामचन्द्रन राजी हों तो वह क्या चाहती है सो मुझे बतायें।

बारी को मैंने १,००० रुपये के बारेमें खत लिखा है कि अगर देना चाहे तो बिना शर्त दे।

बापूकी दुआ[2]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८६)से।

५०९. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२३ जुलाई, १९३७

तेरा पत्र मिला। अपने बारेमें मेरी राय तू जानता है। तू अपनी शक्तिसे बाहरका काम नहीं लेता, और क्योंकि तू सीधा-सादा है, इसलिए जो काम हाथमें लेता है, उसीको सँवार देता है। किन्तु जो क्षेत्र राजनीतिके नामसे पहचाना जाता है, उसमें सदा सर्वाधिक योग्य व्यक्तियोंको उनके योग्य स्थानोंपर नियुक्त नहीं किया जाता। कोई भी नेता इस सिद्धान्तको कार्यान्वित नहीं कर सकता। यह सोचकर तुझे, जो-कुछ हो, उसे बर्दाश्त करना चाहिए। बल्कि तुझसे तो मैं इससे भी अधिककी आशा करता हूँ। ऐसी बातोंका तुझे बिलकुल खयाल ही नहीं करना चाहिए। जो मिले, वह यदि हममें शक्ति हो, तो लें। और कुछ भी न मिले, तो उसका कभी अफसोस न करें। जहाँ सेवाभावके सिवा दूसरी कोई वृत्ति ही नहीं है, वहाँ पदकी आकांक्षा क्या? और तू तो सेवाभावसे ही भरा हुआ है। लेकिन जब तुझे

१ और २. सम्बोधन और हस्ताक्षर उर्दूमें हैं।

भी मोह हो गया है, तो मेरी बात सुन। तू जिस स्थानपर है, वहाँ तू केवल अपनी योग्यतासे ही पहुँचा है। और जो सेवा तू कर रहा है, वह सेवा भी कुछ कम नहीं है। तू मेयर हो जा, और शुभ प्रयत्नोसे अखिल भारतीय क्षेत्रमें प्रवेश कर सके, तो कर। मन्त्री होनेमें तो "जो जोरसे बोलता है, उसके बेर बिकते हैं" वाली कहावत चरितार्थ होती है। न जाने क्यो, लेकिन सारे संसारमें लोग ऐसे पदके लिए तरसते हैं। उम्मीदवार अनेक होते हैं; उनमें से लिये तो कुछ ही जा सकते है। तो ऐसे स्थानोमें तो वे ही लिये जायेंगे न, जिन्हें लिये बिना काम चलेगा ही नहीं? इसलिए तू एक नम्र व्यक्तिके समान अपनी उम्मीदवारी तो जाहिर कर। यहाँ "नम्र" विशेषणका अर्थ समझना। अपनेको उम्मीदवारके रूपमें प्रस्तुत करना बड़ा नाजुक काम है। इसमें जरा भी सीमाका उल्लघन हुआ, कि अपमान हो जाने तककी सम्भावना रहती है। लेकिन उत्तमसे-उत्तम उम्मीदवारी तो मूक सेवा तथा अद्वितीय योग्यता हैं। मनको शान्त कर। दुःख मत मान।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १६५-६

५१०. पत्र : महादेव देसाईको

२३ जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

राजकुमारी सोमवारको ११.३५ की गाड़ीसे आ रही है। साथका पत्र पढ़ना। मैं समझता हूँ, जमनालालजी उस समय वहाँ नही होगे। तुम उसे लेने जाना, और जो जरूरी हो, करना। वह दो दिन रहेगी।

देवराज[1] के बारेमें मैंने अण्णासे बात की है। वह देवराजको लिखेगा। लेकिन आशा कम है।

शकरलाल चाहे तो कल आठ बजे आये, अथवा जब उसे आना हो, आये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५३७) से।

१. गांधीजी का टाइपिस्ट।

५११. पत्र : सरस्वतीको

२३ जुलाई, १९३७

चि० सरस्वती,

तुमारा खत मिला। हां, रामचंद्रन, पापरम्मा, पिताजी और काती पसंद करे तो अवश्य आओ। मुझको तो बहूत ही अच्छा लगेगा।[1]

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१६२) से। सी० डब्ल्यू० ३४३५ से भी; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी

५१२. बुनियादी अन्तर

पुराने और नये राज्य-प्रबन्धमें जो बुनियादी अन्तर है, उसपर विचार कर लेना जरूरी है। इस अन्तरको पूरी तरहसे महसूस करनेके लिए हम एक क्षणके लिए इस अधिनियमकी उन अत्यन्त संकुचित सीमाओंको भुला दें जिनके भीतर रहते हुए कांग्रेसी मन्त्रियोंको अपना काम करना होगा। समझौतेकी दिशामें कांग्रेस जितनी दूर तक जा सकती थी, उतनी दूर तक गयी और उसने पद स्वीकार किया। अब हर कांग्रेसी यह देखे कि दरअसल उसके हाथोंमें शक्ति कितनी आई है। पहले मन्त्रिमण्डलपर गवर्नरोंका नियन्त्रण था, अब कांग्रेसका है। अब वे कांग्रेसके प्रति जिम्मेवार हैं। अपनी प्रतिष्ठाके लिए वे कांग्रेसके ऋणी हैं। गवर्नरों और सरकारी अफसरोंको आज भले ही हम हटा न सकें, फिर भी वे मन्त्रिमण्डलोंके प्रति जवाबदेह हैं। एक हद तक मन्त्रियोंका उनपर प्रभावशाली नियन्त्रण है। इस हदके अन्दर रहते हुए वे कांग्रेसकी, यानी जनताकी शक्तिका संगठन कर सकते हैं, उसे और दृढ़ कर सकते हैं। मन्त्रियोंके कार्य गवर्नरोंके लिए चाहे कितने ही अरुचिकर हों, जब तक वे इस अधिनियमकी मर्यादामें रहेंगे, गवर्नर उनका कुछ भी नहीं कर सकेंगे। और अच्छी तरह परीक्षा करनेपर हमें साफ-साफ दिखाई दे सकता है कि जनता अगर अहिंसक बनी रही तो कांग्रेसके मन्त्रिमण्डलोंके हाथोंमें राष्ट्रके विकासकी दिशामें काम करनेकी अब काफी सत्ता है।

कांग्रेसी मन्त्री इस सत्ताका प्रभावकारी उपयोग कर सकें, इसके लिए जनताको चाहिए कि वह कांग्रेस और उसके मन्त्रियोंको दिलसे सहयोग दे। अगर मन्त्री कुछ

१. देखिए "पत्र : अमतुस्सलामको", पृ० ४६४ भी।

अन्याय करें या अपने कर्तव्यकी अवहेलना करें तो हर आदमी इसकी शिकायत अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके मन्त्रीसे कर सकता है और उसके परिमार्जनकी मांग भी रख सकता है। पर कानूनको कोई अपने हाथोमें न ले।

काग्रेसी लोगोको यह अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि आज सारा मैदान काग्रेसके हाथोमें है। एक भी राजनैतिक दल ऐसा नही जो उसकी सत्ताको चुनौती दे सके। क्योंकि दूसरे दल कभी गाँवोंमें गये ही नही हैं। और न यह काम ही ऐसा है जो एक दिनमें किया जा सके। इसलिए जहाँ तक मै नजर दौडाता हूँ, मुझे तो यही दिखाई देता है कि हमारे मन्त्रियोके लिए — अगर वे ईमानदार, निःस्वार्थ, उद्योगशील और सजग है तथा अपने करोडों भूखो मरनेवाले भाइयोका सचमुच भला करना चाहते है — तो काग्रेसके पूर्ण स्वतन्त्रतावाले ध्येयकी तरफ तेजीसे आगे कदम बढ़ानेके लिए यह बड़ा अच्छा मौका है। नि.सन्देह, इस कथनमें बहुत सत्यता है कि इस नये अधिनियमने राष्ट्र-निर्माणकारी महकमोके लिए मन्त्रियोके हाथोमें कुछ भी पैसा नही छोड़ा है। पर अधिकाशमें यह एक भ्रम ही है कि राष्ट्र-निर्माण केवल पैसेसे ही हो सकता है। सर डैनियल हैमिल्टनके साथ-साथ मै भी यही मानता हूँ कि सच्चा धन सोने-चाँदीके टुकडे नही, बल्कि श्रम-शक्ति है। नोटोके पीछे प्राय· सोनेका आधार होता है किन्तु यह आधार यदि श्रम-शक्तिका हो तो भी, वही काम उतनी ही अच्छी तरह बन सकता है। एक अग्रेज अर्थशास्त्री[1], जो कि हिन्दुस्तानमें एक बडे ऊँचे पद पर रह चुके हैं, लिखते है .

> हिन्दुस्तानको हमारी सबसे बुरी देन है ये महँगी नौकरियाँ। पर जो हुआ सो हुआ। मुझे तो अब कोई स्वतन्त्र वस्तु ढूँढ़कर बतानी होगी। आज जो-कुछ पैसेके लिए किया जा रहा है, वह अब आगे सेवाकी दृष्टिसे होना चाहिए। डॉक्टरों तथा शिक्षकोंको भारी-भारी तनख्वाहें क्यों दी जायें? यह अधिकांश काम सहकारिताके सिद्धान्तके अनुसार क्यों नहीं चलाया जा सकता? आप पूंजीके बारेमें परेशान क्यों होते हैं, जबकि सत्तर करोड़ हाथ काम करनेके लिए तैयार हैं? अगर हम सहकारिताके आधार पर — जोकि समाजवादका एक संशोधित रूप है — काम लें, तो हमें धनकी — कमसे-कम इतने अधिक परिमाणमें — जरूरत नहीं रहेगी।

सेगाँवमें मुझे इसका प्रमाण मिल रहा है। यहाँके चार सौ बालिग निवासी बड़ी आसानीसे एक सालमें १०,००० रुपये कमा सकते हैं, बशर्ते कि वे मेरे बताये मार्गपर चलें। पर वे चलते नही। उनमें सहयोगकी कमी है। वे काम करते हुए बुद्धिसे काम नही लेते, और कोई भी नई बात सीखना नही चाहते। छुआछूत एक बड़ी जबरदस्त रुकावट है। अगर कोई उन्हें लाख रुपये भी दे दे, तो वे उसका सदुपयोग नही कर सकेंगे। पर अपनी इस दशाके लिए वे खुद ही जिम्मेदार नही हैं। जिम्मेदार हम मध्यम-वर्गके लोग है। सेगाँव-जैसी ही हालत और गाँवोकी भी

१. सर जॉर्ज शुस्टर।

समझ लीजिए। पर धीरजके साथ प्रयत्न किया जाये तो उनपर भी सेगाँवकी ही तरह असर पड़ सकता है, चाहे वह बहुत थोड़ा ही क्यो न हो। वैसे, राज्य इस दिशामें एक पाई भी अधिक खर्च किये बिना बहुत-कुछ कर सकता है। सरकारी अधिकारियो का ही उपयोग लोगोको सतानेके बजाय उनकी सेवा करने के लिए किया जा सकता है। ग्रामीणों पर किसी तरहकी जोर-जबरदस्ती करनेकी जरूरत नहीं है। उन्हें ऐसी बातें करनेकी शिक्षा दी जा सकती है जिससे कि वे नैतिक, बौद्धिक, शारीरिक और आर्थिक — सब तरहसे सम्पन्न हो जायें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-७-१९३७

५१३. खादी-पत्रिका

पिछले चार वर्षोंसे वर्धासे एक मासिक पत्रिका निकल रही है, जिसका नाम 'महाराष्ट्र खादी-पत्रिका' है। इसके हर अकमें, महाराष्ट्रमें खादी किस तरह तरक्की कर रही है, इसका वर्णन रहता है। अब तक यह मराठीमें प्रकाशित होती थी। किन्तु अब यह हिन्दीमें भी निकलने लगी है। इसका कारण एक तो इसकी अपनी उपयोगिता है, और दूसरा यह कि अब अखिल भारतीय चरखा-सघने महाकोशलको भी अपनी महाराष्ट्र-शाखामें शामिल कर लिया है। मेरे सामने इसका पहला अक है। श्री जाजूजीके योग्य मार्गदर्शनमे यहाँ अपनी धुनके पक्के कार्यकर्ताओंका एक दल खादी-कार्य कर रहा है। महाराष्ट्रमें खादीने जो भारी प्रगति की है, वह उन्हीके कार्यका परिणाम है। खादी-पत्रिका उसका परिचय हमें देती है। पत्रिकाका वार्षिक चंदा केवल एक रुपया है और एक अंकका मूल्य डेढ़ आना। विज्ञापन नाममात्रको भी नही है। सारी बातें कामकी ही हैं; भरतीका एक अक्षर भी इसमें नहीं मिलेगा। महाराष्ट्र-शाखाके मातहत खादीका जो काम हो रहा है, उसका सीधा-सादा, बिना किसी अतिरंजनाके सच्चा-सच्चा वर्णन इसमें रहता है। चरखा-संघ उन लोगोंके सामाजिक-जीवन तथा आर्थिक स्थितिको सुधारनेका भी यत्न कर रहा है, जो कि उसके मातहत काम कर रहे हैं। इस हफ्ते तो मैं पाठकोंका ध्यान सिर्फ एक महान प्रयोगकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ। महाराष्ट्र चरखा-संघ यह कोशिश कर रहा है कि कताईसे भी आदमी गाँवोमें वही मजदूरी प्राप्त करे जो अन्य कामोसे मिल सकती है। एक आदमीके लिए कमसे-कम आठ आना रोज मजदूरी मिले, यह मैं चाहता हूँ। परतु संक्रमण-कालमें कमसे-कम तीन आने तो जरूर मिले, यह निश्चय हुआ है। अगर खरीदार लोग बुद्धिपूर्वक और देश-सेवाका ध्यान रखकर सहायता करे तो हम इस मंजिल तक अपेक्षासे भी जल्दी पहुँच सकते है। इस समय यह प्रयोग चल रहा है कि कातने-वाले खुद ही अपनी रुई पीज लिया करें। परिणाम अत्यन्त सन्तोषजनक निकला है। सोलह कातनेवालोने दो हफ्ते तक उन पूनियोंसे सूत काता जो दूसरोंकी बनाई हुई थी। इसके बाद एक महीना उन्हें पिंजाईकी शिक्षा दी गई। और फिर वे खुद

अपनी बनाई पूनियोसे सूत कातने लगे। उतने ही दिनोकी दोनो तरहकी कताईकी तुलना यह है :

	पहले	सीखनेके बाद
सूतका वजन	१६१ छटाक	१९८ छटाक
,, अंक	१४$\frac{३}{४}$	१८
मजबूती समता	५५	५९
कताईकी मजदूरी	रु० १२-४-०	रु० २४-०-३

अगर बुद्धिसे काम लिया जाये और साथ ही आदमी जुट जाये तो आमदनी को दूना किस तरह बढाया जा सकता है, इसका यह ज्वलन्त उदाहरण है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-७-१९३७

५१४. पत्र : कन्हैयालाल मा० मुन्शीको

सेगाँव, वर्धा
२४ जुलाई, १९३७

भाई मुन्शी,

तुम्हारा पत्र मिला। क्या इसमें मुझसे उदारताकी आशा की जा सकती है? तुम्हारे ये शाही वेतन, फिर अलगसे तुम्हारे शाही घरोके किराये और वाहन-व्यय, ये सब मेरे गले तो नही उतरते। फिर तुम्हारा वेतन एक स्तरका होगा, और तुम्हारे सचिवका उससे भिन्न और नीचे स्तरका होगा, यद्यपि दोनो एक ही घरके मेहमान होगे। कांग्रेसके झण्डेके नीचे ऐसे भेद क्यों? जब विजयराघवाचारी अध्यक्ष थे, तब मोतीलालजी सचिव थे। यदि हम वेतन देते होते, तो क्या मोतीलालजीको कम देते? मेरे लिए तो यह पहले ही ग्रासमें मक्षिकापात है।

अपनी तबीयत का ध्यान रखना। देखना, बीच-बीचमें क्रिटकिट न चलती रहे। साथियोके क्रोधको अक्रोधसे जीतना।

तुम दोनोको

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६१८) से, सौजन्य : क० मा० मुन्शी

५१५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
२४/२५ जुलाई, १९३७

भाई वल्लभभाई,

नरीमनके बारेमें मुझे जो सूझता है, वह करता रहता हूँ। अब तुम तो इस बातको भूल ही जाओ। चाहे जैसे हमले हो। हम प्रतिष्ठाके भूखे कहाँ हैं? लड़के-लड़कियोंको तो कही जमाना है नही। "कोई निन्दो, कोई वन्दो, कोई कैसो कहो ने।"

अब आनन्दप्रियके बारेमें।[1] मेरे कहनेका अर्थ इसके सिवा और कुछ नही है कि ऐसे काम लेनेके हमारे ढगमें भेद है। यह कौन कह सकता है कि कौन-सा ढग बेहतर है? यह तो परिणामके आधारपर भी नही कहा जा सकता। मेरे ढंगसे कोई परिणाम न निकले या उल्टा दिखाई देनेवाला निकले, तो भी मैं उसे नही त्यागूँगा। उसी तरह तुम अपने ढंगको न छोड़ना। यह तो हृदयकी बात ठहरी। जिसे जो जँचे, वही वह करेगा न? मेरे पत्रोंसे वह सुधर जायेगा, ऐसी आशा मैं नही रखता।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसके बाद यह कि मेरी तबीयत अच्छी ही है। थोड़ा आराम चाहिए, सो ले रहा हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५६०) से।

१. देखिए "पत्र : महादेव देसाईको", पृ० ४५०-१।

५१६. पत्र : महादेव देसाईको

२५ जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

डाक सवा तीन बजे मिली। जानवा तो जल्दी आ गया था, लेकिन बिना डाक लिये। अब जो हो सके, सो करना। मौन धारण करनेकी तुम्हारी प्रार्थना मैं स्वीकार करूँगा। अब मैं बहुत अच्छा हूँ।

शान्ताको लिखा मेरा पत्र पढ़ना। उसपर विचार करना, और यात्रा रद करना चाहते हो, तो कर देना। मेरी तो यही इच्छा है। मैं तो उससे ...[1] सहमत ही हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५३८) से।

५१७. पत्र : महादेव देसाईको

२६ जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

यदि शान्ता आखिर रह जानेका ही निर्णय ले तो उसकी सुविधाओंका ध्यान रखना। उसे घरेलू कामकाजमें कुशल बना लेना, और यह भी देखना कि वह अपनी शक्तिसे अधिक काम न करे। उसे फल बराबर मिले। भोजनके लिए अपने साथ बैठाना। उसका वेतन निश्चित कर देना। वह नियमपूर्वक घूमनेके लिए जाये।

कनुको खूब काम देना। वह टाइप भी सीखे। टाइप करनेको अंग्रेजी देना। छोटेलालसे भी काम लेना।

शहद तुरन्त मँगाना। यहाँ थोड़े ही दिनमें खत्म हो जायेगा।

बालकृष्णको आज यहाँ ला रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५३९) से।

१. साधन-सूत्रमें यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।

५१८. पत्र : मानवेन्द्रनाथ रायको

सेगाँव, वर्धा
२७ जुलाई, १९३७

प्रिय मित्र,

मैं आपकी इस बातसे पूर्णतया सहमत हूँ कि हर कांग्रेसीको अपना मत, जो उसने उचित सोच-विचारके बाद बनाया हो, निर्भीकतासे व्यक्त करना चाहिए। आपने अपने लिए कांग्रेसकी सर्वोत्तम सेवा कर सकनेके तरीकेके बारेमें पूछा है। आप इस संगठनके लिए अभी नये हैं; इसलिए मैं कहूँगा कि आपकी मूक सेवा ही इसकी सर्वोत्तम सेवा होगी।

हृदयसे आपका,

श्री मानवेन्द्रनाथ राय
"इंडिपेंडेंट इंडिया"
बम्बई ४

[अंग्रेजीसे]

पुलिस कमिश्नर्स ऑफिस फाइल नं० ३००१/एच, पृ० २३; सौजन्य. महाराष्ट्र सरकार

५१९. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

२७ जुलाई, १९३७

प्रिय मित्र,

आपके कृपा-पत्र[1] के लिए धन्यवाद।

कुछ समयसे मैं यह सोच रहा था कि मैं आपसे मिलनेकी प्रार्थना करूँ। मैं यह चर्चा करना चाहता था कि खान साहब अब्दुल गफ्फार खाँके सीमा-प्रान्त प्रवेश पर जो प्रतिबन्ध है, क्या उसे हटाया जा सकता है, और क्या मैं भी सीमा-प्रान्तकी यात्रा कर सकता हूँ? मेरे सीमा-प्रान्तमें जानेपर कोई प्रतिबन्ध नहीं है, पर अधिकारियोंकी स्वीकृति प्राप्त किये बिना वहाँ जानेका मेरा कोई इरादा नहीं है।

१. अपने २३ तारीखके पत्रमें वाइसरायने गांधीजीको दिल्ली आकर मिलनेका निमन्त्रण दिया था। अपने असमके दौरेके बाद वाइसराय शिमला जाते हुए दिल्लीसे गुजर रहे थे।

इसलिए आपके पत्रका दुहरा स्वागत है। मैं यह समझता हूँ कि अपनी मुलाकातके समय मेरे द्वारा इन दोनो विषयोको उठानेपर कोई आपत्ति नही होगी। मुझे आगामी ४ अगस्तको सुबह के ११.३० बजे नई दिल्ली स्थित वाइसराय भवन आनेमें प्रसन्नता होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७८८९) से, सौजन्य · घनश्यामदास बिड़ला। इन दि शैडो ऑफ दि महात्मा, पृ० २३५-६ से भी

५२०. पत्र : मीराबहनको

२७ जुलाई, १९३७

चि० मीरा,

मैं तुम्हारे सारे पत्रोंका जवाब नही दे सका हूँ। मुलाकातों और 'हरिजन' के लिए लिखने से मैं घिरा हुआ हूँ। नन्दबाबूकी राय इसके साथ है।[1]

बालकृष्ण यहाँ आज सुबह लाया गया था। उसे ज्वर होता रहा है। उसके दाहिने फेफडेमें तपेदिक के निश्चित चिह्न मिले है। डॉ० बत्राने, जो अभी मेरे साथ रह रहे है, उसे यहाँ लानेका सुझाव दिया है। वह खुशीसे राजी हो गया और अब जमनालालजीके नये घरमें है। वह काफी अच्छा है।

राजकुमारी आज आई। वह २८ को वापस जायेगी और ६ को लौटेगी। रामेश्वरी अभी यही है। इस तरह इच-इच जगह घिरी हुई है।

आशा है कि तुम्हारा स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा होगा।

आखिरकार शान्ता नही जा रही है। उसकी माँने उसकी तैयारियोकी खबर पाकर हवाई-डाकसे पत्र भेजा है कि उसकी उसे जरूरत नही है। इसलिए यात्रा-टिकट वापस किया जा रहा है। वह महादेवकी मदद कर रही है और उससे महादेवको बड़ी सहायता मिल रही है, क्योंकि राधाकिशन हमेशाके लिए चला गया है।

तुम्हे और सुभाषको प्यार।

बापू

[पुनश्च :]

धर्मवीर परिवारको मेरी याद दिलाना।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३९४) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९८६० से भी

१. देखिए पृ० ४११, पाद-टिप्पणी २।

५२१. पत्र : के० एफ० नरीमनको

२७ जुलाई, १९३७

प्रिय नरीमन,

आपका पत्र मुझे कल मिला। मैं आज उत्तर लिख रहा हूँ, परन्तु इतनी देर हो चुकी है कि यह आजकी डाकसे नही जा सकता।

यदि आपका मुझपर विश्वास हो तो मेरा यह सुझाव है। आप कोई निश्चित सन्दर्भ बतायें। मैं उसे सरदारको दिखाऊँगा; और यदि वे अनुमोदन कर दें तो मैं सर गोविन्दरावसे कहूँगा कि वे उसपर गवाही ले और अपना निर्णय दें। जाँच निजी तौरपर होनी चाहिए। मै समझता हूँ यह आरोप अवश्य लगेगा कि सरदारने मतदाताओंको प्रभावित किया है। क्योंकि यदि आपके बारेमें अपनी रायका उपयोग उन्होंने आपके निर्वाचनके विरुद्ध नही किया है, तो किसी भी निर्णायकके लिए कोई आधार बनानेको कुछ भी नहीं रहता। इसलिए जहाँ सरदारको अपनी रायके लिए कारण बताने होंगे, वहाँ आपको यह प्रमाणित करना पड़ेगा कि उन्होंने मतदाताओंको प्रभावित करनेके लिए अपनी रायका उपयोग किया।

जहाँ तक आन्दोलनका सम्बन्ध है, मैं समझता हूँ कि आप उसके विरुद्ध नहीं है। मेरी रायमें तो यह दबाव ही माना जायेगा। क्या कोई भी नेता इस बातके लिए बाध्य है कि वह किसी विशेष साथीको अपने मन्त्रिमण्डलमें ले? जनता चाहे कुछ भी कहे या करे, मैं आपको बताता हूँ कि यह आन्दोलन, जैसे चल रहा है, वैसे इसे चलने देकर आप अपने सच्चे मित्रोंको अपनेसे दूर कर रहे हैं। यदि आपने कार्य-समितिका निर्णय स्वीकार कर लिया है तो आपको यह कहना होगा और सरदारको इस आरोपसे मुक्त करना होगा कि इस काममें उनका किसी भी तरहका योग था। यदि आपने ऐसा नही किया है, और मेरा खयाल है कि आपने नहीं किया है, तो सरदारके खिलाफ अपने आरोपोंको आपको प्रमाणित करना होगा। परन्तु जब वे ऐसे निर्णायकके सामने पेश होनेका प्रस्ताव रख रहे है जिसके लिए दोनों पक्ष रजामन्द हों, तो आप नैतिक दृष्टिसे इस बातके लिए बाध्य हैं कि आप ही को हानि पहुँचानेवाले इस आन्दोलनको आप बन्द कर दें। क्योंकि मैं साफ-साफ आपको लिख रहा हूँ, इसलिए कृपया ऐसा मत समझिए कि मैं आपके प्रति कुछ पूर्वग्रह लिये हुए हूँ। मेरी स्पष्टवादिता मेरी शुभकामनाओंका प्रमाण है।

प्रतिदिन मुझे ऐसे पत्र मिलते हैं जिनमें मुझे मध्यस्थता करने और सार्वजनिक रूपसे अपनी राय जाहिर करनेके लिए कहा जाता है। अपने पत्र-लेखकोंको मैं आपका

हवाला देकर यह कह रहा हूँ कि जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, वे मेरे उन सारे पत्रोको देख सकते है जो मैंने आपको लिखे है। परन्तु मै अभी समाचारपत्रो को, जब तक आप न चाहें, कुछ नही कहना चाहता।

आशा है, मेरा यह पत्र आपके लिए स्पष्ट होगा।

आपने डॉ० राजनका जो दृष्टान्त दिया है, वह बडा दुर्भाग्यपूर्ण है। उन्होने न कोई आन्दोलन चलाया और न जारी रखा। जो प्रतिकूल निर्णय लिया गया, वह उन्होने नम्रतापूर्वक मान लिया।

आपका,

[अंग्रेजीसे]

ए० आई० सी० सी० फाइल न० ७४७-ए, १९३७; सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

५२२. पत्र : महादेव देसाईको

२७ जुलाई, १९३७

चि० महादेव,

सवेरेसे इसमें लगा हूँ। पाँच बजेसे अभी तक मैंने आधे घटेसे ज्यादा आराम नही किया, फिर भी अभी-अभी इस लेखको दुबारा पढकर पूरा कर पाया हूँ। इसीलिए जानवाको इससे पहले रवाना कर ही नही सका। देखता हूँ, सोमवारको यह यही टाइप हो जाना चाहिए। दो टाइपराइटर हो, यह बिलकुल जरूरी है।

दूसरा काम तो आज नही किया जा सकता। राजाजीको नीचे लिखे अनुसार तार करो

प्रधानमन्त्री राजगोपालाचारी, मद्रास। मेरा सुझाव है कि मेहरअलीके भाषण[1] का उल्लेख करके अध्यक्षके सामने आदेशका सुझाव रखें। बापू।

राजकुमारी अभी-अभी आई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११५४०) से।

१. देखिए "पत्र : सम्पूर्णानन्दको", पृ० ४७६-७।

५२३. पत्र : अमतुस्सलामको

२७ जुलाई, १९३७

चि० अमतुल सलाम,

तुमारा खत आज मिला। कांतिका भी मिला है। मैंने उसको पूछा था क्या तुमारा वहां जाना वह पसंद करेगा। मैंने यह भी लिखा था कि उसके खत तुमको भेज रहा हूं। वह लिखता है तुमारे बंगलूर जानेकी बरदास्त वह नही कर सकेगा न चाहता है कि उसके खत तुमको भेजता रहूं। वह लिखता है "*मारे सारूं भले दुआ कर्या करे के मारामा फरी माना जेवो प्रेम मारामा पैदा थाय। अत्यारे तो नथी। जे प्रेम बीजी आश्रम बहेनो प्रत्ये छे तेथी वधारे मारामा नथी।*"[1] ऐसी हालतमें तुम्हारा वहां मेरा भेजना मुनासब नही होगा। मेरी इच्छा थी कि वापिस आते वहां जाकर आ जाओ। इस कांतिके निश्चयसे दुःख मत मानो। कांतिके खुश खबर मैं देता रहूंगा। अगर बाकीके लिये मुंबई जाना पडे तो अवश्य जाओ। अम्माकी सेवाके लिये भी जाना जरूरी हो सकता है। मुमकिन है कि तुमारे थोडे दिनोंके लिये मुंबई जानेसे भाईयोकी सेवा होगी।[2] वहां कम से कम एक महीना तो रहना ही।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८७) से।

५२४. पत्र : सम्पूर्णानन्दको

२७ जुलाई, १९३७

भाई सम्पूर्णानन्द,

आपकी पुस्तक[3] मैं तीथल ले गया था। वहीं पढनेका आरंभ कर दिया था। गत शनिवार ता० २४-७-३७ को वह खतम की। थोड़े भी मिनिट मिल जाते थे तो पढ़ लेता था। ध्यानसे 'अर्थ' से 'इति' तक पढ़ गया हूं। मुझको पुस्तक अच्छी

१. मूलमें यह गुजराती में है, जिसका अनुवाद इस प्रकार है : "वे मेरे लिए यह प्रार्थना भले करें कि मुझमें [उनके प्रति] पुनः वैसा ही प्रेम पैदा हो जैसा माँके लिए होता है। अभी तो मेरे मनमें उनके प्रति ऐसा भाव नहीं है। आश्रम की अन्य बहनोंके प्रति जो प्रेम-भाव है उससे अधिक उनके प्रति नहीं है।"

२. देखिए "पत्र : कान्तिलाल गांधीको", पृ० ४६०-१।

३. समाजवाद।

लगी। भाषा भी मधुर है। जो संस्कृत बिलकुल नही जानते है उनके लिये कुछ कठिन भी मानी जाय, अन्तमें हिन्दी अंग्रेजी और-अंग्रेजी हिन्दी शब्दकोष दिया है वह अभ्यासीके लिये उपयोगी है। बगैर किसीकी निन्दा किये समाजवादके पक्षमें जो कुछ लिखा गया है वह स्तुत्य है।

समाजवादके जो सिद्धान्तोका निरुपण पुस्तकमें किया गया है करीब करीब उन सबको स्वीकार करनेमें मुझको कोई आपत्ति नही है। जयप्रकाशकी पुस्तक[1] भी मैं ध्यानसे पढ गया हूँ। आपके और उसके निरुपणमें कुछ भेद हो सकता है क्या? हिन्दोस्तानके अंतमें क्रांति कैसे होगी उसका स्पष्टीकरण मैंने न आपकी पुस्तकमें पाया है न जयप्रकाशकीमें। बहोतोसे भी बात करनेसे मुझे पता नही चला। परसो मेरे हाथमें मेहरअलीने मद्रासमें जो एक भाषण दिया है आया। उसे मैंने पढ लिया है।[2] उसमें समाजवादी क्या कर रहे हैं वह ठीक तौरसे बताया गया है। उसका मतलब यह है कि हर जगह ये बलवा पैदा कर देना। ऐसे तो बगैर हिंसाके हो ही नही सक्ता है। आपके पुस्तकमें मैंने ऐसा कुछ नहीं पाया है। शांतिसे अर्थात् शान्त कानून भगसे, शात असहयोगसे जैसा कि हम सन् १९२० से करते आए है — उससे हम शक्ति पैदा कर सक्ते है कि नही?

आपने लिखा है समाजवादके सिद्धान्तोका पूर्णतया अमल जब तक राज्याधिकार प्राप्त नही हुवा तब तक नहीं हो सक्ता है। माना कि कोई बडा जमीनदार पूर्णतया समाजवादी हो जाता है तो वह अपने सिद्धान्तोका पूर्णतया अमल कर सक्ता है? कहा जाय कि उसके हाथमें दण्ड नही है तो कोई हिन्दी राजा समाजवादी बन जाय तो पूरा अमल हो सकेगा? मुझे ऐसे स्मरण है कि आपने लिखा है कि जब तक सारा जगत समाजवादी न बने तब तक समाजवादका सपूर्ण अमल नही हो सक्ता है। इसका यह मतलब है कि यदि हमें पूर्ण स्वाधीनता हासिल हो तब भी समाजवादका पूर्ण या करीब करीब पूर्ण अमल नही हो सकेगा। शायद मेरा मतलब आप समझ गए है। इस प्रश्न पूछनेका हेतु इतना ही है कि समाजवादी सिद्धान्त और इसके अमलके जो साधन है उनको मैं कहाँ तक स्वीकार कर सकता हूँ सो जानु।

इस पत्रका यथावकाश भेजियेगा। मुझे कोई जल्दी नही।

आपका,
मो० क० गांधी

सी० डब्ल्यू० ९९४० से; सौजन्य : काशी विद्यापीठ

१. व्हाई सोशलिज्म।

२. देखिए "पत्र: महादेव देसाईको", पृ० ४७५ और "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", पृ० ४८१-२ भी।

५२५. मौन-दिवसकी टिप्पणी

[२८ जुलाई, १९३७ के पूर्व][1]

ऐसा तो मैं कर ही नहीं सकता। मैं तो एक-एक करके सारी बातें समझा देता हूँ। समय-समयपर चर्चा भी होती है। इससे ज्यादा और क्या करूँ? वह अलग होकर चाहे जो कर सकता है, लेकिन मेरी देख-रेखमें तो उसे इसी तरह काम करना पड़ेगा। मैं तो जानता हूँ कि अभी हम उसकी सेवाओंका उपयोग कमसे-कम कर रहे हैं। किन्तु इसीमें हमारा और उसका आत्मसंयम है, और यह आत्मसंयम इस मान्यतापर आधारित हमारी श्रद्धाकी कसौटी है कि नैतिकताका हमारे बाह्य क्रियाकलापके साथ निकट सम्बन्ध है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७६९३) से।

५२६. पत्र: कान्तिलाल गांधीको

[२८ जुलाई, १९३७ के पूर्व][2]

चि० कान्ति,

इस पत्रको पढ़ना और सहेज कर रखना। मैंने देवदासकी माँग स्वीकार कर ली है। अब तेरे ऊपर जो अतिरिक्त खर्च होगा, वह मैं देख लूँगा। हिसाब भी मुझे भेजना। देवदासको स्नेहपूर्ण पत्र लिखना। उसे चिन्तामुक्त कर देना चाहिए। यह पैसा मैं कहाँसे लाऊँगा, यह अभी तय नहीं किया।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० १०२३०) से; सौजन्य: कान्तिलाल गांधी

१. साधन-सूत्र में इस आशय की टिप्पणी दी गई है कि इसे २८ जुलाई, १९३७ को फाइलमें लगाया गया था।

२. तिथिका अनुमान अन्तर्विषय तथा कान्तिलाल गांधीको बादमें लिखे पत्र (देखिए, पृ० ४८०-१) के आधारपर किया गया है।

५२७. पत्र : के० एफ० नरीमनको

सेगाँव, वर्धा
२९ जुलाई, १९३७

प्रिय नरीमन,

समाचारपत्रोंमें प्रकशित आपका पत्र मैंने अभी-अभी देखा है।[1] आप विचित्र हैं। जब तक मुझसे पत्र-व्यवहार चल रहा है तब तक भी आप नहीं रुके। आपका पत्र मुझे सार्वजनिक वक्तव्य देनेके लिए बाध्य करता है। यदि हो सके तो मैं वैसा करना नहीं चाहता।

कार्य-समितिने आपको न्यायाधिकरणकी सुविधा देनेसे कभी इन्कार नहीं किया है। उसने आपको पहले एक शिकायतनामा तैयार करनेको कहा है ताकि वह तय कर सके कि उसे न्यायाधिकरणको देना है या नहीं। लेकिन यदि आप चाहें तो मैं अध्यक्षसे कहने के लिए तैयार हूँ कि आपके शिकायतनामा तैयार करनेसे पहले ही न्यायाधिकरण बना दें। यदि आप नहीं चाहते कि मैं यह करूँ तो क्या मैं, इस दुःखद मामलेमें बराबर मेरे मनपर जो छाप पड़ी है, उसके बारेमें वक्तव्य दे दूँ? कृपया अपना जवाब तारसे दीजिए।[2]

मैं यह बता दूँ कि सरदार यहाँ है। वह मेरे साथ अध्यक्ष से यह कहने को बिलकुल राजी हैं कि आपके लिए स्वतन्त्र न्यायाधिकरण बना दिया जाये।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

ए० आई० सी० सी० फाइल नं० ७४७-ए, १९३७, सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. नरीमनने २८ जुलाईको एक वक्तव्य जारी किया था।

२. सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड २, पृ० २३९ में नरहरि परीख लिखते हैं: "इसके जवाबमें नरीमनने लिखा था कि वे अपनेको बड़ी कठिन परिस्थितिमें पाते हैं। उनपर काफी दबाव पड़ रहा है कि मामलेको आगे न बढ़ायें और जिन लोगोंके पास वह मध्यस्थताके लिए गये थे, वे भी उन्हें ऐसी ही सलाह देते हैं।" गांधीजीके जवाबके लिए देखिए अगला शीर्षक।

५२८. के० एफ़० नरीमनको लिखे पत्रका अंश

[२९ जुलाई, १९३७ के पश्चात्][1]

यदि आप कोई जाँच नहीं करवाना चाहते तो कृपया वैसा बिना किसी मानसिक दुरावके कहिए। यह कहनेका कोई अर्थ नहीं है कि अन्य लोग मामला खत्म कर देनेका आग्रह कर रहे हैं। मुझे आपका वक्तव्य बिलकुल अच्छा नहीं लगा है। ऐसा लगता है कि जो नुकसान आप कर रहे हैं, उसे आप महसूस नहीं करते। मैं आपके हितोंकी भी रक्षा उसी तरह करना चाहता हूँ जैसे सरदारके हितोंकी। यदि सरदार मेरे लेफ्टीनेंट हैं तो आप भी वैसे ही हैं। फर्क केवल इतना है कि जब मेरा उनसे मतभेद होता है या जब मैं उन्हें उनकी कोई गलती दिखलाता हूँ तो वे अपने मनमें मेरे खिलाफ कोई पूर्वग्रह नहीं बनने देते। लेकिन आपको जब आपकी गलती बतलाता हूँ तो आप अधीर हो जाते हैं। निश्चय ही कार्य-समितिके सभी सदस्य आपके शत्रु नहीं हैं। फिर भी ऐसा लगता है कि आपको हरएकसे कुछ-न-कुछ शिकायत है। अन्तमें मैं चाहूँगा कि इस अविश्वासके बावजूद आप मेरी इस बातका विश्वास करें कि इस मामलेमें मैं सर्वथा आपके हितैषी और मित्रकी तरह काम कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड २, पृ० २३९

५२९. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
[२८/][2] ३० जुलाई, १९३७

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। तेरी इच्छानुसार मैंने अमतुस्सलामको लिख[3] दिया है। उसे दुःख तो बहुत होगा लेकिन तेरी मनःस्थिति उसे जान लेनी चाहिए। तेरे पत्र भी मैं उसे नहीं भेजूंगा।

तुझे देवदाससे कुछ नहीं माँगना पड़ेगा। मैं देख लूंगा। हिसाब भी देवदासको नहीं भेजना पड़ेगा।

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह पत्रांश गांधीजीने २९ जुलाईको नरीमनको लिखे अपने पत्रका उत्तर पाने के बाद लिखा था; देखिए पिछला शीर्षक।

२. तिथिका निर्धारण अन्तिम अनुच्छेदके आधारपर किया गया है।

३. देखिए पृ० ४७६।

प्रभावतीका पत्र मेरे पास पन्द्रह दिनसे नही आया। उसके ससुर नही रहे, शायद इसलिए न लिख रही हो।

राजकुमारी यहाँ है। कनु आकर लौट गया है। राधाकिशनको सदाके लिए अलग कर दिया गया है। उसकी जगह शान्ताबहन मिल गई है, इसलिए काम चल रहा है।

इतना तीन वारमें, तीन दिनमें लिखा गया है, क्योकि सुबह प्रार्थनासे पहले जितनी लकीरे लिखी जा सकें, उतनी लिखनेके बाद, दिनमें तो किंचित् ही लिखनेको समय मिलता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३२८) से; सौजन्य · कान्तिलाल गाधी

५३०. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
३० जुलाई, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

आशा है कि महादेवने हिन्दी पर लिखे तुम्हारे निबन्ध[1] की प्राप्ति-स्वीकृतिके अलावा कल यह भी लिख दिया होगा कि वाइसरायने मुझे ४ तारीखको दिल्ली बुलाया है। किसी खास मकसदके लिए नही, महज मिलनेकी खातिर। मैंने उत्तर[2] दिया है कि इस निमन्त्रणके द्वारा उन्होंने मेरी एक मुराद बिन-माँगे ही पूरी कर दी है, क्योकि खान साहबपर लगाये गये प्रतिबन्ध और सीमा-प्रान्तके दौरेकी अपनी इच्छाके बारेमें चर्चा करनेके लिए मैं उनसे मुलाकातका समय माँगना चाहता था। तदनुसार मैं ४ तारीखको दिल्ली पहुँच रहा हूँ। मुलाकात ११.३० बजे है। इसलिए मुझे आशा है कि मैं उसी दिन वहाँसे रवाना होकर ५ तारीखको सेगाँव पहुँच सकूँगा।

परन्तु यह पत्र तो तुम्हें जाकिरके खतकी नकल भेजनेके लिए है। जाकिरका यह खत मेरे उस पत्रका उत्तर है, जिसमें मैंने बम्बईके हालके दगे और हिन्दी-उर्दूके दुर्भाग्यपूर्ण विवादपर अपनी प्रतिक्रिया लिखी थी। मैंने सोचा कि इस विचारपूर्ण पत्रको तुम्हें भी दिखाऊँ।

मैं झाँसीके चुनावको बुरी हार नही मानता।[3] यह सम्मानपूर्ण पराजय है और उससे यह आशा होती है कि यदि हम परिश्रम करते रहें तो मुसलमानो तक काग्रेस का सन्देश कारगर ढगसे पहुँचा सकते हैं। परन्तु मेरी यह राय अब भी कायम है

१. देखिए पृ० ४११, पाद-टिप्पणी १।
२. देखिए "पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको", पृ० ४७२-३।
३. देखिए पृ० ४२६।

कि केवल..सन्देश ही पहुँचाया जाये और साथ-साथ देहातोंमें ठोस काम न किया जाये तो अन्ततः हमारा उद्देश्य पूरा नही होगा। परन्तु यह सब इसपर निर्भर है कि हम अपनी शक्ति किस ढंगसे बढ़ाना चाहते हैं।

मेहरअलीका मद्रासका भाषण मेरे लिए आँखें खोलनेवाला है। पता नहीं, वह सामान्य समाजवादी विचारको कहाँतक व्यक्त करते हैं। राजाजीने मुझे उनके भाषण-वाली एक कतरन भेजी थी। आशा है, उन्होंने तुम्हें भी एक नकल भेजी होगी। मैं इसे बुरा भाषण कहता हूँ। तुम्हें इसपर ध्यान देना चाहिए। यह भाषण कांग्रेसकी नीतिकी मेरी धारणाके विरुद्ध पड़ता है।

मद्रासमें रायका भाषण भी हुआ। मैं मान लेता हूँ कि तुम्हें ऐसी सब कतरनें मिलती होंगी। फिर भी, तुरन्त तुम्हारे देखनेके लिए कतरनें साथमें हैं, जो प्यारेलालने मेरे लिए तैयार की हैं। राय मुझे भी लिखते रहे हैं। तुम्हें उनका ताजा पत्र देखना चाहिए। यदि मैंने उसे फाड़ न दिया हो तो वह इस पत्रके साथ होगा। उनके रवैयेपर तुम्हारी क्या प्रतिक्रिया है? जैसा मैं तुम्हें पहले ही बता चुका हूँ, मेरे लिए उन्हें समझना कठिन हो रहा है।[1]

खादीको तुम्हारा दिया हुआ नाम 'लिवरी ऑफ फ्रीडम'[2] ('स्वतन्त्रताकी पोशाक') जब तक हिन्दुस्तानमें अंग्रेजी भाषा बोली जायेगी, तब तक जिन्दा रहेगा। इस मनोहर शब्द-प्रयोगके पीछे जो विचार है, उसका पूरी तरह हिन्दीमें अनुवाद करनेके लिए किसी प्रथम श्रेणीके कविकी आवश्यकता होगी। मेरे लिए वह केवल काव्य नही है; मेरे लिए तो वह एक ऐसे महान सत्यका प्रतिपादन करता है, जिसका पूरा अर्थ समझना अभी शेष है।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च:]

यद्यपि रायके भाषणसे सम्बन्धित अंश मेहरअलीवाले अंशके बाद ही आता है, फिर भी इसका यह अर्थ नही है कि उनका भाषण मेहरअलीके भाषणके स्तरका ही है।

अंग्रेजीसे. गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३७; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० २३७-८ भी

१. देखिए "पत्र: मानवेन्द्रनाथ रायको", पृ० ४७२।

२. १ अगस्तका दिन 'मिनिस्ट्री डे' के रूपमें मनानेके लिए देशवासियोंसे की गई अपनी अपील में जवाहरलाल नेहरूने इन शब्दोंका प्रयोग किया था; देखिए परिशिष्ट ८।

५३१. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

३० जुलाई, १९३७

भाई वल्लभभाई,

यह तुम्हें बताना था, पर रह गया। इसका उत्तर तुम ही दो तो अच्छा। या फिर उन्हें बुला लेना। तुम्हारा काम पूरा हो जाये तो बादमें यह पत्र अपनी टिप्पणीके साथ राजाजीको भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०८

५३२. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

३० जुलाई, १९३७

चि० काका,

बोराके साथ भेजा हुआ पत्र पढ़ गया हूँ। मुझे और तो कुछ नहीं सूझता। ११ वीं धाराको बिलकुल अन्तमें आना चाहिए, अथवा २१ वीं धाराको ११ वींके स्थान पर होना चाहिए और ११ को १२ हो जाना चाहिए। मसौदा पढ़ते ही तुम इस रद्दोबदलको समझ सकोगे। जवाहरलालका हिन्दीपर लिखा निबन्ध भेज रहा हूँ। यदि आज ही इसे देख सको, तो देखकर अपने सुझाव भेजना। जवाहरलालने मेरी आलोचना माँगी है, जो तुरन्त भेजी जानी चाहिए। यदि तुम बहुत व्यस्त हो और न भेज सको, तो कोई हर्ज नहीं। कल तुम्हारे जानेसे पहले वह मुझे मिल जाये, तो काफी होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७७०२) से।

५३३. आलोचनाओंका जवाब

'कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल' शीर्षक मेरे लेख[1] की ओर लोगोंका ध्यान आकर्षित हुआ है और उसकी आलोचनाएँ भी हुई हैं; उनका जवाब देना जरूरी है।

कहा जाता है कि पूर्ण शराबबन्दी, अगर वह सम्भव हो तो भी एकदम कैसे की जा सकती है? 'एकदम' से मेरा मतलब यह है कि यह घोषणा तुरन्त कर दी जाये कि १४ जुलाई, १९३७ से, अर्थात् कांग्रेसके पहले मन्त्रिमण्डलने जबसे अधिकार हाथमें लिये हैं, उस दिनसे लेकर तीन सालके अन्दर-अन्दर शराब वगैरह मादक द्रव्योंकी पूर्ण बन्दी हो जायेगी। मेरा तो खयाल है कि यह दो सालके अन्दर ही हो सकती है। किन्तु शासन प्रबन्ध-सम्बन्धी कठिनाइयोंकी जानकारी न होनेके कारण मैंने तीन सालकी अवधि कही है। शराबबन्दीके कारण सरकारी आमदनी जो कमी होगी, उसे मैं जरा भी महत्व नहीं देता। प्रथम श्रेणीके राष्ट्रीय महत्वपूर्ण प्रश्नके सम्बन्धमें अगर कांग्रेस पैसेके फायदे-नुकसानका खयाल करेगी, तो उसका शराबबन्दीमें सफलताकी आशा करना व्यर्थ होगा।

याद रखनेकी बात है कि शराब और नशीली चीजोंसे होनेवाली यह आय अत्यन्त हेय कर से होती है। सच्चा कर तो वह है जो करदाताको आवश्यक सेवाओंके रूपमें दस गुना लाभ पहुँचाये। किन्तु आबकारी आय क्या ऐसा करती है? इससे लोगोंका नैतिक, मानसिक और शारीरिक पतन होता है; और लोग अपनी इस कमजोरी पर कर देनेके लिए मजबूर किये जाते हैं। यह कर उन लोगोंपर पहाड़-जैसा बोझ बनकर पड़ता है, जिनमें उसे सहनेकी लगभग कोई ताकत ही नहीं है। और फिर यह राजस्व, मेरे खयालमें, उन कारखानों तथा खेतोंमें काम करनेवाले मजदूरोंसे प्राप्त होता है, जिनका कांग्रेस खास तौरपर प्रतिनिधि होनेका दावा करती है।

राजस्वका यह घाटा भी वास्तविक घाटा नहीं है। क्योंकि अगर यह कर हट जाये तो शराबखोर याने करदाताकी कमाने और खर्च करनेकी शक्ति भी बढ़ जायेगी। इसलिए शराबबन्दीसे राष्ट्रको जो जबरदस्त [नैतिक] फायदा होगा, उसके अलावा आर्थिक लाभ भी काफी होगा।

शराबबन्दीको मैंने सबसे पहला स्थान इसलिए दिया है कि इसका परिणाम भी तत्काल दिखाई देगा। कांग्रेसियोंने और खासकर बहनोंने इसके लिए अपना खून बहाया है। राष्ट्रकी प्रतिष्ठा इस कार्यसे 'एकदम इतनी बढ़ जायेगी जितनी मेरे खयाल से किसी भी एक कार्यसे नहीं बढ़ सकती। और फिर बहुत मुमकिन है कि इन छः प्रान्तोंका अनुकरण बाकी पाँच प्रान्त भी करें। उन मुसलमान प्रधानमन्त्रियोंको

१. देखिए पृ० ४३८-४१।

भी, जो कि काग्रेसी नही है, हिन्दुस्तान [के इन प्रान्तो] से शरावके उठ जानेपर यहाँ शरावखोरी वनी रहनेके वजाय खुशी अधिक होगी।

कहते है कि गैरकानूनी शरावकी भट्टियोको समाप्त करनेमें वड़ा खर्च पड़ेगा। पर इस चीख-पुकारमें अगर मक्कारी नही है तो विचारकी कमी तो जरूर है। हिन्दुस्तान अमेरिका थोडे ही है। अमेरिकाका उदाहरण प्रोत्साहन देनेके वजाय शायद हमारे मार्गमें रोड़े ही अटकायेगा। अमेरिकामें शराव पीना शर्मकी वात नही है। वहाँ तो यह एक तरहका फैशन है। वेशक, वे अल्पसख्यक लोग धन्य हैं जिन्होने केवल अपने नैतिक वलसे शराववन्दीके कानूनको मजूर करवा लिया, फिर चाहे वह कितना ही अल्पकालिक क्यो न रहा हो। मैं उस प्रयोगको असफल नही समझता। सम्भव है, इस अनुभवसे लाभ उठाकर अमेरिका किसी दिन और भी अधिक उत्साहसे अपने यहाँ शराववन्दी करनेमें सफल हो जाये। मैं इस सम्वन्धमें निराश नही हुआ हूँ। यह भी सम्भव है कि अगर हिन्दुस्तानमें हम पहले कामयाव हो जायें, तो अमेरिकाका रास्ता और भी सरल हो जाये और वह जल्दी सफल हो। ससारके किसी भी देशमें शराववन्दी इतनी आसान नही है जितनी कि इस देशमें है। क्योकि यहाँ तो शराब पीनेवालोकी सख्या वहुत थोडी है। शरावखोरी यहाँ नीच काम समझा जाता है। और मेरा तो खयाल है कि यहाँ करोड़ो लोग ऐसे है जिन्होने शरावको कभी छुआ भी न होगा।

पर गैरकानूनी शराव वनानेके गुनाहको रोकनेके लिए अन्य गुनाहोंको रोकने पर जो खर्च होता है, उसकी अपेक्षा अधिक खर्चकी जरूरत क्यो होनी चाहिए? गैरकानूनी शरावके वनानेपर मैं तो एक जवरदस्त सजा लगा दूँ और वेफिक्र हो जाऊँ। क्योकि शायद चोरीकी तरह यह अपराध भी कुछ अंशमें तो कयामत तक जारी ही रहेगा। मैं इस वातकी खोज रखनेके लिए कोई पुलिस-दल तैनात नही करूँगा जो यह खोजता फिरे कि कही गैरकानूनी शरावकी भट्टियाँ तो नही है। मै तो सिर्फ यह घोषित कर दूँगा कि जो भी आदमी शराव पिये हुए पाया जायेगा, वह सख्त सजा पायेगा, चाहे वह कानूनी अर्थमें सड़कों या अन्य सार्वजनिक स्थानोपर नशेमें वेहोश और अस्तव्यस्त हालतमें न भी पाया जाये। सजा या तो भारी जुर्मानेके रूपमें होगी या तव तकके लिए अनिश्चित कैदके रूपमें जव तक कि अपराधी यह सिद्ध न कर दे कि वह सुधर गया।

पर यह तो निषेधात्मक तरीका हुआ। इसके अतिरिक्त स्वयसेवकोके दल, जिनमें खासकर वहनें होगी, मजदूर-वस्तियोमें काम करेंगे। जिन्हे शरावकी आदत है, उनके पास वे जायेंगे और उन्हें उस लतको छोड़ देनेके लिए समझायेंगे। मजदूरोका काम लेनेवालोंसे कानून यह अपेक्षा रखेगा कि वे अपने यहाँ काम करनेवालोको ऐसी सुविधाएँ दें, जिससे मजदूरोंको सस्ती और स्वास्थ्यवर्धक खानेपीनेकी चीजें मिले। वाचनालय और खेलके लिए ऐसे कमरे भी हो जहाँ जानेपर मजदूरोको थोडा आराम, ज्ञान, स्वास्थ्यकर खान-पान और निर्दोष मनोविनोदके साधन भी मिल सके।

इस प्रकार शराववन्दीके मानी केवल शरावकी दुकानें वन्द कर देना ही नही होगा, वह तो एक तरहसे राष्ट्रमें प्रौढ़-शिक्षणका प्रारम्भ होगा।

शराबबन्दीका प्रारम्भ सबसे पहले इसी बातसे हो कि नई दुकानें खोलनेके ठेके जारी करना कतई बन्द कर दिया जाये और साथ ही शराबकी वे दुकानें भी बन्द कर दी जायें जिनसे जनताको असुविधा होनेका भय हो। लेकिन मैं यह ठीक-ठीक नहीं कह सकता कि दुकानदारोंको बगैर भारी मुआवजा दिये यह कहाँ तक सम्भव है। जो हो, जिनके ठेके खत्म हो गये हों उन्हें फिरसे जारी करना तो जरूर रोक दिया जाये। हर हालतमें एक भी नई दुकान न खुलने पाये। जहाँ तक आयकी कमीका सम्बन्ध है, हमें उसका क्षण-भर भी खयाल किये बिना कानूनके अनुसार जितना हम कर सकें, उतना तुरन्त कर डालना चाहिए।

मगर पूर्ण शराबबन्दीके मानी और उसकी मर्यादा क्या है? पूर्ण शराबबन्दीके मानी हैं उन तमाम नशीले पेय और मादक वस्तुओंकी बिक्रीकी पूरी रोक। अपवाद सिर्फ यह हो कि ये चीजें केवल उस अधिकृत डॉक्टर, वैद्य अथवा हकीमकी सिफा-रिशपर सरकारी भण्डारोंसे मिलें जो कि इसी कामके लिए खोले जायेंगे। जो यूरोपीय लोग शराबके बगैर रह ही नहीं सकते अथवा रहना नहीं चाहते, सिर्फ उनके लिए विदेशी शराबें परिमित मात्रामें मँगाई जा सकती हैं। पर उन्हें भी बोतलोंमें अधिकृत व्यक्तियों द्वारा खास-खास स्थानोंपर ही बेचा जाये। भोजनालयों और उपहार-गृहोंमें मादक पेयोंकी बिक्री कतई रोक दी जाये।

पर किसानोंको राहत देनेके बारेमें हम क्या करेंगे? वे तो आज अत्यधिक करों, कड़े लगानों, गैरवाजिब माँगों, निरक्षरता, अन्धविश्वास, विशेष रूपसे दरिद्रतासे पैदा होनेवाले अनेक रोगों और ऐसे भारी कर्जके नीचे पिस रहे हैं जो कभी पूरी तरह अदा नहीं हो सकता। निश्चय ही आर्थिक संकट और जनसंख्याकी दृष्टिसे उनका सवाल सबसे पहले हाथमें लिया जाना चाहिए। पर किसानोंको राहत देनेका यह कार्यक्रम काफी लम्बा-चौड़ा और ऐसा है जिसको हम आज ही एकदम पूराका-पूरा हाथमें नहीं ले सकते। और कोई भी कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल, जो ऐसे सार्वत्रिक महत्वके प्रश्नको हाथमें नहीं लेगा, दस दिन भी नहीं टिक सकेगा। हर कांग्रेसीको इसमें ज्यादा नहीं तो कमसे-कम सैद्धान्तिक दृष्टिसे ही हार्दिक दिलचस्पी है। जब कांग्रेसका जन्म ही इस उद्देश्यसे हुआ है, तब तो हर कांग्रेसीकी यह एक विरासत हो गई है। किसानोंके दुखको दूर करना ही कांग्रेसका उद्देश्य समझा जाता है। इस प्रश्नको लेकर लापरवाही हो सकती है। पर मेरी समझमें, शराबबन्दीके विषयमें यही बात नहीं कही जा सकती। उसे तो अभी-अभी सन् १९२० में कांग्रेसके कार्यक्रमका अभिन्न अंग माना गया है। इसलिए मेरा तो यही खयाल है कि चूंकि अब कांग्रेसके हाथोंमें सत्ता आ गई है, अतः उसका अधिकार-ग्रहण तभी सार्थक कहा जायेगा, जब वह इस बरबाद करनेवाली बुराईके खिलाफ साहस और कठोरतापूर्वक युद्ध छेड़ देगी।

शिक्षाका सवाल दुर्भाग्यवश शराबके साथ जोड़ दिया गया है। शराबकी आय उठ जाये तो शिक्षाका क्या होगा? निःसन्देह नये कर लगानेके और भी तरीके हो सकते हैं। प्रो० शाह और प्रो० खम्भातानेने यह दिखाया भी है कि इस गरीब देशमें भी कुछ नये कर लगानेकी गुंजाइश है। सम्पत्तिपर अभी काफी कर नहीं

लगा है। ससारके अन्य देशोमें जो-कुछ भी हो, यहाँ तो व्यक्तियोके पास अत्यधिक सम्पत्तिका होना भारतकी मानवताके प्रति एक अपराध ही समझा जाना चाहिए। इसलिए सम्पत्तिकी एक निश्चित मर्यादाके बाद जितना भी कर उसपर लगाया जाये, थोड़ा ही होगा। जहाँ तक मुझे पता है, इग्लैंडमें व्यक्तिकी आय एक निश्चित राशि तक पहुँच जानेके बाद उससे आयका ७० प्रतिशत तक कर लिया जाता है। कोई वजह नही कि भारतमें हम इससे भी अधिक कर क्यो न लगायें। मृत्यु कर भी क्यो न लगाये जायें? करोडपतियोंके लडके जो बालिग होनेपर भी विरासतमें पैतृक सम्पत्ति पाते है, परन्तु इस विरासतके कारण ही नुकसान भी उठाते है। और राष्ट्रकी तो दुहरी हानि होती है। क्योकि जो विरासत असलमें राष्ट्रकी होनी चाहिए, वह उसे नही मिलती; और दूसरे, राष्ट्रका इस तरह भी नुकसान होता है कि सम्पत्तिके बोझके कारण इन वारिसोंके सम्पूर्ण गुणोका विकास भी नही हो पाता।

परन्तु समस्त राष्ट्रकी दृष्टिसे देखें तो हम शिक्षामे इतने पिछड़े हुए हैं कि अगर शिक्षा-प्रचारके लिए हम केवल धनपर ही निर्भर रहेंगे तो एक निश्चित समयके अन्दर राष्ट्रके प्रति अपने फर्जको अदा करनेकी आशा हम इस पीढ़ीमें तो कर ही नही सकते। इसलिए मैंने यह सुझानेका साहस किया है कि शिक्षाको हमें स्वावलम्वी बना देना चाहिए; फिर चाहे लोग यह भले ही कहे कि मुझमें किसी रचनात्मक-कार्यकी योग्यता नही है। शिक्षासे मेरा मतलब है, बच्चे या मनुष्यकी तमाम शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियोका सर्वतोमुखी विकास। अक्षर-ज्ञान शिक्षाका न तो प्रारम्भ है और न अन्त। वह तो उन अनेक उपायोमें से एक है, जिनके द्वारा स्त्री-पुरुषोंको शिक्षित किया जा सकता है। केवल अक्षर-ज्ञानको शिक्षा कहना गलत है। इसलिए बच्चेकी शिक्षाका प्रारम्भ मैं किसी दस्तकारीकी तालीमसे ही करूँगा और उसी क्षणसे उसे कुछ निर्माण करना सिखा दूँगा। इस प्रकार हर पाठशाला स्वावलम्वी हो सकती है। शर्त सिर्फ यह हो कि इन पाठशालाओंकी बनी चीजें राज्य खरीद लिया करे।

मेरा मत है कि इस तरहकी शिक्षा-प्रणाली द्वारा ऊँचीसे-ऊँची मानसिक और आत्मिक उन्नति प्राप्त की जा सकती है। जरूरत सिर्फ एक बातकी है। आजकी तरह हम विभिन्न दस्तकारियोकी केवल यान्त्रिक क्रियाएँ ही सिखाकर न रह जायें, बल्कि बच्चेको उनकी प्रत्येक क्रियाका कारण और पूर्ण विधि भी सिखा दिया करे। यह मैं आत्मविश्वासके साथ कह रहा हूँ, क्योंकि उसके मूलमें मेरा अपना अनुभव है। जहाँ-जहाँ भी कार्यकर्ताओको कताई सिखाई जाती है, वहाँ न्यूनाधिक पूर्णताके साथ इसी पद्धतिको अपनाया जाता है। मैंने खुद इसी पद्धतिसे चप्पल बनानेकी तथा कताईकी शिक्षा दी और परिणाम अच्छे आये हैं। इस पद्धतिमें इतिहास और भूगोलका बहिष्कार भी नहीं है। मैंने तो देखा है कि इस तरहकी साधारण और व्यावहारिक जानकारी की बातें जबानी कहनेसे ही अधिक लाभ होता है। लिखने और पढ़नेसे बच्चा जितना सीखता है, उससे दस-गुनी अधिक जानकारी उसे इस पद्धति द्वारा दी जा सकती है। वर्णमालाका ज्ञान बच्चोको बादमें भी तब दिया जा

सकता है, जब उदाहरणके लिए बच्चा गेहूँ और चोकरमें भेद करना सीख जाये; अर्थात् जब उसकी बुद्धि और रुचि कुछ विकसित हो जाये। यह प्रस्ताव क्रान्तिकारी जरूर है पर इसमें परिश्रमकी बड़ी बचत होती है और बच्चा एक सालमें इतना सीख जाता है, जिसके लिए साधारणतया उसे बहुत अधिक समय लग सकता है। फिर इस पद्धतिमें सब तरहसे किफायत-ही-किफायत है। और विद्यार्थीको गणितका ज्ञान तो दस्तकारी सीखते हुए अपने-आप होता ही रहता है।

प्राथमिक-शिक्षा मेरी नजरमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण चीज है जिसकी पढ़ाईकी मर्यादा, जितनी अंग्रेजीको छोड़कर मैट्रिक तक होती है, मैंने उतनी मानी है। फर्ज कीजिए कि कॉलेजोंके पढ़े हुए और पढ़नेवाले सब लोग एकाएक अपनी पढ़ाई भूल जायें, तो इन कुछ लाख लोगोंके स्मृतिनाशसे जितनी हानि देशकी हो सकती है, वह उस हानिके मुकाबलेमें कुछ भी नहीं है, जो तीस करोड़ लोगोंके अज्ञानके सागर-जैसे महाअन्धकारके कारण अब तक हुई है और हो रही है। करोड़ों ग्रामवासियोंके अज्ञानकी थाह हम केवल निरक्षरतासे होनेवाली हानिसे कभी नहीं पा सकते।

कॉलेजकी शिक्षामें भी मैं जबरदस्त परिवर्तन कर देना चाहूँगा। उसे मैं राष्ट्रीय जरूरतोंसे जोड़ दूँगा। मेकैनिकल और अन्य इंजीनियरोंको डिग्रियाँ देनेके लिए संस्थाएँ होंगी जो विभिन्न औद्योगिक संस्थानोंसे सम्बद्ध रहेंगी और यही संस्थान अपने लिए आवश्यक स्नातकोंको तैयार करनेका खर्च उठायेंगे। मसलन, टाटा-परिवारसे यह अपेक्षा की जायेगी कि वे इंजीनियरोंको प्रशिक्षण देनेके लिए एक कॉलेज राज्यकी देखभालमें चलायें। इसी प्रकार मिलोंके लिए आवश्यक स्नातक तैयार करनेके लिए एक कॉलेज मिल-मालिकोंका संघ चलाये। यही अन्य उद्योग भी करें। व्यापारियोंका भी अपना कॉलेज रहे। अब रह जाते हैं कला, चिकित्सा-शास्त्र और कृषि। कलाके कितने ही गैर-सरकारी कॉलेज आज भी स्वाश्रयी हैं ही। इसलिए राज्यको अपना कोई स्वतन्त्र कॉलेज खोलनेकी जरूरत नहीं रहेगी। चिकित्सा-शास्त्र-सम्बन्धी कॉलेज प्रमाणित अस्पतालोंके साथ जोड़ दिये जायेंगे और चूँकि धनिक लोगोंको ये प्रिय होते ही हैं, इसलिए उनसे यह जरूर अपेक्षा की जा सकती है कि वे चन्दा करके इन कॉलेजोंको चलायें। रहे कृषि-कॉलेज। सो अगर अब इन्हें अपने नामकी लाज रखनी हो तो इन्हे भी स्वावलम्बी बनना ही पड़ेगा। मुझे इन विद्यालयोंमें शिक्षा-प्राप्त कुछ कृषि-स्नातकोंका दुःखद अनुभव हुआ है। उनका ज्ञान ऊपरी है। उन्हें व्यावहारिक अनुभव नहीं है। अगर उन्हें राष्ट्रकी जरूरतोंकी पूर्ति करनेवाले स्वावलम्बी खेतोंपर काम सीखनेका मौका मिला होता तो उपाधि प्राप्त करनेके बाद अपने मालिकोंके धनपर उन्हें और अनुभव प्राप्त करनेकी जरूरत हरगिज नहीं रहती।

यह कोई निरा कल्पना-विलास नहीं है। सिर्फ अपनी मानसिक जड़ताको दूर करने-भरकी देरी है कि हम देखेंगे कि कांग्रेसके मन्त्रिमण्डल अर्थात् कांग्रेसके सामने खड़े शिक्षाके सवालका यह अत्यन्त युक्ति-संगत और व्यावहारिक हल भी है। यदि वे घोषणाएँ सत्य हों जो कि हाल ही में ब्रिटिश सरकारकी ओरसे की गई हैं, तो

मन्त्रिमण्डलोंके पक्षमें तो उनकी योजनाओंको सफल बनानेके लिए अधिकारियोंकी सुसंगठित बुद्धि-चातुरी और संगठन-शक्ति भी है। सिविल-सर्विसके अधिकारियोंने तो वह कला सीख रखी है जिसकी सहायतासे ऐसी-ऐसी शासन-नीतिको भी वे अमलमें ले आते है जो उनके सामने झक्की गवर्नर या वाइसराय बनाकर रख देते हैं। इसी तरह मन्त्री भी एक निश्चित और विचारपूर्ण नीति कायम कर दें। उसपर अमल करना सिविल-सर्विसके अधिकारियो का काम रहेगा। उनकी ओरसे जो वचन दिये गये है, उनका पालन करके सिविल-सर्विस के अधिकारी उनके प्रति उऋण हो जिनका वे नमक खा रहे है।

अब शिक्षकोका सवाल रह जाता है। प्रो० के० टी० शाहने अपने एक लेख[1] में जो विचार प्रकट किये है, मैं उन्हे पसन्द करता हूँ। वे यह है कि विद्वान स्त्री-पुरुषोंके लिए यह लाजिमी करार दे दिया जाये कि वे अपने जीवनके कुछ वर्ष, मसलन पाँच वर्ष, ऐसे विषयको पढ़ानेके लिए देशको अर्पण कर दें जिसमें उन्हें रुचि हो और जिनकी उन्हें ठीक जानकारी भी हो। इसके लिए उन्हें कुछ खर्च भी दिया जा सकता है, जो देशकी आर्थिक-स्थितिको ध्यानमें रखते हुए हो। आज उच्च शिक्षणकी संस्थाओमें शिक्षको और अध्यापकोको जो ऊँची-ऊँची तनख्वाहे दी जा रही है, वे बन्द कर दी जायें। साथ ही, आजकल गाँवोमें काम करनेवाले मौजूदा शिक्षकोको हटाकर उनके स्थानपर अधिक योग्य शिक्षक हमें वहाँ भेजने चाहिए।

जेलोको दण्ड-गृहोंके बजाय सुधार-गृह बना देने वाली मेरी सलाह पर बहुत टीका-टिप्पणी नही हुई है। केवल एक ही टिप्पणी मेरी नजर में पडी है। मुझसे कहा गया है कि अगर वे बेंचने योग्य चीजें बनाने लगेंगे, तो वे बाजारके साथ अनुचित ढग से प्रतिस्पर्धामें पड़ जायेंगे। पर इस कथनमें कोई सार नही है। इसका पूर्वानुमान तो मुझे तभी हो गया था जब मैं १९२२ में यरवडा जेलमें कैद था। अपनी योजनापर तत्कालीन होम मेम्बर, जेलोंके तत्कालीन इन्सपेक्टर-जनरल और दो पुलिस अधीक्षकोंके साथ भी, जिनकी देखरेखमें वह योजना उन दिनो जेलमें धीरे-धीरे लागू की जा रही थी, मैंने बातचीत की थी। उनमें से एकने भी उसमें कोई खामी नही बताई। उन दिनोंके होम मेम्बरको उसमें खास दिलचस्पी पैदा हो गई थी। और उन्होने मुझसे अपनी योजना लिखकर देने तकके लिए कहा था, शायद वे उसपर गवर्नरकी मंजूरी भी लेना चाहते थे। पर गवर्नर महोदय एक ऐसे कैदीकी बात सुनना कब गवारा कर सकते थे, जो जेलके ही प्रबन्धके विषयमें सुझाव दे रहा हो? इसलिए मेरी वह योजना जैसी-की-तैसी दाखिल-दफ्तर कर दी गई। पर उसके प्रस्तुतकर्ताको तो आज भी उसमें उतना ही विश्वास है जितना कि सन् १९२२ में था, जबकि वह पहले-पहल बनाई गई थी। योजना इस तरह है: जेलोंके वे तमाम उद्योग बन्द कर दिये जायें जिनसे आवश्यक आय न होती हो। और तमाम जेलोको हाथ-कताई और हाथ-बुनाईका काम करनेवाली संस्थाओमें बदल

१. देखिए अगला शीर्षक भी।

दिया जाये। जहाँ सम्भव है, कपासकी खेतीकी भी शुरुआत की जा सकती है, और बढ़िया कपड़ा बनने तक, सब क्रियाएँ वहाँ हों। मैं सूचित करना चाहता हूँ कि इस कार्यके लिए हर प्रकारकी सुविधा तो जेलोंमें पहले ही से मौजूद है। बस, इच्छाकी जरूरत है। कैदियोंको गुनहगार समझनेके बजाय एक तरहके लाचार व्यक्ति समझा जाये। जेलर उनके लिए कोई भयंकर जीवके समान न हों बल्कि जेलके अधिकारियोंको भी कैदियोंका मित्र और शिक्षक बन जाना चाहिए। एक शर्त जरूर अनिवार्य हो कि जेलोमें जो खादी बने, लागत मूल्यपर राज्य वह सबकी-सब खरीद ले। राज्यकी जरूरतोंके बाद जो बचे, उसे कुछ अधिक कीमतपर जनतामें बेच दिया जाये, जिससे उसके मुनाफ़े से बिक्री-विभागका खर्च निकल आये। मेरे इस सुझावको स्वीकार करने से जेलोंका गाँवोंसे निकट सम्बन्ध कायम हो जायेगा और वे गाँवोंमें खादीका सन्देश पहुँचानेका काम करेगी। साथ ही, रिहाई-शुदा कैदी राज्यके आदर्श नागरिक भी बन सकते हैं।

मुझे स्मरण दिलाया जा रहा है कि चूँकि नमक केन्द्रीय सरकारकी मातहतका विषय है, इसलिए मन्त्री इस विषयमे कुछ नहीं कर सकते। अगर वह सचमुच कुछ न कर सकें, तो मुझे दुःखद आश्चर्य होगा। प्रान्तीय भू-भागोंपर भी केन्द्रीय सरकारकी सत्ता भले ही हो, पर प्रान्तीय सरकारोंका यह भी तो कर्तव्य ही है कि वे अपने प्रजाजनोंकी अन्यायसे रक्षा करें, फिर चाहे वह केन्द्रीय सरकार द्वारा ही क्यों न हो रहा हो। इसलिए मन्त्रिमण्डल अपने शासित क्षेत्रमें प्रान्तीय प्रजाके साथ होनेवाले अन्यायोंके खिलाफ जब शिकायत करे तो गवर्नरोका यह फर्ज होगा कि वे अपने मन्त्रियोंका समर्थन करें। मन्त्रिमण्डल सावधानीसे काम लें तो गरीब ग्रामीणोको अपने लिए नमक लेते हुए कोई अनुचित रुकावटें केन्द्रीय सरकार द्वारा नही डाली जायेंगी। कमसे-कम मुझे तो ऐसे अनुचित हस्तक्षेपका डर जरा भी नहीं है।

अन्तमें, मैं इतना और कहना चाहूँगा कि शराबबन्दी, शिक्षा और जेलोंके बारेमें मैंने जो-कुछ भी कहा है वह सिर्फ कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों और इन विषयोमें रुचि रखनेवाले लोगोके लिए है। जो विचार मैं इतने लम्बे अर्सेसे दृढ़तापूर्वक बनाये रखे हूँ, उन्हें लोगोंके सामने प्रकट किये बगैर नही रह सकता, चाहे वे विचार आलोचकोंको कितने ही विचित्र, काल्पनिक अथवा अव्यावहारिक क्यों न लगें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३१-७-१९३७

५३४. प्रोफेसर के० टी० शाहके सुझाव

प्रोफेसर के० टी० शाहसे मैंने प्रार्थना की थी कि वे कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंके बारेमें मेरे लेख[1] पर अपनी राय दें। उसके जवाबमें वे यह लिखते हैं।[2]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३१-७-१९३७

५३५. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगाँव
३१ जुलाई, १९३७

प्रिय कुमारप्पा,

मन्त्रियोंको तुम्हारा ज्ञापन[3], अपनी हद तक, अच्छा है। लेख बिलकुल ठीक है, लेकिन हिन्दीका स्तर ठीक नहीं है। यह किसका है? हाँ, उसकी रजिस्टरी करा लो। मेरा खयाल है, उसमें कुछ नहीं लगता। मैं ३ तारीखको दिल्लीके लिए रवाना हो रहा हूँ। और आशा है ५ या अधिकसे-अधिक ६ को वापस आ जाऊँगा। आशा है, सीताको अपना नया जीवन और परिवेश अच्छा लग रहा होगा।

तुम सब लोगोंको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२६) से।

१. देखिए पृ० ४३४-४१।

२. यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है। प्रोफेसर शाहने गांधीजीके कार्यक्रमका समर्थन किया था और राजस्वकी क्षतिपूर्तिके लिए उपाय सुझाये थे। उनका एक सुझाव यह था कि "सिविल सर्विसके अधिकारियोंसे" यह अपेक्षा की जाये कि वे "अपने वेतनों और भत्तोंका वह अंश जो एक निर्धारित अधिकतम राशिसे अधिक हो, स्वेच्छासे छोड़ दें।"

३. देखिए पृ० ४१६-७-भी।

५३६. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

३१ जुलाई, १९३७

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं समझता हूँ कि तुम, नवजीवन कार्यालयके बारेमें वेणिलाल बुच का जो कहना है, उसकी जाँच करके उसका निबटारा कर दो। मुझे लगता है, व्यावहारिक दृष्टिसे तुम्हें ट्रस्टियोंसे सम्मति लेनी चाहिए। इसलिए शायद अच्छा यह है कि तुम जीवनजी[1] से मिलकर उनकी सम्मति ले लो, जिससे मेरे ऊपरसे उतना बोझ उतर जाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९१०७) से।

१. जीवनजी डाह्याभाई देसाई, नवजीवन प्रेसके मैनेजर।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

दिल्लीमें हुई अ० भा० कां० कमेटीकी बैठक में पारित प्रस्ताव[1]

१६ मार्च, १९३७

हालके चुनावोंमें देशने कांग्रेसके आह्वानका जो शानदार प्रत्युत्तर दिया है और मतदाताओंने कांग्रेसकी नीति और उसके कार्यक्रमका जैसा समर्थन किया है, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी उसकी अत्यधिक सराहना करती है। इन चुनावोंमें कांग्रेस जिस आधारपर शामिल हुई, वह था नये संविधानका पूर्ण अस्वीकार। उसने स्वतन्त्रताको अपना लक्ष्य घोषित किया और यह माँग रखी कि भारतका संविधान बनानेके लिए एक संविधान-सभाका गठन किया जाये। नये अधिनियमका विरोध करके उसका अन्त करना कांग्रेसकी घोषित नीति थी। मतदाताओंने बहुत भारी बहुमतसे इस नीति और कार्यक्रमपर अपने समर्थनकी मुहर लगा दी है। अतएव ब्रिटिश सरकारने जिस प्रजातान्त्रिक प्रणालीका सहारा लिया है, उसी प्रजातान्त्रिक प्रणालीके माध्यमसे भारतीय जनताने इस नये अधिनियमकी भर्त्सना करके उसको पूर्णतः अस्वीकृत कर दिया है। जनताने इन चुनावोंके जरिये यह भी घोषणा कर दी है कि वह वयस्क-मताधिकार द्वारा निर्वाचित संविधान सभाके माध्यमसे राष्ट्रीय स्वाधीनताके आधारपर अपने संविधानका निर्माण करना चाहती है। अतः भारतीय जनताकी ओरसे यह कमेटी माँग करती है कि यह नया संविधान वापस ले लिया जाये।

यदि भारतीय जनताकी घोषित इच्छाकी अवहेलना करके ब्रिटिश सरकार नये संविधानको जारी रखना चाहे तो उस स्थितिमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी विधान-मण्डलोंके सभी कांग्रेसी सदस्योंको स्पष्ट रूपसे बता देना चाहती है कि विधान-मण्डलोंके भीतर और उसके बाहर उनके सब कार्य कांग्रेसकी इस बुनियादी नीतिपर आधारित होने चाहिए जिसका उद्देश्य नये संविधानका प्रतिरोध करना और उसका अन्त करना है। इसी बुनियादी नीतिके आधारपर ही उन्होंने मतदाताओंसे वोट माँगा था तथा चुनावोंमें भारी बहुमतसे विजयी हुए हैं। इस नीतिका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि ब्रिटिश सरकार और कांग्रेसके बीच गतिरोधकी स्थितियाँ उत्पन्न होंगी जिससे कि भारतीय राष्ट्रवाद और ब्रिटिश साम्राज्यवादके बीच निहित विरोध और भी प्रकट हो जायेगा और नये संविधानकी निरंकुशता प्रकाशमें आ जायेगी।[2]

१. देखिए पृ० ४-५ और १०।

२. इसके बाद मन्त्रिमण्डल बनाना स्वीकार करनेसे सम्बन्धित प्रस्तावकी धाराका उल्लेख था।

पृष्ठभूमि

हालाँकि भारत सरकार अधिनियम (१९३५) में प्रस्तावित ब्रिटिश सरकारके सुधारको कांग्रेसके बम्बई-अधिवेशनने पूरी तरह रद कर दिया था, लेकिन अप्रैल, १९३६ में कार्य-समितिकी इलाहाबादमें हुई बैठकमें पद-ग्रहणके विषयपर सदस्योंमें काफी मतभेद था। सर्वमान्य निर्णय न हो सकनेपर यह तय किया गया कि फरवरी, १९३७ में चुनावोंके बाद इस प्रश्नपर फिरसे विचार किया जाये। चुनाव-परिणामोंकी घोषणा होनेपर कांग्रेसको पाँच प्रान्तों, यथा मद्रास, संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त, बिहार और उड़ीसामें बहुमत प्राप्त हुआ। चार प्रान्तों, यथा बम्बई, बंगाल, असम और उत्तर-पश्चिमी सीमा-प्रान्तमें कांग्रेस पार्टीको अन्य पार्टियोंकी अपेक्षा सबसे ज्यादा सीटें मिली। सिन्ध और पंजाब प्रान्तोंमें कांग्रेस पार्टीके सदस्य विधान-सभाओंमें अल्प-संख्यामे रहे। 'द हिस्ट्री ऑफ़ द इंडियन नेशनल कांग्रेस' से लिये गये निम्न उद्धरणसे विभिन्न प्रान्तोकी विधान-सभाओंमें कांग्रेस पार्टीकी स्थिति देखी जा सकती है:

प्रान्त	विधान-सभामें सीटोंकी कुल सख्या	कांग्रेस द्वारा जीती गई सीटोंकी सख्या
मद्रास	२१५	१५९
बिहार	१५२	९८
बगाल	२५०	५४
मध्य प्रान्त	११२	७०
बम्बई	१७५	८६
संयुक्त प्रान्त	२२८	१३४
पजाब	१७५	१८
उ० प० सीमा-प्रान्त	५०	१९
सिन्ध	६०	७
असम	१०८	३३
उड़ीसा	६०	३६

तमिलनाडु कांग्रेस कमेटी द्वारा १० मार्च, १९३७ को मद्रासमे पारित प्रस्तावमें से निम्न उद्धरण दिये जा रहे हैं:

"तमिलनाडु कांग्रेस कमेटीके पास ऐसा विश्वास करनेका ठोस आधार है कि प्रान्तकी जनता, जिसने कांग्रेसके नेतृत्वमें अपना असंदिग्ध विश्वास प्रकट किया है, बहुत जोरदार और निश्चित रूपसे इस पक्षमें है कि कांग्रेस पार्टी मन्त्रिमण्डलीय जिम्मेदारी सँभाले ताकि वह कांग्रेसके चुनाव घोषणा-पत्रमें बताई गई कांग्रेसकी नीतियों और कार्यक्रमको कार्यान्वित कर सके, और यदि इसके सिवा अन्य कोई भी फैसला किया गया तो जनताको भारी निराशा होगी।

"प्रान्तीय काग्रेस कमेटीका मत है कि विधान-मण्डलोंमें काग्रेस यदि मन्त्रिपद स्वीकार कर लेगी तो इससे कांग्रेस-पार्टी और मजबूत होगी, और अभी तक नौकरशाही जिस सत्ताका उपयोग जनताके दमनके हेतु करती रही है, उस सत्ता और जनताके बीच परस्पर विश्वासकी भावना उत्पन्न करके काग्रेसके लक्ष्योको प्राप्त करनेके लिए आवश्यक अधिकार वह प्राप्त कर सकेगी। . . .

"अत: प्रान्तीय काग्रेस कमेटीका यह निश्चित मत है कि जिन प्रान्तोकी विधान-सभाओमें काग्रेसवाले बहुमतमें हैं, और जहाँ उन्हे मन्त्रिमण्डलोके रूपमें कार्य कर सकनेके लिए संदिग्ध गैर-कांग्रेसी गुटोके ऊपर निर्भर करनेकी जरूरत नही है, उन प्रान्तोमें कांग्रेसवालोको पार्टीकी ओरसे मन्त्रिपद स्वीकार कर लेना चाहिए।"

अ० भा० कांग्रेस कमेटीके प्रस्ताव पर बोलते हुए चक्रवर्ती राजगोपालाचारीने कहा :

" . . . हमें एक-दूसरे पर अविश्वास नही करना चाहिए। ऐसा मत समझिए कि हमें पदोका लोभ है। . . . हम जब गवर्नरके पास जायेंगे तो हमें उन्हें बताना होगा कि हम क्या करनेका इरादा रखते हैं और यह पूछना होगा कि क्या वह [गवर्नर] अपने विशेषाधिकारोका प्रयोग करेंगे। यदि गवर्नर इसका जवाब देनेसे इनकार करेंगे तो हम लौट आयेंगे। यदि गवर्नर कहते हैं कि वह विशेषाधिकारोका प्रयोग करेंगे, तब भी आत्मसम्मानी व्यक्तियोके नाते हम लौट आयेंगे; लेकिन अगर वह कहते हैं कि वह उनका उपयोग नही करेंगे तो हम उनके इस वादेपर विश्वास करेगे। यदि बादमें वह अपना वादा तोड़ दें, तो हम सरकारसे निकल आयेंगे। . . ."

जवाहरलाल नेहरूने कहा कि "हालाँकि उनका विरोध कायम है . . . लेकिन अन्ततः उन्होने महात्मा गाधीकी इच्छाओंका आदर करते हुए, और उस एकताको कायम रखनेकी दृष्टिसे, जो कि नये संविधानसे लड़नेके लिए जरूरी है, अपनी सहमति दे दी।"

अ० भा० कांग्रेस कमेटीने तत्पश्चात् "उस शपथके मसविदेपर विचार शुरू किया जिसे प्रत्येक काग्रेसी विधायकको राष्ट्रीय सम्मेलनके अधिवेशनके प्रथम दिवस पर लेना होगा और जिसमें वह काग्रेस तथा देशके प्रति अपनी निष्ठाकी पुष्टि करेगा।" जवाहरलाल नेहरू द्वारा तैयार किये गये और गाधीजी द्वारा संशोधित शपथका मसविदा इस प्रकार था:

"मैं, अखिल भारतीय सम्मेलनका सदस्य, भारतकी सेवा करने, और विधान-सभाओंमें और उनके बाहर भारतकी आजादीके लिए तथा उसकी जनताके शोषण और गरीबीको खत्म करनेके लिए काम करनेकी शपथ लेता हूँ।

"मैं काग्रेसके अनुशासनमें रहते हुए कांग्रेसके उन आदर्शों और लक्ष्योंकी पूर्तिके लिए काम करनेकी शपथ लेता हूँ जिनका उद्देश्य भारतको आजाद और स्वाधीन करना है तथा उसके करोडो निवासियोको जिन भारी तकलीफोका बोझ ढोना पड़ता है, उस बोझसे मुक्त करना है।"

"आश्वासनों" के प्रश्नको पट्टाभि सीतारमैयाने इस प्रकार स्पष्ट किया है:

"इस मामलेमें जो बौद्धिक और सैद्धान्तिक प्रश्न निहित है, उनके अलावा भी कांग्रेसकी इस माँगके महत्वको विस्तारसे समझ लेना अच्छा रहेगा कि संवैधानिक कार्योंमें गवर्नर लोग हस्तक्षेप करनेके अपने विशेषाधिकारोंका प्रयोग नही करेंगे या मन्त्रियोंकी सलाहको बरतरफ नही कर देंगे। ये विशेषाधिकार अमुक गुटों, हितो और क्षेत्रोके सम्बन्धमें है। ये गुट है अल्प-संख्यक जातियाँ, हित हैं अंग्रेजोके निहित स्वार्थ, और क्षेत्र है ब्रिटिश भारत और भारतीय रियासतोके अमुक क्षेत्र जिन्हें मन्त्रिमण्डलोंके अधिकार-क्षेत्रसे बिलकुल बाहर या कमोबेश बाहर रखा गया है। इस माँगका अभिप्राय यह है कि गवर्नर लोग उसी प्रकार काम करेंगे जिस प्रकार आस्ट्रेलियाके प्रान्तीय गवर्नर काम करते है (खण्ड ५१)। अपनी इच्छासे उन्हें मन्त्रियोको बर्खास्त करनेका अधिकार नही होना चाहिए, मन्त्रियोके वेतन सदनके नेताकी इच्छाके अनुसार नियत किये जाने चाहिए (खण्ड ५०), गवर्नरोंको मन्त्रि-मण्डलकी बैठकोका सभापतित्व नही करना चाहिए, उन्हे शान्तिको खतरेके आधारपर हस्तक्षेप नही करना चाहिए और न अध्यादेश (खण्ड ५५-५८), या अधिनियम बनाने चाहिए, उनका एडवोकेट-जनरल (खण्ड ५६) की नियुक्तिसे अथवा पुलिसके नियम बनानेसे कोई वास्ता नही होना चाहिए। . . ."

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-३-१९३७, **बॉम्बे क्रॉनिकल**, ११-३-१९३७, १८-३-१९३७ और १९-३-१९३७; और **द हिस्ट्री ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस**, खण्ड २, पृ० ३९ और ४६-७ भी

परिशिष्ट २

'टाइम्स' के नाम लॉर्ड लोथियनका पत्र[1]

ऐसा प्रतीत होता है कि उत्तरदायी सरकारकी कार्यप्रणाली किस प्रकार अमलमें आती है, इसका और गवर्नरोके नाम निर्देश-प्रपत्रके ७ वें तथा ८ वें अनुच्छेदोंका पूर्णतः गलत ढंगसे समझा जाना ही इस वक्तव्य[2] के पीछे काम कर रहा है।

उत्तरदायी सरकार ही वह पद्धति है जिसके जरिये कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिण आफ्रिका और न्यूजीलैंडने संवैधानिक तरीकेसे पूर्ण राष्ट्रीय स्वशासन प्राप्त किया है, हालाँकि आरम्भिक दिनोमें उन्हें अकसर गवर्नरो और ब्रिटिश सरकार, दोनोका ही विरोध झेलना पड़ा था। प्रत्येक देशके गवर्नर या गवर्नर-जनरलको निषेधाधिकारकी शक्ति तथा अन्य निजी जिम्मेदारियाँ प्राप्त थी।

१. देखिए पृ० ७८-८०।
२. देखिए पृ० ४०-२।

मैं यह दावा करनेका साहस करता हूँ कि कही भी विधान-सभामें बहुमत प्राप्त किसी भी मन्त्रिमण्डलने ऐसी माँग नही पेश की और निश्चय ही ऐसा आश्वासन तो कभी भी उसे नही दिया गया कि गवर्नर अपनी विशेष सत्ता या शक्तिका उपयोग नही करेगा। तिसपर भी गवर्नरको प्राप्त विशेष सत्ता और जिम्मेदारियोंके कारण पूर्ण स्वायत्त-शासनकी दिशामें उन देशोकी सन्तुलित प्रगतिमें कभी कोई बाधा नही पडी।

इसका कारण यह है कि मुद्देका असली आधार कानूनी सत्ता नही बल्कि उत्तरदायित्व है, वही उत्तरदायित्व जिसको प्रयोगमें लाना भारतकी प्राथमिक आवश्यकता है, जैसाकि श्री गाधीने एक बार स्वय मुझे बताया था।

इस कारण मैं ऐसा नही समझता कि अभी तक श्री गाधीको यह कहनेका कोई उचित कारण मिला है कि ब्रिटिश सरकारने बहुमतकी अवहेलना की हो या उसने प्रान्तीय स्वायत्तताके सिद्धान्तको कार्यान्वित न किया हो।

गवर्नरोने जिस कार्य-पद्धतिके अनुसार कार्य किया है उस कार्य-पद्धतिका विचार गोलमेज सम्मेलनके सामने हमेशा था, और मन्त्रियोने बारम्बार यह बात कही है कि यह कार्य-पद्धति उत्तरदायी शासन प्रणालीके अन्तर्गत कार्य करनेका सामान्य तरीका है।

मुझे विश्वास है कि ब्रिटिश जनता यही आशा और अपेक्षा रखती है कि नये मतदाताओ द्वारा बहुसख्यामें चुने गये प्रतिनिधिगण सविधान के अनुसार अपने प्रान्तोंके शासनका उत्तरदायित्व सँभाल लेगे। यदि काग्रेसी नेता उत्तरदायी सरकारोकी सामान्य प्रचलित पद्धतिको अपनाते हुए और आश्वासनोकी माँग किये बिना पदभार स्वीकार करे, सुधारोके लिए व्यावहारिक प्रस्ताव तैयार करें, उन्हें पारित करके कानूनोका स्वरूप प्रदान करे और गवर्नरको परामर्श दें, तो वे देखेंगे कि उनके प्रान्तोकी शासन-सत्ता तथा उत्तरदायित्व, दोनो स्वय उनको हस्तगत हो जायेंगे। मुझे निश्चय है कि श्री गाधी देखेंगे कि ऐसा कदम उठाना, नौकरशाही सत्ताके हाथोंसे विश्वके सबसे विशाल तथा एक ऐसे पूर्णतम प्रजातन्त्रके हाथोमें सत्ता-हस्तान्तरण की दिशामें एक बड़ा महत्वपूर्ण कदम होगा, जिस प्रजातन्त्रको स्थापित करनेकी उन्हे आशा है।

[अग्रेजीसे]
द इंडियन ऐनुअल रजिस्टर, १९३७, खण्ड १, पृ० २४४

परिशिष्ट ३

कांग्रेस चुनाव घोषणा-पत्रसे कुछ उद्धरण[1]

२२ अगस्त, १९३६

पचाससे भी अधिक वर्षोंसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस भारतकी स्वतन्त्रताके लिए परिश्रम करती रही है, और ज्यो-ज्यो उसकी शक्ति बढ़ती गई और ज्यो-ज्यो वह भारतीय जनताकी राष्ट्रीय भावनाओका तथा ब्रिटिश साम्राज्यवाद द्वारा किये जाने-वाले शोषणका अन्त करनेकी उसकी इच्छाका प्रतिनिधित्व करनेवाली सस्था बनती गई, त्यो-त्यो उसके और शासन-सत्ताके बीच टकराव पैदा होने लगा। हालके वर्षोंमें काग्रेसने राष्ट्रीय आज़ादीकी खातिर महान आन्दोलनका नेतृत्व किया है और ऐसे जन शक्ति-रूपी दण्डका विकास करनेकी कोशिश की है जिसके फलस्वरूप भारतीय जनताके शान्तिपूर्ण सामूहिक कार्य और अनुशासनपूर्ण त्याग तथा कष्ट-सहनके जरिये वह आजादी प्राप्त की जा सके। काग्रेसके नेतृत्वका जनताने बडे व्यापक पैमानेपर अच्छा उत्तर दिया है और इस प्रकार आजादीके अपने निहित अधिकारकी परिपुष्टि की है। आजादीकी लड़ाई अभी भी जारी है और जब तक भारत आजाद और स्वाधीन नही हो जाता तब तक जारी रहेगी।

इन वर्षोंके दौरान भारतमें और दुनियामें एक ऐसा आर्थिक सकट उत्पन्न हुआ है जिसके चलते हमारे देशवासियोके हर वर्गकी दशा उत्तरोत्तर खराब हुई है। गरीबीसे ग्रस्त हमारी जनता आज और भी ज्यादा कगाली और दीनताकी दशाको पहुँच गई है, और इस बढ़ती हुई बीमारीको रोकनेके लिए फौरी और क्रान्तिकारी उपायकी जरूरत है। एक लम्बे अरसेसे हमारे किसानो और औद्योगिक श्रमिकोको गरीबी और बेरोजगारी भोगनी पड़ती रही है। आज गरीबी और बेरोजगारीकी चपेटमें अन्य दूसरे वर्ग — दस्तकार, व्यापारी, छोटे-मोटे व्यापारी और मध्यमवर्गीय बुद्धिजीवी — भी आ गये हैं। हमारे देशके करोड़ो निवासियोंके लिए राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी समस्याने तात्कालिक महत्व धारण कर लिया है, क्योकि स्वाधीनता से ही हमें अपनी आर्थिक और सामाजिक समस्याओको हल करनेकी और अपनी जनताका शोषण रोकनेकी ताकत प्राप्त हो सकती है।

राष्ट्रीय आन्दोलनके विकास और आर्थिक सकटके फलस्वरूप भारतीय जनताका भीषण दमन किया गया है और नागरिक स्वतन्त्रताको कुचला गया है, और भारत जिस साम्राज्यवादी शिकंजेमें जकड़ा हुआ है, उसे ब्रिटिश सरकारने भारत सरकार अधिनियम, १९३५ बनाकर और ज्यादा मजबूत करनेकी तथा

१. देखिए पृ० ९३ और १२९।

भारतीय जनतापर अपने प्रभुत्वको और अपनी शोषणकी नीतिको स्थायी बनानेकी कोशिश की है। . . .

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें सकटकी स्थिति लगातार गहरी होती जा रही है और क्षितिज पर विश्व-युद्धकी घटाएँ घिरी हुई हैं। कांग्रेसके लखनऊ-अधिवेशनने देशका ध्यान भारत और विश्वमें व्याप्त इस गम्भीर स्थितिकी ओर आकृष्ट किया था और किसी साम्राज्यवादी युद्धमें भारतके शामिल होनेका विरोध किया था। उसने इसी अधिवेशन में भारतकी स्वाधीनताके लिए सघर्ष जारी रखनेका अपना दृढ निश्चय भी घोषित किया था।

कांग्रेसने नये अधिनियम द्वारा भारतपर थोपे गये सविधानको समग्र रूपसे अस्वीकृत कर दिया और यह घोषणा की कि ऐसा कोई भी सविधान जो किसी बाहरी सत्ता द्वारा थोपा गया हो, अथवा ऐसा सविधान जो भारतकी जनताकी प्रभुसत्ताको कम करता हो और उस जनता द्वारा अपने राजनीतिक और आर्थिक भविष्यको गढने और पूरी तरह नियन्त्रित करनेके उसके अधिकारको स्वीकार नही करता, उस सविधानको स्वीकार नही किया जा सकता। कांग्रेसकी रायमें ऐसा सविधान राष्ट्रके रूपमें भारतकी आजादीपर आधारित होना चाहिए और इसकी रचना केवल एक सविधान-सभा द्वारा ही की जा सकती है।

कांग्रेसने जनताकी ताकतको बढाने और जन-इच्छाको लागू करवानेके लिए जनशक्ति-रूपी दण्ड निर्मित करने पर हमेशा जोर दिया है। इसी उद्देश्यकी पूर्तिके लिए कांग्रेस विधान-मण्डलोंके बाहर काम करती रही है। कांग्रेसका निश्चित मत है कि जनताका इसी प्रकार सगठन करने और उसकी सेवा करनेसे ही सच्ची शक्ति प्राप्त होती है।

इसी नीति और लक्ष्यपर दृढ रहते हुए, किन्तु वर्तमान स्थितिको मद्देनजर रखकर और विदेशी सत्ता तथा शोषणको मजबूत करनेवाली शक्तियोको नाकाम करने की खातिर, कांग्रेस प्रान्तीय विधान-मण्डलोके लिए होनेवाले आगामी चुनावोमें सीटोके लिए मुकाबला करनेका निश्चय करती है। लेकिन नये अधिनियमके तहत कांग्रेस-जनोको विधान-मण्डलोमें भेजनेका उद्देश्य अधिनियमके साथ किसी भी प्रकार सहयोग करना कदापि नही है, बल्कि उसके विरुद्ध सघर्ष करना और उसे समाप्त करना है। इसका उद्देश्य कांग्रेस द्वारा अधिनियमको अस्वीकार करनेकी नीतिको जहाँ तक सम्भव हो वहाँ तक कार्यान्वित करना और भारतपर अपना अधिकार कायम रखने तथा भारतीय जनताका शोषण करनेके ब्रिटिश साम्राज्यवादी मसूबोका प्रतिरोध करना है। कांग्रेसकी रायमें, विधान-मण्डलोके अन्दर इस ढगसे काम किया जाना चाहिए जिससे बाहर हो रहे काममें, जनताकी ताकत बढानेमें और जन-शक्ति-रूपी उस दण्डको विकसित करनेमें सहायता मिले जो आजादीके लिए अत्यन्त जरूरी है।

ब्रिटिश तथा अन्य निहित स्वार्थोकी रक्षाके विचारसे विभिन्न प्रकारके पूर्वोपायों तथा विशेषाधिकारोका प्रावधान करके नये विधान-मण्डलोकी शक्तिको सीमित कर दिया गया है। अत. ये विधान-मण्डल ठोस लाभ नही पहुँचा सकते और गरीबी

तथा बेरोजगारीकी अहम समस्याओंको हल करनेमें सर्वथा असमर्थ हैं। लेकिन ब्रिटिश साम्राज्यवाद अपने मतलब निकालनेकी खातिर इन विधान-मण्डलोंका इस प्रकार उपयोग जरूर कर सकता है जिससे भारतीय जनताको हानि पहुँचे। कांग्रेसके प्रतिनिधि इसका प्रतिरोध करेंगे, और साथ ही उन तमाम विनियमों, अध्यादेशों और अधिनियमोंका अन्त करानेके लिए हर सम्भव प्रयत्न करेंगे जिनसे भारतकी जनता पीड़ित है और जो उसकी आजादीकी इच्छाका दमन करते हैं। कांग्रेसके प्रतिनिधि नागरिक स्वतन्त्रता स्थापित करानेके लिए, राजनीतिक कैदियों और नजरबन्दोंकी रिहाईके लिए, और राष्ट्रीय संघर्षके दौरान सरकार द्वारा किसानों और जन-संस्थाओंके साथ किये गये अन्यायोंको दूर करानेके लिए प्रयत्न करेंगे।

कांग्रेस समझती है कि इन विधान-मण्डलों द्वारा स्वाधीनता नही प्राप्त की जा सकती, और नये विधान-मण्डल गरीबी और बेरोजगारीकी समस्याको सफलतापूर्वक निपटा सकते हैं। इसके बावजूद कांग्रेस भारतकी जनताके सामने अपना सामान्य कार्यक्रम प्रस्तुत कर रही है ताकि वह जान सके कि कांग्रेसके सिद्धान्त और आदर्श क्या है, और उसके हाथमें ताकत होनेपर वह क्या चीजें करनेकी कोशिश करेगी।. . .

कांग्रेसका पूरा कार्यक्रम अभी निश्चित किया जाना है। लेकिन इस बीच वह कराचीमें की गई अपनी घोषणाको दोहराती है — कि वह काश्तकारी, मालगुजारी और लगानकी प्रणालीमें सुधार करने और खेती-योग्य भूमिपर पड़नेवाले बोझको न्यायसंगत ढंगसे वितरित करने, छोटे किसान आज जितना लगान और जितनी मालगुजारी देते हैं उसमें भारी कमी करके, तथा अलाभकर जमीनोंको लगान और मालगुजारीसे छूट देकर उन्हें तत्काल राहत देनेके पक्षमें है। . . .

साम्प्रदायिक निर्णय, जो कि नये अधिनियमका एक अंग है, के कारण काफी वाद-विवाद पैदा हुआ है और उसके प्रति कांग्रेसके रवैयेको कुछ लोगोंने गलत समझा है। कांग्रेस द्वारा नये अधिनियमको समग्र रूपसे अस्वीकार करनेमें साम्प्रदायिक निर्णयको अस्वीकार करनेकी बात भी अन्तत. निहित है। अधिनियमको छोड़ भी दें, तो भी साम्प्रदायिक निर्णय सर्वथा अस्वीकार्य है, क्योंकि वह स्वाधीनता और लोकतन्त्रके सिद्धान्तके विपरीत है। . . .

अत: कांग्रेसका विश्वास है कि साम्प्रदायिक निर्णयके कारण उत्पन्न हुई स्थितिसे निपटनेका सही तरीका यह है कि हम अपनी आजादीकी लड़ाईको और तेज करें, और साथ ही एक ऐसा सर्वमान्य हल निकालनेके लिए कोई सामान्य आधार ढूंढें जिससे भारतकी एकताको मजबूत करनेमें मदद मिले। . . .

नये विधान-मण्डलोमें मन्त्रि-पद स्वीकार किया जाये या नही, इस प्रश्नका निर्णय लखनऊ-कांग्रेसमें करनेका निश्चय किया गया था। अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी राय है कि अच्छा यही होगा कि इसका निर्णय चुनावोंके बाद किया जाये। इस प्रश्नपर निर्णय चाहे जो भी हो, यह बात याद रखनी चाहिए कि किसी भी सूरतमें कांग्रेस नये संविधानको अस्वीकार कर देनेके पक्षमें है, और वह उसके कार्यान्वयनमें कोई सहयोग नही करना चाहती। लक्ष्य यही कायम रहेगा — अर्थात् अधिनियमका

अन्त करवाना। इस बातको मद्देनजर रखते हुए इस बातकी हरचन्द कोशिश की जायेगी कि योजनाके संघीय अंगको लागू न होने दिया जाये और न उसे कार्यरूपमें परिणत होने दिया जाये, क्योंकि इसका उद्देश्य साम्राज्यीय हितो और रियासतोंके सामन्तवादी हितोकी प्रभुताको सारे देशके ऊपर स्थायी रूपसे कायम करना, और स्वतन्त्रताकी दिशामें होनेवाली हर प्रगतिको रोकना है। यह बात ध्यानमें रखनेकी है कि प्रस्तावित संघीय केन्द्रीय विधान-मण्डलके लिए चुनाव नये प्रान्तीय विधान-मण्डलो द्वारा किये जायेंगे, और इन प्रान्तीय विधान-मण्डलोमें किस पार्टीको कितनी सीटें मिलती हैं, इसका संघीय संविधानके भविष्यपर बहुत ठोस असर पड़ेगा। . . .

हम अपने सामने इस महान और प्रेरक लक्ष्यको रखते हुए, जिसके लिए भारतके कितने ही स्त्री-पुरुषोने कांग्रेसके झंडेके नीचे कष्ट सहन किये हैं और अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया है, और जिसकी खातिर आज हमारे हजारो देशवासी मौन रूपसे और बहादुरीके साथ कष्ट सहन कर रहे है, हम अपने देशवासियोसे पूरी आशा और विश्वासके साथ अपील करते है कि वे कांग्रेस, भारत और आजादीको अपना पूर्ण समर्थन प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]
सिलेक्टेड वर्क्स ऑफ जवाहरलाल नेहरू, खण्ड ७, पृ० ४५९-६३

परिशिष्ट ४

लॉर्ड जेटलैंडका भाषण[1]

६ मई, १९३७

गवर्नर तथा उसके मन्त्रिमण्डलके विविध तथा परिवर्तनशील सम्बन्धोका नियमन करनेवाला यदि कोई अर्ध-कानूनी सिद्धान्त बनाना सम्भव होता, तो उसे अधिनियममें सम्मिलित कर लिया गया होता। चूंकि ऐसा कोई सिद्धान्त था नही, इसी कारण विधेयक पेश करनेसे पहले होनेवाली वार्ताओके दौरान बारम्बार इस बातपर जोर दिया गया था कि नये संविधानकी सफलताके लिए सबसे अधिक महत्वकी चीज वह भावना होगी जिसके साथ उसे कार्यरूप दिया जायेगा। दुर्भाग्यकी बात यह है कि इसी मामलेमें ऐसी गलतफहमियाँ पैदा हो गई है। अधिनियमके जिस अंशमें गवर्नरके कुछ विशिष्ट कर्तव्य बताये गये है, उसके वास्तविक अर्थसे कही बढ़कर अर्थ कुछ लोगो द्वारा लगाये गये है।

कांग्रेसने अपने सबसे ताजा वक्तव्यमें घोषणा की है कि ब्रिटिश सरकारके पिछले इतिहास और वर्तमान रवैयेसे पता चलता है कि जिन आश्वासनोकी मांग की गई है,

१. देखिए पृ० १८७, २१०, २२३, २२८, ३५७ और ४०३।

उनके अभावमें निर्वाचित लोकप्रिय मन्त्रिमण्डलको निरन्तर क्षोभकारी हस्तक्षेपका सामना करना पड़ेगा। इस अधिनियमके अन्तर्गत लोकप्रिय मन्त्रिमण्डल जिस प्रकार कार्य करेगा, उसका जो चित्र मेरी कल्पनामें है, उस चित्रमें और कांग्रेस द्वारा कल्पित चित्रमें इतना बुनियादी अन्तर है कि शायद यह उचित होगा कि भारतके प्रान्तोंमें इस संविधानको किस प्रकार कार्यरूप दिया जायेगा, इसके बारेमें मेरी जो कल्पना हमेशा रही है उसको मैं बता दूँ। मैं प्रवर-समितिका ही नहीं बल्कि गोलमेज-सम्मेलनका भी सदस्य था, इस कारण इस अधिनियमके रचयिताओंके इरादोंकी, और जिस भावनाके साथ इसकी कल्पना की गई थी, उसकी कुछ जानकारी रखनेका मैं दावा कर सकता हूँ।

सर्वप्रथम तो ऐसी धारणा ही नहीं रखी जानी चाहिए कि सरकारका कार्यक्षेत्र दो भागोंमें विभक्त हो सकता है जहाँ गवर्नर तथा मन्त्रिमण्डल पृथक रूपसे कार्य करेंगे, जिसके कारण उनके बीच अनेक बार टकराव होनेका खतरा रहेगा। नये संविधानका सारतत्व ही यही है कि प्रान्तके समूचे शासनका नेतृत्व और उत्तरदायित्व एक प्रकारसे गवर्नरके हाथोंमें निहित होते हुए भी मन्त्रिमण्डलके पदभार सँभाल लेनेके साथ-साथ हस्तान्तरित हो जायेगा। गवर्नरका कर्तव्य होगा कि वह मन्त्रियोंके कार्यमें उनकी हर प्रकारसे मदद करे और विशेष रूपसे अपने राजनीतिक अनुभव या प्रशासनिक जानकारीका लाभ मन्त्रियोंको प्रदान करे।

कांग्रेसने जिन आरक्षित अधिकारोंको इतना तूल दिया है वे सामान्य दशामें प्रयोगमें नहीं आयेंगे। वे तो केवल तभी सामने आयेंगे जबकि अधिनियम द्वारा प्रदत्त गवर्नरके सावधानीपूर्वक मर्यादित उन विशेष उत्तरदायित्वोंका, जो कि निर्देश-प्रपत्र द्वारा उसे सौंपे गये हैं, सवाल उठेगा। किन्तु यदि उनके प्रयोगका सवाल उठता भी है,—और यहाँ उस भावनापर जोर देना आवश्यक है जिस भावनाके साथ संविधानको कार्यरूप देनेका इरादा किया गया था—तो ऐसा मान लेना सरासर गलत होगा कि गवर्नर फौरन ही अपने मन्त्रिमण्डलका प्रकट विरोध करने लगेगा।

न तो मैं कभी आशा करता हूँ और न मेरी इच्छा है कि ऐसी स्थिति कभी उत्पन्न हो। किसी मन्त्रिमण्डलको अपना कामकाज चलानेमें जिस गवर्नरसे अमूल्य सलाह और समर्थन मिला हो, वह गवर्नर जैसे ही यह महसूस करेगा कि [ब्रिटेनकी] संसद द्वारा उसे सौंपे गये किसी विशेष उत्तरदायित्वके मामलेमें मन्त्रिमण्डल और उसके बीच मतभेद होनेका खतरा उठनेवाला है तो वह अवश्य ही फौरन मन्त्रिमण्डल के सम्मुख अपनी कठिनाई रख सकेगा। जिस प्रकार मन्त्रिगण अपनी कठिनाई के समय गवर्नरकी सहायता मिलनेका भरोसा रख सकते हैं, ठीक उसी प्रकार गवर्नर भी तो भरोसा रख सकता है कि यदि उसकी अपनी स्थितिमें ऐसी कोई कठिनाई उठे जिसका समाधान मन्त्रिगण सहानुभूतिपूर्वक गवर्नरका ध्यान रखते हुए अपने प्रस्तावों में ऐसी मामूली फेर-बदल करके, जिससे कि मन्त्रिमण्डलके कार्यक्रमपर कोई विशेष असर न पड़ता हो, कर सकते हैं तो वे वैसा कर देंगे।

जो-कुछ भी हो, एक ही ध्येयके लिए काम करनेवाले सहयोगी यदि किसी भी मामलेपर बातचीत कर लें तो कमसे-कम इतना तो निश्चित है कि उनके

बीचके मतभेदोका दायरा घट जायेगा। तव दोनो पक्षोको यह सोचना होगा कि समष्टि रूपमें प्रान्तके हितको देखते हुए क्या इन छँटे हुए और सुस्पष्ट निर्धारित मतभेदोको लेकर एक लाभप्रद सम्बन्धको तोडना सार्थक होगा। यह आशा रखना तो दुराशा-मात्र है कि कभी भी ऐसे मौके आयेंगे ही नही जब दोनोमें से किसी भी एक पक्षके लिए ईमानदारीके साथ किसी विषय पर झुक जाना सम्भव नही रह जायेगा। किन्तु यदि अधिनियमके अन्तर्गत राजकार्य-सचालनकी मेरी कल्पना सत्य है और गवर्नर तथा उसके मन्त्रिमण्डलके वीच एक ही उद्योगके भागीदारो-जैसा सम्बन्ध है तो यह सवाल ही नही उठता कि मन्त्रिमण्डलके कार्य और उनके उत्तरदायित्वोंके सम्वन्धमें गवर्नर हमेशा, और झंझट पैदा कर देनेवाले ढंगसे हस्तक्षेप करते रहे।

गवर्नरोका निश्चय ही ऐसा कोई इरादा नही है कि अपने निजी उत्तरदायित्वो की संकीर्ण या कानूनी व्याख्या करके मन्त्रिमण्डलकी व्यापक शक्तियोका अतिक्रमण करे, क्योकि मन्त्रिमण्डलके हाथोमें व्यापक अधिकार सौपना संसदका उद्देश्य था तथा हम सब चाहते है कि मन्त्रियोने अपने जिन कार्यक्रमोकी पैरवी की थी, उनको सम्पन्न करनेके लिए वे उन शक्तियोका उपयोग करे। संविधानको कार्यान्वित करनेके सम्बन्धमें इस समय जो-कुछ भी धारणा बन सकती है उसमें मुझे अपनी सदाकी कल्पनाका चित्र ठीक उतरता दीख रहा है।

जिन प्रान्तोंमें विधान-सभामें बहुमत रखनेवाले मन्त्रिमण्डल काम कर रहे है और जिन प्रान्तोमें अल्पमतवाले मन्त्रिमण्डल काम कर रहे हैं, उन दोनोमें एक सशक्त कार्यक्रम बनाया गया है और जहाँ तक मै जानता हूँ, कोई भी गवर्नर वहाँ रत्ती-भर भी हस्तक्षेप करनेका प्रयत्न नही कर रहा है।

ऐसी आशा रखना कोई महत्वाकाक्षा तो नही है कि जो लोग अपने कार्योंमें व्यर्थकी रुकावटें डाले जानेके भ्रमपूर्ण भयसे पदका उत्तरदायित्व सँभालनेसे हिचक रहे थे, वे संविधानकी अपने समक्ष ही होनेवाली यथार्थ कार्यान्वितिको देखकर उससे शिक्षा ग्रहण करेंगे तथा उसीसे उन्हे आश्वासन और प्रोत्साहन प्राप्त हो जायेगा। मेरे लिए यह कहना आवश्यक नही है कि मै हार्दिक रूपसे पूरी सच्ची भावनाके साथ आशा रख रहा हूँ कि ऐसा ही हो।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ७-५-१९३७

परिशिष्ट ५

कूडलमणिक्कम-सम्बन्धी विवाद[1]

कोचीन-राज्यमें इरिञयालक्कुडा स्थानपर कूडलमणिकम देवस्वम् नामसे प्रसिद्ध एक प्राचीन तथा महत्वपूर्ण मन्दिर है। त्रावणकोर, कोचीन और मलाबारमें काफी भूमि देवस्वम् मन्दिरकी भूसम्पत्ति है। मन्दिरके आध्यात्मिक तथा सांसारिक दोनों प्रकारके कार्यकलापोका प्रबन्ध एक व्यक्तिके हाथोमें होता है जिसे तच्चुडय कैमलकी पदवी दी जाती है; इस पदवीका शाब्दिक अर्थ है भवन अर्थात् मन्दिरके स्वामी ईश्वरका सरदार। इस व्यक्तिको महामहिम महाराजा त्रावणकोर अपने उस सनातन अधिकारके अनुसार नियुक्त करते हैं जिसे १७६१, १७६५ तथा १८०५ में त्रावणकोर तथा कोचीन के बीच हुई सन्धियो द्वारा मान्यता तथा अनुमोदन प्राप्त हुए थे।

कैमलकी नियुक्ति तथा उसका अभिषेक कोई सामान्य लौकिक कार्य-मात्र नही है, बल्कि वह सब लम्बे-चौड़े अनुष्ठानो द्वारा किया जाता है जिनका गहन धार्मिक महत्व है और जोकि मन्दिरके सम्बन्धमें कैमलकी स्थिति तथा प्रतिष्ठाके सूचक रूपमें महत्वपूर्ण है। इस प्रकार नायर जातिमें जन्मे व्यक्तिको नियुक्ति और अभिषेकके अनुष्ठानोंके फलस्वरूप उच्चतम ब्राह्मणसे भी बढकर आध्यात्मिक गरिमा तथा मान-मर्यादा प्राप्त हो जाती है और उसकी आध्यात्मिक प्रतिष्ठा महामहिम महाराजा कोचीनसे भी ऊँची मानी जाती है। इसका कारण यह है कि मन्दिरके चारों ओर जुलूसके रूपमें कैमलकी पालकीकी सवारी निकलनेके मौकेपर कैमलके पालकीमें प्रविष्ट होनके समय परम्पराके अनुसार महामहिम महाराजा कोचीन तकको पालकीका डण्डा छूना पड़ता है। कैमल देवताका नाम ग्रहण करके "मणिक्कम् केरलन्" नामसे ख्यात हो जाता है तथा देवस्वम्के आध्यात्मिक तथा लौकिक कार्यकलापोंका संचालन करता है। उसकी मृत्युपर मन्दिरमें शुद्धिकर्म होते हैं, ब्राह्मण उसका दाह-संस्कार करते हैं। दिवंगत कैमलका श्राद्ध मन्दिरमें ही होता है। इसके पीछे यह कारण है कि अभिषेक के फलस्वरूप कैमल मन्दिरमें प्रतिष्ठित देवताका गोचर प्रतिनिधि बन जाता है।

सन् १८५० में तत्कालीन कैमलकी मृत्युके उपरान्त उसके उत्तराधिकारी की नियुक्तिके महाराजा त्रावणकोरके अधिकारके सम्बन्धमें विवाद उठ खड़ा हुआ। कोचीनने दावा पेश किया कि कैमलको मन्दिरके प्रबन्धका कोई अधिकार नही है और जब मन्दिरकी मरम्मतकी आवश्यकता हो केवल तभी त्रावणकोर महाराजा कैमलकी नियुक्तिके अपने अधिकारका प्रयोग कर सकते हैं। त्रावणकोरने इस तर्कका खण्डन करते हुए इस अधिकारका दावा किया कि जब कभी भी कैमलका पद रिक्त हो जाये

1. देखिए पृ० १४९, १८९ और २४२। केवल कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

तब महाराजा त्रावणकोर मन्दिरके आध्यात्मिक तथा लौकिक कार्यकलापोका प्रबन्ध करनेके लिए किसी कैमलकी नियुक्ति कर सकते है। इस मामलेको पंच-निर्णयके लिए रखा गया और दीर्घकालीन जाँच-पड़तालके बाद निर्णायक श्री जे० सी० हैनिंगटनने निश्चय किया कि कोचीनके दावे तर्कसंगत नही है और त्रावणकोर द्वारा नामजद व्यक्तिको मन्दिरके सभी मामलो और उसके अनुदानोके प्रबन्ध और नियन्त्रणका अधिकार है। . . . तत्पश्चात् कैमलकी नियुक्ति हुई और उसका विधिपूर्वक अभिषेक किया गया, किन्तु कोचीनने पुन: अपनी स्थानीय अदालतोंके सम्मुख कैमलके इन अधिकारोको अमान्य सिद्ध करनेका प्रयत्न किया। ये अधिकार थे, देवस्वम्की ओरसे मुकदमे दायर करना या योगक्कारोको शामिल किये बिना ही किराये और अन्य आर्थिक लाभ वसूल करना, उन योगक्कारोंको जोकि कोचीनके दावेके अनुसार मन्दिरके अब भी वास्तविक मालिक थे। . . . त्रावणकोरका कहना था कि कैमल ही कूडलमणिकम मन्दिरके आध्यात्मिक तथा सासारिक सभी मामलोंका उच्चतम सत्ताधिकारी है और मन्दिरसे सम्बन्धित सभी मामलोके प्रबन्धका उसे एकाधिकार है और कैमलकी पद-प्रतिष्ठा और शक्तियाँ कोचीनकी म्युनिसिपल अदालतोके निर्णयपर आश्रित नही है।...

मद्रास सरकारने त्रावणकोर सरकारके दावोको स्वीकार किया। . . . रेजिडेंटको निर्देश मिला कि वह कोचीन-दरबारको परामर्श दे कि कोचीनके अदालती निर्णयो द्वारा कैमलकी जो शक्तियाँ छीन ली गई है, उनकी कानून बना कर या शासकीय घोषणा द्वारा पुनर्स्थापना कर दी जाये। कोचीन-दरबारने इस मामले पर भारत मन्त्रीके सम्मुख अपील की जिसने कि मद्रास सरकारके निर्णयकी ही पुष्टि की।

इस बीच तत्कालीन पदाधिकारी कैमलका निधन हो गया और नये कैमलकी नियुक्तिकी आवश्यकता पड़ी। . . . यह अधिकार प्रदान करनेकी सर्वश्रेष्ठ पद्धति पर दोनो राज्य एकमत न हो सके और बहुत समय तक बातचीत चलनेके बाद तय किया गया कि ब्रिटिश रेजिडेंट नियन्त्रक सत्ताधिकारी बनाया जाये, विशेष रूपसे मन्दिरकी सम्पत्तिके प्रबन्ध और देवस्वम्की अनेक आमदनियोके मामलेमें।

तदनुसार प्रबन्धकार्यकी एक योजना बनाई गई जिसपर सभी सम्बद्ध पक्ष सहमत हो गये। योजनामें "मन्दिरके आन्तरिक प्रबन्धके सम्बन्धमें उठनेवाली सभी शकाओका समाधान करनेवाले प्रमुख धार्मिक सत्ता सम्पन्न व्यक्ति" के रूपमें कैमलके आध्यात्मिक सत्ताधिकारकी विशेष रूपसे पुष्टि की गई और शर्त रखी गई कि (क) कैमल अपने निजी खर्चोंके निमित्त निर्धारित प्रमाणसे अधिक राशि खर्च नही करेगा, (ख) कैमलको सभी आय और व्ययका सही हिसाब रखकर लेखाधिकारियोसे उसकी जाँच करवाकर यह आय-व्यय-विवरण त्रावणकोर तथा कोचीनकी सरकारोको और नियन्त्रक सत्ताधिकारीको देना होगा, (ग) यदि योजनाके अन्तर्गत निर्धारित पद्धतिके अनुसार जाँच की जानेपर सिद्ध हो जाये कि कैमल ऐसे प्रबन्ध और गलत आचरणका दोषी है जिसके कारण उसका मन्दिरका संचालक बने रहना वाछनीय नही, तो नियन्त्रक सत्ताधिकारी उसे देवस्वम् की जायदाद और आमदनियोके प्रबन्ध-अधिकारसे वंचित कर सकता है। इस योजनाके अन्तर्गत योगक्कारोका केवल इतना अधिकार

माना गया कि प्रतिवर्ष एक नियत दिन मन्दिरसे उनको वार्षिक हिसाब-किताबका ब्योरा पढ़कर सुनाया जाये।

यही संक्षेपमें कैमलकी वर्तमान स्थिति है और वर्तमान पदाधिकारी कैमल उपर्लिखित योजनाकी शर्तोंके अधीन रहकर काम करता है। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि सत्तर वर्षोंसे भी अधिक लम्बे विवादके बाद १९१७ की घोषणा तथा प्रबन्ध-योजनाके अनुसार कैमलके आध्यात्मिक तथा लौकिक पद-प्रतिष्ठा और कार्यकलाप अन्तिम रूपसे निश्चित कर दिये गये। त्रावणकोर मन्दिर-प्रवेश घोषणाके कुछ समय बाद तक सब-कुछ शान्तिपूर्वक और सुचारू रूपसे चल रहा था।

सभी धार्मिक विषयोंका नियमन और समाधान करनेके लिए कैमलके सर्वोच्च आध्यत्मिक सत्ताधिकारी न होनेका सवाल ही नहीं था। किन्तु त्रावणकोर के मन्दिरोंमें जो तन्त्री पुजारी बन चुके थे उन्होंने जब कूडलमणिकम मन्दिरमें प्रवेश किया और पुजारी-पद ग्रहण किया तब कोचीनने फिरसे विवाद छेड़ा कि योगक्कारको कैमलके धार्मिक आचार-व्यवहारसे सम्बन्धित कार्यपर नियन्त्रण रखने और उसे निर्देश देनेका अधिकार है। कुछ योगक्कारोंके प्रतिवेदन करनेपर महामहिम महाराजा कोचीनने १५ अप्रैलको घोषणा कर दी कि त्रावणकोरमें अवर्णोंके लिए खोले गये एक मन्दिरके तन्त्री या पुजारीने कूडलमणिकम मन्दिरमें पुजारी-पद ग्रहण कर लिया था, इस कारण यह मन्दिर अपवित्र हो गया है और 'उत्सव' समारोह आरम्भ करनेसे पहले मन्दिरका शुद्धि-संस्कार करना आवश्यक है। महाराजा कोचीनकी वजिवाड़ु अर्थात् भेंट भी आदेशानुसार रोक ली गई जब तक कि नया आदेश न निकला जाये। दिनांक १७ अप्रैलको रेजिडेंटने कैमलको महाराजा कोचीनके निर्देशों का पालन करनेका आदेश भेजा। प्रकट है कि रेजिडेंटके इस कदमसे प्रोत्साहन पाकर कोचीन सरकारने पुनः कैमलको आदेश दिया कि त्रावणकोरके मन्दिरोंमें अनुष्ठानोंमें भाग लेनेवाले सब व्यक्तियोंको प्रायश्चित किये बिना इस मन्दिरमें या उसके तालाबमें प्रविष्ट न होने दिया जाये। कैमलने महाराजा कोचीनकी कार्रवाईके विरुद्ध आवाज उठाई और रेजिडेंटके आदेशोंकी मर्यादाके सम्बन्धमें शिकायत की। . . .

कोचीन राज्यकी प्रजाके मामलेमें कोचीन सरकारकी कार्रवाईसे त्रावणकोरका कोई सम्बन्ध नहीं था। त्रावणकोरकी रुचि केवल इस तथ्यमें थी कि महामहिम महाराजा त्रावणकोर द्वारा कैमलके पदपर नामजद किये जानेके फलस्वरूप प्राप्त सत्ताधिकारको सुरक्षित रखा जाये। त्रावणकोरके अनुसार केवल कैमल ही देवस्वम्के आध्यात्मिक प्रमुख होनेके नाते, . . . यह निर्णय देनेका उचित अधिकारी था कि इस परिस्थितिमें मन्दिर अशुद्ध हुआ या नहीं और यह कि क्या शुद्धि-कर्म आवश्यक है। कैमलसे परामर्श किये बिना और उसकी घोषणाके विपरीत पड़नेवाला महाराजा कोचीन या रेजिडेंटका कोई भी आदेश प्रभावहीन और न्याय-व्यवस्थाके प्रतिकूल होगा।

तत्पश्चात् रेजिडेंट महोदयने अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी, जैसाकि पत्रकारोंको दी गई उनकी भेंट-वार्ताओंसे प्रकट हो जाता है। कैमलको दिये गये उनके निर्देशोंका आशय धार्मिक मामलोंसे सम्बन्धित निर्णय देनेके कैमलके निहित अधिकारमें हस्तक्षेप

करना नही था, बल्कि उनका प्रयोजन यथास्थिति बनाये रखना था जोकि न्याय और व्यवस्थाको बचाये रखनेके लिए एक एहतियाती कदम होता। . . .

त्रावणकोरके अनुसार नियन्त्रक सत्ताधिकारीके रूपमें रेजिडेंटके अधिकारकी मर्यादा योजनामें विशेष रूपसे निर्धारित शक्तियो तक ही सीमित है और नियन्त्रक सत्ताधिकारीकी हैसियतसे और सर्वोच्च सत्ताका प्रतिनिधि होनेकी हैसियतसे भी रेजिडेंटको हस्तक्षेप करनेका कोई मौका नही था, क्योकि दोनोमें से किसी भी हैसियतसे रेजिडेंटको न्यायसगत अधिकार नही है कि जिन मामलोपर एकमात्र कैमलको ही निर्णयाधिकार है उन मामलोके सम्बन्धमें वह कैमलको निर्देश दे सके। यदि शान्ति-भगका भय था तो यह माननेका कोई लक्षण नही दीखता कि कोचीन सरकार उससे भली प्रकार निपटनेमें असमर्थ थी। कैमलने स्वय एक भेंट-वार्तामें कहा कि रेजिडेंटके हस्तक्षेप के बिना भी उत्सवम् पर्व शान्तिपूर्वक बीत जाता और कुछ सनातनी तन्त्रियो द्वारा किये गये असहयोगके बावजूद भी सम्भव हो जाता।

इसके पश्चात् कैमलने अपने निर्णयाधिकारका उपयोग किया और घोषणा कर दी कि कथित परिस्थितियोमें मन्दिर किसी भी प्रकारसे अशुद्ध नही हुआ था। त्रावण-कोरका कहना है कि इस घोषणा द्वारा यह विवाद अन्तिम रूपसे तय हो गया है और चूंकि रेजिडेंटने आध्यात्मिक विषयोपर कैमलके निर्णयाधिकारकी पुष्टि कर दी है अत उसे अब कोई शिकायत नही है। . . .

यहाँ यह एक रोचक तथ्य है कि कोचीनमें सुदूर भूतकालमें नही बल्कि पिछले समयमें ही कई मौके आये है जबकि कुछ प्राचीन प्रथाओ और प्रचलनोको तर्करहित मानकर छोड दिया गया। जिन पुरुषोने पूरा सिर मुडा लिया हो या जो समुद्र-पार जा चुके हों, उनका कोचीनके मन्दिरोंमें प्रवेश करना निषिद्ध था, किन्तु अब यह निषेध नही रहा। प्रस्तुत अवसरपर महाराजा कोचीनने मन्दिरकी अशुद्धिका जो आधार दिया है, वह शास्त्रसम्मत नही और न ही लोकाचारसम्मत है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-५-१९३७

परिशिष्ट ६

वाइसरायका भाषण[1]

२१ जून, १९३७

मेरे खयालमें आपको याद होगा कि जिस दिन मैंने वाइसरायका पद सँभाला था उस दिन रेडियोपर बोलते हुए मैंने आपसे कहा था कि आज हम जिस प्रकारके बुनियादी संवैधानिक परिवर्तनोंके चरणसे गुजर रहे हैं, वैसे परिवर्तन बिना कठिनाइयोंके ही हो जायेंगे, ऐसा सोचना बुद्धिमत्ताकी बात नहीं होगी। ये कठिनाइयाँ किस प्रकार हमारे सामने आई हैं इसका जिक्र मैं थोड़े-से शब्दोंमें करना चाहता हूँ। इन्हें दूर करनेके लिए मुझसे जो-कुछ करते बनेगा, मैं करनेकी कोशिश करूँगा। मैं चाहता हूँ कि यह सन्देश पढ़ते समय आप दो बातें ध्यानमें रखें। पहली बात यह है कि यद्यपि मैं अपने कार्यकी दृष्टिसे जितना आवश्यक है, उससे अधिक औपचारिकता और बारीकी नहीं बरतना चाहता, फिर भी . . . जिन अनेक मामलोंकी मैं चर्चा करनेवाला हूँ उनको आवश्यकतासे अधिक संक्षेपमें कहने या बहुत अधिक सरल बनानेका प्रयास भी मुझे नहीं करना चाहिए। . . . दूसरी बात यह है कि जिन कारणोंका मैंने अभी-अभी उल्लेख किया है उनकी वजहसे आपको मेरी भाषा शायद कुछ औपचारिक लगे, लेकिन इसका यह तात्पर्य नहीं कि मैं निजी तौरपर इन समस्याओंके प्रति उदासीन अथवा संगदिल हूँ। . . .

विधान-सभाओंमें बहुमत होते हुए भी एक पार्टी-विशेष ने कुछ-एक प्रान्तोंमें मन्त्रिमण्डल बनाना अस्वीकार कर दिया है, उसकी वजहसे जो संवैधानिक मसले उठ खड़े हुए हैं, उनपर मैंने अब तक कोई भी सार्वजनिक वक्तव्य नहीं दिया है। मैंने जानबूझकर ऐसा किया है। लेकिन मैं समझता हूँ अब वह समय आ गया है जबकि जनसामान्य या सामान्य मतदाताओंकी भलाईके लिए भारत-मन्त्री द्वारा संसदके समक्ष दिये गये वक्तव्यों और प्रान्तोंके गवर्नरों द्वारा दिये गये वक्तव्योंके प्रकाशमें मैं स्वयं ही इस बातचीतको आगे बढ़ाऊँ। और यह भी ठीक होगा कि पद-स्वीकृतिके प्रश्नकी वजहसे जो संवैधानिक मसले उठे हैं, उनपर सविस्तार और यथाशक्य औपचारिक तथा स्पष्ट ढंगसे मैं अपने विचार प्रकट करूँ। इस सम्बन्धमें जो मेरा विचार है वही भारत-मन्त्री और हिन्दुस्तानके प्रत्येक प्रान्तके गवर्नरोंका भी है। . . .

तीन महीने पहले एक महान राजनीतिक दलको, जिसे छः प्रान्तोंकी विधान-सभाओंमें बहुमत प्राप्त था, ऐसा लगा कि विधान-सभामें बहुमतका समर्थन प्राप्त

१. देखिए पृ० ३५१, ३५७ और ४०१। केवल कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

होनेपर भी अधिनियमकी धाराओके अनुसार उसके लिए मन्त्रिमण्डल बनाना तब तक कोई बुद्धिमत्ताकी बात नही होगी जब तक कि उसे गवर्नरोसे कुछ सुनिश्चित आश्वासन न मिल जायें। हालाँकि मैं यह मानता हूँ कि सविधानको लागू करनेकी दृष्टिसे तीन महीनेकी अवधि बहुत छोटी है, फिर भी व्यावहारिक दृष्टिसे इससे यह बात स्पष्ट हो गई कि ऐसे आश्वासन देनेमें जो वैधानिक अड़चनें है उनकी बात तो दूर रही, संविधानको सुचारु रूपसे लागू करनेके लिए इन आश्वासनोका होना कतई आवश्यक नही है। इन तीन महीनोंने यह भी स्पष्ट रूपसे दिखा दिया है कि वे सारी शकाएँ भी, जिनके लिए मेरे विचारसे कही कोई गुजाइश नही थी, निर्मूल थी कि गवर्नर अपने मन्त्रियो द्वारा नीति-निर्धारणमें हस्तक्षेप करनेके मौके ढूँढेंगे अथवा अधिनियम प्रदत्त अपने विशेष अधिकारोका व्यर्थ और अनावश्यक प्रयोग मन्त्रियो द्वारा प्रान्तके रोज-रोजके प्रशासनमें अड़चनें डालने या आपत्ति उठानेके लिए करेगे।

वर्तमान सविधानकी रचनामें मेरा निकटका योग रहा है। . . . अधिनियम और निर्देश-प्रपत्र, जिसे अधिनियमके साथ ही पढ़ा जाना चाहिए, दोनोका ससदने अनुमोदन कर लिया है। दोनोको मिलाकर देखनेसे ससदका अभिप्राय और गवर्नरोको दिया गया ससदका निर्देश, दोनो स्पष्ट हो जाते है। इन कागजातोसे यह बात बिलकुल साफ हो जाती है कि प्रान्तीय स्वायत्त शासनमे मन्त्रिमण्डलके नियत्रणमें आनेवाले सारे विषयोमें, जिनमें अल्पसख्यकोकी स्थिति, प्रशासनिक अधिकारीगण आदि भी आ जाते है, गवर्नर अपने अधिकारोका प्रयोग सामान्यतया अपने मन्त्रियोकी सलाहपर करेंगे और मन्त्री लोग ब्रिटिश ससदके प्रति नही बल्कि प्रान्तीय विधान-सभाओके प्रति उत्तरदायी होगे। इस नियमके अपवाद कुछ विशेष और स्पष्ट रूपसे निर्धारित विषयोंके बारेमें है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण विषय विशेष उत्तरदायित्वोका है और उनमें भी सबसे महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है प्रान्त या प्रान्तके किसी भागमें शान्ति-भग न होने देना, अल्पसख्यकोके उचित हितोकी रक्षा करना, अधिनियमके अन्तर्गत प्रशासनिक अधिकारियो और उनके आश्रितोको दिये गये या कायम रखे गये अधिकार उन्हे प्रदान करना तथा उनके उचित हितोकी रक्षा करना। उन विशेष उत्तरदायित्वोमें से एकको भी ससदने बिना गम्भीरताके अथवा लापरवाहीसे गवर्नरोको नहीं सौंपा है। उनमें से प्रत्येक विशेषाधिकारको ससदने महत्वपूर्ण और उचित माँगोंके अपने प्रत्युत्तरके रूपमें रखा है। . .

अपने विशेष उत्तरदायित्वोके मर्यादित क्षेत्रके अन्तर्गत गवर्नर सीधे ससदके प्रति उत्तरदायी है, फिर चाहे वे मन्त्रियोकी सलाह मानते है या नही। लेकिन यदि अपने मन्त्रियोकी सलाह माननेमें गवर्नर असमर्थ है तो किसी निर्णयके लिए जिम्मेदारी उनकी और केवल उनकी ही होगी। ऐसी स्थितिमें निर्णयकी कोई भी जिम्मेदारी मन्त्रियोपर नही आती है और उन्हें अधिकार है कि यदि वे चाहें तो सार्वजनिक रूपसे यह घोषित कर सकते है कि उस विशेष निर्णयकी कोई जिम्मेदारी उनपर नही है। वे यह भी कह सकते है कि उन्होने गवर्नरको इसके विपरीत सलाह दी थी। लेकिन प्रत्येक गवर्नर यह प्रयास करेगा कि उसे उसके मन्त्रिमण्डलका समर्थन

प्राप्त हो और जब वह बिना उनके समर्थनके या उनकी सलाहके विपरीत अपने विशेष उत्तरदायित्वोंको निभानेके लिए कोई कार्य करता है तो वह इस बातका ध्यान रखेगा कि वह अपने मन्त्रिमण्डलके विरोधमें निरुद्देश्य ही नही चल रहा है। . . . दूसरे पक्षकी ओरसे जो तर्क दिये जायेंगे उन्हें वह खुले दिमागसे सुनेगा। यदि उसे तर्क युक्तियुक्त प्रतीत हो तो वह अपने प्रस्तावमें यथोचित हद तक फेर-बदल कर देगा। परन्तु यदि उसे तर्क अप्रमाणित जान पड़ें तो वह अन्तिम निर्णय लेनेसे पहले मन्त्रिमण्डल या मन्त्रीको कायल करनेके लिए हर प्रयास करेगा कि किन उपयुक्त कारणोकी वजहसे वह उनकी सलाह माननेके लिए तैयार नही है। और इन हालातमें यदि वह अपने विचारसे उन्हें कायल नही करा सका तो वह अन्तिम निर्णय लेगा . . . और आदेश जारी करनेसे पहले वह अपने मन्त्रिमण्डलको इस बातसे कायल करनेके लिए हर उपाय कर चुका होगा कि अधिनियमके अन्तर्गत उसके जो कर्तव्य हैं उनके अनुसार उसका निर्णय सही था। . . .

इसी कारण मैं श्री गाधी द्वारा हालमें ही दिये गये इस उपयोगी सुझावका स्वागत करता हूँ कि जब गवर्नर और उसके मन्त्रियोके बीच किसी प्रश्नपर गम्भीर मतभेद हो जाये केवल तभी उनके पारस्परिक सम्बन्धके विच्छेदका प्रश्न उठना चाहिए। 'गम्भीर मतभेद' एक ऐसा वाक्याश है जिसकी परिभाषा और व्याख्या अनेक तरहसे की जा सकती है। परन्तु जिस किसीको भी प्रशासनिक या राजनीतिक क्षेत्रका थोड़ा भी अनुभव प्राप्त है उसके लिए इसका सामान्य अर्थ बिलकुल स्पष्ट है। विवादका विषय वास्तवमें बहुत महत्वका होना चाहिए। स्वय मैं यह कहूँगा कि उसी विवादको 'गम्भीर मतभेद' का विषय कहा जा सकता है जबकि अधिनियम प्रदत्त अपने उत्तरदायित्वोको निभानेके लिए गवर्नरने मन्त्रियोंकी सलाहके विपरीत ऐसा कदम उठाया हो जिसपर समझौतेकी कोई गुंजाइश न रह गई हो, हालाँकि गवर्नरकी उस कार्रवाईके लिए मन्त्रीगण प्रत्यक्ष और परोक्ष किसी भी तरह उत्तर-दायी नही हो और गवर्नरने मन्त्रियोको यह समझानेमें कोई कसर नही छोडी हो कि उस कार्रवाईके अतिरिक्त उसके पास दूसरा कोई चारा नही रह गया था। मुझे विश्वास है कि यदि इस तरहकी कोई बात सामने आई तो गवर्नर और उसके मन्त्री खुले दिमागसे और अपनी जिम्मेदारीको — जहाँ तक उसके विशेष उत्तरदायित्वोका प्रश्न है, गवर्नर संसदके प्रति और मन्त्रिमण्डल प्रान्तीय विधान-सभाके प्रति अपनी जिम्मेदारीको — ध्यानमें रखते हुए उसपर विचार-विमर्श करेंगे; किन्तु इसके बावजूद भी मतैक्य नही होता है तो मैं मानता हूँ कि मन्त्रिमण्डल या तो त्यागपत्र दे दे अथवा उसे पदच्युत कर दिया जाये। सामान्य सवैधानिक दृष्टिकोणसे त्यागपत्र और पदच्युति, इन दोनोमें त्यागपत्र ही बेहतर मार्ग है। त्यागपत्र देना मन्त्रिमण्डलके लिए अधिक सम्मानजनक रास्ता है और इससे यह बात भी सार्वजनिक रूपसे व्यक्त हो जाती है कि गवर्नरने जो कदम उठाया है उसके प्रति मन्त्रियोका क्या रुख है। इसी तरह त्यागपत्र मन्त्रिमण्डल द्वारा स्वेच्छासे अपनाया गया मार्ग भी है। पदच्युति कभी-कभार उठाया जानेवाला असाधारण कदम है और इसके कुछ ऐसे

भी अर्थ लगाये जानेकी सम्भावना है जिसे हम इस नई सवैधानिक व्यवस्थासे किसी भी मूल्यपर समाप्त करनेके लिए कृतसकल्प है। यहाँपर मुझे शायद यह भी कह देना चाहिए कि ऐसा सुझाव देना भी इस समस्याका अधिनियम के अनुकूल समाधान नही है कि कुछ विशेष परिस्थितियोमें गवर्नरको अपने मन्त्रियोसे त्यागपत्र माँग लेना चाहिए। और इसीलिए गवर्नरके लिए इस सुझावको मान लेना सम्भव नही है। त्यागपत्र और पदच्युति दोनो ही सम्भव है, त्यागपत्र मन्त्रियोकी इच्छापर और पदच्युति गवर्नरोकी इच्छापर निर्भर है। परन्तु अधिनियमके अन्तर्गत यह अपेक्षित नही है कि गवर्नर अपनी इच्छाका ऐसा प्रयोग करे कि मन्त्रीगण अपनी इच्छाका प्रयोग करनेको बाध्य हो जाये और इस प्रकार गवर्नर अपनी जिम्मेदारी अपने सरसे टाल दे।

मैंने जानबूझकर ऐसे गम्भीरतम विवाद का उदाहरण लिया है जिसमें त्यागपत्र या पदच्युतिका सवाल उठ सकता है, क्योकि ऐसे विवादकी ही चर्चा आज हो रही है। . . . मै समझता हूँ कि गवर्नर जिस तरहसे अपने मन्त्रियोसे न केवल टकराव बचानेके लिए उत्सुक रहेगे, चाहे वे किसी भी दलके क्यो न हो, बल्कि विवाद समाप्त करनेके लिए कोई भी कसर बाकी नही छोड़ेंगे, उसकी वजहसे मुझे पूरा विश्वास है कि किसी प्रकारका गतिरोध उत्पन्न होनेकी सम्भावना नही है। स्थितिका जो स्वरूप मै देखता हूँ उसको कुछ विशेष ब्योरेवार ढगसे मै पेश करना चाहता हूँ ताकि जिन हितो, जातियो या क्षेत्रोमें अधिनियम लागू होता है वे एक क्षणके लिए भी ऐसा न सोचें कि विशेष उत्तरदायित्वोका अर्थ राजनीतिक कारणो के आधारपर उनके हितोकी बलि देना है। . . जो मै स्पष्ट करना चाहता हूँ, वह यह है कि मेरे विचारसे उन हितोको कोई खतरा पहुँचाये बिना या उनकी बलि दिये बिना भी किसी प्रान्तका गवर्नर या मन्त्रिमण्डल अधिनियमकी योजनाके अन्तर्गत सविधानको उस सामान्य और स्वस्थ विधिसे लागू कर सकता है जिसकी कि अधिनियममें कल्पना की गई है। गवर्नरको जो विशेष उत्तरदायित्व दिये गये है, उनके सीमित क्षेत्रमें भी सिवाय उन परिस्थितियोके, जिसकी कल्पना करना मेरे लिए आसान नही है, ऐसे मौलिक मतभेद होनेकी गुजाइश नही है जिनकी वजहसे गवर्नर और उसके मन्त्रियोंके आपसी सम्बन्ध खतरेमें पड़ जायेंगे। . . .

आपसे विदा लेनेसे पहले मुझे ऐसा लगता है कि आप चाहेगे कि मै सारी प्राविधिकताको अलग रखकर एक ऐसे व्यक्तिकी हैसियत से एक-दो शब्द कहूँ जिसे ससदीय मामलोका काफी अनुभव प्राप्त है तथा जिसने इस नये सविधानकी सरचनामें कुछ हद तक भाग लिया है। मुझे मालूम है कि आपमें से कुछ लोगोका यह दृढ विचार है कि सुधारकी योजना पूर्ण स्वतन्त्रताकी दिशामें बहुत दूर तक नही जाती है। इस विचारके पीछे जो भावना है उसकी सच्चाईमें मुझे कोई सन्देह नही है। किन्तु मुझे पूर्ण विश्वास है, कि इस महत्वपूर्ण विषयपर अपनी स्थिति निश्चित करनेमें प्रत्येक जिम्मेदार व्यक्ति भारतके सर्वोत्तम हितोको ध्यानमें रखेगा और सन्तुलित मस्तिष्कसे यह निश्चित करेगा कि आजके हालातमे भारतके हित-साधनका सबसे अच्छा रास्ता कौन-सा है।

मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि मेरे विचारसे यदि चारो ओर सद्भावना बनी रहे तो यह संविधान काम करेगा और अनुभवसे सिद्ध हो जायेगा कि यह ठीक तरहसे काम करेगा। आज यह इस देशका कानून है। इसकी चाहे जितनी आलोचना की गई है, फिर भी यही आज देशके सामने रखे गये राजनीतिक सुधारकी योजनाओं में से पूर्ण और सामंजस्य-युक्त योजना है। मुझे विश्वास है कि जिस पूर्ण राजनीतिक जीवनको प्राप्त करनेकी तीव्र आकाक्षा आपमें से अनेक लोग करते है, उस तक पहुँचनेके लिए सबसे छोटा रास्ता यही है कि आप इस सविधानको स्वीकार करे, इसके गुणोके उपयुक्त इसे लागू करे। राजनीतिक विषय ही ऐसा है कि वह सतत गतिशील है, और यह सोचना कि लिखित संविधानके रूपमें उसकी अभिव्यक्ति करना उसे निष्क्रिय बनाना है, यह तो इतिहाससे प्राप्त शिक्षा की ही नही अपितु सामान्य बुद्धिकी भी उपेक्षा करना है। इसके अतिरिक्त मेरा यह भी दृढ़ विश्वास है कि इससे जनता के कल्याणार्थ कार्य करनेके लिए भी प्रचुर अवसर मिलेगा और इस सिलसिलेमें मैं उस विषयपर भी दो शब्द कहना चाहूँगा जो मेरे हृदयके निकट है। यह मेरा विश्वास है कि ग्रामीण जनता और समाजके दीन वर्गोंकी दशामें सामान्य और स्थायी सुधार लानेकी हमारी जो उत्कट अभिलाषा है, उसकी पूर्ति भी इस सविधानको पूर्णरूपेण लागू करने और उसमें प्रगति लानेमें ही निहित है।

गत दो महीनोमें हुई चर्चाओं और वाद-विवादके माध्यमसे इस प्रश्नमें निहित तर्क और दृष्टिकोण आपके सामने आ गये है। अब शीघ्र ही एक मार्ग चुनना होगा और वह मार्ग भारतके भविष्यके लिए बहुत ही महत्वका होगा। मैं हृदयसे आशा करता हूँ कि चाहे नेता हों या उनके अनुयायी, सभी रचनात्मक प्रयासका मार्ग चुनना ही अपना कर्त्तव्य समझेंगे। आप मुझपर भरोसा रख सकते है कि चाहे जो-कुछ भी हो, कटु निराशा ही क्यों न आये, पर मैं भारतमे ससदीय शासन-व्यवस्थाके सिद्धान्तोकी सम्यक् स्थापना के लिए अथक प्रयत्न करता रहूँगा। फिर भी यदि इस परिस्थितिका एक ऐसा परिणाम निकलता है जिसे मैं दुःखद समझूँगा और जिसके फलस्वरूप कई प्रान्तोंमें ससदीय और उत्तरदायी सरकारें भंग हो जायें तो हमें चाहे उसपर कितना ही खेद क्यो न हो फिर भी उस समय अकस्मात सामने आ गई परिस्थितिके रुखको मोड़ना हममे से किसीके भी वश की बात नहीं होगी। यदि ऐसा हुआ तो अमूल्य समय तो नष्ट होगा ही, मुझे बहुत डर है कि प्रगतिशील सुधारके उद्देश्यको भी कुछ कम चोट नही पहुँचेगी।

किन्तु मैं नही मानता कि ऐसी दु:खद बातें सामने आयेंगी ही, क्योकि मुझे आपमें और भारतके प्रारब्धमें आस्था है। जिस राहपर हम चल रहे हैं वह अन्धकारमय भले ही प्रतीत हो और कभी-कभी दुर्गम ही क्यों न लगे, हमारा दिग्दर्शक तारा कभी लड़खड़ाता ही नजर क्यो न आये और कभी लगभग टूटता-सा ही दृष्टिगोचर क्यों न हो, किन्तु आस्था और साहस महान् शक्तियाँ हैं। इस कठिन घड़ीमें हम अपनी सहायताके लिए उनका आह्वान करें और सब मिलकर अपनी आकांक्षाओंकी पूर्तिके लक्ष्यकी ओर निरन्तर कदम बढ़ाते रहें।

[अंग्रेजीसे]

द इंडियन ऐनुअल रजिस्टर, १९३७, खण्ड १, पृ० २६४-७०

परिशिष्ट ७

वल्लभभाई पटेलका वक्तव्य[1]

९ जुलाई, १९३७

बम्बई विधान-सभामें कांग्रेस संसदीय दलके नेताके चुनावके बारेमें अखबारोंमें जो दुर्भाग्यपूर्ण विवाद चल रहा है, उसके सम्बन्धमें जान-बूझकर मैंने कुछ नहीं कहा है। मुझे लगता है कि अब समय आ गया है जब लोगोंकी जानकारीके लिए मैं एक छोटा-सा वक्तव्य दूँ। श्री नरीमनने कहा है कि नेताके चुनावमें मैंने अनुचित हस्तक्षेप किया है। वे अपने इस आरोपपर अभी भी कायम हैं, हालाँकि दो सज्जन, गंगाधरराव देशपाण्डे और शंकरराव देवने, जिनका इस मसलेसे गहरा सम्बन्ध है, इस आरोपका जोरदार खंडन कर चुके हैं। जैसा सभी जानते हैं, विधान-सभाके अधिकांश सदस्योंने भी लिखित रूपमें इन आरोपोंका खंडन किया है। अब मैं पूरी जिम्मेदारीके साथ कहता हूँ कि मैंने इस चुनावपर प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी भी प्रकारसे कोई प्रभाव नहीं डाला है। जो-कुछ हुआ, वह यों है: ४ मार्चकी सुबह नरीमन मेरे पास आये और मुझसे एक निजी मुलाकात चाही। मैंने निःसंकोच हामी भर दी। उनके सुझावपर यह निश्चित हुआ कि हम शामको कार द्वारा वरलीकी सैर करेंगे। तदनुसार वे मेरे पास आये और मुझे अपनी कारमें वरली ले गये। उन्होंने मुझसे कहा कि मैं इस चुनावमें उनकी मदद करूँ। मैंने उनसे कहा कि मैं ऐसा नहीं कर सकता और इसकी वजह तो मैं आपको पहले ही बता चुका हूँ। साथही-साथ मैंने यह भी कहा कि मैं अपने प्रभावका उपयोग आपके विरुद्ध अथवा किसी दूसरेके पक्षमें नहीं करूँगा।

अमुक तार जो मैंने श्री गंगाधरराव और श्री शंकरराव देवके पास भेजे थे, अब उन्हीं तारोंको सबूत रूपमें पेश किया जा रहा है कि मैंने नरीमनके विरुद्ध कार्य किया था। गंगाधरराव तथा शंकरराव, दोनों सज्जनोंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि इन तारोंका नरीमनके चुनावसे कोई सम्बन्ध नहीं था। यह तो सभी जानते हैं कि मैंने प्रायः नरीमनको उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य सौंपा है, क्योंकि मैंने पाया कि वे ही इनको करनेके लिए उपयुक्त व्यक्ति हैं। मेरा उनसे कोई वैयक्तिक वैर-भाव नहीं है।

यह कहना कि नरीमन इसलिए नहीं चुने गये क्योंकि वे अल्पसंख्यक सम्प्रदाय के हैं, गलत और दुर्भावनापूर्ण है। मुझे खुशी है कि स्वयं नरीमनने यह स्वीकार किया है कि इसमें साम्प्रदायिकता-जैसी कोई बात नहीं है। मेरी ओर से गंगाधर-

१. देखिए पृ० ४२३ और ४४६।

रावने नरीमनको बता दिया है कि यदि इन आरोपोंकी जाँच-पड़ताल किसी न्यायाधिकरण द्वारा हो तो मुझे उसका निर्णय मान्य होगा।

[अंग्रेजीसे]

सरदार वल्लभभाई पटेल, खण्ड २, पृ० २३५-६

परिशिष्ट ८

स्वतन्त्रताकी पोशाक[1]

इसलिए मेरा सुझाव है कि एक विशेष दिन, रविवार, पहली अगस्तको इस उद्देश्यके लिए सारे हिन्दुस्तानमें, शहरोंमें, गाँवोंमें, सर्वत्र सभाएँ हों। इन सभाओंमें कांग्रेस कार्य-समितिके प्रस्तावको पढ़ा जाये तथा लोगोंको इसके बारेमें समझाया जाये। कांग्रेसी मन्त्रियोंका हार्दिक अभिनन्दन करते हुए हम फिरसे स्वतन्त्रता प्राप्त करने तथा अपने देशवासियोंकी गरीबी मिटानेका संकल्प करें। उस दिन सर्वत्र ध्वजाभिवादन-समारोह भी विधिवत् मनाया जाये। पहली अगस्त हमारे लिए एक विशेष और महत्वपूर्ण दिवस है, क्योंकि यह दिन भारतकी स्वतन्त्रताको समर्पित है। सत्रह साल पहले इसी दिन लोकमान्यका देहान्त हुआ था और इसी दिन हिन्दुस्तानने असहयोग-आन्दोलन शुरू किया था और उस हथियारका उपयोग करना शुरू किया था जिसने हमारे देशवासियोंको इतना अधिक शक्तिशाली और जीवन्त बनाया है। इसीलिए यह सर्वथा उचित है कि इस दिनको समुचित समारोहके साथ मनाया जाये। [इस दिन] हम पिछले समयको स्मरण करें तथा भविष्यका सामना वैसी ही दृढ़तासे करनेका संकल्प करें जैसी दृढ़ताके बलपर हम इतने दिनोंतक टिके रहे हैं।

मुझे विश्वास है कि जिन लोगोंको हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रता अभिवांछित है वे इस सहानुभूति और सद्भावनाके प्रतीक-स्वरूप हमारी स्वतन्त्रताकी पोशाक खादी पहनेंगे और राष्ट्रीय झंडेको फहरायेंगे तथा उसका सम्मान करेंगे। मुझे यह भी विश्वास है कि जो पुलिस अब तक अपने ही लोगोंके प्रति वैर-भाव रखती आयी है, वह हिन्दुस्तानका भला सोचेगी, न कि विदेशी मालिकोंका। वह लोगोंका सहयोग और सद्भावना जीतनेका प्रयास करेगी। कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंका यदि कोई उद्देश्य है तो वह है जनताके हितोंको प्राथमिकता देना।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३१-७-१९३७

१. देखिए पृ० ४८२।

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक सग्रहालय, नई दिल्ली गांधी साहित्य और तत्सम्बन्धी कागजातका केन्द्रीय सग्रहालय तथा पुस्तकालय।

नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय सग्रहालय, नई दिल्ली।

सावरमती सग्रहालय पुस्तकालय तथा आलेख संग्रहालय, जिसमें गाधीजीसे सम्बन्धित कागजात रखे है।

'टाइम्स ऑफ इडिया'. वम्बईसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'वॉम्बे क्रॉनिकल'· वम्बईसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हरिजन' (१९३३-५६). रामचन्द्र वैद्यनाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित तथा हरिजन सेवक सघके तत्वावधानमें प्रकाशित अग्रेजी साप्ताहिक, जो गाधीजीकी देख-रेखमें ११ फरवरी, १९३३ को पूनासे प्रकाशित हुआ था।

'हरिजनवन्धु' (१९३३-५६) : हरिजन सेवक सघके तत्वावधानमें चन्द्रशंकर शुक्ल द्वारा सम्पादित तथा १२ मार्च, १९३३ को पूनासे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'हरिजन-सेवक' (१९३३-५६) : हरिजन सेवक सघके तत्वावधानमें वियोगी हरि द्वारा सम्पादित तथा २३ फरवरी, १९३३ को दिल्लीसे प्रकाशित हिन्दी साप्ताहिक।

'हितवाद' नागपुरसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' नई दिल्लीसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'(द) इडियन ऐनुअल रजिस्टर, १९३७': सम्पादक: नृपेन्द्रनाथ मित्र; प्रकाशक: ऐनुअल रजिस्टर ऑफिस, कलकत्ता।

पुलिस कमिश्नर्स ऑफिस, वम्बई।

प्यारेलाल पेपर्स: श्री प्यारेलाल, नई दिल्ली।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी: जो स्वराज्य आश्रम, वारडोलीमें सुरक्षित है।

'इडिया सिन्स द एडवेंट ऑफ द ब्रिटिश' (अग्रेजी)· जगदीशशरण शर्मा, एस० चाँद ऐण्ड कं०, दिल्ली, १९७०।

'इन द शैडो ऑफ द महात्मा' (अग्रेजी): घनश्यामदास विडला, ओरिएण्ट लॉन्गमेन्स लिमिटेड, कलकत्ता, १९५३।

'ए वंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अंग्रेजी)· सम्पादक: जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९५८।

'गांधी – १९१५-१९४८ : ए डिटेल्ड क्रॉनॉलॉजी' (अंग्रेजी) : सी० बी० दलाल, गांधी पीस फाउंडेशन, नई दिल्ली, १९७१।

'गांधी और राजस्थान': सम्पादक: शोभालाल गुप्ता, राजस्थान राज्य गांधी स्मारक निधि, भीलवाड़ा, राजस्थान, १९६९।

'गांधी सेवा संघके तृतीय वार्षिक अधिवेशन (हुदली-कर्नाटक) का विवरण': प्रकाशक: आर० एस० धोत्रे, वर्धा।

'जीवनद्वारा शिक्षण' (गुजराती) : शिवाभाई गोकुलभाई पटेल, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद, १९५४।

'ट्वेन्टी ईयर्स ऑफ द विश्वभारती चीना भवन', १९३७-१९५७' (अंग्रेजी) : प्रो० तान-युन शान।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद': सम्पादक: काका कालेलकर; जमनालाल सेवा ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'बापुना पत्रो–६: गं० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती) : सम्पादक: काकासाहब कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती) : सम्पादक: मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५२।

'बापुनी आश्रमी केलवणी': शिवाभाई जी० पटेल, रामलाल परीख, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद, १९६९।'

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) : मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बापूकी छायामें': बलवन्तसिंह, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४७।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष': हीरालाल शर्मा, ईश्वरशरण आश्रम मुद्रणालय, प्रयाग, १९५७।

'बापूस लेटर्स टु मीरा' (अंग्रेजी) : सम्पादक: मीराबहन, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९४९।

'महात्मा: लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड ४ (अंग्रेजी) : डी० जी० तेंदुलकर, विट्ठलभाई के० झवेरी और डी० जी० तेंदुलकर, बम्बई, १९५२।

'लेटर्स टु राजकुमारी अमृत कौर' (अंग्रेजी) : सम्पादक: रिचर्ड बी० ग्रेग, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९६१।

'सरदार वल्लभभाई पटेल', खण्ड २ (अंग्रेजी) : नरहरि डी० परीख, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९५६।

'सिलेक्टेड वर्क्स ऑफ जवाहरलाल नेहरू', खण्ड ७ (अंग्रेजी) : जवाहरलाल नेहरु मेमोरियल फंड, तीन मूर्ति हाउस, नई दिल्ली, १९७५।

'(द) हिस्ट्री ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस', (अंग्रेजी) : पट्टाभि सीतारमय्या, पद्मा पब्लिकेशन्स, बम्बई, १९४७।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१५ मार्चसे ३१ जुलाई, १९३७ तक)

१५ मार्च : गांधीजी दिल्ली पहुँचे।

१६ मार्च : अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भाग लिया जिसमें पदोंकी स्वीकृतिके सम्बन्धमें प्रस्ताव पास किया गया।

१७ मार्च : कलकत्तामें सुभाषचन्द्र बोसकी जेलसे रिहाई।

१९ और २० मार्च : विधान-सभाओंके नये चुने हुए कांग्रेसी सदस्यों तथा अ० भा० का० क० के सदस्योंका सम्मेलन दिल्लीमें हुआ जिसमें विधायकोंको राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और भारतीयोंके प्रति निष्ठाकी शपथ दिलाई गई।

२२ मार्च या उसके पूर्व : जमायत-उल-उलेमा-ए-हिन्दके नेताओंके साथ भेंट की। औद्योगिक प्रशिक्षण शाला देखने गये।

२२ मार्च : सेगाँवके लिए रवाना हो गये।

२५ मार्च कस्तूरबा, मनुबहन मशरूवाला, कनु गांधी (छोटा), महादेव देसाई तथा प्यारेलालके साथ मद्रासके लिए रवाना हो गये।

२६ मार्च : मद्रासमें दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभाके दीक्षान्त समारोहके अवसर पर भाषण दिया।

२७ और २८ मार्च · भारतीय साहित्य परिषद्, मद्रासमें भाषण दिये।

२८ मार्च : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको भेंट दी।

३० मार्च · समाचारपत्रोंको दिये गये वक्तव्यमें कहा कि गवर्नरोंसे अपेक्षित आश्वासनोंको नामंजूर करके ब्रिटिश सरकार अपने किये हुए वायदेसे पीछे हट गई है। सेगाँवके लिए रवाना हो गये।

३१ मार्च : सेगाँव पहुँचे।

१० अप्रैल : अगाथा हैरिसनको तार भेजा कि न्यायाधीशने आश्वासनोंसे सम्बन्धित माँगको स्वीकार किया है और सर्वथा गैर-कानूनी वर्तमान मन्त्रिमण्डलोंकी निन्दा की है। राजनीतिक गतिरोधके सम्बन्धमें वक्तव्य देते हुए एक ऐसा न्यायाधिकरण नियुक्त करनेकी माँग की जो यह निश्चय करे कि क्या गवर्नर, जैसा कांग्रेस चाहती है, वैसे आश्वासन दे सकते हैं या नहीं।

१४ अप्रैल : हुदलीके लिए रवाना।

१५ अप्रैल : कल्याण और पूनामें एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधियोंको भेंट दी।

१६ और १७ अप्रैल : गांधी सेवा संघकी सभा, हुदलीमें भाषण दिये।

१८ अप्रैल : नवविवाहित दम्पतियोंको सलाह दी; यज्ञोपवीत संस्कारके अवसरपर ब्रह्मचारियोंके समक्ष भाषण दिया।

२० अप्रैल : गांधी सेवा संघकी सभा, हुदलीमें भाषण दिये।

२२ अप्रैल : सेगाँव जाते हुए पूनामें रुके; 'हिन्दू' के पत्र-प्रतिनिधिको भेंट दी। पत्र-प्रतिनिधियोंके साथ हुई भेंटमें त्रावणकोरके मन्दिरोंमें जानेवाले सवर्ण हिन्दुओंके कोचीनके मन्दिरोंमें जानेपर प्रतिबन्ध लगानेसे सम्बन्धित कोचीनके महाराजाके आदेशको अव्यावहारिक तथा अत्यन्त अधार्मिक बताया।

२३ अप्रैल: सेगाँव पहुँचे।

२५ अप्रैल: कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लेनेके लिए इलाहाबादके लिए रवाना। नागपुरमें पत्र-प्रतिनिधियोंको भेंट दी।

२६ अप्रैल: इलाहाबादमें एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको भेंट दी।

३० अप्रैल: रेलगाड़ीमें 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको भेंट दी।

१ मई: सेगाँव पहुँचे।

९ मई: तीथल (बलसाड़)के लिए रवाना हो गये।

१० मई: बारडोली पहुँचे।

११ मई: हरिपुराको कांग्रेस अधिवेशनका स्थान चुननेके सम्बन्धमें कांग्रेस कार्यकर्ताओंके साथ बातचीत की।

१२ मई: तीथल पहुँचे।

समाचारपत्रोंको दिये गये वक्तव्यमें यह धारणा व्यक्त की कि कांग्रेसकी माँग "दोनों ही पक्षोंके लिए संवैधानिक और समान रूपसे सम्मानजनक है"।

१५ मई: बम्बईके गवर्नर द्वारा दिये गये भाषणके सम्बन्धमें एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको भेंट दी।

२२ मई: गुजरात राष्ट्रीय विद्यालयोंके शिक्षकोंके समक्ष भाषण दिया।

१ जून: 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिके साथ हुई भेंटमें कहा कि कांग्रेस संवैधानिक स्थितिका हल ढूंढ निकालनेके लिए सरकारसे अपेक्षा रखती है।

१० जून: सेगाँवके लिए रवाना।

११ जून: वर्धा पहुँचे।

१२ जून: सेगाँवके ग्रामवासियोंके समक्ष भाषण दिया।

२१ जून: वाइसरायने वक्तव्य दिया।

२२ जून: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको भेंट दी।

२४ जून: लॉर्ड लोथियनको लिखे पत्रमें यह स्पष्ट किया कि "मुझे यह विश्वास नहीं है कि वर्तमान अधिनियमको पूर्ण स्वतन्त्रताका साधन बनाया जा सकता है" तथा "जितनी जल्दी कोई भारतीय योजना इसकी जगह ले ले, उतना ही अच्छा है"।

६ जुलाई: कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाषण दिया।

७ जुलाई: कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें यह निश्चय किया गया कि "जहाँ कांग्रेसियोंको मन्त्रि-पद ग्रहण करनेके लिए आमन्त्रित किया जाये, वहाँ उन्हें उसे स्वीकार करनेकी अनुमति दे दी जाये"।

हिन्दी प्रचारक प्रशिक्षण विद्यालयके उद्घाटनके अवसरपर भाषण दिया।

८ जुलाई: 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको भेंट दी।

९ जुलाई: प्रान्तोंमें मुसलमान मन्त्रियोंके चुनावके सम्बन्धमें अबुल कलाम आजादके साथ बातचीत की।

नरीमन तथा अपने बीच हुए विवादपर वल्लभभाई पटेलने वक्तव्य जारी किया।

११ जुलाई: गांधीजी मदालसा तथा श्रीमन्नारायणके विवाहमें शामिल हुए।

१७ जुलाई: राजनीतिक विषयों पर फिर से लिखना आरम्भ करते हुए 'हरिजन' में "कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल" शीर्षक अपना लेख प्रकाशित किया। कांग्रेस कार्य-समितिने यह प्रस्ताव पास किया कि नरीमनने वल्लभभाई पटेलके विरुद्ध जो आरोप लगाये हैं, यदि वे सच निकलते तो समिति नये चुनावका आदेश दे देती।

२७ जुलाई: ४ अगस्तको दिल्लीमें मिलनेके लिए वाइसरायके निमन्त्रणको स्वीकार करते हुए गांधीजीने वाइसरायको पत्र भेजा।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

ख

घ

च

ध

न

प

भ

य

र

ल